गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय हरिद्वार का सौ वर्ष का इतिहास

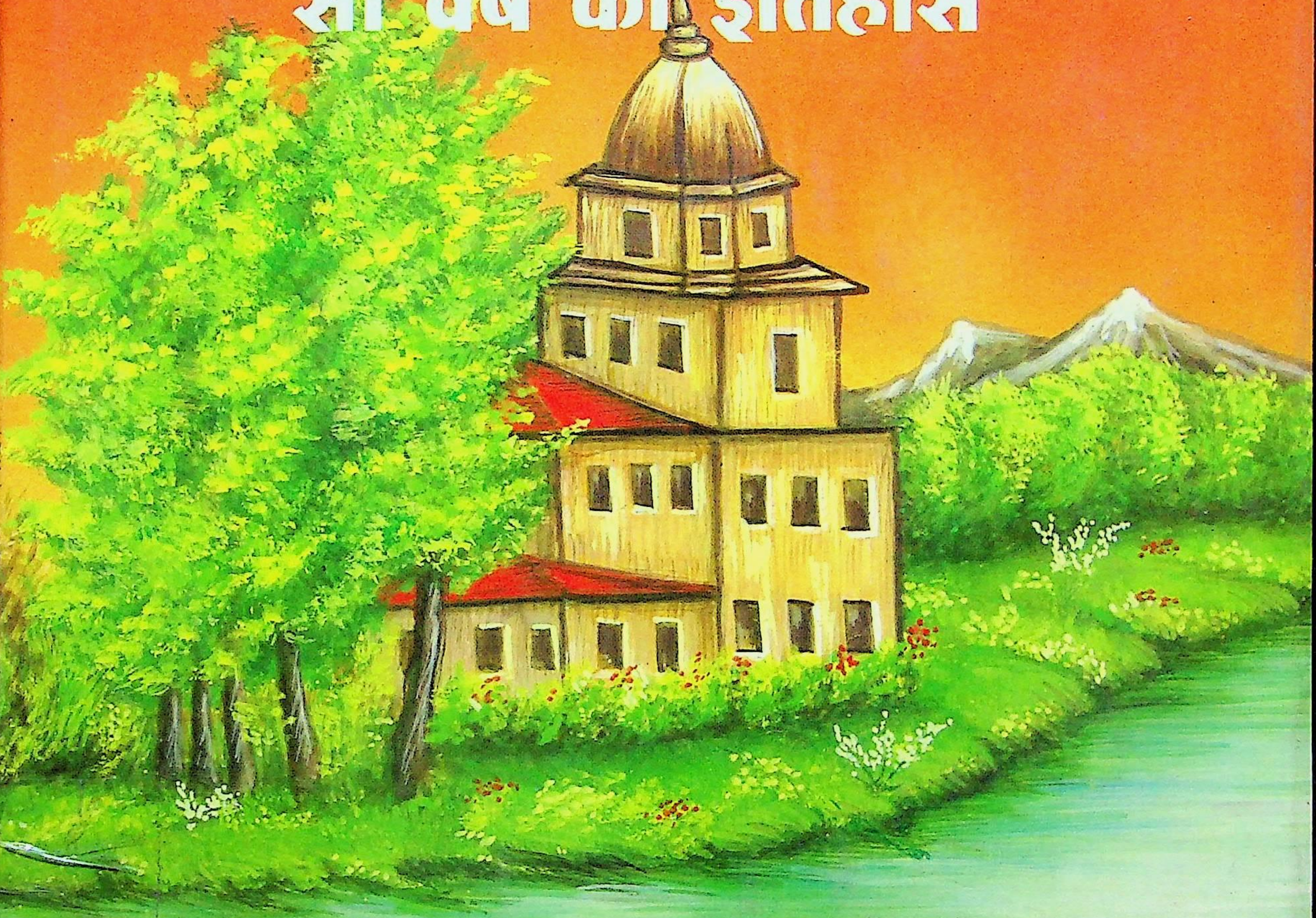

डॉ० जयदेव वेदालंकार

185053

गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय हरिद्वार का सौ वर्ष का इतिहास

लेखक

आचार्य डॉ॰ जयदेव वेदालंकार

एम॰ए॰ (दर्शन+मनोविज्ञान)
पी-एच॰डी॰, डी॰ लिट्॰ दर्शनाचार्य
प्रोफेसर एवं अध्यक्ष दर्शन विभाग
डीन-प्राच्य विद्यासंकाय
(गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय, हरिद्वार)

75
185053

Central Library
185053
Gurukula Kangri (Deemed to be University) Haridwar

भारतीय विद्या प्रकाशन

दिल्ली वाराणसी

R
378.009
JAI-G

प्रकाशकः-
© भारतीय विद्या प्रकाशन
1. 1 यू॰ बी॰ जवाहरनगर, बंग्लो रोड, दिल्ली-110007
फोन नं॰ (011) 3971570
2. पो॰ बा॰ 1108, कचौड़ी गली, वाराणसी-221001
फोन नं॰ (0542) 392376

© आचार्य डॉ॰ जयदेव वेदालंकार

संस्करणः- सम्वत् 2058 विक्रमी (सन् 2002 ईस्वी)

मूल्य : 600/-

लेजर प्रिंटिंगः-
न्यूटेक ग्राफिक्स होम
एक्स-326, गली नं. 2, ब्रह्मपुरी, शाहदरा, दिल्ली-53
फोनः 2181624, 2183407

मुद्रकः-
डी॰ जी॰ प्रिंटर्स, शाहदरा, दिल्ली-32

ग्रन्थ प्राप्ति का अन्य स्थानः- डॉ॰ जयदेव वेदालंकार
देवलोक 462, आर्यनगर, ज्वालापुर, हरिद्वार (उत्तराञ्चल) पिन कोड-49407
फोन नं. 0133-45447

शताब्दी वर्ष की भेंट

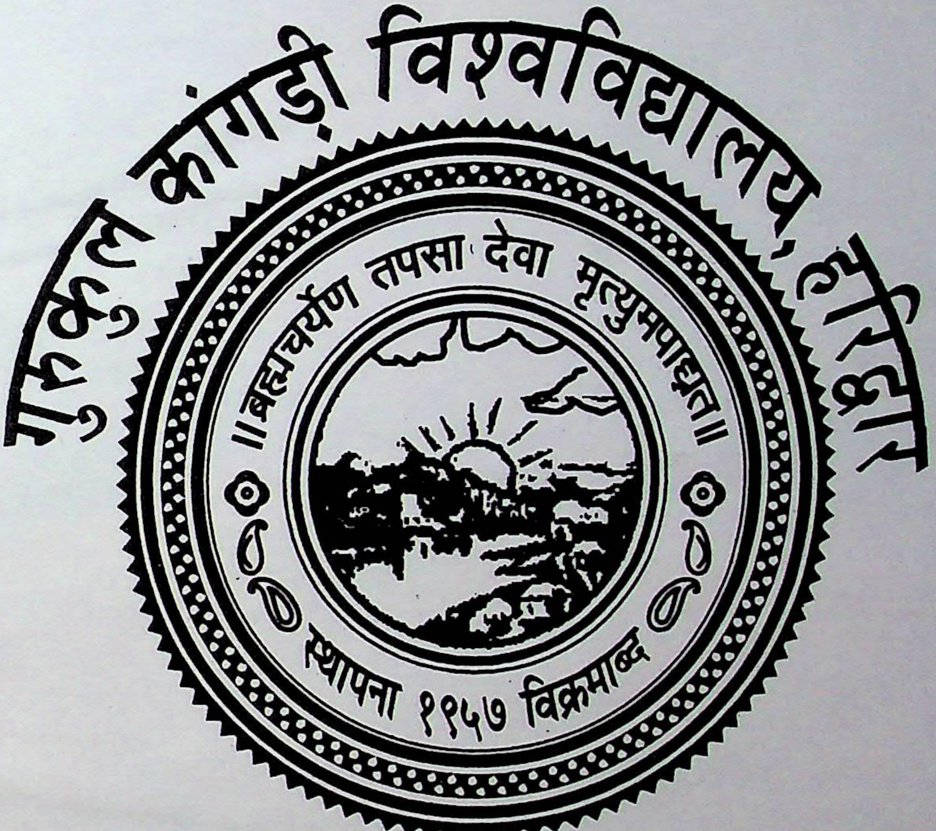
गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय, हरिद्वार
॥ब्रह्मचर्येण तपसा देवा मृत्युमपाघ्नत॥
स्थापना १९५७ विक्रमाब्द

गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय की
वर्तमान मुद्रा-मार्च 2002
तदनुसार फाल्गुन 2058 विक्रमी सम्वत्

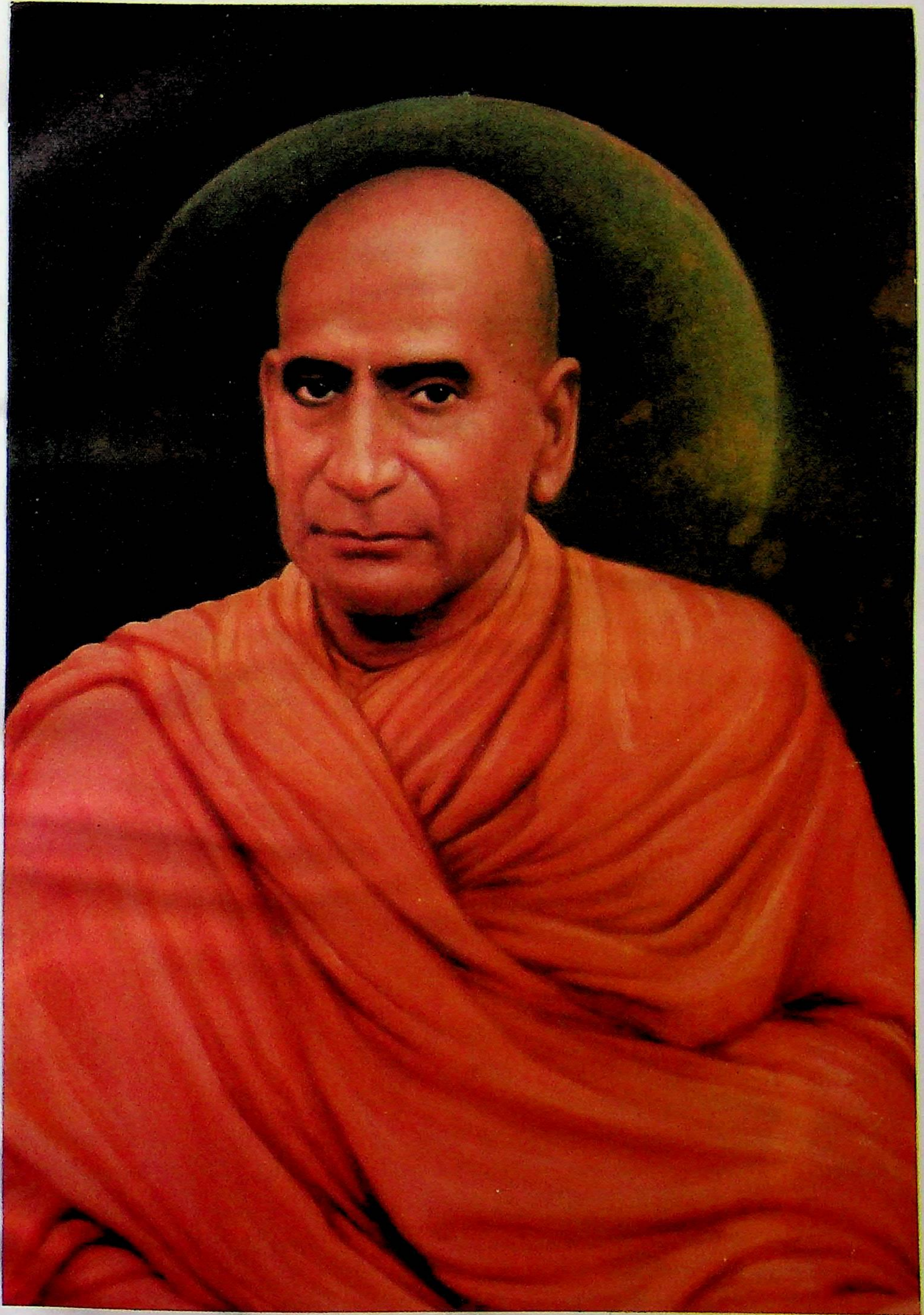

संस्थापक स्वामी श्रद्धानन्द जी महाराज

आत्म निवेदन

गुरुकुल नाम की संस्था को गुजरांवाला (वर्तमान पाकिस्तान) में सन् 1900 में महात्मा मुंशीराम ने स्थापित किया था। यह संस्था उचित स्थान मिलने पर कांगड़ी ग्राम (हरिद्वार) में स्थानान्तरित करके 1902 में लायी गई। यहाँ पर इस का नाम गुरुकुल कांगड़ी के रूप में विख्यात हो गया।

गुरुकुल कांगड़ी के शताब्दी वर्ष का 4 मार्च 2001 ईस्वी से शताब्दी समारोह का शुभ आरम्भ किया गया।

गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय एक प्रसिद्ध शिक्षण संस्था के रूप में माना जाता है। गुरुकुल कांगड़ी के सौ वर्ष के इतिहास में, उसका सौ वर्ष का लेखा-जोखा प्रस्तुत किया गया है। इस ग्रन्थ में प्रथम अध्याय को विषय प्रवेश के रूप में अङ्कित किया गया है। इसमें गुरुकुल शिक्षा पद्धति की पृष्ठभूमि के रूप में हिन्दु परम्पराओं पर अंग्रेजी शिक्षा का कुप्रभाव के रूप में चित्रित किया है। इसी अध्याय में प्राचीन भारत की शिक्षा पद्धति का वर्णन किया गया है।

इस ग्रन्थ के द्वितीय अध्याय में गुरुकुल की स्थापना के मूल कारणों का विस्तार पूर्वक वर्णन किया है। गुरुकुल की स्थापना एवं उसका प्रथम वर्ष, कांगड़ी ग्राम में गुरुकुल, गुरुकुल की प्रथम नियमावली, नए भवनों का निर्माण, महात्मा मुंशीराम का सर्वस्व त्याग, गुरुकुल की बढ़ती हुई ख्याति, उच्च शिक्षा की व्यवस्था, प्रथम दीक्षान्त समारोह, प्राचीन और नवीन प्रवृत्तियों का संघर्ष, गुरुकुल कांगड़ी का विकास, महात्मा गांधी का गुरुकुल कांगड़ी में आगमन का संक्षिप्त विवरण प्रस्तुत किया है। इसी अध्याय में स्वामी श्रद्धानन्द का गुरुकुल को राष्ट्रीय विश्वविद्यालय बनाने का स्वप्न, महात्मा मुंशीराम द्वारा संन्यास ग्रहण करके स्वामी श्रद्धानन्द का नाम से विख्यात होना, स्वतन्त्र राष्ट्रीय विश्वविद्यालय के रूप में गुरुकुल कांगड़ी, स्वामी श्रद्धानन्द और स्वतन्त्रता आन्दोलन, और गुरुकुल में भयंकर बाढ़ पर विवेचन किया है।

तृतीय अध्याय में नए स्थान पर गुरुकुल के पुनःनिर्माण का वर्णन करते हुए कन्या गुरुकुल देहरादून की स्थापना, गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय की प्रगति एवं विकास और स्वामी श्रद्धानन्द के बलिदान का उल्लेख किया गया है। इसी अध्याय में यह भी प्रस्तुत किया है कि गुरुकुल शिक्षा के लिए सुझाव देने हेतु, गुरुकुल कमीशन का गठन किया था, उस कमीशन की रिपोर्ट के अनुसार आर्य विद्या सभा का गठन आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब ने किया था। इसके साथ ही इस अध्याय में गुरुकुल कांगड़ी की उपाधियों की मान्यता, गुरुकुल कांगड़ी की स्वर्ण जयन्ती, कृषि विद्यालय महाविद्यालय, फार्मेसी का नया भवन, पं० जवाहरलाल नेहरू का गुरुकुल में आगमन, हीरकजयन्ती, गुरुकुल में सरकारी समिति का आगमन, राष्ट्रपति का आगमन और श्रीमती इन्दिरा गाँधी द्वारा मुख्य अतिथि के रूप में दीक्षान्त भाषण प्रदान करने आना आदि का भी चित्रण किया गया है।

चतुर्थ अध्याय में गुरुकुल कांगड़ी को डिम्ड. टु. बी. यूनिवर्सिटी की मान्यता, विश्वविद्यालय के नए संविधान का निर्माण, गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय का विकास एवं उसकी प्रगति का विवेचन किया गया है।

पंचम अध्याय में संविधान का पुनः परिवर्तन, विजिटिंग कमेटी का गुरुकुल विश्वविद्यालय में आगमन, सप्तम पंचवर्षीय योजना हेतु विश्वविद्यालय द्वारा गठित समिति का गुरुकुल में आगमन आदि का वर्णन किया गया है।

षष्ठ अध्याय में कन्या गुरुकुल महाविद्यालय, देहरादून की स्थापना एवं उसका उद्देश्य, पाठ्यक्रम और कन्या गुरुकुल के निर्माताओं का विस्तारपूर्वक उल्लेख किया है। उसी अध्याय में कन्या गुरुकुल देहरादून को गुरुकुल कांगड़ी के द्वितीय परिसर के रूप में अङ्गीभूत महाविद्यालय की मान्यता का वर्णन भी हुआ है।

सप्तम अध्याय में गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय और विभिन्न आन्दोलनों का वर्णन करते हुए स्वतन्त्रता आन्दोलन, हैदराबाद आन्दोलन, हिन्दी सत्याग्रह और गौ-रक्षा आन्दोलन का विवेचन किया है।

अष्टम अध्याय में गुरुकुल के स्नातकों का विभिन्न क्षेत्रों में योगदान का प्रतिपादन किया हैं। इसमें आर्य समाज के क्षेत्र में प्रचार एवं प्रसार, स्नाताकों द्वारा विदेशों में प्रचार और इसी प्रकार वैदिक साहित्य, संस्कृत साहित्य, हिन्दी साहित्य और पत्रकारिता के क्षेत्र में स्नातकों के योगदान का चित्रण किया गया है।

नवम अध्याय में गुरुकुल के प्रशासक, उनके व्यक्तित्व एवं कृतित्व पर प्रकाश डाला गया है। इनमें संस्थापक स्वामी श्रद्धानन्द, आचार्य रामदेव अन्य आचार्यगण, कुलाधिपतियों, कुलपतियों और कुलसचिव गण का व्यक्तित्व एवं कृतित्व का वर्णन किया है।

दशम- अध्याय में गुरुकुल के प्रारम्भिक काल से लेकर आज तक जितने भी विशिष्ट अतिथि एवं मुख्य अतिथिगण विश्वविद्यालय में पधारें है, उन द्वारा प्रदत्त दीक्षान्त भाषण एवं विशिष्ट भाषणों का संक्षिप्त सार प्रस्तुत किया गया है।

जिन ग्रन्थों को प्रमाण मानकर मैंने यह ग्रन्थ लिखा है, वे निम्नलिखित हैं:-

गुरुकुल पत्रिका के 36 वर्ष के सभी 432 अंकों से प्रकाश्य सामग्री संकलित की गई है। डॉ॰ सत्यकेतु द्वारा लिखित आर्यसमाज का इतिहास भाग-3,4 और 5, आर्यलेखक कोश, डॉ॰ विनोद चन्द्र द्वारा संकलित एवं सम्पादित गुरुकुल स्नातक परिचायिका, (यद्यपि मेरे द्वारा इस ग्रन्थ की 60 प्रतिशत प्रकाश्य सामग्री संकलित की गई थी। और दीक्षालोक-डॉ॰ विष्णुदत्त राकेश द्वारा सम्पादित आदि ग्रन्थों के अनुसार ही गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय का सौ वर्ष का इतिहास लिखा गया है। मैं इन समस्त लेखकों एवं स्नातकों का हृदय से आभारी हूं।

सर्वप्रथम मैं परमपिता परमात्मा का आभारी हूँ जिसकी असीम कृपा से ही यह ग्रन्थ लिखा जा सका है। आचार्य वेदप्रकाश जी का विशेष रूप से आभारी हूँ, जिन्होंने समय-समय पर ग्रन्थ के लिखने में मुझे प्रेरणा प्रदान की है।

इस ग्रन्थ में भी मेरे द्वारा लिखा गया है, उनका सम्पूर्ण उत्तरदायित्व मेरा है। जो भी इस में विशेषता है, वह मेरे पूर्ववर्ती स्नातक एवं विद्वानों की है, जो भी इस में दोष रह गये हैं, वे सभी मेरे हैं।

इस ग्रन्थ की पाण्डुलिपि तैयार करने में ब्र॰ मृडीक व्रतेश एवं ब्रह्मचारी नरेश प्रसाद वेदालंकार के छात्रों का सहयोग प्राप्त हुआ है, उनका भी हृदय से धन्यवाद करता हूँ। भारतीय विद्या प्रकाशन दिल्ली का मैं विशेष आभारी हूँ। श्री महावीर 'नीर' विद्यालंकार का भी आभारी हूँ इस ग्रन्थ के लेखन में सुझाव देते रहे हैं।

इस ग्रन्थ में लिखने में मुझे विश्वविद्यालय के पुस्तकालय से अत्याधिक सहायता प्राप्त हुई है, इसलिये मैं पुस्तकालयाध्यक्ष डॉ॰ जगदीश प्रसाद विद्यालंकार का विशेष रूप से आभारी हूँ, उनके साथ ही पुस्तकालय के समस्त कर्मचारियों को भी धन्यवाद देता हूँ। मेरे सुपुत्र प्रियरञ्जन एवं हेमेन्द्र कुमार एम.सी.ए. भी धन्यवाद के पात्र हैं, जिन्होंने कम्प्युटर का समस्त कार्य किया है। श्री प्रेमचन्द जुयाल जी का धन्यवाद करता हूँ।

इस ग्रन्थ के लिखने में मुझे मेरी पत्नी डॉ॰ सुषमा स्नातिका का विशेष सहयोग एवं सहायता मिलती रही है, उनका हृदय से आभार अभिव्यक्त करता हूँ।

मैं अपने समस्त गुरुजनों एवं पूर्ववर्ती स्नातकों का आभारी हूँ, जिनकी अन्तःप्रेरणा से गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय का सौ वर्ष के इतिहास को लिखकर एवं संकलित करके पाठकों के सम्मुख प्रस्तुत करने में समर्थ हो सका हूँ।

गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय
दिनांक 4 मार्च 2002
फाल्गुन 2057 विक्रमी सम्वत्

विदुषां वंशवद
जयदेव वेदालंकार

समर्पण

महर्षि दयानन्द के द्वारा जिन्होंने वैदिक अमृत का पान किया,
जिनका जीवन वेदों के सतत् स्वाध्याय से आप्लावित हुआ, जिन्होंने
आर्यसमाज को सार्वभौमिक रूप से प्रतिष्ठापित करने के लिए
सार्वदेशिक सभा की स्थापना की थी जिनको महात्मा गाँधी
भी बड़ा भाई कहते थे, जो शुद्धि आन्दोलन के
जन्मदाता थे, जो बहुविध प्रतिभा के धनी थे,
जिन्होंने हिन्दू नेता होते हुए भी जामा मस्जिद
में भाषण दिया था, जो भारत देश को
आर्यों का देश मानते थे, जो
स्वतन्त्रता आन्दोलन के
उन्नायक थे, जिन्होंने
भारतीय हिन्दू शुद्धि
सभा का गठन किया,
जिनका शुद्धि के
लिए ही बलिदान
हुआ।
उस भारतीय संस्कृति की साक्षात् मूर्ति तपस्वी प्रवर वैदिक साहित्य एवं
वैदिक सिद्धान्तों के मर्मज्ञ, तार्किक शिरोमणि, गुरुकुल शिक्षा के
उद्धारक, गुरुकुल काँगड़ी विश्वविद्यालय के संस्थापक, जो
"उपह्वरे गिरीणां संगमे च नदीनाम्। धिया विप्रोऽजायत"।
मन्त्र से प्रेरित होकर गुरुकुल शिक्षा प्रणाली के आविष्कारक
बने। उन्हीं पूज्यपाद कुलपिता स्वामी श्रद्धानन्द के
द्वारा संस्थापित गुरुकुल काँगड़ी का
सौ वर्ष का इतिहास उन्हीं के पवित्र
चरणों में सादर साभार समर्पित
है।
"त्वदीयं वस्तु गोविन्द! तुम्यमेव समर्पये"

जयदेव वेदालंकार

विषयानुक्रमणिका

क्रम संख्या	विवरण	पृष्ठ संख्या
1.	समर्पण	III
2.	आत्म निवेदन	V
3.	प्ररोचना प्रो॰ : वेद प्रकाश शास्त्री, उपकुलपति	VII
4.	**प्रथमाध्याय**	
	विषय प्रवेश	1-21
	भारत में शिक्षा का संक्रमण काल/	
	प्राच्य परम्पराओं पर अंग्रेजी शिक्षा का कुप्रभाव।	
	चार्ल्स ग्राण्ट द्वारा मिशनरी के पक्ष में आन्दोलन।	
	ईस्ट इण्डिया कम्पनी के शिक्षा नीति के तीन युग।	
	मिशनरी शिक्षा पद्धति में परिवर्तन।	
	पुनर्जागरण तथा नवजागरण के युग का सूत्रपात।	
	प्राचीन भारतीय शिक्षा पद्धति।	
5.	**द्वितीयाध्याय**	**22-70**
	गुरुकुल की स्थापना का मूल कारण	22
	गुरुकुल की स्थापना और उसका प्रथमवर्ष	27
	काँगड़ी ग्राम में गुरुकुल	29
	गुरुकुल की प्रथम नियमावली	32
	ब्रह्मचारियों की दिनचर्या	35
	महात्मा मुंशीराम का सर्वस्य त्याग	37
	गुरुकुल की बढती हुई ख्याति	38
	उच्च शिक्षा की व्यवस्था	40
	महाविद्यालय की स्थापना	42
	प्रथम दीक्षान्त समारोह	43
	सभा में आन्तरिक विवाद	45
	गुरुकुल काँगड़ी का विकास	50
	भारत सरकार और गुरुकुल	53
	महात्मा गाँधी का गुरुकुल में आगमन	58
	गुरुकुल में वायसराय का पदार्पण	59
	गुरुकुल को राष्ट्रीय विश्वविद्यालय बनाने का स्वप्न।	60
	महात्मा मुंशीराम द्वारा सन्यास ग्रहण	61
	स्वामी श्रद्धानन्द का पुनः गुरुकुल में आगमन	64

क्रम संख्या	विवरण	पृष्ठ संख्या
	गुरुकुल की नयी व्यवस्था	65
	स्वामी श्रद्धानन्द और स्वतन्त्रता आन्दोलन	68
	गुरुकुल में भयंकर बाढ और स्थान परिवर्तन	70
6.	**तृतीयाध्याय**	**72-113**
	नये स्थान पर गुरुकुल का पुनर्निमाण	72
	कन्या गुरुकुल की स्थापना	73
	स्वामी श्रद्धानन्द का बलिदान	75
	गुरुकुल कमीशन	77
	आर्य विद्या सभा का गठन	82
	गुरुकुल काँगड़ी विश्व विद्यालय की उपाधियों की मान्यता	87
	गुरुकुल काँगड़ी की स्वर्ण जयन्ती	90
	आयुर्वेद महाविद्यालय	93
	गुरुकुल केम्ब्रिज के प्रोफेसर	101
	फार्मेसी का नया भवन	102
	आयुर्वेद कमीशन	105
	विज्ञान महाविद्यालय का शिलान्यास	108
	हिन्दी विद्यालय अनुदान आयोग का आगमन	108
	विश्व विद्यालय अनुदान आयोग का आगमन	110
	पं० जवाहर लाल नेहरू का गुरुकुल में आगमन	110
7.	**चतुर्थाध्याय**	**114-170**
	गुरुकुल काँगड़ी विश्व विद्यालय की हीरक जयन्ती	114
	गुरुकुल में सरकारी समिति का आगमन	114
	स्नातक भवन	116
	विश्वविद्यालय विधेयक अगले सत्र में	117
	डॉ० कोठारी का गुरुकुल में आगमन	121
	बंगाल में गुरुकुल का सेवादल	123
	अंग्रेजी विरोधी आन्दोलन	127
	स्नातक मण्डल नव निर्वाचन	128
	श्रीमती इन्दिरा गाँधी का आगमन	129
	नये कुलाधिपति का भव्य स्वागत	130
	गुरुकुल के स्नातक विदेशों में	133
	सरकार द्वारा डीम्ड. टु. बी. विश्वविद्यालय की मान्यता	135
	विश्वविद्यालय विकास एवं प्रगति	150
	विश्वविद्यालय अनुदान आयोग समिति का आगमन	154
	गुरुकुल में नया विवाद	163
	न्यायालय द्वारा प्रशासक की नियुक्ति	166

क्रम संख्या	विवरण	पृष्ठ संख्या
8.	**पंचमाध्याय**	**171-256**
	संविधान में परिवर्तन	171
	विजिटिंग कमेटी का आगमन	175
	नये कुलपति	181
	सप्त पञ्च वर्षिय योजना-अनुदान	184
	कन्या गुरुकुल महाविद्यालय हरिद्वार	205
	गुरुकुल काँगड़ी विश्वविद्यालय का मूल्याकङ्न	222
	संकायों की स्थापना	228
	गुरुकुल काँगड़ी शताब्दी समोरह का प्रारम्भ	229
	गुरुकुल काँगड़ी फार्मेसी	232
	पुरातत्व संग्राहलय	234
	पुस्तकालय	247
9.	**षष्ठाध्याय**	**257-269**
	कन्या गुरुकुल देहरादून कन्या गुरुकुल के निर्माता	258
	कन्या गुरुकुल का विकास	261
	स्नातिकाओं का विभिन्न क्षेत्रों में योगदान	262
	कन्या गुरुकुल द्वितीय परिसर के रुप में	266
10.	**सप्तमाध्याय**	**270-305**
	विभिन्न आन्दोलन और गुरुकुल काँगड़ी	270
	स्वतन्त्रता आन्दोलन में गुरुकुल काँगड़ी का योगदान	270
	हैदराबाद आन्दोलन	286
	हिन्दी आन्दोलन	299
	गौ-रक्षा आन्दोलन	302
11.	**अष्टमाध्याय विभिन्न क्षेत्रों में स्नातकों का योगदान**	**306-328**
	आर्य समाज के क्षेत्र में	306
	वैदिक साहित्य	311
	संस्कृत साहित्य	314
	हिन्दी साहित्य सृजन	316
	पत्रकारिता के क्षेत्र में	324
12.	**नवमाध्याय**	**329-403**
	गुरुकुल काँगड़ी के प्रशासक स्वामी श्रद्धानन्द से वर्तमान प्रशासकों तक	329
13.	**दशमाध्याय**	**404-503**
	गुरुकुल के विशिष्ट एवं मुख्य-अतिथिगण दीक्षान्त भाषणों का सार	
14.	**परिशिष्ट**	**504**
	गुरुकुल काँगड़ी विश्वविद्यालय के वर्तमान शिक्षक एवं शिकेत्तर कर्मचारी गण।	
15.	**शिक्षक वर्ग**	

प्ररोचना

भगवती भागीरथी के सुरम्य ऋषिजन सेव्य नन्दनवतुल्य रमणीक तट पर नगराज हिमालय की शिवालिक पर्वतमाला की मनोरम उपत्यका में संस्थापित प्राक्तन प्राच्यविद्याओं के स्वर में आधुनिक विद्याओं का प्रसारक गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय आज शताब्दी वर्ष में प्रवेश कर चुका है। देशभक्ति रस की की त्रिस्रोतस्विनी में अवगाहन करने वाले भारतीयों, विशेष कर आर्य जगत् के लिए वह दिवस कितना पावन तथा आनन्दस्रावी रहा होगा, जब महामनीषियों के अग्रणी मुंशीराम जी (क्रमशः महात्मा मुंशीराम तथा स्वामी श्रद्धानन्द) ने वसन्त पंचमी के दिन सन् 1902 को ऋषिवर स्वामी दयानन्द जी के स्वप्नों को साकार करने हेतु कांगड़ी ग्राम से सटे गंगा तट पर गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय की स्थापना पावमानी वेद की ध्वनि के साथ यज्ञ करते हुए की थी। यह गुरुकुल का संस्थापक गुरुकुल शिक्षा पद्धति में कैसे बालकों को निर्माण करेगा, यह देखने के लिय आर्य जगत् से विशाल जनसमूह आना प्रारम्भ हो गया। गुरुकुलीय ब्रह्मचारियों की दिनचर्या ने सब को मन्त्रमुग्ध कर दिया। दिल खोल कर दानराशी को देना प्रारम्भ कर दिया और शनैः शनैः यह गुरुकुल बढ़ता गया। वर्तमान में यह विश्वविद्यालय के रूप में सरकार से मानित होकर निरन्तर उन्नति कर रहा है।

यह गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय किस प्रकार स्थापित हुआ, इस का विस्तार कैसे हुआ इसने समग्र देश तथा संसार अथवा मानव जाति को विभिन्न क्षेत्रों में क्या दिया, तात्कालिक भारत के महान् से महान् राष्ट्रपुरुषों ने कितनी बार इस पावन भूमि का पदार्पण करके अपने को धन्य समझा, महात्मा गांधी, पं॰ जवाहर लाल नेहरू, डॉ॰ राजेन्द्र प्रसाद आदि ने यहां आकर क्या विचार प्रकट किये। यहां के स्नातकों ने अपनी कीर्ति किस प्रकार देश-विदेश में अर्जित की, तथा गुरुकुल ने अपने शैशवकाल से आज शताब्दी में प्रवेश तक किस-किस रूप में अपने गौरव को अंकित किया है। इन सब बातों का उत्तर जानने के लिऐ ही गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय के यशस्वी स्नातक डॉ॰ जयदेव वेदालंकार (वरिष्ठ प्रोफेसर दर्शन विभाग प्राच्य विद्या संकाय के अध्यक्ष तथा पूर्व कुलसचिव) ने पूर्ण परिश्रम के साथ गुरुकुल का सौ वर्ष का बृहद् इतिहास लिखा है।

गुरुकुल के इस ऐतिहासिक ग्रन्थ का लेखक कोई तटस्य व्यक्ति नहीं है कोई पर व्यक्ति भी नहीं है तथा न ही गुरुकुलीय परम्परा से अपरिचित है। यह तो ऐसा व्यक्ति है जो इसी कुलमाता की गोद में क्रीडा करता हुआ गुरूजनों के चरणों में विद्याभ्यास करके विद्या में निष्णात हुआ है। जिसने 37 वर्ष तक कुलमाता के पुण्यप्रसाद का आस्वादन किया है जिसने कुलमाता के सुख-दुःख के साथ स्वयं को मिलाकर यथार्थ का अनुभव किया है, जो स्वयं विद्या विलास में पटु है जो गुरुकुलीय परम्परा का स्वयं पोषक है जिसके रोम-रोम में कुलमाता के अभिनन्दन का स्वर गूंजता है। ऐसा गुरुकुल का स्नातक जब अपनी मातृ संस्था के इतिहास को लिखना चाहता है तो यह उसकी स्वयं की आस्था है, निश्चल निष्ठा है, दृढ़विश्वास है तथा कुलमाता की ऐतिहासिक कीर्ति पताका को उत्तोलित करके स्वयं को कृतज्ञता की अनुभूति से अनुप्राणित करना है।

जब मुझे डॉ॰ जयदेव जी वेदालंकार ने अवगत कराया कि उन्होंने गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय का शतवर्षीय इतिहास लिख लिया है तो मुझे अपार आनन्द की अनुभूति हुई। मैंने सोचा कि मेरे भ्राता जी का एक कुलमाता के चरणों में प्रस्तुत अनुपम अद्भुत उपहार है जो चिरस्मरणीय रहेगा। जब भी कोई गुरुकुल के अतीत को निहारने की इच्छा करेगा तो उसे सहज रूप में इस ऐतिहासिक ग्रन्थ में वाञ्छित सामग्री दृष्टिगत हो जायेगी।

संस्था के संस्थापक अमर हुतात्मा स्वामी श्रद्धानन्द जी के संक्षिप्त समग्र इतिहास का उद्गायक, प्रारम्भ से लेकर आज तक के समस्त गुरुकुल के आचार्यों के संक्षिप्त जीवनवृत्त का परिचयदायक समस्त कुलपतियों की कार्यपद्धति तथा क्षमता का प्रवाचक तथा गुरुकुल के समस्त प्रतिभाशाली यशस्वी अपने-अपने क्षेत्र के अग्रणी देश-विदेश में गुरुकुल गौरव के वर्धापक स्नातकों का प्रकाशक यह शताब्दी वर्ष में डॉ॰ जयदेव वेदालंकार द्वारा लिखा गया ऐतिहासिक ग्रन्थ होगा।

मैं इस ग्रन्थ के प्रणेता डॉ॰ वेदालंकार जी को हार्दिक वर्धापान देता हूं। जिन्होंने पूर्ण परिश्रम के साथ संक्षिप्त समय में ग्रन्थ का निर्माण कर वांञ्छित कार्य को सम्पन्न किया है। मैं इनके दीर्धायुष्य यशस्य धर्म्य तथा स्वास्थ्य की कामना करता हूं।

प्रो॰ वेदप्रकाश शास्त्री
आचार्य एवं उपकुलपति

प्रथम अध्याय

विषय प्रवेश

भारत में शिक्षा का संक्रमण काल

एक प्रसिद्ध कहावत है कि आवश्यकता अविष्कार की जननी है। इसी प्रकार एक दूसरी उक्ति हैं कि क्रिया पर प्रतिक्रिया अवश्य होती है। सन् 1800 ई० से शिक्षा के क्षेत्र में भारत में यह विवाद छिड़ा हुआ था कि भारतवर्ष में शिक्षा पद्धति भारतीय शिक्षा पद्धति के रूप में चालू रखी जाये अथवा पाश्चात्य शिक्षा पद्धति के अनुसार शिक्षा दी जाये। इन दोनों पक्षों के दावेदार अपने-अपने पक्ष में तर्क प्रस्तुत कर रहे थे। पाश्चात्यवादी पक्ष के प्रबल पक्षधर मैकाले ने भारतीय शिक्षा के विरोध में एक नोट लिखते हुए लिखा कि इस समिति का अध्यक्ष होने के कारण उसने इस विषय में सक्रिय भाग नहीं लिया। यह नोट 2 फरवरी 1835 ई० को परिषद् के सम्मुख प्रस्तुत किया गया। उसने प्रसिद्ध तर्क प्रस्तुत करते हुए कहा कि इस समय भारत में साहित्य शब्द का अभिप्राय भारत के प्राचीन साहित्य से न होकर अंग्रेजी साहित्य से है। इसी प्रकार विद्वान् व्यक्ति शब्द का प्रयोग संस्कृत या अरबी, फारसी का विद्वान् न होकर अपितु यह विशेषण उस व्यक्ति के लिये माना जाता है जो ब्रिटिश दार्शनिक ''लॉक'' के दर्शन या कवि मिल्टन के काव्य में निष्णात् हों इस प्रकार उन्होंने लिखा कि पश्चिमी ज्ञान-विज्ञान की शिक्षा भारत में आंग्ल भाषा के माध्यम से ही दी जा सकती है। मैकाले चार्टर के शब्दों की अपनी व्याख्या को वह वैसे ही मानता था। उसको मनवाने के लिए उसका दुराग्रह भी था। उसका यह भी कहना था कि यदि मेरी इस व्याख्या को ठीक न समझा गया तो वह चार्टर के अनुभाग-40 को रद्द करने के लिए एक बिल प्रस्तुत करेगा। मैकाले की यह व्याख्या कानूनी दृष्टि से सही नहीं थी और चार्टर के संशोधन न करने वालों की इच्छा के विरुद्ध थी।

मैकाले का दूसरा तर्क यह भी था कि इन संस्थाओं को दी जाने वाली सहायता समाप्त कर देनी चाहिए। क्योंकि समाजोपयोगी शिक्षा न देने के कारण इन्हें बनाए रखने का कोई औचित्य नहीं था। जो शिक्षण संस्थाएं जमीदारों की आमदनी के साथ बंधी हुई थी, उनके विषय में भी उसने कहा कि उस समय उनको उपयोगी समझकर यह व्यवस्था की गई थी। इसका अभिप्राय यह कभी नहीं था कि भविष्य में इन संस्थाओं को सदा सहायता राशि दी जाती रहेगी। इसके लिए उन्होंने एक उदाहरण प्रस्तुत किया। जैसे कि यदि हम आज किसी स्थान पर कोई हॉस्पिटल खोलते हैं कि इससे सभी के स्वास्थ्य की रक्षा हो सकेगी परन्तु बाद में हम देखते हैं कि वहाँ हॉस्पिटल में स्वास्थ्य की रक्षा न होकर वह संस्था स्वास्थ्य के लिए घातक सिद्ध हो रही है तो उस हॉस्पिटल को बन्द कर दिया जाता है और कोई भी सरकार उसको चलाने के लिए बाध्य नहीं है। इसलिए प्राचीन संस्थाओं को बन्द कर देना ही सही निराकरण है।

उसका तीसरा तर्क है कि इस समय अंग्रेजी ही एक मात्र भाषा है जो कि विश्व के प्रमुख देशों में प्रचलित है। इसमें उच्च कोटि का साहित्य उपलब्ध है। यही भाषा भारतवासियों को शिक्षा देने का माध्यम बन सकती है। जो कोई भी व्यक्ति अंग्रेजी भाषा को जानता है वह मानों विशाल बौद्धिक सम्पत्ति को प्राप्त कर लेता है इस साहित्य का सृजन विश्व के सबसे अधिक बुद्धिमान् देशों ने 90 पीढ़ियों में किया है, उसने व्यंग्य करते हुए लिखा था कि हम सार्वजनिक रूप से आयुर्वेद की एक ऐसी चिकित्सा पद्धति को पढ़ाऐंगे जिसे कोई घोड़े की नाल बांधने वाला अंग्रेज अपने लिए कलंक समझेगा। ऐसे ही ज्योतिष की शिक्षा देनी

देनी पड़ेगी जिसे पढ़कर अंग्रेजी छात्रावास की लड़कियाँ हसेंगी। क्या हम ऐसा इतिहास पढ़ाऐंगे जिसमें तीस फीट ऊंचे और तीन हजार वर्ष तक शासन करने वाले राजाओं का वर्णन है? क्या हम ऐसे भूगोल पढ़ाऐंगे जिसमें मधु और नवनीत से भरे हुए समुद्रों का उल्लेख है?

यह सच है कि कुछ लोग अंग्रेजी शिक्षा को म्लेच्छों की भाषा मानकर इसे पसन्द नहीं करते हैं इसके लिए हमें उनके मानसिक विचारों को बदलना होगा और यह इंग्लैण्ड का कर्त्तव्य है कि उनको उनके हित के लिए आधुनिक विज्ञान का ज्ञान कराए। भारतीय अंग्रेजी को बहुत पसन्द करते हैं, वे अरबी और संस्कृत भाषा बिल्कुल पसन्द नहीं करते हैं। यह बात इससे स्पष्ट है कि भारतीय पैसा खर्च करके भी अंग्रेजी भाषा पढ़ना चाहते हैं, परन्तु इस विशाल भारत में ऐसा कोई भारतीय छात्र नहीं है जो बिना छात्रवृत्ति अरबी और संस्कृत पढ़ने को तैयार हो। आगे भी लिखते हैं कि हमारी कमेटी ने एक लाख से भी अधिक की अरबी और संस्कृत की पुस्तकें छापी हैं परन्तु उनको खरीदने वाला नहीं है। इस समय इन भाषाओं की 23 हजार पुस्तकें समिति के गोदामों में सड़ रही हैं। प्रति वर्ष 20 हजार रुपये नया कूड़ा खरीदने में व्यय किए जाते हैं। गत तीन वर्षों में इस प्रकार 60 हजार रुपया व्यय किया गया है जिससे एक हजार रुपये की भी आमदनी नहीं हुई है। इस अवधि में स्कूल बुक सोसायटी ने अंग्रेजी की सात-आठ हजार पुस्तकें मुद्रित की थी, उन पुस्तकों पर 20 प्रतिशत से अधिक का लाभ प्राप्त किया है।

संस्कृत अरबी भाषाओं के पठन-पाठन के लिए तर्क प्रस्तुत किया जाता रहा है कि इन ग्रन्थों में हिन्दू और मुसलमानों के उत्तराधिकार, दाय भाग और सम्पत्ति के बंटवारे आदि का वर्णन मिलता है। इसलिए हिन्दू मुसलमानों के तत् सम्बन्धी विवादों को सुलझाने के लिए इन ग्रन्थों का अध्ययन करना आवश्यक है। मैकाले ने अपने नोट में अपने तर्कों का उत्तर दिया कि संस्कृत तथा अरबी ग्रन्थों के आधार पर अंग्रेजी भाषा में हिन्दू तथा मुसलमानों के कानूनों की अलग-अलग संहिताएं तैयार करनी चाहिए ताकि इनके आधार पर अंग्रेजी "जज" ऐसे मामलों का निर्णय करें। ऐसा हो जाने पर संस्कृत और अरबी के अध्ययन की कोई आवश्यकता नहीं रहेगी। अपने नोट के अन्त में उसने प्रबल रूप से यह जोर दिया कि संस्कृत तथा अरबी, फारसी पढ़ाने वाली वर्तमान संस्थाओं को तुरन्त बन्द कर देना चाहिए।[1]

मैकाले ने अपना यह नोट स्वयं जाकर गवर्नर जनरल के तात्कालिक निवास स्थान बैरकपुर में लार्ड विलियम को व्यक्तिगत रूप में प्रस्तुत किया। गवर्नर ने इसे कार्य-कारिणी परिषद् में प्रस्तुत करने के लिए शिक्षा समिति के सचिव श्री प्रिन्सेप को भेज दिया। सचिव ने इसे नियमानुसार सदस्यों की सूचना और टिप्पणी के लिए प्रेषित किया। जब किसी सदस्य ने इस पर कोई टिप्पणी नहीं की तो अरबी और संस्कृत की शिक्षण संस्थायें तुरन्त बन्द करने के लिए एक नोट परिषद् में प्रस्तुत करने के लिए तैयार किया गया। जब वह नोट सदस्यों को भेजा गया तो वह गोपनीय नहीं रह सका। कलकत्ते में यह समाचार तेजी से फैल गया कि परिषद् अरबी के मदरसे और संस्कृत महाविद्यालयों को बन्द करना चाहती है। तीन दिन के अन्दर ही तीस हजार व्यक्तियों के हस्ताक्षर से मदरसा बन्द करने के विरोध में एक विज्ञापन गवर्नर जनरल के पास पहुँच गया। हिन्दुओं की ओर से भी संस्कृत महाविद्यालय बन्द न किया जाए इस आशय के पत्र गवर्नर जनरल के पास भेजे गए। उस समय इस विषय में इतनी जोरों से हलचल मची की वह एक आन्दोलन के रूप में परिवर्तित हो गया कि सरकार को मैकाले के प्रस्ताव के अनुसार इन शिक्षण संस्थाओं के बन्द करने के निर्णय को बदलना पड़ा और मैकाले के प्रस्ताव को रद्द करना पड़ा।

गवर्नर जनरल की कार्यकारिणी में यह विषय आने पर मैकाले और प्रिंसेप में पुनः इस विषय पर विवाद हुआ, परन्तु गवर्नर ने मैकाले के पक्ष का समर्थन किया। अन्त में 7 मार्च 1835 को इस विषय में परिषद् का जो निर्णय सरकारी प्रस्ताव के रूप में प्रकाशित किया गया उसमें यह कहा गया था कि "सरकार का महान् उद्देश्य भारत के निवासियों में यूरोप के साहित्य और विज्ञान को बढ़ावा देना होना

चाहिए और शिक्षा देने के उद्देश्य से व्यय की जाने वाली सारी धन राशि का सर्वोत्तम उपयोग यह होगा कि इसे केवल अंग्रेजी शिक्षा पर लगायी जाय।" परन्तु इसके साथ ही यह भी घोषणा की गई कि संस्कृत और अरबी की शिक्षा देने वाले किसी भी विद्यालय या महाविद्यालय को बन्द करने का सरकार का कोई इरादा नहीं है। जिन छात्रों को इन भाषाओं के अध्ययन करने हेतु जो छात्रवृतियां मिलती हैं वे मिलती रहेंगी, परन्तु इन संस्थाओं में प्रवेश करने वाले छात्रों को भविष्य में कोई छात्रवृति नहीं मिलेगी और न ही उक्त भाषाओं के ग्रन्थों के प्रकाशित करने के लिए किसी प्रकार का कोई व्यय किया जाएगा।

प्राच्य विषयवादियों के तर्क

प्रिन्सेप ने प्राच्य विद्याओं के लिए यह तर्क प्रस्तुत किया कि हमें शिक्षा पद्धति का रूप उस देश की संस्कृति एवं सभ्यता के अनुरूप करना चाहिए। इसलिए उन्होंने कहा कि शिक्षा का माध्यम प्राच्य भाषाओं को ही बनाना उपयुक्त है। इस विषय में उसने पहला तर्क 1813 के चार्टर एक्ट के अनुभाग 43 की कानूनी व्याख्या से दिया। इस अनुभाग में साहित्य के पुनर्जीवन तथा उद्धार के लिए भारत के विद्धानों को प्रोत्साहन देने के लिए एवं भारत के ब्रिटिश प्रदेशों में रहने वाले व्यक्तियों में विज्ञानों की जानकारी बढ़ाने के लिए एक लाख रुपया व्यय करने की घोषणा की गई थी। प्राच्य भाषावादियों का मत था कि इस प्रावधान द्वारा प्रोत्साहित किए जाने वाले साहित्य का आशय हिन्दू और मुसलमानों के संस्कृत एवं अरबी, फारसी के साहित्य से है। इसलिए इनको पढ़ाने के लिए विद्यालय तथा महाविद्यालयों पर ही वह राशि व्यय होनी चाहिए। भारतीय विद्वानों को प्रोत्साहन देने के लिए यह भी आवश्यक था कि उनकी नियुक्ति पढ़ाने के लिए इन संस्थाओं में की जाये। इन विद्वानों के द्वारा जो ग्रन्थ लिखे जाए, उन्हें प्रकाशित किया जाये और उन विद्वानों को भी सम्मानित किया जाये। इस प्रकार सम्मानित किए जाने वाले विद्वान् इस देश के सुप्रसिद्ध पण्ड़ित और मौलवी होने चाहिए। पार्लियामेन्ट द्वारा की गई इस व्यवस्था को मानने के लिए ईस्ट इंडिया कम्पनी व्यवधान के रूप में है। वैसे यह तर्क कानून की दृष्टि से सही था।

दूसरा तर्क एवं युक्ति यह भी थी कि हिन्दू विदेशी एवं विधर्मी अंग्रेजों को म्लेच्छ एवं मुसलमान उन्हें काफिर समझते हैं। वे इनसे बड़ी घृणा करते है। वे इनकी भाषा सीखने के लिए भी तैयार नहीं है। इसलिए यदि चार्टर के अनुसार भारतीयों में पश्चिमी जगत् के ज्ञान-विज्ञान का प्रसार करना हो तो वह अंग्रेजी भाषा के माध्यम से नहीं हो सकता है। क्योंकि वे इसे तिरस्कार की दृष्टि से देखते हैं। इसलिए यह आवश्यक है कि पश्चिमी ज्ञान-विज्ञान को सिखाने के लिए भी संस्कृत और अरबी, फारसी के माध्यम से शिक्षा दी जाय। इन भाषाओं में विज्ञान के ग्रन्थों का अनुवाद किया जाय, उन्हें वे बड़े प्रेम से पढ़ेंगे। इस तरह भारतीयों में शिक्षा का प्रसार बड़ी तेजी से हुआ। इसलिए प्राच्य भाषावादियों का यह विश्वास था कि अंग्रेजी भाषा में लिखी विज्ञानों की पुस्तकों का संस्कृत और अरबी में अनुवाद करने की नीति सर्वथा उचित और पार्लियामेन्ट द्वारा पास की गई कानूनी व्यवस्था के अनुरूप है क्योंकि पार्लियामेन्ट द्वारा जब तक चार्टर का संशोधन न किया जाये तब तक उसमें कोई परिवर्तन नहीं किया जा सकता है।

तीसरा तर्क बनारस के संस्कृत कॉलेज तथा कलकत्ता के मदरसा का व्यय चलाने के लिए उसके साथ लगाए गए जागीरों की व्यवस्था थी। पाश्चात्य भाषा के पक्षधरों के अनुसार संस्कृत, फारसी तथा अरबी की संस्थाएं बिल्कुल बेकार थी। वे छात्रों को युग के अनुरूप कोई उपयुक्त शिक्षा नहीं दे रही थीं। अतः वे इन संस्थाओं को पुनः बन्द करने के पक्ष में थे। उनकी इस बात को प्राच्य भाषावादी मानने को तैयार नहीं थे। उनका विचार था कि ये संस्थाएं कम्पनी ने हिन्दू तथा मुसलमानों का सद्भाव समर्थन पाने के लिए स्थापित की है। वे इस कार्य में सफल भी हुई है। इसलिए इन्हें बन्द भी किया जा सकता है। इनका विस्तार करना अधिक उचित होगा। अपने इस पक्ष को पुष्ट करने के लिए प्रिन्सेप ने मरदसे के बारे में यह कानूनी

प्रश्न उठाया कि उनका व्यय चलाने के लिए एक विशेष जमीदारी की मालगुजारी से देने का निर्णय किया गया था। वर्तमान सरकार इस निर्णय को पलट नहीं सकती है। यदि इन संस्थाओं को कम्पनी द्वारा दिया जाने वाला अनुदान बन्द भी कर दिया जाये तो भी जो जमीदारियों को आमदनी इनको देने के लिए तय हुई थी वह तो देनी ही पड़ेगी। तो भी इन संस्थाओं को बन्द नहीं किया जा सकता है।

चौथा तर्क यह था कि आंग्ल भाषा भारतीयों के लिए विदेशी भाषा है। यदि यह भाषाओं पर शक्तिपूर्वक थोपी गई तो वे इस बारे में अपने प्रबल रोष को आन्दोलन तथा विद्रोह के रूप में प्रकट कर सकते है जिससे ब्रिटिश साम्राज्य खतरे में पड़ सकता है। परन्तु इस तर्क का इसलिए महत्व नहीं था कि भारतीय बड़ी तेजी से अंग्रेजी भाषा सीख रहे थे। कई कानून कट्टर पंथियों के विरोध करने पर भी लागू किए जा चुके थे।

उपर्युक्त मैकाले के नोट के अनुसार तथा उसके बाद कानूनी प्रस्ताव लागू होने के बाद सरकार ने अंग्रेजी शिक्षा का प्रचार एवं प्रसार बड़ी तेजी से किया। 1835 ई० में ही अकेले कलकत्ता में ही अंग्रेजी पढ़ने वाले छात्रों की संख्या हजारों हो गयी।[2] भारत में आगे चलकर के कुछ समाज शास्त्रियों के अनुसार दोनों तरह के अच्छे और बुरे प्रभाव पड़े। इसके अच्छे प्रभाव में यह कहा जा सकता है कि भारतीयों का विदेशियों के साथ सम्पर्क होना, नवजागरण, उन्नीसवीं शताब्दी के धर्म सुधार आन्दोलन, स्वतन्त्रता और समानता की भावनाओं का विकास, राष्ट्रीय आन्दोलन का प्रादुर्भाव बुद्धिवाद की प्रवृत्ति का प्रबल होना, पुरानी परम्पराओं में संशोधन की भावना होना और रूढ़िवाद का सही अर्थ समझना आदि अनेक ऐसे विचारों का विकास हुआ कि भारतीयता को हम अच्छी तरह और अधिक रूप में समझने लगे। बहुत से ऐसे व्यक्ति जो अंग्रेजी साहित्य के विद्वान् हो गए थे, उनमें विदेश में रहकर भारत के स्वतन्त्रता आन्दोलनों को ओर अधिक सशक्त रूप से चलाने की प्रवृत्ति अत्यधिक प्रबल रूप में उत्पन्न हुई। अंग्रेजी साहित्य पढने से उसका दुष्प्रभाव भी अधिक हुआ। जैसे पश्चिम का अन्धानुकरण भारतीय संस्कृति तथा सभ्यता को हीन समझना, मानसिक पराधीनता, आत्म विश्वास का समाप्त होना, अपनी भाषा, संस्कृति, धर्म और सभ्यता को तिलांजलि देना और ईसाई बनना। इस समय अनेक भारतीय पश्चिमी सभ्यता की चकाचौंध से इतने प्रभावित हुए कि वे इसे अपनी सभ्यता से अच्छा समझने लगे। कुछ व्यक्ति इसमें इतने मुग्ध हो गए कि वे अपने धर्म, संस्कृति और सभ्यता को पूर्ण रूप से भूल गए। वे भारत की सामाजिक धार्मिक संस्थाओं को धिक्कारनें लगे और यह मानने लगे कि बिना अंग्रेजी सभ्यता के भारत का कल्याण नहीं हो सकता।

हिन्दू परम्पराओं पर अंग्रेजी शिक्षा का कुप्रभाव

अंग्रेजी शिक्षा का कुप्रभाव सबसे अधिक हिन्दुओं पर पड़ा। मुसलमानों पर यह प्रभाव नाममात्र था। अंग्रेजी शिक्षा के प्रभाव से यह हुआ कि मिशनरी स्कूल खुल गए। यहाँ निर्धनता का एवं परतंत्रता का यह लाभ उठाया कि मिशनरी स्कूल में पढ़ने वाले छात्र बहुत बड़ी संख्या में ईसाई बन गए। मैकाले का जो यह स्वप्न था कि अंग्रेजी शिक्षा के प्रभाव से रंग तो भारतीय होगा परन्तु यहाँ के लोग विचारों से अंग्रेज तथा ईसाई बन जाएंगे। मैकाले ने अपने पिता को एक पत्र में लिखा था कि मेरा यह दृढ़ विश्वास है कि यदि शिक्षा को हमारी योजना के अनुसार क्रियान्वित किया गया तो 30 वर्ष में सभी बंगाली ईसाई बन जाऐंगे। संभ्रान्त परिवार भी मूर्ति पूजक नहीं रहेगें यह ईसाईयत के प्रचार का कोई भी प्रयास किए बिना ही सम्पन्न होगा। यद्यपि मैकाले की भविष्यवाणी पूर्णरूपेण पूर्ण नहीं हुई तो भी अंग्रेजीयत का प्रचार-प्रसार पर्याप्त मात्रा में हुआ। उस समय के नवयुवकों पर अंग्रेजी शिक्षा का इतना गहरा प्रभाव पड़ रहा था कि यह बात बंगाली पत्र-पत्रिकाओं में छपे हुए आठ पत्रों से स्पष्ट होती है। ये पत्र कलकत्ता के हिन्दू कॉलेज में अंग्रेजी शिक्षा प्राप्त करने वाले विद्यार्थियों के माता-पिताओं ने लिखे थे। इन पत्रों का आशय यह था कि

इस कॉलेज में पढ़ने वाले विद्यार्थी अपने परंपरागत हिन्दू धर्म के आचार-विचार को तिलांजलि दे रहे है। दूसरे एक अभिभावक ने लिखा कि हिन्दू कालेज में पढ़ने वाले बालक ने पुरानी पोशाक और परम्पराओं का परित्याग कर दिया है। बिना स्नान किए भोजन खा लेता है। एक अन्य पिता ने लिखा कि मेरा पुत्र गाली देता है। एक अन्य पिता ने लिखा कि माँ को प्रणाम नहीं करता गुड़मॉर्निंग कहता है।

चार्ल्स ग्रान्ट द्वारा मिशनरी के पक्ष में आन्दोलन

अंग्रेजों का शासन, जो ईस्ट इंडिया कम्पनी द्वारा चलाया जा रहा था। ईसाई मिशनरी यह चाहते थे कि ऐसा कानून बनाया जाये जो ईसाई मिशनरियों को अपने धर्म प्रचार में स्वतन्त्रता मिल सके और सरकार द्वारा उनकी सहायता भी की जा सके। इस प्रकार का आन्दोलन करने वाले व्यक्तियों में चार्ल्स ग्रान्ट का नाम अग्रगण्य व्यक्तियों में माना जा सकता है।

स्काटलैण्ड में जन्म लेने वाले चार्ल्स ग्रान्ट 1767 ई॰ में कलकत्ता आए। वे वहाँ एक व्यापारी कम्पनी में काम करते रहे। 1769 ई॰ में भारत में भीषण अकाल पड़ा। यहाँ उन्होंने इतना कार्य किया कि उनका स्वास्थ्य खराब हो गया और वे वापिस स्वदेश लौट गए। पारिवारिक परिस्थितियों के कारण ग्रान्ट में एक अद्‌भुत मानसिक परिवर्तन हुआ। उन्होंने संकल्प लिया कि मैं सच्चा ईसाई बनकर ईसाई धर्म का प्रचार और प्रसार करूँगा। उन्होंने पार्लियामेन्ट में मिशनरियों के पक्ष में यह प्रस्ताव पास कराया कि ईसाई मिशनरियों को भारत में प्रचार करने की स्वतन्त्रता है। उन्होंने इस विषय में अनेक ग्रन्थ भी लिखे उन्होंने भारतीयों के विषय में लिखा कि यहाँ के समाज का नैतिक पतन हो चुका है, कार्यालयों में सर्वत्र भ्रष्टाचार है। भारतीय समाज को ग्रान्ट ने इस प्रकार चित्रित किया है कि हमें यह कारण खोजना चाहिए कि भारतीय समाज का घोर नैतिक पतन किस प्रकार हुआ है और इस विकृति को केसे दूर किया जा सकता है? इनकी मान्यता थी कि इतने पतन के दो बड़े कारण हैं- अज्ञान और समुचित धर्म का न होना। उन्होंने कहा कि भारतवर्ष का उद्धार तभी हो सकता है कि इनको अंग्रेजी की शिक्षा दी जाये और इसके बाद भारतीयों को ईसाई बनाया जाय। उन्होंने अपने साहित्य में यह भी वकालत की थी कि भारत में जो भी शिक्षा दी जाए उसका माध्यम अंग्रेजी होना चाहिए। हिन्दुओं को अपने शासकों की भाषा पढ़ने में बड़ी ही प्रसन्नता होगी। सरकार के लिए बहुत सुगम होगा कि कम मूल्य खर्च पर सभी प्रान्तों में निःशुल्क शिक्षा केन्द्र स्थापित करें। उन्होंने शिक्षणालयों में पढ़ाए जाने वाले विषयों का भी प्रवेश किया और कहा कि भारतीयों को प्राकृतिक विज्ञानों के विषय पढ़ाए जाने चाहिए। जब भारतीय प्राकृतिक विज्ञान का अध्ययन करेंगे तो उनके अंधविश्वास दूर हो जाऐंगे।

आंग्ल भाषा के माध्यम से जो शिक्षा दी जाएगी, उसके द्वारा धीरे-धीरे भारतीयों का नैतिक चरित्र सुधरेगा और उनके यहाँ सामाजिक परिवर्तन होंगे, धीरे-धीरे भारत भी उन्नति के पथ पर अग्रसर हो जाएगा। ग्रान्ट के आलोचक ग्रान्ट की आलोचना यह कहकर करते थे कि यदि भारतीयों को ईसाई बनाया गया और उनको आधुनिक शिक्षा-दीक्षा दी गई तो यह राजनैतिक दृष्टि से घातक होगा, क्योंकि यदि भारतीयों को अंग्रेजी शिक्षा तथा ईसाई धर्म की शिक्षा दी गई तो कंपनी के विरूद्ध विद्रोह करेंगे और अपनी दासता की बेडियों को तोड़कर स्वतन्त्रता की घोषणा करेंगे। ग्रान्ट विरोधियों की इस आशंका से भयभीत नहीं होते थे। क्योंकि उनका मानना था कि आधुनिक शिक्षा को प्राप्त करके भारतीयों का मानसिक स्तर सुधरने के साथ-साथ ये अंग्रेजी सभ्यता से अभिभूत हो जाऐंगे। वे एक प्रकार से उनके अज्ञानान्धकार को दूर करने के लिए अंग्रेजों के कृतज्ञ रहेंगे।

1835 में मैकाले ने जो अंग्रेजी शिक्षा की वकालत की थी वास्तव में उसका सूत्रपात चार्ल्स ग्रान्ट ने 43 मवर्ष पूर्व कर दिया था। निष्कर्ष रूप में हम यह कह सकते हैं कि चार्ल्स ग्रान्ट को भारत में

आधुनिक शिक्षा का जनक कहा जा सकता है। ईसाई मिशनरियों का प्रचार तथा उनकी कार्य करने की शैली 1813 ई० में पार्लियामेंट के एक प्रस्ताव के अनुसार ईसाई मिशनरियों के ऊपर लगाये गए प्रचार कार्यों पर प्रतिबन्धों को हटा देने का यह परिणाम हुआ कि अनेक अंग्रेज ईसाई मिशनरी बड़ी संख्या में भारत आने लगे। उन्होंने अपने धर्म के प्रचार को बड़े ही उत्साह पूर्वक किया, इसके लिए उन्होंने ऐसे साधनों का भी सहारा लिया जो आपत्तिजनक थे। वे ईसाई मिशनरी अंग्रेजों का शासन होने के कारण अभिमान में आकर अपने मन में हिन्दू तथा मुसलमान धर्मों पर आरोप लगाए तथा आक्षेप किए। राजाराममोहन राय ने सर्वप्रथम ईसाई मिशनरियों के विरोध में आवाज उठाई और 1821 ई० में प्रकाशित ब्राह्मण निकल मैग्जीन नामक पत्रिका में मिशनरियों के प्रचार की तीव्र भ्रर्त्सना करते हुए उन्होंने लिखा था कि "पिछले 20 वर्षों से मिशनरी कहलाने वाले कुछ अंग्रेजों का वर्ग इस देश के हिन्दूओं तथा मुसलमानों को कई ढंग से ईसाई बनाने का प्रयास सार्वजनिक रूप से कर रहा है। इनका पहला ढंग तो भारतवासियों में ऐसी पुस्तिकाओं का वितरण तथा प्रकाशन है, जिनमें दोनों धर्मों की खिल्ली उड़ाई गई हैं, उन्हें गालियां दी गई हैं और उनके देवताओं और सन्तों की मजाक उड़ाई गई है। दूसरा ढंग यह है कि वे भारतीयों के दरवाजों पर अथवा सार्वजनिक मार्गों पर खड़े होकर अपने धर्म की उत्कृष्टता की सराहना करते है और दूसरे धर्मों में बुराईयों को निकालते हैं। तीसरा तरीका यह है कि यदि निम्न जातियों के कोई भारतीय धन के लाभ की इच्छा से अथवा अन्य उद्देश्यों से प्रेरित होकर ईसाई बनते हैं तो ये लोग उन्हें नौकरी पर लगा देते हैं ताकि दूसरे व्यक्तियों को उनके उदाहण का अनुसरण करने में प्रोत्साहन मिले।"

ईसाई मिशनरियों के इस धर्म परिवर्तन के कारण भारत में अनेक मिशनरी संस्थाओं का जाल बिछाया गया। 1813 ई० के चार्टर द्वारा ब्रिटिश ने भारत में ईसाई धर्म के प्रचार पर ईस्टइंडिया कम्पनी द्वारा लगाए गए प्रतिबन्धों के दूर हो जाने से इंग्लैण्ड की विभिन्न मिशनरी संस्थाओं ने भारत मे अनेक मिशनरियों को भेजना प्रारम्भ कर दिया, इससे यहाँ मिशनरी संस्थाओं का जाल बिछा दिया गया। इसमें प्रथम संख्या जनरल बैप्टीस मिशनरी सोसायटी की थी। इसने 1822 ई० में उड़ीसा के आदिवायिों में कार्य करना प्रारम्भ किया। दूसरी संस्था लंदन सोसायटी ने एक साथ बंगाल और मद्रास में अपने केन्द्र स्थापित किए। इनमें बंगाल के प्रमुख केन्द्र थे, भवानीपुर और बराहमपुर। दक्षिण भारत में इसने नागर कोइल, नैयुर, मद्रास कुम्भ कोणम आदि स्थानों पर अनेक केन्द्र स्थापित किए।

इस युग में अमेरिका से अनेक मिशनरी सोसायटियां भारत में आयीं। इनमें अमेरीकन बेप्टीस यूरीयन, अमेरीकन बोर्ड तथा अमेरीकन प्रेस ब्रीट्रेरीयन मिशन उल्लेखनीय हैं। इस मिशन के द्वारा उत्तर भारत में विशेष कार्य किया गया इसकी शाखाएं लुधियाना (1834 ई०), सहारनपुर, इलाहाबाद (1836 ई०), अम्बाला (1848 ई०), लाहौर (1849 ई०), रावलपिण्डी (1856 ई०) आदि स्थानों पर जहाँ अपनी शिक्षण संस्थाएं खोली वहीं पर ईसाई बनाने के लिए ये मिशन कार्य करते रहे। एक अन्य अमेरिकी संस्था चर्च मिशनरी सोसायटी ने अमृतसर (1852 ई०), कांगड़ा (1854 ई०) मुल्तान तथा पेशावर (1855 ई०) में अपने केन्द्र स्थापित किए। उन दिनों पंजाब के अंग्रेजी शासक ईसाई धर्म के प्रचार का प्रबल उत्साह रखते थे उनके इस प्रोत्साहन से पंजाब में शीध्र ही ईसाई मिशनरी संस्थाओं का जाल बिछा दिया गया।

मिशनरी शिक्षा पद्धति में परिवर्तन

इस युग में प्रचलित मिशनरी शिक्षा पद्धति में नवीन क्रांतिकारी विचारों का प्रादुर्भाव हुआ, जिसका श्रेय स्काटलैण्ड के रहने वाले मिशनरी एलेवजेन्डर डफ (1806 से 1878 ई०) को जाता है। ये 24 वर्ष की आयु में ही भारत में ईसाईयों के प्रचारक बनकर कलकत्ता आए थे। उन्होंने उस समय की शिक्षा पद्धति में अनेक दोष देखें और उन्होंने यह पाया कि ईसाई धर्म का प्रचार कार्य भी संतोषजनक नहीं है, उस प्रचार कार्य पद्धति में क्रांतिकारी परिवर्तन करने अपेक्षित हैं।

पुरानी मिशनरी शिक्षा पद्धति में सर्वप्रथम यह त्रुटि थी कि अब तक जो ईसाई बने थे उनमें अधिकतर अनाथ या छोटी जातियों के व्यक्ति थे। वास्तव में उनका यह धर्म परिवर्तन तथा ईसाई बनने का उद्देश्य धार्मिक भावना अथवा हिन्दू धर्म के प्रति घृणा नहीं थी अपितु आर्थिक प्रलोभन अधिक था। ऐसे धार्मिक परिवर्तनों को उस समय का हिन्दू समाज उन्हें घृणा की दृष्टि से देखता था। भात खाउ ईसाई कहकर इनकी खिल्ली उड़ाता था। डफ का कहना था कि इससे हिन्दू धर्म को समाप्त करने के लिए अनेक सदियां लग जाऐंगी। क्योंकि यह एक समाज का मनोविज्ञान है कि समाज में सभी व्यक्ति उच्च जाति एवं अभिजात वर्गो का अनुकरण तथा अनुसरण किया करते है। यदि हिन्दू जाति में ब्राह्मणों को, क्षत्रियों को अर्थात् उच्च वर्ग के व्यक्तियों को ईसाई बनाया जाय, ऐसी योजना अपनाई जाये कि उच्च वर्ग के लोग अपना धर्म परिवर्तन करके ईसाई बन जाएं। छोटी जातियों के लोग उनका अनुसरण करते हुए स्वयं ईसाई बन जाऐंगे।

डफ के अनुसार पुरानी पद्धति में दूसरा दोष यह था कि उस समय मिशन स्कूलों में बाईबिल एक ऐच्छिक विषय के रूप में पढ़ाई जाती थी। अर्थात् बाईबिल की शिक्षा प्रच्छन्न रूप में ही दी जाती थी। डफ को चोरी छिपे बाईबिल पढ़ाना तथा गौण रूप में पढ़ाना उचित प्रतीत नहीं हुआ। उसका यह विश्वास था कि बाईबिल तो जीवन का मूल स्रोत है। इसलिए मिशन स्कूल में बाईबिल की शिक्षा अनिवार्य रूप में, खुले रूप से और बड़े साहस के साथ दी जानी चाहिए। अन्य ईसाई मिशनरी इस बात के विरोधी थे। उनके विरोध का कारण यह था कि हिन्दू और मुसलमानों की धार्मिक भावना को ठेस पहुंचेगी, इसलिए उपर्युक्त प्रतिबन्ध लगा हुआ था। परन्तु डफ की मान्यता थी कि भारतीय समाज आधुनिक शिक्षा को अपनायेगा, उसका विरोध कुछ धार्मिक कट्टर पंथियों को छोड़कर कोई नहीं करेगा। क्योंकि एक सामान्य नियम है कि विजयी जाति का पराजित जाति पर प्रभाव पड़ता है।

डफ द्वारा प्रतिपादित बाईबिल की शिक्षा का बहुत कम लोगों ने विरोध किया और धीरे-धीरे धार्मिक कट्टर पंथियों को छोड़कर भारतीय समाज ने अपना लिया। ईस्ट इंडिया कम्पनी अपने आप को धर्म निरपेक्ष के रूप में प्रस्तुत कर रही थी, इसलिए उनकी शिक्षण संस्थाओं में बाईबिल को जबरदस्ती नहीं थोपा गया था। इस विषय में मिशनरी स्कूल और कम्पनी के स्कूलों में प्रतिस्पर्धा उत्पन्न हुई। कम्पनी के स्कूलों के पास आर्थिक साधन भी मिशनरियों की तुलना में अधिक थे। मिशनरी स्कूलों में यह आशंका हुई कि कम्पनी वे स्कूलों की प्रतियोगिता में वे देर तक नहीं टिक सकेंगे। इसलिए मिशनरी स्कूलों ने कम्पनी स्कूलों के विरुद्ध एक अभियान छेड़ दिया और उन्होंने यह कहना शुरू कर दिया कि कम्पनी के स्कूल नास्तिक हैं क्योंकि उनमें धार्मिक शिक्षा नहीं दी जाती है ऐसे स्कूल समाज के लिए हानिकर हैं। इससे छात्रों का पूर्ण विकास नहीं होगा। इसलिए स्कूलों में बाईबिल अवश्य पढ़ाना चाहिए। यदि राजनैतिक कारणों से ऐसी शिक्षा देना संभव नही है तो कम्पनी को शिक्षा के क्षेत्र से अलग हो जाना चाहिए।

शिक्षा का सम्पूर्ण दायित्व मिशन स्कूलों को सौंप देना चाहिए

सरकारी स्कूलों पर मिशनरी स्कूलों की अपेक्षा अधिक पैसा खर्च होता है। कम्पनी के पास शिक्षा संबधी कार्यों के लिए धन राशि सीमित है। इसलिए इसका सर्वोत्तम उपयोग यह होगा कि इस समस्त धन राशि को मिशनरी स्कूलों को अनुदान के रूप में देना चाहिए।

ईस्ट इंडिया कम्पनी के शिक्षा नीति के तीन युग

ईस्ट इंडिया कम्पनी के शासन काल को शिक्षा नीति विषयक युग की तीन युगों में विभाजित किया जा सकता है। पहला युग 1600 ई० से 1765 ई० तक। इस युग में कम्पनी विशुद्ध व्यापारिक संस्था थी। उसका एक मात्र उद्देश्य अपने व्यापार में वृद्धि करना था। इसके साथ ही कम्पनी का डच और फ्रेन्च

कम्पनियों के साथ संघर्ष करना तथा उनसे विजयी भी होना था। 1763 ई० में फ्रेन्च युद्ध की समाप्ति के साथ यह युग समाप्त हो गया। इसके साथ ही भारतीय राज्यों के साथ कम्पनी के राजनैतिक संघर्ष होने लगे। इसका यह परिणाम हुआ कि भारत के विभिन्न प्रदेशों पर कम्पनी का प्रभुत्व बढ़ने लगा। 1757 ई० में प्लासी की लड़ाई मुगल बादशाह शाह आलम द्वारा अंग्रेजों को बंगाल, बिहार और उड़ीसा की दीवानी देने के साथ शुरू हुई। इस समय कम्पनी ने केवल अपने यूरोपियन सेवकों के बच्चों की शिक्षा का प्रबन्ध किया। भारतीयों की शिक्षा के लिए कम्पनी की ओर से कोई व्यवस्था नहीं थी। क्योंकि व्यापारिक संस्था होने के कारण कम्पनी भारतीयों की शिक्षा के लिए खर्च करने को तैयार नहीं थी।

दूसरा युग

दूसरा युग 1765 ई० से 1813 ई० तक रहा। 1765 ई० के पश्चात् कम्पनी ने भारतीय प्रदेशों का शासन अपने हाथ में लेना प्रारम्भ किया। इस समय कम्पनी ने यह आवश्यक समझा कि हिन्दू और मुस्लिम राजाओं की तरह कम्पनी अपने द्वारा शासित प्रदेशों की शिक्षा व्यवस्था का सम्पूर्ण भार अपने हाथ में ले। इसके साथ यह भी था कि कम्पनी भारत में प्रचलित शिक्षा को देने को तैयार नहीं थी। परन्तु समाजिक दबाव से उनको शिक्षा की व्यवस्था अपने हाथ में लेनी पड़ी। जैसे पुराने शासक, पंडित, मौलवियों की आर्थिक सहायता के साथ-साथ उन्हें उपाधि देकर सम्मानित करते थे। यही नीति अंग्रेजी शासकों ने भी अपनायी क्योंकि कम्पनी भारत में अपना शासन सुदृढ़ करना चाहती थी इसलिए कुलीन एवं प्रतिष्ठित परिवारों के बच्चों को कम्पनी के उच्च पदों पर नियुक्त किया जाने लगा इसलिए कम्पनी ने 1780 ई० में मरदसे की, 1791 ई० में बनारस में संस्कृत कालेज की स्थापना की। आगे चलकर के अंग्रेजी सभ्यता के साथ-साथ यह मनोवृत्ति भी विकसित होने लगी थी कि भारत के अन्दर से भारतीय संस्कृति का सम्पूर्ण लोप किया जाए और भारत को एक ऐसा राज्य बनाया जाय जो आकृति से तो भारतीय हों परन्तु धर्म की दृष्टि से वे शुद्ध रूप से ईसाई हों। इनके विचार का केन्द्र ईसामसीह की बाईबिल हो न कि वेदादि शास्त्र। इस अतिवादी मान्यता का यह प्रभाव हुआ कि भारतीय शिक्षा शास्त्री प्राचीन भारतीय शिक्षा के लिए प्रयास करने लगे।

पुनर्जागरण तथा नवजागरण के युग का सूत्रपात

उन्नीसवीं शताब्दी के मध्य में प्राचीन ढंग की जो शिक्षण संस्थाएं भारत में विद्यमान थी, ब्रिटिश सरकार तथा क्रीश्चियन मिशनरियों द्वारा जिस प्रकार के स्कूल व कालेजों की स्थापना की जा रही थी। एक दूसरी तरफ पुराने ढंग की पाठशाला, मदरसे तथा मकतबों में जो शिक्षा दी जा रही थी। उनमें नए ज्ञान विज्ञान की शिक्षा से अपरिचित रखा जा रहा था। नए प्रकार के स्कूलों और कालेजों में भारत की सांस्कृतिक परम्परा की सर्वथा उपेक्षा की जाती थी। इन उपर्युक्त दोनों प्रकार की शिक्षण संस्थाओं में इतना ही अन्तर था जैसे कि नदी के दो किनारों में। भारत की शिक्षा विषयक आवश्यकताएं एक ऐसी शिक्षा पद्धति से ही पूरी हो सकती थी जिसमें नए ज्ञान विज्ञान का समुचित ज्ञान हो और साथ ही भारतीय विचारधारा की आस्था भी बनी रहे। अपने देश की परम्परा, कला और भाषा से पूर्ण परिचय के साथ-साथ आधुनिक युग की उपलब्धियों तथा प्रवृत्तियों की जानकारी भी जिस शिक्षा पद्धति में प्राप्त हो वही भारत की शिक्षा सम्बन्धी आवश्यकताओं को पूर्ण करने में समर्थ हो सकती है। वस्तुतः वही समग्र, समन्वित और आदर्श शिक्षा पद्धति हो सकती है।

ऐसे संक्रमण युग में, युग प्रवर्तक, महान् विचारक, अद्‌भुत प्रज्ञा के धनी महर्षि दयानन्द सरस्वती का प्रादुर्भाव हुआ। उन्होंने आर्य समाज की स्थापना की। आर्य समाज ने धार्मिक भावनाओं के साथ-साथ शिक्षा को एक नया रूप प्रदान किया।

वास्तव में वह एक ऐसा युग था जिसमें दो प्रकार की अतिवादी धाराओं के बीच समन्वय स्थापित करके एक समुचित शिक्षा पद्धति का विकास करना आवश्यक था। उस समय यह भी आवश्यक था कि शिक्षा को समाज के केवल एक वर्ग तक ही सीमित न रखा जाए। वह सबके लिए सुलभ हो। उन्नीसवीं सदी के मध्य में स्त्रियों की शिक्षा के लिए पुराने ढंग की जो पाठशालाएं विद्यमान थी उनमें बालिकाओं को प्रविष्ट करने का तो प्रश्न ही नहीं था। केवल उच्च वर्णों के विद्यार्थी उनमें प्रवेश पा सकते थे। उच्च वर्णों में भी प्रधानता ब्राह्मण बालकों की ही थी। उन पाठशालाओं में छात्र संस्कृत भाषा तथा व्याकरण आदि का अध्ययन किया करते थे। सर्वसाधारण जनता को शिक्षा पाने के अवसरों का अभाव था। इसका यह परिणाम था कि भारत की बहुसंख्यक जनता निरक्षर थी, उनकी शिक्षा की कोई व्यवस्था नहीं थी।

इस स्थिति में आर्य समाज ने भारत के शिक्षा क्षेत्र में एक नए युग का प्रारम्भ किया और ऐसी शिक्षण संस्थाएं स्थापित की गई जिनमें सभी वर्णों के बालक और बालिकाएं पढ़ सकते थे। इन शिक्षण संस्थाओं में संस्कृत भाषा, वेद शास्त्र और प्राचीन साहित्य के साथ-साथ आधुनिक ज्ञान-विज्ञान के अध्ययन अध्यापन की भी उचित व्यवस्था थी। इस प्रकार की संस्थाओं में लड़के और लड़कियों की शिक्षाओं के लिए पृथक्-पृथक् संस्थाएं खोली गई। एक ऐसी नई प्रगतिशील शिक्षण-व्यवस्था का प्रारम्भ हुआ जो इस देश के लिए सर्वथा अनुकूल एवं उपयुक्त थी। इन शिक्षण संस्थाओं में आर्य समाज ने उन मन्तव्यो एवं आदर्शों का पालन किया जिनका वर्णन महर्षि दयानन्द के सत्यार्थप्रकाशादि अन्य ग्रन्थों में किया था। जिन शिक्षण संस्थाओं का वर्तमान समय में आर्य समाज द्वारा संचालन किया जा रहा है वे सब एक ही प्रकार की नहीं है। उनकी शिक्षा व्यवस्था और पाठ विधि में भी अन्तर है, परन्तु उन सब संस्थाओं में समानताएं भी है, उन समानताओं का आधार महर्षि दयानन्द द्वारा प्रतिपादित शिक्षा विषयक मान्यताएं ही हैं। यह निःसंकोच कहा जा सकता है कि देश और काल की तथा साधनों की परिस्थितियों की दृष्टि से आर्य शिक्षण संस्थाओं के संचालक महर्षि दयानन्द की मान्यताओं को पूर्ण रूपेण क्रियान्वित करने में समर्थ न हो सके। परन्तु फिर भी वे सब महर्षि की शिक्षा पद्धति पर विश्वास करते थे। इस विषय में तो सर्वप्रथम यही कहा जा सकता है कि महर्षि दयानन्द सरस्वती ने अपने सत्यार्थप्रकाश में 25 वर्षीय शिक्षा पद्धति में जितने विषयों के पठन-पाठन का विस्तारपूर्वक वर्णय किया है उन समस्त विषयों के अध्ययन-अध्यापन की व्यवस्था एक ही संस्था द्वारा नहीं की जा सकती थी। आर्य समाज ही नहीं अपितु सरकार भी महर्षि दयानन्द द्वारा प्रतिपादित समस्त विषयों के अध्ययन-अध्यापन की व्यवस्था किसी एक विश्वविद्यालय में नहीं कर पायी है। यद्यपि आर्य समाज ने शिक्षा के क्षेत्र में बहुत अधिक कार्य किया है। परन्तु ऋषि दयानन्द जी ने जो अपेक्षाएं शिक्षा के क्षेत्र में भारतीय राजतन्त्र व्यवस्था में आवश्यक समझी थी वे आर्य समाज के सौ वर्ष से अधिक हो जाने के पश्चात् भी आर्यसमाज सरकार द्वारा यह कानून नहीं बनवा सकी की जैसा कि दयानन्द ने सत्यार्थप्रकाश के तृतीय समुल्लास में लिखा है कि यह राज नियम होना चाहिए कि 6 वर्ष से 8 वर्ष तक की आयु तक के पुत्रों-पुत्रियों को शिक्षणालय में माता-पिता अनिवार्य रुप से भेज देवें। जो माता-पिता ऐसा न कर सकें उनके बच्चों को राजपुरुष आकर जबरदस्ती ले जाएं। तथा इसके साथ ही उन माता-पिताओं को दंडित किया जाए।

ऋषि दयानन्द की यह मान्यता थी कि शिक्षा सबके लिए है। समाज के किसी भी वर्ग को वे विद्या से वंचित नहीं रखना चाहते थे। स्त्री और शूद्रों को भी वे शिक्षा ग्रहण का अधिकारी मानते थे। उन्होंने लिखा है कि "इस प्रकार आचार्य अपने शिष्यों को उपदेश करे और विशेषकर राजा इतर क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र जनों को विद्या का अभ्यास करावे। क्योंकि जो ब्राह्मण है वही केवल विद्याभ्यास करे, क्षत्रिय आदि न करें तो विद्या, धर्म, राज्य और धनादि की वृद्धि कभी नहीं हो सकती क्योंकि ब्राह्मण तो केवल पढ़ने-पढ़ाने

और क्षत्रिय आदि से जीविका प्राप्त करके जीवन धारण कर सकते है। जीविका के अधीन और क्षत्रियादि के आज्ञा दाता और यथावत् परीक्षा, दण्डदाता न होने से ब्राह्मण आदि सब वर्ण पाखण्ड में ही फंस जाते हैं और जब क्षत्रिय आदि विद्वान् होते हैं तब ब्राह्मण भी अधिक विद्याभ्यास और धर्म पथ पर चलते हैं और उन क्षत्रियादि के सामने पाखण्ड और झूठा व्यवहार भी नहीं कर सकते, जब क्षत्रियादि अविद्वान् होते हैं तो वे जैसा अपने मन में आता वैसा ही करते कराते है। इसलिए ब्राह्मण भी अपना कल्याण चाहें तो क्षत्रियादि का वेदादि सत्य शास्त्र का अभ्यास अधिक प्रयत्न से करावें क्योंकि क्षत्रियादि ही विद्या, धर्म, राज्य, लक्ष्मी की वृद्धि करने हारे हैं। ..... जब सवर्णों में विद्या, सुशिक्षा होती है तब कोई भी पाखण्ड रूप अधर्मयुक्त व्यवहार को नहीं चला सकता है। इसलिए सवर्णों के स्त्री-पुरुषों में विद्या और धर्म का प्रचार अवश्य होना चाहिए।''

ऋषि दयानन्द ने शिक्षा सबके लिए समान है इसको प्रमाणित करने के लिए यजुर्वेद के मंत्र को प्रमाण रूप में प्रस्तुत किया है-

"यथेमां वाचं कल्याणीमावदानि जनेभ्यः। ब्रह्म राजन्याभ्यां शूद्राय चार्याय च स्वाय चारणाय।। यजु॰26/2

इस मंत्र का अर्थ करते हुए उन्होंने लिखा है कि "परमेश्वर स्वयं कहता है कि हमें, ब्राह्मण, क्षत्रिय (आर्याय), वैश्य, शूद्र और (स्वाय) अपने भृत्य वा स्त्री आदि (अरण्याय) और अतिशूद्रादि के लिए भी वेदों का प्रकाश किया है। ..... क्या परमेश्वर शूद्रों का भला करना नहीं चाहता ? क्या ईश्वर पक्षपाती है कि वेदों को पढ़ने सुनने का शूद्रों के लिए निषेध द्विजों के लिए विधि करे ? जो परमेश्वर शूद्रों का भला करना नहीं चाहता ? क्या ईश्वर पक्षपाती है कि वेदों को पढ़ने सुनने का शूद्रों के लिए निषेध द्विजों के लिए विधि करे ? जो परमेश्वर का अभिप्राय शूद्रादि के पढ़ने-पढ़ाने, सुनाने का न होता तो इनके शरीर के वाक् और श्रोत्र इन्द्रिय क्यों रचता ? जैसे परमात्मा ने पृथ्वी, जल, वायु, अग्नि, चन्द्र, सूर्य और अन्नादि सबके लिए बनाए हैं वैसे ही वेद भी सबके लिए प्रकाशित किए हैं। और जहां कहीं निषेध किया है तो उसका यह अभिप्राय है कि जिसको पढ़ने-पढ़ाने से कुछ भी न आवे वह निर्बुद्धि और स्त्रियों के पढ़ने का निषेद्ध करते हो वह तुम्हारी मूर्खता, स्वार्थता और निर्वुद्धिता का प्रभाव है।"

इसका यह सहज ही निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि वे मनुष्य मात्र को शिक्षा प्राप्त करने का अधिकारी मानते थे और उसके प्रबल पक्षपाती थे। उनके मत में किसी को भी अध्ययन से वंचित रखना, सर्वथा अनुचित है। उनकी यह मान्यता थी कि "जन्म से सब कोई शूद्र ही होते है, शिक्षा और संस्कार द्वारा ही व्यक्ति द्विज बनता है।" वेद शास्त्रों के अध्ययन- अध्यापन को केवल ब्राह्मण कुलों में उत्पन्न हुए व्यक्तियों तक सीमित रखने और समाज के एक बड़े वर्ग को विद्या से वंचित रखने की परम्परा मध्यकालीन युग में यहाँ विकसित हो गई थी। उन्होंने इसका प्रबल रूप से विरोध किया। आर्यसमाज ने भी उनके बाद उनकी इस मान्यता का पूर्णरूपेण अनुसरण किया और अपनी शिक्षण संस्थाओं में प्रवेश के लिए सवर्ण, हरिजन तथा छूत-अछूत का भेद नहीं रखा। नारी शिक्षा और समाज में स्त्रियों की समान स्थिति का महर्षि ने प्रबल रूप से प्रतिपादन किया है। अथर्ववेद के "ब्रह्मचर्येण कन्या युवानं विन्दते पतिम्" मंत्र को प्रमाण रूप में प्रस्तुत करते हुए लिखते हैं कि "जैसे लड़के ब्रह्मचर्य-सेवन से पूर्ण विद्या और सुशिक्षा को प्राप्त हो के युवती, विदुषी, अपने अनुकूल प्रिय सदृश स्त्रियों के साथ विवाह करते हैं, वैसे (कन्या) कुमारी (ब्रह्मचर्येण) ब्रह्मचर्य सेवन से वेदादि शास्त्रों को पढ़ पूर्ण विद्या और उत्तम शिक्षा को प्राप्त युवती होके पूर्ण युवावस्था में अपने सदृश प्रिय विद्वान् (युवानम्) पूर्ण युवावस्थायुक्त पुरूष को (विन्दते) प्राप्त होवे। इसलिए स्त्रियों को भी ब्रह्मचर्य और विद्या को ग्रहण अवश्य करना चाहिए।" उनकी स्पष्ट मान्यता थी कि स्त्री को

सच्चे अर्थों में पति की सहधर्मिणी रूप में होना चाहिए। उन्होंने लिखा है कि "राजपुरुषादि को चाहिए कि आप जिस-जिस राज्य कार्य में प्रवृत्त हों उस-उस में अपनी-अपनी स्त्रियों का भी स्थापन करें। जो-जो राजपुरुष जो-जो कन्या का न्याय करे उस-उस की स्त्रियों का न्याय करें।" "संग्राम में राजा के अभाव में रानी सेनापति हो और जैसे राजा युद्ध कराने की वीरों को प्ररेणा करें वैसे वह भी आचरण करें।" महर्षि के अनुसार स्त्री को केवल पति के परिवार की समुचित व्यवस्था ही नहीं करनी अपितु समाज के समस्त कार्यों में भी वह पति का सहयोग करे। ऋषि दयानन्द उनमें से किसी कार्यों को करते हुए बतलाते है कि वह न्यायाधीश का कार्य भी कर सकती है, बालिकाओं की शिक्षण संस्थाओं में अध्यापन भी कर सकती है, धार्मिक, आर्थिक, सामाजिक जीवन में भी उसे सहयोग करना है। ये सभी कार्य महिलाएं तभी कर सकती हैं जबकि वह भी सुशिक्षित हो और उसने भी पुरुष की ही तरह नियमपूर्वक ब्रह्मचर्य आश्रम में ब्रह्मचर्य पूर्वक शिक्षा ग्रहण की हो। यह सर्व विदित है कि चिरकाल से, भारत में स्त्रियों की शिक्षा अवरुद्ध थी। ऋषि दयानन्द ने उसका पुनरूद्धार किया और आर्यसमाज में ऋषि दयानन्द के इस मन्तव्य को स्वीकार करके नारी शिक्षा के लिए कितनी ही पाठशालाएं, कन्या विद्यालय, गुरुकुलों तथा स्कूलों की स्थापना की। ऋषि दयानन्द जी ने स्त्री शिक्षा के विषय में विस्तार पूर्वक चिन्तन किया था। इसलिए उन्होंने लिखा है कि "जैसे पुरुषों को व्याकरण, धर्म और व्यवहार की विद्या न्यून से न्यून अवश्य पढ़नी चाहिए वैसे ही स्त्रियों की भी व्याकरण धर्म, वैद्यक, गणित, शिल्प विद्या तो अवश्य ही सीखनी चाहिए। क्योंकि उनके सीखे बिना सत्यासत्य का निर्णय, पति आदि के अनुकूल वर्तना, यथायोग्य सन्तानोत्तत्ति उनका पालन वर्धन और सुशिक्षा करना, घर के सब कार्यों को जैसा करना चाहिए वैसा करना-कराना। वैद्यक विद्या से औषधवत् अन्नपान बनाना और बनवाना कर सकती हैं, जिससे घर में रोग कभी न आवे और सब लोग सदा आनन्दित रहें। शिल्प विद्या के जाने बिना घर का बनवाना, वस्त्रादि का बनाना-बनवाना, गणित विद्या के बिना सबका हिसाब समझना-समझाना, वेदादि शास्त्र विद्या के बिना ईश्वर धर्म को न जान के अधर्म से कभी न बच सके।"

ऋषि दयानन्द के अनुसार स्त्रियों को जो कम से कम शिक्षा अवश्य प्राप्त करनी चाहिए उसमें व्याकरण, धर्म, चिकित्सा, विज्ञान, गणित और शिल्प विद्या हैं। उनकी यह भी मान्यता है कि पुरुष और स्त्री जब विवाह करे तब वे ब्रह्मचर्याश्रम में रहकर चारों वेदों या कम से कम एक वेद का साङ्गोपाङ्ग अध्ययन कर चुके हों। वे कहते हैं कि ''जब यथावत् ब्रह्मचर्य में आचार्यानुकूल वर्त्तकर, धर्म से चारों वेद, तीन वा दो अथवा एक वेद को साङ्गोपाङ्ग पढ़के जिसका ब्रह्मचर्य खण्डित न हुआ हो वह पुरुष या स्त्री गृहस्थाश्रम में प्रेवश करें।" उनका यह स्पष्ट मन्तव्य है कि जैसे वेदों का अध्ययन पुरुषों के लिए आवश्यक है वैसे ही स्त्रियों के लिए भी दोनों के लिए समान रूप से ब्रह्मचर्याश्रम में रहकर अपने आचार्य के पथ प्रदर्शन में विद्याध्ययन करना आवश्यक है, इसके पश्चात् ही वे गृहस्थाश्रम में प्रवेश के अधिकारी होते हैं। आर्य समाज ने स्त्री शिक्षा विषयक महर्षि दयानन्द के मन्तव्य का पालन करने का प्रयत्न किया है इसी प्रयोजन के लिए ऐसी अनेक शिक्षण संस्थाएं स्थापित की हैं। आरम्भ में एक सम्प्रदाय विशेष के लोगों ने स्त्री शिक्षा का विरोध भी किया परन्तु नवजागरण के इस युग में विज्ञान के नए-नए आविष्कारों तथा विविध विज्ञान के आयामों के विकास के कारण स्त्री शिक्षा का उनका विरोध टिक नहीं पाया और आगे चलकर के वे स्वयं संगठन बनाकर स्त्रियों के शिक्षण के लिए प्रयत्न करने लगे।

शिक्षा विषयक अपने विचारों का निरूपण करते हुए महर्षि ने भारत की प्राचीन शिक्षा पद्धति को अपने सम्मुख रखा था। इस पद्धति में कुछ अपनी विशेषताएं थी। प्राचीन भारत में आचार्य कुलों, आरण्यक आश्रमों और विद्यापीठों को दृष्टि में रखकर महर्षि दयानन्द ने शिक्षा पाठ विधि का विस्तारपूर्वक वर्णन किया है।

शिक्षा विषयक उनके कुछ मौलिक सिद्धान्त है:-

1. बालक और बालिकाओं की शिक्षा के लिए पाठशालाओं (गुरुकुलों एवं आचार्यकुलों) में भेजना माता-पिता को अनिवार्य होना चाहिए।
2. लड़कों और लड़कियों की पाठशालाएं पृथक् व एक-दूसरे से दूर होनी चाहिए। उनका यह भी मत था कि क़न्याओं की शिक्षण संस्थाओं में सब शिक्षक कर्मचारी व सेवक स्त्रियां होनी चाहिए और पुरुषों की शिक्षण संस्थाओं में पुरुष।
3. शिक्षण संस्थाओं में सब विद्यार्थियों को एक समान भोजन, वस्त्रादि देना चाहिए चाहे वह राजकुमार, राजकुमारी चाहे दरिद्र की संतान हो। शिक्षा के काल में विद्यार्थियों में धनी तथा निर्धन, ब्राह्मण तथा शूद्र, छूत तथा अछूत का कोई भेद न कर सबके प्रति एक सदृश व्यवहार किया जाना चाहिए।
4. गुरुकुल में प्रवेश के पश्चात् बालकों और बालिकाओं का अपने माता-पिता तथा परिवार के साथ कोई सम्बन्ध नहीं रहना चाहिए। न माता-पिता अपनी सन्तान से मिल सकें और नही पत्र द्वारा उनसे सम्पर्क कर सकें। महर्षि की यह भी मान्यता थी कि 7-8 वर्ष की आयु हो जाने पर बालक एवं बालिकाएं पूर्णतया आचार्य तथा शिक्षक वर्ग के प्रभाव में रहें। ताकि पारिवारिक वातावरण से पृथक् होकर वें अपना स्वतन्त्र रूप से विकास कर सकें।
5. शिक्षण संस्थाएं व गुरुकुल ग्रामों से दूर होने चाहिए ताकि विद्याभ्यास के काल में विद्यार्थी शहरी आकर्षणों से दूर रह सकें और विद्याध्ययन में ही अपना ध्यान लगा सकें। गुरुकुल के विद्यार्थियों का जीवन तपस्या में होना चाहिए। ब्रह्मचर्य व्रत का पालन अविकल्प रूप में करना आवश्यक है। ब्रह्मचारियों और ब्रह्मचारिणीयों का जीवन तपस्वी, इन्द्रिय संयमी, लोभ रहित, पवित्र सन्तुष्ट और भक्तिमय होना चाहिए। यम और नियमों के पालन को महर्षि ने ब्रह्मचर्य व्रत के लिए बहुत उपयोगी माना है।
6. शिक्षण संस्थाओं (गुरुकुलों) में गुरु का अपने शिष्यों के साथ वहीं सम्बन्ध होना चाहिए जो माता-पिता का अपने सन्तान के साथ होता है। परन्तु शिष्यों का अधिक लाड़ प्यार करने के महर्षि विरूद्ध थे। शिष्यों के हित की दृष्टि से कभी-कभी यह आवश्यक हो जाता है कि उन्हें कुमार्ग से हटाने के लिए उन्हें ताड़ना का आश्रय लेना चाहिए।
7. शिक्षण संस्थाओं में जो व्यक्ति अध्यापन का कार्य करें, उन्हें न केवल विद्वान् ही होना चाहिए अपितु यह भी आवश्यक है कि वे धार्मिक तथा सदाचारी भी हों। गुरुवर का विद्वान्, तपस्वी तथा धार्मिक होना महर्षि दयानन्द की दृष्टि में सबसे आवश्यक है।

उन्होंने यह भी प्रतिपादित किया कि आचार्य गण द्वारा ही शिष्य को गुण, कर्म, स्वभावानुसार वर्ण प्रदान किया जाएगा। जन्म के अनुसार कोई वर्ण मान्य नहीं होगा। इसके लिए विद्या आर्य सभा तथा राज्य आर्य सभा द्वारा उसे उसी वर्ण के अनुरूप कार्य कराने की व्यवस्था की जायेगी। महर्षि दयानन्द सरस्वती की शिक्षा विषयक यह कल्पना अत्यन्त क्रान्तिकारी व प्रगतिशील है। आर्य समाज ने इस शिक्षा पद्धति को क्रियान्वित करने का प्रयत्न भी किया। इस प्रयत्न का परिणाम यह था कि महात्मा मुंशीराम द्वारा बीसवीं सदी के प्रारम्भ (1902 ई॰) में कांगड़ी ग्राम में गुरुकुल की स्थापना करना।

महर्षि ने केवल शिक्षा सम्बन्धी सिद्धान्तों का ही पालन नहीं किया अपितु पठन-पाठन विधि के विषय में भी विस्तारपूर्वक विवेचन किया है। जिसे आर्य समाज में आर्ष पाठ विधि के नाम से कहा जाता है। ऋषि

दयानन्द के अनुसार बच्चों को अक्षर ज्ञान तो माता-पिता द्वारा घर पर ही करवा देना चाहिए, देवनागरी अक्षरों का भी और अन्य देशीय भाषा और भाषाओं का भी। गुरुकुल में आकर छात्र व छात्राओं को सबसे पूर्व संस्कृत भाषा तथा व्याकरण का अध्ययन कराना चाहिए। इसके लिए उन्होंने पाणिनि के शिक्षा और अष्टाध्यायी के अध्ययन को उचित कहा है। संस्कृत व्याकरण के अध्ययन के लिए सारस्वत चंद्रिका, सिद्धान्त कौमुदी आदि मध्यकालीन ग्रन्थों का अध्ययन करने से मना किया है। उनके अनुसार पाणिनि की शिक्षा तथा अष्टाध्यायी और पतञ्जलि के महाभाष्य से जितना बोध तीन वर्षों में प्राप्त किया जा सकता है उतना बोध व्याकरण के अन्य ग्रन्थों से नहीं किया जा सकता है उनका यह भी मत था कि आर्ष ग्रन्थों का ही अध्ययन करना चाहिए। वे लिखते हैं कि ''ऋषि प्रणीत ग्रन्थों को इसलिए पढ़ना चाहिए कि वे बड़े विद्वान् शास्त्रवीत् और बड़े धर्मात्मा थे, अन्य मनुष्यों द्वारा रचित ग्रन्थ पक्षपात से परे नहीं होंगे।"

महर्षि ने विस्तृत पाठ विधि का विस्तृत वर्णन करते हुए लिखा है कि किस विषय के अध्ययन के लिए कितना समय दिया जाए, इसे भी महर्षि ने प्रतिपादित किया है। उन्होंने व्याकरण के लिए तीन साल का समय रखा है। फिर निरुक्त, निघण्टु, (छह या आठ महीने), छन्द (चार महीने), मनुस्मृति, बाल्मीकीय रामायण और महाभारत के चुने हुए अंश (एक वर्ष), मीमांसा, वैशेषिक, न्याय, योग, सांख्य और वेदान्त तथा दस उपनिषद् (दो वर्ष), और फिर एतरेय, शतपथ, गोपथ और साम इन चार ब्राह्मण तथा चारों वेदों का छह वर्ष में अध्ययन किया जाय इन सबके अध्ययन में तेरह वर्ष का समय लगेगा। आयुर्वेद (चिकित्सा विज्ञान), धनुर्वेद (युद्ध विद्या तथा राजनीति शास्त्र), गन्धर्व वेद (संगीत शास्त्र), अथर्व वेद (पदार्थ विज्ञान तथा शिल्प विद्या), ज्योतिष शास्त्र (अंकगणित, बीजगणित, भूगोल, खगोल और भूगर्भ विद्या (और यन्त्र कला के लिए भी आवश्यक रूप में पढ़ना अपेक्षित है। इसके पठन-पाठन के लिए महर्षि ने समय निर्धारित कर दिया है। महर्षि की इस पाठ विधि से यह स्पष्ट है कि एक समय में एक ही विषय का अध्ययन कराना चाहिए।

महर्षि द्वारा प्रतिपादित आर्ष पाठ विधि में धर्म का स्थान सर्वोपरि है। सांसारिक जीवन के लिए उपयोगी विद्याओं के पठन-पाठन का भी उसमें पर्याप्त स्थान है। परन्तु वह शिक्षा वेद, वेदाङ्ग के बाद पढ़ने का विधान किया है। उन्होंने लिखा है कि जो वेदों को पढ़के आयुर्वेद अर्थात् जो चरक, सुश्रुत आदि ऋषि-मुनि प्रणीत वैदिक शास्त्र हैं, उनका अर्थ, क्रिया, शस्त्र, छेदन, भेदन, लेपन, चिकित्सा, निदान, औषधि, पथ्य, शरीर, देश, काल और वस्तु के गुण चार वर्ष के भीतर पढ़े पढावें।'' आयुर्वेद और अथर्ववेद आदि अन्य व्यावहारिक विद्याओं को वेद विद्याओं के बाद पढ़ाने का यही उद्देश्य है कि वेद शास्त्रों के अध्ययन के पश्चात् धर्म, अधर्म का ज्ञान हो जाएगा और आयुर्वेदादि ज्ञान विज्ञान का उपयोग धर्म के अनुकूल या धर्म के अनुरूप ही करेंगे।

महर्षि ने शिक्षा के पाठ्यक्रम में जहां ऋषि कृत ग्रन्थों के अध्ययन का प्रतिपादन किया है वहीं अनार्ष ग्रन्थों के पढ़ने का निषेध किया है।

प्राचीन भारत की शिक्षा पद्धति

भारत में आदि युग को वैदिक युग माना जाता है यद्यपि दयानन्द द्वारा प्रतिपादित शिक्षा प्राचीन शिक्षा पद्धति के अनुरूप ही है। तथापि वैदिक युग से लेकर के सभी युगों में शिक्षा का क्या-क्या स्वरूप रहा है ? उसका ऐतिहासिक क्रम से उनके मूल ग्रन्थों के अनुसार शिक्षा का स्वरूप वर्णन करना अपेक्षित है। शतपथ ब्राह्मण के अनुसार बच्चे एक आयु तक माता-पिता के प्रभाव में रहते हैं उसके पश्चात् बच्चे आचार्य के अन्तेवासी बनकर शिक्षा प्राप्त करें।[4] सबसे पहले बच्चें की माता उनकी अन्तर्निहित शक्तियों

का विकास करती है, उसके पश्चात् पिता को शिक्षा देनी चाहिए तदनन्तर बालकों को आचार्य के पास शिक्षा प्राप्त करने के लिए भेजना चाहिए। जिस प्रकार माता-पिता अन्तरतम स्थिति में रखकर बालक को शिक्षा देते हैं वैसे ही आचार्य शिष्यों को अपने गर्भ में धारण कर उन्हें बाह्य प्रभावों से मुक्त रखता है और वे उसी के प्रभाव में रहकर बड़े होते है। यह अथर्ववेद में स्पष्ट रूप से आदेश दिया गया है।[5] बालक और बालिकाओं को उपनयन संस्कार के पश्चात् आचार्य कुल में निवास करना होता था और वहाँ ब्रह्मचर्य का पालन करते हुए विद्या ग्रहण करनी होती थी। उपवीत -जिसका उपनयन संस्कार हो चुका हो) ब्रह्मचारी का उल्लेख ऋग्वेद में आया है और उसे देवों का अंग कहा गया है।[6] अथर्ववेद के ब्रह्मचर्य सूक्त में ब्रह्मचर्य का वर्णन करते हुए शिक्षा का विस्तृत वर्णन किया है। ब्रह्मचर्य की महिमा बतलाते हुए कहा कि ब्रह्मचर्य द्वारा ही आचार्य यह योग्यता प्राप्त करता है कि जिससे कि वह ब्रह्मचारियों को विद्या दान करने में समर्थ होता है। ब्रह्मचर्य के तप से ही राजा राष्ट्र की रक्षा करता है।[7] ब्रह्मचर्य व्रत का पालन करके ही मनुष्य तेजोमय ब्रह्म का (ज्ञान) धारण करता है और सब देवों का अधिवास बन जाता है। तब दिव्य गुणों को प्राप्त कर लेता है। एक अन्य वेद मंत्र में कहा है कि ब्रह्मचर्य के तप से देवों ने मृत्यु पर विजय प्राप्त की थी। ब्रह्मचर्य द्वारा ही इन्द्र ने देवों को स्वयक् (सुख समृद्धि) से परिपूर्ण कर दिया था।[8] बालकों के समान बालिकाएं भी आचार्य कुलों में रहकर ब्रह्मचर्य पूर्वक विद्याध्ययन किया करती थी। ब्रह्मचर्य द्वारा ही कन्या युवा पति को प्राप्त करती है।[9] वैदिक समाज व्यवस्थानुसार मानव जीवन को चार भागों में (आश्रमों में) विभक्त किया गया है। इनमें सबसे पहले ब्रह्मचर्याश्रम है। प्रत्येक मनुष्य अर्थात् स्त्री पुरुष को यह आवश्यक है कि वह अपने जीवन का प्रथम भाग ब्रह्मचर्याश्रम में व्यतीत करे। अर्थात् माता-पिता से पृथक् होकर आचार्य कुलों में निवास करें और वहाँ विभिन्न विद्याओं का विद्वान् होकर स्नातक बनें।

शिक्षा प्रारम्भ उपनयन संस्कार द्वारा होता था। इस अवसर पर बालक और बालिकाओं को यज्ञोपवीत धारण कराया जाता था। तीन धागों में निर्मित हुआ यज्ञोपवीत तीन व्रतों का प्रतीक था जिन्हें ब्रह्मचारी धारण करते थे। वैदिक साहित्य में यज्ञोपवीत को परम पवित्र तथा आयुष्य (दीर्घ आयु) प्रदान करने वाला और शुद्ध कहा गया है।[10] उसके धारण करने के अनन्तर बालक और बालिकाएं आचार्य कुल में निवास करने के अधिकारी होते थे। जब कोई ब्रह्मचारी आचार्य कुल में विद्या ग्रहण के लिए जाता था तो आचार्य उससे पूछता था तुम किसके ब्रह्मचारी हो?[11] विद्यार्थियों के यह कहने पर कि मैं आपका ब्रह्मचारी हूँ, आचार्य उससे कहता था कि नहीं, तुम इन्द्र के ब्रह्मचारी हो, तुम अग्नि के ब्रह्मचारी हो और मैं तुम्हारा आचार्य हूँ। इन्द्र को देवताओं का राजा कहा गया है और अग्नि द्वारा याज्ञिक कर्मकाण्ड का अनुष्ठान होता है। देवों और पितरों द्वारा जिन विद्याओं व ज्ञान का विकास पहले किया जा चुका हो, उन्हीं की शिक्षा प्राप्ति के लिए ब्रह्मचारी आचार्य कुल में प्रवेश किया करते थे इसलिए वे इन्द्र के ही ब्रह्मचारी हुआ करते थे। सब याज्ञिक अनुष्ठान अग्नि द्वारा ही सम्पादित होता है। आचार्य कुल में निवास करते हुए ब्रह्मचारियों को प्रातः सायं अग्नि होत्र करना होता था इसलिए उन्हें अग्नि का ब्रह्मचारी कहा जाता था। आचार्य कुल में शिक्षा प्राप्त करने के लिए विद्यार्थियों को कोई शुल्क नहीं देना होता था। वे भिक्षा द्वारा भोजन वस्त्रादि प्राप्त कर लेते थे। भिक्षा में उन्हें जो कुछ मिल जाता था उसे भी आचार्य की सेवा में प्रस्तुत कर देते थे। आचार्य गण, उपाध्याय गण और अध्यापक गण और शिष्य वर्ग का निर्वाह प्रधानतया इस भिक्षा द्वारा ही होता था, आचार्य कुलों का जीवन बहुत सादा तथा तपोमय हुआ करता था। उस काल में विद्यार्थियों की आवश्यकताएं अधिक नहीं होती थी। वह अपनी न्यूनतम आवश्यकताओं को भिक्षा द्वारा ही पूर्ण कर लेता था वैसे भी गुरुकुल नगरों से दूर वनों में स्थित आश्रमों में होते थे, इसलिए ईंधन, समिधा, कन्दमूल, फल, वल्कलादि को जंगल से ही प्राप्त कर लिया जाता था। गुरुकुलों में गौ आदि पशु भी बहुत बड़ी संख्या में रखे जाते थे उनसे

ही दूध, घी आदि की इच्छा पूरी की जाती थी। छान्दोग्य उपनिषद् में एक कथा आती है कि जब सत्यकाम जाबाल हारिद्रमुक गौतम के पास शिक्षा ग्रहण के लिए गया तो आचार्य ने 400 (चार सौ) गौएं उसके सुपूर्द कर दी और उसे आदेश दिया कि गौओं की संख्या एक सहस्र हो जाए तो वहाँ आए। इससे सूचित होता है कि आचार्य कुल के भोजन की पूर्ति की आवश्यकता का साधन गौशालाएं होती थी जो आचार्य कुलों में स्थित होती थी। इससे यह सिद्ध होता है कि प्राचीन समय में पशु का बहुत अधिक महत्व था। यह तो स्वाभाविक था कि आचार्य कुल की गौओं का पालन-पोषण ब्रह्मचारी ही करते थे।

गुरुकुलों में जो प्राध्यापक ब्रह्मचारियों को शिक्षा ग्रहण कराते थे उनके कई वर्ग होते थे। इन शिक्षकों में सर्वोच्च स्थिति आचार्य की मानी जाती थी। निरुक्त के अनुसार आचार्य उसे कहते थे जो आचार, सदाचार का ग्रहण कराये (आचार्यकस्मात्-आचार्य आचारं ग्राह्यति) इसका अभिप्राय यह है कि गुरुकुल में बालक और बालिकाओं को चरित्रवान् बनाना यह आचार्य का प्रधान कर्त्तव्य था। मनुस्मृति में आचार्य का लक्षण किया गया है कि जो द्विज शिष्य का उपनयन संस्कार कराके उसे वेद पढ़ाये और साथ ही कल्प वेदान्त की, उनकी व्याख्या सहित शिक्षा दे उसे आचार्य कहते हैं।[12] आचोर्य कुल आचार्य के ही अधीन होता था वही वेद तथा कल्प का अध्यापन कराता था। ब्रह्मचारियों को सदाचारी बनाने का उत्तरदायित्व भी उसी का हुआ करता था। आचार्य के अधीन जो शिक्षक गुरुकुलों में अध्यापन कार्य करते थे उन्हें उपाध्याय कहा जाता था। मनु के अनुसार जो द्विज वेद के एक भाग तथा वेदाङ्गों का अध्यापन करे और इस कार्य के लिए वृत्ति भी ग्रहण करे उसे उपाध्याय कहते हैं।[13] इससे यह संकेत मिलता है कि आचार्य कुलों में कतिपय शिक्षकों को वृत्ति अर्थात् पारिश्रमिक वेतन आदि पर नियुक्त किया जाता था। आचार्य, उपाध्याय के अतिरिक्त आचार्य कुलों में ऋत्विक् भी होते थे जिनका कार्य विभिन्न यज्ञों का करना माना जाता था। प्राचीन भारत के शिक्षक न केवल सदाचारी, तपस्वी, त्यागी और विद्वान् हुआ करते थे अपितु अभिमान उन्हें स्पर्श नहीं कर पाता था। यदि किसी बात का उन्हें ज्ञान न हो तो उस विषय में वे अपनी अनभिज्ञता स्वीकार कर लेते थे। प्रश्नोपनिषद् में आता है कि कौशल्य राजपुत्र ने आचार्य सुकेशा भारद्वाज से 16 कलाओं से युक्त पुरुष के विषय में प्रश्न किया, जिस पर आचार्य ने कहा कि मैं इसे नहीं जानता। यदि मैं जानता होता तो उत्तर क्यों नहीं देता ? जो अनृत भाषण करता है वह समूल सूख जाता है। अतः मैं झूठ नहीं बोलूंगा[14]।

तैत्तिरीयोपनिषद् में उन नियमों का उल्लेख किया गया है जिन्हें आचार्यकुल में रहते हुए गुरुओं तथा शिष्यों को सदा अपने सम्मुख रखना आवश्यक होता था। उस समय शिष्यों को अध्ययन करते हुए और गुरुओं को प्रवचन करते हुए, ऋत्, सत्य, दम, अग्निहोत्र का अनुष्ठान अतिथि सेवा सबके प्रति समुचित व्यवहार, प्रजा के प्रति यथायोग्य व्यवहार और अपने साथियों के प्रति कर्त्तव्य पालन का सदा ध्यान रखना आवश्यक था। अध्ययन और प्रवचन ही पर्याप्त नहीं उनके साथ सत्य तथा तप भी आवश्यक रूप में कर्त्तव्य था। अतः गुरुकुल में विधिवत् उपनीत ब्रह्मचारी तथा उनके शिक्षक जहाँ अध्ययन तथा अध्यापन में व्यस्त रहते थे वहाँ उन्हें अपने जीवन में सत्य, दम, शम आदि से ओत-प्रोत होकर तपश्चर्या से युक्त बनाना होता था[15]। इन गुरुकुलों में गुरु और शिष्य का घनिष्ठ सम्बन्ध हुआ करता था। शिष्य के लिए आचार्य ही पिता था। निरूक्त में लिखा है कि शिष्य गुरु को ही अपना माता-पिता माने। किसी भी दशा में उसके प्रति द्रोह भाव न रखे। इसलिए मनुस्मृति में कहा है कि ब्रह्मचारी के लिए आचार्य ही उसका पिता होता है और सावित्री (विद्या) ही उसकी माता होती है। शिष्य के लिए यह आवश्यक था कि वह गुरु के प्रति श्रद्धा भाव रखे। मनु के अनुसार सुश्रूषा, गुरु की सेवा शिष्य का आवश्यक गुण है। सेवा के बिना शिष्य के लिए विद्या प्राप्त कर सकना सम्भव नहीं था। इसलिए मनु ने कहा है कि जिस प्रकार खनित्रेण (फावड़े) से जमीन खोदकर प्राप्त किया जाता है वैसे ही शिष्य गुरु से प्राप्त करता है[16]।

प्राचीन काल में गुरुकुलों में विद्यार्थी कौन-कौन सी विद्यायें पढ़ा करते थे? इसका वर्णन भी छान्दोग्य उपनिषद् में प्राप्त होता है। जिसमें कहा गया है कि सनत् कुमार के प्रश्न करने पर नारद ने उन विद्याओं को गिनाया है। जिनका उसने अध्ययन किया था। ये विद्यायें है ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद, अथर्ववेद, इतिहास, पुराण, व्याकरण, पितृविद्या, राशि विद्या, राशि विद्या (गणित), देव विद्या, निधि शास्त्र, तर्क शास्त्र, नीति शास्त्र, ब्रह्म विद्या, भूत विद्या,, क्षत्र विद्या, नक्षत्र विद्या (ज्योतिष) सर्प विद्या और देवजन विद्या[17]। इससे यह स्पष्ट है कि गुरुकुलों में निवास करते हुए प्राचीन काल में भारत के बालक और बालिकाओं को वेद शास्त्रों के अतिरिक्त इस समय के आधुनिक विषय गणित, ज्योतिष, शस्त्र विद्या, व्याकरण और चिकित्सा विज्ञान आदि का भी अध्ययन कराया जाता था।

बृहदारण्यकोपनिषद् में लिखा है कि तीन लोक होते हैं- मनुष्य लोक, पितृ लोक और देव लोक। इन तीन लोकों में देव लोक सबसे श्रेष्ठ और इसकी प्राप्ति विद्या द्वारा ही सम्भव है। अतः सभी को विद्या प्राप्त करनी चाहिए। वह विद्या आचार्य से ही प्राप्त हो सकती है इसलिए विधान किया गया था कि एक निश्चित आयु में बालक और बालिकाओं को गुरुकुल में भेज दिया जाए तथा वहाँ ब्रह्मचर्य पूर्वक रहकर वे विद्याध्ययन करें। जैसे कि छान्दोग्य उपनिषद् में कथा आती है कि आरूणि का पुत्र श्वेतकेतु जब बड़ा हो गया तो उसके पिता ने उससे कहा कि, हे श्वेतकेतु ! अब तू ब्रह्मचर्य का जीवन व्यतीत कर और स्वयं ब्राह्मण न बनकर अपने को केवल ब्राह्मणों का बन्धु बताये, ऐसा हमारे परिवार में कोई व्यक्ति नहीं हुआ है जिसने शिक्षा प्राप्त न की हो। पिता के ऐसा कहने पर श्वेतकेतु आचार्य की सेवा में गया और 24 वर्ष की आयु तक समस्त प्रकार की विद्याओं का अध्ययन किया। श्वेतकेतु के समान ही उस समय सभी बालक और बालिकाएँ आचार्य के पास विद्याध्ययन करते थे। सभी गृहस्थों के यहाँ यह कहा जाता था कि हमारे वंश में कोई ऐसा बालक या व्यक्ति नहीं हुआ कि जो विद्वान् न हुआ हो, इसी का परिणाम था कि केकय राज अश्वपति ने अतिथि ऋषियों को कहा था कि उनके राज्य में ऐसा कोई व्यक्ति नहीं है जो नास्तिक, असत्यवादी, नाना शास्त्रों से अनभिज्ञ तथा अविद्वान् हो[18]। अश्वपति ने जो यह उद्घोषणा की है कि मेरे राज्य में कोई ऐसा व्यक्ति नहीं है जो चोर हो, जो जुआँ खेलता हो, जो शराब पीता हो, न ही कोई ऐसा व्यक्ति है जो अग्निहोत्र न करता हो, न कोई चरित्रहीन है इसलिए चरित्रहीन स्त्री कहाँ से होगी ? इस उद्घोषणा का अभिप्राय यही है कि प्राचीन काल में शिक्षा अनिवार्य रूप में दी जाती रही होगी।

आचार्य कुलों तथा अन्य शिक्षण संस्थाओं का जो स्वरूप प्राचीन भारत में था, उसका विस्तृत चित्रण वाल्मीकि रामायण में किया गया है। जिसमें लिखा है कि उस समय बहुत सी शिक्षण संस्थाएं विद्यमान थी उनमें उन आश्रमों की संख्या अधिक थी जो वनों में स्थित थे इसलिए बालक और बालिकाओं के जीवन के प्रथम चरण में आश्रमों में निवास करते हुए आचार्य अथवा गुरु के समीप रहकर अनुशासन तथा तपस्या का जीवन व्यतीत करते थे।। कौशल राज दशरथ के पुत्रों को भी उस युग की परम्परा के अनुसार गुरुकुल में शिक्षा ग्रहण करनी पड़ी थी[19]। वहाँ आचार्य कुल में रहते हुए विद्यार्थियो को इन्द्रिय सयम तथा ब्रह्मचर्य व्रत का पालन करना अनिवार्य था। रामायण काल में ये आरण्यकाश्रम विद्या, ज्ञान एवं शिक्षा के मुख्य केन्द्र थे, उनमें गुरु और शिष्य एक विशाल परिवार के सदस्यों के समान निवास करते थे। जब राम वनवास गये तो वे अनेक आश्रमों के सम्पर्क में आए थे। उन्होंने उन आश्रमों में कुछ समय के लिए समय भी व्यतीत किया था। इन आश्रमों में भारद्वाज ऋषि का आश्रम विशेष रूप से वर्णन करने योग्य है। यह आश्रम गंगा, यमुना के संगम के समीप अवस्थित था। सांयकाल जब राम भारद्वाज आश्रम में पहुंचे तो ऋषि भारद्वाज अग्निहोत्र के पश्चात् अपने शिष्यों सहित आसन पर बैठे हुए थे। राम ने उनको हाथ जोड़कर नमन किया।[20] कुछ दिन उनके आश्रम में राम ने विश्राम किया। बाल्मीकि रामायण में भारद्वाज के इस आश्रम का वर्णन

विस्तृत रूप में किया गया है। वहाँ वर्णन किया है कि इसमें अनेक उपवन थे जिनके बीच में जलधाराएं बहती थी। इस आश्रम में अनेक आवास गृह बने हुए थे जिनमें छात्र और प्राध्यापक निवास करते थे, अतिथियों के लिए भी आवास की बड़ी उत्तम व्यवस्था थी। वहाँ यह भी वर्णन मिलता है कि जब भरत राम को वापस अयोध्या चलने के लिए प्रार्थना करने के लिए आए थे, उस समय वे दक्षिण दिशा की ओर गए थे, तब, भारद्वाज आश्रम में ही ठहरे थे। भरत के साथ विशाल सेना थी उसका ठहरने का प्रबन्ध भी आश्रम में ही हो गया था। इतना ही नहीं यह भी वर्णन मिलता है कि छात्रों के आवासों के अतिरिक्त अनेक हर्म्य तोरण युक्त प्रासाद तथा राजा के निवास के लिए भी सुन्दर व्यवस्था थी। इसके साथ ही घोड़े तथा हाथियों के लिए भी चतुशालाओं की भी व्यवस्था थी। राजकीय अतिथियों के लिए निवास की जो राज वेश्म था, उसमें शय्या, आसन, वस्त्रादियों से सुसज्जित व्यवस्था थी। वहाँ भोजन की भी उत्तम व्यवस्था थी। भरत के समान जब राजकीय अतिथि आश्रम आते थे तो उनका संगीत तथा नृत्य से मनोरंजन कराया जाता था[21]। यद्यपि उन आश्रमों में सभी प्रकार की सुविधा उपलब्ध थी तो भी इन आश्रमों का वातावरण इतना तपोमय, सात्विक तथा पवित्र होता था कि उनमें प्रवेश करते समय किसी के लिए भी अपनी सम्पत्ति को प्रदर्शित कर सकना सम्भव नहीं रह सकता था। इसकी अभिव्यक्ति इससे होती है कि जब भरत आश्रम आए तो उन्होंने अपनी सेना को आश्रम से एक कोश दूर छोड़ दिया था। अपने अस्त्र-शस्त्र और राजकीय वस्त्र भी उतार दिए थे[22]।

आश्रमों में इतना सात्विक वातावरण होता था कि उनमें प्रवेश करने मात्र से तामसिक वृत्तियाँ दब जाती थी और सात्विक प्रवृत्ति उत्पन्न हो जाती थी। भारद्वाज आश्रम के अतिरिक्त बाल्मीकि रामायण में अनेक आश्रमों का वर्णन मिलता है उनमें अगस्त्य, वशिष्ठ, अत्रि, सरभंग, बाल्मीकि, गौतम, सुतीक्ष्ण और शब्री के आश्रम प्रमुख हैं। वनवास के समय राम सरयू नदी से गोदावरी नदी तक के आश्रमों में यात्रा करते हुए ठहरे थे। वास्तव में उस समय सरयू से गोदावरी तक आश्रमों की एकसुदीर्घ श्रृंखला वहाँ अवस्थित थी। इस प्रकार के आश्रम अन्यत्र भी प्रायः सम्पूर्ण भारत में विद्यमान थे। विद्वान् ऋषि मुनि इनमें निवास करते थे और उनके ज्ञान व सदाचारमय जीवन से प्रभावित होकर वहाँ शिक्षा ग्रहण करने के लिए राजकुमार तक आते थे।

शहरों से दूर वनों में अवस्थित आश्रमों के अतिरिक्त नगरों में भी प्राचीन शिक्षण संस्थाएं विद्यमान थी। बाल्मीकि रामायण में अयोध्या के ऐसे अनेक शिक्षणालयों का वर्णन मिलता है। इनमें वेद, शास्त्र तथा धर्म के अतिरिक्त ज्ञान-विज्ञान एवं व्यावहारिक विषयों की भी शिक्षा दी जाती थी। इन विद्यालयों में कौशल जनपद के राजपुरोहित वशिष्ठ का विद्यालय उल्लेखनीय है। राम के समय में वशिष्ठ कुल के सुयज्ञ वशिष्ठ इस विद्यालय के संचालक थे। इससे यह सिद्ध होता है कि राम और उनके भाइयों ने भी इसी शिक्षणालयों में शिक्षा प्राप्त की थी। जिस समय राम वनवास जाने लगे तो उस समय राम ने सुयज्ञ को आदरपूर्वक अपने पास बुलाया था, उन्हें लाने के लिए लक्ष्मण को भेजा गया था। राम ने सुयज्ञ तथा उनकी पत्नी को बहुत से यान, आसन, शय्या, आभूषण, रत्नादि भेंट किए थे[23]। अयोध्या में उपस्थित कौशिक, अभिरुक, अगस्त्य आदि अन्य अनेक आचार्यों के विद्यालयों को भी राम ने बहुत सा दान दिया था। इसका वर्णन भी बाल्मीकि रामायण के अनेक स्थलों पर आया है। अयोध्या के इन शिक्षणालयों में विद्याध्ययन करने वाले विद्यार्थी व ब्रह्मचारियों की संख्या इतनी अधिक थी कि उन्होंने अपना पृथक् संघ बनाया हुआ था जिसे बाल्मीकि रामायण में मेखलिनंभासंध (मेखला धारण करने वाले ब्रह्मचारियों का संगठन) कहा गया है। राम के वनवास के लिए जाते समय इस संघ के अनेक सदस्य राम की माता कौशल्या के पास भिक्षा के लिए आए थे उनको राम ने एक-एक सहस्र निष्कर्ष (उस युग का सिक्का) प्रदान किए थे।

रामायण काल में शिक्षण संस्थाएं चाहे आश्रमों में अवस्थित थी अथवा शिक्षणालयों में थी। वहाँ किन-किन विषयों का अध्ययन कराया जाता था, इसका वर्णन भी बाल्मीकि रामायण में किया है। शिक्षा के विषय चार प्रकार के होते थे। ये विषय थे, शारीरिक, बौद्धिक, व्यावहारिक और नैतिक। ब्रह्मचर्य आश्रम में रहते हुए छात्र को हृष्ट, पुष्ट, बलवान् तथा सहनशील बनने के लिए विशेष ध्यान देना होता था। इसके साथ ही वे अपनी तथा अपने देश की रक्षा के लिए अस्त्र-शस्त्र तथा युद्ध विद्या की भी शिक्षा प्राप्त करते थे। उस युग में युद्ध बहुत ही महत्व रखते थे। राजकुल के व्यक्तियों तथा क्षत्रियों के अतिरिक्त अन्य लोग भी शिक्षा प्राप्त करते थे। शिक्षा के बौद्धिक विषयों में, वेद, वेदाङ्ग, धर्म शास्त्र, कला, वार्ता और राजनीति शास्त्र आदि विषय थे। व्यावहारिक शिक्षा में चिकित्सा शास्त्र आयुर्वेद, विविध शिल्पों उद्योग धंधो का सैद्धान्तिक तथा क्रियात्मक ज्ञान दिया जाता था। नैतिक शिक्षा में इन्द्रियों को संयम में रखने, सबके प्रति स्नेह की भावना रखने और चरित्र को महान् बनाने पर बल दिया जाता था। छान्दोग्योपनिषद् में ऋषि शनत कुमार के पूछे जाने पर नारद ने आचार्य कुल में जिन विद्यार्थियों की शिक्षा प्राप्त करने का वर्णन किया उसमें, शारीरिक (क्षत्र विद्या), बौद्धिक (वेद, इतिहास पुराण, व्याकरण, ब्रह्म शास्त्र, नीति शास्त्रादि), व्यावहारिक (गणित, ज्योतिष, सर्प विद्या, चिकित्सा शास्त्रादि) और नैतिक शिक्षा का वर्णन किया है। प्राचीन भारत में सभी बालक-बालिकाओं को शिक्षा दी जाती थी।

गुरुकुल में निवास करते हुए विद्यार्थी ब्रह्मचर्य पूर्वक जब शिक्षा पूर्ण कर लेते थे तो उनका दीक्षान्त संस्कार सम्पन्न होता था। इस संस्कार के पश्चात् ही स्नातक बनकर घरों में वापस जाते थे। इस समावर्तन संस्कार के साथ ही वे गृहस्थाश्रम में प्रवेश करने के अधिकारी होते थे। दीक्षान्त के समय स्नातकों को आचार्य अन्तिम उपदेश देता था। उस उपदेश का बहुत अधिक महत्व माना जाता है। वह उपदेश इस प्रकार दिया जाता था कि "सदा सत्य भाषण करना। सदा धर्माचरण करना। स्वाध्याय में कभी प्रमाद न करना। आचार्य को जो धन प्रिय हो वह दक्षिणा के रूप में प्रदान न कर गृहस्थाश्रम में प्रवेश करना। सन्तान परम्परा को उच्छिन्न न होने देना। सत्याचरण में कभी प्रमाद न करना। धर्माचरण में कभी प्रमाद न करना। कुशल जीवन बिताने में कभी प्रमाद मत करना अपनी योग्यता तथा सामर्थ्य के विकास में कभी प्रमाद न करना। स्वाध्याय करना तथा पठित विद्या के प्रवचन में कभी प्रमाद मत करना। देव कार्यो, देव पूजा तथा देव यज्ञ और पितृ कार्यो (माता-पिता तथा गुरु जनों की सेवा या पितृ यज्ञ) में प्रमाद मत करना। सदा माता की सेवा में तत्पर रहना। सदा पिता की सेवा में तत्पर रहना। सदा आचार्य की सेवा में तत्पर रहना। सदा अतिथियों की सेवा में तत्पर रहना। जो कार्य दोष रहित हों केवल उन्हीं को सम्पन्न करना अन्य कार्यों को नहीं। हमारे केवल ऐसे कार्यों का ही अनुकरण करना जो समुचित और सदाचरण के अनुकूल हो। हमारे अनुचित कार्यों का कभी अनुकरण नहीं करना। सदा दान देने में तत्पर रहना। श्रद्धापूर्वक दान किया करना। यदि श्रद्धा नहीं तो भी दान देना, लज्जावश भी दान देना, भय से युक्त होकर भी दान देना। प्रतिज्ञात धन को दान देने में सदा तत्पर रहना। यदि कभी तुम्हें इस बात में सन्देह हो कि क्या कर्त्तव्य है और क्या अकर्त्तव्य है और कौन सा आचरण उचित है और कौन सा अनुचित, कौन सा उचित है तथा कौन सा अनुचित, क्या ज्ञातव्य और क्या अज्ञातव्य है ? तो यह देखों की धर्म युक्त परम विद्धान् और सदाचारी ब्राह्मणों का संदिग्धविषयों के प्रति क्या रूख है ? वे जैसा करते है वैसा ही तुम करना यही मेरा आदेश है, यही मेरा उपदेश है और यही वेदों तथा उपनिषदों का विधान है।"

इस तैत्तिरीयोपनिषद् के सन्दर्भ से सिद्ध होता है कि जिस आचार्य कुल में छात्र शिक्षा ग्रहण करते थे उसमें केवल विविध विद्याओं का ज्ञान देना अथवा उच्च शिक्षा देना ही पर्याप्त नहीं था अपितु वहाँ से निकलने वाले विद्या प्राप्त स्नातक स्त्यनिष्ठ और सदाचारी भी हों, इसका पूर्ण प्रयास किया जाता था।

गुरुकुलों में शिक्षा ग्रहण करते समय छात्रों को किसी भी प्रकार का शिक्षा शुल्क नहीं देना पड़ता था। प्रायः गुरुकुलों का खर्च भिक्षाचर्या से चलता था। बाल्मीकि रामायण में ऋषि मुनियों तथा उनके आश्रमों के लिए रघुवंश के राजाओं द्वारा विपुल धन राशि दान स्वरूप में दी गई थी, भारद्वाज आश्रम तथा अन्य अनेक शिक्षण संस्थाओं में जो धन राशि राजाओं तथा सम्पन्न व्यक्तिों द्वारा धन दिया जाता था उससे अनेक शिक्षणालय विकसित होते गए। उनमें निर्धन और राजा का राजकुमार समान रूप से शिक्षा प्राप्त करते थे। यह परम्परा अवश्य थी कि शिक्षा समाप्ति के पश्चात् स्नातक अपने सामर्थ्यानुसार गुरु दक्षिणा अवश्य देते थे। यह गुरु दक्षिणा भी गुरुकुलों के आय का एक स्रोत होती थी। कुछ आचार्यो की यह भी मान्यता थी कि जब तक शिष्य शिक्षा पूर्ण न कर लेवे तब तक उससे कुछ भी धनादि ग्रहण न किया जाय। बृहदारण्यकोपनिषद् में एक कथा आती है कि वैदह जनक जब याज्ञवल्क्य के पास विद्याध्ययन के लिए गया तो उसने एक सहस्र हाथी और ऋषभ आचार्य को देने की जिज्ञासा प्रकट की। जनक के ऐसा कहने पर याज्ञवल्क्य ने कहा कि मेरे पिता का यह मत था कि शिक्षा प्रदान किए बिना छात्र से कुछ भी ग्रहण नहीं करना चाहिए। वस्तुतः प्राचीन काल में विद्या दान को ब्रह्म दान मानकर सबसे उत्तम दान माना जाता था। परन्तु समय के साथ-साथ अधिक संख्या में गुरुकुल एवं शिक्षणालय होने लगे तो प्रयाग में भारद्वाजाश्रम के समान धन-सम्पदा से युक्त शिक्षणालयों की स्थापना प्रारम्भ हो गयी थी। इससे यह भी प्रारम्भ हो गया था कि आचार्य अपने सम्पन्न शिष्यों से प्रचुर मात्रा में धन-सम्पदा दक्षिणा रूप में मांगने लग गए थे। कालिदास द्वारा विरचित रघुवंश महाकाव्य में यह वर्णन आता है कि आचार्य वर्तन्तु ने अपने शिष्य कौत्स से 14 कोटी स्वर्ण मुद्राओं की दक्षिणा के रूप में मांग की थी। कौत्स को इतनी अधिक दक्षिणा देने के लिए अनेक कठिनाइयों का सामना करना पड़ा था। अन्त में वह राजा रघु के पास गया उससे धन की याचना करके अपने गुरु को दक्षिणा प्रदान करने में समर्थ हुआ।

प्राचीन भारत में अन्य अनेक विशाल शिक्षण संस्थाएं विश्वविद्यालयों के रूप में विकसित हो गयी थी। नैमिषारण्य में एक विशाल आश्रम विद्यमान था जिसके आचार्य प्रसिद्ध तपस्वी विद्वान् शौनक थे। महाभारत में आचार्य शौनक को कुलपति कहा गया है। नैमिषारण्य के इस गुरुकुल में दस हजार छात्रों (ब्रह्मचारियों) का निवास था। इन छात्रों के निवास के लिए अनेक आश्रम निर्मित किए गय थे। ऐसी विशाल शिक्षण संस्थाओं के प्रमुख को कुलपति कहा जाता था। कुलपति के निदेशन में ही बहुत से आचार्य, उपाध्याय, श्रोत्रिय आदि प्राध्यापक गण के (प्रोफेसर) रूप में अध्यापन कराते थे। क्योंकि कुलपति के लिए समस्त छात्रों से सम्बन्ध रखना सम्भव नहीं था, इसलिए क्रमशः आचार्य, उपाध्याय तथा अन्य प्राध्यापक गण छात्रों की संख्या का विभाजन करके अपने गर्भ के रूप में छात्रों को संरक्षण प्रदान करते थे। इस तरह आचार्यो और उपाध्यायों द्वारा गुरु शिष्य परम्परा अक्षुण्ण रूप में स्थापित हो जाती थी। शौनक मुनि के समान ही एक अन्य गुरुकुल महर्षि कण्व का था, जो मालिनी नदी के तट पर अवस्थित था। जैसा कि यह प्रसिद्ध आख्यान है कि शकुन्तला इसी आश्रम में कण्व मुनि की पुत्री के रूप में रहती थी। वहाँ पर अन्य अनेक कन्यायें भी शिक्षा प्राप्त करती थी। यहीं पर महाराजा दुष्यन्त के आगमन की कथा प्रचलित है जो शकुन्तला और दुष्यन्त के प्रणय सूत्र के रूप में विख्यात है। महर्षि बाल्मीकि का भी अपना आश्रम था जिसमें राम के पुत्र लव और कुश ने शिक्षा प्राप्त की थी। इसी आश्रम में रहकर लव और कुश ने साहित्य, काव्य, ललित कलाओं आदि अनेक विषयों को शिक्षा प्राप्त की थी। आचार्य का यह आदेश था कि संगीत के प्रतिकार रूप में कभी कोई धन ग्रहण न करना।

पुरा काल में भारत के गुरुकुलों में प्रायः यह व्यवस्था थी कि वह नगर और ग्रामों से दूर हों। इसी कारण वहाँ शिक्षा प्राप्त करने वाले छात्र-छात्राओं का नगर के जीवन से कोई सम्पर्क नहीं रहता था इसलिए

यह आवश्यक समझा जाता था कि छात्र संसार के व्यवहार से अनभिज्ञ न रहें। इसलिए कभी-कभी उनकों नगरों में लाकर यहाँ के रीति-रिवाज तथा व्यवहार से परिचित कराया जाता था। राम ने अयोध्या में जब अश्वमेध यज्ञ सम्पन्न कराया था तो महर्षि बाल्मीकि अपने शिष्यों के साथ उस समारोह में सम्मिलित हुए थे। उन शिष्यों में लव और कुश भी थे, उन्होंने सर्वप्रथम राम कथा का संगीत रूप में गायन किया था।

उस समय भारत में एक अन्य प्रकार के शिक्षा केन्द्रों का भी अस्तित्व था। जिनमें विशिष्ट प्रकार के विचार सम्प्रदायों का विकास हो रहा था। जैसे-मानव, औशनस्, बार्हस्पत्य आदि कितने ही उस युग में विचार सम्प्रदायों के रूप में विद्यमान थे। जिनके आचार्यो ने धर्म राजनीति दर्शनादि के क्षेत्रों में एक अपना विशिष्ट स्थान बना लिया था उनमें सर्वप्रथम मनु, उशना, परासर, बृहस्पति आदि अनेक प्रभावशाली आचार्य थे। जिनका अपने-अपने क्षेत्र में मौलिक चिन्तक के रूप में विशिष्ट स्थान था। इस परम्परा में उनके शिष्यों द्वारा उन विशिष्ट चिन्तन का विकास निरन्तर रूप में किया जाता रहा, इस प्रकार नाना प्रकार के विभिन्न सम्प्रदायों का प्रादुर्भाव हो गया। इस परम्परा का विशेष उल्लेख हमें कौटिल्य अर्थशास्त्र में मिलता है।

मध्यकालीन शिक्षा पद्धति

इसके पश्चात् बौद्धकालीन शिक्षा पद्धति मन्दिरों और मठों में शिक्षा केन्द्रों की स्थापना हुई।

* * *

सन्दर्भ संकेत

1. रमेश चन्द्र मजूमदार- ब्रिटिश पैरामाउन्सी (भाग-2)
2. मजूमदार ब्रिटिश पैरामाउंसी, पृष्ट-33
3. मजूमदार ब्रिटिश पैरामाउंसी (भाग-2, पृष्ठ-3)
4. "मातृमान् पितृमान् आचार्यवान् पुरूषों वेद।" शतपथ-14-6-10-5
5. आचार्य उपनयमानो ब्रह्मचारिण कृणुते गर्भमन्तः। अथर्व -11-5-3
6. ब्रह्मचारी चरति वे विषद्विषः स देवांत भवत्येकमंगम्। ऋग् -10-10-9-5
7. ब्रह्मचर्येण तपसा राजा राष्ट्रं विरक्षति।
   आचार्यो ब्रह्मचर्येण ब्रह्मचारिणमिच्छते।। अथर्व. ।।-5-17
8. ब्रह्मचर्येण तपसा देवा मृत्युमुपाध्नत।
   इन्द्रो हे ब्रह्मचर्येण देवेभ्यः स्वराभरत्।। अथर्व. 11-5-19
9. ब्रह्मचर्येण कन्या युवानं विन्दते पतिम्। अथर्व. 11-5-18
10. यजोपवीतं परमं पवित्रं प्रजापतेर्यत्सहजं पुरस्तात्
    आयुष्यमग्रयं प्रतिमुञ्च शुभ्रं यजोपवीतं बलमस्तु तेजः।। पा.गृ.सू. 22-11
11. "कस्य ब्रह्मचार्य्यरसि। भवतः। इन्द्रस्य ब्रह्मचारर्यस्तवाहमाचार्यस्तेम असौ।" (पारस्कर-22-29)
12. उपनीय तु यः शिष्यं वेदमध्यापयेद् द्विजः।
    संकल्पं सरहस्यं च तमाचार्य प्रचक्षते।। मनु. 2-140
13. एक देशं तु वेदस्य वेदांगान्यपि वा पुनः।
    योऽयायपति वृत्यर्थमुपाध्यायः स उच्यते।। मनु. 2-141

R
378.009
JAI-G

14. "अथ हैनं सुकेशा भारद्वाजः प्रप्रच्छ। भगवन् हिरण्यनामः कौसल्यो राजपूत्रों मामुपेत्येनं प्रश्नमपृच्छत। षोडश कलं भारद्वाज पुरुषं वेत्थ, तमहं कुमारमब्रुवं नाहमिमं वेद।" प्रश्न उ. -6-1

15. तैत्तिरीय उपनिषद् शिक्षाध्याय वल्ली, प्रथम अनुवाक्।

16. यथा खनन् खनित्रेण नरो वार्यधिगच्छति। तथा गुरुगतां विद्यां शुश्रुषुरधिगच्छति। मनु. 2-2/8

17. ऋग्वेदं भगवोऽध्येमि यजुर्वेदं सामवेदमाथर्वर्ण चतुर्थमितिहास पुराणं पंचमं वेदानां वेदं पित्र्यं राशिं दैवं निधिं वाक्यो वाक्यमेकायनं देव विद्यां ब्रह्मविद्यां भूत विद्यां क्षत्र विद्यां सर्पदेव जन विद्यामेतद् भगवोऽध्येमि। (छान्दोगय उप. 7-2)

18. सह प्रातः संजिहान उवाच न में स्तेनो जनपदे न कदर्यो न मद्यपो नानाहिताग्निर्नाविद्वान् न स्वैरो स्वैरिणी कुतः। (छान्दोग्य उ. -5-5)

19. वेदैश्च ब्रह्मचर्यैश्च गुरुभिरचोपकर्शितः। वा. रा. 2-12-84

20. "स प्रविश्य महात्मानभृषि शिष्य गणैर्युतम्।
हुताग्नि होत्रं दृष्ट् वैव महाभागः कृताञ्जलिः।।" वा.रा. 2-54-11

21. वा.रा. 2-91-32-35

22. वा.रा. 2-90-1 1-2

23. वाल्मीकीय रामायण 2-32-9-90

24. "मेखलिनां महासंघः कौशल्यां समुपस्थितः।
तेषां सहस्रं सौमित्र प्रत्येकं दापय।।" वा.रा. 2-32-21

25. सत्यं वद! धर्म चर! स्वाध्यायान्मा प्रमदितव्यम् ... श्रद्धया देयय्... (तैत्तिरीयोपनिषद्)

26. नारायणोऽभिधानेन नारायण इवापरः।
प्रधानः कृष्णराजस्य मंत्री सन्सन्धि विग्रहे।।
तेनेयं कारिता शाला श्री विशाला मनोरमा।
अत्र विद्यार्थिनः सन्ति नाना जन पदोद्भवाः।।
शाला विद्यार्थि संघाय दत्तवान् भूमिमुत्तमाम।
मान्यां निवर्तमानां तु वैच भिश्च शतैर्मिताम्।
निर्वनानि दीपार्थ मान्यानि द्वादशैव च।
पंच पुष्पाणि देयानि विवाहे सति तज्जनैः।
देयं तथोपनयने विवाहे यत्पुरोहिताम्।।
केनेचित्कारणेमेह कर्त्तव्ये विप्रभोजने।
भोजयेत्तुयथाशक्ति परिणत्यपरिषज्जन्म्।।

Central Library
185053
Gurukula Kangri (Deemed to be University) Haridwar

27. अर्धो हवा एष आत्मनो यज्जाया। शत. ब्रा. 5-1-6-10

28. अयज्ञो वा ह्येष योऽपत्नीकः। तैति. ब्रा. 2-2-2-6

29. स क्षौमवसना हृष्य नित्यं व्रतपरायणा। अग्निं जुहोतिस्म सदा मन्त्रवित्कृतमंगला।। (राम. आये. का. 20-15)

30. अथ च इच्छेत दुहिता में पण्डिता जायेत सर्वभायुरियादिति तिलौदनं पाचयित्वा सर्पिष्मन्तमश्नीयाताम्। बृह. उप. 6-4-17

31. पुरुषाणां स्त्रीणां सर्वेषां मन्त्रपाठः। पारस्कर गृह्यसूत्र 3-2 पर टीका।

32. द्विविधा स्त्रियो ब्रह्मवादिन्यः सद्योद्वाहाश्च। तत्र ब्रह्मवादिनीनां अग्नीन्धनं वेदाध्ययनं स्वगृहे च भैक्षचर्येति। सधोवधूनां तूपस्थिते विवाहे कथंचिद् अपनयने कृत्वा विवाहः कार्यः।

33. तेभ्योऽपगन्तुं निगमान्तविद्यं बाल्मीकि पार्श्वादिह संचरामि।

34. यथेमां वाचं कल्याणीमावदानि जनेभ्यः।
ब्रह्मराजन्याभ्यां शूद्राय चार्याय च स्वाय चारणाय च।। यजुर्वेद 26-2

द्वितीय-अध्याय

गुरुकुल की स्थापना के मूल कारण

संसार में जितने भी आविष्कार हुए है, उनमें अधिकतर आविष्कार प्रयोगशालाओं की एक विशिष्ट प्रक्रिया के द्वारा नहीं हुए हैं। कितने ही विज्ञान के मौलिक सिद्धान्तों की स्थापना भी किसी प्रक्रिया विशेष के द्वारा होकर के नहीं हुई है। इनमें हम उदाहरण रूप में यह प्रस्तुत कर सकते है कि गुरुत्वाकर्षण शक्ति के सिद्धान्त की स्थापना न्यूटन ने अपनी सहसा अन्तर्दृष्टि तथा अन्तः प्रज्ञा के अनुभव विशेष से उत्पन्न, यह अवधारणा बुद्धि भी अवतरित हुई कि यह सेब नीचे ही आकर क्यों गिरा, ऊपर क्यों नहीं गया ? उसे अचानक सूझा कि यह सेब नीचे इसलिए गिरता है कि भूमि में गुरुत्वाकर्षण शक्ति है जो वस्तुओं को अपनी ओर आकर्षित करती है और उसी गुरुत्वाकर्षण शक्ति से वस्तुओं में भार होता हैं। इसी प्रकार रेल के इंजन कां आविष्कार भी श्री जेम्सवॉट ने जब यह देखा कि बर्तन के ऊपर का ढ़क्कन भाप से हट गया है तो उसने ऊपर छोटी-सी भार वाली वस्तु रखी, परन्तु उसने पुनः अवलोकित किया कि चाय के बर्तन का ढ़क्कन उस बर्तन के ऊपर से पुनः भाप ने फेंक दिया है। जेम्सवॉट ने सहसा अपनी अन्तर्दृष्टि से निष्कर्ष रूप में यह पाया कि भाप में एक अद्भुत शक्ति हैं। उसको वैज्ञानिक विधि के द्वारा अत्यधिक उपयोगी बनाया जा सकता है, इसी से आगे चलकर रेल के इंजन का आविष्कार हो गया।

महात्मा मुंशीराम (स्वामी श्रद्धानन्द) यजुर्वेद का स्वाध्याय कर रहे थे। स्वाध्याय करते हुए यह मन्त्र पढ़ा कि :-

उपह्वरे गिरीणां संगमे च नदीनाम्।
धिया विप्रोऽजायत।।

अर्थात् मेधावी प्रतिभा का विकास पर्वतों की उपत्यकाओं व नदियों के संगम के रमणीय स्थानों पर होता है। महात्मा मुंशीराम जी ने जब इस मन्त्र का यह अर्थ पढ़ा तो सहसा उनकी अन्तःप्रज्ञा ने अन्तर्दृष्टि से यह सुझाया कि शिक्षा केन्द्र ऐसे शुद्ध वातावरण में होने चाहिए। उनके इस अन्तः प्रज्ञा से उत्पन्न विचार ने उनके हृदय में यह भाव उत्पन्न किए कि में ऐसे शिक्षा केन्द्र की स्थापना करूंगा।

उनका यह अन्तर्दृष्टि से उत्पन्न गुरुकुल की स्थापना का विचार कैसे पूरा हो, इसके लिए वे रात दिन विचार करते रहते थे और यह संकल्प धारण करते रहते थे कि गुरुकुल खोलने का बीज कैसे बोया जाय, जिससे उत्पन्न होकर विकसित होता हुआ पूर्ण वृक्ष का रूप धारण कर सके।

जब आर्यसमाज ने शिक्षा क्षेत्र में प्रवेश किया तो आधुनिक शिक्षा के साथ धार्मिक शिक्षा हेतु दयानन्द एंग्लो वैदिक कॉलेजों की स्थापना की गयी। दयानन्द एंग्लो वैदिक कॉलेज की स्थापना महात्मा हंसराज ने की थी। 9 नवम्बर 1883 ई० को बुलाई गयी सभा में यह प्रस्ताव सार्वजनिक रुप में उपस्थित किया गया था। और यह प्रस्ताव सर्व सम्मति से स्वीकार हुआ था। 1886 में डी.ए.वी. कॉलेज का प्रथम विद्यालय विभाग स्थापित हुआ। प्रथम दो वर्षो तक श्री लाला हंसराज स्कूल के अवैतनिक मुख्याध्यापक रहे तथा बाद में 24 वर्षो तक अवैतनिक रुप से प्राचार्य का कार्य किया। (लाला लाजपतराय-आर्य समाज) किन्तु पंजाब के आर्य समाजियों का एक वर्ग इस डी.ए.वी. कॉलेज पद्धति से असंतुष्ट था, इस पक्ष का यह कहना था कि इन कॉलेजो में संस्कृत भाषा वेद शास्त्र और अन्य आर्ष ग्रन्थों की समुचित व्यवस्था नहीं है। उनका

यह भी मानना था कि इन कॉलेजों की स्थापना प्राच्य विषयों की शिक्षा के पठन-पाठन हेतु ही की गयी थी, उन विषयों का यहाँ गौण स्थान कर दिया गया है। डी.ए.वी. कॉलेजों में भी अंग्रेजी साहित्य तथा आधुनिक विज्ञान की ही शिक्षा की प्रधानता है। इसका यह परिणाम हुआ कि डी.ए.वी. कॉलेज की मैनेजिंग कमेटी में मतभेद बढ़ता गया। जैसे कि इससे पूर्व अध्याय में यह लिखा जा चुका है कि अंग्रेजी शासकों ने प्राचीन विषयों की शिक्षा को तिलांजलि देकर केवल आधुनिक विषयों की शिक्षा देना, प्रारम्भ कर दिया था उससे भारतीय समाज के बुद्धिजीवी लोगों ने एक गहरा असन्तोष अनुभव किया। उसकी प्रतिक्रिया में महर्षि दयानन्द ने प्राचीन और आधुनिक विषयों को सम्मिलित करते हुए एक अद्‌भुत शिक्षा पाठ विधि अपने प्रसिद्ध ग्रन्थ सत्यार्थ प्रकाश में प्रतिपादित की। इसी से प्रभावित होकर आर्यसमाज के एक वर्ग ने डी.ए.वी. कॉलेजों की स्थापना की थी। डी.ए.वी. कॉलेजों की अवस्था भी अंग्रेजी सभ्यता की ओर अन्मुख होने लगी तो आर्यप्रतिनिधि सभा पंजाब में ऐसे बहुत से सदस्य थे जो डी.ए.वी. कॉलेजों की तीव्र आलोचना करने लगे। आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के उद्देश्यों में एक यह भी उद्देश्य था कि वेदों और अन्य प्राचीन शास्त्रों की शिक्षा प्रदान करने के लिए आर्योपदेशक तैयार करने के लिए एक विद्यालय स्थापित करना। आर्योपदेशक विद्यालय की स्थापना की गयी, उसका अध्ययन काल तीन वर्ष तक रखा गया। इस उपदेशक विद्यालय में विशारद परीक्षा उत्तीर्ण छात्र लिए जाते थे। पन्द्रह छात्र प्रवेश ले सकते थे। विद्यार्थियों के लिए यह आवश्यक था कि वे आश्रम में रहे और ब्रह्मचर्य का पालन करें।

इस उपदेशक विद्यालय के द्वारा भी स्वामी दयानन्द द्वारा प्रतिपादित शिक्षा पद्धति का निर्वाह नहीं हो रहा था। क्योंकि महर्षि दयानन्द ने लिखा था कि :-

1. यह राजनियम और जातियनियम होना चाहिए कि आठ वर्ष की आयु के बाद बालक और बालिकाओं को घर में न रख सकें। शिक्षा के लिए उन्हें पाठशाला में भेज दें। जो न भेजे वह दण्डनीय हो।
2. लड़कों और लड़कियों की पाठशालाएं (गुरुकुल) पृथक्-पृथक् हो और एक दूसरे से पर्याप्त दूरी पर स्थित हो।
3. गुरुकुल (आचार्यकुल) शहरों, ग्रामों से दूर एकान्त स्थान में हों।
4. गुरुकुल में सबको तुल्य वस्त्र, एक सदृश आसन, समान भोजन और समान शिक्षा दी जाय। चाहे वे राजकुमार हो चाहे राजकुमारी हो अथवा चाहे रंक (दरिद्र) की सन्तान सबके प्रति एक जैसा व्यवहार किया जाय।
5. गुरुकुलों में सब तप का जीवन बितायें और ब्रह्मचर्य का पालन करें। 25 वर्ष से पूर्व बालक का और 16 वर्ष से पूर्व बालिका का विवाह न होने पाये।
6. गुरुकुलों में गुरु और शिष्य का सम्बन्ध पिता-पुत्र के सदृश हो।
7. शिक्षा में वेद, वेदाङ्ग, संस्कृत भाषा तथा आर्ष ग्रन्थों की प्रमुखता दी जाये। परन्तु साथ में ही ज्ञान-विज्ञान (गणित, ज्योतिष, भूगोल, खगोल, भूगर्भ विद्या, चिकित्सा शास्त्र, राजनीति, शिल्प विद्या, संगीत नृत्य आदि) की पढ़ाई की भी समुचित व्यवस्था की जाये।

महात्मा मुंशीराम ने जो एक गुरुकुल शिक्षा पद्धति का बीजारोपण अपने मन में किया था, उस बीज को सफल करने के लिए उन्होंने अपने समाचार पत्र "सद्‌धर्मप्रचारक" के द्वारा शिक्षा के क्षेत्र में एक क्रान्तिकारी परिवर्तन करते हुए आन्दोलन प्रारम्भ किया। उन्होंने सत्धर्म प्रचारक में लिखा कि शिक्षा ऐसे वातावरण में होनी चाहिए जो शहरों से दूर एकान्त स्थान पर नदियों के सुरम्य तटों पर, पर्वत मालाओं के

समीप अवस्थित हो। इन संस्थाओं में बचपन से ही बालक ब्रह्मचर्यव्रत का पालन करते हुए वेद शास्त्रों का अध्ययन करें। आर्यसमाज गुण कर्मानुसार वर्ण व्यवस्था में आस्था रखता है। जन्म के आधार पर किसी को ब्राह्मण या शूद्र नहीं माना जाता है। गुण, कर्म, स्वभाव के अनुसार वर्णव्यवस्था को स्थापित किया जाये, यह आर्य समाज का महत्वपूर्ण उद्देश्य होना चाहिए। इनका यह विचार भी था कि आश्रम व्यवस्था के बिना वर्ण व्यवस्था कायम नहीं की जा सकती। आश्रमों पर ही वर्ण निर्भर है। जब आश्रम नहीं हैं तो वर्ण व्यवस्था कैसे स्थापित की जा सकती हैं। आश्रम व्यवस्था के लिए गुरुकुल की स्थापना आवश्यक है। आश्रम पद्धति के अनुसार सब बालक और बालिकाओं को जीवन का प्रथम भाग ब्रह्मचारी के रूप में व्यतीत करना चाहिए। गुरुकुल में रहकर विद्याध्ययन के साथ-साथ अपने अन्दर छिपी हुई शक्तियों का विकास करना चाहिए। अध्ययन समाप्ति के पश्चात् जिसमें जैसी योग्यता हो, जिसके जो गुण कर्म स्वभाव हो उनके अनुसार ही वर्ण निश्चित किया जाना चाहिए। उनमें से कौन ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र वर्ण में जाने योग्य है, इसका निश्चय ब्रह्मचर्य आश्रम के बाद ही किया जा सकता है। इसलिए उनका मानना था कि आश्रम पद्धति को स्थापित करने के पश्चात् ही वर्ण व्यवस्था को पुनः स्थापित करना सम्भव है। इस प्रकार के विचार की सद्धर्म प्रचारक में 8 आषाढ़ संवत् 1953 (1896 ई०) में लाला मुंशीराम ने एक लेखमाला शुरू की। जिसका शीर्षक था- "सन्तान को आर्य क्यों कर बना सकते हो ?" इसके अन्तर्गत यह विस्तारपूर्वक समझाया गया था कि शहरों के वातावरण में बच्चों पर बुरे प्रभाव पड़ते है, उन्हें वहाँ पर कुसंगति से नहीं बचाया जा सकता है। इस लेखमाला में गुरुकुल के सम्बन्ध में एक विस्तृत योजना प्रस्तुत की गयी थी।

इस योजना द्वारा यह विचार प्रकट किया गया था कि बीस ऐसे सज्जन तैयार हो जाए जो अपने पुत्र के लिए पन्द्रह रुपये प्रतिमास खर्च कर सके। इस योजना के अन्तर्गत यह भी सुझाया गया था कि अमृतसर के पास नदी के तट पर ऐसे रमणीय स्थान है जहाँ परीक्षण के रूप में गुरुकुल शिक्षा प्रारम्भ की जा सकती है। इस योजना के सफलीभूत होने की आशा उन्हें थी। क्योंकि वे अपने दो पुत्रों को गुरुकुल में विद्याध्ययन के लिए भेजने को तत्पर थे। वे चाहते थे कि अठारह आने बच्चे गुरुकुल में प्रविष्ट कर लिए जाएं। इसके अनुसार बीस छात्रों से 300/- रुपयें मासिक की आय होगी, उसमें से 120 रुपयें मासिक शिक्षकों पर व्यय होगा और छः रुपयें प्रति बालक के हिसाब से 120 रुपयें मासिक भोजन पर व्यय होगा। इस प्रकार जो 60 रुपयें मासिक शेष बचेंगे उनसे 10 अन्य बालकों को निःशुल्क शिक्षा दी जा सकेगी। लाला मुंशीराम के सम्मुख प्राचीन भारत के गुरुकुल एवं आचार्यकुल आदर्श रूप में उपस्थित थे। जिनमें राजकुमार और एक निर्धन का बालक साथ-साथ शिक्षा प्राप्त करते थे। उन गुरुकुलों में न केवल शिक्षा ही निःशुल्क होती थी अपितु भोजन तथा निवास आदि के लिए भी कोई शुल्क नहीं लिया जाता था। जिस गुरुकुल की स्थापना का संकल्प एवं स्वप्न लाला मुंशीराम ने जनता के समक्ष प्रस्तुत किया था, उसमें पूर्णतया एक तिहाई निःशुल्क शिक्षा प्राप्त करते थे। आर्य पत्र-पत्रिकाओं में गुरुकुल की इस योजना के सम्बन्ध में पर्याप्त चर्चा हुई। "आर्य पत्रिका" ने इस योजना का स्वागत करते हुए कई सुझाव भी प्रस्तुत किए। उन सुझावों में प्रमुख सुझाव था कि इस ढंग की शिक्षण संस्था का संचालन आर्यसमाज के एक सार्वभौम संगठन द्वारा किया जाना चाहिए। उस समय आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब तथा प्रादेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब का निर्माण हो चुका था। सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा की स्थापना उस समय तक नहीं हुई थी। "आर्य पत्रिका" के सुझाव के अर्न्तगत यह दर्शाया गया था कि सार्वभौम सार्वदेशिक आर्यप्रतिनिधि का गठन करके उसके अधीन गुरुकुल की स्थापना करना उचित होगा। लाला मुंशीराम को कॉलेज पार्टी से अपनी योजना के समर्थन की आशा नहीं थी। परन्तु आर्य प्रतिनिधि सभा, पंजाब के सदस्यों द्वारा भी उनको पूर्ण समर्थन प्राप्त नहीं हुआ।

सभा के अनेक सदस्यों ने इस योजना पर अनेक प्रकार की शंकाए उठाई। कुछ का कहना था कि इस युग में ऐसे माता पिता नहीं मिलेंगे जो अपने पुत्र और पुत्रियों को दूर जंगल में पढ़ने के लिए भेजने को तत्पर हो। कुछ अन्यों का विचार था कि संस्कृत की पढ़ाई का विशेष लाभ नहीं है। क्योंकि कोई भी माता-पिता अपने बच्चों को केवल पुरोहित बनाना नहीं चाहेगें। इसलिए यह योजना व्यावहारिक नहीं मानी जा सकती है। इसका क्रियात्मक रूप तभी संभव हो सकता है जब संस्कृत के साथ-साथ आधुनिक ज्ञान विज्ञान के अध्ययन की भी समुचित व्यवस्था हो। इस पक्ष का यह भी विचार था अपने पुत्र के चरित्र निर्माण पर जितना माता-पिता ध्यान दे सकते है उतना दूसरा नहीं दे सकता है। इस योजना पर यह भी आंशका जताई गयी कि आर्य प्रतिनिधि सभा के पास इतने साधन नहीं है कि वेद प्रचार के अतिरिक्त गुरुकुल का संचालन भी किया जा सके। गुरुकुल के संचालन से वेद प्रचार में बाधा उत्पन्न होगी।

आर्य प्रतिनिधि सभा एवं महात्मा पार्टी में ऐसे लोगों की भी कमी नहीं थी जिन्होंने मुंशीराम की योजना को उत्साहित न किया हो। बहुत से आर्य सभासदों ने इसका उत्साहपूर्वक स्वागत किया और लोगों से अपील की कि हमें इस योजना में सम्मिलित होकर उसमें तन-मन-धन से सहयोग करना चाहिए। उन सभासदों में श्री जगन्नाथ थे जो नूर महल के रहने वाले थे। उन्होंने मुंशीराम जी को बहुत उत्साहित किया। उन्होंने प्रत्येक आर्य समाज से अपील की कि गुरुकुल के भवन के लिए प्रत्येक आर्य समाजी एक-एक रुपये का चन्दा प्रदान करें। सर्वप्रथम उन्होंने गुरुकुल के निमित्त 25 रुपयें भेज दिये। लाला मुंशीराम को जब यह 25 रुपयें का चन्दा प्राप्त हुआ तो वे बहुत उत्साहित हुए। उनको अपना संकल्प तथा स्वप्न पूर्ण होता सा प्रतीत होने लगा। इसलिए उन्होंने गुरुकुल की योजना को क्रियान्वित करने के लिए अपना भागीरथी प्रयत्न प्रारम्भ कर दिया। श्री गोविन्दपुर आर्य समाज के उपप्रधान उस समय विशनदास जी थे उन्होंने कहा कि यदि गुरुकुल गुरुदासपुर जिले में खोला जाए तो वे इसके लिए भूमि तथा एक हजार रुपया देने को तैयार है। इस प्रकार अनेक प्रस्ताव अनेक स्थानों से आर्य सभासदों के द्वारा आने लगे। लाला मोहनलाल ने गुरुकुल के लिए अपने गांव में कई बीधे भूमि और 50 रुपयें वार्षिक प्रदान करने की घोषणा की। एक अन्य महत्वपूर्ण प्रस्ताव पंजाब के बाहर "बरार" से आया। अकोला जिले के पातुर नामक नगर के निवासी श्री शिवरत्न सिंह वर्मा ने अपने चचेरे भाई श्री गोविंद सिंह वर्मा की ओर से यह घोषणा की कि "वह गुरुकुल के लिए 10 हजार रुपयें प्रदान करने को तैयार हैं।" इन तीन आर्य सभासदों ने यह भी सूचित किया कि वे अपने एक-एक पुत्र को प्रविष्ट कराने के लिए भी तैयार है। जब इस प्रकार के प्रस्ताव अनेक व्यक्तियों की ओर से, आर्य समाजों की ओर से आने लगे तो इनसे लाला मुंशीराम का उत्साह ही नहीं बढ़ा बल्कि उनके अन्दर भगवान् के प्रति एक दृढ़ आस्था उत्पन्न हुई कि जो स्वाध्याय करते हुए एक वेद मंत्र से मुझे सद्प्रेरणा मिली थी संभवत: वह प्रेरणा ईश्वर द्वारा ही प्रदान की गयी थी। मुझसे भगवान् सचमुच में यह कार्य कराना चाहता है भगवान् के प्रति उनकी इस समर्पण भावना ने उनके अन्दर एक अद्भुत शक्ति का संचार किया। 3 आश्विन् संवत् 1954 (सन् 1897 ई०) के सद्धर्म प्रचारक के अंक में "आश्रम व्यवस्था और उसकी बुनियाद" शीर्षक से उन्होंने एक लेख लिखा, जिसके कुछ अंश इस प्रकार है-

"यह मुबारक तहरीक पं० गुरूदत्त जी के जीवन में ही शुरू हो गयी थी। उनकी मृत्यु के बाद कुछ समय की खामोशी के बाद फिर उस मज़मून पर तहरीरी काम शुरू हो गया था। सन् 1855 के दौर में हमने अक्सर सब जगहों में धार्मिक आर्य भाईयों से बातचीत की, अक्सर उन्होंने अपनी सन्तान को गुरुकुल में भेजना स्वीकार किया। बहुत से सज्जन आर्थिक सहायता करने को भी तैयार है। लेकिन दूसरे कार्यो का बोझ इतना रहा कि उस समय कोई तरीका बरामद नहीं हुआ। पर सुलगी हुई धर्म की यह अग्नि बुझी नहीं। चुनाचे लाला जगन्नाथ बजाज नूरमहल ने अपने कारखाने में कुछ हिस्सा गुरुकुल का कायम किया और 25

रुपयें पेशगी उसमें से भेज भी दिया। इसके बाद पं० लेखराम आर्य मुसाफिर के धर्म पर बलिदान होते ही अन्य कामों के बोझ ने आ दबाया। फिर भी हम इस सवाल पर बराबर विचार करते रहे। इसमें शक नहीं कि हम भी कुछ सुस्त हो चले थे। लेकिन निराशा को पाप समझते हुए हमने आशा नहीं छोड़ी थी और कुछ समय तक इस सम्बन्ध में अधिक विचार करने का निश्चय कर लिया था। इसी बीच में श्री गोविन्दपुर के आर्य भाइयों ने अजब धार्मिक जोश दिखाया और उसके बाद ही श्री शिवरत्न वर्मा ने कुमार गोविन्द सिंह जी मनसबदार का साहस पूर्ण निश्चय जाहिर किया। ये दोनों निश्चय यदि पूरे हो जाए तो गुरुकुल का खुलना कुछ भी मुश्किल नहीं है। अलबत्ता श्री गोविन्दरपुर के भाइयों की शर्त ठीक नहीं है। मगर हमको यकीन है कि लाला विशन दास और लाला मोहनलाल कभी भी अपनी इस शर्त पर हठ नहीं करेंगे और इस फैसले को आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब पर सौंप देंगे। उन्होंने सम्भवतः यह इसलिए लिखा कि वेदप्रचार के लिए जो अपील सभा के प्रधान और मंत्री की ओर से प्रकाशित हुई थी उसमें गुरुकुल खोलने की ओर इशारा मौजूद है। इस समय जबकि आर्य प्रतिनिधि सभा की अन्तरंग सभा ने आर्य विद्यार्थी आश्रम को गैर जरूरी ठहरा दिया है। तब पूरी आशा बंध जाती है कि सभी गुरुकुल को अपनी अधीनता में खोलने को तैयार हो जायेंगे। हमने इरादा कर लिया है कि श्री गोविन्दपुर आर्य समाज के जलसे में जोकि 3-4 अक्टूबर सन् 1897 को होगा, शामिल होंगे। उस समय अपने भाइयों को प्रेरित करेंगे कि अपना दान नकद देवें, जिससे उन सज्जनों के दिलों को ढ़ाढस मिले, जोकि गुरुकुल के लिए मुद्दत से व्याकुल हो रहे है। "उन्होंने लेख का उपसंहार करते हुए यह भी लिखा कि" जिन सज्जनों के पुत्र बारह वर्ष से कम आयु के है वे अपने पुत्रों को धर्म के लिए अर्पण करने की प्रतिज्ञा करें। ताकि उनके किए हुए हौसले से उत्साहित होकरं श्री गोविन्दपुर से आर्य प्रतिनिधि सभा की सेवा में निश्चित निवेदन पत्र भेजा जा सकें। पढ़ाई के काम के लिए हमने दो धार्मिक पुरुषों को तैयार किया है। पाठ विधि महर्षि दयानन्द स्वयं तैयार कर गये है। हमें सिर्फ उन विषयों का सिलसिला बाँधना होगा। और अन्य भाषाओं का, विशेषतः व्यावहारिक भाषाओं का उनमें समावेश करना होगा। जो आर्य समाज के विद्वान् धार्मिक सभासदों से प्रतिनिधि सभा तैयार कर सकेगी।

सद्धर्म प्रचारक के इस उद्धरण से स्पष्ट है कि पं० गुरूदत्त आदि जो आर्य सज्जन डी.ए.वी. कॉलेज से सन्तुष्ट नहीं थे, उनके मन में गुरुकुल की स्थापना का विचार कई वर्ष पूर्व उत्पन्न हो गया था। वे एक ऐसी संस्था चाहते थे जिसमें महर्षि दयानन्द द्वारा लिखित शिक्षा पद्धति के मूल तत्वों के अनुसार ही वेद-शास्त्र एवं संस्कृत भाषा के अध्ययन- अध्यापन की व्यवस्था सर्वोच्च रूप में हो। यह विचार बीज रूप में तो विद्यमान् रहा, परन्तु अंकुरित नहीं हो पाया। सद्धर्म प्रचारक के द्वारा लाला मुंशीराम ने जो लेखमाला प्रारम्भ की उससे यह बीज रूप अंकुरित होने की ओर वृद्धि को प्राप्त होने लगा। श्री मुंशीराम जी की अपील पर 3 अक्टूबर 1897 की रात को 9 बजे गोविन्दपुर आर्यसमाज के वार्षिक उत्सव के अवसर पर आर्य सज्जनों की एक सभा हुई, जिसमें बाहर से आये अतिथिगण भी सम्मिलित हुए। पर्याप्त विचार विमर्श के पश्चात् उस सभा ने सर्वसम्मति से यह प्रस्ताव पास किया कि- "आर्य पुरुषों की यह कान्फ्रेन्स श्रीमती आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब की सेवा में यह निवेदन करना अत्यन्त आवश्यक समझती है कि गुरुकुल शीघ्र ही खोला जाए।" श्री गोविन्दपुर में स्वीकृत यह प्रस्ताव आर्य प्रतिनिधि सभा के पास भेज दिया गया। समाचार पत्रों में गुरुकुल के लिए आन्दोलन शुरू कर दिया गया। उस समय सभा के मंत्री लाला जयचन्द्र थे। उन्होंने कहा कि गुरुकुल के प्रति जनता में उत्साह पैदा करने के लिए एक कमेटी निर्मित की जाए और एक प्रतिनिधि मंडल बनाकर बीस या पच्चीस हजार रुपया एकत्रित किया जाए। 26 नवम्बर 1898

के दिन आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब द्वारा यह प्रस्ताव स्वीकृत कर लिया गया कि गुरुकुल पद्धति से युक्त एक विद्यालय की स्थापना की जाए, उसकी योजना लाला मुंशीराम तैयार करें। सभा ने इसी अधिवेशन में यह भी निश्चय कर लिया कि आठ हजार रुपये एकत्र हो जाने पर गुरुकुल की स्थापना का कार्य आरम्भ कर दिया जाय।

आर्य प्रतिनिधि सभा के अनुसार लाला मुंशीराम ने गुरुकुल की योजना शीघ्र ही तैयार कर दी। तथा सभा द्वारा उसका प्रचार भी प्रारम्भ कर दिया गया। किन्तु मुंशीराम कार्य की प्रगति से सन्तुष्ट नहीं थे। सद्‌धर्मप्रचारक में अगस्त 1898 में उन्होंने घोषणा की कि जब तक गुरुकुल के लिए वे तीस हजार रुपये एकत्रित नहीं कर लेंगे, तब तक घर में पैर नहीं रखेंगे। उस समय यह 30 हजार रुपयें की राशि बहुत बड़ी बात थी आज के अनुसार वह राशि कम से कम 50 लाख रुपयें के समान है। उस समय इतनी बड़ी राशि धन के रूप में एकत्रित करना बहुत अधिक कठिन कार्य था, क्योंकि आर्य समाजियों की संख्या भी अधिक नहीं थी। गुरुकुल जैसी शिक्षण संस्था के विषय में लोगों को कोई जानकारी भी नहीं थी। लाला मुंशीराम अपने संकल्प के धनी व्यक्ति थे। उनमें अदम्य उत्साह था। 26 अगस्त 1899 के दिन अपनी प्रतिज्ञा को पूर्ण करने के लिए आपने अपने घर से प्रस्थान किया। जब वे 8 अप्रैल 1900 को घर वापिस आये तो वे 40 हजार से अधिक रुपया नकद एकत्रित कर चुके थे। नौ महीने के समय में उन्होंने अपनी प्रतिज्ञा पूरी कर ली थी। यह धन एकत्रित करने के लिए उनकी यात्रा पंजाब में ही अधिकतर रही, परन्तु अपने उद्देश्य के पूर्ण करने के लिए हैदराबाद, हरिद्वार और लखनऊ आदि भी गये। इन यात्राओं में उन्होंने केवल धन ही एकत्रित नहीं किया। अपितु अपने ओजस्वी व्याख्यानों से गुरुकुल के प्रति लोगों में उत्साह भी उत्पन्न किया। गुरुकुल शिक्षण संस्था का विचार अब पंजाब तक ही सीमित नहीं रहा, अपितु अन्य प्रान्तों के आर्य सभासद और आर्य प्रतिनिधि सभाओं का ध्यान भी गुरुकुल योजना की ओर आकर्षित होने लगा। जब लाला मुंशीराम वापिस लाहौर आए तो उनका आर्य समाज की ओर से धूमधाम से स्वागत किया गया साथ ही उनका आर्यसमाज मन्दिर में श्रद्धापूर्वक अभिनन्दन किया गया।

जैसा कि हम लिख चुके है कि आर्य प्रतिनिधि सभा गुरुकुल खोलने के लिए प्रस्ताव स्वीकृत कर चुकी थी इसलिए गुरुकुल की स्थापना में अब कोई बाधा नहीं रह गयी थी। बस अब गुरुकुल की स्थापना करके उसे प्रारम्भ करना ही शेष था।

गुरुकुल की स्थापना और उसका प्रथम वर्ष

आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब द्वारा 26 नवम्बर 1898 को यह प्रस्ताव स्वीकार कर लियां गया था कि गुरुकुल पद्धति के एक शिक्षणालय की स्थापना की जाय। उस गुरुकुल शिक्षा केन्द्र को प्रारम्भ करने लिए लालामुंशीराम ने 8 अप्रैल 1900 को 40 हजार रुपये एकत्रित करके आर्य प्रतिनिधि सभा में जमा करा दिये थे। जैसा कि बतलाया जा चुका है कि अनेक आर्य सज्जन गुरुकुल के लिए भूमि देने के लिए तैयार थे, परन्तु जहाँ-जहाँ ये भूमियाँ थी वे स्थान गुरुकुल के लिए लाला मुंशीराम उपयुक्त नहीं समझ रहे थे। जैसे कि इसी अध्याय में हम यह बतला चुके है कि गुरुकुल की स्थापना की जाए। लाला मुंशीराम के मन में यह विचार यजुर्वेद के उस मंत्र के द्वारा उत्पन्न हुआ था। वह मंत्र है-

उपह्वरेगिरीणां संगमे च नदीनाम्। धिया विप्रोऽजायत ।।

जहाँ नदियों का संगम हो, पर्वतों की उपत्यकाएं हो, वहाँ मानव निर्माण के लिए अच्छी प्रतिभा विकसित होती है। वहीं अध्ययन करके मेधावी विद्वानों का निर्माण होता है। जैसा कि भारतीय इतिहास में

यह प्रसिद्ध है कि प्राचीन काल में ऋषि, मुनियों के आश्रम नदियों के तट पर हुआ करते थे। जैसे कि महर्षि भारद्वाज का आश्रम गंगा-यमुना के संगम पर स्थित था, महर्षि कण्व का आश्रम शिवालिक की तराई में स्थित मालिनी नदी के तट पर था। लाला मुंशीराम इसी खोज में थे कि ऐसे स्थान को खोजा जाय, जो गुरुकुल के लिए उत्तम तथा रमणीय हो। जैसा कि हम लिख चुके है कि वे धन एकत्रित करते समय हरिद्वार भी गये थे। हरिद्वार में उन्होंने गुरुकुल स्थापना के उद्देश्य से कई स्थान अवलोकित किए जो गुरुकुल के लिए उपयुक्त हो सकते थे।

गुरुकुल की स्थापना के लिए आर्य समाज में अत्यधिक उत्साह उत्पन्न हो चुका था। इसलिए गुरुकुल की स्थापना शीघ्रातिशीघ्र की जाए, क्योंकि गुरुकुल के लिए उपयुक्त भूमि को खोजने में कुछ और समय लग सकता था।

अत: 19 मई 1900 ई० को गुजरांवाला की वैदिक पाठशाला में गुरुकुल की भी स्थापना कर दी गयी। भक्त आनन्द स्वरूप की वाटिका में पांच कमरों का निर्माण कर उनमें ब्रह्मचारियों के निवास के लिए आश्रम का निर्माण किया गया। उस संकल्पधारी महापुरूष लाला मुंशीराम ने अपने दोनों पुत्र हरिश्चन्द्र और इन्द्रचन्द्र को गुरुकुल में प्रविष्ट कराया। ये गुरुकुल के सर्वप्रथम ब्रह्मचारी थे। इसके पश्चात् अन्य आर्य परिवारों के बीस बालक गुरुकुल में प्रविष्ट हुए। इस तरह गुरुकुल में शिक्षा प्राप्त करने वाले ब्रह्मचारियों की संख्या 22 हो गयी। किसी नई संस्था को प्रारम्भ करने के लिए संख्या पर्याप्त थी। गुरुकुल के इन ब्रह्मचारियों को माता-पिता से पृथक् आचार्य के निरीक्षण में रहना था और अपने गुरुओं को ही अपना माता-पिता समझना था। वैदिक वाङ्मय में प्रतिपादित आचार्य कुलों के समान इन्हें सादा तपोमय जीवन व्यतीत करना था। ये ब्रह्मचारी अपने घर से कोई सम्बन्ध नहीं रख सकते थे। जो आर्य सभासद माता-पिता अपने पुत्र को इस ढंग के शिक्षणालय में भेजने को तैयार हो गये वे नि:सन्देह ही उच्च विचारों के व्यक्ति थे। गुरुकुल के आचार्य पद पर पं० गंगादत्त को नियत किया गया। वे वैदिक पाठशाला में संस्कृत के अध्यापक थे, व्याकरण तथा दर्शन शास्त्र के प्रकाण्ड पण्डित थे। पं० विष्णुमित्र, महाशय भक्त राम और मास्टर सुन्दर सिंह की नियुक्ति अध्यापक के रूप में की गयी। इस प्रकार गुजरांवाला में गुरुकुल का कार्य प्रारम्भ हो गया।

जैसे कि हम बतला चुके है कि लाला मुंशीराम की दृष्टि में यह स्थान गुरुकुल के लिए उपयुक्त नहीं था। इसलिए वे रात-दिन इस दिशा में प्रयास करते रहे कि गुरुकुल के लिए उपयुक्त स्थान की खोज शीघ्रातिशीघ्र की जाए, शीघ्र ही वे अपने उद्देश्य में सफल हो गये। वे हरिद्वार आयें, उन्होंने हरिद्वार के सामने गंगा के पूर्वी तट पर कांगड़ी नामक ग्राम का निरीक्षण किया। इस गाँव के जमींदार नजीबाबाद (जिला बिजनौर) के निवासी **मुंशी अमन सिंह** थे। ये अत्यन्त धर्मपरायण, सत्यनिष्ठ और त्यागवृत्ति के धनी मानी व्यक्ति थे। कांगड़ी ग्राम का कुल रकबा 1400 बीघे था। जिसका अच्छा बड़ा भाग घने जंगल से आच्छादित था। उसके उत्तर में शिवालिक पर्वत माला थी और पश्चिम में गंगा की नीलधारा। गंगा की एक धारा उसके दक्षिण में बहती थी। शिवालिक की उपत्यका में, गंगा की एक धारा उसके दक्षिण में बहती थी। शिवालिक की उपत्यका में, गंगा के तट पर स्थित यह स्थान गुरुकुल के लिए सर्वथा उपयुक्त था। यह ज्ञातव्य है कि हरिद्वार हिन्दुओं का प्रसिद्ध तीर्थ स्थान है। जहाँ लाखों धर्मप्रेमी श्रद्धालु व्यक्ति प्रतिवर्ष गंगा-स्नान के लिए आते है। इसलिए ऐसे धार्मिक नगर के समीपवर्ती क्षेत्र में गुरुकुल खोलने का यह लाभ होगा कि हरिद्वार में आने वाले तीर्थ यात्री संस्कृत भाषा एवं वेदशास्त्रों की इस शिक्षण संस्था से आकृष्ट होकर आयेगे तथा वेद शास्त्रों की आध्यात्मिक शिक्षा से प्रभावित होकर संस्था को सहायता प्रदान करेंगे तथा अपने सुपुत्रों को

भी गुरुकुल में प्रविष्ट करायेंगे। इसके साथ ही गंगा के पूर्वी तट पर सघन जंगल में स्थित होने के कारण गुरुकुल हरिद्वार के दूषित वातावरण से भी बचा रह सकता था। हरिद्वार में गुरुकुल की स्थापना का एक कारण संभवत: लाला मुंशीराम के मन में यह भी था कि महर्षि दयानन्द सरस्वती ने कुम्भ के अवसर पर पाखण्ड-खण्डनी पताका लहराई थी, इस गुरुकुल संस्था के ब्रह्मचारी सदैव यह प्रेरणा लेते रहेगे कि हमने वेद शास्त्र का ज्ञान अर्जित करके महर्षि दयानन्द की तरह पाखण्डों का खण्डन करते हुए सच्चे ज्ञान का प्रचार एवं प्रसार करना है। यह स्थान आरण्यक आश्रम की स्थापना के रूप में समीचीन है।

मुंशी अमन सिंह ने लाला मुंशीराम की प्रेरणा से 1400 बीघे कांगड़ी ग्राम की जमींदारी को गुरुकुल के लिए समर्पित करने का संकल्प कर लिया था। इस भूमि को दिलाने में कनखल वासी लाला भारामल के वंशज श्री वेणी प्रसाद जिज्ञासु व उनके बड़े भाई वकील किशन प्रसाद जी ने अमन सिंह जी को राजी किया था। स्वामी जी कनखल में प्राय: इनके निवास पर अवश्य आया करते थे। जब गुजरांवाला से वे 28 ब्रह्मचारियों व आचार्य गंगादत्त जी के साथ आए थे तब भी लाला वेणीप्रसाद जी जिज्ञासु के यहाँ ठहरे थे और जलपान आदि किया था। अपने शुभ संकल्प की सूचना श्री अमन सिंह जी ने आर्य समाज नजीबाबाद के माध्यम से आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के पास भेज दी थी। 22 अक्टूबर 1901 को सभा ने मुंशी अमन सिंह के दान को धन्यवाद सहित स्वीकार कर लिया और यह निश्चय किया कि इस भूमि में भवन निर्माण कर होली की छुट्टियों (21 से 24 मार्च 1902) में वहाँ गुरुकुल का उद्घाटन उत्सव किया जाए, क्योंकि गुरुकुल के लिए उपयुक्त भूमि प्राप्त हो चुकी है। इसलिए कांगड़ी गांव के दक्षिण में गंगा की धारा तथा गंगा की उपधारा के मध्यवर्ती जंगल में जो खण्ड गुरुकुल भूमि के रूप में चुना गया था, वह कटींली झाड़ियों और ऊँचे-ऊँचे वृक्षों से परिपूर्ण था। महात्मा मुंशीराम उस स्थान पर भवन बनाने की दृष्टि से आ पहुंचे। यह जंगल इतना घना था कि बहुत से हिंसक पशु भी वहाँ निवास करते थे, दिन में भी यहाँ आना जाना सुगम नहीं था। वहाँ कोई पगडंडी तक भी न थी, सड़क का तो प्रश्न ही न था, ऐसे दुर्गम जंगल के थोड़े से भाग को साफ करके भवन के नाम पर कुछ झोपड़ियां बनवा ली गयी। यह भी निश्चय किया गया कि मार्च 1902 से पहले ही गुजरांवाला से इस स्थान पर आया जाए। ताकि होली के दिनों में गुरुकुल का उद्घाटन उत्सव समारोह पूर्व मनाया जा सके। यह भी अनुमान किया गया कि इस अवसर पर कम से कम एक हजार व्यक्ति इस उत्सव के अवलोकनार्थ अवश्य आयेगे। इसलिए उनके आवास एवं भोजन आदि की व्यवथा वहाँ जंगल में ही की जानी थी। उत्सव के व्यय के लिए दो हजार रुपयों की अपील भी की गयी। यहाँ आने के लिए जनता में इनता अद्भुत उत्साह था कि खर्च की व्यवस्था करना कोई विकट समस्या न थी। परन्तु इस अवसर पर एक अन्य विघ्न उपस्थित हो गया। हरिद्वार में प्लेग फैल गया, जिसके कारण हरिद्वार के समीपवर्ती क्षेत्र में उत्सव का आयोजन करना कठिन सा प्रतीत होने लगा। इसलिए इस अवस्था में आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब ने अपनी अन्तरंग सभा में 19 जनवरी 1902 के अधिवेशन में निश्चय किया कि गुरुकुल के उद्घाटन का उत्सव सार्वजनिक रूप से न कर के निजी रूप में किया जाय। साथ ही इसी अधिवेशन में यह भी निश्चय कर लिया गया कि गुरुकुल को यथा शीघ्र गुजरांवाला से कांगड़ी में लाया जाय।

कांगड़ी ग्राम में गुरुकुल

गुजरांवाला से रेल के रिजर्व डिब्बे में सब ब्रह्मचारी महात्मा मुंशीराम के साथ 2 मार्च 1902 (फल्गुन वदी 10, संवत् 1958) को मध्याह्न के बाद हरिद्वार के स्टेशन पर पहुंचे। भण्डारी शालिग्राम, लाला

मुंशीराम के परम सहायक एवं अभिन्न साथी थे। वह जालन्धर से इस मंडली के साथ हो गये थे। उस समय तक हरिद्वार में प्लेग का प्रकोप कम हो चुका था, गुरुकुल की यह मण्डली हरिद्वार से अपने नये स्थान पर किस प्रकार पहुंची, इसका वर्णन पं० इन्द्रविद्यावाचस्पति ने अपनी पुस्तक "मेरे पिता" में बड़ा ही सजीव एवं रोचक किया है। वह इस प्रकार है कि - "सायंकाल के चार बजे के लगभग हम कोई एक दर्जन बच्चे पंजाब से आने वाली गाड़ी से हरिद्वार के स्टेशन पर उतरे। हम गुजरांवाला से पिता जी के साथ आये थे। स्टेशन पर आचार्य पं० गंगादत्त कई पंण्डित सज्जनों के साथ आये हुए थे। स्टेशन से निकल कर एक जुलूस बनाया गया, सबसे आगे पिता जी और पं० गंगादत्त थे। उसके पीछे महर्षि दयानन्द का बड़ा चित्र लिए एक सज्जन थे, जिनका नाम तोताराम था। उनके पीछे दो की पंक्ति में हम लोग थे। स्टेशन से निकलते ही हम लोगों ने प्रार्थना के आठ मंत्रों का पाठ उच्च स्वर से आरम्भ कर दिया और करते रहें, जब तक जुलूस कनखल से पार न हो गया। हम लोग स्टेशन से चलकर मायापुर के पुल के कनखल के बाजार में पहुंचें, इस तरह सारे बाजार का चक्कर काटते हुए दक्ष मन्दिर पर जा पहुंचे। इस सारे रास्ते में सब लोग वेद मंत्रों का निरन्तर उच्च स्वर से पाठ करते रहे। हरिद्वार और कनखल तब मुख्य रूप से यात्रिओं और पंडों के शहर थे। ये सनातन धर्म के गढ़ समझे जाते थे। अब तो धीरे-धीरे उसमें कुछ नवीनता का संचार हो गया हैं। परन्तु उस समय तो वे सनातन धर्म के स्तम्भ थे। ओ३म् के झण्डे और वेदमंत्रों के खुले पाठ को वे बहुत ही आश्चर्य भरी दृष्टि से देख रहे थे। वे हम लोगों को किसी दूसरी दुनिया के प्राणी समझकर विनोद अनुभव कर रहे थे दक्ष का मन्दिर पार कर हमने वेदपाठियों का रूप छोड़कर यात्रियों का रूप धारण कर लिया। हम गुजरांवाला में ही सुन चुके थे कि हरिद्वार के समीप गंगा के उस पार कांगड़ी नामक ग्राम गुरुकुल के लिए दान में मिला है। हम लोग वहीं ले जाये जा रहे थे। बच्चों के लिए सब कुछ नया था। दक्ष के मन्दिर से आगे चलते ही रास्ता गंगा की रेती में उतर गया, जहाँ गोल पत्थरों और बालू के दो मील चौड़े नदी के स्तर पर दो या तीन पुल बने हुए थे। सूर्य अस्ताचल पर पहुंच चुका था और अंधकार के साथ सर्दी आकाश से उतर रही थी। हम बालक नयी दुनियां देखने की उत्सुकता से प्रेरित होकर नंगे पाव पत्थर और बालू के मार्ग पर तेज गति से चले जा रहे थे।"

उस जंगल को साफ करके जहाँ गुरुकुल के लिए झोपडियां बनायी गयी थी वहाँ तक पहुंचने के लिए सड़क या मार्ग नहीं था। पंगडंडी का रास्ता भूल जाने के कारण वहाँ पहुंचनें में बहुत कठिनाई हुई। गुरुकुल भूमि पहुंचने पर वहाँ का जो दृश्य दिखाई दिया, उसका वर्णन करते हुए इन्द्र जी लिखते हैं कि "घने जंगल के बीचो-बीच कोई दो बीघे का मैदान साफ किया गया था। उसमें एक ओर फूस के छप्परों की एक लम्बी पंक्ति थी, जो छात्रों के रहने का आश्रम (होस्टल) स्थान था। उसके साथ समकोण बनाती हुई दूसरी छप्परों की पंक्ति में भोजन भण्डार था। उनके बीच के कोने में एक स्विस कॉटेज लगा हुआ था जो प्रधानजी का दफ्तर स्थान और रहने का स्थान भी था। इन छप्परों में से कुछ छप्पर डालकर गौशाला बनायी गयी थी। यह फूस के छप्पर का डेरा उस खिली हुई चांदनी में अनुपम शोभा दिखा रहा था, हमें उस समय ऐसा अनुभव हुआ कि हम सचमुच स्वर्ग के किसी टुकड़े पर पहुंच गए है। यही गुरुकुल का प्रारम्भिक रूप था।"

दो मार्च 1902 को कांगड़ी ग्राम के नाम से गुरुकुल कांगड़ी की स्थापना हो गयी, जैसा कि पूर्व लिख चुके है कि हरिद्वार में प्लेग के प्रकोप के कारण गुरुकुल के उद्घाटन का उत्सव करना असम्भव था। होली के दिनों में निजी रूप से यह उत्सव मनाया गया। यद्यपि समाचार पत्रों में सार्वजनिक रूप से उत्सव

न किए जाने की सूचना दी गयी थी और किसी को उत्सव के लिए निमंत्रण नहीं भेजे गये थे, फिर भी आर्य जनता का गुरुकुल के खुलने के प्रति इतना प्रबल उत्साह था कि होली की छुट्टियों (21 से 24 मार्च 1902) में पांच सौ के लगभग स्त्री-पुरूष गुरुकुल में आ पहुंचे। इतना उत्साहजनक था गुरुकुल का यह प्रथम उत्सव वास्तव में यह प्रथम उत्सव आर्य समाज में उन महामेलों का सूत्रपात था जो आगे चलकर गुरुकुल कांगड़ी के वार्षिक उत्सव के रूप में प्रतिवर्ष होने लग गये थे और जिनमें हजारों की संख्या में पुरुष एवं स्त्री गंगा के तट पर एकत्र होकर आध्यात्मिक लाभ प्राप्त किया करते थे। आर्य समाज के मेले हरिद्वार के अन्य मेलों से बिल्कुल भिन्न होते थे। वेद प्रचार के महत्वपूर्ण व सशक्त साधन थे। इस अवसर पर जों अनेक सम्मेलन, व्याख्यान, उपदेश और भजन होते थे, उनसे लोग धर्म और ज्ञान की पिपासा को शान्त करते थे। गुरुकुल शिक्षा प्रणाली के अनुसार स्थापित शिक्षण संस्था का अपनी आँखों से यह अद्‌भुत दृश्य देखकर उनको यह प्रेरणा मिलती थी कि वे भी अपने पुत्र को गुरुकुल में भेजकर शिक्षित (पढ़ायेंगे) करायेगे। उत्सव के पहले तीन दिन प्रातः यज्ञ हुआ और दोपहर बाद भजन, व्याख्यान तथा उपदेश, चौथे दिन (फाल्गुन पूर्णमासी) 45 ब्रह्मचारियों का वेदारंभ संस्कार हुआ। जो दूर-दूर से आये स्त्री-पुरुषों के लिए एक नवीन एवं अत्यधिक आकर्षण की बात थी। यह वेदारम्भ संस्कार का अद्‌भुत दृश्य, मानो हजारों वर्षों से लुप्त उपनिषद् कालीन ऋषियों के गुरुकुल की परम्परा को पुनर्जीवित किया हो। गुजरांवाला से जो ब्रह्मचारी गुरुकुल कांगड़ी आये, उनकी संख्या पन्द्रह थी, किन्तु वह एक ही महीने से कम समय में ही बढ़कर पैंतालीस हो गयी थीं इससे यह सिद्ध होता है कि आर्य जनता के अन्दर अपने इस गुरुकुल की शिक्षा के प्रति कितना अधिक अनुराग रहा होगा। यह इससे भली-भांति स्पष्ट होता है। प्रथम वार्षिकोत्सव के अवसर पर गुरुकुल को जो धन प्राप्त हुआ उसकी मात्रा लगभग तीन हजार रुपयें थी, इसमें से 600/- रुपये वेदारम्भ के पश्चात् भिक्षा में प्राप्त हुए थे। 2000 रुपये पं० लेखराम की पत्नी ने दान दिये थे और चार सौ रूपये के लगभग अन्य स्त्री-पुरुषों ने दान दिये थे। भारत की प्राचीन परम्परा के अनुसार गुरुकुल के ब्रह्मचारियों को भिक्षाचर्या द्वारा निर्वाह करना चाहिए, आधुनिक परिस्थितयों में यह सम्भव व क्रियात्मक नहीं था कि गुरुकुल कांगड़ी के ब्रह्मचारी भी भिक्षा द्वारा निर्वाह करें। ब्रह्मचर्य आश्रम में शिक्षा पाने वाले बालक को यह बोध होता है कि जिस जनता से वह अपनी आवश्यकताओं की वस्तुओं को प्राप्त करता है उसके प्रति उसके अनेक प्रकार के कर्त्तव्य होते हैं। शिक्षा को पूर्ण करने के पश्चात् उसे इन कर्तव्यों के पालन के प्रति तत्पर रहना चाहिए। संभ्वतः इसलिए ही वेदारम्भ संस्कार के अवसर पर आज तक गुरुकुल कांगड़ी में प्रतीक रूप में यह परम्परा पूरी तरह पूर्ण करायी जाती है। ब्रह्मचारी झोली फैलाकर उपस्थित नर-नारियों के समाने जाते थे और जो कुछ भिक्षा में प्राप्त हो जाए उसे आचार्य की सेवा में प्रस्तुत कर देते थे।

उत्सव में जिन महानुभावों के व्याख्यान हुए, उनमें श्री रामभजदत्त चौधरी (जो उस समय पंजाब आर्य प्रतिनिधि सभा के प्रधान थे), स्वामी दर्शनानन्द और श्री वजीरचन्द विद्यार्थी के नाम उल्लेखनीय थे। ठाकुर प्रवीण सिंह उस समय आर्य समाज के प्रसिद्ध भजनोपदेशक थे। उनके मधुर भजन होते रहे।

मार्च 1902 में जब कांगड़ी ग्राम के समीप जंगल में गुरुकुल का उद्‌घाटन उत्सव हुआ तो वहाँ केवल फूंस के छप्पर थे। पर शीघ्र ही एक वर्ष के अन्दर कच्ची ईंटों की दीवारों और टीन की छतों वाले शेड बनने प्रारम्भ हो गये। चार साल के अल्प काल में पच्चीस हजार रुपयों की लागत से ब्रह्मचारियों के पढ़ने के लिए कमरों और निवास के लिए पृथक् आश्रम कर निर्माण का लिया गया। इनके अतिरिक्त भोजन-भण्डार, चिकित्सालय और अध्यापकों के रहने के लिए भी मकान बना लिए गये थे।

गुरुकुल की प्रथम नियमावली

लाला रलाराम उस समय आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के प्रधान थे। ये गुजरांवाला के रहने वाले थे। जैसा कि इससे पूर्व यह बतला चुके है कि डी.ए.वी. कॉलेज की शिक्षा पद्धति से आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के कई नेता असन्तुष्ट थे, इसलिए उन्होंने डी.ए.वी. कॉलेज में भी पृथक् वेद विभाग खोलने का प्रस्ताव किया था। परन्तु डी.ए.वी. कॉलेज की प्रबन्ध समिति ने उसे स्वीकार नहीं किया। गुरुकुल शिक्षा प्रणाली के विषय में लाला रलाराम का वही मत था जो लाला मुंशीराम का था। इसलिए गुरुकुल शिक्षा पद्धति के लिए एक नियमावली तैयार की गई थी जिसे आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब ने 26 दिसम्बर 1900 की अपनी साधारण सभा में स्वीकृत कर लिया था। उस नियमावली को सभा प्रधान लाला रलाराम के हस्ताक्षरों से प्रकाशित किया गया। इस नियमावली के साथ 20 पृष्ठों की एक भूमिका थी।

जिसमें नियमों के अभिप्रायों को स्पष्ट किया गया था :-

1. वेद आर्य समाज के प्राण है। विशाल संस्कृत साहित्य का आरम्भ बिन्दु या मूल स्रोत वेद ही हैं। वेद के अध्ययन के लिए गुरुकुल की आवयकता है। इसकी व्याख्या करते हुए नियमावली के साथ प्रकाशित भूमिका में यह स्पष्ट किया गया कि वेदों का ज्ञान सूर्य के समान है। जिसके सम्मुख अन्य सब विद्याएं व ज्ञान इस केन्द्र स्थानीय वेद के चारों ओर चक्कर काटते हैं। अतः गुरुकुल में सबसे अधिक महत्व वेदों के अध्ययन-अध्यापन को दिया जाएगा और विद्यार्थियों का सबसे अधिक समय उन्हीं (वेद) के लिए अर्पित रहेगा। वेदों का अध्ययन वेदाङ्गों तथा सत्य शास्त्रों के सहित होगा।

2. संस्कृत का अध्ययन तब तक पूर्ण नहीं हो सकता जब तक कि अंगों तथा उपांगों के साथ वेदों का अध्ययन न किया जाय। संस्कृत शिक्षा की कोई योजना जिसमें वैदिक साहित्य को समुचित स्थान प्राप्त न हो, बिना प्राण के शरीर के समान है। अतः ऐसे शिक्षणालय की आवश्यकता है जिसमें संस्कृत साहित्य के साथ-साथ वैदिक साहित्य का भी अध्ययन-अध्यापन हो। उस समय के शिक्षणालयों में संस्कृत की शिक्षा की भी व्यवस्था थी। यद्यपि उसका स्थान गौण था और विद्यार्थी उसे वैकल्पिक रूप से ही ले सकते थे। पर जो भी संस्कृत उस समय के शिक्षणालयों में पढ़ाई जाती थी वह लोकिक संस्कृत ही थी। वैदिक संस्कृत और वैदिक साहित्य के लिए उसमें कोई स्थान नहीं था। यही दशा प्राज्ञ-विशारद और शास्त्री की परीक्षाओं के लिए निर्धारित संस्कृत के पाठ्यक्रम की थी। इन परीक्षाओं को जो विद्यार्थी उत्तीर्ण करते थे वे लौकिक संस्कृत को अवश्य जान जाते थे पर वैदिक संस्कृत साहित्य से अपरिचित ही रहते थे। इसीलिए गुरुकुल की योजना में वैदिक संस्कृत तथा वेद-वेदाङ्गों के अध्ययन पर विशेष जोर दिया था।

3. संस्कृत का अध्ययन करना देश भक्ति का कार्य है। भारत की शिक्षा पद्धति सच्चे अर्थों में तभी राष्ट्रीय हो सकती है जब यहाँ के शिक्षणालयों में संस्कृत का अध्ययन हो। ब्रिटिश सरकार द्वारा भारत में जिस शिक्षा प्रणाली को प्रचलित किया गया है, वह भारतीयों में देशभक्ति का विनाश कर रही हैं और उन्हें मानसिक दास" बना रही है। आवश्यकता इस बात की है कि शिक्षा की ऐसी योजना तैयार की जाय जो सच्चे अर्थों में राष्ट्रीय हो। इसका यह अभिप्राय नहीं है कि विदेशी भाषा तथा नये ज्ञान-विज्ञान को ग्रहण न किया जाय। हमें अंग्रेजी, आधुनिक

विज्ञानों, पाश्चात्य दर्शन, अर्थशास्त्र और राजनीति शास्त्र आदि का अध्ययन अवश्य करना चाहिए। क्या यूरोपियन लोग अन्य देशीय भाषाओं और प्राच्य साहित्य आदि विषयों को नहीं पढ़ते ? पर क्या किसी यूरोपियन देश ने अपनी शिक्षा को विदेशी बनाया है ? इसी तरह हमें भी विदेशी ज्ञान विज्ञानों को पढ़ते हुए भी अपनी राष्ट्रीयता की रक्षा करनी चाहिए। गुरुकुल की स्थापना का यह भी एक महत्वपूर्ण कारण था। इसमें अंग्रेजी, पाश्चात्य दर्शन आदि के पठन-पाठन के लिए समुचित व्यवस्था की गयी थी। पर प्रमुखता वेद शास्त्रों तथा संस्कृत साहित्य की रखी गयी थी। राष्ट्रीय शिक्षा के इस स्वरूप का प्रतिपादन लाला रलाराम सदृश आर्य नेता अनेक गत वर्षों से कर रहे थे। अपने पत्र "वेदाध्ययन प्रेरक" में इसका प्रतिपादन उन्होंने इस ढंग से किया था कि संस्कृत ही भारत की प्राचीन साहित्यिक भाषा है। इसी द्वारा भारत का मानसिक विकास हुआ है। इसी में भारत का अध्यात्म शास्त्र, नीति, विज्ञान तथा कला का पारस्परिक ज्ञान सुरक्षित हैं। जब तक भारत के छात्रों के विचार का माध्यम उनके प्राचीन पूर्वजों की यह साहित्यिक वाणी नहीं हो जाती, भारत में मानसिक राष्ट्रीयता का उदय होना असम्भव है। आंग्लभाषा प्रधान शिक्षा भारत की मानसिक दासता का कारण बनी रहेगी, विदेशी भाषा द्वारा शिक्षित होकर भारतीयों में मौलिकता का विकास हो सकना सम्भव नहीं है।

4. ब्रह्मचर्य शिक्षा का मुख्य आधार है। ब्रह्मचर्य के बिना शिक्षा बिना नींव या आधार के समान होती है। इसलिए एक ऐसी शिक्षण संस्था को स्थापित करना बहुत आवश्यक है जो नगरों से दूर स्थित हो। जिसमें विद्यार्थी ब्रह्मचर्य के नियमों का पूर्णरूप से पालन कर सके।

5. सरकार द्वारा भारत में परीक्षाओं की जो पद्धति प्रचलित की गयी है, वह वास्तविक विद्वता के मार्ग में बाधक है। अतः कोई संस्था जो सरकारी यूनिवर्सीटियों की परीक्षाएं भी दिलाना चाहे और साथ ही यह भी चाहे की उसके विद्यार्थी वेद शास्त्रों के भी पण्डित हो, कभी सफल नहीं हो सकती। गुरुकुल इन सरकारी परीक्षाओं से अपने को पृथक् रखेगा।

6. शिक्षणालय में शिक्षकों और विद्यार्थियों में वही सम्बन्ध होना चाहिए जो माता-पिता का अपनी सन्तान के साथ होता है। वर्तमान समय में भारत में कोई भी ऐसी शिक्षण संस्था नहीं है, जिसमें शिक्षकों ने विद्यार्थियों के माता-पिता का स्थान ले लिया हो, गुरुकुल द्वारा इस कमी को पूरा किया जायेगा। गुरुकुल की स्थापना के इस महत्वपूर्ण हेतु को नियमावली की व्याख्या में इस प्रकार स्पष्ट किया गया था- "गुरुकुल का शिक्षक कोई अनुभवहीन युवक नहीं होगा, सामान्यतया वह परिपक्व आयु का ऐसा विद्वान् होगा जिसने जीवन के ऊंच-नीच देख लिए होंगे और जो शान्त होकर एक व्यवस्थित अवस्था तक पहुंच गया होगा। ऐसा विद्वान् ही अपने अनुभव से बालकों व किशोरवय के छात्रों को लाभ पहुंचाने में समर्थ हो सकेगा। विद्यार्थी सारा समय ऐसे अध्यापकों की देख-रेख में रहेगा।"

7. शिक्षा सबके लिए निःशुल्क होनी चाहिए। गुरुकुल में किसी से शिक्षा की फीस नहीं ली जाएगी।

8. पाश्चात्य विद्वानों ने प्राचीन भारतीय इतिहास के सम्बन्ध में जो खोज की है उसके आधार पर जो "इतिहास" ग्रन्थ लिखे है, वे इतिहास विषयक भारतीय मन्तव्यों के अनुरूप नहीं है। विशेषतया उन्होंने प्राचीन भारतीय इतिहास का जो तिथिक्रम निर्धारित किया है वह सर्वथा अशुद्ध है। आवश्यकता इस बात की है कि पुरातत्व सम्बन्धी सामग्री एवं प्राचीन ऐतिहासिक

अनुश्रुति तथा साहित्य का विवेचनापूर्वक अध्ययन कर भारत के प्राचीन इतिहास को सही रूप में प्रस्तुत किया जाय। गुरुकुल द्वारा यह महत्वपूर्ण कार्य भी सम्पन्न किया जायेगा।

गुरुकुल की स्थापना के उपरिलिखित आठ हेतुओं का उल्लेख गुरुकुल की प्रथम नियमावली में उस पाठ विधि की रूपरेखा में प्रस्तुत किया गया था। जिसे इस शिक्षण संस्था में प्रयुक्त किया जाना था। इस पाठविधि में वेद का स्थान सर्वप्रधान है, अंग्रेजी भाषा तथा विविध ज्ञान विज्ञान को भी पाठविधि में स्थान दिया गया है। किन्तु इसका प्रयोजन यह है कि उनसे वेदों का अध्ययन तथा उनके सही अभिप्राय को समझने में सहायता मिले। वस्तुतः अन्य सभी शिक्षा वेदों की शिक्षा की तैयारी के लिए ही है। शिक्षा का काल अठारह वर्ष रखा गया है। जिसमें बारह वर्ष विद्यालय विभाग और छः वर्ष महाविद्यालय विभाग में। अंग्रेजी की पढ़ाई नवीं कक्षा से शुरू की गयी है। इस नियमावली की भूमिका में अंग्रेजी की शिक्षा देने का यह प्रयोजन बतलाया गया कि "अंग्रेजी का अध्ययन किसी हद तक वैदिक धर्म के प्रचारकों के लिए भी आवश्यक है, क्योंकि उन्हें भी प्रायः अंग्रेजी शिक्षा प्राप्त जनता में विचार करना होता है।" विद्यालय विभाग में अंग्रेजी की पढ़ाई नवीं कक्षा से शुरू की गई, पर आर्य भाषा (हिन्दी) गणित, भूगोल आदि अन्य विषयों की शिक्षा का प्रारम्भ पहले ही हो जाता है और संस्कृत भाषा, व्याकरण आदि वेदाङ्ग तथा वैदिक साहित्य में अनेक अच्छे स्तर की शिक्षा विद्यालय विभाग में ही दे दी जानी है। विद्यालय-विभाग में बारह वर्ष अध्ययन कर विद्यार्थी इस योग्य हो जाते है कि वे वेदों को समुचित रूप से पढ़ सके। महाविद्यालय की शिक्षा छः वर्ष की है और उसके दो विभाग है। वेद विभाग के लिए जो पाठ विधि निर्धारित की गई थी उसके अनुसार विद्यार्थियों को चारों वेदों का (उनके ब्राह्मण ग्रन्थों सहित) अध्ययन कर लेना था। साथ ही उन्हें एक ऐच्छिक या पर्याय विषय भी लेना होता था, व्यापार, कृषि, आयुर्वेद में से कोई एक। इसका प्रयोजन यह था कि जहाँ गुरुकुल से उच्च शिक्षा प्राप्त कर विद्यार्थी चारों वेदों ब्राह्मण ग्रन्थों तथा वेदाङ्गों में पूर्णतया निष्णात हो जाय वहाँ साथ ही वह ऐसी शिक्षा भी प्राप्त कर ले जिससे गृहस्थ होकर अपना जीवन निर्वाह भी कर सके, पर सब विद्यार्थियों से यह आशा नहीं की जा सकती कि वे चारों वेदों का अध्ययन कर सकें। अतः महाविद्यालय में एक अन्य विभाग की भी व्यवस्था की गई थी, जिसमें विद्यार्थियों के लिए केवल एक वेद का ही अध्ययन पर्याप्त था, तीन अन्य वेदों के स्थान पर इस विभाग में अंग्रेजी भाषा तथा आधुनिक ज्ञान-विज्ञान के एक विषय (गणित, विज्ञान पाश्चात्य दर्शन आदि) को वैकल्पिक या पर्याय विषय के रूप में पढ़ना होता था। इन आधुनिक विषयों की शिक्षा का माध्यम हिन्दी भाषा को रखा गया था। इसका सम्भवतः कारण यह था कि अब से एक शती पूर्व यह कल्पना भी सुगम न थी कि इन विषयों की शिक्षा हिन्दी माध्यम से दी जा सकती है। विशेष रूप में महाविद्यालय के स्तर पर।

पंजाब आर्य प्रतिनिधि सभा के प्रधान लाला रलाराम के हस्ताक्षरों से गुरुकुल की जो नियमावली प्रकाशित की गई थी उसमें निरूपित पाठ्यक्रम में साङ्गोंपाङ्ग वेदों तथा शास्त्रों को प्रमुख स्थान प्राप्त था। आधुनिक ज्ञान-विज्ञान की पढ़ाई की भी उसमें व्यवस्था थी। अंग्रेजी भाषा तथा साहित्य की शिक्षा को भी उसमें स्थान दिया गया था। इस पाठ विधि की महत्वपूर्ण विशेषता यह थी कि इसके अनुसार ब्रह्मचर्य का पालन, व्यायाम, प्राणायाम, सन्ध्योपासना, अग्निहोत्र, सदाचार और तपोमय जीवन को शिक्षा का अनिवार्य अंग माना गया था।

गुरुकुल की स्थापना की योजना जिस कारण से बनाई गयी थी उसमें उपर्युक्त आदर्श एवं विचार ही थे। लाला मुंशीराम जब गुरुकुल के लिए धन एकत्र करने के प्रयोजन से भ्रमण कर रहे थे तो वे इन्हीं विचारों को आर्य जनता के सम्मुख प्रस्तुत करते थे। सत्धर्मप्रचारक और अन्य अनेक समाचारपत्रों में लाला

जी की यात्रा का विवरण प्रकाशित होता था और उनके व्याख्यानों का सारांश भी प्रकाशित किया जाता था। इन्हें पढ़कर के उन स्थानों के आर्य सज्जनों में भी गुरुकुल के लिए औत्सुक्य व उत्साह उत्पन्न होता था, जहाँ मुंशीराम जी नहीं जा सके थे। गुरुकुल के लिए धन एकत्र करने के सिलसिले में मुंशीराम जी जनवरी 1900 में लाहौर गये थे और वहाँ उन्होंने गुरुकुल के सम्बन्ध में कुछ व्याख्यान दिये थे।

इनमें उन्होंने गुरुकुल की निम्नलिखित विशेषताओं का प्रतिपादन किया था :-

(1) ब्रह्मचर्य का पुनरुद्धार, (2) ब्रह्मचारियों और उनके गुरुओं में पुत्र और पिता का सम्बन्ध, (3) परीक्षा पद्धति के दोषों से मुक्त रखना, (4) पाठविधि में संस्कृत भाषा वेद, वेदाङ्ग एवं सत्यशास्त्रों और आर्य भाषा हिन्दी को प्रमुख स्थान देना। (5) विद्यार्थियों को शारीरिक उन्नति के लिए विशेष प्रयत्न करना, (6) अंग्रेजी भाषा तथा आधुनिक ज्ञान-विज्ञान को पाठयक्रम में समुचित स्थान प्रदान करना, (7) शिक्षा के लिए कोई शुल्क न लेना, (8) प्राचीन भारतीय इतिहास के अन्वेषण तथा शोध की विशेष रूप से व्यवस्था करना। ये आठों विशेषताएं प्राय: वहीं है जिनका निरूपण लाला रलाराम के हस्ताक्षरों से प्रकाशित गुरुकुल की नियमावली में भी किया गया था।

गुरुकुल की प्रथम नियमावली में जो नियम निर्धारित किए गये हैं, उस युग में एक क्रान्तिकारी योजना का सूत्रपात था। वस्तुत: इस शिक्षा प्रणाली का विस्तृत विवरण तथा मूल तत्वों की विवेचना महर्षि दयानन्द ने अपने अमर ग्रन्थ सत्यार्थप्रकाश के तृतीय समुल्लास में किया है।

नये भवनों का निर्माण

गुरुकुल बहुत शीघ्र ही लोकप्रिय होता जा रहा था। अनेक आर्य परिवारों में यह आकांक्षा बढ़ती जा रही थी कि वे अपने पुत्रों को गुरुकुल में अध्ययन के लिए प्रवेश कराये। इसलिए गुरुकुल के अधिकारियों ने यह विचार करना प्रारम्भ कर दिया था कि टीन की छतोंवाली कच्ची इमारतों में बहुत समय तक अध्ययन अध्यापन की व्यवस्था जारी नहीं रखी जा सकती है। इसलिए गुरुकुल के संचालकों ने विचार किया कि लगभग 600 (छ: सौ) ब्रह्मचारियों के निवास तथा उनके अध्यापन के लिए कक्षों का निर्माण एवं उसके साथ ही कर्मचारियों के आवास की व्यवस्था हेतु उपयुक्त भवनों का निर्माण करना आवश्यक है। इसलिए पटियाला रियासत के चीफ इंजीनियर श्री गंगाराम से इमारतों का नक्शा बनवाया गया। इन भवनों के निर्माण के लिए साधारण जनता से धन की अपील की गई। सन् 1908 में गुरुकुल में महाविद्यालय के लिए नये पक्के भवन बनने प्रारम्भ हुए। यह ज्ञाजव्य है कि बहुत काल तक ब्रह्मचारियों के आवास के लिए पक्के नये भवन नहीं बन पाये थे। बल्कि कच्ची ईटों से बनी इन इमारतों पर टीनों या फूंस की छत थी।

ब्रह्मचारियों की दिनचर्या

गुरुकुल की स्थापना के प्रारम्भिक काल में ब्रह्मचारियों की दिनचर्या बड़ी कठोर और अनुशासित थी। उस समय की दिनचर्या ऋषियों के युग की याद दिलाती है। सूर्योदय से पूर्व ब्रह्म मुहूर्त काल में प्रात: 4 या साढ़े चार बजे (ऋतु के अनुसार) घन्टी बजायी जाती थी जिसे सुनकर ब्रह्मचारी या तो स्वयं उठ जाते थे या अधिष्ठाताओं द्वारा उन्हें उठा दिया जाता था। सोकर उठने के पश्चात् वे अपने बिस्तर को स्वयं लपेटते थे, तदुपरान्त बाहर जाकर मुंह हाथ धोते और प्रार्थना के लिए एकत्र हो जाते। प्रार्थना "विश्वानि देव" मंत्र से "अग्नेनय सुपथाराये..." आदि आठ मंत्रों से होती थी। उसके पश्चात् ब्रह्मचारी शौचादि से निवृत्त होने के लिए जंगल में चले जाते थे। उस समय शौचालय नहीं बने हुए थे। आश्रम के कुछ दूर पर ही बन-खण्ड शुरू हो जाता था। इस वन में सरकंडे के झुण्डों तथा कंटीली झाडियों की प्रधानता थी। इसमें आने जाने

का कोई मार्ग न था। ब्रह्मचारियों के आने जाने से पगडंडिया अवश्य बन गयी थी, वहाँ एकान्त में स्थान ढूंढ़ कर शौचादि से निवृत्त होकर वे गंगा के तट पर चले जाते थे। वहाँ पर वे व्यायाम करते थे। उस समय व्यायाम पर बहुत अधिक जोर दिया जाता था, दण्ड बैठक, कबड्डी आदि और कभी-कभी कुश्ती भी लड़ी जाती थी। वहीं पर गंगा में स्नान करके ब्रह्मचारी वापिस लौट आते थे। सूर्योदय के साथ-साथ ब्रह्मचारी शौच-व्यायाम-दन्तधावन और स्नान से निबट जाते थे। उसके पश्चात् यज्ञशाला में एकत्र होकर संध्या-हवन किया करते थे। यज्ञ के पश्चात् महात्मा मुंशीराम उपदेश भी देते थे। उस समय उन्हें या तो महात्मा मुंशीराम कहा जाता था, या प्रधान जी कहकर सम्बोधित किया जाता था। वास्तव में जिस महान् उद्देश्य को लेकर वन में एकान्त स्थान पर त्याग पूर्वक जीवन व्यतीत करने के कारण उनको महात्मा कहना उचित ही था। संन्यास लेने तक उनको महात्मा मुंशीराम ही कहा जाने लगा। संध्या-हवन और उपदेश के पश्चात् अल्पाहार (नाश्ता) मिलता था। गुरुकुल के प्रारम्भिक दिनों में कोई निर्धारित समय विभाग नहीं था। प्रातःकाल प्रायः संस्कृत व्याकरण की पढ़ाई होती थी। ब्रह्मचारी अष्टाध्यायी को कण्ठस्थ करने के साथ ही उसकी वृत्ति (व्याख्या) भी पढ़ा करते थे। मध्याह्न हो जाने के पश्चात् भोजन की घन्टी बजती थी। भोजनशाला में आसन बिछे होते थे। ब्रह्मचारी अपने-अपने जल से भरे लोटे रखकर भोजन के लिए बैठ जाते थे। भोजन प्रारम्भ करने से पहले प्रतिदिन "सहनावतु सह नौ भुनक्तु ..." मंत्र बोला करते थे। भोजन सात्विक तथा पौष्टिक होता था। उस समय डालडा (वनस्पति) घी तो होता ही नहीं था। भोजन में केवल शुद्ध घी का ही प्रयोग किया जाता था। मिर्च-मसालों के प्रयोग का तो प्रश्न ही नहीं था। प्याज, लहसुन सर्वथा निषिद्ध था। भोजन के पश्चात् थोड़ा सा विश्राम करके पुनः अध्ययन शुरू हो जाता था। मध्याह्नोत्तर संस्कृत साहित्य, इतिहास और वस्तुपाठ की पढ़ाई होती थी। उस समय शिक्षा में संस्कृत साहित्य और व्याकरण की ही प्रधानता थी। सायंकाल होने पर ब्रह्मचारी शौच से निवृत्त होने के लिए जंगल जाते तथा व्यायाम करते थे। ग्रीष्म ऋतु में सायंकाल भी स्नान किया जाता था। स्नानादि से निवृत्त होके पुनः यज्ञशाला में एकत्रित हो जाते थे। फिर संध्या-हवन करते थे। हवन के पश्चात् सायंकाल का भोजन होता था जिससे निबटकर ब्रह्मचारी भ्रमण करते थे। उसके पश्चात् स्वाध्याय करते थे। उस समय गुरुकुल में न तो बत्तियां थी और न ही मिट्टी तेल की लालटेन। प्रकाश के लिए दीपक का प्रयोग किया जाता था, जिनमें सरसों का तेल डाला जाता था। रात को जो पढ़ाई की जाती थी, उसमें प्रायः दिन के समय पढ़े हुए पाठ को दोहराया जाता था और अध्यापकों द्वारा संस्कृत के श्लोक याद कराये जाते थे। रात नौ बजे के लगभग दीपक बुझा दिये जाते थे। प्रार्थना मंत्रों के पाठ कर ब्रह्मचारी की यही दिनर्चया थी। जो कालान्तर में कुछ परिवर्तन के साथ अर्द्धशती तक लगभग अक्षुण्ण रूप में चलती रही।

उस समय ब्रह्मचारियों के लिए एक नियत वेश था। वे पीली धोती पहना करते थे। धोती भी एक ही ढंग से बाँधी जाती थी। धोती के एक सिरे को कमर में बाँधकर दूसरे सिरे को गले से बाँध दिया जाता था। कुर्त्ता सफेद होता था और धोती के नीचे लंगोट पहिनना अनिवार्य था। सर्दियों में ऊनी कुर्त्ता और कश्मीरी पट्टी की बण्डी पहनी जाती थी। पैरों में जूता या चप्पल नहीं पहन सकते थे। कपड़े के जूते भी नहीं पहने जाते थे। लकड़ी की खड़ाऊ ही पैरों में पहनने को दी जाती थी। प्रायः सिर को नंगा रखना होता था। अधिक शीत लहर होने पर कंटोप अवश्य धारण किये जा सकते थे। धूप तथा वर्षा से बचाव के लिए छत्री का प्रयोग नहीं किया जा सकता था। ब्रह्मचर्यकाल में छात्रों का जीवन तपोमय होना चाहिए, इसी आदर्श को सम्मुख रखकर ये व्यवस्थाएं की गई थी। अतः ब्रह्मचारियों को सोने के लिए लकड़ी के तख्त दिये जाते थे। वे निवार का पलंग या बान की रस्सी की चारपाई पर नहीं सो सकते थे।

ब्रह्मचारियों का प्रायः सारा समय विद्याध्ययन और धार्मिक चर्चाओं में ही व्यतीत होता था। उस समय उन्हें आश्रम से बाहर हरिद्वार, कनखल आदि कहीं भी आने-जाने की आज्ञा नहीं थी। अवकाश के दिनों में भी वे घर नहीं जा सकते थे। ब्रह्मचारियों का जीवन इतना व्यस्त और विविधताओं से भरा हुआ होता था कि उनको घर जाने की इच्छा भी नहीं होती थी। प्रायः उनको अपने माता-पिता तथा परिवार की याद भी नहीं आती थी। अवकाश के दिनों में वे शिवालिक की उपत्यका में चले जाते थे। वहाँ के जंगल में कई प्रकार के कन्दमूल, बेर-जामुन आदि के फलों को एकत्र करके खाते थे। घन्टों गंगा में तैरना उनके स्वास्थ्य के लिए हितकर था। उसके साथ ही बहते हुए स्लिपरों को एकत्रित करके उनसे बेड़े बनाते और उनमें बैठकर गंगा में दूर-दूर तक चले जाते थे।

महात्मा मुंशीराम जी का सर्वस्व त्याग

प्रारम्भ के वर्षों में गुरुकुल के ब्रह्मचारियों की संख्या अधिक नहीं थी। सन् 1906 तक वहाँ श्रेणियों की संख्या कुल सात थी। अध्यापक भी बहुत कम थे। ब्रह्मचारी और अध्यापक गुरुकुल में इस प्रकार एक साथ रहते थे, मानों सब एक परिवार के सदस्य हों। महात्मा मुंशीराम को सब कुलपिता मानते थे। पं० गंगादत्त आदि सभी अध्यापकों का गुरु के रूप में आदर करते थे। महात्मा मुंशीराम ने गुरुकुल के लिए अपना तन-मन-धन सब कुछ न्यौच्छावर कर दिया था, वे एक सफल वकील थे। वकालत के पेशे में उनकी अच्छी आमदनी थी परन्तु गुरुकुल की स्थापना की लगन में उन्होंने वकालत को तिलाञ्जलि दे दी थी। गुरुकुल के प्रारम्भ होते ही 1902 में उन्होंने अपना पुस्तकालय गुरुकुल को भेंट कर दिया था। दो वर्ष बाद सन् 1904 में उन्होंने अपना सद्धर्म प्रचारक प्रैस गुरुकुल को दान कर दिया था। प्रैस का मूल्य लगभग 8,000 था। उस युग में यह राशि बहुत अधिक मानी जाती थी। जालंधर में उनकी कोठी थी जिसके निर्माण में 30,000 रुपये व्यय हुए थे। उसे भी उन्होंने सन् 1911 में गुरुकुल को प्रदान कर दिया था और पंजाब आर्य प्रतिनिधि सभा ने उसे 20000 रुपयें में बेचकर वह धन गुरुकुल के स्थायी कोष में जमा कर दिया था। वास्तव में यह एक महात्मा का सच्चे अर्थों में सर्वमेध यज्ञ था। उनके पास जो भी भौतिक सम्पत्ति थी उसे गुरुकुल के लिए अर्पित कर दिया था। इस यज्ञ का महत्व इस कारण और भी अधिक बढ़ जाता है कि उस समय महात्मा मुंशीराम पर 3600 रुपयें कर्ज था। जालन्धर की अपनी कोठी को प्रदान करते हुए उन्होंने आर्यप्रतिनिधि सभा (पंजाब) के प्रधान को लिखा था कि "मुझे इस समय 3600 रुपयें ऋण मध्ये देना है। यह मैं अपने लेखादि की आय से चुका दूंगा। इस मकान से उस ऋण का कोई सम्बन्ध नहीं है।" गुरुकुल में अपना समय लगाते हुए उन्होंने कोई वेतन या पारिश्रमिक नहीं लिया। उन्होंने सर्वात्मना अपने को गुरुकुल के लिए ही समर्पित किया हुआ था। ऐसा प्रतीत होता है कि वह युग ही त्याग और बलिदान का था।

पं० गंगादत्त आदि जो अध्यापक उस समय गुरुकुल में कार्य करते थे, भण्डारी शालिग्राम सदृश जो अन्य कर्मचारी वहाँ कार्यरत थे वे सब केवल पूजा-वेतन के रूप में ही ग्रहण करके इस संस्था की सेवा कर रहे थे। मुंशी अमन सिंह ने गुरुकुल को अपनी जमींदारी का कांगड़ी ग्राम ही प्रदान नहीं किया अपितु कुछ वर्ष पश्चात् अपनी समस्त जमापूंजी भी गुरुकुल को अर्पित कर दी थी। इस पूंजी की मात्रा 11,000 रुपयें से अधिक थी। उस समय के ग्यारह हज़ार रुपयें आज इस समय 5,00,000 रुपयें से कम नहीं थे। उस समय त्याग और सर्वमेध यज्ञ की बलिदान की भावना से ओत-प्रोत जो व्यक्ति कार्यरत थे। इसी भावना के कारण उनकी प्रारम्भ के वर्षों में गुरुकुल की यह बड़ी शक्ति थी। इसी कारण न केवल आर्य समाजी पुरुष एवं महिलाएं ही, अपितु देश-विदेश के प्रबुद्ध एवं मननशील लोग भी गुरुकुल के प्रति आकृष्ट होने लगे थे और वे समय-समय पर आने लग गये थे।

गुरुकुल के प्रति जो साधारण जनता का अत्यधिक आकर्षण था उसी के कारण वहाँ दर्शकों और यात्रियों का तांता लगा रहता था यद्यपि गुरुकुल आने-जाने का मार्ग अत्यन्त दुर्गम था। हरिद्वार रेलवे स्टेशन से उसकी दूरी लगभग पांच मील थी। कनखल तक तो पक्की सड़क थी परन्तु कनखल से गुरुकुल तक का साढ़े तीन मील का मार्ग कच्चा था और वह मार्ग जंगल से होकर जाता था। वास्तव में जिसे मार्ग ही नहीं कहा जा सकता था। हरिद्वार के सामने गंगा की कई धाराएं विभाजित हो जाती है। उस समय इस पर कोई पक्का पुल नहीं था। शीत ऋतु में जब गंगा में जल कम हो जाता था तो इन धाराओं पर किश्तियों और पत्थरों से भरे खटोलों के पुल बना दिये जाते थे। जो साल में चार-पांच महीनों से अधिक स्थिर नहीं रह पाते थे। गंगा के चौड़े पाट का सारा रास्ता रेत और पत्थरों पर से ही होकर जाता था जिसे या तो पैदल पार किया जा सकता था या बैलगाड़ी द्वारा भी जाया जा सकता था। घोड़ा तांगे के लिए उस पर जाना सम्भव नहीं था। गंगा में जल बढ़ जाने पर जब किश्तियों के पुल टूट जाते थे तब गुरुकुल जाने के लिए तमेड़ एक मात्र साधन रह जाती थी। ये तमेड़ कनश्तरों को जोड़कर बनाई जाती थी और तीन व्यक्ति ही इन पर एक साथ बैठ सकते थे। आने-जाने का इतना विकट मार्ग होने पर भी शायद ही कोई दिन ऐसा जाता हो जिस दिन यात्री गुरुकुल न पहुंचते हो। यात्री गुरुकुल के शान्त और पवित्र वातावरण में आकर यह अनुभव करते थे कि वे एक आरण्यक आश्रम व तपोवन में आ गये हैं। उन्हें यहाँ आकर आध्यात्मिक शान्ति सी अनुभव होती थी। इस प्रकार गुरुकुल की प्रतिकूल परिस्थितियों में भी दर्शकों को गुरुकुल पहुँचाना, शाक, फल तथा खान-पान का सामान पहुँचाना। यह कार्य कनखल निवासी जानकीदास मुसद्दीलाल आढती व बाद में उनके वंशज चौ॰ विष्णु प्रसाद, चौ॰ काशीराम और चौ॰ वसन्तलाल जी गुरुकुल के लिए अपार स्नेहवश करते रहे। गुरुकुल इन सबका ऋणी है।

गुरुकुल की इस बढ़ती हुई लोकप्रियता का यह परिणाम हुआ कि गुरुकुल का प्रारम्भ केवल पन्द्रह छात्रों से हुआ था परन्तु पांच साल में उनकी संख्या बढ़कर एक सौ सतासी हो गयी थी। जब गुरुकुल प्रारम्भ हुआ तो कुछ व्यक्ति यह सोचते थे कि ऐसे कौन माता-पिता होंगे जो अपने बच्चें को अपने से अलग करके चौदह वर्ष के लिए गुरुकुल में भेज देंगे। परन्तु यह विचार गलत प्रमाणित हुआ। सैकड़ों आवेदन पत्र प्रतिवर्ष गुरुकुल में प्रवेश के लिए आने लगे। सभी बालकों को प्रविष्ट करना सम्भव नहीं था क्योंकि ब्रह्मचारियों के आवास की व्यवस्था पर्याप्त नहीं थी और धन का भी अभाव सा था। सन् 1910 के फरवरी मास में एक सौ तीस के लगभग बालक प्रवेश के लिए गुरुकुल आये थे जिनमें से केवल पच्चीस को प्रविष्ट किया जा सकता था। यहीं दशा अन्य वर्षों में भी होती थी। न केवल पंजाब अपितु उत्तर-प्रदेश, बिहार, गुजरात, सिन्ध आदि प्रान्तों से सैकड़ों माता-पिता प्रति वर्ष इस प्रयोजन से गुरुकुल में आते थे ताकि उनके बालकों का गुरुकुल में प्रवेश हो सकें।

गुरुकुल की बढ़ती हुई ख्याति

गुरुकुल के प्रति साधारण जनता का कितना प्रेम और उत्साह था, इसका वर्णन गुरुकुल के वार्षिक उत्सवों के विवरणों से किया जा सकता है। जैसा कि हम वर्णन कर चुके है कि गुरुकुल का उद्घाटन सन् 1902 में हुआ था। गुरुकुल का प्रथम वार्षिकोत्सव सन् 1903 में 10 मार्च से 13 मार्च तक मनाया गया था। उसमें चार हजार से अधिक स्त्री-पुरुष भारत के प्रदेशों एवं नगरों से सम्मिलित हुए थे। लाहौर से जो मंडली आई थी उसका नेतृत्व पंजाब कार्य प्रतिनिधि सभा के प्रधान श्री राम भजदत्त कर रहे थे और उनके साथ आये हुए सज्जनों में श्री जीतन दास, श्री केदारनाथ, श्री काशीराम वैद्य और श्री तोलाराम प्रमुख थे। रावल पिण्डी से आये सज्जनों में प्रधान श्री कृपाराम साहिनी थे। लुधियाना के सज्जनों में लाला रम्भूराम और श्री उमराव सिंह थे। अमृतसर, मुल्तान, डेराकाजी खां, डेरा स्माईल खां जालन्धर, वजीराबाद और

शवतखर आदि कितने ही स्थानों से गुरुकुल में पधारे थे। केवल पंजाब से ही नहीं अपितु बम्बई और अकोला सदृश दूरवर्ती स्थानों से बहुत से लोग इस उत्सव में सम्मिलित हुए थे। 10 मार्च को अग्निहोत्र द्वारा उत्सव प्रारम्भ हुआ जिसमें गुरुकुल के समस्त ब्रह्मचारी उपस्थित थे। हवन में क्योंकि ब्रह्मचारी भी थे इसलिए स्त्रियों को उसमें सम्मिलित होने की अनुमति नहीं दी गई थी। दोपहर पश्चात् भजनों के बाद पं॰ विष्णुमित्र और पंडित आत्माराम के व्याख्यान हुए। दूसरे दिन यज्ञ के पश्चात् ब्रह्मचारियों का वेदारम्भ संस्कार हुआ। इसके बाद उत्सव में पधारे लोगों को अवसर दिया गया कि गुरुकुल विद्यालय में जाकर अपनी आँखों से यह देख सकें की यहाँ ब्रह्मचारियों की किस रीति से पढ़ाई की जाती है। उस समय आचार्य गंगादत्त और विष्णुमित्र व्याकरण पढ़ा रहे थे। महात्मा मुंशीराम और पं॰ भगतराम अन्य विषय पढ़ा रहे थे। दोपहर के पश्चात् उत्सव के पंडाल में पं॰ भीमसेन शर्मा और पं॰ आत्माराम के व्याख्यान हुए। रात आठ बजे एक कॉन्फ्रेन्स इस विषय पर विचार करने के लिए आयोजित की गई कि गुरुकुल के लिए धन किस प्रकार एकत्रित किया जाय। एक सुझाव यह प्रस्तुत किया गया कि प्रत्येक आर्य एक रुपया वार्षिक चन्दा गुरुकुल को दिया करें। इसके साथ ही आर्य गृहस्थों के घर में एक ऐसा घट रख दिया जाए जिनमें आर्य स्त्री-"पुरुष प्रतिदिन एक मुट्ठी आटा डाल दिया करें। इस प्रकार जो आटा भिक्षा में गुरुकुल के लिए प्राप्त हो उसे उसके मूल्य के रुपये को गुरुकुल में भेज दिया जाये। यह भी प्रस्ताव प्रस्तुत हुआ कि गुरुकुल कांगड़ी की ओर से पत्र पत्रिकाओं और पेम्पलेटों का प्रकाशन गुरुकुल शिक्षा के प्रचार एवं प्रसार के लिए किया जाय। उत्सव के तीसरे दिन "आर्य मुसाफिर" के सम्पादक श्री बजीरचन्द्र, स्वामी सत्यानन्द, स्वामी महानन्द और स्वामी योगेन्द्रपाल के व्याख्यान हुए। इस दिन उत्सव में सम्मिलित जनता में श्री अलखधारी भी सम्मिलित थे। यह जन्म से मुसलमान थे इनका पहला नाम मुहम्मद उमर था। महर्षि दयानन्द ने देहरादून में इनकी शुद्धि कराई थी। आर्य समाज में प्रविष्ट हो जाने पर इनका नाम अलखधारी रख दिया गया था। पंजाब आर्य प्रतिनिधि सभा के प्रधान श्री रामभज दत्त ने इनका परिचय उपस्थित आर्य जनता से कराया और इनके हाथों से मिठाई बंटवाई गई। जिसे सब स्त्री पुरूषों ने प्रसन्नतापूर्वक ग्रहण किया। यह ज्ञातव्य है कि सत्रह ब्रह्मचारियों का वेदारम्भ संस्कार हुआ था। यह उत्सव का प्रधान आकर्षण था। दूसरे शब्दों में यह भी कहा जा सकता है कि शताब्दियों से वेदारम्भ संस्कार की प्रथा जो लुप्त हो गई थी उसका पुनः प्रचलन प्रारम्भ हुआ। उत्सव में उपस्थित आर्य लोग इसका अवलोकन करने के लिए बहुत ही उत्साहित थे। पंडाल में कहीं पर भी तिल रखने मात्र की जगह नहीं थी। पीली धोती के नियत वेश में दण्डधारण कर जब ब्रह्मचारी आचार्य गंगादत्त से दीक्षा लेने के लिए यज्ञ कुण्ड के सम्मुख उपस्थित हुए तो जनता में अत्यधिक हर्ष और उत्साह दृष्टिगोचर हो रहा था। सर्वप्रथम आचार्य ने उनको गायत्री मंत्र की दीक्षा दी। उसके बाद व्रताहुतियाँ दी गयीं। उसके बाद महात्मा मुंशीराम ने ब्रह्मचारियों को उपदेश दिया। इस तरह प्रातःकालीन दीक्षा यज्ञ एवं वेदारम्भ सम्पन्न हुआ। दोपहर बाद गुरुकुल की प्रथम वार्षिक रिपोर्ट सुनाई गयी एवं दान के लिए अपील भी की गई। एक घण्टे में चौदह हजार रुपयों की धनराशि प्राप्त हो गयी। जिसमें पांच हजार चार सौ रुपयें नकद थे, 800 रुपयों के आभूषण थे और 8000 रुपयों की भूसम्पत्ति थी। साधारण जनता में उस मन्दी के युग में जबकि प्रायः नकद के रूप में रुपया होता ही नहीं था, इतना अधिक मात्रा में धन आना इस बात का प्रमाण था कि गुरुकुल के प्रति अति प्रेम और श्रद्धा थी। इसके बाद पं॰ उमराव सिंह ने महर्षि दयानन्द विषय पर व्याख्यान दिया, जिसका जनता पर बहुत ही गहरा प्रभाव पड़ा। व्याख्यान के बाद कुछ अन्य धनसम्पत्ति प्राप्त हुई जिसमें श्री नानकचन्द धवन द्वारा दी गई लगभग चार हजार रुपयें की मूल्य की भू सम्पत्ति थी। इस प्रकार प्रथम वार्षिकोत्सव पर लगभग बीस हजार रुपयें धन के रूप में व सम्पत्ति के रूप में प्राप्त हुए।

गुरुकुल का दूसरा वार्षिकोत्सव सन् 1904 में 28 फरवरी से 2 मार्च तक मनाया गया। इसमें आर्य स्त्री-पुरुष बड़ी संख्या में सम्मिलित हुए। इस अवसर पर दूर-दूर से गुरुकुल कांगड़ी में जो लोग आये, एक अनुमान के अनुसार उनकी संख्या लगभग 50,000 थी। 21 नये ब्रह्मचारियों का वेदारम्भ संस्कार किया। 21,000 रुपयें चन्दे में प्राप्त हुआ। ज्यों-ज्यों लोग गुरुकुल शिक्षा प्रणाली से परिचित होते चले गये त्यों-त्यों गुरुकुल कांगड़ी की लोकप्रियता में वृद्धि होती चली गयी। यहीं कारण था कि छठे वार्षिकोत्सव पर 50,000 की उपस्थिति थी और सातवें पर 60,000 की उपस्थिति थी। छठे वार्षिकोत्सव पर 54,500 देखते-देखते ही गुरुकुल कांगड़ी का वार्षिकोत्सव आर्य समाज के सबसे बड़े मेले के रूप में विख्यात हो गया।

गुरुकुल कांगड़ी के वार्षिकोत्सवों की व्यवस्था के सम्बन्ध में संक्षिप्त रूप में विवेचना करना आवश्यक प्रतीत होता है। उत्सव में सम्मिलित होने के लिए आये स्त्री पुरुषों के लिए छप्पर की झोपड़ी की कतारें बनाई जाती थी। जिनका कोई किराया नहीं लिया जाता था। दर्शक सपरिवार उनमें निवास करते, गंगा में स्नान करते और भोजनालय में शुद्ध सात्विक भोजन करते। यह भी आवश्यक था कि भोजन बनाने के लिए शुद्ध घी का प्रयोग किया जाये। विदेशी चीनी का प्रयोग नहीं किया जा सकता था। भोजन की दरें गुरुकुल द्वारा निर्धारित कर दी जाती थीं। भोजनालयों पर कड़ा निरीक्षण रहता था। 50,000 के लगभग स्त्री-पुरुषों का प्रबन्ध न केवल निवास और भोजन का था, अपितु उनकी सुरक्षा और चिकित्सा की भी व्यवस्था आवश्यक थी। यह सब व्यवस्था सरकार तथा पुलिस की सहायता के बिना की जाती थी। गुरुकुल कांगड़ी की वार्षिकोत्सव की व्यवस्था इतनी उत्तम होती थी कि कांग्रेस के वैलगांव (1924) अधिवेशन में महात्मा गाँधी ने गुरुकुल के वार्षिक उत्सवों के प्रबन्ध की प्रशंसा करते हुए कहा था कि "मेरी राय में (कांग्रेस के) प्रतिनिधियों के खाने और रहने के बारे में स्वामी श्रद्धानन्द जी से नसीहत लेनी चाहिए। क्योंकि मुझे याद है कि उन्होंने अपने गुरुकुल के सन् 1916 के उत्सव पर आने वाले मेहमानों के लिए जिस तरह के फूंस के छप्पर लगवाये थे उनमें दो हजार से अधिक ख़र्च नहीं हुआ था, भोजन के लिए दुकानें थी, रहने के लिए किसी से कोई खर्च नहीं लिया गया था, इस तरह 40,000 लोग गुरुकुल के मैदान में बिना दिक्कत तथा प्राय: बिना खर्चे के रह सके थे। चाहे कांग्रेस उनकी हरपवे-हरप नकल न करें किन्तु उसको ही सामने रखकर बेहतर सस्ता इन्तजाम करना निहायत जरूरी है।"

वार्षिकोत्सव पर अनेक ऐसे स्त्री-पुरुष थे जो कई प्रकार से गुरुकुल की सहायता करते थे, इससे यह प्रतीत होता है कि गुरुकुल लोगों के हृदय में कितना लोकप्रिय था। बहुत से ऐसे सज्जन थे जो स्वेच्छापूर्वक अपने-अपने नगरों से धन एकत्रित करके भेजा करते थे। इनमें लुधियाना निवासी लाला लम्भूराम नय्यड का नाम विशेष उल्लेखनीय है। वे लाखों रुपये गुरुकुल को भेज दिया करते थे। वेदारम्भ संस्कार के पश्चात् जब ब्रह्मचारी झोली लेकर भिक्षा के लिए साधारण जनता में जाते थे, उस समय बाल्टियाँ जनता के बीच में घुमाई जाती थी। नकद रुपयों के अतिरिक्त सोने-चांदी के कितने ही आभूषण गुरुकुल को दान रूप में प्राप्त हो जाते थे। वस्तुत: बीसवीं शती के प्रथम चरण में गुरुकुल कांगड़ी की स्थापना एक नये युग के सूत्रपात का प्रारम्भ होना था, जो कि सामान्य जनता में अत्यधिक श्रद्धा का प्रतीक था।

उच्च शिक्षा की व्यवस्था

सन् 1906 तक गुरुकुल में शैक्षणिक दृष्टि से सात श्रेणियाँ थीं, जिनमें प्रधानतया संस्कृत व्याकरण और संस्कृत साहित्य की शिक्षा दी जाती थी। यद्यपि भूगोल, गणित, इतिहास आदि की सामान्य शिक्षा भी उस समय पाठ विधि में सम्मिलित थी। जिस समय सातवीं से ऊपर की कक्षाओं के खोले जाने का प्रश्न

उपस्थित हुआ, उस समय यह भी विचार मन्थन प्रारम्भ हुआ कि उसमें आधुनिक विज्ञान विषय की शिक्षा किस प्रकार प्रारम्भ की जाये? गुरुकुल की जो प्रथम नियमावली आर्य प्रतिनिधि सभा ने स्वीकार की थी। उसमें यह सर्वथा स्पष्ट कर दिया गया था कि संस्कृत वेद-वेदांग और शास्त्रों की शिक्षा के साथ-साथ अंग्रेजी भाषा तथा आधुनिक ज्ञान-विज्ञान के अध्ययन-अध्यापन की भी इस शिक्षण संस्था में व्यवस्था रहेगी। अब इसे क्रियात्मक रूप देने का समय आ गया था। आधुनिक विषयों के अध्यापन का प्रबन्ध करने की समस्या गुरुकुल प्रशासन के सम्मुख उपस्थित थी। इस समस्या का निराकरण करना कोई विशेष कठिन काम नहीं था। क्योंकि इस समय गुरुकुल में कुछ ऐसे व्यक्ति आ गये थे जो अंग्रेजी भाषा एवं साहित्य और विज्ञान के विषयों से परिचित थें। उसमें डॉ० चिरंजीव भारद्वाज, मास्टर रामदेव और मास्टर गोवर्धन थे। डा० भारद्वाज ने इंग्लैण्ड से एलोपैथिक की उच्च डिग्री प्राप्त की थी और वे बड़ौदा रियासत की सर्विस से थे। महर्षि दयानन्द के परमभक्त थे। आर्य समाज की सेवा के लिए अपना सर्वस्व अर्पण करने के लिए कटिबद्ध थे। महात्मा मुंशीराम के अनुपम त्याग और आदर्शमय जीवन से प्रभावित होकर बड़ौदा की सर्विस छोड़कर गुरुकुल में आ गये। श्री रामदेव जी बी.ए. की परीक्षा उत्तीर्ण कर जालंधर के एक स्कूल में हैंडमास्टर हो गये थे। आर्यसमाज के साथ उनका पुराना सम्बन्ध था। डा० भारद्वाज के वे भक्त थे और आर्यसमाज के क्षेत्र में शिष्य थे। जालन्धर की सर्विस छोड़कर डा० भारद्वाज के साथ गुरुकुल में आ गए। गोवर्धन जी भी बी.ए. थे, उन्हें आर्य समाज की शिक्षा से अनुराग था- गवर्नमेंट कॉलेज लाहौर से बी.ए. की परीक्षा उत्तीर्ण करके उन्होंने भी अपनी सेवाएं गुरुकुल को अर्पित कर दी थी। सन् 1906 तक ये तीनों महानुभाव गुरुकुल पहुँच गये थे। यही वह समय था, जब गुरुकुल में उच्च शिक्षा प्रारम्भ करने की समस्या उपस्थित थी। डॉ. भारद्वाज, मास्टर रामदेव और मास्टर गोवर्धन का विचार था कि आधुनिक ज्ञान-विज्ञान शिक्षा के आवश्यक अंग है इन्हें गुरुकुल की पाठ विधि में समुचित स्थान प्राप्त होना चाहिए। वास्तव में यही एक समय था, गुरुकुल की प्राचीन और नवीन विचार धाराओं में संघर्ष प्रारम्भ हुआ। इन तीनों महानुभावों का यह भी विचार था कि गुरुकुल में अध्ययन की व्यवस्था को व्यवस्थित कर दिया जाय। सभी विषयों की पढ़ाई का समय विभाग बनाया जाय। डा० भारद्वाज तो देर तक गुरुकुल में नहीं रह सके थे परन्तु मास्टर रामदेव और मास्टर गोवर्धन कई वर्षो तक गुरुकुल में रहें और उन द्वारा इस संस्था में नवीन प्रवत्तियों का सूत्रपात हुआ, जिन्हें हम आधुनिक प्रवत्तियां कह सकते हैं। आचार्य गंगादत्त इस नई पद्धति से सहमत नहीं हुए और उन्होंने गुरुकुल से त्यागपत्र दे दिया था। श्री नरदेव शास्त्री ने अपनी पुस्तक "सचित्र शुद्ध बोध" (गंगादत्त जी ही सन्यासी होकर शुद्धबोध तीर्थ नाम से प्रसिद्ध हुए) में लिखा है कि "जब नए ढंग का समय विभाग (टाइम टेबल) बना उसके अनुसार घण्टे बजने लगे तो तब आचार्य गंगादत्त जी ने समझा कि संस्कृत विद्या यहाँ से खिसकने लगी। वे पुराने ढंग से पढ़ाते थे, दक्षता से पढ़ाते थें। अभी एक सूत्र का अर्थ समझा भी नहीं पाते थे कि घण्टी बज जाती थीं, पाठ बीच में ही छूट जाता था। यह बात उनको बहुत अखरने लगी और धीरे-धीरे अंग्रेजी ढंग बढ़ता गया।" इसमें सन्देह नहीं कि आचार्य गंगादत्त गम्भीर विद्वान् थे। वे कट्टर आर्य समाजी भी थे। उनको एकदम रूढ़िवादी कहना भी उचित नहीं होगा। उनका इस विषय में प्रबल तर्क था कि संस्कृत और वेद शास्त्रों को शिक्षा के लिए पर्याप्त समय न मिलने के कारण ब्रह्मचारी इन विषयों के गम्भीर विद्वान् नहीं बन सकेंगे। उधर श्री रामदेव जी का यह कहना था कि प्रतिदिन प्रत्येक विषय को पढ़ाने का अवसर मिलना चाहिए। यह छूट नहीं मिलनी चाहिए कि एक अध्यापक एक ही विषय को दो या तीन घण्टे तक पढ़ा रहा हो। इसलिए इन दोनों प्रकार की प्रवृत्तियों का संघर्ष प्रारम्भ हो गया था। इस नवीन पद्धति के पं० गंगादत्त तीव्र विरोधी थे। तीन वर्ष तक वे संघर्ष करते

रहे परन्तु उनको सफलता नहीं मिली और वे अन्त में गुरुकुल छोड़कर चले गये। उनके साथ पंडित भीमसेन शर्मा आदि अनेक शिक्षकों ने गुरुकुल से विदा ले ली।

आचार्य गंगादत्त के चले जाने के पश्चात् महात्मा मुंशीराम ही गुरुकुल के आचार्य हो गये। इससे पूर्व गुरुकुल की सब व्यवस्था उनके हाथ में थी ही, अब शिक्षा का भी उत्तरदायित्व उन पर आ गया। शिक्षा के कार्य में मास्टर रामदेव उनके मुख्य सहायक थे, जो मुख्य अध्यापक पद पर नियुक्त थे। आधुनिक विषयों के अध्यापन में मास्ट्र गोवर्धन और मास्टर विनायक गणेश साठे रामदेव जी के सहायक थे। गणित और विज्ञान (भौतिक और रसायन) की शिक्षा इन दोनों के द्वारा ही दी जाती थी और अंग्रेजी की शिक्षा मास्टर रामदेव जी करते थे।

महाविद्यालय की स्थापना

गुरुकुल कांगड़ी के इतिहास में सन् 1906 से सन् 1910 के काल को संक्रमण काल कहा जा सकता है। इस काल में गुरुकुल; विद्यालय और महाविद्यालय इन दो भागों में विभक्त हो गया। विद्यालय में दस कक्षाएं रखी गयी और महाविद्यालय में चार कक्षाएं रखी गयी। सन् 1907 में तीन ब्रह्मचारियों को गुरुकुल में शिक्षा प्राप्त करते हुए नौ वर्ष हो चुके थे जिसमें तीन वर्ष गुजरांवाला गुरुकुल में और 6 वर्ष गुरुकुल कांगड़ी में उन्होंने विद्याधिकारी (दसवीं) की परीक्षा उत्तीर्ण कर ली और वे महाविद्यालय की शिक्षा प्राप्त करने के अधिकारी हो गये थे। इस समय यह भी आवश्यक था कि महाविद्यालय के लिए पाठ्यक्रम भी तैयार किया जाय, उसमें विभिन्न विषयों के सुयोग्य प्राध्यापक नियुक्त किये जाय। जैसा कि बता चुके है कि पं० गंगादत्त के चले जाने पर गुरुकुल के आचार्य पद पर महात्मा मुंशीरात आसीन हो गये थे। उनके सहयोग के लिए उपाचार्य पद पर श्री रामदेव जी नियुक्त किये गये थे। विद्यालय विभाग के मुख्याध्यापक का पद श्री गोवर्धन जी को सौंप दिया गया था। इससे आगे लगभग सात-आठ वर्ष तक जिन प्राध्यापकों की नियुक्ति की गई थी उन्हें उपाध्याय कहा जाने लगा था। जिन उपाध्यायों की नियुक्ति महाविद्यालय विभाग में की गयी थी, उनमें श्री घनश्याम सिंह गुप्त, बी.ए., एल.एल.बी., श्री बालकृष्ण एम.ए., श्री महेश चरण एम.एस.सी., श्री सेवकराम एम.ए. और श्री विनायक गणेश साठे एम.ए. आदि के नाम प्रसिद्ध हैं। श्री काशीनाथ शास्त्री बनारस के प्रसिद्ध विद्वान् थे और पं. शिवशंकर काव्यतीर्थ संस्कृत के विविध विषयों के प्राध्यापक नियुक्त हुए थे। श्री काशीनाथ शास्त्री के विषय में यह कहा जाता है कि महात्मा मुंशीराम बनारस से उनको यह कहकर विशेष अनुग्रह करके लाये थे कि मैं भिक्षा के रूप में गुरुकुल संस्था के लिए आपको मांग रहा हूँ। क्योंकि महात्मा मुंशीराम का विचार था कि महाविद्यालय में अध्ययन करने वाले ब्रह्मचारियों को ऐसे प्राध्यापक पढ़ायें जो अपने विषय में भारत में सुविख्यात् विद्वान् हो। पं. काशीनाथ शास्त्री उनमें से एक थे। वस्तुतः सभी प्राध्यापक अपने-अपने विषय के उच्च कोटि के विद्वान् थे। इन प्राध्यापकों के विषय इस प्रकार थे-आचार्य रामदेव पाश्चात्य दर्शन, पं. काशीनाथ शास्त्री-उपाध्याय प्राच्य दर्शन, पं. शिव शंकर काव्यतीर्थ-उपाध्याय वेद, श्री बालकृष्ण एम.ए.-उपाध्याय इतिहास एवं अर्थशास्त्र, श्री विनायक गणेश साठे-उपाध्याय रसायन शास्त्र, श्री महेशचरण सिंह एम.एस.सी. उपाध्याय वनस्पति शास्त्र, श्री घनश्याम सिंह गुप्त बी.ए., एल.एल.बी. उपाध्याय विज्ञान, श्री सेवक राम एम.ए. उपाध्याय आंग्ल भाषा, श्री लक्ष्मीनारायण बी.ए. उपाध्याय आंग्लभाषा, श्री लक्ष्मणदास बी.ए. उपाध्याय गणित।

यहाँ यह ज्ञातव्य है कि उस युग में महाविद्यालयों में विज्ञान गणित आदि की शिक्षा अंग्रेजी माध्यम से दी जाती थीं। हिन्दी में उस समय पारिभाषिक शब्द भी आधुनिक विषयों के प्रचलित नहीं हुए थे। गुरुकुल कांगड़ी महाविद्यालय में यह क्रान्ति की गयी थी कि रसायन, भौतिक विज्ञान, गणित, इतिहास,

अर्थशास्त्र और वनस्पति विज्ञान आदि की समस्त आधुनिक ज्ञान विज्ञान के विषयों की शिक्षा हिन्दी माध्यम से दी जानी प्रारम्भ की गयी। इन विषयों की हिन्दी भाषा में पुस्तकें भी तैयार की गयी। विज्ञान के विषयों में जो हिन्दी में ग्रन्थ उपलब्ध कराये गये उनके लेखक श्री गोवर्धन जी थे। रसायन और भौतिकी नाम से स्कूल स्टैंडर्ड की दो पाठ्य पुस्तकें इनके द्वारा लिखी गयी थी। इनका प्रकाशन भी गुरुकुल के द्वारा ही किया गया था। उस समय विज्ञान के विषयों पर हिन्दी में पुस्तक लिखना एक कष्टसाध्य कार्य था। इस विषय में यह भी माना जाता है कि रसायन और भौतिकी विज्ञान के विषयों पर हिन्दी में जो ग्रन्थ लिखे गये अंग्रेजी के पारिभाषिक शब्दों का हिन्दी रूपान्तर गुरुकुल कांगड़ी के द्वारा ही दिया गया था जो आज भी प्रचलित है। वस्तुतः श्री गोवर्धन जी ने जो विज्ञान की पुस्तकों को हिन्दी में लिखा था, यह एक बहुत अधिक महत्वपूर्ण कार्य था। क्योंकि उस समय हिन्दी में सभी पुस्तकों को लिखना बड़ा ही कठिन कार्य था। इसलिए यह भी व्यवस्था की गयी थी कि अंग्रेजी भाषा मे लिखी गयी पुस्तकें पाठ्यक्रम में प्रयुक्त की जाय, परन्तु कक्षा में पढ़ाते हुए प्राध्यापक हिन्दी भाषा में ही व्याख्यान दें। और उनसे यह भी अपेक्षा की जाती थी कि प्राध्यापक यह भी बताने का यत्न करें कि यह हिन्दी भाषा का शब्द आंग्ल भाषा में किस शब्द का रूपान्तर है। इस मौलिक विधि से यह लाभ हुआ कि छात्र अंग्रेजी भाषा में भी उन विषयों को पढ़ लेते थे और धीरे-धीरे आंग्ल भाषा के पारिभाषिक शब्दों का हिन्दी में रूपान्तर करने का विकास हो गया। इसके परिणामस्वरूप प्रो. महेशचरण सिन्हा ने वनस्पति शास्त्र और हिन्दी केमिस्ट्री की रचना की और प्रो. विनायक गणेश साठे ने विकासवाद की रचना की। कुछ वर्षों के पश्चात् ही इस प्रयास का यह फल हुआ कि उच्चस्तरीय अध्ययन के लिए हिन्दी भाषा में गुरुकुल को अनेक ग्रन्थ उपलब्ध हो गये। इसी प्रकार प्रो. रामशरणदास सक्सेना का गुणात्मक विश्लेषण, प्रो. प्राणनाथ का अर्थशास्त्र, राष्ट्रीय आय-व्यय शास्त्र और राजनीति शास्त्र, प्रो. बालकृष्ण का अर्थशास्त्र और राजनीति शास्त्र, प्रो. सुधाकर का मनोविज्ञान आदि अनेक विषयों के ग्रन्थ हिन्दी भाषा में लिखे गये।

जब 1907 में गुरुकुल में महाविद्यालय विभाग की प्रथम कक्षा प्रारम्भ हुई तो उस समय तीन छात्र-हरिश्चन्द्र, इन्द्रचन्द्र और जयचन्द्र थे। जयचन्द्र महाविद्यालय की शिक्षा पूरी किये बिना ही गुरुकुल छोड़कर चले गये थे। महाविद्यालय के प्रारम्भ होने के चार वर्ष पश्चात् दोनों हरिश्चन्द्र और इन्द्रचन्द्र स्नातक हुए। वार्षिकोत्सव पर उनका दीक्षान्त संस्कार किया गया। इस दीक्षान्त समारोह में उनको विद्यालंकार की उपाधि (डिग्री) प्रदान की गयी। वास्तव में शिक्षा सम्बन्धी उपाधियां (डिग्रियाँ) विश्वविद्यालयों द्वारा ही प्रदान की जाती है। गुरुकुल कांगड़ी इस स्थिति में आ गया था कि वह अपने छात्रों को उपाधियां प्रदान कर सके, इसलिए गुरुकुल कांगड़ी "विश्वविद्यालय" नाम से कहा जाने लगा। अतः गुरुकुल कांगड़ी संस्था ने स्वतन्त्र विश्वविद्यालय की स्थिति प्राप्त कर ली थी। अलंकार की उपाधि सर्वथा नवीन और मौलिक थी। गुरुकुल कांगड़ी ने सरकारी विश्वविद्यालयों का अन्धानुकरण न करके अपना स्वतन्त्र मार्ग अपनाया।

प्रथम दीक्षान्त समारोह

सन् 1912 में गुरुकुल के वार्षिकोत्सव पर दीक्षान्त समारोह का भी भव्य आयोजन किया गया। गुरुकुल कांगड़ी जो कि इस समय तक स्वतन्त्र विशाल प्रांगण में, गंगा के पवित्र तट पर हिमालय की उपत्यका में स्थापित था। गुरुकुल कांगड़ी के इस प्रथम दीक्षान्त समारोज में हजारों स्त्री-पुरूष उपस्थित थे। जब हरिश्चन्द्र और इन्द्रचन्द्र को विद्यालंकार की उपाधि से अलंकृत किया गया तो हजारों आर्य नर-नारियों की आखों में प्रसन्नता की अश्रुधारायें प्रवाहित होने लगी, वह कितना भावुकतामय वातावरण रहा होगा, जब आचार्य मुंशीराम ने आचार्य के रूप में प्रथम उपदेश देते हुए अपनी भावमयी भाषा में यह कहा था कि

"यज्ञरूप परमात्मा धन्य है जिसकी अपार कृपा से आर्यसमाज के रचे हुए इस ब्रह्मचर्य आश्रम रूपी महान् यज्ञ का पहला चरण आज समाप्त हुआ है आर्य जाति का कौन सा ऐसा सभासद् है, जिसे सहस्रों वर्षों से लुप्त इस दृश्य का आज प्रात: दर्शन कर प्रसन्नता न हो रही हो। गुरुकुल के स्नातको! तुम गुरुकुल रूपी वृक्ष के पहले फल हो, सारे सभ्य संसार की आँखें तुम पर लगी हुई है। परमात्मा तुम्हें यह आशीर्वाद दे कि तुम धर्म और शान्ति फैलाने के साधन बनकर अपने कुल के यश को सारे संसार में फैलाओ। तुम्हारा कर्त्तव्य इस कारण और अधिक है कि पीछे आने वाले स्नातक तुम्हारा अनुकरण करेंगे। उनके लिए तुम्हीं आदर्श होगें। ....मैं आज आर्य समाज को भाग्यशाली समझता हूँ जिसके लगातार प्रयत्नों से सफलता प्राप्त हुई है। ...इस यज्ञ मण्डप में उपस्थित देवियों और सभ्य पुरुषों से मेरी प्रार्थना है कि सब इन स्नातकों को आशीर्वाद दें, जिससे वे अपने धर्म और अपने देश के यज्ञ को देश-देशान्तर में पहुंचाने में कृतकार्य हो।" प्रिय पाठको! गुरुकुल रूपी वृक्ष के प्रथम फलों को देखकर उस समय की आर्य जनता तथा गुरुकुल के संचालकों का हृदय किस प्रकार पुलकित हो रहा होगा, क्योंकि गुरुकुल की स्थापना का विचार एक ऐसे बीज के रूप में बोया गया था, उसके प्रथम फल को देखकर जो आनन्द एवं प्रसन्नता की अनुभूति हो रही थी, उसका वर्णन शब्दों के द्वारा असम्भव सा प्रतीत होता है। वह केवल अनुभूति का ही विषय था।

सन् 1902 में कांगड़ी ग्राम के जंगल में गुरुकुल रूपी जिस पौधे का रोपण किया गया था, सन् 1912 तक वह एक ऐसे वृक्ष का रूप धारण कर चुका था जो पुष्पित होकर फल प्रदान करने लग गया था। उस समय उसकी छाया में लगभग 300 छात्र शिक्षा प्राप्त कर रहे थे। फूंस और छप्परों से बना हुआ एक छोटा सा आश्रम एक अच्छी फलती-फूलती बस्ती के रूप में विकसित हो गया था। इसमें ब्रह्मचारियों के अतिरिक्त उपाध्यायगण, शिक्षक, लिपिक, पाचक और अन्य कर्मचारी निवास करते थे। झौपड़ियों के स्थान पर महाविद्यालय के लिए एक पक्का तथा शानदार भवन बनकर तैयार हो गया था। बड़े ब्रह्मचारियों के लिए छात्रावास (आश्रम) पृथक् बन गया था। विद्यालय विभाग के लिए ब्रह्मचारियों के आश्रम का पर्याप्त विस्तार कर दिया गया था। महाविद्यालय के अध्ययन कक्षों का निर्माण भी पर्याप्त रूप में हो गया था। इसके अतिरिक्त जहाँ परिवारों के लिए क्वार्टर बन गये थे वहीं व्यायामशाला, धर्मशाला, गौशाला, स्नानगृह आदि भी बन गये थे। गुरुकुल अब अपने आप में स्वायत्त बस्ती का रूप प्राप्त कर चुका था। जिसके निवासियों की कुल संख्या लगभग हजार थी।

महाविद्यालय विभाग की उच्च शिक्षा के साथ-साथ गुरुकुल में साहित्य के निर्माण तथा प्रकाशन का कार्य भी प्रारम्भ कर दिया गया था। जिसमें सर्वप्रथम "वैदिक मैंगजीन" नामक पत्रिका का प्रकाशन प्रारम्भ किया गया। पंडित गुरुदत्त ने इस कार्य का प्रारम्भ किया और वह ही इस पत्रिका के संपादक भी थे। गुरुदत्त के स्वर्गवास के पश्चात् इस पत्रिका का प्रकाशन बन्द हो गया था। पत्रिका आंग्ल भाषा में निकलती थी। पाश्चात्य समाज के लिए इस पत्रिका का प्रकाशन आवश्यक था क्योंकि महर्षि दयानन्द के वैदिक मन्तव्यों तथा उनके अनुसार वेदमंत्रों की वैज्ञानिक व्याख्याएं, प्राचीन भारतीय इतिहास का नवीन रूप में अध्ययन आदि अनेकों विद्याओं को लेकर अंग्रेजी पढ़े-लिखे समाज पर इस पत्रिका का बहुत अच्छा प्रभाव पड़ रहा था। सन् 1907 में इस पत्रिका का पुन: प्रकाशन प्रारम्भ हुआ। प्रो॰ रामदेव इसके सम्पादक बने। "वैदिक मैगजीन" में अन्य विषयों के साथ-साथ गुरुकुल समाचार भी प्रकाशित होने लगे। इससे गुरुकुल के कार्य-कलाप तथा अन्य गतिविधियों का विवरण एवं समाचार आम जनता के सामने प्रकाश में आ जाता था। सन् 1908 में महात्मा मुंशीराम का सद्धर्मप्रचारक प्रेस भी जालन्धर से गुरुकुल में आ गया था। इस प्रेस में "सद्धर्म प्रचारक" पत्र भी गुरुकुल से प्रकाशित होना प्रारम्भ हो गया। गुरुकुल का अपना प्रेस हो

जाने पर ग्रन्थ प्रकाशन के लिए बहुत सहायता प्राप्त हुई। भौतिकी, रसायन आदि अनेक ग्रन्थ इसी सद्धर्म प्रचारक प्रेस से ही छपवाये गये थे। प्रो॰ रामदेव इतिहास के गम्भीर विद्वान् थे, महर्षि दयानन्द के मन्तव्यों को दृष्टि में रखकर उन्होंने भारतीय इतिहास में शोध किया और उसके पश्चात् भारत के बृहद् इतिहास के रूप में "वृहत्तर भारत" नामक ग्रन्थ प्रकाशित हुआ। गुरुकुल में हिन्दी भाषा की शिक्षा के लिए श्री भवानी प्रसाद द्वारा लिखित "आर्य भाषा पाठ़ावली" विद्यालय विभाग के लिए कई भागों में प्रकाशित हुई। ऋषि दयानन्द के पत्रादि अन्य अनेक ग्रन्थ इसी काल में इसी प्रेस द्वारा प्रकाशित किये गये।

सभा में आन्तरिक विवाद

यह सर्व विदित ही है गुरुकुल कांगड़ी की स्थापना आर्य प्रतिनिधि सभा द्वारा की गई थी। आर्य प्रतिनिधि पंजाब के नाम की जाती थी। पंजाब आर्य प्रतिनिधि सभा का गुरुकुल पर पूर्णरूपेण आधिपत्य था। इसलिए गुरुकुल का आय व्यय का विवरण तथा वार्षिक बजट पंजाब आर्य प्रतिनिधि सभा के साधारण अधिवेशन द्वारा स्वीकार किया जाता था। आर्य प्रतिनिधि सभा का यह संगठन लोकतांत्रिक आधार पर था। उसके सदस्य आर्य समाजों द्वारा निर्वाचित होकर प्रतिनिधि के रूप में सम्मिलित होते थे। लोकतंत्र में मतभेदों का होना आवश्यक है। यदि एक मतभेद किसी सिद्धान्त व आदर्श को लेकर हो तो उनसे लाभ भी होता है। परन्तु यह भेद कई बार ईर्ष्या, द्वेष, स्वार्थी पर भी अवलम्बित होते है। कई बार व्यक्ति गत कारणों से और उनमें महत्वकांक्षाओं के तत्व इतने प्रबल हो जाते है कि वे संगठन के लिए अत्यन्त हानिकारक हो जाते है। पंजाब आर्य प्रतिनिधि झगड़ों का प्रभाव गुरुकुल कांगड़ी की शासन व्यवस्था पर भी पड़ता रहा। सभा में क्योंकि प्रतिवर्ष चुनाव होते थे इसलिए जो पक्ष पराजित हो जाता था, वह सत्ताहीन पक्ष को हटाने के लिए नाना प्रकार के झगड़े उपस्थित कर देता था। गुरुकुल कांगड़ी लोकप्रिय होता जा रहा था, उसका यश चहुँदिशाओं में फैल रहा था। इसका अभिप्राय यह था कि पंजाब आर्य प्रतिनिधि सभा भी उस यश में सहभागी थी। सभा की एक प्रकार से गुरुकुल कांगड़ी सबसे बड़ी संस्था के रूप में उभर रहा था। इसलिए पराजित पक्ष अथवा दलगत राजनीति से प्रेरित होकर गुरुकुल पर भी अनेक आक्षेप होने प्रारम्भ हो गये थे।

गुरुकुल कांगड़ी का यह दुर्भाग्य था कि केवल तीन वर्ष ही स्थापित हुए, थे कि पंजाब आर्य प्रतिनिधि सभा के कुछ पदाधिकारियों एवं नेताओं ने गुरुकुल के आचार्य महात्मा मुंशीराम के कार्यकलापों पर आक्षेप करने प्रारम्भ कर दिये। जो महात्मा अपनी समस्त सम्पत्ति को सर्वमेध यज्ञ के रूप में आहूत करके अपने दो पुत्रों को जंगल में लेकर गुरुकुल में एक तपस्वी के रूप में गुरुकुल का संचालन कर रहा था।, उसके ऊपर आक्षेप लगाने प्रारम्भ कर दिये। इन आक्षेप लगाने वालों में श्री रायठाकुर दत्त धवन और लाला रलाराम प्रमुख थे। 26 मई 1905 में सभा के अधिवेशन में उसके सात सदस्यों ने निम्नलिखित प्रस्ताव प्रस्तुत किया।

"सात प्रतिनिधियों द्वारा पेश की गयी निम्नलिखित बातों के लिए जांच कमेटी नियुक्त की जाय:-

1. लाला मुंशीराम इस योग्य नहीं है कि उन पर सार्वजनिक कार्यों के लिए दान में दिये जाने वाले रुपयों के सम्बन्ध में विश्वास किया जा सकें। क्योंकि उन्होंने आर्य प्रतिनिधि सभा के चौदह हजार रुपयों का गबन किया है।
2. न लाला मुंशीराम किसी धार्मिक संस्था के जिम्मेदार और विश्वसनीय पद पर अधिकारी बनाये जाने योग्य हैं। क्योंकि अपने विरोधी सज्जनों पर झूठे दोष लगाने तथा उनको गढ़ने की उनकी आदत है। जिससे सर्वसाधारण में उनके विरोधियों की कुछ प्रतिष्ठा न रहे।" यह प्रस्ताव आर्य

प्रतिनिधि सभा में स्वीकृत नहीं हुआ। इस प्रस्ताव के विरोध में 44 मत आए और पक्ष में 17 मत आए। परन्तु महात्मा मुंशीराम के विरोधी अपनी इस हार से निराश नहीं हुए। उन्होंने गुरुकुल तथा महात्मा मुंशीराम को बदनाम करने के लिए समाचार पत्रों का सहारा लिया। समाचार पत्रों के माध्यम से सार्वजनिक रूप में आक्षेप लगाने प्रारम्भ कर दिये। उर्दू के एक "हितकारी" नामक पत्र में उनके विरूद्ध उग्रभाषा में लेख प्रकाशित किये जाने लगे। जिनमें लगभग यह दोष लगाया जाता था कि गुरुकुल में जाकर लाला मुंशीराम ने क्या त्याग किया है, जालन्धर में उनकी वकालत चलती ही नहीं थी। गुरुकुल में जाकर महात्मा बनकर बैठ गये है। वहाँ विलायती ढंग से सजी हुई बैठक में बैठते है, रेशमी कपड़े पहनते है, इस प्रकार आदि-आदि आक्षेप अनेक पैम्पलेटों और पर्चों द्वारा महात्मा मुंशीराम पर किये जा रहे थे।

पंजाब आर्य प्रतिनिधि सभा में विरोधियों का मुकाबला करने के लिए और महात्मा मुंशीराम के समर्थन के लिए दो आर्य युवक विरोधियों के सम्मुख आ डटें, जिनमें पंडित विश्वंभरनाथ और महाशय कृष्ण थे। इन दोनों ने कुछ ही समय पूर्व कॉलेज की शिक्षा समाप्त करके आर्य समाज के कार्यक्षेत्र में प्रवेश किया था। महाशय कृष्ण ने "प्रकाश" नामक उर्दू साप्ताहिक पत्र प्रकाशित करना प्रारम्भ किया, जिसमें हितकारी द्वारा महात्मा जी पर किये जाने वाले आरोपों का उत्तर दिया जाता था। इसी प्रकार श्री महता जैमिनि भी अपने पत्र "सुधारक" द्वारा महात्माजी के समर्थन में लिखा करते थे। परन्तु आर्य जनता यह विचारती थी कि महात्मा जी स्वयं इस विवाद में चुप क्यों है? इस समय महात्मा जी ने इन आक्षेपों के सम्बन्ध में चुप रहना ही उचित समझा। परन्तु सम्भवतः उनकी इस चुप्पी को कमजोरी मानकर विरोधी और अधिक मुखर हो गये। आखिर अन्त में एक ऐसा समय आया कि महात्मा मुंशीराम ने विस्तृत रूप में उन आक्षेपों का उत्तर प्रारम्भ किया। उन्होंने लगभग 600 पृष्ठ का दु:खी दिल की पूरदर्द दास्तान नामक ग्रन्थ लिखकर अपने विरोध में किये जाने वाले आक्षेपों पर निराकरण प्रस्तुत किया। इससे पर्याप्त रूप से विरोधियों का मुँह बन्द हो गया। परन्तु क्योंकि सभा का वार्षिक अधिवेशन प्रतिवर्ष होता था, इसलिए गुरुकुल विरोधियों का आक्षेप किसी न किसी रूप में जारी रहा। महात्मा मुंशीराम जी सत्धर्मप्रचारक में कभी-कभी उसका उत्तर भी दे देते थे। आठ श्रावण संवत् 1965 (सन् 1908) के सद्धर्मप्रचारक के अंक में उन्होंने लिखा था कि "गुरुकुल के विरोधी उसी दिन से वज्र प्रहार कर रहे हैं जिस दिन से ब्रह्मचर्य आश्रम के उद्धार के लिए गुरुकुल की पाठविधि तथा उसके प्रबन्ध के सभी नियम हाथ में लेकर सेवकों ने कार्य करना प्रारम्भ किया था।" अपनो और बेगानों, आर्यो-अनार्यों सभी प्रकार के पुरुषों ने उसे जड़ से उखाड़ फैकने के लिए नाना प्रकार के प्रयत्न किये परन्तु जब गंगा तट पर पहुँच कर ब्रह्मचारियों के समूह ने इस जंगल को वेदमंत्रों की ध्वनियों से गुंजाना शुरू किया तब से तो आक्रमणों की कुछ गिनती ही नहीं रही। हर तीसरे महीने ही गुरुकुल की समाप्ति सूचक भविष्यवाणियाँ सुनने में आती रही है। जत्थों पर जत्थें इसको गिराने के लिए बनें, आक्रमणों के आक्रमण हुए, जिनसे न केवल इसके सेवकों के बदन छलनी से बन गये प्रत्युत उन चोटों के निशान गुरुकुल की संस्था और उसके प्रबंधन पर भी अब तक लगे हुए हैं।" ये पंक्तियां यह प्रदर्शित करने के लिए पर्याप्त है कि महात्मा मुंशीराम ने किन परिस्थितियों में गुरुकुल का संचालन किया होगा। यह महात्मा मुंशीराम का ही असाधारण व्यक्तित्व था जो इतने प्रबल तूफान का मुकाबला करते हुए विरोधियों को धराशायी करते रहे। वस्तुतः इतिहास का यह कटु सत्य इतिहास के उन सत्यों की ओर संकेत करता है जो महान् उपलब्धियों के पश्चात् उन देश के अथवा संस्थाओं के लोग द्वारा शहीद कर दिये जाते रहे है।

प्राचीन और नवीन प्रवृत्तियों का संघर्ष

महात्मा मुंशीराम के पक्ष में पं० विश्वंभरनाथ और श्री महाश्य कृष्ण ने महत्वपूर्ण योगदान किया था। रायठाकुरदत्त धवन और श्री लाला रलाराम के समय-समय पर किये जाने वाले आक्षेपों का वे सशक्त रूप में उत्तर देते थे। गुरुकुल कांगड़ी क्योंकि एक संस्था के रूप में कार्यरत था इसलिए वहाँ व्यवस्था सम्बन्धी अनेक मतभेद उपस्थित हो जाया करते थे। स्वामिनी सभा के रूप में पंजाब आर्य प्रतिनिधि सभा अपना प्रभुत्व रखना चाहती थी। गुरुकुल के स्थानीय संचालक गुरुकुल के सम्मुख आने वाली समस्याओं का सीधा साक्षात्कार करते थे। इसलिए समय-समय पर रीति-नीति को लेकर सभा और महात्मा मुंशीराम के बीच मतभेद होता रहता था। यह मतभेद शीध्र ही श्री विश्वम्भरनाथ और महाशय कृष्ण तथा महात्मा मुंशीराम के मध्य भी हो गया। 1907 में जब गुरुकुल कांगड़ी में महाविद्यालय विभाग में अध्यापन प्रारम्भ हुआ तो उसके पाठ्यक्रय में संस्कृत और वेदशास्त्रों के साथ आंग्लभाषा को अनविार्य रूप में और आधुनिक ज्ञान-विज्ञान विषयों में से एक को वैकल्पिक विषय के रूप में सम्मिलित किया गया था। इस पाठ्यक्रम के अन्तर्गत शनैः-शनैः गुरुकुल के अध्यापन का स्वरूप लगभग वहीं हो गया जो सरकारी कॉलेजों में था। इस व्यवस्था ने एक समुन्नत और विकसित शिक्षा केन्द्र का रूप प्राप्त कर लिया था। जैसा कि हम देख चुके है कि यहाँ के संचालन तथा व्यवस्था की अन्तिम जिम्मेदारी पंजाब आर्य प्रतिनिधि सभा की ही थी। गुरुकुल का बजट तथा उसमें निर्धारित व्यय की जाने वाली राशि को एकत्र करने का अन्तिम उत्तरदायित्व सभा का ही था। पं० विश्वम्भरनाथ तथा महाशय कृष्ण एवं उनके कई अन्य साथियों का यह विचार जोर पकड़ने लगा कि गुरुकुल पर होने वाला व्यय सभा पर एक बोझ है। जिसके कारण वेद प्रचार करना सभा का जो मुख्य उद्देश्य है, उस पर उचित ध्यान देना सम्भव नहीं हो पा रहा है। धन की भी अत्यधिक न्यूनता थी। धन का स्रोत भी बहुत सीमित ही था, गुरुकुल की स्थापना तो इस उद्देश्य के लिए की गयी थी कि यहाँ वेद शास्त्रों का अध्ययन-अध्यापन हो, परन्तु विश्वविद्यालय को स्थापित करना सभा का कभी भी उद्देश्य नहीं था। आर्य प्रतिनिधि सभा के एक सशक्त वर्ग का गुरुकुल के प्रति इस रूख को देखकर महात्मा मुंशीराम ने इस विषय में अपना विचारमन्थन प्रस्तुत किया, वह यह था कि "प्रतिनिधि सभा के अधीन गुरुकुल के लिए एक पृथक् कर्तृसभा का गठन किया जाय। जिसमें आर्य प्रतिनिधि सभा के अतिरिक्त गुरुकुल में अध्ययन करने वाले ब्रह्मचारियों के अभिभावकों, यहाँ से निकलने वाले स्नातकों और प्रतिष्ठित दानियों के प्रतिनिधि उसके सदस्य हों। इसके साथ ही वैदिक साहित्य आदि विषयों के कुछ प्रकाण्ड पंडित भी सभा के सदस्य के रूप में मनोनीत किये जाये। उनके इस संगठन का स्वरूप वैसा ही था जो बाद में आर्य विद्या सभा का स्वरूप माना गया था। महात्मा मुंशीराम ने इसे एक प्रस्ताव के रूप में पंजाब प्रतिनिधि सभा के निर्णय हेतु भेज दिया। 26 मई 1911 की सभा की बैठक में इस विषय पर विचार विमर्श प्रारम्भ हुआ। सर्वप्रथम प्रस्ताव पर बोलते हुए पं० विश्वम्भरनाथ ने प्रतिनिधि सभा के सम्मुख अपना विचार प्रकट करते हुए कहा कि सभा का मुख्य उद्देश्य वेद तथा अन्य प्राचीन आर्ष ग्रन्थों की शिक्षा के लिए गुरुकुल की स्थापना करना था। महात्मा मुंशीराम ने अपने प्रस्ताव में गुरुकुल को एक शिक्षण संस्था (एजुकेशनल इन्स्टीट्यूशन) कहा है। ऐसी किसी संस्था को खोलने का अधिकार सभा को नहीं हैं। ये ध्यान में रखना चाहिए कि शिक्षा का प्रसार प्रतिनिधि सभा का कोई उद्देश्य नहीं हैं। श्री विश्वम्भरनाथ के इस प्रस्ताव का समर्थन करते हुए महाश्य कृष्ण ने कहा कि गुरुकुल के अधिकारी उसे यूनिवर्सिटी बनाना चाहते है। यह सभा के उद्देश्यों के विपरीत है। प्रतिनिधि सभा के अन्य सदस्यों ने भी इन विचारों का समर्थन किया। इन विचारों से स्पष्ट हो जाता है कि दलगत राजनीति के कारण सभा के सदस्यों में मतभेद बना

रहता था क्योंकि गुरुकुल की प्रथम नियमावली जो सभा ने ही स्वीकृत की थी इन सब विषयों का वर्णन उसमें था। इस उपरोक्त विचारधाराओं, के सदस्यों की यह भी मान्यता थी कि गणित, अंग्रेजी, इतिहास, अर्थशास्त्र और वनस्पति विज्ञान आदि आधुनिक विषयों का अध्यापन निरर्थक है।"

महात्मा मुंशीराम गुरुकुल कांगड़ी को एक महान् प्रतिष्ठान के रूप में स्वतन्त्र विश्वविद्यालय के रूप में विकसित देखना चाहते थे जिस प्रकार प्राचीन काल में भारद्वाज आचार्य कुल आदि और बौद्धकाल में नालन्दा विश्वविद्यालय आदि का विशाल स्वरूप था उसी प्रकार गुरुकुल कांगड़ी स्वतन्त्र विश्वविद्यालय के रूप में विकसित हो, उन्होंने अपने विचार अभिव्यक्त करते हुए कहा था "गुरुकुल जिस मार्ग पर चल रहा है उससे वह एक विश्वविद्यालय ही बनेगा। अब तक भी वह बहुत कुछ उसी ओर बढ़ा है। वेदों और वेदाङ्गो की पढ़ाई के मुख्य रहने पर भी वहाँ अन्य विद्याओं की पढ़ाई को स्थान दिया जायेगा। इसका कारण यह है कि सब अन्य विद्यायें वेदों के समझने के लिए साधन रूप में है। क्योंकि वेदों के अर्थ को विभिन्न रूपों में समझने के लिए उसके अंगों एवं उपाङ्गों का गहन अध्ययन करना आवश्यक है। गुरुकुल में कृषि विज्ञान, पदार्थ विज्ञान अन्य सभी कलाएं एवं विज्ञान सिखाये जायेंगे और सिखाये जाते है। यदि प्रतिनिधि सभा इसे अपने उद्देश्यों के प्रतिकूल समझती है तो उसे इसी समय वर्तमान गुरुकुल को बन्द कर देना चाहिए। जो सज्जन कार्यकत्ताओं पर यह दोष लगाते है कि वे भविष्य में गुरुकुल को यूनिवर्सिटी बनाना चाहते है उन्हें समझ लेना चाहिए कि इस समय भी गुरुकुल कांगड़ी यूनिवर्सिटी बन रहा है।"

गुरुकुल कांगड़ी के स्वरूप के विषय में यह सामान्य मतभेद धीरे-धीरे उग्ररूप धारण करता चला गया। पंजाब आर्य प्रतिनिधि सभा में इस विषय में स्पष्ट दो दल बन गये। इनमें से प्रथम दल यह चाहता था कि गुरुकुल कांगड़ी को वैदिक विद्वान् बनाने का साधन बनाया जाय। वे विद्वान् आर्यसमाज के उपदेशक बनकर ईसाई मिशनरियों की तरह आर्य समाज का प्रचार एवं प्रसार करें। ऐसे कॉलेजों को ईसाई मिशनरियों के यहाँ डिविनिटी कॉलेज कहा जाता था। इस पक्ष के लोग यह मानते थे कि आर्य समाज एक धार्मिक संगठन है, उसका उद्देश्य वैदिक धर्म के विशुद्ध स्वरूप को पुनः स्थापित करना है। और विश्व भर में उसे प्रसारित करना है। आर्य समाज का प्रयत्न इसी उद्देश्य के लिए होना चाहिए। दूसरे दल एवं पक्ष के सदस्य उनके इस विचार से सहमत नहीं थे। उनका मानना था कि वेदों की सही-सही व्याख्या तभी की जा सकती है जब वेद के विद्वान् विविध विद्याओं तथा ज्ञान से परिचित हों और उनके अध्ययन से उनका मानसिक एवं बौद्धिक स्तर पर्याप्त विकसित हो गया हो। वैदिक धर्म के प्रचार के लिए उत्तम विद्वान् वही व्यक्ति हो सकते है जो संस्कृत भाषा और वेदाङ्गों के पंडित होने के साथ-साथ अंग्रेजी भाषा आदि अन्य विदेशी भाषाओं सहित आधुनिक ज्ञान-विज्ञान के भी विद्वान् हों। क्योंकि अन्य धर्म और सम्प्रदायों के विद्वानों को अपने सबल तर्कों से पराजित कर सके और उनके तर्को का उत्तर दे सकें। उनका यह भी मानना था कि महर्षि दयानन्द सरस्वती के मन्तव्य के अनुसार वेद सब सत्य विद्याओं का पुस्तक हैं और सभी ज्ञान-विज्ञान वेदों में बीज रूप में विद्यमान है। महर्षि दयानन्द के इस मन्तव्य को ऐसे विद्वान् ही सिद्ध कर सकते है, जिन्होंने इन ज्ञान-विज्ञानों का ज्ञान प्राप्त किया हुआ हो। क्योंकि महर्षि दयानन्द जी ने ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका में वेदों में विमान बनाने की विद्या का भी वर्णन किया है, इत्यादि विषयों का विस्तार किया है। इन विषयों का विकास एवं विस्तार बिना ज्ञान-विज्ञान के कैसे सम्भव है?

आर्य समाज के इन दोनों पक्षों का मतभेद इतना तीव्र हो गया था कि दोनों पक्षों के विवादित विचारों का समाचार पत्रों द्वारा भी प्रकट होना प्रारम्भ हो गया था। महाशय कृष्ण अपने समाचार पत्र में यह विचार प्रकट करने लगे कि गुरुकुल ब्राह्मण पैदा न करके वैश्य पैदा करने लग रहा है। प्रकाश ने अपने एक अंक

में (सम्वत् 1971 सन् 1914) यह आशंका भी प्रकट कर दी थी कि "गुरुकुल वेद की पढ़ाई को गौण बनाकर कहीं लुहारी, तरखानी के कार्य न सिखाने लग जाय।" इस प्रकार जो विचार प्रकाश में प्रचारित किये जा रहे थे, उनका उत्तर मुंशीराम सद्धर्म प्रचारक में दे रहे थे। महात्मा मुंशीराम ने 2 फाल्गुन संवत् 1971 सन् 1914 के अंक में लिखा था कि "गुरुकुल की पहली पाठ विधि के अनुसार, जिसका प्रामाणिक खण्डन मेरे ज्ञान में प्रतिनिधि सभा ने नहीं किया, कृषि महाविद्यालय खोलना भी गुरुकुल का कर्त्तव्य है। मैं दो वर्ष से उसके लिए विशेष परामर्श करता रहा हूँ और अब समय आया है कि कृषि का काम आगामी वर्ष के प्रारम्भ से शुरू किया जायेगा। उसके साथ ही लुहारी, तरखानी का कारखाना भी खोला जायेगा। जिसका सामान तीन वर्षों से आया पड़ा है। यदि उसके सम्बन्ध में मन्त्री जी अथवा अन्य किन्हीं सभासदों को गुरुकुल अपने उद्देश्य से गिरता दिखाई देता है तो सभा में इस प्रश्न को रखकर पहले ही निश्चय करा लो।" उस समय महाशय कृष्ण पंजाब आर्य प्रतिनिधि सभा के मंत्री बन चुके थे। इससे पूर्व वे सभा के उपमंत्री एवं अन्तरंग सदस्य थे। महात्मा मुंशीराम को यह शिकायत थी कि गुरुकुल की नीति तथा कार्यकलापों के सम्बन्ध में अपने मतभेदों को अपने समाचार पत्र "प्रकाश" में क्यों प्रस्तुत करते है? सभा के अधिकारियों को अपने मतभेदों को सभा के अन्दर ही प्रस्तुत करना चाहिए। इसलिए महात्मा मुंशीराम ने सन् 1911 (22 कार्तिक संवत् 1968) "प्रचारक" के अंक में उन्होंने निवेदन किया था कि "प्रकाश के सम्पादक महाशय कृष्ण जी गुरुकल की स्वामिनी प्रतिनिधि सभा के सभासद् है। गुरुकुल की प्रबन्धकारिणी अन्तरंग सभा के भी सदस्य है और उससे बढ़कर आप सभा के उपमंत्री है। यदि गुरुकुल के विषय में आप को कोई शिकायत है और यदि गुरुकुल के वर्तमान कार्यकत्ताओं से रूष्ट है तो आप के लिए कई रास्ते खुले है वे कई रास्ते इस वर्तमान रास्ते से बहुत प्रिय, बहुत लाभदायक और बहुत सुलभ है।" "प्रचारक" के एक अंक संवत् 1971 में महात्मा जी ने अपने पक्ष को सुस्पष्ट करते हुए ये शब्द लिखे थे- "मैं महाशय कृष्ण तथा आर्य जनता को यह निश्चय दिलाता हूँ कि यदि वैदिक धर्म के पुनर्जीवन का काम मेरी दृष्टि में गौण बन जायेगा तो मैं इस गुरुकुल में एक पल भी ठहरना पाप समझूंगा।" वास्तव में यह ठीक है कि उस समय कोई भी ऐसी संस्था नहीं थी जहाँ आर्यसमाज के उपदेशक तैयार किये जाते हो। उस समय वैदिक धर्म के प्रचारकों की भी आवश्यकता थी। आर्य प्रतिनिधि सभा के मंत्री की स्थिति में वेद-प्रचार के लिए विद्वान् उपदेशकों की व्यवस्था करना महाशय कृष्ण के लिए एक महत्वपूर्ण कार्य था। उन्होंने 1916 (श्रावण संवत् 1973) के अंक में लिखा था कि- "न पंजाब में और न ही संयुक्त प्रान्त में कोई भी पाठशाला है जहाँ उपदेशक तैयार किये जाते हो, हालात में सवाल तो काबिले गौर यह है कि उपदेशक कहाँ से आये?"

परन्तु यहाँ यह ज्ञातव्य है कि गुरुकुल की स्थापना न तो संस्कृत पाठशाला के रूप में की गयी थी, और न ही उपदेशक विद्यालय के रूप में। सभा द्वारा भी प्रथम नियमावली स्वीकार की गयी थी, उसमें यह पूर्ण रूप से स्पष्ट था कि गुरुकुल में वेद संस्कृत, वेद-वेदाङ्ग और आर्ष ग्रन्थों के साथ-साथ आंग्ल भाषा और आधुनिक ज्ञान-विज्ञान के अध्ययन की भी व्यवस्था की जायेगी। इसलिए महात्मा मुंशीराम तथा अन्य गुरुकुल के प्रमुख कार्यकर्त्ता और अधिकारियों को यह विश्वास था कि गुरुकुल में जिस प्रकार का उत्तम अध्ययन-अध्यापन हो रहा है, उनमें से ही उच्च कोटि के विद्वान् एवं प्रचारक, स्नातक तैयार हो सकते हैं और उनका यह विश्वास खरा उतरा। गुरुकुल के स्नातकों द्वारा वैदिक धर्म का प्रचार एवं प्रसार जिस योग्यता के साथ किया गया था उसका वर्णन आगे किया जायेगा। यह सही है कि महात्मा मुंशीराम जिस तरीके से गुरुकुल को विकसित कर रहे थे, उसमें उनकी यह नीति थी कि यह गुरुकुल कांगड़ी संस्था

आर्य समाज तथा वैदिक धर्म की उन्नति में उपयोगी सिद्ध हो। और इस संस्था के द्वारा ही भारतवर्ष एवं आर्यावर्त का पुनर्जागरण हो। इसलिए उन्होंने यह बल देकर कहा था कि यदि यह संस्था उनके इस उद्देश्य में उपयोगी सिद्ध न होगी तो वे गुरुकुल में एक क्षण भी नहीं रहेगे। वास्तव में महात्मा मुंशीराम और महाशय कृष्ण आदि के जो मतभेद थे वे व्यक्तिगत न होकर सैद्धान्तिक थे। वे समझते थे कि यदि गुरुकुल में वनस्पति शास्त्र, कृषि और रसायन आदि विषयों की पढ़ाई की जायेगी तो छात्र वेद-वेदाङ्गों के अध्ययन को समुचित महत्व नहीं देंगे। धीरे-धीरे इनका महत्व कम होता जायेगा। आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब द्वारा प्रकाशित सभा के इतिहास में इस दृष्टिकोण को इन शब्दों में प्रकट किया गया है- "जिन पर्याय विषयों को गौण सा अंग बनाना था, जिनकी शिक्षा का प्रबन्ध वहीं तक किया जाना था जहाँ तक इनके अध्ययन से वेदादि के अध्ययन को बाधा न हो, वहीं गुरुकुलीय शिक्षा के प्रधान अंग बन गये। यहाँ तक कि गुरुकुल की परिभाषा में विद्यार्थी के अपने विषय का अर्थ ही पर्याय विषय हो गया है और वेद की स्थिति एक सामान्य विषय की तरह रह गयी।" इसी कारण आर्य प्रतिनिधि सभा के अधिकारियों की जो यह उपर्युक्त सम्मति थी, उसी से सभा द्वारा दी जाने वाली सहायता में कमी होती चली गयी और इसके साथ ही से सभा के अन्दर गुरुकुल के प्रति उपेक्षा का भाव पैदा हो गया है। इसका परिणाम यह हुआ कि गुरुकुल संचालन का समस्त उत्तरदायितव महात्मा मुंशीराम पर आ गया। इस महान् पुरोधा के अनथक परिश्रम से गुरुकुल निरन्तर उन्नति के शिखर पर बढ़ता चला गया। कुछ ही समय पश्चात् इसका स्वरूप एक शिक्षण संस्था मात्र के रूप में न रहकर एक नवीन तथा मौलिक आन्दोलन का हो गया। अतः उपर्युक्त संघर्ष में अन्ततोगत्वा विजय महात्मा मुंशीराम की ही हुई।

गुरुकुल कांगड़ी का विकास

महात्मा मुंशीराम जिस स्वप्न को लेकर इस आरण्यक वन में तपस्या कर रहे थे, वे इस संस्था को महान् एवं आदर्श संस्था के रूप में देखना चाहते थे। इसलिए वह यही विचार करते रहते थे कि यह संस्था किस प्रकार प्राचीन काल के भारद्वाज आश्रम, नैमिषारण्य के शौनक मुनि के आश्रम, नालन्दा और विक्रमशिला के महाविहारों तथा तक्षशिला के विद्यापीठों के सदृश हों। गुरुकुल वास्तव में एक ऐसी संस्था के रूप में विकसित हो जहाँ समस्त विषयों अथवा विद्याओं का अध्ययन-अध्यापन होता हो। जिस प्रकार का वर्णन नारद मुनि ने महर्षि सनत कुमार के समक्ष करते हुए अनेक विद्याओं का अर्थात् विश्व की समस्त विद्याएं जिनका अध्ययन करना अपेक्षित है, उन सबका अध्ययन गुरुकुल कांगड़ी में हो। वे सामान्य संस्कृत पाठशाला और उपदेशक विद्यालय नहीं बनाना चाहते थे। यह सही है कि वे वेद-वेदाङ्ग के पठन-पाठन को प्रमुखता देने के प्रबल पक्षधर थे। उसके साथ वे यह भी मानते थे कि आधुनिक ज्ञान-विज्ञान की शिक्षा देना आवश्यक प्रतीत होता है। ब्रिटिश सरकार द्वारा जो शिक्षा-प्रणाली उस समय प्रचलित थी, महात्मा जी की स्मृति में उसमें बहुत से दोष थे। क्योंकि उसमें प्राचीन भारतीय विद्याओं का कोई स्थान नहीं था। प्रणाली में न केवल आंग्ल भाषा एवं उसके साहित्य पर अधिक बल दिया गया था अपितु समस्त विषयों की पढ़ाई का माध्यम अंग्रेजी ही रखा गया था इसलिए महात्मा मुंशीराम ऐसी शिक्षा पद्धति को विकसित करना चाहते थे जो वास्तविक रूप में राष्ट्रीय हो, जिसमें आर्ष साहित्य, भारतीय संस्कृति और संस्कृत भाषा को समुचित स्थान प्राप्त हो जिससे पढ़ने वाले छात्रों व स्नातकों पर भारतीय संस्कृति का पूर्ण रूपेण प्रभाव हो। इस दिशा में जो उन्होंने तपस्या एवं अनथक परिश्रम किया उसके परिणाम स्वरूप गुरुकुल ने केवल 15 वर्ष में एक स्वतन्त्र राष्ट्रीय विश्वविद्यालय का स्वरूप प्राप्त कर लिया। सन् 1917 में गुरुकुल में ब्रह्मचारियों की कुल संख्या 340 हो गयी थी। 276 ब्रह्मचारी विद्यालय विभाग में थे और 64 छात्र महाविद्यालय में थे। यद्यपि

वर्तमान दृष्टि में यह संख्या कोई बहुत अधिक नहीं थी, परन्तु हमें यह भी ध्यान रखना चाहिए कि जितने छात्र गुरुकुल में शिक्षा प्राप्त करते थे, उन सबकों वहीं छात्रावास में रहना भी अनिवार्य था। उस समय विद्यार्थियों का प्रवेश 7 या 8 वर्ष की आयु तक ही हो सकता था। इस छोटी सी आयु में प्रथम अथवा द्वितीय श्रेणी में ही प्रवेश हो पाता था। महाविद्यालय में भी उन्हीं छात्रों का प्रवेश होता था जो विद्यालय विभाग (गुरुकुल) से विद्याधिकारी उत्तीर्ण करके ही आये हो, किसी हाईस्कूल उत्तीर्ण छात्र को महाविद्यालय में प्रवेश नहीं दिया जाता था। बीसवीं शती के प्रथम चरण में गुरुकुल के छात्रावास का अनुशासन बड़ा ही कठोर था। इसलिए बहुत ही कम माता-पिता अपनी सन्तान को गुरुकुल में भेजना पसन्द करते थे। गुरुकुल उस युग में किसी प्रकार की सरकारी सहायता नहीं लेता था। इसलिए गुरुकुल के धन प्राप्ति के स्रोत केवल दान ही थे। अतः सदैव धन की कमी ही रहती थी। इसलिए इन परिस्थितियों में 15 वर्ष में जो गुरुकुल का विकास हुआ वह अत्यधिक सन्तोषजनक ही था।

अतः गुरुकुल कांगड़ी का विकास होकर जो उसने एक विशिष्ट स्वरूप प्राप्त कर लिया था उसमें प्राचीन और अर्वाचीन दोनो प्रकार के विषयों एवं ज्ञान-विज्ञान के अध्ययन की समुचित तथा सन्तुलित व्यवस्था ही थी। गुरुकुल की विद्याधिकारी परीक्षा के लिए निम्नलिखित विषय निर्धारित थे- संस्कृत साहित्य, संस्कृत व्याकरण, धर्म शिक्षा, आर्यभाषा, गणित, अंग्रेजी, इतिहास, भूगोल, अर्थशास्त्र, नागरिक शास्त्र, विज्ञान (रसायन, भौतिकी) और आलेख्य। धर्मशिक्षा में मनुस्मृति, सत्यार्थ प्रकाश तथा वेद शास्त्रों के कतिपय सन्दर्भ पढ़ाये जाते थे। संस्कृत व्याकरण में अष्टाध्यायी, सिद्धान्त कौमुदी, या काशिका और महाभाष्य के नव भाग को रखा गया था। हिन्दी का स्तर बहुत ऊंचा था। गणित सबके लिए अनिवार्य था। इतिहास, भूगोल, नागरिक शास्त्र और अर्थशास्त्र एवं विज्ञान भी सबको अनिवार्य रूप में पढ़ने पड़ते थे। विज्ञान को इतिहास आदि के विकल्प रूप में नहीं रखा गया था। इन सब विषयों के अध्ययन का स्तर सरकारी विश्वविद्यालयों की हाईस्कूल परीक्षा के स्तर से किसी भी प्रकार न्यून नहीं था बल्कि स्तर कुछ अधिक ही था। अंग्रेजी भाषा की अवस्था भी यही थी। हाँ भेद केवल इतना था कि यहाँ अध्यापन का माध्यम हिन्दी था। उस समय गुरुकुल के अन्दर जो शिक्षा का स्तर था उसमें विद्यार्थी पढ़कर संस्कृत में शास्त्री के समकक्ष और अन्य विषयों में मैट्रिक के बराबर योग्यता प्राप्त कर लेते थे और यह इसलिए सम्भव था कि गुरुकुल के समस्त छात्र छात्रावास में रहते हुए अनुशासित जीवन व्यतीत करते थे। उन सबका ध्यान विद्याभ्यास में ही लगा रहता था।

आर्य प्रतिनिधि सभा प्रधान के हस्ताक्षर से गुरुकुल नियमावली में गुरुकुल के विद्यालय विभाग में 12 तक की कक्षाएं रखी गयी थी। परन्तु गुरुकुल में अध्यापन का रूप जिस प्रकार विकसित हुआ उस समय उसमें देश के अन्य स्कूलों की तरह विद्यालय की पढ़ाई दस वर्षों की ही थी या दस वर्षों में पूर्ण होती थी। प्रथम नियमावली में एक महत्वपूर्ण भेद यह भी था कि अंग्रेजी की पढ़ाई छठी कक्षा से ही प्रारम्भ की गयी थी जबकि सभा द्वारा स्वीकृत नियमावली में 9 वीं कक्षा से प्रारम्भ होनी चाहिए थी। सम्भवतः यह इसलिए हुआ होगा कि व्यावहारिक रूप में जो छात्र विद्याधिकारी उत्तीर्ण कर के गुरुकुल की पढ़ाई छोड़कर जाते होंगे उनका अंग्रेजी का ज्ञान नहीं के बराबर होता था। इसलिए व्यावहारिक रूप में अंग्रेजी की पढ़ाई छठी कक्षा से ही प्रारम्भ करनी पड़ी होगी।

महाविद्यालय विभाग में वेद, दर्शनशास्त्र, संस्कृत और आंग्लभाषा समस्त छात्रों के लिए अनिवार्य विषय थे। इन विषयों के अतिरिक्त अन्य विषय वैकल्पिक विषय के रूप में लिया जा सकता था। जैसे जो छात्र वेदों का विशेषरूप में अध्ययन करना चाहते थे वे विस्तृत वैदिक साहित्य को वैकल्पिक विषय

के रूप में वैदिक साहित्य को ले सकते थे। प्रथम नियमावली में जिसे वेद-विभाग कहा गया था जिसमें छात्रों से यह अपेक्षा की जाती थी कि साङ्गोपाङ्ग चारों वेदों और उनके ब्राह्मणों का अध्ययन किया जाय। उस वेद विभाग का निर्माण उन्हीं छात्रों से होता था जो विशेष वैदिक साहित्य को वैकल्पिक विषय के रूप में लेते थे। इनकी शिक्षा पूर्ण होने पर उन्हें वेदालंकार की उपाधि दी जाती थी। महाविद्यालय में जिन अन्य वैकल्पिक विषयों की शिक्षा की व्यवस्था की वे निम्नलिखित थे- आर्य सिद्धान्त, इतिहास, पाश्चात्य दर्शन, रसायन, कृषि और गणित। आर्य सिद्धान्त में विविध धर्मों व सम्प्रदायों का तुलनात्मक अध्ययन किया जाता था। आर्य सिद्धान्त को वैकल्पिक विषय के रूप में लेने वाले स्नातकों को "सिद्धान्तालंकार" की उपाधि प्रदान की जाती थी। आर्य समाज के प्रचारकों की विशेष आवश्यकताओं को दृष्टि में रखकर ही इन विषयों को पाठ्यक्रम में स्थान दिया गया था। सन् 1916 में महाविद्यालय विभाग में कुल 64 छात्र थें उनके पर्याय विषय इस प्रकार थे- विशेष वैदिक साहित्य- दो, आर्य सिद्धान्त-3, रसायन-24, इतिहास-9, पाश्चात्य दर्शन-8, कृषि-8, गणित-4, सर्वयोग-64 । इस उपर्युक्त संख्या से यह स्पष्ट हो जाता है कि गुरुकुल की प्रथम नियमावली में जिस वैदिक साहित्य की स्थिति को मुख्य रखने की बात की गयी थी, वह गौण हो रहा था क्योंकि केवल 2 ब्रह्मचारियों ने ही वैदिक साहित्य का विशेष पाठयक्रम लिया था। गुरुकुल के ब्रह्मचारी रसायन के अध्ययन को सबसे अधिक महत्व देते थे, क्योंकि यह एक आधुनिक विषय है और आधुनिक युग में इसका बहुत महत्व है। उस समय आयुर्वेद का अध्ययन प्रारम्भ नहीं हो पाया था। इसके बाद आयुर्वेद सबसे अधिक लोकप्रिय विषय हो गया। अपने भविष्य को दृष्टि में रखकार बहुत से ब्रह्मचारी आयुर्वेद का ही अध्ययन करते थे। इतिहास, गणित, रसायन आदि को वैकल्पिक विषय को लेने वाले स्नातकों को विद्यालंकार की उपाधि प्रदान की जाती थी। यहाँ यह ज्ञातव्य है कि छात्र चाहे कोई भी वैकल्पिक विषय क्यों न लें उसके लिए वेद-दर्शन-संस्कृत और अंग्रेजी का अध्ययन करना अनिवार्य था। इन विषयों का पाठ्यक्रम बहुत उच्च श्रेणी का था और इन विषयों के लिए अध्ययन करने हेतु पर्याप्त समय नियत होता था। इसलिए उपर्युक्त किसी भी वैकल्पिक विषय के लेने पर भी वह स्नातक संस्कृत का उद्भट् विद्वान् होता ही था। इसके साथ ही वेद शास्त्रों में उसकी गहरी गति होती थी। गुरुकुल के पहले स्नातक संवत् 1968 (सन् 1912) में हुए थे। सन् 1917 तक यहाँ से पढ़कर स्नातक हुए कुल विद्यार्थियों की संख्या 32 थी। जिसमें वेदालंकार एक भी नहीं था केवल दो सिद्धान्तालंकार स्नातक हुए थे और शेष ने विद्यालंकार की उपाधि प्राप्त की थी। परन्तु इसमें कोई शक नहीं कि गुरुकुल का विकास एक महत्वपूर्ण राष्ट्रीय शिक्षण संस्था के रूप में हो गया था। इस महत्वपूर्ण शिक्षण संस्था की शिक्षा पद्धति की ओर देश-विदेश के विद्वानों एवं शिक्षा-विदों का ध्यान आकृष्ट होने लगा था। शिक्षा-जगत् में उसने एक अपनी महत्वपूर्ण स्थिति बना ली थी।

गुरुकुल की शाखाएँ

आर्य जनता तो गुरुकुल की ओर आरम्भ से ही आकृष्ट थी। वहाँ अपने पुत्रों को प्रवेश कराने की मांग इतनी अधिक थी कि सबका प्रवेश करना संभव नहीं था। इसका कारण जैसा कि लिख चुके है साधन और धन की न्यूनता ही थी। इसका परिणाम यह हुआ कि गुरुकुल की अन्य शाखाएं खुलनी प्रारम्भ हो गई। सर्वप्रथम शाखा मुल्तान (पाकिस्तान में) में खुली। मुल्तान शहर के तीन मील की दूरी पर ताराकुण्ड के समीप 23 फरवरी सन् 1909 को गुरुकुल की मुल्तान शाखा की स्थापना हुई। यहाँ केवल विद्यालय विभाग तक रखा गया। उसमें वही पाठ्यक्रम था जो गुरुकुल कांगड़ी के विद्यालय-विभाग में था। मुल्तान गुरुकुल की विद्याधिकारी की परीक्षा गुरुकुल कांगड़ी में ही ली जाती थी। वहाँ के विद्याधिकारी परीक्षा

उत्तीर्ण छात्र यहाँ महाविद्यालय विभाग में प्रवेश लेते थे। मुल्तान के पश्चात् गुरुकुल की द्वितीय शाखा की स्थापना कुरुक्षेत्र में हुई। थानेश्वर के रईस लाला ज्योति प्रसाद ने कुरुक्षेत्र में गुरुकुल खोलने के लिए 1048 बीघा भूमि और 10,000 रुपये प्रदान किये थे। कुरुक्षेत्र में गुरुकुल की आधार शिला रखते हुए महात्मा मुंशीराम ने निम्नलिखित शब्द कहे थे- "आज से 5 हजार वर्ष पूर्व इसी कुरुक्षेत्र भूमि में आर्यावर्त के विनाश का बीज बोया गया था। इसी भूमि में आज आर्यावर्त की उन्नत्ति के लिए बीज बोया गया है। सन् 1912 में दिल्ली के एक समृद्ध व्यापारी सेठ रघुमल ने एक लाख रुपया इसलिए प्रदान किया था कि दिल्ली क्षेत्र में भी गुरुकुल की एक शाखा स्थापित की जाय। इसके लिए दिल्ली नगर से 10 मील दूर अरावली पर्वत के क्षेत्र में भूमि तय की गयी जिसमें इन्द्रप्रस्थ गुरुकुल की स्थापना हुई। सन् 1915 में हरियाणा में गुरुकुल की अन्य शाखाएं प्रारम्भ की गई। रोहतक जिले में मटिण्डु नामक ग्राम में गुरुकुल मटिण्डु नाम से शाखाएं प्रारम्भ की गई। रोहतक जिले में मटिण्डु नाम ग्राम में गुरुकुल मटिण्डु नामक से शाखा की स्थापना हुई। यह स्थान नहर के तट पर रमणीक स्थान पर स्थित है। चौधरी पीरुसिंह ने गुरुकुल मटिण्डु की स्थापना में महत्वपूर्ण योगदान किया। कुछ वर्ष पश्चात् गुजरात में गुरुकुल सूपा की गुरुकुल कांगड़ी की शाखा के रूप में स्थापना हुई। हरियाणा में गुरुकुल शिक्षा इतनी प्रसिद्ध हुई कि गुरुकुल झज्जर, गुरुकुल भैंसवाल, कन्या गुरुकुल खानपुर, गुरुकुल आर्यनगर हिसार, गुरुकुल घरौंड़ा आदि अनेक गुरुकुलों का जाल-सा बिछ गया।

सन् 1916 तक गुरुकुल ने एक लोकप्रिय आन्दोलन का रूप धारण कर लिया था। बिहार, उत्तर प्रदेश, महाराष्ट्र आदि अन्य प्रान्तों में गुरुकुल खुलने प्रारम्भ हो गये थे। इन सब प्रान्तों में अलग-अलग आर्य प्रतिनिधि सभायें थी। उन सभाओं ने अपने क्षेत्र में गुरुकुल की स्थापना की। गुरुकुल वृन्दावन आर्य प्रतिनिधि सभा उत्तर प्रदेश की स्वीकृति के अनुसार प्रारम्भ हुआ। गुरुकुल शिक्षा प्रणाली आर्य समाज के बाहर के क्षेत्रों में भी लोकप्रिय हुई। जिसमें सनातन धर्म के अनुयायियों ने हरिद्वार में ऋषिकुल की स्थापना की। जैनियों ने पंचकूला (चण्डीगढ़ के समीप) में जैन गुरुकुल की स्थापना की। इस प्रकार अनेक शिक्षण संस्थाओं की स्थापना गुरुकुल कांगड़ी को आदर्श मानकर प्राचीन भारतीय पद्धति के अनुसार स्थापित की। जिस गुरुकुल कांगड़ी की सन् 1902 में स्थापना हुई थी। वह सन् 1916 तक उन्नति के शिखर पर चढ़ता हुआ, अपनी लोकप्रियता को अर्जित करता हुआ अनेक प्राचीन भारतीय शिक्षण पद्धति की संस्थाओं को स्थापित करने का प्रेरणास्रोत बना। उस समय भारत में ऐसी शिक्षण संस्थाओं को राष्ट्रीय शिक्षण संस्था के रूप में अवलोकित किया जाता था। इन शिक्षण संस्थाओं में अध्ययन करने वाले विद्यार्थियों के मन, मस्तिष्क में भारतीय संस्कृति, धर्म व दर्शन को प्रारम्भ से ही कूट-कूट कर भरा जाता था। इन उच्च संस्कारों से सुसंस्कृत होकर निकलने वाले स्नातक अपने राष्ट्र के प्रति सजग एवं देश-प्रेम की भावना से ओत-प्रोत होते थे। यही कारण था कि राष्ट्रीय पुनर्जागरण में इन संस्थाओं के स्नातकों का महत्वपूर्ण योगदान रहा है।

भारत सरकार और गुरुकुल

लगभग गुरुकुल की स्थापना के साथ-साथ ही राष्ट्रीय स्वाधीनता के लिए अनेक आन्दोलन आरम्भ हो गये थे। इन आन्दोलनों में कई प्रकार की विचारधारा वाले आन्दोलन जोर पकड़ने लगे थे। अनेक क्रान्तिकारी भी देश को स्वतन्त्र कराने के लिए सक्रिय थे। बंग-भंग के पश्चात् इन आन्दोलनों ने उग्र रूप धारण कर लिया था। इण्डियन नेशनल कांग्रेस में गरम और नरम दो दल बन गये थे। 1907 में सूरत कांग्रेस अधिवेशन में गरम दल कांग्रेस से पृथक् हो गया था। इन आन्दोलनों का प्रभाव पंजाब पर भी स्वाभाविक रूप से पड़ता था। इन की तेजी के कारण सरकार का रुख भी सख्त हो रहा था। पंजाब में आर्य समाज

का प्रचार अधिक था इसलिए स्वतन्त्रता आन्दोलन वहाँ पर अधिक जोर पकड़ने लगा। महर्षि दयानन्द सरस्वती ने आर्याभिविनय में अनेकों बार आर्यों का चक्रवर्ती राज्य हो इस भावना का उल्लेख किया है। इससे आर्यसमाज विशेष रूप में स्वतन्त्रता आन्दोलन में बढ़चढ़कर भाग ले रहा था। महर्षि दयानन्द ने लिखा है कि- "कोई कितना ही करे परन्तु जो स्वदेशी राज्य होता है वही सर्वोत्तम होता है।" प्राचीन भारतीय गौरव का चित्र खींचते हुए महर्षि दयानन्द ने अपने अमर ग्रन्थ सत्यार्थप्रकाश में वर्तमान दुर्दशा का भी करुण चित्र खींचा था। उन्होंने भारतीयों को स्वराज्य और देश के लिए प्रेरणा दी थी। डॉ० एच.डी. ग्रीस ओल्ड के शब्दों में महर्षि यह चाहते थे कि "भारत में भारतीयों का अपना धर्म रहे और भारत की प्रभुसत्ता भारतीयों के ही हाथ में रहे।" जहाँ-जहाँ भी आर्य समाज का वार्षिक अधिवेशन तथा उत्सव होते थे उनमें आर्य समाज के भजनोपदेशक एवं प्रचारक आर्य समाज के सिद्धान्तों के साथ-साथ स्वदेशी राज्य और देश की उन्नति के लिए साधारण जनता को प्रेरणा देते थे। पंजाब में आर्य समाज ऐसी जीती जागती संस्था थी, क्योंकि उसके पास सैंकडो शिक्षण संस्थाएं थीं, उसके संस्थापक महर्षि दयानन्द ने कहा था कि विदेशी राज्य कितना ही अच्छा क्यों न हो, स्वदेशी राजा चाहें कितना ही बुरा क्यों न हो वह विदेशी राजा से अच्छा होता है। इसलिए अपनी शिक्षण संस्थाओं के माध्यम से आर्य समाज एक प्रकार से तत्कालीन सरकार का विरोध करते हुए उसके विरोध में साधारण जनता में जागृति पैदा कर रहा था। इसलिए यह स्वाभाविक ही था कि अंग्रेजी सरकार अपने विद्रोहियों के रूप में आर्य समाज को उत्तरदायी माने। इसी के परिणाम स्वरूप सरकारी अधिकारी यह मान्ने लगे कि आर्य समाज राजद्रोही है, इसलिए उन्हें सेना व प्रशासन में कोई स्थान नहीं देना चाहिए। अनेक आर्यसमाजियों को सरकारी सर्विस और सेना के बाहर कर दिया गया था, उनमें से बहुतो को गिरफ्तार करके उन पर राजद्रोज के मुकदमें चलाये गये। अक्टूबर सन् 1908 में पटियाला के 84 आर्यसमाजियों को गिरफ्तार कर लिया गया था, उनके विरूद्ध राजद्रोह का मुकद्मा प्रारम्भ किया गया। पंजाब के आर्यसमाज के उच्च नेता लाला लाजपत राय को भी गिरफ्तार किया गया। ऐसे समय में महात्मा मुंशीराम ने आर्यसभासदों को सरकार के प्रकोप से बचाने के लिए अद्भुत नेतृत्व प्रदर्शित किया। उन्होंने "सद्धर्मप्रचारक" में तथा अन्य पंजाब के प्रमुख समाचार पत्रों में आर्यसमाज के पक्ष में लेख लिखें। पटियाला के आर्य सभासदों के मुकद्में की पैरवी के लिए आर्य रक्षा समिति का गठन किया। लाला रोशन लाल और दीवान बद्रीदास सदृश प्रसिद्ध वकीलों के साथ महात्मा मुंशीराम पटियाला के न्यायालय में प्रस्तुत हुए और आर्य सभासदों को बचाने का पूर्ण प्रयास किया।

इन सब घटनाओं का यह परिणाम हुआ कि गुरूकल कांगड़ी पर सरकार की टेढ़ी नजर होनी प्रारम्भ हो गयी। गुरुकुल कांगड़ी आर्यसमाज की प्रमुख शिक्षण संस्था थी और साथ ही उसका संचालन पंजाब आर्य प्रतिनिधि सभा के हाथों में था। इसलिंए यह स्वाभाविक ही था कि सरकार का ध्यान गुरुकुल की ओर जाये। धीरे-धीरे सरकार को सन्देह होने लगा कि यह संस्था एक राजद्रोहियों का अड्डा है। सरकारी अधिकारियों की दृष्टि में गुरुकुल कांगड़ी एक रहस्य सा ही बना हुआ था। यह संस्था सघन और दुर्गम जंगल में स्थित है और इसमें एक भी अंग्रेज अध्यापक की नियुक्ति नहीं की गयी है। इसमें शिक्षा का माध्यम अंग्रेजी न होकर हिन्दी भाषा है, जिसकी अपनी ही पाठ्य पुस्तके थी और अलग ही अपनी स्वतन्त्र डिग्री (उपाधि) प्रदान की जाती थी। यह संस्था अपने खर्चे के लिए सरकार से किसी भी प्रकार की सहायता नहीं लेती है और जनता पर निर्भर रहकर उसी के दान पर यह संस्था चलती है। इन सब उपर्युक्त कारणों से सरकार के अधिकारी गुरुकुल पर निगाह रखने लगे। सरकार के गुप्तचर यह भेद लेने का प्रयास करने लगे कि आखिर यह संस्था क्या है? इसका उद्देश्य क्या है? और यहाँ कि गतिविधियाँ क्या-क्या है? लगभग 1910

में गुप्तचर विभाग ने सरकार के लिए गुरुकुल के सम्बन्ध में रिपोर्ट तैयार की जिसका सार यह था कि "अनन्त भयंकर और रहस्यमय खतरे का स्रोत (SOURCE OF INFINIT PRECARIOUS AND UNKNOWN DANGER) गुरुकुल है। इन रिपोर्टों के कुछ अंश इस प्रकार थे- पंजाब की पुलिस की रिपोर्टों में दर्ज है कि सन् 1899 में लाला मुंशीराम अमृतसर के पंडित रामभज दत्त के साथ गुजरात, स्यालकोट और गुजरांवाला में धन संग्रह कर रहे थे, तब उन्होंने सरकार की निन्दा शरारत भरे शब्दों में अन्य बातों के साथ यह कहते हुए की थी कि - ये सिपाही कितने मूर्ख है कि जो 17-18 रुपये पर भर्ती होकर अपना सिर कटवाते है। गुरुकुल में शिक्षित होने के बाद ऐसा करने वाले आदमी सरकार को नहीं मिलेगें।

"विचारणीय विषय यह है कि गुरुकुल से निकले हुए इन संन्यासियों का राजनीति से क्या सम्बन्ध रहेगा। इस सम्बन्ध में महाशय रामदेव की लिखी हुई गुरुकुल की एक रिपोर्ट की भूमिका बड़ी रोचक है। उसके अन्त में लिखा है कि गुरुकुल में दी जाने वाली शिक्षा सर्वांश रूप में राष्ट्रीय है। आर्य समाजियों का बाईबिल सत्यार्थप्रकाश है जो देशभक्ति के भावों से ओत-प्रोत है। गुरुकुल में इतिहास इस प्रकार पढ़ाया जाता है कि जिसमें ब्रह्मचारियों में देशभक्ति की भावना उद्दीप्त हो, उनमें उपदेश और उदाहरण दोनों से देश के लिए उत्कट प्रेम पैदा किया जाता है। इसमें कुछ भी सन्देह नहीं कि गुरुकुल में यत्नपूर्वक ऐसे राजनैतिक संन्यासियों का जाल तैयार किया जा रहा है जिसका मिशन सरकार के अस्तित्व के लिए भयानक संकट पैदा कर देगा।"

"गुरुकुल की दीवारों पर ऐसे चित्र लगे हुए है जिनमें अंग्रेजी राज से पहले के भारत की अवस्था और अंग्रेजों के कलकत्ता आने की अवस्था दिखाई गयी है। सन् 1857 के राजविद्रोह के चित्र भी लगाये है। बिजनौर के डिस्ट्रिक्ट मजिस्ट्रेट मिस्टर एफ. फौड ने जॉन आफ ऑर्क का भी एक बड़ा चित्र गुरुकुल में लगा देखा था जिसमें वे अंग्रेजों के विरुद्ध सेना का संचालन कर रही है।"

"इस पद्धति से (गुरुकुल शिक्षा प्रणाली से) जो युवक तैयार होंगे सरकार के लिए अत्यन्त भयानक होगें। उनमें वह शक्ति होगी जो आर्य समाज के इस समय के उपदेशकों में नहीं है। इनमें पैदा हुआ व्यक्तिगत दृढ़ विश्वास और अपने सिद्धान्त के लिए कष्ट सहन करने की भावना, अपितु समय आने पर प्राणों तक को न्यौच्छावर कर देना, साधारण जनता पर बहुत प्रभाव डालेगा। इससे उनकों अनायास ही ऐसे अनगिनत साथी मिल जायेगें जो उनके मार्ग का अवलम्बन करेगें और उनसे भी अधिक उत्साह से काम करेगें। यह याद रखना चाहिए कि उनका उद्देश्य सारे भारत में एक ऐसे जाति-धर्म की स्थापना करना होगा, जिससे सारे हिन्दू एक मातृत्व भाव की श्रृंखला में बंध जायेगें, ये सब दयानन्द के सत्यार्थप्रकाश के ग्याहरवें समुल्लास की इस आज्ञा का पालन करेगें कि श्रद्धा और प्रेम से अपने तन, मन, धन... सर्वस्व को देशहित के लिए अर्पण कर दो।"

गुरुकुल की स्थापना के लगभग 10 वर्ष पश्चात् उस समय की विदेशी सरकार गुरुकुल को किस दृष्टि से देख रही थी, वह गुप्तचर विभाग के उपर्युक्त आलेख से स्पष्ट प्रतीत हो रहा है कि गुरुकुल की शिक्षा से विद्यार्थियों में स्वदेश-प्रेम और राष्ट्रीय स्वाधीनता की भावनाएं उत्पन्न होती थी और धर्म तथा देश की सेवा के लिए प्रेरणा प्राप्त करते थे। परन्तु यह कहना कि गुरुकुल उस समय राजद्रोह का अड्डा था, यह गुरुकुल के साथ सर्वथा अन्याय था। वास्तव में उस समय गुरुकुल में सरकार के षड्यन्त्र के विरोध में कोई चीज पैदा नहीं हुई थी। गुरुकुल के सम्बन्ध में अपने पक्ष को सही करने में उन अंग्रेज तथा पाश्चात्य यात्रियों के लेखों से सरकार को बहुत सहायता मिली जो सन् 1910 के लगभग गुरुकुल शिक्षा प्रणाली से प्रभावित होकर उसके साक्षात् रूप का स्वयं अवलोकन करने के लिए कांगड़ी आने लगे थे।

गुरुकुल के इन पाश्चात्य दर्शको में मि० सी.एफ. एन्डूज प्रमुख थे। वे 1904 में भारत आये और दिल्ली के सैन्ट स्टीफैन्स कॉलेज में उन्होंने अध्यापन करना प्रारम्भ किया था। 1912 में उनका महात्मा मुंशीराम से परिचय हुआ था। 1913 में वे गुरुकुल में पधारे थे, गुरुकुल के सम्बन्ध में उन्होंने माडर्न रिव्यू (कलकत्ता) में एक लेख लिखा था, जिसकी कुछ पंक्तियों का सारांश निम्नलिखित था- "जिस भारत को मैं जानता था, जिस भारत से मैं प्रेम करता था, जो भारत मेरे स्वप्नों में था, वह मुझे यहाँ (गुरुकुल) देखने को मिला। मैंने अपने सम्मुख उस मातृभूमि को देखा जो न शोकातुर थी और न शान्त न कलान्त, जिसमें अनन्त-अनश्वर यौवन था।" मिस्टर एन्डूज गुरुकुल से इतने प्रभावित हुए थे कि अपने मित्र पिअर्सन के साथ उन्होंने गुरुकुल में निवास किया था। महात्मा मुंशीराम के वे घंनिष्ठ मित्र बन गये थे। उन दोनों में सौहार्दपूर्ण पत्र-व्यवहार होता रहता था। पाश्चात्य दर्शकों ने गुरुकुल को देखकर कुछ समय वहाँ बिताकर उसके विषय में कई लेख लिखे, उन सबमें गुरुकुल की अत्यधिक प्रशंसा की गयी थी। इनका वर्णन हम अन्य किसी अध्याय में करेगें। यहाँ यह वर्णन करने का अभिप्राय यह है कि जहाँ विदेशी सरकार का गुप्तचर विभाग गुरुकुल के विषय में अनर्गल एवं कल्पित रिपोर्टो को भेजता था, इन विदेशी पर्यटकों के लेखों से उन गुप्तचार विभाग की रिपोर्टो का प्रभाव कम हो जाता था। गुरुकुल के विषय में निष्पक्ष रूप में गम्भीरता से यथार्थता का पता लगाने का विचार भारत सरकार का बनने लगा था। मि० एन्डूज भारत सरकार के तत्कालीन वायसराय कार्ल हॉन्ड्रीज तथा संयुक्त प्रान्त (उत्तर प्रदेश) के लेफ्टिनेन्ट गवर्नर सरजेम्स मेस्टन से अच्छी प्रकार परिचित थे। उनमें परस्पर घनिष्ठ सम्बन्ध भी था। वे मि० एन्डूज की सम्मति से बहुत प्रभावित हुए।

गुरुकुल के विषय में गुप्तचर विभाग की रिपोर्ट तथा विदेशी पर्यटकों के द्वारा लिखे गये लेखों में गुरुकुल की प्रशंसा की गयी थी इसलिए सरकार के रुख को निश्चित करने के लिए लेफ्टिनेंट गर्वनर सर जेम्स मेस्टन 6 मार्च 1913 को गुरुकुल में पधारे। गुरुकुल के अधिकारियों एवं छात्रों ने उनका उत्साहपूर्वक स्वागत किया और अभिनन्दन पत्र भी उनको प्रस्तुत किया गया। उसका उत्तर देते हुए सर मेस्टन ने कहा कि मैं यहाँ आकर आश्चर्य चकित रह गया हूँ कि "न केवल संयुक्त प्रान्त में ही अपितु सम्पूर्ण भारत में शिक्षा के क्षेत्र में जो भी परीक्षण किये गये है, गुरुकुल उनमें सबसे अधिक मौलिक एवं महत्वपूर्ण है।" राजनीति के साथ गुरुकुल के सम्बन्ध की चर्चा करते हुए उन्होंने कहा- "मैं उस समुदाय से मिलना चाहता था जिसे सरकारी रिपोर्टो में अत्यन्त भयंकर और अज्ञात खतरे का स्रोत कहा जाता है। उनका सबसे उत्तम उत्तर मेरा यहाँ आना ही है। सर्वाधिक आश्चर्यपूर्ण, दिलचस्प एवं भावोत्तेजक संस्थाओं में से एक का अवलोकन कर मुझे अत्यधिक लाभ हुआ है।... इस संस्था में जहाँ राजनीति है ही नहीं, मैं राजनीतिक पहलू पर कुछ नहीं कहूंगा।" यह अत्यधिक आश्चर्य की बात थी कि सर जेम्स मेंस्टन 19 फरवरी 1914 को पुनः गुरुकुल में आये और गुरुकुल का पुनः अवलोकन किया और कहा कि "मैं गुरुकुल को देखकर और यहाँ के कार्यकर्त्ताओं की त्याग तथा सेवा की भावना इसके साथ ही शिक्षा तथा प्रबन्ध की व्यवस्था, ब्रह्मचारियों के अनुपम स्वास्थ्य को देखकर अत्यधिक प्रभावित हुआ हूँ। उन्होंने कहा- "एक आदर्श विश्वविद्यालय की मेरी कल्पना गुरुकुल में मूर्त रूप लिये हुए है।" सर जेम्स मेस्टन के पहली बार गुरुकुल में आने के बाद संयुक्त प्रान्त की विधान परिषद् में रायबहादुर बाबू गंगाप्रसाद ने लेफ्टिनेन्ट गवर्नर महोदय की गुरुकुल यात्रा की चर्चा करते हुए कहा था कि मैं श्रीमान् को उस राजनीतिज्ञतापूर्ण और साहसिक कार्य करने के लिए बधाई देना चाहता हूँ जो आपने उन देशभक्त शिक्षकों को दर्शन देकर किया है, जो महात्मा मुंशीराम के नेतृत्व तथा संरक्षता में राष्ट्रीय ढ़ंग की शिक्षा के क्षेत्र में अलौकिक परीक्षण कर रहे है और

जिन्होंने पश्चिम की अच्छाईयों को पूर्वी आदर्शों के साथ मिलाकर एक कर दिया है। मैं श्रीमान् के गुरुकुल पधारने को इसलिए साहसपूर्ण कहता हूँ क्योंकि मुझे यह मालूम है कि इस प्रान्त के अधिकतर ऑफिसर झूठी और स्वार्थपूर्ण रिपोर्टों के आधार पर आपके हृदय में यह सन्देह पैदा कर रहे थे कि गुरुकुल भारत के शान्त विकास में विध्न पैदा करने वाले लोगों को उत्पन्न करने में लगा है। आप के गुरुकुल के पधारने और यहाँ की गयी घोषणा से आशा है कि ऐसे लोगों के विचार गुरुकुल के सम्बन्ध में बदल जायेंगे। आप ने उन लोगों को सचमुच प्रोत्साहन दिया है जो जनता की नैतिक और आध्यात्मिक उन्नति में लगे है। इससे वे लोग गवर्नमेन्ट के अधिकं समीप आ जायेंगे, जिनके हृदय अपनी मातृभूमि को फिर से पुरातन गौरव प्राप्त किया देखना चाहते है।" गुरुकुल की चर्चा सरकारी क्षेत्र में बढ़ गयी क्योंकि लेफ्टिनेन्ट गर्वनर सर जैम्स मिस्टन गुरुकुल में दो बार आये और उन्होंने इस संस्था को एक आदर्श विश्वविद्यालय के रूप में प्रस्तुत किया इससे देश-विदेश के विद्वान् एवं शिक्षा-शास्त्री भी इस निराले ढंग की राष्ट्रीय शिक्षा संस्था की ओर आकर्षित होने लगे और जो भी इस संस्था में आता वह प्रशंसा करके ही वापिस लौटता था। इंग्लैंड से जो प्रमुख व्यक्ति गुरुकुल में आयें उनमें इंग्लैण्ड के "ट्रेड यूनियन आन्दोलन" के नेता मिस्टर सिडनी वैब तथा ब्रिटिश लेबर पार्टी के नेता (जो बाद में इंग्लैण्ड के प्रधानमंत्री भी बने) मिस्टर रॉमजे मेक्डानॉल्ड के नाम उल्लेखनीय हैं। इंग्लैण्ड लौटकर मिस्टर मैक्डॉनाल्ड ने डेली क्रानिकल" में अपनी भारत-यात्रा के सम्बन्ध में जो लेख लिखा था उसके कुछ अंश इस प्रकार थे- "भारत में जो राजद्रोह के सम्बन्ध में जिन्होंने कुछ थोड़ा भी पढ़ा है उन्होंने गुरुकुल का नाम अवश्य सुना होगा। जहाँ के आर्य सामाजियों के बालक शिक्षा ग्रहण करते है। यहाँ कि आर्यों की भावना और सिद्धान्तों का यह अत्यन्त उत्कृष्ट पूर्ण रूप है। इस उन्नतिशील धार्मिक संस्था आर्य समाज के सम्बन्ध में जितने भी सन्देह किये जाते है वे सब इस गुरुकुल पर लाद दिये गये है इसलिए सरकार की इस पर टेड़ी नज़र है। पुलिस ऑफिसरों ने इस पर गुप्त रिपोर्टें की है और अधिकांश एग्लों इन्डियन लोगों ने इसकी निन्दा की है।... सरकारी लोगों के लिए गुरुकुल एक पहेली है। अध्यापकों में एक भी अंग्रेज नहीं है। अंग्रेजी साहित्य की पढ़ाई और उच्चशिक्षा के लिए पंजाब यूनिवर्सिटी की परीक्षाओं के लिए यहाँ से किसी भी विद्यार्थी को नहीं भेजा जाता है और विद्यार्थी को अपनी ही डिग्रियां दी जाती है। यह सरकार की ओर से अवज्ञा हैं घबराये हुए सरकारी अधिकारी के मुंह से इसके लिए पहली बात यही निंकलेगी कि यह स्पष्ट राजद्रोह है। परन्तु गुरुकुल के विषय में यह अन्तिम राय नहीं हो सकती। सन् 1835 के प्रसिद्ध लेख में भारत की शिक्षा के सम्बन्ध में मैकाले द्वारा विचार प्रकट करने के पश्चात् भारत में शिक्षा के क्षेत्र में यह पहला ही प्रशस्त प्रयत्न किया गया है। उस लेख के परिणामों में प्रायः सभी भारतवासी असन्तुष्ट है परन्तु जहाँ तक मुझे मालूम है, गुरुकुल के संस्थापकों के सिवा किसी और ने उस असन्तोष को कार्य में परिणत करते हुए शिक्षा के क्षेत्र में नया परीक्षण नहीं किया। मैं स्वप्न में किसी क़ो यह कहते हुए सुन रहा हूँ कि हम केवल यह चाहते है कि शान्ति से हमें ईश्वर का भजन करने दो। क्या यही राजद्रोह है ?"

इंग्लैण्ड के प्रसिद्ध पत्र "न्यू सटैस्मैन" में 2. जून 1914 को आर्यसमाज के सम्बन्ध में एक लेख प्रकाशित हुआ था। उसमें गुरुकुल के विषय में लिखी गयी निम्नलिखित पंक्तियाँ ध्यान देने योग्य है- "भारतीय दृष्टि से इस संस्था की सबसे महत्वपूर्ण विशेषता जात-पांत के भेद-भाव को मिटाना है। उसके तीन सौ बालकों में ब्राह्मण से लेकर मेहता तक सभी जातियों के बालक है, सबका एक सा जीवन, एक रहन-सहन है। जात-पांत का भेद भारत में खूब गहरी जडें पकड़े हुए है। पश्चिम की शिक्षा और आदर्शों के सहारे भी उसकी जड़ों को खोद सकना कठिन हैं। परन्तु यहाँ गुरुकुल में उसकी जड़े बड़ी सफलता

के साथ काट दी गयी है। पश्चिम के नाम पर उसके अनुकरण में नहीं परन्तु पूर्व के पुराने और उत्कृष्ट आदर्शों को पुनः जीवित करने की दृष्टि से आर्यसमाज के शिक्षा के कार्य का यह नमूना और शिक्षा का यह कार्य उस महान् आर्यसमाज का एक छोटा-सा कार्य है। जो आर्य समाज उत्तर भारत में कर रहा है, उससे आध्यात्मिकता तथा नैतिकता से प्रायः विरहित प्रतिभा शून्य अधिकारी एकाएक घबरा जाते है वे उसमें राजद्रोह का सन्देह करने के आदि हो गयें हैं।"

महात्मा गाँधी का गुरुकुल में आगमन

मिस्टर एन्ड्रूज द्वारा महात्मा मुंशीराम का गाँधी से परिचय हुआ। जिस समय 1913 व 14 में गाँधी दक्षिण अफ्रीका में थे वहाँ रंगभेद के विरोध में सत्याग्रह के आन्दोलन का संचालन कर रहे थे। भारत में श्री गोपालकृष्ण गोखले महात्मा गाँधी की सहायता कर रहे थे। श्री गोपाल कृष्ण गोखले ने इस सत्याग्रह एवं आन्दोलन के लिए भारतवासियों से धन की अपील की थी। उस अपील को जानकर गुरुकुल में एक उत्साह और भावना पैदा हुई। गुरुकुल के ब्रह्मचारियों ने अपने घी-दूध छोड़कर उससे जो बचत हुई, वह धनराशि सत्याग्रह फन्ड में भेज दी। उन दिनों हरिद्वार के गँगा पर एक बाँध बनाया ज़ा रहा था जिसे दूधिया बाँध कहते थे। गुरुकुल के ब्रह्मचारी उस बाँध पर मजदूरी करने के लिये गये, वहाँ से जो 1500 रुपये मजदूरी करके मिले। वे भी सत्याग्रह फन्ड में भेज दिये गये। इस राशि को प्राप्त कर श्री गोखले ने महात्मा मुंशीराम को 27 नवम्बर 1913 को एक पत्र भेजा, जिसमें उन्होंने लिखा था- "मुझे मिस्टर एन्डूज और पंडित हरिश्चन्द्र ने बताया है कि गुरुकुल के ब्रह्मचारी किस प्रकार अपना घी-दूध छोड़कर और साधारण कुलियों और मजदूरों की तरह मजदूरी करके दक्षिण अफ्रीका के सत्याग्रह के लिए रुपया एकत्र कर रहे है, दिल हिला देने वाले इस देशभक्ति पूर्ण कार्यों के लिये मैं उनको क्या धन्यवाद दूं ? ... भारत माता की सेवा के लिए त्याग और श्रद्धा का जो आदर्श उन्होंने देश के युवको तथा वृद्धों के सम्मुख उपस्थित किया है, उनकी अन्तःकरण से प्रशंसा किये बिना मैं नहीं रह सकता।" महात्मा गाँधी को भी जब गुरुकुल के ब्रह्मचारियों की इस भावना और त्याग का पता चला तो वे अत्यधिक प्रभावित हुए। यहीं कारण था कि 1915 में अप्रैल मास में गाँधी जी हरिद्वार में आये और गुरुकुल में महात्मा मुंशीराम से मिलकर गुरुकुल का निरीक्षण किया, वे गुरुकुल की व्यवस्था उसकी आश्रम पद्धति और महात्मा मुंशीराम के व्यक्तित्व से अत्यधिक प्रभावित हुए। गुरुकुल परिसर में गाँधी जी के सम्मान में जो अभिनंदन-पत्र प्रदान किया गया उसकी कुछ पंक्तियां इस प्रकार थी- "मातृभूमि के वस्त्र फटे हुए है, दिन प्रतिदिन उसे कृशता घेर रही है, शरीर कांटों से छिदा हुआ है, रुधिर बह रहा है, ऐसे समय में आप की ओर स्नेह और आशा से देख रही है। आप ही दूसरी जातियों में उसका मुख उज्ज्वल करने वाले है, आप स्वाधीनता के दिव्य मंत्रों से दीक्षित है, जातीयता की नौका के कर्णधार, देशभक्तों के सर्वस्व है, इस कुल में पूजनीय अतिथि है।" वास्तव में गुरुकुल में आने का मुख्य कारण गाँधी जी का यही था कि गाँधी अफ्रीका के "फोनिक्स आश्रम" के विद्यार्थियों के साथ भारत आये थे। अहमदाबाद में वे आश्रम खोलने का विचार कर रहे थे। आश्रम खुलने तक उन्होंने अपने विद्यार्थियों के लिए सर्वोत्तम स्थान गुरुकुल कांगड़ी को ही समझा और फोनिक्स आश्रम के विद्यार्थी गुरुकुल में ही रहे। इस सम्बन्ध में यह भी कहा जाता है कि उस समय गाँधी को मिस्टर गाँधी कहा जाता था। महात्मा मुंशीराम ने गुरुकुल परिसर में उन्होंने सम्बोधन में मिस्टर गाँधी को संभवतः पहली बार "महात्मा" विशेषण लगा कर महात्मा गाँधी के नाम से सम्बोधित किया।

गुरुकुल का वातावरण उस समय आध्यात्मिकता के साथ-साथ राष्ट्रीयता और देशभक्ति से ओत-प्रोत था। उस समय गुरुकुल के ब्रह्मचारी और अध्यापक भारत भूमि की दुर्दशा को किस तरह अनुभव करते

थे, यह समझने के लिए महात्मा गांधी को दिये गये अभिनन्दन से स्पष्ट प्रकट होता है। वास्तव में उस समय गुरुकुल उन अर्थों में राजद्रोही नहीं था जिन अर्थों में किसी देश के कर्मचारी माने जाते हैं जो सशस्त्र क्रान्तियों में विश्वास रखा करते हैं। इसलिए गुप्तचर विभाग के अनेक प्रकार के सन्देह प्रकट करने पर भी गुरुकुल सरकार के खिलाफ किसी षड़यन्त्र का केन्द्र नहीं था। परन्तु गुरुकुल में धार्मिक, सांस्कृतिक और राजनीतिक शक्ति के जो बीज बोये जा रहे थे उनके परिणाम स्वरूप गुरुकुल का वातावरण इस रूप में अवश्य विकसित हो रहा था जो किसी देश के नागरिक को यह विचार करने का मौलिक अधिकार होता है कि अपना धर्म, अपनी संस्कृति और अपना राजा हो। इन सब का वर्णन महर्षि दयानन्द ने अपने सत्यार्थप्रकाश तथा अन्य ग्रन्थों में किया था। वह विचारधारा विकसित होकर पूर्ण वृक्ष के रूप में अवश्य बढ़ने लगी थी। इसलिए सरकारी अफसरों की यह भूल थी कि यहाँ गुरुकुल में कोई गुप्त रूप से शस्त्र आदि बनाने का षड्यन्त्र होता था।

गुरुकुल में वायसराय का पदार्पण

उस समय के तत्कालीन गवर्नर जनरल वायसराय लार्ड चेम्स फोर्ड भी 26 अक्टूबर 1916 को गुरुकुल में आये। उनकी कॉउन्सिल के अनेक सदस्य, संयुक्त प्रान्त के लेफ्टिनेंट गवर्नर सर जेम्स मेस्टन और बहुत से सरकारी उच्च अधिकारी और बहुत से अन्य कर्मचारी भी उनके साथ थे। वायसराय महोदय तथा अन्य सरकारी अतिथियों का स्वागत समारोह गुरुकुल के अधिकारियों तथा ब्रह्मचारियों ने हृदय से किया। वायसराय महोदय का अभिनन्दन संस्कृत के श्लोकों द्वारा किया गया। उनके जलपान के लिए तुलसी की चाय, दूध-पकौड़े और भारतीय मिठाइयों की व्यवस्था की गयी। यह बड़े आश्चर्य की बात है कि गुरुकुल को स्थापित हुए केवल 16 वर्ष के पश्चात् ही भारत के सर्वोच्च राज पदाधिकारी ने अपने दल-बल के साथ गुरुकुल में आना पसन्द किया। इससे स्पष्ट प्रतीत होता है कि गुरुकुल के इस अल्पकालीन इतिहास में कुछ अवश्य ऐसे आध्यात्मिक रहस्य छिपे हुए थे कि ब्रिटिश सरकार का सर्वोच्चाधिकरी गुरुकुल में विनीत भाव से आया। उस समय के गुरुकुल के अधिकारियों का मनोबल कितना ऊंचा रहा होगा कि उन्होंने स्वागत के लिए अपनी भारतीय परम्पराओं का त्याग नहीं किया। सबसे महत्वपूर्ण बात यह थी कि उस समय उनकी सुरक्षा का प्रबन्ध करना कोई सामान्य बात नहीं थी, क्योंकि वह समय प्रथम विश्व युद्ध का था और क्रान्तिकारी आन्दोलन भी देश में जोर पकड़ रहे थे। उस समय में भी महात्मा मुंशीराम ने उन सरकारी अतिथियों की सुरक्षा का उत्तरदायित्व अपने ऊपर ले लिया था। महात्मा मुंशीराम ने सरकारी सैनिक, सिपाही तथा पुलिस को गुरुकुल परिसर में प्रवेश करने की अनुमति नहीं दी थी। वास्तव में महात्मा मुंशीराम को अपने आत्मिक बल और ब्रह्मचारियों के अनुशासित जीवन पर पूर्ण विश्वास था।

वास्तव में 1913 से 1916 तक जो ब्रिटिश सरकार के उच्च सरकारी अधिकारी गुरुकुल में आते-जाते रहे, इसका मुख्य कारण प्रथम विश्व युद्ध ही रहा होगा। क्योंकि आर्य समाज स्वतन्त्रता आन्दोलन में बढ़चढ़कर भाग ले रहा था। आर्य समाज द्वारा संचालित गुरुकुल कांगड़ी जो कि वन खण्ड में विद्यमान था, इसलिए सरकार द्वारा गुरुकुल पर नज़र रखना स्वाभाविक ही था, परन्तु सरकार ने अन्ततः यह समझ लिया था कि गुरुकुल में ऐसी कोई गतिविधि नहीं है जिसे गैरकानूनी कहा जा सकता था। इसलिए अंग्रेज सरकार को यह विश्वास हो गया कि गुरुकुल देश के पुनर्जीवन तथा उसके अन्दर शक्ति संचार के लिए प्रयास कर रहा है, जिसे अनुचित कहना गलत होगा। उस समय सरकार द्वारा यह नीति अपनायी गयी कि गुरुकुल को भी सरकार का सहायक बना लिया जाय और सरकारी अधिकारियों द्वारा यह संकेत दिये जाने लगे कि गुरुकुल को सरकारी अनुदान प्राप्त हो सकता था परन्तु उस समय गुरुकुल के अधिकारियों ने

सरकारी अनुदान लेना स्वीकार नहीं किया। महात्मा मुंशीराम के सरकारी अनुदान के विषय में वे वाक्य ज्ञातव्य है कि “अपने जन्म दिन से अब तक गुरुकुल नौकरशाही के जाल से बचा हुआ अपना कार्य करता आया है, इसके संचालकों को क्या-क्या प्रलोभन नहीं दिये गये ? जिन सुनहरी जंजीरों को जातियता का अभिमान करने वाले अन्य शिक्षणालयों ने बड़ी खुशी से पहन लिया है, मन लुभाने वाली वे जंजीरे न जाने कितनी बार उनके सामने पेश की गयी, परमेश्वर ने उनको ऐसी दासता से बचने के लिए बुद्धि दी। “वस्तुतः महात्मा मुंशीराम गुरुकुल को एक ऐसे स्वतन्त्र विश्वविद्यालय के रूप में विकसित कर रहे थे अथवा स्वप्न ले रहे थे जो पूर्णरूपेण सरकारी तन्त्र से मुक्त हो। क्योंकि वे महर्षि दयानन्द सरस्वती द्वारा प्रतिपादित शिक्षा पद्धति को ही क्रियान्वित करना चाहते थे।

महात्मा मुंशीराम का गुरुकुल को राष्ट्रीय विश्वविद्यालय बनाने का स्वप्न

महात्मा मुंशीराम एक चित्रकार की तरह गुरुकुल कांगड़ी को एक ऐसा संस्थान एवं राष्ट्रीय विश्वविद्यालय का रूप देना चाहते थे जिसका पूर्ण चित्र उनकी संकल्पना में संकल्पित होता था जैसे कि जब एक चित्रकार कोई विशिष्ट चित्र बनाता है तो उसको सबसे पहले रेखांकित करता है फिर उसको भावों की अभिव्यक्ति, कला की अभिव्यक्ति अथवा किसी इतिहास की पृष्ठभूमि को लेकर उसको मूर्त रूप प्रदान करता है। इसी प्रकार महात्मा मुंशीराम गुरुकुल कांगड़ी को एक राष्ट्रीय विश्वविद्यालय का स्वरूप निर्मित करने का उस सम्बन्ध में स्वप्न देखने तथा उसको मूर्तरूप देने का प्रयास कर रहे थे। सर्वप्रथम तो उन्होंने यह किया कि गुरुकुल कांगड़ी के स्थान पर गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय लिखना प्रारम्भ कर दिया। उनका यह विचार था कि इसमें संस्कृत, वेद, वेदाङ्ग तथा साथ में आधुनिक ज्ञान विज्ञान की शिक्षा की पढ़ाई का जो प्रबन्ध चल रहा था, उसके साथ निरुक्त, निघण्टु, मनुस्मृति, षड्दर्शन ऐतरीय शतपथ आदि ब्राह्मण, आयुर्वेद, धनुर्वेद, गन्धर्ववेद, पदार्थ विज्ञान, शिल्प विद्या, ज्योतिष शास्त्र, बीज गणित, भूगोल, खगोल, भूगर्भ विद्या, यन्त्र कला और हस्तकला आदि जितनी भी विश्व में विद्याएं जो आधुनिक यूरोप में अन्य नवीन विद्याएं प्रचलित हो रही है, उन समस्त विद्याओं का प्रबन्ध इस गुरुकुल कांगड़ी राष्ट्रीय विश्वविद्यालय में हो। इस सब विद्याओं का वर्णन महर्षि दयानन्द सरस्वती ने अपने ग्रन्थ सत्यार्थ प्रकाश के तीसरे समुल्लास में किया है। इस समय विश्वविद्यालय की परिभाषा मान्यता प्राप्त यूनिवर्सिटी या विश्वविद्यालय के रूप में नहीं की जाती थी अपितु विश्व के समस्त विषयों का जिस संस्था में अध्ययन-अध्यापन हो, वह विश्वविद्यालय माना जाता था। यह बात वे भी समझते थे कि गुरुकुल के सभी स्नातक उपदेशक नहीं बन सकते है, उपदेश देने का कार्य ब्राह्मणों का हैं और सभी के लिए ब्राह्मण बनना संभव नहीं हैं। गुरुकुल में जो बालक शिक्षा प्राप्त करने के लिए प्रविष्ट होंगे, उनकी प्रवृत्तियां तथा स्वभाव एवं योग्यता भिन्न-भिन्न प्रकार की होगी। उनमें से कुछ ब्राह्मण स्वभाव एवं प्रवृत्ति के हो सकते है। बहुत से क्षत्रिय और वैश्य प्रवृत्ति के होंगे। इसलिए इस राष्ट्रीय विश्वविद्यालय में शिक्षा की व्यवस्था इस रूप में होनी चाहिए कि सभी प्रकार की प्रवृत्तियों के बालक अपनी अन्तर्निहीत शक्तियों का विकास करते हुए ऐसे विषयों के भी पठन-पाठन करें जो उनके भावी जीवन के लिए तथा संसारिक आवश्यकताओं को पूर्ण करने के लिए व्यावहारिक हो। इस विचार को मूर्त रूप देना तभी सम्भव था जब गुरुकुल में कृषि, शिल्प और आयुर्वेद आदि के पठन-पाठन की समुचित व्यवस्था की जाए। इस दृष्टि से माहात्मा मुंशीराम ने गुरुकुल को भावी विशाल रूप प्रदान करने हेतु 25 लाख रुपये की स्थिर निधि बनाने की अपील की। उन्होंने इस योजना के लिए अनेक पत्र-पत्रिकाओं में अपने विचार अभिव्यक्त किये। उनके इस विशाल उद्देश्य की पूर्ति के लिए एक विस्तृत योजना के रूप में यह विचार प्रस्तुत किया कि कृषि-विभाग के लिए 2 लाख, शिल्प व कला के लिए 2 लाख आयुर्वेद

के लिए 4 लाख, इन विभाग व विभागों के भवनों के लिए 2 लाख रूपये खर्च होंगे। उनकी दृष्टि में यह भी आवश्यक था कि गुरुकुल में 80 ब्रह्मचारी ऐसे भी प्रविष्ट किये जाए, जिनसे भोजन वस्त्र आदि का खर्चा भी न लिया जाय। इस व्यवस्था के लिए उन्होंने 4 लाख रूपये का प्रस्ताव किया। उनकी दृष्टि में यह भी आवश्यक था कि कुछ स्नातकों को उच्चतम शिक्षा प्राप्त करने के लिए विदेश भेजा जाय ताकि वहाँ से लौटकर गुरुकुल में अध्यापन के स्तर को ऊंचा कर सकें। उनकी इच्छा थी कि महाविद्यालय विभाग को गुरुकुल से सर्वथा पृथक् स्थान पर रखना चाहिए। इस गुरुकुल संस्था को राष्ट्रीय विश्वविद्यालय बनाने के लिए उन्होंने यह भी इच्छा अभिव्यक्त की कि विभिन्न विभाग की शिक्षा प्राप्त कर ब्रह्मचारी महाविद्यालय विभाग में प्रवेश लिया करें। ताकि गुरुकुल विश्वविद्यालय में छात्रों की न्यूनता न रहे। इस सब कार्यों के लिए महात्मा मुंशीरमा ने 25 लाख रुपये का अनुमान किया था। उनकी यह तीव्र इच्छा थी कि गुरुकुल शिक्षा प्रणाली से अधिक से अधिक बालकों को लाभान्वित होना चाहिए। इसके लिए उन्होंने लिखा था कि– "यदि मेरे पास 75 लाख रुपया हो तो गुरुकुल की सौ शाखाएं तुरन्त खोल सकता हूँ।"

यह संसार का नियम है कि जो युगद्रष्टा होते है उनके स्वप्न प्रायः पूरे नहीं हुआ करते। यही सब कुछ महात्मा मुंशीराम के साथ भी घटित हुआ। पंजाब आर्य प्रतिनिधि सभा के अनेक नेता गुरुकुल को एक डिविनिटी कॉलेज बनाना चाहते थे जिससे आर्य समाज के उपदेशकों की आवश्यकता पूरी हो सके। उस समय आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के अधिकारियों को राष्ट्रीय विश्वविद्यालय बनाने की बात समझ में नहीं आती थी। महाशय् कृष्ण इन आर्य नेताओं में प्रमुख रूप में थे और आर्य प्रतिनिधि सभा के मंत्री भी थे। उनके पास "प्रकाश" नामक पत्र भी था जो उसके द्वारा अपने विचारों को समाचारों के रूप में आर्य जनता के समस्त सशक्त रूप में पहुंचा सकते थे, गुरुकुल के उपाचार्य श्री रामदेव के विचार भी महाशय कृष्ण से मिलते थे। वहाँ के अन्य अनेक पदाधिकारी महात्मा मुंशीराम के विचारों को अव्यावहारिक मानते थे। ऐसी विषम और दारुण परिस्थिति महात्मा मुंशीराम के सामने खड़ी हो गयी, आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब में उनके प्रति क़ड़ा विरोध प्रारम्भ हो गया। महाशय कृष्ण प्रत्येक वार्षिकोत्सव पर उनके विरुद्ध कुछ न कुछ लिख देते थे। कई बार उनके स्वास्थ्य की चिन्ता अभिव्यक्त करते हुए लिखा करते थे, जिसका उद्देश्य था कि वे गुरुकुल से विदा हो जाए।

महात्मा मुंशीराम द्वारा संन्यास ग्रहण

जो कि हम उल्लेख कर चुके है कि उनके स्वप्नों का राष्ट्रीय विश्वविद्यालय बनने में गुरुकुल की स्वामिनी सभा व्यवधान डालती रही, इसलिए अन्त में उन्होंने एक दिन संध्या करने के पश्चात् अचानक यह निर्णय लिया कि गुरुकुल से त्यागपत्र देकर संन्यास आश्रम में प्रवेश किया जाय। उस समय आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के प्रधान लाला रामकृष्ण थे। महात्मा मुंशीराम ने अपने निर्णय से (10 ज्येष्ठ संवत् 1972, सन् 1915 को) सभा के प्रधान लाला रामकृष्ण को सूचित कर दिया। इस विषय में दोनों के मध्य पत्र-व्यवहार होता रहा। लाला रामकृष्ण महात्मा मुंशीराम जी से अनुरोध करते रहे कि अभी आप गुरुकुल में रहे परन्तु उन्होंने अपना निर्णय नहीं बदला। 30 मार्च 1917 के पत्र में उन्होंने लिखा कि यदि आप सचमुच मेरे शरीर का भला चाहते है तो मुझे यह संकल्प पूरा करने दे। महात्मा मुंशीराम के मन की स्थिति का विवरण प्रस्तुत करते हुए डॉ॰ सत्यकेतु विद्यालंकार ने आर्य समाज के इतिहास के तीसरे भाग पृष्ठ 204 पर लिखा है कि "ऐसी इच्छा मेरी इसलिए उत्पन्न हुई कि जो कष्ट और कठिनाइयां मुझे महाशय कृष्ण-मंत्री, मास्टर रामदेव-उपाध्यक्ष और लाला नन्दलाल-सहायक मुख्याधिष्ठाता की कृपा से उठानी पड़ी हैं, उनको भूल कर आप मेरी निवृत्ति के मार्ग में क्यों रोड़ा अटकाते हैं ? मैं तो अब शरीर क़ा नाश

कर चुका, मुझे तो यही अभीष्ट था कि चुपचाप किसी एकान्त स्थान में रहकर धर्म ग्रन्थों पर विचार करता। ... वर्षों से गुरुकुल में मैं कुछ भी काम नहीं कर सका हूँ। और मेरा यहाँ बैठना निरर्थक है। मैंने इसलिए कि मेरे मार्ग में विध्न डालने वाले और मेरे पग-पग पर रुकावट डालने वाले, काम के अयोग्य न हो जावे, एक भी शब्द लिखकर पब्लिश नहीं किया, ऐसी अवस्थाओं में मेरे लिए श्रेय मार्ग वहीं है, जहाँ मैं विश्वासघाती और मित्र-द्रोहियों की क्रियाओं को भूलकर उनके लिए भी परमात्मा के कल्याण की प्रार्थना कर सकूं।" महात्मा मुंशीराम ने यह पत्र कितने दुःख व निराशा से लिखा था, इसके शब्दों से स्पष्ट प्रतीत होता है। यह स्वीकार कर सकना तो कठिन है कि आचार्य रामदेव, लाला नन्दलाल और सभा मंत्री महाशय कृष्ण को महात्मा जी से कोई व्यक्तिगत विरोध था। इससे यही प्रकट होता है कि महात्मा मुंशीराम जिस राष्ट्रीय विद्यालय को बनाने का अपना स्वप्न पूर्ण करना चाहते थे, उसमें गुरुकुल के अधिकारी व सभा के अधिकारी उनका विरोध करते थे। परन्तु उस समय कुल मिलाकर ऐसी परिस्थिति उत्पन्न हुई कि उनके राष्ट्रीय विश्वविद्यालय बनाने का स्वप्न पूर्ण नहीं हो सकता था, सभा के अधिकारी उस समय यह भी समझते थे कि उनके स्वप्न को पूर्ण करना सभा की शक्ति के बाहर है।

12 अप्रैल 1917 के दिन महात्मा मुंशीराम ने संन्यास आश्रम में प्रवेश किया। उनका नाम स्वामी श्रद्धानन्द रखा गया। उन्होंने संन्यास धारण करते समय ये शब्द प्रकट किये थे कि- "श्रद्धा से ही प्रेरित होकर आज तक के इस जीवन को मैंने पूर्ण किया है। श्रद्धा मेरे जीवन की आराध्य देवी है। अब भी श्रद्धा भाव से प्रेरित होकर ही मैं संन्यास आश्रम में प्रवेश कर रहा हूँ। इसलिए इस यज्ञकुण्ड की अग्नि को साक्षी रखकर मैं अपना नाम श्रद्धानन्द रखता हूँ।"

महात्मा मुंशीराम से स्वामी श्रद्धानन्द के स्वरूप में संन्यास धारण करके महान् संन्यासी स्वामी श्रद्धानन्द के रूप में होने का वर्णन बहुत ही विचित्र रूप में परिणत हुआ था। डॉ॰ रणजीत सिंह ने उनके संन्यास आश्रम में प्रवेश के विषय में लिखते हुए कहा है कि- "गुरुकुल का पन्द्रहवां (1917 ई॰) वार्षिकोत्सव कुलभूमि में धूमधाम और दौड़-धूप, जहाँ 20 से 25 हजार लोगों की उपस्थिति जिधर देखों, उधर महात्मा जी के संन्यास लेने की चर्चा और परिचर्चा। सारा उत्सव संन्यास के रंगों में रंगा हुआ, गुरुकुल का यह उत्सव विगत वर्षों से कुछ हट कर था। जब महात्मा मुंशीराम उत्सव में बोलने के लिए खड़े हुए तो लोगों ने अनुमान लगाया कि वे गुरुकुल की रिपोर्ट प्रस्तुत करेंगे, परन्तु उन्होंने बार्षिक रिपोर्ट प्रस्तुत नहीं की और गुरुकुल के लिए धन की अपील कर डाली। उनके संन्यास लेने से पूर्व आर्य जनता की ओर से एक मान-पत्र भेंट किया गया, जिसमें इस प्रकार लिखा था- "आर्य जाति के हृदय सम्राट्! आज आप सम्राट् से भी ऊंचे परिब्राट् के सिंहासन पर अधिरोहण करने लगे हैं। आज जो पुष्पांजलि लेकर आप की सेवा में आये है वह आंसुओं से भीगी हैं। यद्यपि हम जानते है कि जहाँ आप अब तक आर्य जाति के हृदयों पर उस अधिकार से शासन करते थे, जो आर्य जाति ने स्वयं आपको आप के गुणों से मुग्ध हो, आप के गले में पहनाया था, वहाँ आप इस अधिकार से शासन करेंगे, जिसके लिए आप केवल परमसाक्षी के आगे उत्तरदाता है। तो भी हृदय द्रवित होऐ बिना नहीं रहता।"

"श्रीमन् आर्य जाति आज इतना बताना चाहती है कि जहाँ अब तक आप की सेवा के लिए धन, समय और प्रेम का दान करने में दरिद्र नहीं हुई, आज इस विदाई और मिलाप के विलक्षण संगम में वह अपने एक सच्चे पुत्र पर शब्दों की वर्षा करने में भी दरिद्र नहीं है, यदि है तो केवल इसलिए कि हृदय भरा हुआ है, केवल इसलिए कि आप की कीर्तिगान करने के लिए शब्द उचित साधन नहीं हैं।"

"भारत का विशेषत: पंजाब का कौन-सा कोना है, जो आप के ओजस्वी नाद से न गूंजा हो, जिसमें आप के वैदिक धर्म, ऋषि दयानन्द और आर्य जाति के प्रति अगाध प्रेम का कोई न कोई स्मारक न हो, जिसमें आप के उस अपूर्व त्याग का कोई न कोई दृश्य उपस्थित न हो, जिसके कि एक जीते-उदाहरण इस गुरुकुल में आज हम उपस्थित है। इस कार्य के लिए सबसे अच्छा स्थान हम नहीं चुन सकते थे। इन भावों से भूमि में हम सम्राट् को विदाई देते है और परिब्राट् के चरणों में सिर झुकाते है। राजन् ! मंगल संकल्प पूर्ण हो, भगवन् ! आप हमें आशीर्वाद दे, आचार्य दयानन्द का महायज्ञ पूर्ण हो ।"[1]

-वंशवद आर्य जाति

महात्मा मुंशीराम ने इस मान-पत्र के लिए आर्य जनता का धन्यवाद किया तथा इसके साथ ही चतुर्थ आश्रम में कर्त्तव्यों के पालन के लिए आशीर्वाद मांगा। 11 अप्रैल 1917 को प्रात: ब्रह्म मूहुर्त में उठकर नित्यकर्मों से निवृत्त होकर पीत वस्त्र अपने कन्धे पर डाले, हाथ में ऊंचा दण्ड लिये और पेरों में खड़ाऊं पहने महात्मा मुंशीराम गुरुकुल की बैलगाड़ी में बैठने लगे तो उत्सव में आये हुए बहुत से व्यक्ति उच्च स्वर में बोल उठे-

कबिरा खड़ा बाजार में लिये लुकाटी हाथ ।
जो घर फूंके अपना सो चले हमारे साथ ।।
जमाना उसके कदमों में झुका देता है सर अपना ।
जो दुनियां में तो रहते है, पर उससे है बेगाना ।।
उसने कदम बढ़ाये जब मकसद की ओर ।
राह में काफिला खुद ही बढ़ता गया ।।

हरिद्वार और कनखल के मध्य स्थित मायापुर वाटिका में महात्मा मुंशीराम का संन्यासी रूप धारण करते हुए अवलोकन करने के लिए अथाह जन-समूह उपस्थित था। आर्य समाज के तत्कालीन वरिष्ठ संन्यासी स्वामी सत्यानन्द की अध्यक्षता में 12 अप्रैल 1917 के प्रात:काल सूर्योदय के साथ संन्यास आश्रम में प्रवेश संस्कार आरम्भ हुआ। संस्कार अर्द्धविधि के बाद सिर के वेश दाढ़ी और मूंछ मुंड़वाई गयी। संन्यासी के वस्त्र धारण किये महात्मा जी यज्ञ मण्डप में आये। उस समय उनके इस रूप को देखकर समस्त दर्शकों की आंखें प्रेम और प्रसन्नता से द्रवित हो गयी। आर्य समाज के क्षेत्र में उस सुधारवादी रूप में पहचाने जाने वाले मुंशीराम ने संन्यास दीक्षा के गुरु की परम्परा को तोड़कर परमपिता परमात्मा को अपना गुरु मानकर गुरु द्वारा की जाने वाले प्रक्रिया स्वयं ही कर ली। जैसा कि हम इसी प्रसंग में लिख आये है कि उन्होंने श्रद्धा से अपना नाम श्रद्धानन्द रख लिया। जहाँ उन्होंने गुरु परम्परा को तोड़ा वहाँ उन्होंने श्रद्धानन्द नाम के साथ दण्डी या सरस्वती आदि नाम लगाना उचित नहीं समझा।

संन्यास लेकर स्वामी श्रद्धानन्द के गुरुकुल से चले जाने के पश्चात् पंजाब आर्य प्रतिनिधि सभा के प्रधान लाला रामकृष्ण को गुरुकुल का मुख्याधिष्ठाता नियुक्त किया गया और उनकी स्थिति यह नहीं थी कि वे जालन्धर को छोड़कर गुरुकुल में आकर रह सके इसलिए उनके प्रतिनिधि के रूप में अपना कार्यकारी मुख्याधिष्ठाता के रूप में प्रो॰ सुधाकर को यह कार्य सौंपा गया। जो गुरुकुल महाविद्यालय विभाग में पाश्चात्य दर्शन के प्राध्यापक थे। प्रो॰ रामदेव को जो पहले से ही गुरुकुल के उपाचार्य थे, उन्हें आचार्य पद पर नियुक्त किया गय। गुरुकुल में कार्य करते हुए उन्हें ग्यारह वर्ष हो चुके थे जो इस संस्था की कार्यपद्धति से पूर्णरूप में परिचित थे।

पंजाब आर्य प्रतिनिधि के अधिकारी यह चाहते थे कि स्वामी श्रद्धानन्द की छत्र-छाया गुरुकुल पर किसी न किसी रूप में बनी रहे, वे इस आर्य संस्था का पूर्ववत् संचालन करते रहे। परन्तु संन्यासी हो जाने के पश्चात् स्वामी जी का कार्य क्षेत्र बहुत व्यापक हो गया था। सन् 1918 में गढ़वाल में भयंकर दुर्भिक्ष पड़ा था, स्वामी जी ने अपनी पूरी शक्ति के साथ दुर्भिक्ष-पीड़ितों की सहायता के लिए कार्य किया था। सन् 1919 में स्वतन्त्रता आन्दोलन बहुत अधिक जोर पकड़ गया था। इसलिए चहुंमुखी प्रतिभा के धनी स्वामी श्रद्धानन्द अपने आप को राजनीति से अलग नहीं रख पाये। यह वह युग था जिस समय अमृतसर में जलियांवाला काण्ड हो चुका था। रोलेट एक्ट के विरोध में सम्पूर्ण देश में घोर आन्दोलन चल रहा था। स्वामी श्रद्धानन्द ने इस आन्दोलन में बढ़चढ़ कर भाग लिया। इसलिए ही दिसम्बर 1919 में कांग्रेस का अधिवेशन अमृतसर में होना निश्चित हुआ। उसमें स्वागत कार्यकारिणी सभा के अध्यक्ष के रूप में स्वामी श्रद्धानन्द जी को चुना गया। उन्होंने कांग्रेस के इस वार्षिक अधिवेशन में स्वागत भाषण दिया वह स्वागत भाषण हिन्दी में था। सम्भवत: यह पहला अवसर था जब इन्डियन नेशनल कांग्रेस के वार्षिक अधिवेशन के अवसर पर स्वागत भाषण हिन्दी में हुआ हो। और उन्होंने अपना भाषण वेद मन्त्रों से प्रारम्भ किया था।

स्वामी श्रद्धानन्द का पुनः गुरुकुल में आगमन

गुरुकुल कांगड़ी में कुछ इस प्रकार की परिस्थिति उत्पन्न हुई, कि स्वामी श्रद्धानन्द राजनीति में बहुत समय तक नहीं रह सके और उनको विवश होकर पुनः गुरुकुल में आना पड़ा। बार-बार गुरुकुल के हितैषी व्यक्ति उनसे यह प्रार्थना करते रहे कि आप गुरुकुल कांगड़ी में पुनः आयें और वहाँ अपना संरक्षण प्रदान करें।

सन् 1919 में रॉलेट एक्ट के विरुद्ध भारत में जो आन्दोलन महात्मा गाँधी के नेतृत्व में प्रारम्भ हुआ था, उसके कारण देश में चारों ओर राष्ट्रीय भावना और देशभक्ति से समस्त जन मानस ओत-प्रोत हो गया था। इसलिए सभी क्षेत्रों में साधारण जनता का ध्यान राष्ट्रीयता की भावना से ओत-प्रोत होकर राष्ट्रीय शिक्षा की ओर आकृष्ट होने लगा था। उस समय गुरुकुल कांगड़ी के सम्बन्ध में जो लेख देश-विदेश के विद्वानों द्वारा लिखे जा रहे थे, उनको पढ़कर भारतीय जनता की दृष्टि में गुरुकुल का महत्व बहुत अधिक बढ़ने लग गया था। यह बहुत महत्वपूर्ण बात थी कि एक आर्य समाज के संन्यासी को कांग्रेस के अमृतसर अधिवेशन पर स्वागताध्यक्ष चुना गया। रॉलेट एक्ट के विरुद्ध आन्दोलन में उन्होंने महात्मा गाँधी का बहुत साथ दिया था, इसलिए महात्मा गाँधी की दृष्टि में भी स्वामी श्रद्धानन्द का बहुत सम्मान हो गया था। वस्तुतः स्वामी श्रद्धानन्द आर्यसमाज के ही नेता नहीं थे अपितु देश के राष्ट्रीय नेताओं में उनकी गिनती की जाती थी। इन सब परिस्थितियों के बाद पंजाब आर्य प्रतिनिधि सभाके पदाधिकारियों ने यह अनुभव किया कि गुरुकुल में स्वामी जी का रहना परम आवश्यक है स्वामी जी के मार्गदर्शन तथा संचालन में ही यह संस्था समुचित उन्नति कर सकती है। इसलिए वे स्वामी जी से पुनः गुरुकुल का भार संभालने के लिए प्रार्थना करने लगे। उनके गुरुकुल आने में कोई वैधानिक एवं कानूनी रुकावट न हो इसलिए लालारामकृष्ण ने मुख्याधिष्ठाता पद से और प्रो० रामदेव ने आचार्य पद से त्याग-पत्र दे दिया। इनके त्यागपत्रों को स्वीकृत करते हुए आर्य प्रतिनिधि सभा की अन्तरंग सभा ने 25 माघ संवत् 1976 (सन् 1919) को यह प्रस्ताव स्वीकार किया-

"वर्तमान अवस्था में इस सभा की सम्मति में श्री स्वामी श्रद्धानन्द ही पूर्ण योग्यता से इस कार्य का संपादन कर सकते है। इसलिए यह सभा सर्वसम्मति से नम्रता पूर्वक प्रार्थना करती है कि वे पूर्ववत् इस

कार्य को सम्भालने की कृपा करें। सभा उनको गुरुकुल का आचार्य और मुखाधिष्ठाता नियत करती है। स्वामी के वही अधिकार होंगे जो उन दिनों में थे जब वे गुरुकुल के आचार्य एवं मुख्याधिष्ठाता थे। चूंकि स्वामी जी की शारीरिक अवस्था इस योग्य नहीं कि वे अन्तरंग सभा के प्रत्येक सभा में सम्मिलित हो सके। इसलिए यह निश्चय हुआ कि गुरुकुल प्रबन्ध सम्बन्धी समस्त अधिकार प्रधान सभा श्री विश्वंभरनाथ को प्राप्त होंगे।"

सभा द्वारा यह प्रस्ताव स्वीकार करने के बाद स्वामी श्रद्धानन्द 11 फरवरी 1920 में पुनः गुरुकुल में आ गये। गुरुकुल को पुनः सम्भालने के लिए स्वामी जी ने सभा के अधिकारियों के सम्मुख कुछ शर्ते रखी थीं, उनमें से कुछ मुख्य शर्ते इस प्रकार थीं-

1. गुरुकुल की प्रबन्ध व्यवस्था तथा पाठविधि में जो परिवर्तन परीक्षण के लिये किये जाएं उनमें दो वर्ष तक सभा कोई हस्तक्षेप न करें।
2. गुरुकुल के धन को अलग से ब्याज पर रखा जाये।
3. गुरुकुल के प्रिटिंग प्रेस के लिए 10,000 रुपयें स्वीकृत किये जाये।
4. गुरुकुल में कृषि, उद्योग एवं व्यापार की शिक्षा के लिए पृथक् विभाग तथा महाविद्यालय खोलने की स्पष्ट अनुमति दी जाये।

स्वतन्त्र राष्ट्रीय विश्वविद्यालय के रूप में गुरुकुल कांगड़ी "गुरुकुल की नयी व्यवस्था"

स्वामी श्रद्धानन्द की उपर्युक्त शर्तों को देखकर के यह स्पष्ट हो जाता है कि स्वामी जी के सम्मुख गुरुकुल को एक बहु उद्देश्यीय राष्ट्रीय विश्वविद्यालय के रूप में विकसित करने की योजना थी। इसी योजना को क्रियान्वित करने के लिए गुरुकुल का आचार्य एवं मुख्याधिष्ठाता बनना स्वीकार किया होगा। पंजाब आर्य प्रतिनिधि सभा ने अपनी अंतरंग सभा में स्वामी श्रद्धानन्द को पुनः आचार्य एवं मुख्याधिष्ठाता पद पर नियुक्त करने का जो प्रस्ताव पारित किया था उससे भी यह द्योतित होता है कि सभा स्वामी जी को उनकी इच्छा के अनुसार गुरुकुल के प्रबन्ध एवं संचालन के लिए उनके मत से सहमत थी। गुरुकुल में आकर स्वामी जी ने सबसे पूर्व गुरुकुल के प्रकाशन एवं प्रेस को सुव्यवस्थित करने पर अपना ध्यान केन्द्रित किया। इसलिए उन्होंने सर्वप्रथम "श्रद्धा" नाम के एक साप्ताहिक पत्र का प्रकाशन प्रारम्भ किया। 23 जुलाई 1920 के "श्रद्धा" के अंक में "भारतवासियों पर गुरुकुल के अधिकार" शीर्षक से एक लेख लिखा गया। इस लेख में स्वामी जी ने लिखा कि गुरुकुलको तत्काल 20 लाख रुपये की आवश्यकता है। इसलिए यह संकल्प किया गया था कि इस राशि को एकत्र करने के लिए स्वामी जी भारत और वर्मा का दौरा करेंगे। एक मास बाद "श्रद्धा" में उन्होंने "गुरुकुल कांगड़ी की वर्तमान दशा" शीर्षक से एक अन्य लेख लिखा जिस लेख का कुछ सारांश इस प्रकार है- "आज ही मैं गुरुकुल के लिए स्थिर राशि एकत्र करने के उद्देश्य से कुलभूमि से बाहर जा रहा हूँ। ... वहाँ से बम्बई टिक कर काम करुँगा। बम्बई से लौटकर गुरुकुल में कुछ दिन बिता ब्रह्मदेश से लौट कर पंजाब के ग्राम-ग्राम और नगर-नगर में घूमने का संकल्प है। पंजाब की जनता में गुरुकुल के लिए असीम प्रेम है। गुरुकुल कांगड़ी ने देवियों के हृदय में विशेष स्थान बना लिया है। यदि आज से ही वे मुझे भिक्षा देने की तैयारी करने लग जाये तो आश्चर्य नहीं कि 5-6 लाख रूपये पंजाब से ही एकत्र हो जाय।" इन दिनों स्वामी जी का स्वास्थ्य प्रायः ठीक नही रहता था इसलिए स्वास्थ्य ठीक न रहने के कारण स्वामी जी अपनी यात्रा पूरी न कर सके। परन्तु फिर भी 60 हजार रूपये गुरुकुल के लिए एकत्रित करके ले ही आये जिससे आयुर्वेद और कृषि के लिए दो प्राध्यापकों

की स्थिर पीठों (चेयरस) की व्यवस्था हो गयी। यद्यपि स्वामी जी अपनी विशाल योजना को क्रियान्वित करने के लिए पूर्ण रूपेण धन एकत्रित करने में सफल नहीं हुए थे तो भी कृषि और आयुर्वेद सदृश जिन विषयों की शिक्षा का उनकी दृष्टि में बहुत महत्व था, उनके लिए धन एकत्रित करने में उन्हें अवश्य सफलता प्राप्त हो गयी थी।

गुरुकुल के स्वरूप एवं उसकी व्यवस्था के विषय में स्वामी जी और महाशय कृष्ण तथा उनके साथियों में जो पहले से ही मतभेद थे वे अब पुनः प्रकट होने प्रारम्भ हो गये। स्वामी जी जिन दिनों स्थिर कोष के लिए धन एकत्रित करने के उद्देश्य से भारत और वर्मा की यात्रा कर रहे थे। उन्हीं दिनों में महाशय कृष्ण ने अपने पत्र प्रकाश में कई लेख लिखे। उन लेखों में यह बात उठाई गयी थी कि गुरुकुल के उद्देश्यों को निर्धारित करना परम आवश्यक है, जिससे यह ध्वनित होता था कि गुरुकुल के उद्देश्य अभी तक निश्चित नहीं है। इसलिए उन्होंने लिखा कि किसी भावी योजना को प्रस्तावित करने से पूर्व यह सुनिश्चित कर लिया जाय कि गुरुकुल की स्थापना क्यों की गयी थी ? जिस मतभेद एवं विवाद का उल्लेख हम पहले ही कर आये है जो डिवीनिटी कॉलेज या विश्वविद्यालय के रूप में उत्पन्न हुआ था वह पुनः मतभेद उभर कर सम्मुख आ गया। इसलिए स्वामी जी यह अनुभव करने लगे कि सभा उनके कार्यों में व्यवधान पैदा कर रही हैं। अतः उन्होंने 10 जून 1920 को सभा मंत्री के नाम एक पत्र में लिखा कि- "गुरुकुल का कार्यभार पुनः सम्भालने से पहले मुझे यद्यपि उन कठिनाइयों का पता लग जाता, जो मेरे मार्ग में आ चुकी है। तो फिर मैं काम सम्भालने का साहस न करता। परन्तु जब एक बार बोझ उठा चुका हूँ तो किसी मंजिल तक उसे पहुंचाने का यत्न करूंगा ।" गुरुकुल कांगड़ी की स्थापना से लेकर प्रारम्भ से ही गुरुकुल के स्वरूप, उद्देश्यों के सम्बन्ध में मतभेद चले आ रहे थे। वे मतभेद इस समय उग्र रूप में उभर कर प्रकट होने लगे। इस सब समस्याओं को देखते हुए आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब ने 22 मार्च 1921 को अपनी अन्तरंग सभा में सभी मूल-भूत मतभेदों को दूर करने के लिए विभिन्न दृष्टिकोणों का समन्वय करते हुए निम्नलिखित प्रस्ताव स्वीकारा:-

1. शिक्षा सम्बन्धी क्षमता को बढ़ाने के लिए आवश्यक प्रतीत होता है कि वर्तमान गुरुकुल को एक ऐसे विश्वविद्यालय के रूप में परिणित किया जाय जिसमें भिन्न-भिन्न विषयों की शिक्षा दी जा सके। इसलिए यह निश्चय हुआ कि इस विश्वविद्यालय के साथ निम्नलिखित महाविद्यालय सम्बन्धित होंगे- (क) वेद महाविद्यालय, (ख) साधारण महाविद्यालय, (ग) आयुर्वेद महाविद्यालय, (घ) कृषि महाविद्यालय, (ड) व्यवसाय महाविद्यालय।
2. संख्या (क) और (ख) का गुरुकुल में पहले से परस्पर सम्बन्ध अधिक रहा है। अब ऐसे उचित परिवर्तन के पश्चात् कांगड़ी में पृथक्-पृथक् चलाये जाये। उनका वार्षिक व्यय विद्यालय के ऊपर लगभग बराबर हुआ करें। अब तक एकत्रित धन या सम्पत्ति था जो आगे प्राप्त हो उन्हीं के लिए अर्पित रहेगा।, जिसका नाम गुरुकुल धन होगा। सिवाय उसके जो किसी विशेष कार्य के लिए प्राप्त हो।
3. संख्या (ग), (घ), (ङ) महाविद्यालय उनके सम्बन्धी उचित धन प्राप्त होने पर प्रारम्भ किये जाने पर प्रारम्भ किए जायेगे, जब यह धन सभा संचित धन और स्थान आदि का विचार करके आज्ञा दें।
4. सब विद्यालय जो, सभा की ओर से या सभा की आज्ञानुसार गुरुकुल के नाम से खुले हुए हो या खोले जाये, संख्या (ख) महाविद्यालय से सम्बन्धित होंगे।

5. (ग), (घ), (ङ) महाविद्यालय कांगड़ी से बाहर खोले जाये उनमें गुरुकुल विद्यालय और अन्य विद्यालयों के छात्र अन्तरंग सभा के बनाये नियमों के अनुसार प्रविष्ट होंगे।
6. आयुर्वेद और कृषि महाविद्यालयों के पृथक्-पृथक् खुलने तक इन विषयों की जो पढ़ाई अब तक होती है, वह केवल विशेष विषय के रूप में ही साधारण महाविद्यालय में होती रहेगी। परन्तु अनिवार्य विषयों में इन विद्यार्थियों की योग्यता का स्तर कम न हो और इनको कोई पृथक् प्रमाण-पत्र भी नहीं दिया जायेगा। इन विषयों पर वही धन व्यय होगा जो उसके लिए प्राप्त होवे। गुरुकुल के धन में से जो वार्षिक व्यय अब तक होता है वह दस वर्ष 10 प्रतिशत के हिसाब से कम करके बन्द किया जायेगा।
7. इन सब की पाठ विधि और प्रबन्ध के नियम अन्तरंग सभा बनायेगी।
8. इस विश्वविद्यालय के प्रबन्ध आदि के लिए एक विद्या सभा बनाई जाये। तब तक अन्तरंग सभा कार्य करेगी।" -

पंजाब आर्य प्रतिनिधि सभा द्वारा स्वीकार किया गया वह प्रस्ताव गुरुकुल की भावी प्रगति के लिए अत्यधिक महत्वपूर्ण था। वास्तव में यह एक प्रयास था कि चिरकाल से मतभेद चला आ रहा था उसे दूर किया जा सके और दोनों पक्षों को भी स्वीकार्य हो, इन प्रस्तावों से यह भी ध्वनित होता है कि गुरुकुल का मुख्य महाविद्यालय वेद महाविद्यालय को माना गया। लाला रलाराम के हस्ताक्षरों से प्रकाशित गुरुकुल की प्रथम नियमावली में इसी को वेद-विभाग कहा गया था। इसमें वेदों के अध्ययन को प्रमुख स्थान दिया गया था। इस महाविद्यालय के विद्यार्थियों को वैकल्पिक विषय के रूप में वेद-वेङ्गांग का विशिष्ट अध्ययन करना पड़ता था। साधारण महाविद्यालय को वेदमहाविद्यालय के संयुक्त रखा गया था क्योंकि इनमें विद्यार्थी वैकल्पिक विषय के रूप में इतिहास, रसायन, पाश्चात्य दर्शन आदि आधुनिक ज्ञान-विज्ञान के विषयों में से किसी एक को चुन सकते थे। संस्कृत, वेद, दर्शन आदि की पढ़ाई उनके लिए भी अनिवार्य थी। ठीक उसी स्तर की, जैसे कि वेद महाविद्यालय के छात्रों की थी। गुरुकुल की प्रथम नियमावली में इसी महाविद्यालय को गौण विभाग के रूप में कहा गया था। अब तक कृषि, आयुर्वेद भी इतिहास, रसायन आदि के समान पर्याय विषय थे। अब ये निश्चय हुआ कि इनका अध्यापन वेद महाविद्यालय और साधारण महाविद्यालय में न होकर इन्हीं के लिए पृथक् महाविद्यालयों में हो। परन्तु अब तक इन दोनों विषयों के महाविद्यालयों की स्थापना नहीं हुई थी। इसलिए उस समय तक विषयों का अध्ययन पूर्ववत् साधारण विद्यालयों में होता रहा। व्यवसाय महाविद्यालय (INDUSTRIAL COLLAGE) को भी अलग से स्थापित करने का निर्णय सभा द्वारा लिया जा चुका था। परन्तु इन तीनों महाविद्यालयों के लिए जो बातें तय की गयी थी, वे अत्यन्त महत्वपूर्ण थी-

1. इन महाविद्यालय को कांगड़ी में न रखकर अन्यत्र रखा जाय।
2. इनमें ऐसे विद्यार्थी भी प्रवेश पा सकेंगे जिन्होंने विद्यालय विभाग की शिक्षा गुरुकुल के छात्रावास में ब्रह्मचर्य पूर्वक रहकर प्राप्त न की हो अर्थात् जिनकी शिक्षा अन्य विद्यालयों में भी हुई हो।
3. इन तीनों महाविद्यालयों पर केवल वही धन व्यय किया जाये जिन्हें इन्हीं के लिए एकत्र किया हो, गुरुकुल की निधि में जो धन हो या जो भविष्य में प्राप्त होगा उस धन को इन महाविद्यालयों के लिए खर्च न किया जाय। अतः इन पर गुरुकुल निधि से जो खर्च किया जाता रहा है, उस

पर प्रति वर्ष 10 प्रतिशत की कमी कर दी जाय और इस प्रकार 10 वर्षों के बाद इन विषयों पर गुरुकुल निधि से कोई भी पैसा खर्च न किया जाय।

पंजाब आर्य प्रतिनिधि सभा ने मार्च 1921 में जो यह प्रस्ताव स्वीकार हुआ था यदि उसको अविकल रूप में क्रियान्वित किया होता तो गुरुकुल सच्चे अर्थों में एक विश्वविद्यालय का रूप धारण कर लेता। इस अवस्था में गुरुकुल कांगड़ी के परिसर में केवल गुरुकुल विद्यालय, वेद महाविद्यालय और साधारण महाविद्यालय ही स्थित रहते । इनमें केवल ब्रह्मचारी ही शिक्षा प्राप्त करते जिनका प्रवेश सात या 8 साल की आयु में विद्यालय विभाग में हुआ था। वे निरन्तर वहाँ पर ब्रह्मचर्य पूर्वक अनुशासित जीवन बिताते रहे हो। इस प्रकार गुरुकुल कांगड़ी का वातावरण पूर्ण रूपेण आचार्य कुलों, आश्रमों और आरणयक मुनियों के आश्रमों के सदृश होता और उसमें पठन-पाठन के उन्हीं मूल तत्वों का परिपालन किया जाता जिनका उद्देश्य एवं प्रतिपादन महर्षि दयानन्द ने अपने ग्रन्थों में किया था। परन्तु गुरुकुल कांगड़ी की शिक्षा प्रणाली के व्यापक क्षेत्र के रूप में अधिक लाभों को प्राप्त करने की दृष्टि से यह अपेक्षा की गयी कि उन छात्रों को भी जिनकी वेद-वेङ्गांग आदि में रूचि नहीं थी उनको भी उस प्रकार की शिक्षा देने का प्रयास किया गया। इसका अन्ततः दुष्परिणाम यह हुआ कि गुरुकुल कांग़ड़ी की स्थिति इधर चलूं या उधर चलूं जैसी हो गयी। गुरुकुल का शुद्ध वातावरण दूषित न हो इसलिए ही सभा में कृषि महाविद्यालय और आयुर्वेद महाविद्यालयों आदि की स्थापना का निर्णय लेते हुए यह स्पष्ट कर दिया था कि इन महाविद्यालयों की स्थापना गुरुकुल कांगड़ी के परिसर में नहीं की जायेगी।

स्वामी श्रद्धानन्द ने सभा के इस प्रस्ताव का स्वागत किया। 15 फाल्गुन संवत् 1877 (सन् 1920) के श्रद्धा के अंक में इस प्रस्ताव पर अपने विचार प्रकट करते हुए लिखा था कि "यह परिवर्तन देखने में सामान्य परिवर्तन लगते हैं परन्तु वस्तुतः इनसे गुरुकुल का रूप ही बदल जायेगा। इससे अनेक परिणाम उत्पन्न होंगे। एक तो यह कि गुरुकुल सर्वमान्य प्रजा के लि़ए उपयोगी हो सकेगा और दूसरा यह कि विश्वविद्यालय के जुदा होने से, वैदिक अनुशीलन और आर्य सिद्धान्त की ओर विशेष ध्यान दिया जा सकेगा। इससे दोनों प्रकार की सम्मतियां रखने वाले लोगों का उद्देश्य सिद्ध हो जायेगा। गुरुकुल के मौलिक दोनों उद्देश्य भिन्न-भिन्न प्रबन्ध में परन्तु एक ही विद्यासभा के निरीक्षण में पूर्ण होते जायेंगे। यह जान कर आर्य जनता को और भी तसल्ली होगी कि अन्तरंग सभा का यह भी विचार ज्ञात हुआ है कि प्रस्तावित विश्वविद्यालय का केन्द्र कांगड़ी में ही रहेगा। इस प्रस्ताव को स्वीकार करने में अन्तरंग सभा ने बड़ी बुद्धिमत्ता से काम लिया है।"

स्वामी श्रद्धानन्द और स्वतन्त्रता आन्दोलन

एक प्रसिद्ध कहावत है कि "मनुष्य एवं संस्थाएं सोचती कुछ है और हो कुछ ओर जाता है।" उपर्युक्त प्रस्ताव सभा द्वारा स्वीकृत हो जाने के पश्चात् गुरुकुल कांगड़ी के स्वतन्त्र विश्वविद्यालय के रूप में वैसी ही कल्पना पूर्ण हो सकती थी.जैसा कि मनु महाराज ने अपने उद्घोष में कहा है कि-

एतद्देश प्रसूतस्य सकाशादग्रजन्मनः।
स्वं स्वं चरित्रं शिक्षेरन् पृथिव्यां सर्वमानवाः।।

अर्थात् भारत वह देश है जो आदि काल से ही समस्त विद्याओं एवं चरित्रों के शिक्षण एवं अध्यापन के केन्द्र के रूप में विश्व की समस्त मानव जाति के आकर्षण का कारण बनता रहा है। इसी प्रकार गुरुकुल कांगड़ी के संस्थापक स्वामी श्रद्धानन्द जी ने भी सम्भवतः अपने सम्मुख यह आदर्श रखते हुए

संकल्पना की होगी कि विद्या का एक ऐसा केन्द्र बनाया जाय जो एकांगी ही नहीं अपितु विश्व की प्राय: समस्त विद्याओं का केन्द्र बन सके। उनके इस स्वप्न को पूर्ण होने का समय आ गया था। परन्तु विधाता को सम्भवत: यह स्वीकार नहीं था। उपर्युक्त प्रस्ताव के स्वीकृत हो जाने के पश्चात् गुरुकुल का संचालन स्वामी श्रद्धानन्द के हाथों में यदि रहता तो वे अपनी सब शक्ति तथा समय इस प्रस्ताव को क्रियान्वित करने के लिए तथा गुरुकुल को एक विश्वविद्यालय के रूप में विकसित करने में लगा सकते थे। परन्तु गुरुकुल के भाग्य में तो कुछ और ही था क्योंकि सभा नेताओं एवं कार्यकत्ताओं का सहयोग तो प्राप्त होने लगा था। सन् 1920 में भारतीय स्वतन्त्रता आन्दोलन जोर पकड़ने लगा था। महात्मा गाँधी द्वारा संचालित असहयोग आन्दोलन की धूम सारे देश में मच गयी थी। गाँधी जी ने देश के सम्मुख छ: मास में स्वराज प्राप्त करने का कार्यक्रम प्रस्तुत किया था, जिसके कारण जनता में एक अद्‌भुत राष्ट्रीय चेतना का उदय हो गया था। स्वामी श्रद्धानन्द इस समय केवल गुरुकुल कांगड़ी के और पंजाब के ही नेता नहीं रहे थे अपितु वे एक राष्ट्रीय नेता के रूप में विख्यात् हो गये थे इसलिए महात्मा गाँधी के इस स्वतन्त्रता आन्दोलन से अपने आप को पृथक् नहीं रख पाये और इसलिए उन्होंने इस राष्ट्रीय आन्दोलन में सक्रिय सहयोग प्रदान किया। इसी कारण उनके लिए केवल गुरुकुल कांगड़ी में ही रहना सम्भव नहीं था। उस समय की परिस्थिति के अनुसार भारतीय स्वतन्त्रता आन्दोलन में नेतृत्व करना उचित समझा, सम्भवत: उनके मन में यह रहा होगा कि संस्था से राष्ट्र बड़ा है इसलिए उन्होंने सभा प्रधान को अपने निर्णय की सूचना देते हुए- लिखा था कि "इस समय मेरी सम्मति में असहयोग की व्यवस्था के क्रियात्मक प्रचार पर ही मातृभूमि का भविष्य निर्भर है। यदि यह आन्दोलन अकृत कार्य हुआ और महात्मा गाँधी को सहायता न मिली तो देश की स्वतन्त्रता का प्रश्न पचास वर्ष पीछे जा पड़ेगा। इसलिए मैं इस काम में शीध्र ही लग जाऊँगा। यदि आप की सम्मति में इसमें लगने के लिए मुझे गुरुकुल या आर्यसमाज के काम से अलग हो जाना चाहिए तो जैसा आप तजवीज करेगें, मैं पब्लिक में भेज दूगां। मैं इस कार्य से रुक नहीं सकता। मुझे यह काम इस समय सर्वोपरि दीखता है।" स्वामी जी ने यह पत्र 25 सितम्बर 1920 को लिखा था वे इस पत्र के तुरन्त बाद गुरुकुल से नहीं गये। असहयोग आन्दोलन में सक्रिय भाग लेते हुए भी गुरुकुल का संचालन भी करते रहे। परन्तु यह अवस्था देर तक नहीं चल पाई और वे जून 1921 में गुरुकुल छोड़कर चले गये। असहयोग आन्दोलन में मन, वचन और कर्म से जुट जाने की जो उनकी इच्छा थी, सम्भवत: उसी तीव्र इच्छा ने उन्हें गुरुकुल से चले जाने के लिए विवश कर दिया था। यदि स्वामी जी उस समय शींध्र गुरुकुल से न जाते तो गुरुकुल को विकसित करने का अपने स्वप्न को अवश्य पूरा कर सकते थे। परन्तु बाहर जाने पर भी स्वामी जी के हृदय में गुरुकुल कांगड़ी का हित एवं विकास सदा बना रहा। इसकी उन्नति व भावी प्रगति के सम्बन्ध में अपने स्वप्नों को पूर्ण करने के लिए अपना महान् प्रयास करते रहते थे। इसलिए उन्होंने गुरुकुल की रजत जयन्ती के पूर्व इतना धन एकत्रित कर लिया जाय कि रजत जयन्ती के अवसर पर शिल्प महाविद्यालय या व्यवसाय महाविद्यालय की स्थापना की जा सके, इस विचार से अपने अंग्रेजी पत्र लिब्रेटर में "माई स्पेशल अपील" शीर्षक से एक लेख लिखा था, जिसका कुछ अंश इस प्रकार था- "मैं सवा लाख रुपयों की विशेष अपील करना चाहता हूँ। गुरुकुल की स्थापना के समय से ही मैं घरेलु उद्योग धन्धों की शिक्षा के लिए शिल्प महाविद्यालय खोलने का यत्न कर रहा हूँ। दो उदार दानियों ने उनके लिए बड़ी धनराशि के लिए वायदे भी किये, परन्तु दुर्भाग्यवश उन दोनों का शीघ्र ही देहावसान हो गया। गुरुकुल से विदाई ले लेने पर भी मैं सेठ रघुमल से उक्त महाविद्यालय के लिए 5 लाख रूपये देने का आग्रह करता रहा। उन्होंने मुझे स्कीम बनाने के लिए कहा ही था कि निष्ठुर मौत ने उनको हमारे बीच में से उठा लिया

आशा है उनके ट्रस्ट के ट्रस्टी गुरुकुल के इस अधिकार पूर्ण दावे को नहीं भूलेगे। परन्तु ऐसे दिन की प्रतीक्षा में हमें बैठे नहीं रहना चाहिए, जिस दिन इतना बड़ा फन्ड हाथ में आये और काम शुरू हो। 50 हजार मकान के लिए, 50 हजार सामान के लिए और 35 हजार चालू खर्चे के लिए चाहिए, छोटी रकम से कुछ नहीं होगा। 125 उदार दानी ऐसे चाहिए जो एक हजार अपने पास से या मित्रों से इकट्ठा करके भेज दें। कोई-कोई उदार दानवीर तो दो-पांच या दस हजार तक भी भेज सकते है। अपनी प्रिय संस्था के लिए मेरी अन्तिम अपील है।"

वास्तव में स्वामी जी महाराज की अन्तिम अपील ही सिद्ध हुई। जिसका विस्तृत वर्णन उनके बलिदानी प्रसंग में किया जायेगा, स्वामी श्रद्धानन्द इस बार केवल लगभग सवा वर्ष तक ही गुरुकुल में रहे। (फरवरी 1920 से जून 1921 तक) इस स्वल्प काल में उन्होंने जहाँ गुरुकुल के स्वरूप व उद्देश्यों को स्पष्ट रूप से निर्धारित किया वहाँ साथ ही गुरुकुल में एक वैदिक अनुसंधान विभाग की भी स्थापना की। (सन् 1920) इस शोधकार्य के लिए उन्होंने गुरुकुल के सुयोग्य स्नातक पं॰ देव शर्मा की नियुक्ति की थी। स्वामी जी ने इसी समय में यह भी प्रयत्न किया कि विविध आर्य प्रतिनिधि सभाओं के तत्वावधान में स्थापित सब गुरुकुलों को सूत्र में संगठित कर लिया जाय। वे सब मिलकर एक विशाल विश्वविद्यालय का रूप धारण कर सके।

गुरुकुल में भयंकर बाढ़ एवं स्थान परिवर्तन

संवत् 1981, 28 सितम्बर 1924 में गंगा की दोनों धाराओं में हरिद्वार के अन्दर भयंकर बाढ़ का प्रकोप प्रारम्भ हुआ और आधे से अधिक गुरुकुल कांगड़ी के भवन बाढ़ की चपेट में आ गये। इस बाढ़ से गुरुकुल की पर्याप्त सम्पत्ति का नुकसान हुआ। गुरुकुल के ब्रह्मचारियों को और कर्मचारियों को सुरिक्षत स्थान कनखल के ऊपरी भाग जहाँ आज डॉ॰ हरिराम आर्य इन्टर कॉलेज है वहाँ पर लाया गया और यह प्रतीक्षा की जाने लगी कि बाढ़ का प्रकोप समाप्त हो। ताकि पुनः गुरुकुल कांगड़ी में जाकर अध्ययन अध्यापन का कार्य प्रारम्भ किया जा सके।

इस भयंकर बाढ़ के प्रकोप का यह प्रभाव हुआ कि प्रो॰ रामदेव एवं महाशय कृष्ण आदि कुछ गुरुकुल के अधिकारी और सभा के अधिकारियों ने यह निश्चय किया कि गुरुकुल को कहीं दूसरे सुरिक्षत स्थान पर ले जाया जाय। उनके इस निश्चय का गुरुकुल में ब्रह्मचारियों एवं अन्य व्यक्तियों ने इसका घोर विरोध किया और आन्दोलन के रूप में उनका विरोध पराकाष्ठा तक पहुंच गया। गुरुकुल का परिवर्तित स्थान कहाँ पर हो ? यह विवाद चल रहा था। इसमें तीन-चार स्थानों पर विचार किया जा रहा था। एक विचार यह था कि पुरानी भूमि से कुछ ऊपर कांगड़ी गांव के परे की भूमि पर कहीं पर पर्याप्त भूमि लेकर गुरुकुल को स्थानान्तरित किया जायं। तीसरा विचार यह भी था कि पंजाब में पुनः किसी स्थान पर ले जाया जाय। चौथा विचार यह भी था कि दिल्ली के कहीं आस-पास गुरुकुल कांगड़ी को ले जाया जाय। स्वामी जी ने अपना विचार समाचार पत्रों में यह प्रकट किया कि- "कांगड़ी ग्राम की ऊपर की भूमि पर गुरुकुल को स्थानान्तरित किया जा सकता है। यदि यह किसी प्रकार से सम्भव नहीं हो तो दिल्ली के पास अरावली पर्वत पर ले जाने का भी विचार किया जा सकता है। 21 अक्टूबर सन् 1924 को गुरुकुल में ही अन्तरंग सभा की बैठक हुई। पर्याप्त ऊहा-पोह के पश्चात् अन्तिम निर्णय लिया गया कि गुरुकुल को अन्यत्र स्थान पर ले जाया जाय, उस अन्तरंग सभा में स्वामी जी भी उपस्थित थे। अन्तरंग सभा की बैठक के पश्चात् इस कुलभूमि को छोड़ने का निश्चय हो जाने के परिणाम स्वरूप स्वामी जी उठकर आचार्य के बंगले के

पीछे गंगा के ठीक किनारे पर लगे हुए खटवे वृक्ष के नीचे आकर निस्तब्ध खड़े हो गये। वाणी से अमृत की मधुर वर्षा करने वाले स्वामी सत्यानन्द ने स्वामी जी के समीप आकर कुछ कहने का प्रयास किया। स्वामी सत्यानन्द के कुछ कहने पर स्वामी श्रद्धानन्द जी की आंखों में अश्रुधारा प्रवाहित होने लगी। संन्यासी के हृदय में भी ममता का समुद्र तूफान बनकर उमड़ आया और आंखों के रास्ते से बाहर निकल पड़ा। वास्तव में यह एक सांसारिक ममता नहीं थी। तपोभूमि के उठने तथा कर्मभूमि के नष्ट होने का यह मर्मान्तक दृश्य था। जिसकी कल्पना एक स्वामी जी को उद्धेलित कर देती थी। यह प्रश्न उनके हृदय में मर्मस्थल पर ऐसी चोट करता था जो उनके मन के लिए असह्य था। स्वामी श्रद्धानन्द जी ने उस समय के मुख्याधिष्ठाता विश्वम्भरनाथ को दिल्ली से आठ श्रावण संवत् 1981 को एक पत्र लिखा “आप ने गुरुकुल का जलवायु खराब बताकर एक सब कमेटी बनवायी है; उसके दो सभासद् तो पहले से ही आप के विचार के अनुकूल हैं। सभा ने यह समझा कि मेरा कभी गुरुकुल से कोई सम्बन्ध ही नहीं रहा और मुझसे इस सम्बन्ध में कुछ पूछना भी उचित नहीं समझा। समाचार पत्रों से मालूम हुआ कि गुरुकुल को अकृत् कार्य सिद्ध करके लाहौर में उपदेशक पाठशाला की बुनियाद डाली जायेगी।” उस समय के काशी के दैनिक “आज” ने यह लिखा था कि “कांगड़ी का गुरुकुल आप के अदम्य साहस और असीम देशभक्ति का स्वरूप है। हमें यह जान कर दु:ख हुआ कि सहकारियों में अन-बन हुई, जिससे स्वामी जी बड़े दुखित हुए और उनका सम्बन्ध उस स्थान से कम होता गया। इधर गंगा की भयंकर बाढ़ ने गुरुकुल को बड़ी हानि पहुंचायी। सम्भवत: वहाँ के कितने ही कार्य-कर्त्ताओं की पुरानी इच्छा और भी पुष्ट हो गई कि वहाँ से गुरुकुल को हटा कर दूसरे स्थान पर ले जाये। अब स्वामी जी के विरोध करते रहने पर भी यह निश्चय हो गया। स्वामी जी ने मर्मस्पर्शी भाषा में अपने भावों को व्यक्त करते हुए इस पर दु:ख प्रकट किया है और अपने किए हुए कार्य से विदा ले ली। प्रत्येक शिक्षा संस्था की परम्परा उसे मकानों के साथ एक जान हो जाती हैं, और दूसरे स्थान पर जाने से वह भाव कदापि कायम नहीं रह सकते। जो निर्णय के प्रारम्भ में कष्टों के समय उत्पन्न होते है और जो वहाँ की एक-एक ईंट से याद आते हैं। यही गलती काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के संचालकों ने की। जब वे अपना पुराना “कमच्छा” का भवन छोड़ नगवां जा बसे थे। धन के अपव्यय के अतिरिक्त उन्होंने पुराने सद्भावों को भी सब अपव्यय कर डाला। हमें दु:ख है कि कांगड़ी के गुरुकुल वाले भी यही गलती कर रहे थे। स्वामी श्रद्धानन्द अवश्य वहाँ से विदा हो गये पर स्वामी श्रद्धानन्द का नाम न वह संस्था और न ही यह भूतल भूल सकता है। आधुनिक भारत के शिक्षा सुधारकों में भी उनका नाम अजर अमर रहेगा, चाहे किसी को उनसे कितना ही मतभेद क्यों न हो ?

* * *

सन्दर्भ संकेत

1. स्वमी श्रद्धानन्द (समग्र मूल्यांकन) पृष्ठ-99, 100
2. स्वामी श्रद्धानन्द पृष्ठ- 559, 560

तृतीय-अध्याय

नये स्थान पर गुरुकुल का पुनः निर्माण

जून 1921 में स्वामी श्रद्धानन्द के गुरुकुल से चले जाने पर पं० विश्वम्भरनाथ को उनके स्थान पर मुख्याधिष्ठाता नियुक्त किया गया। पं० विश्वम्भनाथ गुरुकुल की स्थापना के समय से ही पंजाब आर्य प्रतिनिधि सभा की अन्तरंग सभा के सदस्य और कोषाध्यक्ष एवं उपप्रधान रह चुके थे। अतः वे एक पुराने अनुभवी व्यक्ति थे। स्वामी जी को उन पर विश्वास भी था। संन्यास आश्रम में प्रवेश करने से पूर्व उन्होंने पं० विश्वम्भनाथ को लिखा था कि "उस उद्देश्य की पूर्ति के लिए जो मेरे और तुम्हारे लिए इतना प्रिय रहा, तुम्हें साहस पूर्वक बाहर आ जाना चाहिए।" स्वामी जी की इस इच्छा को पूर्ण करने की दृष्टि से मुख्याधिष्ठाता बनकर पं० विश्वम्भरनाथ गुरुकुल आ गये। उस समय आचार्य पद पर स्वामी सत्यानन्द की नियुक्ति की गयी। इस प्रकार इन दो प्रतिष्ठित आर्य नेताओं द्वारा गुरुकुल का कार्यभार संभाल लिया गया। शिक्षा की व्यवस्था प्रो० रामदेव के हाथों में ही थी जो अब उपाचार्य के पद पर नियुक्त हो गये थे। सन् 1924 में स्वामी सत्यानन्द के त्याग-पत्र देने पर श्री रामदेव जी आचार्य बन गये और उपाचार्य के पद पर विश्वनाथ विद्यालंकार की नियुक्ति की गयी। इस प्रकार नये पदाधिकारियों के हाथों में गुरुकुल के संचालन का पूर्ण उत्तरदायित्व आ गया।[1]

पं० विश्वनाथ एक अच्छे प्रशासक और कार्य प्रबन्ध में निपुण व्यक्ति थे। गुरुकुल की आन्तरिक व्यवस्था के सन्दर्भ में उन्होंने महत्वपूर्ण परिवर्तन एवं सुधार किये। सबसे पूर्व उन्होंने गुरुकुल के बजट को नये ढ़ंग से व्यवस्थित किया। गुरुकुल में होने वाले व्यय को ब्रह्मचारियों के भरण-पोषण और शिक्षा को दो भागों में विभक्त कर दिया। इसके साथ यह भी नियम बना दिया गया कि एक विभाग का धन दूसरे विभाग पर खर्च न किया जाये। भरण-पोषण में केवल वहीं धन खर्च किया जाये, जो संरक्षकों से फीस द्वारा छात्रवृत्तियों की आमदनी से प्राप्त होता है। गुरुकुल में शिक्षा निःशुल्क थी। इसलिए यह नियम बनाया गया कि शिक्षा पर वह धन व्यय किया जाये जो दान से प्राप्त हो। या किसी विषय की पढ़ाई के लिए दानियों द्वारा दी गयी धनराशि से प्राप्त हो। अनेक दानियों ने 30,000 रुपये तथा उसके लगभग राशि दान देकर गुरुकुल में अनेक पीठ (CHAIRS) स्थापित किये। उनसे ब्याज की आय से प्राप्त धन को शिक्षा में व्यय किया जाता था। उस समय ब्याज की दर 5 प्रतिशत थी। तीस हजार रुपये का ब्याज एक हजार आठ सौ रुपये वार्षिक प्राप्त होता था जो प्राध्यापक के 150 रुपये मासिक वेतन के लिए पर्याप्त होता था। अनेक दानियों ने 2 हजार से लगाकर 30 हजार 430 रूपये तक की राशियां इस प्रयोजन से प्रदान की थी कि उनके ब्याज से गुरुकुल के ब्रह्मचारियों को छात्रवृत्तियां दी जा सके और ऐसे बालक भी गुरुकुल में शिक्षा प्राप्त कर सकें जिनके माता-पिता भोजन वस्त्र का पूरा शुल्क प्रदान नहीं कर सकते। इस प्रकार की छात्रवृत्तियों के लिए प्राप्त धनराशि एक लाख 84 हजार रुपये थी।[2]

गुरुकुल अब विश्वविद्यालय का रूप धारण कर चुका था। इसलिए यह आवश्यकता समझी गयी कि उसका एक शिक्षा पटल भी होना चाहिए। उस समय तक पाठ विधि का निर्णय करने का कार्य कॉलेज की काउन्सिल किया करती थी। सभी प्राध्यापक उसके सदस्य होते थे। एक विषय को पढ़ाने के लिए प्रायः एक ही अध्यापक होता था। वही अपने विषय की पाठ विधि निर्धारित करता था। यह बात सन्तोषजनक

नहीं थी। इसलिए उचित समझा गया कि पाठविधि के निर्माण के लिए और परीक्षाओं के विधिवत् संचालन के लिए एक शिक्षा पटल बनाया जाये। सन् 1923 में शिक्षा पटल की स्थापना की गयी।

इसके निम्नलिखित सदस्य होते थे :- 1. आर्य प्रतिनिधि सभा का प्रधान, 2. गुरुकुल कांगड़ी का मुख्याधिष्ठता, 3. गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय के प्रत्येक महाविद्यालय का अध्यक्ष, 4. गुरुकुल का आचार्य, 5. प्रतिनिधि सभा की अन्तरंग सभा द्वारा निर्वाचित छः प्रतिनिधि जिनमें से कम से कम तीन शिक्षा के विशेषज्ञ हो। 6. गुरुकुल कांगड़ी के स्थायी सेवकों और दयानन्द सेवा सदन के सदस्यों द्वारा निर्वाचित एक प्रतिनिधि। 7. गुरुकुल कांगड़ी वि.वि. के उपाध्यायों द्वारा निर्वाचित तीन प्रतिनिधि। 8. गुरुकुल के स्नातकों का एक प्रतिनिधि। यह भी व्यवस्था की गयी कि गुरुकुल कांगड़ी का मुख्याधिष्ठाता पदेन शिक्षा पटल का अध्यक्ष होगा। पटल की बैठक के लिए सात सदस्यों की उपस्थिति अनिवार्य होगी। पटल के एक मंत्री की व्यवस्था की गयी जिसे प्रस्तोता कहा जाता है। गुरुकुल के प्रथम प्रस्तोता पं० महानन्द सिद्धान्तालंकार नियुक्त किये गये।

गुरुकुल कांगड़ी इस समय राष्ट्रीय विश्वविद्यालय का रूप धारण कर चुका था इसलिए यह आवश्यकता अनुभव की गयी कि समस्त भारत में गुरुकुल की शाखाओं का जाल बिछा दिया जाय, ताकि समस्त भारत में गुरुकुल के महाविद्यालय एवं विद्यालय खुल जाने पर गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय का सही रूप में स्वरूप धारण करता हुआ सच्चे अर्थों में विश्वविद्यालय बन सके। उस समय के अधिकारियों का यह भी दूरदर्शी दृष्टिकोण था कि महाविद्यालय विभाग में छात्रों की संख्या बढ़ती चली जाय। इसलिए 1923-24 में अनेक नयी शाखाएं भी खुली। इनमें सूपा (गुजरात) गुरुकुल विशेष रूप से उल्लेखनीय है। गुजरात के आर्य बन्धुओं को गुरुकुल शिक्षा-प्रणाली से बहुत प्रेम था बहुत से गुजराती बालक गुरुकुल में शिक्षा ग्रहण करने के लिए प्रवेश लेते थे। बहुत दिनों से गुजरात के आर्य सज्जनों का यह विशेष आग्रह था कि उनके क्षेत्र में भी गुरुकुल खोल दिया जाय, ताकि गुजराती बालकों को बचपन में ही कांगड़ी गुरुकुल न जाना पड़े। इस विषय में श्री ईश्वरदत्त विद्यालंकार श्री दयाल जी लल्लू भाई एवं जीणाभाई देवाभाई के परिश्रम से सन् 1923 में गुजरात में गुरुकुल खोलने के लिए पच्चीस हजार रुपये एकत्रित हुए। गुरुकुल खोलने के लिए सूरत जिले के बारदोली ताल्लुके में पूर्णा नदी के तट पर एक रमणीक स्थान पर भूमि को चुना गया। जो सूपा नामक स्थान के समीप था। 10 फरवरी सन् 1924 को गुरुकुल कांगड़ी की शाखा की स्थापना हुई। गुरुकुल सूपा की आधार शिला स्वामी श्रद्धानन्द जी के करकमलों द्वारा रखी गयी थी इसलिए यह संस्था गुरुकुल सूपा के नाम से विख्यात हो गयी बहुत शीघ्र ही गुरुकुल सूपा में दस श्रेणियाँ हो गयी। तथा विद्याधिकारी कक्षा उत्तीर्ण करके गुरुकुल कांगड़ी के वेद महाविद्यालय में वहाँ से छात्र आने लगे।

सन् 1924 में ही गुरुकुल कांगड़ी की एक शाखा झज्जर जिला रोहतक (हरियाणा) में खोली गयी। उसके साथ ही पंजाब में गुरुकुल भटिण्डा की स्थापना की गयी। गुरुकुल झज्जर की स्थापना में स्वामी ब्रह्मानन्द, महाशय विश्वम्भरनाथ और स्वामी परमानन्द का विशेष सहयोग था। इन दोनों गुरुकुलों की आधार शिलाएं भी स्वामी श्रद्धानन्द द्वारा ही रखी गयी थी। यद्यपि स्वामी जी इस समय गुरुकुल कांगड़ी के किसी पद पर आसीन नहीं थे। परन्तु फिर भी वे गुरुकुल की उन्नति एवं प्रगति के लिए प्रयत्नशील रहते थे।

कन्या गुरुकुल की स्थापना

गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय के सन् 1921 के वार्षिक उत्सव के अवसर पर दिल्ली के निवासी सेठ रघुमल के नाम की स्वामी श्रद्धानन्द ने घोषणा की कि ये कन्या गुरुकुल स्थापित करने के लिए एक लाख रुपया देने को तैयार है। वास्तव में जब से गुरुकुल कांगड़ी की स्थापना हुई थी तब से यह आवश्यकता अनुभव की जा रही थी कि कन्याओं के लिए गुरुकुल प्रणाली की शिक्षा का भी प्रबन्ध होना चाहिए क्योंकि

आर्यसमाज की दृष्टि में कन्या और पुत्र दोनों ही समान दृष्टि के माने जाते है। उसमें कोई भेद नहीं होना चाहिए। परन्तु गुरुकुल कांगड़ी अपने स्थापना काल से ही अपने और परायों दोनों से संघर्ष करता रहा। इसलिए स्वामी श्रद्धानन्द प्रारम्भ से यह निरन्तर प्रयत्न करते रहते थे कि कन्या गुरुकुल की स्थापना की जाए। उन्होंने अपने पत्र सद्धर्म प्रचारक में अनेक बार आर्य जनता का ध्यान इस ओर आकृष्ट किया था कि नियमावली में यह टिप्पणी भी देर से प्रकाशित चली आ रही थी कि साधन जुट जाने पर कन्याओं के लिए पृथक् गुरुकुल की स्थापना कर दी जायेगी। इस विचार धारा को क्रियान्वित करने का समय उस समय आ गया जब सेठ रघुमल का एक लाख रुपये का दान कन्या गुरुकुल के लिए प्राप्त हो गया। अतः दीपावली सन् 1923 के शुभ अवसर पर दिल्ली के दरियागंज मुहल्ले में एक बड़ी कोठी किराये पर लेकर कन्या गुरुकुल की स्थापना कर दी गयी। कन्या गुरुकुल चार वर्ष यहीं दरिया गंज दिल्ली में ही चलता रहा। इन चार वर्षों में कन्या गुरुकुल के लिए उपयुक्त स्थान की खोज की जाती रही। अंततः देहरादून के राजपुरा रोड़ पर एक बड़ी भूमि प्राप्त हो गई और वहीं पर गुरुकुल स्थानान्तरित कर दिया गया और आज तक वह कन्या गुरुकुल देहरादून में ही स्थित है। कन्या गुरुकुल देहरादून का संचालन भी आर्य विद्यासभा द्वारा भीं किया गया है। इसलिए गुरुकुल कांगड़ी और कन्या गुरुकुल देहरादून का परस्पर घनिष्ठ सम्बन्ध तो है ही, साथ-साथ इसे गुरुकुल कांगड़ी का ही एक दूसरा रूप मानना उचित होता है। क्योंकि महर्षि दयानन्द के अनुसार गुरुकुल कांगड़ी में सह शिक्षा होना सम्भव नहीं था। इसलिए कन्याओं की शिक्षा के लिए कन्या गुरुकुल देहरादून विख्यात हुआ। अतः कन्या गुरुकुल देहरादून पर अलग से विस्तार पूर्वक लिखना उचित होगा।

गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय की प्रगति एवं विकास

यह मानना उचित प्रतीत होता है कि पं० विश्वम्भरनाथ (मुख्याधिष्ठता) और आचार्य रामदेव के कुशल एवं सशक्त हाथों में गुरुकुल कांगड़ी निरन्तर प्रगति के पथ पर चल रहा था उसके स्वरूप और उद्देश्यों के सम्बन्ध में आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब में जो मतभेद था वह समाप्त हो चुका था और गुरुकुल कांगड़ी एक स्वतन्त्र एवं सुव्यवस्थित विश्वविद्यालय के रूप में विकसित होने लग गया था। सन् 1919 से 21 के राष्ट्रीय आन्दोलन के समय गुरुकुल की लोकप्रियता बहुत अधिक बढ़ गयी थी। महात्मा गाँधी द्वारा प्रारम्भ किए गये असहयोग आन्दोलन के कार्यक्रम में सरकारी शिक्षणालयों का भी बहिष्कार किया गया था। इसके परिणाम स्वरूप अनेक विद्यापीठों की इस काल में स्थापना हुई थी, ये विद्यापीठ सरकारी प्रभाव से पूर्णतया मुक्त थे परन्तु गुरुकुल कांगड़ी के रूप में एक ऐसा राष्ट्रीय विश्वविद्यालय पहले से ही विद्यमान था, जो सच्चे अर्थों में राष्ट्रीय था। जिस पर कोई भी सरकारी प्रभाव नहीं था इसलिए यह स्वाभाविक ही था कि देश के गणमान्य नेताओं का ध्यान इस राष्ट्रीय शिक्षा संस्था की ओर आकृष्ट हो। इसलिए उस युग में अनेक राष्ट्रीय नेता गुरुकुल के वार्षिकोत्सव अथवा अन्य अवसरों पर गुरुकुल में आते रहे। जिससे कि गुरुकुल की लोकप्रियता पूरे भारत में फैल गयी और गुरुकुल कांगड़ी को समस्त भारत के लोग जानने लग गये।

गुरुकुल कांगड़ी सन् 1924 तक अच्छी प्रकार से व्यवस्थित हो चुका था। पं० विश्वम्भरनाथ की कुशलता से उसकी आर्थिक दशा सम्भल गयी थी और आचार्य रामदेव शिक्षा की दृष्टि से उसे समुन्नत करने में जी जान से लगे थे। परन्तु उनके इस कार्य में एक भयंकर प्राकृतिक आपदा आकर उपस्थित हो गयी। सितम्बर 1924 में गंगा नदी में एक असाधारण बाढ़ आ गयी और उससे गुरुकुल की बहुत-की इमारतें नष्ट हो गयी। उन दिनों गुरुकुल में एक प्रकार से अवकाश ही चल रहा था। क्योंकि बहुत से ब्रह्मचारी सरस्वती यात्रा पर गये थे। प्राध्यापक और बहुत से कर्मचारी भी गुरुकुल में नहीं थे। जो व्यक्ति

गुरुकुल के परिसर में थे उनके प्राणों की रक्षा भी इसलिए हो गयी थी कि कनखल का बांध टूट गया था और जल का प्रवाह दूसरी ओर हो गया था। महाविद्यालय के पक्के भवनों को छोड़कर गुरुकुल के अन्य सभी भवन जिसमें छात्रावास विद्यालय के कमरे, भोजन भण्डार, चिकित्सालय, परिवारों के आवास आदि सभी कुछ बाढ़ से नष्ट हो गये थे। इस अवस्था में गुरुकुल को उसी स्थान पर रख सकना सम्भव नहीं रह गया था। गंगा की दो धाराओं के मध्य में स्थित होने के कारण भविष्य में भी वहाँ बाढ़ आने की सम्भावना से इन्कार नहीं किया जा सकता था। इसलिए जैसा कि ऊपर लिख चुके है, गुरुकुल को अन्यत्र ले जाने का विचार प्रबल हो गया। कुछ लोगों का यह विचार था कि गंगा के साथ बांध-बांधकर पुरानी भूमि को सुरक्षित रखा जा सकता है। स्वामी श्रद्धानन्द जी का विचार जिसका कि हम जिक्र कर चुके है। गुरुकुल कांगड़ी के तत्कालीन अधिकारियों से मेल नहीं खाता था। इसलिए उनके सामने ही यह प्रस्ताव स्वीकार हो गया कि गुरुकुल के लिए अन्यत्र भूमि क्रय की जाए। इसलिए इस समस्त विवाद के मध्य व अन्त में कनखल ज्वालापुर मार्ग के दक्षिण में गंगा नहर के साथ लगी हुई भूमि, जहाँ इस समय गुरुकुल विद्यमान है, (उस भूमि) को लेने का प्रयास प्रारम्भ हो गया। यह भूमि किसी एक जमींदार की नहीं थी, कोई खेत किसी का था तो कोई खेत किसी का। सबसे सौदा करना बहुत कठिन था। पं॰ विश्वम्भरनाथ के अनथक परिश्रम से गंगा नहर के किनारे-किनारे कनखल की ओर 600 बीघे जमीन गुरुकुल के लिए क्रय कर ली गयी और यहाँ पर नये भवनों का निर्माण प्रारम्भ कर दिया गया। अप्रैल 1930 में गुरुकुल को अपने नये परिसर में लाया गया। पांच साल के लगभग गुरुकुल के विद्यालय विभाग की कुछ कक्षाएं मायापुर वाटिका में ही चलती रही और महाविद्यालय विभाग पुरानी भूमि में। बाढ़ से बची हुई इमारतों को मरम्मत करके इस योग्य बना लिया गया था कि वहाँ पर अध्ययन-अध्यापन हो सके।

स्वामी श्रद्धानन्द का बलिदान

गुरुकुल कांगड़ी को स्थापित हुए सन् 1927 में 25 वर्ष हो चुके थे। इसलिए 1927 में गुरुकुल कांगड़ी के वार्षिक उत्सव पर "रजतजयंती" मनाने का कार्यक्रम 1925 से ही प्रारम्भ हो गया था। इसलिए धूम-धाम से रजत जयन्ती मनाने के लिए तैयारियां प्रारम्भ हो गयीं थी। गुरुकुल कांगड़ी अनेक राष्ट्रीय नेताओं के आने की सम्भावना थी। रजतजयन्ती की तैयारी का अन्तिम दौर चल ही रहा था कि अचानक गुरुकुल कांगड़ी के संस्थापक स्वामी श्रद्धानन्द की एक छद्म वेशधारी जो कि स्वामी श्रद्धानन्द के पास शुद्ध होने के लिए मुसलमान युवक अब्दुल रसीद के रूप में आया था, उसने 23 दिसम्बर 1926 को स्वामी जी की हत्या कर दी थी। इस तरह स्वामी श्रद्धानन्द का वैदिक धर्म के लिए बलिदान हो गया।

इस रजत जयन्ती समारोह में महात्मा गाँधी, पं॰ मदनमोहन मालवीय, बाबू राजेन्द्र प्रसाद, सेठ जमुनालाल बजाज, श्री निवास अयंगर और डॉ॰ मुन्जे आदि कितने ही अखिल भारतीय स्तर के नेता उपस्थित हुए थे। जो बहुत से विद्वान् व शिक्षाविद् इस अवसर पर गुरुकुल में आये थे, उनमें प्रि॰ ध्रुव, साधुवास्वानी, और डॉ॰ अविनाशचन्द्र दास के नाम उल्लेखनीय है। आर्य समाज के तो प्रायः समस्त संन्यासी विद्वान् और नेता इस समारोह में सम्मिलित हुए ही थे। बहुत बड़ी संख्या में जन समूह उपस्थित हुआ था। परन्तु स्वामी श्रद्धानन्द महाराज का बलिदान सबके लिए विषाद का कारण बना हुआ था। फिर भी रजत जयन्ती समारोह सफलता पूर्वक सम्पन्न हुआ। इस अवसर पर एक लाख 53 हजार रुपये नकद दान रूप में प्राप्त हुए और एक लाख 30 हजार रुपये के बचन प्राप्त हुआ।

जयन्ती समारोह के सफलतापूर्वक सम्पन्न हो जाने के पश्चात् पंडित विश्वम्भरनाथ ने अपने मुख्याधिष्ठाता पद से त्यागपत्र दे दिया। यद्यपि इस समय कोई राजनैतिक दलबन्दी नहीं थी। सभा का कोई अधिकारी उनका विरोधी भी नहीं था। उनकी यह मान्यता थी कि गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय के उच्चपद पर पांच

वर्ष से अधिक नहीं रहना चाहिए। इसलिए उन्होंने अपना यह त्याग-पत्र पूर्ण रूपेण स्वेच्छा से दिया था। उनके स्थान पर आचार्य रामदेव को गुरुकुल का मुख्याधिष्ठाता नियुक्त किया गया। आचार्य पद पर वे पहले से ही कार्य कर रहे थे। इसलिए वे आचार्य के साथ-साथ मुख्याधिष्ठाता भी हो गये। सन् 1927 से 1933 तक वे मुख्याधिष्ठाता पद पर रहे। इस समय उनके सामने सबसे बड़ी चुनौती यह थी कि गुरुकुल को स्थानान्तरित तो कर दिया गया था परन्तु यहाँ पर भवनों का निर्माण पर्याप्त रूप से नहीं हो पाया था। आचार्य रामदेव ने रात-दिन अथक परिश्रम करके 20 लाख रुपये गुरुकुल के नये भवनों के निर्माण के लिए एकत्र किये थे। इस विषय में उनका सहयोग अनेक संस्थाओं आर्य समाजों और धनी मानी व्यक्तियों के साथ गुरुकुल के प्राध्यापकों ने भी धन एकत्र करने में किया था। इस प्रकार 1930 में गुरुकुल को नयी भूमि पर लाया जा सका। यहाँ पर यह उल्लेख करना उचित प्रतीत होता है कि गुरुकुल कांगड़ी को स्थानान्तरित करके वर्तमान स्थान पर गुरुकुल को स्थापित करना, क्या यह बुद्धिमत्ता का कार्य था ? गुरुकुलों और आचार्य कुलों का जो विचार भारतीय परम्परा के अनुसार महर्षि दयानन्द ने प्रस्तुत किया था, उसका यह प्रमुख एवं आवश्यक तत्व था कि ये शिक्षण संस्थाएं नगरों व ग्रामों से दूर एकान्त स्थान पर स्थित हो। जो कि कांगड़ी ग्राम के क्षेत्र में जो स्थान सन् 1902 में गुरुकुल के लिए चुना गया था वही सबसे उत्तम तथा अनुकूल स्थान था। कनखल वहाँ से लगभग तीन मील की दूरी पर था। आने-जाने का मार्ग अत्यधिक दुर्गम था। गंगा की धारा मध्य में पड़ जाने के कारण कांगड़ी ग्राम का सम्बन्ध गुरुकुल से विशेष रूप में नहीं रहता था। वास्तव में गाँव थोड़ी-सी झोपडियों के समूह के अतिरिक्त कुछ नहीं था। केवल थोड़ी-सी जनसंख्या वहाँ पर थी। जहाँ पर प्राकृतिक आपदा का प्रश्न था वह तो कहीं पर भी आ सकती है। परन्तु जहाँ गुरुकुल जिस नये स्थान पर ले जाया गया था, वह कनखल ज्वालापुर के मार्ग पर स्थित है। उस समय कनखल की दूरी एक मील से भी कम थी और गुरुकुल से ज्वालापुर लगभग सवा मील दूर पर था। यह दूरी केवल पुल पार करके जाने पर थी। जगदीशपुर और जमालपुर उसके और भी समीप है। अतः यह सरलता से कहाँ जा सकता है कि गुरुकुल की वर्तमान भूमि चारों ओर से नगरों और ग्रामों से धिरी हुई है। जिसके कारण शहरी जीवन के कुप्रभावों से वहाँ रहने वाले ब्रह्मचारियों को बचाये रखना सम्भव नहीं था। देश विभाजन के पश्चात् गुरुकुल एक कालोनी के रूप में अन्य कालोनियों के बीच में धिरा हुआ, एक कालोनी मात्र बनकर रह गया है।

यह विचारणीय विषय है कि कांगड़ी ग्राम के दुर्गम स्थान पर पैदल और बैलगाड़ियों से चलकर बीस-तीस हजार व्यक्ति एवं महिलाएं गुरुकुल कांगड़ी के वार्षिक उत्सव में पहुंचा करते थे। उस समय गुरुकुल वास्तव में आर्य समाजियों एवं हिन्दू मात्र के लिए एक तीर्थ स्थली के रूप में था। वह श्रद्धा आज गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय के विकसित हो जाने पर भी दिखलाई नहीं देती है। उस समय की परिस्थितियां कुछ भी रही हो, हो सकता है कि सभा के कुछ अधिकारियों का अहं भी पूर्ण हुआ हो, परन्तु गुरुकुल कांगड़ी यदि उसी स्थान पर रहा होता तो अब तक बहुत-सी सुविधायें वहीं पर उपलब्ध हो जाती। सम्भवतः गुरुकुल कांगड़ी के प्रति वहीं आस्था एवं श्रद्धा आर्य समाजियों में बनी रहती। क्योंकि आज के गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय में उसी श्रद्धा से जो व्यक्ति उस समय आते थे, उस श्रद्धा से आज नहीं आते हैं। यद्यपि यह कटु सत्य है। परन्तु इतिहास सत्य ही होता हैं, चाहे वह कटु हो और चाहे मधुर हो। यदि एक समालोचक तटस्थ होकर एक प्रचेता के रूप में टिप्पणी करें तो यह निःसंकोच कहा जा सकता है कि गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय को स्थानान्तरित करके गुरुकुल शिक्षा प्रणाली को बहुत करारा आघात पहुंचाया गया था। क्योंकि आरण्यक आश्रम में स्थित शिक्षण संस्थाओं में जो गुरु-शिष्य का सम्बन्ध होता था उसके विद्यार्थी जिस रूप में ब्रह्मचर्य और तपस्या पूर्वक जीवन व्यतीत करते थे, वह तपस्या पूर्वक जीवन व्यतीत करना यहाँ सम्भव नहीं था और ना ही है। इस समय गुरुकुल की पुरानी भूमि जिसे अब पुण्य भूमि

कहा जाता है, वहाँ अब भी सम्भव है। पंजाब आर्य प्रतिनिधि सभा अथवा गुरुकुल का वर्तमान प्रशासन यदि चाहे तो आज भी वहाँ साढ़े चार सौ बीधा भूमि अवशिष्ट है, कुछ पुराने भवन भी शेष है। वहाँ पर एक सुन्दर प्राचीन पद्धति पर गुरुकुल का निर्माण किया जा सकता है अथवा अन्य उपदेशक विद्यालय आदि की व्यवस्था की जा सकती है। परन्तु यह तो भविष्य ही बतलाएगा कि इस समय के सभाधिकारी इस विषय में कुछ गम्भीरतापूर्वक विचार करते है या नहीं। इस शताब्दी वर्ष में प्रायश्चित के रूप में एवं आत्मालोचन के रूप में इस पुण्य भूमि का उद्धार किया जा सकता है।

जैसा कि उल्लेख किया जा चुका है कि 1930 में महात्मा गाँधी के नेतृत्व में सत्याग्रह आन्दोलन प्रारम्भ हुआ। इसके कारण शीघ्र ही सारे देश में अंग्रेजी प्रशासन के विरुद्ध विद्रोह की भावना भड़क उठी थी। हजारों लोग सत्याग्रह करके जेल में जाने को तैयार हो चुके थे।

गुरुकुल कांगड़ी का महात्मा गाँधी से घनिष्ट सम्बन्ध स्थापित हो गया था इसलिए गुरुकुल कांगड़ी इस राष्ट्रीय आन्दोलन में कैसे पीछे रहता ? गुरुकुल कांगड़ी का वातावरण तो प्रारम्भ से देशभक्ति और राष्ट्रीयता का रहा है। देश के लिए त्याग करने में गुरुकुल के ब्रह्मचारी और अध्यापक कभी-भी किसी से पीछे नहीं रहे, उन्होंने तिलक स्वराज फन्ड के लिए धन एकत्रित किया था। उस समय के गुरुकुल कांगड़ी के अधिकारी गण एवं विद्यार्थी कांग्रेस के कार्यकलापों में सक्रिय रूप में भाग लेते थे, स्वयं सेवक के रूप में भी वे अनेक बार सम्मिलित होते थे। 1930 का सत्याग्रह आन्दोलन तो बहुत ही अधिक महत्वपूर्ण था। इसलिए गुरुकुल के समस्त ब्रह्मचारी इस आन्दोलन में कूद पड़े। महाविद्यालय विभाग के बहुत से विद्यार्थियों ने आसपास के क्षेत्र में सत्याग्रहियों को संगठित किया। गुरुकुल के अधिकारियों ने विवश होकर अवकाश की घोषणा की थी, श्री सत्यदेव ब्रह्मचारी ने सहारनपुर जिले में स्वयं-सेवकों का इतना बड़ा संगठन खड़ा कर लिया था कि उन्हे सर्वत्र दलपति नाम से पुकारा जाता था। इसके अतिरिक्त अन्य दो विद्यार्थी श्री सर्वमित्र और श्री सत्यभूषण देहात में सत्याग्रहियों को संगठित करते रहे। उन्होंने इतना अधिक कार्य किया कि वे बीमार पड़ गये और उसी बीमारी के कारण उनकी मृत्यु भी हो गई। उस समय कितने ही ब्रह्मचारी और प्राध्यापक गण जेल में भी गये। इससे यह विचार करने में बाध्य होना पड़ता है कि उस समय के वे लोग कैसे थे ? उनके विचार उनकी सूझ और राष्ट्रीय भक्ति को देखकर आज भी ईर्ष्या उत्पन्न होती है। वस्तुत: उन्होंने स्वराज संघर्ष में गुरुकुल की कीर्ति को चारों ओर फैलाया।

आचार्य रामदेव भी स्वाधीनता संघर्ष में सक्रिय भाग लेने के लिए सन् 1932 ई॰ में गुरुकुल से चले गये। उनके स्थान पर किसी अन्य व्यक्ति को सभा ने मुख्याधिष्ठाता पद पर नियुक्त नहीं किया। गुरुकुल का प्रबन्ध करने हेतु एक समिति गठित की गयी, जिसके तीन सदस्य थे- 1. पं॰ चमूपति, 2. पं॰ देवशर्मा विद्यालंकार और 3. श्री देवराज सेठी। श्री सेठी जी उस समय सहायक मुख्याधिष्ठाता थे, इसलिए उन्हें समिति का मंत्री बना दिया गया। पं॰ चमूपति इस समिति के प्रधान नियुक्त हुए। परन्तु यह समिति का प्रयोग सफल नहीं हुआ। तीनों सदस्यों में परस्पर मतभेद रहा करते थे। इसलिए श्री देवराज सेठी और पं. देवशर्मा के समिति से त्याग-पत्र दें देने पर आचार्य चमूपति को सभा द्वारा मुख्याधिष्ठाता और आचार्य दोनों पर नियुक्त कर दिया। अप्रैल 1935 तक पं॰ चमूपति ने योग्यता के साथ गुरुकुल का कार्यभार संभाला। उनके त्यागपत्र देने पर पं॰ सत्यव्रत सिद्धान्तालंकार को गुरुकुल का मुख्याधिष्ठाता एवं पं॰ देव शर्मा विद्यालंकार को आचार्य नियुक्त किया गया।

गुरुकुल कमीशन

जिस समय आचार्य रामदेव गुरुकुल के मुख्याधिष्ठाता और आचार्य थे। उस समय सन् 1931 में गुरुकुल को अधिक सर्वप्रिय बनाने के साधनों की संस्तुति करने के लिए महात्मा नारायण स्वामी की

अध्यक्षता में पंजाब आर्य प्रतिनिधि सभा ने एक कमीशन नियुक्त किया। इसके अन्य सभासदों में पं० चमूपति, पं० देवशर्मा विद्यालंकार और श्री सत्यकेतु विद्यालंकार गुरुकुल के प्राध्यापक थे। यहाँ पर इस कमीशन का विवरण इसलिए प्रस्तुत किया जा रहा है कि उस समय आर्य समाज और गुरुकुल के अधिकारी गण एवं शिक्षाविद् इस संस्था को किस और ले जाना चाहते थे। उनकी उपयोगिता के सम्बन्ध में उनके क्या विचार थे ? जैसा कि हम गुरुकुल की स्थापना के प्रारम्भ से ही अवलोकित करते आये है कि "गुरुकुल कांगड़ी का स्वरूप क्या हो ?" आदि को लेकर सभा के अधिकारी गण तथा गुरुकुल के अधिकारी गण विचार मंथन करते रहे है। इस विचार मंथन में मुख्य रूप में दो विचार धाराओं का द्वन्द्व होता रहा। कभी उनमें से एक विचार धारा दूसरी विचार धारा पर हावी होती रही और कभी दूसरी विचार धारा प्रथम विचार धारा पर हावी होती थी।

इसलिए इस कमीशन में भी यही विचार मन्थन प्रस्तुत किया गया कि गुरुकुल कांगड़ी राष्ट्रीय विश्वविद्यालय का स्वरूप क्या हो ? वह निरन्तर एक दिशा में कैसे प्रगति करें ?

इस कमीशन ने निम्नलिखित मुख्य संस्तुतियां प्रस्तुत की थी-

1. स्नातक परीक्षा के पश्चात् वेद-वेदांग के विशेष अध्ययन का प्रबन्ध किया जाए। वाचस्पति परीक्षा इस समय भी होती है। हम इसमें सुधार चाहते है कि वेद-वेदांग के ऊंचे दर्जे के अध्ययन तथा गवेषण (रिसर्च) का कार्य स्थिर कर दिया जाय। वेद के अध्ययन में स्नातकों के अतिरिक्त आवश्यक योग्यताएं रखने वाले अन्य विद्यार्थी भी लिए जाए। उन पर अविवाहित होने का बन्धन न हो।

   गुरुकुल के स्नातक इस समय भी एक अच्छी बड़ी संख्या में वेद प्रचार का कार्य कर रहे है। वैदिक साहित्य जितना भीं इस समय तक तैयार हुआ है उसकी एक बड़ी मात्रा स्नातकों द्वारा ही निर्मित हुई है। परन्तु इसमें सन्देह नहीं कि इसमें उन्नति तथा वृद्धि की बहुत बड़ी गुंजाईश है। जहाँ आर्य सामाजिक साहित्य का मान एवं स्तर को ऊंचा उठाने की जरूरत है वहाँ उसकी मात्रा भी अब भी अपेक्षा अधिक होनी चाहिए। स्नातकोत्तर शिक्षा का उद्देश्य इस आवश्यकता की पूर्ति के लिए होना चाहिए। उस समय विद्यार्थियों का आधार बन चुका होता है और गुरुकुल के बाहर के भी जो महानुभाव वैदिक धर्म के प्रचार को अपना लक्ष्य बनायेंगे उनका नैतिक प्रभाव हानिकारक नहीं होगा। अविवाहित रहने का बन्धन हम हटाते है कि इस प्रकार के ऊंचे दर्जे के विद्यार्थी पर आश्रम में रहने की बाधा न रहे। जब भी कोई चाहे विद्योपार्जन के इस शुभ संकल्प को पूरा कर सके। आर्य समाज के इस प्रकार के ऊंचे दर्जे के अध्ययन का प्रबन्ध अनेक स्थानों पर हो सके यह अभी असंम्भव है। अतः गुरुकुल में ही ऐसे सब विद्यार्थियों के लिए प्रबन्ध करना चाहिए।

2. साधारण महाविद्यालय में इस समय बहुत कम विद्यार्थी आते है। वेद महाविद्यालय से इस महाविद्यालय की पढ़ाई का कोई बड़ा अन्तर भी नहीं है। हमने सिफारिश की है कि इन दोनों महाविद्यालयों को मिलाकर कर कर दिया जाय, उस एक महाविद्यालय का नाम वेद महाविद्यालय हो। उसमें वेदा-वेदाङ्ग के साथ-साथ आधुनिक विषयों की शिक्षा भी दी जाती रहे। इस महाविद्यालय का उद्देश्य गुरुकुल की वेदाध्ययन आदि अपनी विशेषताओं को कायम रखते हुए उच्च उदार शिक्षा देना होगा।

3. गुरुकुल के विद्यार्थियों की संख्या बढ़ाने के लिए हमारा प्रस्ताव यह है कि गुरुकुल को कुछ विशेष स्थानों तक ही परिमित नहीं रखना चाहिए, किन्तु इस शिक्षा प्रणाली का प्रचार एक

> देशव्यापी आन्दोलन के रूप में करना चाहिए। प्रत्येक समर्थ आर्य समाज गुरुकुल के ढंग की एक छोटी-सी पाठशाला खोल दे। जो स्नातक हो तो उत्तम है। जिसमें गुरुकुल के जीवन के मुख्य-मुख्य अंगो का पालन अवश्य किया जाए। एक अध्यापक जो स्नातक हो तो उत्तम है, वहाँ रहे और बालकों को गुरुकुल शिक्षा का ज्ञान करा दे तथा उनके रहन-सहन आचार एवं व्यवहार पर दृष्टि रखे। जिलों और प्रान्तों में मध्यम उच्च दर्जे के विद्यालय खोले जायें। इन विद्यालयों में पांचवी श्रेणी उत्तीर्ण छात्र प्रविष्ट किये जाए। इसके पश्चात् विद्यार्थी केन्द्रीय महाविद्यालय में आये। इस प्रकार सम्भव है कि विद्यार्थी अधिक हो जाय और गुरुकुल के संकुचित जीवन का आंशिक प्रचार हो सके। सम्भवतः स्नातकों की आजीविका का प्रश्न भी इस प्रथा द्वारा किसी अंश तक हल हो जायेगा।

हम इस व्यवस्था की आवश्यकता इसलिए भी समझते है कि विद्यार्थी छोटी आयु में अपने घरों के अधिक निकट रह सकेंगे और जहाँ उनके माता-पिता पर व्यय का भार भी कम होगा, वहाँ उन्हें पारिवारिक जीवन के लाभप्रद प्रभावों से लाभ उठाने का अवसर भी मिलेगा। इस प्रकार यदि छोटे-छोटे गुरुकुलों का देशभर में जाल फैला दिया जाय और वे सब क्रमशः बढ़ते-बढ़ते कांगड़ी के महाविद्यालय तथा वैदिक गवेषणा विभाग पर आकर मिल जायें तो गुरुकुल शिक्षा प्रणाली का रूप एक शंकु के समान हो जाएगा। जिसका आधार सारे देश में फैला हुआ होगा और शिखर हिमालय की पर्वत माला के बीच में गवेषणा विभाग के रूप में शोभायमान होगा। वेद-वेदांङ्ग की गंगा इस पुनीत शिखर से प्रवाहित होकर देश-देशान्तर को आर्य धर्म के पवित्र सन्देश का स्नान करायेगी।

गुरुकुल कमीशन ने गुरुकुल की शिक्षा के प्रयोजन के सम्बन्ध में अपने विचारों को स्पष्ट करते हुए लिखा था कि "गुरुकुल की विशेषता प्राचीन भारतीय शास्त्रों का आर्य समाज की दृष्टि से अनुशीलन तथा प्रचार ही है। शेष जो कुछ होता है, वह मानो इस उद्देश्य की सिद्धि के लिए ही है या ग्रामं गच्छन् तृणं स्पृश्यति" के सदृश केवल प्रासंगिक रूप से उपलब्ध होने वाली वस्तु है। "परन्तु यह उद्देश्य गुरुकुल के विद्यालय या महाविद्यालय द्वारा पूरा नहीं किया जा सकता है क्योंकि अधिकारी परीक्षा तक विद्यार्थी की बुद्धि कम विकसित हो पाती है, बुद्धि का विशेष विकास उन वर्षों में होता है जो विद्यार्थी महाविद्यालय विभाग में व्यतीत करता है। उस समय वह स्वतन्त्रता से सोचने लगता है। वह उदार शिक्षा का भूखा होता है। .... वह स्वतन्त्र सत्यान्वेशी सच्चे अर्थों में विद्यार्थी बनता है। मानसिक व्यायाम के इस समय में चतुर अध्यापक उसके विचारों को किसी विशेष दिशा में प्रवृत्त करने का प्रयत्न कर सकता है। ...विशेष धार्मिक सिद्धान्तों तथा मन्तव्यों को दृष्टि में रखकर किसी विषय का अनुशीलन उसके पश्चात् आना चाहिए और उसमें वही लोग प्रवृत्त होने चाहिए जो विद्याध्ययन के क्षेत्र में पूर्ण स्वतन्त्रतापूर्वक विचार करके किसी एक ओर झुक नहीं चुके हो, किन्तु उनके जीवन का लक्ष्य उक्त प्रकार का अध्ययन तथा उस अध्ययन द्वारा उपार्जित विद्या का प्रचार हो गया है।" कमीशन की सिफारिश थी कि ऐसे विद्यार्थी चाहे वे गुरुकुल के हो या बाहर के हो, स्नातक परीक्षा के पश्चात् वेद-वेदांङ्ग के उच्च स्तर का अध्ययन करे और शोध कार्य में भी प्रवृत्त हो। उनके विवाहित न होने की शर्त की भी कमीशन की दृष्टि में कोई उपयोगिता नहीं थी। कमीशन की रिपोर्ट संस्तुति के रूप में प्रस्तुत कर दी गयी थी। परन्तु गुरुकुल कांगड़ी के पास सम्भवतः उस समय ऐसे संसाधन नहीं थे जिनके अनुसार वेद-वेदांङ्ग प्राचीन सत्यार्थ शास्त्र के उच्चतम अध्ययन तथा मौलिक शोध के सम्बन्ध में एवं उसको क्रियान्वित करने के लिए उस समय गुरुकुल प्रयत्न कर पाता। अतः उक्त उच्च शोध केन्द्र की स्थापना करने में गुरुकुल असमर्थ रहा।

गुरुकुल में विद्यार्थियों की संख्या बढ़ाने के लिए जो कमीशन द्वारा संस्तुति की गयी थी वह न तो

महर्षि दयानन्द सरस्वती के मन्तव्यों के अनुसार थी और न ही गुरुकुल कांगड़ी के सिद्धान्तों के अनुकूल थी। यह तो ठीक है कि परिस्थितियों और व्यावहारिक दृष्टि से उसे अनुचित भी कहना सम्भव नहीं है। परन्तु उसे क्रियान्वित करना अत्यधिक कठिन कार्य था। क्योंकि जन आन्दोलन के रूप में विकसित करना सरल कार्य नहीं था। इसमें मुख्य कारण यह रहा होगा कि प्रत्येक ग्राम और शहर में आर्य समाजें ही नहीं थी। आर्य समाजियों के अतिरिक्त बहुत ही कम व्यक्ति ऐसे थे जो इस प्रकार की शिक्षा प्रणाली में विश्वास रखते थे। यहाँ पर आर्थिक पक्ष भी विचारणीय है कि उस समय नकद धन की बहुत ही अधिक न्यूनता थी। जब प्रत्येक ग्राम और शहर में आर्य समाजें नहीं थी तो गुरुकुल शिक्षा प्रणाली को जन आन्दोलन के रूप में कैसे विकसित किया जा सकता था। उस समय समस्त भारत में आर्य समाजियों की जो संख्या थी उसके अनुसार जितने भी गुरुकुल खुल पाये उतने ही पर्याप्त थे। कमीशन द्वारा गुरुकुल के ब्रह्मचारियों के रहन-सहन और व्यय के सम्बन्ध में भी कुछ संस्तुतियां की गयी थी। वे इस प्रकार थीं-

1. महाविद्यालय विभाग में प्रत्येक विद्यार्थी कम से कम और अधिक से अधिक कितना खर्च कर सके यह गुरुकुल द्वारा निर्धारित हो। इस मर्यादा के भीतर रहते हुए खर्च को कम या अधिक करने की विद्यार्थी को स्वतन्त्रता रहे।
2. निम्नलिखित मदों के लिए निर्धारित राशि गुरुकुल विद्यार्थी से लिया करें- प्रकाश, जल-प्रबन्ध, स्वास्थ्य-रक्षा, चिकित्सा, अग्निहोत्र, पाठ्य पुस्तकें और क्रीड़ा सामग्री। शेष सब खर्च विद्यार्थी अपनी इच्छानुसार कर सके। परन्तु कौन-सी वस्तु किस प्रकार ली जाए, यह अधिकारियों के नियन्त्रण में रहे। विद्यार्थी खर्चे के लिए धन अपने पास न रखकर डाकखाने में रखे, जहाँ से वे अधिकारियों की अनुमति के बिना धन प्राप्त न कर सके।
3. यदि यह परीक्षण महाविद्यालय विभाग में सफल हो तो, विद्यालय विभाग की उच्च कक्षाओं में भी इसके समुचित अंशों को धीरे-धीरे आरम्भ कर दिया जाय।
4. जो ब्रह्मचारी अपने अतिरिक्त समय में श्रम करना चाहे, गुरुकुल के अन्य नियमों का पालन करते हुए अपनी मासिक शुल्क की पूर्ति के लिए धनोपार्जन करना चाहे तो उन्हें उसकी अनुमति देनी चाहिए। तथा उन्हें उसके लिए उपयुक्त सुविधायें देनी चाहिए।
5. वर्तमान समय में महाविद्यालय विभाग के ब्रह्मचारी सत्रान्त अवकाश में जो दो मास का होता है घर जा सकते है। ....परन्तु हम अनुभव करते है कि विद्यालय विभाग के ब्रह्मचारी को घर जाने की छूट्टी न मिलने के कारण वे पारिवारिक जीवन में रहकर जो लाभदायक प्रभाव उन पर पड़ सकते थे, उनसे वे वंचित रह जाते है और उन में अपने माता-पिता, भाई-बहिन तथा अन्य निकट सम्बन्धियों से भी उपरामता का भाव आ जाता है। उनके प्रति अपने कर्तव्यों के समझने तथा पूर्ण करने की प्रवृत्ति कम हो जाती है। ... हमारी सम्मति से अष्टम, नवम तथा दशम श्रेणियों के विद्यार्थी भी इतने बड़े और समझदार हो जाते है कि यदि उनको इस अवकाश का आधा अर्थात् 22 दिन घर जाने की छुट्टी मिल सके तो इससे वे पारिवारिक जीवन के स्वास्थ्यप्रद प्रभाव का लाभ उठा सकेगें।
6. गुरुकुल में विद्यार्थी किस प्रकार का वेश पहने, जूता, छत्री का प्रयोग करें या नहीं, इन तथा इसी प्रकार के अन्य रहन-सहन के प्रश्नों पर गुरुकुल के प्रेमियों में कुछ विवाद रहता है। इस विषय में हम यहाँ स्पष्ट कर देना चाहते है कि इस सब बातों का निर्णय गुरुकुल के तपस्यामय जीवन, सादगी तथा ब्रह्मचर्य के वातावरण को कायम रखने की दृष्टि से होना चाहिए। इनका वैदिक धर्म तथा गुरुकुल शिक्षा प्रणाली के आधार भूत सिद्धान्तों से कोई विशेष

सम्बन्ध नहीं हैं। गुरुकुल के विद्यार्थियों में तपस्या, सादगी तथा ब्रह्मचर्य को कायम रखते हुए स्वास्थ्य रक्षा के नियमों की दृष्टि से जो परिवर्तन अपेक्षित हों, उन्हें स्थान और समय के अनुसार करने में कोई हानि नहीं है।

7. महिलाओं के गुरुकुल का निरीक्षण करने में अनेक प्रकार की रूकावटें वर्तमान समय में हैं। साथ ही, विशेष रूप से पाश्चात्य शिक्षा प्राप्त तथा पाश्चात्य महिलाओं में गुरुकुल का अवलोकन करने में भेद भी किया जाता है। हमारी सम्मति में महिलाओं को गुरुकुल देखने में कोई रुकावट नहीं होनी चाहिए।

8. गुरुकुल में विद्यार्थियों के शयन का जितना समय निश्चित है, वह हमारी सम्मति में पर्याप्त नहीं है, उसमें वृद्धि करनी चाहिए।

कमीशन द्वारा उपर्युक्त रूप में जो संस्तुतियां प्रस्तुत की गयी है, वे गुरुकुल के उद्देश्यों से विशेष रूप से मेल नहीं खाती है। यदि उनकी इन सभी मान्यताओं को लागू कर दिया जाता तो गुरुकुल के ब्रह्मचारियों का रहन-सहन तथा जीवन पर्याप्त रूप में भिन्न हो जाता। उनके द्वारा परिवर्तित नियमों के अनुसार न सबके वस्त्र एक सदृश रहते और न भोजन। निर्धन और धनी का भेद भी उनमें दृष्टिगोचर होने लग जाता। क्योंकि अपने अतिरिक्त समय में वे ब्रह्मचारी ही परिश्रम द्वारा धनार्जित किया करते जिनके माता-पिता निर्धन होने के कारण उनके भरण पोषण का पूरा व्यय न कर सकते। वस्तुतः शिक्षा प्रणाली का मूलभूत सिद्धान्त यह था कि गुरुकुल एवं आचार्य कुल में रहते हुए ब्रह्मचारी का अपने माता-पिता तथा परिवार से कोई सम्बन्ध नहीं रहना चाहिए। गुरुकुल में अध्ययन करते ब्रह्मचारी को यह भी ज्ञात न होना चाहिए कि उसका साथीं ब्रह्मचारी किस जाति का है, किस धर्म का हैं, उससे धनी है अथवा निर्धन है। राजा का राजकुमार, गरीब ब्राह्मण का पुत्र हूँ। यह परिज्ञान नहीं होना चाहिए। इसलिए गुरुकुल शिक्षा प्रणाली पांच सकार पर आधारित थी अथवा आधारित होनी चाहिए। ज़िसमें प्रथम सकार-समान शिक्षा, दूसरा सकार-समान वेशभूषा, तीसरा सकार-समान भोजन, चौथा सकार-समान व्यवहार और पांचवा सकार-समान आचरण हैं।

गुरुकुल प्रणाली का उद्देश्य एक से नागरिक उत्पन्न करना था जो समन्वित एवं समग्र व्यक्तित्व के धनी हो। जिनमें न हीन ग्रन्थि हो और न जिनमें उच्च होने की ग्रन्थि का भाव हो। एक ऐसा समन्वित समायोजित व्यक्तित्व का विकास हो, जिनमें ऊंच-नीच का कोई भेद न हो, इसलिए यह परम्परा थी कि गुरुकुल में अध्ययन करते हुए ब्रह्मचारी कोई जाति-पाति सूचक शब्द अथवा विशेषण अपने नाम के साथ नहीं लगा सकते थे। आचार्य द्वारा वर्ण देने से पूर्व उनका कोई वर्ण नहीं होता था। इसलिए कमीशन मे जो संस्तुतियां की थी, चाहे उस समय की आवश्यकता ही क्यों न रही हों, चाहे वह व्यावहारिक भी अधिक हो किन्तु उन सिफारिशों का पूर्ण रूपेण परिपालन न करने पर गुरुकुल के मूल उद्देश्यों से हटने का भय अवश्य था। इसलिए कमीशन की संस्तुतियों पर मतभेद बना रहा। परन्तु कमीशन की कुछ बातें अवश्य मान ली गयी। न केवल विद्यालय विभाग के उच्च श्रेणी के छात्र अपितु छोटे ब्रह्मचारी भी छुट्टियों में घर जाने लगे। महिलाओं के गुरुकुल में आने-जाने में कोई रूकावट नहीं रह गयी और ब्रह्मचारियों की वेशभूषा में जूते आदि को भी सम्मिलित कर लिया गया।

गुरुकुल के कमीशन की एक महत्वपूर्ण संस्तुति, गुरुकुल के अधिकारियों के सम्बन्ध में यह थी कि "गुरुकुल कुछ निश्चित उद्देश्यों तथा आदर्शों को दृष्टि में रखकर स्थापित किया गया है। इसलिए हम यह समझते है कि गुरुकुल का संचालन करने के लिए मुख्य अधिकारी को नियत करते हुए यह ध्यान में रखना चाहिए कि ऐसे महानुभाव को इस पद पर नियत करें, जिसका क्रियात्मक जीवन गुरुकुल उद्देश्यों तथा आदर्शों के अधिक से अधिक अनुकूल हो और मुख्य अधिकारी के लिए आचार्य शब्द प्रयुक्त होना चाहिए

क्योंकि गुरुकुल की दृष्टि से यही शब्द अनुकूल तथा उपयुक्त है। इस आचार्य के सहयोग के लिए दो सहायक होने चाहिए। जिनमें से एक के अधीन शिक्षा का कार्य हो और दूसरा सामान्य प्रबन्ध का कार्य करें"।

उस समय गुरुकुल के प्रबन्ध के लिए अलग से आर्य प्रतिनिधि सभा द्वारा एक पृथक् विद्या सभा होनी चाहिए। यह एक पक्ष का प्रबल विचार था। परन्तु कमीशन ने इस विचार को स्वीकार नहीं किया। कमीशन का यह विचार था कि गुरुकुल का संचालन पहले की तरह अन्तरंग सभा के द्वारा ही होना चाहिए। हां, यह अवश्य प्रबन्ध किया जा सकता है कि मुख्याधिष्ठाता को परामर्श तथा अन्य प्रकार की सहायता देने के लिए एक सहायक सभा तथा परामर्श सभा बना दी जाए। जिसमें गुरुकुल के प्राध्यापकों को भी स्थान प्राप्त हो। इस प्रकार कमीशन ने जो बहुत सी सिफारिशे की थी, उनके अनुसार गुरुकुल को प्रगति देना उद्देश्य था। परन्तु प्रगति के साथ-साथ कमीशन की संस्तुतियों में यह भी झलकता है कि गुरुकुल में कुछ आमूल-चूल परिवर्तन भी किए जाएं। कुल मिलाकर यह कहा जा सकता है कि गुरुकुल का चाहे प्रबन्ध तन्त्र हो और चाहे कोई नियुक्त किया कमीशन हो और गुरुकुल की स्वामिनी आर्य प्रतिनिधि सभा हो, ये सभी गुरुकुल के मूल सिद्धान्तों पर सतत् चलते रहने में असमर्थ एवं असफल से हो रहे थे। नहीं तो बार-बार नई समितियों का गठन गुरुकुल की नियमावली में बार-बार परिवर्तन क्यों किया जाता ? स्वामी श्रद्धानन्द जी ने गुरुकुल शिक्षा प्रणाली का प्रारम्भ महर्षि दयानन्द के सत्यार्थ प्रकाश को पढ़कर के किया था। उसका उद्देश्य एवं प्रयोजन स्पष्ट और ऋजु-नीति वाला था। उसमें कहीं पर भी परिवर्तन करने की गुंजाईश ही नहीं थी।

इन सब बातों का मूल कारण यह प्रतीत होता है कि आर्य समाज के प्रथम पीढ़ी के अधिकारी और संन्यासी एक मिशनरी भावना से ओत-प्रोत होते थे। धीरे-धीरे आर्य समाजों में आने वाले व्यक्ति तपस्वी और मिशनरी भावना से न्यून होने लगे थे। इसलिए गुरुकुल के प्रबन्ध तन्त्र में परिवर्तन करने की बात बार-बार उठने लग गयी थी। इन सबका एक मुख्य कारण यह भी रहा होगा कि गुरुकुल कांगड़ी को वन एवं हिमालय की उपत्यका से स्थानान्तरित करके शहरी वातावरण में लाया गया था। शहरी वातावरण का प्रभाव धीरे-धीरे गुरुकुल पर पड़ने लगा। गुरुकुल के मूल उद्देश्य भी ओझल से होने लगे। परन्तु स्वामी श्रद्धानन्द की तपस्या के कण संस्था में सम्भवतः अवशिष्ट थे, जिनके कारण यह संस्था दिशा विहीन होने या विचलित होते हुए भी गति को प्राप्त होती रही।

आर्य विद्या सभा का गठन

गुरुकुल कमीशन ने अपना यह मत प्रकट किया था कि गुरुकुल के प्रबन्ध के लिए किसी पृथक् सभा की आवश्यकता नहीं है और उसका प्रबन्ध संचालन अन्तरंग सभा के द्वारा ही होना चाहिए। कमीशन की इस रिपोर्ट के होने पर भी विद्या सभा के गठन की मांग निरन्तर जोर पकड़ती गयी क्योंकि आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब का कार्य क्षेत्र अति विस्तृत था। सन् 1910 में ही सबसे पूर्व महात्मा मुंशी राम ने यह विचार प्रस्तुत किया था कि गुरुकुल को व्यवस्थित रूप में एवं समीचीन रूप में संचालन के लिए विद्या सभा का गठन किया जाए। जिस प्रस्ताव द्वारा पंजाब आर्य प्रतिनिधि सभा ने 1921 में गुरुकुल को विश्वविद्यालय के रूप में मान्यता प्रदान की थी। उसमें भी गुरुकुल के लिए पृथक् विद्या सभा के निर्माण की बात की पुष्टि की गयी थी। अतः 1934 में विद्या सभा के गठन के लिए गुरुकुल के स्नातक-मण्डल द्वारा आन्दोलन सा प्रारम्भ किया गया। इस आन्दोलन में भी यही कहा गया था कि आर्य प्रतिनिधि सभा का कार्य क्षेत्र बहुत ही विस्तृत हो गया है। आर्य समाजों की संख्या भी निरन्तर बढ़ती जा रही है। वेद प्रचार को प्रगति देने एवं उसकी व्यवस्था करने के लिए आर्य प्रतिनिधि सभा को उधर बहुत ध्यान देना पड़ता

है। इसलिए इस अवस्था में सभा के लिए गुरुकुल की उन्नति व विकास के लिए शक्ति लगा सकना व्यावहारिक नहीं था। आर्य प्रतिनिधि सभा के नये पदाधिकारियों का चुनाव 1935 में होना था। और साथ ही सभा के नये सदस्यों का चुनाव होना था। जो लोग गुरुकुल के लिए पृथक् विद्या सभा के गठन के पक्षधर थे, प्रयत्न करके वे बड़ी संख्या में सभा के सदस्य निर्वाचित हो गये। जिसके परिणाम स्वरूप 1935 में सभा के अधिवेशन में गुरुकुल के लिए पृथक् से विद्या सभा को गठित करने का प्रस्ताव स्वीकृत हो गया।

इस समय विद्या सभा का जो गठन किया गया था उसका स्वरूप इस प्रकार था-

1. विद्या सभा के सदस्यों की कुल संख्या 27 होगी।
2. इन सत्ताइस सदस्यों में से कम से कम 18 सदस्य पंजाब आर्य प्रतिनिधि सभा के प्रतिनिधि होगें।
3. सभा के निम्नलिखित पदाधिकारी पदेन विद्यासभा के सदस्य होगें।
   (क) सभा का प्रधान, (ख) सभा के तीनों उपप्रधान, (ग) सभा मंत्री, (घ) सभा का कोषाध्यक्ष।
4. इन छः पदाधिकारियों के अतिरिक्त कम से कम 12 व्यक्ति आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब द्वारा विद्या सभा के लिए निर्वाचित किये जाएं। इन सदस्यों को चुनते हुए यह भी ध्यान रखा जाए कि वे विद्यादि विशेष गुणों से सम्पन्न हो।
5. गुरुकुल के निम्नलिखित पदाधिकारी अपने पद के कारण विद्या सभा के सदस्य होगें-
   (क) गुरुकुल का मुख्याधिष्ठाता, (ख) गुरुकुल का आचार्य, (ग) कन्या गुरुकुल का मुख्याधिष्ठाता, (घ) कन्या गुरुकुल की आचार्या।
6. गुरुकुल कांगडी और कन्या गुरुकुल के छात्रों के संरक्षकों का एक प्रतिनिधि।
7. गुरुकुल के स्नातकों एवं स्नातिकाओं के तीन प्रतिनिधि जिनमें से एक अवश्य ही स्नातिका हो।
8. गुरुकुल के उपाध्याय वर्ग का एक प्रतिनिधि।

विद्या सभा का गठन करते हुए यह भी निश्चय किया गया कि विद्या सभा के सदस्य केवल ऐसे ही व्यक्ति बनाये जायें जिन्हें गुरुकुल शिक्षा प्रणाली से स्नेह हो। और वह स्वयं अपने बालकों को गुरुकुल में पढ़ाने के लिए उत्सुक होकर गुरुकुल प्रेम का साक्षात् प्रमाण दे सकें। वास्तव में आर्य विद्या सभा के गठन के सम्बन्ध में आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब का यह निर्णय बहुत ही महत्वपूर्ण था। क्योंकि सभा यह जानती थी कि विद्या सभा के द्वारा जो निर्णय लिये जायेंगे वे बहुमत के आधार पर लिये जायेंगे। यदि विद्या सभा में बहुसंख्यक ऐसे सदस्य आ जाते है जो गुरुकुल शिक्षा प्रणाली के प्रति निष्ठावान् नहीं है अथवा अन्दर से विरोधी हो तो गुरुकुल की दिशा ही परिवर्तित कर दी जायेंगी। गुरुकुल की गणना देश की सामान्य शिक्षण संस्थाओं के अन्तर्गत नहीं की जा सकती थी। उसके कुछ आधार-भूत सिद्धान्त थे, जिनमें से अनेक आधुनिक समय की शिक्षा पद्धति व विषय मान्यताओं के अनुकूल नहीं थे। जो कोई सदस्य आधुनिक शिक्षा पद्धति से प्रभावित होगा तो वह अवश्य ही प्रयास करेगा कि गुरुकुल की नीति-रीति में परिवर्तन किया जाय। वस्तुतः उस समय गुरुकुल शिक्षा-प्रणाली शिक्षा के क्षेत्र में एक क्रान्ति के रूप में थी और क्रान्ति के मूल सिद्धान्तों को जनता द्वारा मान्य होने में समय एवं प्रयत्न की अपेक्षा होती है। अतः आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब का यह निश्चय दूर दृष्टिपूर्ण था। गुरुकुल का संचालन ऐसे लोगों के हाथों में रहे, जो उसके मूल-भूत

क्रान्तिकारी सिद्धान्तों में आस्था रखते हों। यदि वे सचमुच इस गुरुकुल शिक्षा प्रणाली में आस्था रखते है तो अपने पुत्रों एवं पुत्रियों को भी गुरुकुल में पढ़ाने के लिए अवश्य प्रयत्नशील एवं उत्साही होगें। महात्मा मुंशीराम और आचार्य रामदेव के समय में गुरुकुल ने जो प्रगति एवं उन्नति की थी, उसका कारण यहीं था कि इन्हें गुरुकुल शिक्षा में पूर्ण विश्वास था। उन्होंने अपनी सन्तानों को शिक्षा के लिए गुरुकुल में ही प्रविष्ट कराया था। यदि प्रतिनिधि सभा के इस निर्णय को क्रियान्वित किया जा सकता तो गुरुकुल की बहुत ही उन्नति होती और महर्षि दयानन्द सरस्वती द्वारा प्रतिपादित यह शिक्षा प्रणाली अत्यन्त लोकप्रिय हो जाती।

अतः गुरुकुल के प्रबन्ध व संचालन के लिए सन् 1935 में पृथक् विद्या सभा का गठन किया गया था। उसी वर्ष अप्रैल मास में पं० चमूपति ने आचार्य एवं मुख्याधिष्ठाता पद से त्याग-पत्र दे दिया था। विद्या सभा ने उनके स्थान पर पं० सत्यव्रत सिद्धान्तालंकार को मुख्याधिष्ठाता नियुक्त किया और पं० देव शर्मा को आचार्य नियुक्त किया गया। ये दोनों गुरुकुल के सुयोग्य स्नातक थे। गुरुकुल की परम्पराओं, मान्यताओं तथा आधारभूत सिद्धान्तों से भली-भांति परिचित थे। पर्याप्त समय से अध्यापक के रूप में भी इन्होंने कार्य किया। गुरुकुल के साथ इनका पूर्णरूपेण सम्बन्ध था। पं० देवशर्मा की रुचि योग में अधिक थी और वे योग साधना में लगे रहते थे। इसलिए दो वर्ष तक आचार्य पद पर रहकर उन्होंने संन्यास ग्रहण कर लिया और वे स्वामी अभयदेव बन गये। संन्यास ग्रहण करने के पश्चात् गुरुकुल से उन्होंने विदा ली और वे पाण्ड़िचेरी में श्री अरविन्द के आश्रम में जाकर साधना करने लगे।

1935 से 1942 तक पं० सत्यव्रत सिद्धान्तालंकार गुरुकुल के प्रमुख पदाधिकारी एवं संचालक रहे। यह ज्ञातव्य है कि यह समय गुरुकुल के लिए बहुत ही महत्वपूर्ण था, क्योंकि स्वामी श्रद्धानन्द जैसा व्यक्तित्व एवं गुरुकुल का जो प्रारम्भिक काल में प्रभाव एवं सामान्य लोगों की गुरुकुल के प्रति आस्था में निरन्तर कमी आ रही थी। सरकारी अनुदान से गुरुकुल को अब भी परहेज था इसलिए गुरुकुल का खर्च चलाने के लिए मुख्य रूप से दान पर ही निर्भर रहना पड़ता था और दान को चन्दें द्वारा ही प्राप्त किया जाता था। इसलिए गुरुकुल के मुख्याधिष्ठाता तथा आचार्य ही नहीं अपितु प्राध्यापक गण अन्य कर्मचारी भी प्रतिवर्ष चन्दें के लिए जाया करते थे। और वार्षिक उत्सव के अवसर पर जो धन दान के रूप में एकत्र हो जाता था उसमें से गुरुकुल का खर्च चलता था। स्थायी निधियों में धन बहुत ही कम था। चन्दा एकत्रित करना, बहुत कष्ट साध्य कार्य था। इसे पं० सत्यव्रत भली-भांति जानते थे, इसलिए पं० सत्यव्रत सिद्धान्तालंकार ने अपनी दूरदृष्टि से यह देख लिया था कि गुरुकुल के प्रति लोगों की कुछ श्रद्धा कम होती जा रही है। दान पर यह संस्था कब तक चलेगी। इसलिए अपने मन में यह विचार करने लगे कि यदि गुरुकुल को वास्तव में चलते रहना है तो कुछ ऐसे उपाय खोजने होंगे जो, गुरुकुल को स्वावलम्बी संस्था के रूप में खड़ा कर सके। गुरुकुल कांगड़ी को दान पर अवलंबित न रहना पड़े। इसलिए उनके मन में विचार मन्थन के पश्चात् अर्न्तदृष्टि से सूझा कि गुरुकुल में एक व्यवसाय के रूप में आयुर्वेद शास्त्र के अनुसार औषधियों का निर्माण किया जाय। इसलिए उन्होंने जो आयुर्वेद की शिक्षा सन् 1919 में प्रारम्भ हो चुकी थी तथा विद्यार्थियों को औषधि निर्माण का क्रियात्मक ज्ञान देने के लिए शास्त्रोक्त विधि से औषधियाँ भी बनाई जाने लगी थी। इस आयुर्वेद की औषधियों के निर्माण को बढ़ाया गया। और यह प्रयास किया गया कि अधिक मात्रा में आयुर्वेद की शुद्ध औषधियाँ बनायी जाएं। गुरुकुल आयुर्वेदिक फार्मेसी को एक उद्योग के रूप में विकसित करने के लिए उन्होंने प्रयास प्रारम्भ कर दिये। इस समय गुरुकुल में सभी निधियों में लगभग 15-16 लाख रूपये लगे हुए थे। उस समस्त धनराशि को फार्मेसी में लगाकर एक उद्योग के रूप में गुरुकुल कांगड़ी फार्मेसी के रूप में विकसित कर दिया। उस समय गुरुकुल कांगड़ी फार्मेसी के प्रति लोगों की अटूट श्रद्धा थी। दवाइयों की बहुत अधिक मांग थी क्योंकि प्रिटिंग प्रेस भी था

और प्रकाशन विभाग भी। उन दिनों गुरुकुल महाविद्यालय में रसायन शास्त्र के प्राध्यापक प्रो० फकीरचन्द्र त्रेहन थे। उन्हें औद्योगिक रसायन में बहुत अधिक रुचि थी। वे अपनी प्रयोगशाला में स्याही, फिनायल और साबुन आदि को अपने छात्रों से बनवाया करते थे। पं० सत्यव्रत सिद्धान्तालंकार ने विचार किया कि यदि आयुर्वेदिक फार्मेसी, प्रिटिंग प्रेस, पुस्तक प्रकाशन और रासायनिक उत्पादन को बहुत अधिक मात्रा में बढ़ाये जाने का प्रयत्न किया जाय तो गुरुकुल को इतनी आय हो सकती है कि गुरुकुल का खर्चा इस उत्पादन के द्वारा पूरा किया जा सकता है ओर गुरुकुल के लिए चन्दा मांगने की आवश्यकता नहीं रहेगी। इसलिए सभा के अनावश्यक हस्तक्षेप के बिना अपनी पूर्ण स्वतन्त्रता के साथ औषधियों का निर्माण तथा उनको बहुत बड़ी मात्रा में बिक्री के लिए ऐसे उपाय करना कि सारे भारत में गुरुकुल कांगड़ी फार्मेसी की औषधियां बिकने लगे। उनको वितरित करने के लिए गुरुकुल फार्मेसी की ऐजेन्सियां सभी नगरों में स्थापित की जाय। इधर प्रो० फकीरचन्द को भी उत्साहित किया गया कि तुम भी फिनायल, स्याही आदि का निर्माण बहुत बड़ी मात्रा में करो उससे प्रभावित होकर श्री त्रेहन ने फिनायल, स्याही आदि का निर्माण बड़े पैमाने पर करना प्रारम्भ कर दिया। यहाँ पर इन चीजों के निर्माण में शुद्धता और गुणों की उत्कृष्टता पर विशेष ध्यान दिया जाता था इसलिए बाजार में इनकी मांग बढ़ने लगी और अनेक नगरपालिकाओं, बैंकों तथा व्यापारिक संस्थानों ने अपनी आवश्यकता की पूर्ति गुरुकुल से निर्मित वस्तुओं से करनी प्रारम्भ कर दी थी। इधर प्रेस एवं प्रकाशन विभाग की उन्नति पर भी ध्यान दिया जाने लगा।

बीसवीं सदी के प्रथम चरण में जब गुरुकुल ऐसे स्थान पर था, जहाँ पर बिजली उपलब्ध नहीं थी। उस समय गुरुकुल के मुद्रणालय में न केवल सद्धर्म प्रचारक, श्रद्धा और वैदिक मैंगजीन सदृश पत्रिकाओं की ही छपाई की जाती थी अपितु अनेक पुस्तकें भी उस प्रेस के द्वारा छापी गयी। महर्षि दयानन्द के पत्र, भौतिकी रसायन, भारत का इतिहास (तीन भाग), पुराण मत पर आलोचन और आर्यभाषा, पाठावली आदि कितनी ही पुस्तकें गुरुकुल प्रेस में छपी थी और वहीं से प्रकाशित हुई थी। इस समय गुरुकुल ऐसे स्थान पर आ गया था जहाँ विद्युत् आदि की सभी सुविधाएं उपलब्ध थी जिसके कारण प्रेस में बड़ी मशीनों को उपयोग में ला सकना सम्भव हो गया था। पं० सत्यव्रत चाहते थे कि गुरुकुल के प्रेस तथा प्रकाशन विभाग को इतना उन्नत किया जाये कि वे भी आय के महत्वपूर्ण साधन बन जाएं। रासायनिक उत्पादन, प्रिटिंग प्रेस तथा प्रकाशन विभाग के विकास में गुरुकुल को कोई विशेष सफलता प्राप्त नहीं हुई। रासायनिक उत्पादन विभाग को कुछ समय के बाद ही बन्द करना पड़ा था। परन्तु गुरुकुल कांगड़ी फार्मेसी की उन्नति तथा विकास में बहुत ही सफलता प्राप्त हुई। फार्मेसी को 1939 में 13342 रुपये शुद्ध लाभ प्राप्त हुआ था जो उस समय 7 प्रोफेसरों के वेतन के लिए पर्याप्त था। यहाँ यह लिखने में मुझे संकोच नहीं है कि पं० सत्यव्रत सिद्धान्तालंकार का स्वप्न पूर्ण हुआ। उन्होंने अपने सात वर्ष के कार्यकाल में गुरुकुल के आय के स्रोतों को इतना विकसित कर दिया कि पर्याप्त रूप में आर्थिक दृष्टि से गुरुकुल आत्मनिर्भर बन गया था। यही नहीं पं० सत्यव्रत जी ने ही गुरुकुल पथ के साथ-साथ कई बीघा आम का बाग भी लगवाया जो आजतक गुरुकुल की आय का साधन बना हुआ है।

पं० सत्यव्रत सिद्धान्तालंकार ने सन् 1942 में त्याग-पत्र दे दिया। यद्यपि उस समय आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब तथा आर्य विद्या सभा में कुछ बहुत बड़े मतभेद नहीं थे। तो भी उनका स्वास्थ्य खराब होने के कारण उन्होंने अपनी इच्छा से त्यागपत्र दे दिया। उनके त्यागपत्र के पश्चात् विद्यासभा ने गुरुकुल के प्रबन्ध तथा संचालन के लिए पं० इन्द्र विद्यावाचस्पति को मुख्याधिष्ठाता नियुक्त किये जाने का प्रस्ताव पेश किया, यह प्रस्ताव स्वीकार कर लिया गया। विद्या सभा यह जानती थी कि पं० इन्द्र विद्यावाचस्पति के लिए यह सम्भव नहीं है कि वे गुरुकुल को अपना पूरा समय दे सकें। अतः उनको गुरुकुल का मुख्याधिष्ठाता

नियुक्त किया गया और साथ में यह भी तय किया गया कि आन्तरिक प्रबन्ध का कार्य भी आचार्य के हाथों में दे दिया जाय। आचार्य मुख्याधिष्ठाता के निर्देशन में शिक्षा के साथ प्रबन्ध का कार्य भी करेगा। इस व्यवस्था के अनुसार गुरुकुल की शिक्षा के साथ प्रबन्ध का कार्य भी करेंगा। इस व्यवस्था के अनुसार गुरुकुल की शिक्षा प्रबन्ध तथा संचालन का भार स्वामी अभयदेव जी (देव शर्मा) के हाथों में आ गया तो पहले से ही आचार्य पद पर नियुक्त थे। स्वामी अभयदेव जी थोड़े समय तक ही गुरुकुल के संचालक रहे। नवम्बर 1942 में उन्होंने गुरुकुल से त्यागपत्र दे दिया। उनके स्थान पर वेदों के प्रकाण्ड विद्वान् पं० बुद्धदेव विद्यालंकार (जो बाद में स्वामी समर्पणानंन्द बने) को आचार्य पद पर नियुक्त किया गया। पं० बुद्धदेव विद्यालंकार, पं० सत्यव्रत सिद्धान्तालंकार की तरह प्रशासनिक कार्यों में निपुण नहीं थे। इसलिए उनके समय में गुरुकुल का प्रबन्ध शिथिल हो गया और उनको मई 1943 में आचार्य पद से त्यागपत्र देना पड़ा। पं० बुद्धदेव विद्यालंकार स्वभावतः आर्य समाज के एक महान् उपदेशक तथा एक शास्त्रार्थ महारथी के रूप में याद किए जाते है। उनकी वक्तृत्व कला बड़ी अद्‌भुत थी। जब वह शब्दों के विचित्र अर्थ करते थे तो बड़े-बड़े विद्वान् आश्चर्य चकित रह जाते थे। उनके बारे में एक किंवदन्ती प्रसिद्ध है कि जब ये एक बार बनारस में शास्त्रार्थ करने गये तो उन्होंने सम्बोधन करते हुए समस्त बनारस की विद्वत् मण्डली को स्तम्भित कर दिया था। उन्होंने अपने सम्बोधन में केवल यह कहा- आर्यः सर्वे मूर्खाः। बनारस की विद्वत् मण्डली यह सुनकर अवाक् रह गयी। सभी विद्वान् एक दूसरे का मुख ताकने लगे। आचार्य बुद्धदेव विद्यालंकार ने कहा- मेरे इस सम्बोधन पर आप आश्चर्य न करें, क्योंकि मूर्ख शब्द का अर्थ- मुहु र्मुहु रोषु इन्द्रियेषु वा चरन्ति विचरन्ति वा ते मुर्खाः। अर्थात् जो बार-बार इन्द्रियों में विचरण करते है वे मुर्ख होते है, यहाँ पर उपस्थित ऐसा कोई विद्वान् है जो अपनी इन्द्रियों में विचरण न करता हो। जब उन्होंने यह विचित्र अर्थ किया तो पाण्डाल तालियों से गूंज उठा। लेखक ने स्वयं उनके कई भाषण सुने हैं जब वे वेदों का अर्थ करते हुए English Cotation प्रस्तुत करते थे तो सभा में उपस्थित आंग्ल भाषा के बड़े-बड़े विद्वान् आश्चर्य चकित रह जाते थे कि एक भारतीय का इतना शुद्ध English में उच्चारण है। ऐसा लगता था जैसे कोई शुद्ध English बोल रहा हो।

आचार्य बुद्धदेव विद्यालंकार के त्यागपत्र देने के पश्चात् वेदों के ही प्रकाण्ड पण्डित प्रियव्रत वेद वाचस्पति गुरुकुल के आचार्य नियुक्त हुए। वे उस समय लाहौर में उपदेशक विद्यालय के आचार्य पद पर ही कार्यरत थे। विद्या सभा ने उनको गुरुकुल का आचार्य नियुक्त करने के लिए बुलाया। वे आचार्य पद पर नियुक्त हो गये। अपने गुरुकुल में आने के कारणों में एक अन्य कारण भी स्वयं बतलाया करते थे। ग्रन्थ का लेखक जो उनका छात्र भी रहा हैं, उन्होंने अपनी वेद की कक्षाओं में एक संस्मरण कई बार सुनाया था, उन्होंने बतलाया कि जिस समय आचार्य रामदेव रुग्णावस्था में थे तो अपने जीवन की अन्तिम वेला में आचार्य रामदेव ने कई स्नातकों को मिलने के लिए बुलाया, उनमें आचार्य प्रियव्रत और दर्शन के प्रकाण्ड पंडित सुखदेव दर्शनवाचस्पति मुख्य रूप में थे। आचार्य रामदेव ने अपनी अन्तिम वेला में ये शब्द कहे कि "मैं तुमसे अपील करता हूँ कि तुम दोनों गुरुकुल कांगड़ी में आकर सेवा करो। यहाँ गुरुकुल में गैर समाजी वातावरण पनपने लगा है। अतः निष्ठावान् स्नातकों की यहाँ पर महती आवश्यकता है।" आचार्य प्रियव्रत जी सुनाया करते थे कि हमने मन ही मन में यह संकल्प ले लिया था कि आचार्य जी के आदेश का हम अवश्य पालन करेंगे।

आचार्य प्रियव्रत वेद वाचस्पति ने गुरुकुल के स्नातक बनने के पश्चात् पंजाब आर्य प्रतिनिधि सभा के वेद प्रचार विभाग में कई वर्षो तक कार्य किया। उस समय उनकी बहुत ही अद्‌भुत वक्तृत्व कला मानी जाती थी वह तेजस्वी ब्रह्मचारी के रूप मे विख्यात थे। यहाँ तक कहा जाता है कि उनका व्यक्तित्व इतना

आकर्षक और सुन्दर था कि पंजाब में आर्य समाज के उत्सवों पर बहुत से व्यक्ति उनको देखने ही आते थे, कि यह ब्रह्मचारी कितना सुन्दर और तेजस्वी है ? आचार्य प्रियव्रत की नियुक्ति के समय देश में महात्मा गाँधी के स्वतन्त्रता आन्दोलन का अन्तिम बिगुल बज गया था। उधर द्वितीय विश्व युद्ध चल रहा था। इस विश्व युद्ध के समय गुरुकुल कांगड़ी कांगड़ी के अनेक स्नातक पत्रकारिता राजनीति आदि क्षेत्रों में अपना स्थान बना चुके थे। 1942 में गुरुकुल इन्द्रप्रस्थ की नवमी और दशमी कक्षाओं के छात्रों ने (जहाँ गुरुकुल कांगड़ी की ही विद्यालय विभाग की कुछ कक्षाएं चलती थी (दिल्ली में चार-चार और पांच-पांच के समूह में धरना दिया। और वे गिरफ्तार हुए तथा वेस्टन जेल में रखे गये। गुरुकुल कांगड़ी महाविद्यालय के भी अनेक छात्रों ने सन् 1942 के आन्दोलनों में भाग लिया और वे सहारनपुर जेल में रखे गये। जो छात्र स्वतन्त्रता आन्दोलन में 1942 में जेल में गये, उनके नाम निम्नलिखित है- श्री देव शर्मा विद्यालंकार, श्री चन्द्रमणि विद्यालंकार, श्री भीमसेन, श्री कृष्णस्वरूप, श्री दीनदयालु शास्त्री, श्री धर्मवीर, श्री भूदेव, श्री सत्यव्रत, श्री सत्यदेव, श्री ईश्वर दत्त, श्री जयचन्द्र, श्री केशवदेव, श्री गौतम देव, श्री सुरेन्द्रनाथ, श्री पूर्णचन्द्र, श्री वासुदेव, श्री रामेश्वर, श्री सुभाष, श्री अमरनाथ, श्री हरिप्रकाश, श्री सत्यदेव, श्री सोमप्रकाश, श्री अवनीमोहन, श्री धर्मेन्द्रनाथ, श्री वेदभूषण, श्री राजेश्वर, श्री हरिदत्त, श्री वेदप्रकाश, श्री जगदीश, श्री भीमसेन, श्री मेघाव्रत, श्री चन्द्रगुप्त, श्री गुरूदत्त, श्री ब्रह्मदत्त, श्री विद्यासागर, श्री जयकृष्ण आदि ने इन आन्दोलनों में सक्रिय भाग लिया और जेल में भी गये। यदि हम 1942 के युग का स्मरण करें तो इतने छात्र किसी भी एक संस्था से आन्दोलनों में नहीं गये होंगे। देशभक्ति तो मानो गुरुकुल के छात्रों एवं स्नाताकें को विरासत में ही मिली थी। इसलिए 1914 के प्रथम विश्व युद्ध के समय से लेकर देश के स्वतन्त्र होने तक जितने भी राष्ट्रीय़ आन्दोलन हुआ उन सबमें गुरुकुल के छात्रों एवं स्नातकों ने बढ़-चढ़ कर भाग लिया।

मुख्याधिष्ठाता पद पर पं० इन्द्र विद्यावाचस्पति नियुक्त हुए थे। सन् 1953 में उनकी सहायता के लिए पं० धर्मपाल विद्यालंकार को सहायक मुख्याधिष्ठाता पद पर नियुक्त किया गया। वे बड़े ही परिश्रमी, प्रशासक और प्रबन्धक थे। उनके समय में गुरुकुल ने पर्याप्त उन्नति की। पं० इन्द्र जी की अनुपस्थिति में गुरुकुल के प्रबन्ध का समस्त भार उन्हीं पर था। उन्होंने गुरुकुल की आर्थिक स्थिति मजबूत की। अपने क्षेत्र के वे लब्ध प्रतिष्ठित आर्य समाज के नेता थे। स्वतन्त्रता आन्दोलन में कांग्रेस के कार्यकर्त्ता के रूप में उन्होंने पर्याप्त कार्य किया था। उत्तर प्रदेश सरकार और केन्द्रीय सरकार के कितने ही उच्च अधिकारी और मंत्री गण उनके सहयोगी और मित्र रहे थे। उन्होंने गुरुकुल के लिए आर्थिक सहयोग तो नहीं लिया परन्तु उनके सम्बन्ध से गुरुकुल कांगड़ी फार्मेसी को पुनः विकसित करने में पर्याप्त सहयोग मिला। इस प्रकार पं० धर्मपाल विद्यालंकार ने जहाँ गुरुकुल कांगड़ी की प्राशासनिक स्थिति को सुधारा वहीं उन्होंने आर्थिक स्थिति को भी मजबूत किया वे गुरुकुल कांगड़ी में लगभग 20 वर्ष तक प्रशासक के रूप में रहे।

गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय की उपाधियों की मान्यता

सन् 1947 में अंग्रेजी शासन से भारत स्वतन्त्र हुआ। लगभग आधी शती तक अर्थात् सुदीर्घ काल तक गुरुकुल ने सरकार से कोई सम्बन्ध नहीं रखा। पूर्णरूपेण स्वतन्त्र रूप में अपना विकास किया। विदेशी सरकार के साथ कोई सम्बन्ध रखना और उससे कोई आर्थिक सहायता भी न लेना, उस समय के गुरुकुल के अधिकारियों का कितना ऊंचा मनोबल था, यह स्वतः सिद्ध हो जाता है। उस युग के अधिकारी यह बड़े ही स्वाभिमान के साथ कहा करते थे कि हम सरकारी अनुदान नहीं लेते है। यह भावना इसलिए भी थी कि देश परतन्त्रता की बेडियों में जकड़ा हुआ था। इसलिए उस समय गुरुकुल ने जो कुछ किया वह एक उच्च आदर्श था।

अब स्थिति बदल चुकी थी, भारत में अपना स्वराज स्थापित हो गया था। इसलिए अब सरकार से बचने एवं सम्बन्ध न रखने का कोई कारण शेष नहीं रह गया था। इसलिए अब यह प्रयत्न किया गया कि कम से कम गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय के महाविद्यालय विभाग को उत्तर प्रदेश सरकार अथवा केन्द्रीय सरकार से अनुदान प्राप्त हो इसका प्रयास किया जाए। इसके लिए गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय के अधिकारी गण प्रयास करने लगे। इसके साथ एक दूसरी महत्वपूर्ण बात यह थी कि गुरुकुल कांगड़ी की किसी भी उपाधि को किसी विश्वविद्यालय अथवा किसी प्रान्त के शिक्षा बोर्ड से मान्यता प्राप्त नहीं होती थी। इस समय तक विद्यालंकार आदि की जो भी डिग्रियां गुरुकुल कांगड़ी प्रदान करता था उसको कोई भी सरकारी स्कुल या कालेजों में नौकरियां प्राप्त नहीं होती थी क्योंकि उन डिग्रियों का कोई मूल्य नहीं था। इसलिए गुरुकुल के स्नातकों को बहुत ही कठिनाई उठानी पड़ती थी। जहाँ तक नौकरी का सम्बन्ध था वे केवल गुरुकुल कांगड़ी तथा उनकी शाखाओं में अन्य गुरुकुलों में आर्य प्रतिनिधि सभाओं और आर्यसमाजों में अध्यापक, प्रचारक, उपदेशक और पुरोहित आदि की नौकरी प्राप्त कर सकते थे। परन्तु इतने से स्नातकों की समस्याओं का समाधान नहीं हो जाता था। जो स्नातक सम्पन्न घरों के थे, जिनका स्वतन्त्र व्यापार या अन्य कोई कार्य करने की क्षमता रखते थे, उनकी तो कोई विशेष समस्या नहीं थी। परन्तु जो स्नातक इस स्थिति के नहीं थे उनको अत्यधिक कठिनाइयों का सामना करना पड़ता था। उन स्नातकों का एक ही मार्ग शेष रह जाता था कि पहले वे प्राच्य, विशारद और शास्त्री या रत्न, भूषण और प्रभाकर की परीक्षाएं उत्तीर्ण कर केवल अंग्रेजी में मैट्रिकुलेशन, एफ.ए. और बी.ए. की परीक्षाएं उत्तीर्ण करे और फिर किसी स्कूल या महाविद्यालय में हिन्दी या संस्कृत के अध्यापक एवं प्राध्यापक के पद पर नियुक्त हो सकते थे। इस प्रकार उनको विद्यालंकार की उपाधि प्राप्त करने के पश्चात् उनके कई वंश नष्ट हो जाते थे और जब उनको कोई नौकरी मिल जाती थी तो, यह उनकी योग्यता के अनुरूप नहीं होती थी। उस समय भारत में तो गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय की उपाधियां मान्यता प्राप्त नहीं थी परन्तु अपनी योग्यता के बल पर कितने ही स्नातकों ने जर्मनी, इटली और फ्रांस जाकर वहाँ के विश्वविद्यालयों से पी-एच.डी. की उपाधि प्राप्त की और उसके आधार पर वे भारत में अच्छी नौकरी प्राप्त करने में सफल हुए। भारत के समान इंग्लैण्ड ब्रिटिश साम्राज्य के अन्तर्गत अन्य देशों में भी गुरुकुल की उपाधियों की मान्यता नहीं थी, परन्तु म्यूनिच(जर्मनी), रोम(ईटली) और पेरिस(फ्रांस) आदि देशों के विश्वविद्यालयों ने योग्यता के आधार पर गुरुकुल की उपाधियों को मान्यता प्रदान की थी और यहाँ के स्नातकों को डॉक्ट्रेट की उपाधि प्रदान की थी। उन स्नातकों में से कुछ के नाम इस प्रकार है- डॉ॰ प्राणनाथ विद्यालंकार, डॉ॰ ईश्वर दत्त विद्यालंकार, डॉ॰ सत्यकेतु विद्यालंकार, डॉ॰ धर्मानन्द आयुर्वेदालंकार, डॉ॰ बलराम आयुर्वेदालंकार, डॉ॰ नारायणदत्त आयुर्वेदालंकार डॉ॰ सुरेशचन्द्र विद्यालंकार आदि कितने ही स्नातकों ने उन देशों में जाकर पी-एंच.डी. की उपाधि प्राप्त की थी और यहाँ अपने देश में लौटकर यहाँ की शिक्षण संस्थाओं में और दूसरी नौकरियों में उच्च पद प्राप्त किये थे। यहाँ यह ज्ञातव्य है कि यह सबके लिए संभव नहीं था कि वे विदेश में जाकर उच्च उपाधि प्राप्त कर सके।

अत: यह उचित ही था कि स्वतन्त्र भारत की केन्द्रीय सरकार तथा प्रोदेशिक सरकार इसके साथ ही विभिन्न विश्वविद्यालयों से गुरुकुल की उपाधियों को मान्यता प्रदान कराई जाए। अन्त में उस समय के गुरुकुल के अधिकारी गण इस प्रयास में सफल हुए और निम्नलिखित सरकारों तथा विश्वविद्यालयों से गुरुकुल की उपाधियों को मान्यता प्रदान की गई।

जिसका संक्षिप्त विवरण इस प्रकार है-

1. 24 मई 1948 को बिहार सरकार ने सन् 1947 तक जिन विद्यार्थियों ने गुरुकुल से विविध

उपाधियां प्राप्त की थी उनको मान्यता प्रदान की। बिहार में अधिकारी को मैट्रिक के समान, अलंकार को बी.ए. के और वाचस्पति को एम.ए. के समकक्ष मान लिया गया।

2. 5 जुलाई 1948 को उत्तर प्रदेश सरकार ने गुरुकुल की अलंकार उपाधि को बी.ए. के समकक्ष स्वीकार कर लिया।
3. 6 नवम्बर 1948 को हिमाचल प्रदेश की सरकार ने गुरुकुल विद्याधिकारी को हाईस्कूल के समकक्ष, अलंकार (विद्यालंकार, वेदालंकार, सिद्धान्तालंकार और आयुर्वेदालंकार) को बी.ए. के समकक्ष, वाचस्पति (वेद वाचस्पति, विद्यावाचस्पति) को एम.ए. के समकक्ष स्वीकृत किया।
4. 6 मई 1948 को भारत की केन्द्रीय सरकार ने गुरुकुल के स्नातकों को सामयिक रूप से सरकारी विश्वविद्यालयों के ग्रेजुएट के समकक्ष मान लिया।
5. 13 अक्टूबर 1950 को पंजाब सरकार ने और 15 दिसम्बर 1949 को बम्बई की सरकार ने गुरुकुल की अलंकार डिग्री को बी.ए. के समान स्वीकार किया।

विभिन्न नौकरियों के लिए केन्द्रीय लोकसेवा आयोग तथा विभिन्न राज्यों के लोक सेवा आयोगों द्वारा जो परीक्षाएं ली जाती है उनमें बैठने के लिए बी.ए. होना पर्याप्त होता है। क्योंकि अब गुरुकुल की अलंकार उपाधि को केन्द्रीय सरकार तथा अन्य राज्य सरकारों ने बी.ए. के समकक्ष मान लिया था। अतः गुरुकुल के स्नातकों के लिए इन परीक्षाओं में बैठ सकने में कोई बाधा नहीं रह गयी थी और सरकारी नौकरी प्राप्त करने के लिए उनका मार्ग प्रशस्त हो गया था।

विभिन्न विश्वविद्यालयों द्वारा भी गुरुकुल की अलंकार उपाधि को मान्यता प्राप्त हो गयी थी। 16 जुलाई 1948 को आगरा विश्वविद्यालय ने अपनी सीनेट में यह प्रस्ताव पारित किया कि गुरुकुल से अलंकार परीक्षा उत्तीर्ण किये हुए स्नातक बिना बी.ए. पास किए आगरा विश्वविद्यालय से दर्शन, हिन्दी, राजनीति शास्त्र और अर्थशास्त्र विषयों में एम.ए. परीक्षा में बैठ सकते है। हिन्दू विश्वविद्यालय काशी ने भी यह स्वीकार किया कि गुरुकुल के स्नातक संस्कृत और हिन्दी विषयों में एम.ए. कर सकते है। जिन अन्य विश्वविद्यालयों और शिक्षा परिषदों ने गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय की परीक्षाओं तथा उपाधियों को स्वीकार किया। वे निम्नलिखित हैं-

1. **राजपूताना यूनिवर्सिटी**- हिन्दी, संस्कृत, पाश्चात्य दर्शन, अर्थ शास्त्र और राजनीति विज्ञान से एम.ए. करने के लिए अलंकार उपाधि।
2. **बिहार यूनिवर्सिटी**- हिन्दी, संस्कृत में एम.ए. करने के लिए अलंकार उपाधि।
3. **माध्यमिक शिक्षा परिषद् उत्तर प्रदेश**- गुरुकुल की अधिकारी (विद्याधिकारी) परीक्षा को हाईस्कूल परीक्षा के समकक्ष।
4. **दिल्ली विश्वविद्यालय**- हिन्दी, संस्कृत और पाश्चात्य दर्शन में एम.ए. के लिए अलंकार उपाधि को बी.ए. के समकक्ष मान्यता।
5. **उस्मानिया विश्वविद्यालय हैदराबाद**- हिन्दी और संस्कृत में एम.ए. करने के लिए अलंकार उपाधि को मान्यता।
6. **संस्कृत विश्वविद्यालय वाराणसी**- नैरुक्त प्रक्रिया और सामान्य दर्शन की आचार्य परीक्षा में प्रविष्ट होने के लिए अलंकार उपाधि को मान्यता।

गुरुकुल कांगड़ी में आयुर्वेदालंकार की उपाधि बहुत पहले से ही प्रारम्भ कर दी गयी थी। आयुर्वेदालंकार उपाधि को अनेकों सरकारों द्वारा मान्यता प्रदान की गयी थी। जिसके कारण आयुर्वेदालंकार उपाधि को धारण

किये स्नातकों के लिए सरकारी शासन क्षेत्र में आयुर्वेद की चिकित्सा करने में कोई बाधा नहीं रह गयी थी। पंजाब, मध्य, प्रदेश, बंगाल, उत्तरप्रदेश और उड़ीसा की सरकारों द्वारा आयुर्वेदालंकार उपाधि को स्वीकार कर लिया गया था। इतना ही नहीं नेपाल की सरकार ने भी आयुर्वेदिक चिकित्सालयों में आयुर्वेदालंकारों को नियुक्ति प्रदान करने को मान लिया था।

यह उपाधियों को मान्यता प्राप्त कराने का कार्य गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय के लिए बहुत ही महत्वपूर्ण था। इस समय स्नातकों के सम्मुख नौकरियां प्राप्त करने में कोई विशेष रुकावट नहीं थी। सरकारी विश्वविद्यालयों से भी एम.ए. परीक्षा उत्तीर्ण करके किसी भी विश्वविद्यालय एवं महाविद्यालयों में प्राध्यापक नियुक्त हो सकते थे। एम.ए. उत्तीर्ण पी-एच.डी. की उपाधि भी प्राप्त करने लगे थे। इस प्रकार शिक्षा के क्षेत्र में उच्च स्थिति प्राप्त कर सकते थे। इतना ही नहीं लोक सेवा आयोगों की परीक्षाओं में भी वे भाग ले सकते थे। लॉ कॉलेजों में प्रवेश लेकर एल.एल.बी. परीक्षा उत्तीर्ण करके वकालत भी कर सकते थे। इन उपर्युक्त सुविधाओं का बहुत से स्नातकों ने लाभ उठाया। हिन्दी, संस्कृत, राजनीति शास्त्र, इतिहास आदि विषयों में एम.ए. करके वे अच्छे पदों को प्राप्त करने में सफल हुए।

इस समय तक गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय की स्थिति एक स्वतन्त्र विश्वविद्यालय की ही थी। इस पर कोई सरकारी नियन्त्रण नहीं था। पाठ्यक्रम का निर्धारण करना, परीक्षाएं लेना आदि सभी कार्य शिक्षा-पटल के नियन्त्रण में चलते थे। गुरुकुल की व्यवस्था तथा संचालन विद्या सभा के ही नियन्त्रण में था। इनमें सरकार का कोई सदस्य नहीं था इस कारण ही सरकार के किसी भी हस्तक्षेप तथा नियन्त्रण के बिना गुरुकुल अपना कार्य स्वतन्त्र रूप से करने में समर्थ था।

गुरुकुल कांगड़ी की स्वर्ण जयन्ती

गुरुकुल कांगड़ी के सन् 1950 के वार्षिकोत्सव को स्वर्ण जयन्ती के रूप में धूम-धाम से मनाया गया। दीक्षान्त भाषण देने भारत के प्रथम राष्ट्रपति डॉ॰ राजेन्द्र प्रसाद आये थे। उन्होंने नव-स्नातकों को दीक्षान्त भाषण एवं आशीर्वाद प्रदान किया था। अपने भाषण के अन्त में उन्होंने भारत सरकार की ओर से एक लाख रुपये के अनुदान की घोषणा की थी। उसके पश्चात् भारत सरकार और उत्तर प्रदेश सरकार द्वारा अनुदान अनेक रूपों में गुरुकुल को प्राप्त होता रहा। इनमें विज्ञान महाविद्यालय के भवन के लिए एक लाख रुपये और उपकरणों को क्रय करने के लिए 65 हजार रुपये तथा पुस्तकालय भवन के लिए 50 हजार रुपये का अनुदान विशेष रूप से उल्लेखनीय है। यह अनुदान भारत सरकार द्वारा प्रदान किया गया था। इसी प्रकार आयुर्वेद महाविद्यालय और म्यूजियम के लिए उत्तर प्रदेश सरकार द्वारा अनुदान दिया गया था। यह अनुदान 4 लाख रुपये का था। यहाँ यह ज्ञातव्य है कि इस अनुदान के देने पर सरकार ने कोई शर्त नहीं लगाई थी।

स्वर्ण जयन्ती के अवसर पर अन्य अनेक विद्वान् भी सम्मिलित हुए थे। उन विद्वानों में भी चन्द्रभानु गुप्त, श्री घन श्याम सिंह गुप्त, राजाधिराज श्री उमेद सिंह शाहपुराधीश, दीवान बद्रीदास, पं॰ ठाकुरदत्त, महाशय कृष्ण, स्वामी सत्यानन्द, स्वामी आत्मानन्द श्री वासुदेव शरण अग्रवाल, पं॰ बुद्धदेव विद्यालंकार, पं॰ सत्यव्रत सिद्धान्तालंकार, कुंवर चांद किरण "शारदा" आदि के नाम उल्लेखनीय है।

सन् 1952 में श्री आद्रलेवी नामक विदेशी विद्वान् गुरुकुल में आये। उस समय डॉ॰ लेवी लखनऊ विश्वविद्यालय में फ्रेन्च भाषा के उपाध्याय थे। यह ज्ञातव्य है कि ये फ्रांस के प्रसिद्ध विद्वान् श्री लूई रेणु जो पुराविद्याओं के प्रसिद्ध विद्वान् हुए है, उनके शिष्य थे। इन्होंने यहाँ आकर यह इच्छा जाहिर की थी कि मैं संस्कृत भाषा गुरुकुल में ही आकर सिखूंगा और कुछ महीने रहकर इन्होंने संस्कृत भाषा का अध्ययन भी किया।

इसी वर्ष 1952 में उत्तर प्रदेश सरकार की ओर से अन्य विद्वानों के साथ गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय के तीन स्नातकों का भी पुरस्कार द्वारा अभिनन्दन किया गया। डॉ॰ सत्यकेतु विद्यालंकार को उनके ग्रन्थ "पाटलीपुत्र की कथा" तथा "राजनीति शास्त्र" नामक ग्रन्थों पर 800 रुपये का पुरस्कार मिला। इसी प्रकार श्री अत्रीदेव विद्यालंकार को उनकी पुस्तक "हमारे भोजन की समस्या" "भैषज्य कल्पना", स्त्रियों का स्वास्थ्य और रोग नामक तीनों ग्रन्थों पर 600 रुपये का पुरस्कार प्रदान किया गया। श्री रामेश बेदी की उनकी पुस्तक "लहसुन-प्याज", "तुलसी", "सौठ", "शहद और मिर्च" पर 600 का पुरस्कार प्रदान किया गया।[3]

जून 1952 में ग्रीष्मावकाश के समय में गुरुकुल कांगड़ी में विशिष्ट अतिथि पधारे, उनमें पं॰ हरिशंकर शर्मा "कविरत्न", आर्य विद्वान् श्री बाबू पूर्णचन्द एडवोकेट, "नागरिक" के सम्पादक स्नातक उमेशचन्द्र आगरा, पोरबन्दर आर्यकन्या गुरुकुल के मुख्याधिष्ठाता श्री चतुर भाई वी. पटेल तथा वहाँ की 40 छात्राएं और अध्यापिकाएं यहाँ गुरुकुल के अवलोकनार्थ गुरुकुल में आये और पुस्तकालय में आर्य साहित्य का अनुशीलन किया। इसी वर्ष गुरुकुल संग्रहालय में लखनऊ विश्वविद्यालय के भूगर्भीय विभाग के सौजन्य से चट्टानों, खनिजों तथा प्रस्तरीभूत, अवशेषों (फासिल्स) का संग्रह प्राप्त हुआ।[4]

सरकार द्वारा प्रदत्त अनुदान में यह कहा गया था कि जो धनराशि जिस कार्य के लिए प्रदान की गयी है, वह धनराशि उसी कार्य के लिए खर्च की जाए। गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय एक ऐसी स्थिति में आ गया था कि अन्य जो गुरुकुल थे उनके लिए वह ईर्ष्या का विषय बन गया था। अतः गुरुकुल कांगड़ी की स्थिति आर्थिक दृष्टि से सुदृढ़ होने लग गयी थी। इस समय जो सबसे प्रमुख उच्च स्थिति हो गयी थी वह यह थी कि उसकी उपाधियों को मान्यता प्राप्त हो गयी और यहाँ के स्नातक उच्च पदों पर नियुक्त हो गये थे। अतः यह कहा जा सकता है कि पूर्णरूपेण स्वतन्त्र तथा स्वायत्त रहकर पूर्ण विकास कर सकने में अब उसके मार्ग में कोई व्यवधान नहीं रह गया था। गुरुकुल शिक्षा प्रणाली के कुछ ऐसे अपने लाभ थे जिनसे प्रभावित होकर उस समय के लोग अपने पुत्रों को यहाँ प्रविष्ट कराते थे। यद्यपि इस समय उपाधियों को मान्यता प्राप्त हो गयी थी। सरकारी अनुदान भी बड़े-बड़े कार्यों के लिए प्राप्त होने लग गये थे। यह सब कुछ होने पर भी गुरुकुल में छात्रों की संख्या धीरे-धीरे कम होने लग गयी थी। वह कैसा विचित्र युग रहा होगा, जिस समय लोग अपने पुत्रों को यहाँ प्रविष्ट कराते थे, जिस समय गुरुकुल की उपाधियों का बाजार में कोई मूल्य ही नहीं था। गुरुकुल का खर्च चलाने के लिए पूर्ण रूपेण चन्दे पर निर्भर रहना पड़ता था। उस समय गुरुकुल के ब्रह्मचारियों की संख्या लगभग 400 रहती थी और गुरुकुल की समस्त शाखाओं को मिलाकर यह संख्या एक हजार तक पहुंच जाती थी। गुरुकुल कांगड़ी की स्वर्णजयन्ती के समय तक विद्याधिकारी और अलंकार की उपाधि को मान्यता प्राप्त हो चुकी थी। यह सब कुछ होने पर भी यह लिखना पड़ रहा है कि गुरुकुल में छात्रों की संख्या कम क्यों होने लगी। जबकि इस समय गुरुकुल की प्रबन्ध व्यवस्था भी ठीक चल रही थी। आर्थिक स्थिति भी दृढ़ रूप में थी। इससे ऐसा प्रतीत होता है कि प्रथम कारण यह रहा होगा कि धीरे-धीरे भौतिकता और विज्ञान का प्रभाव बढ़ने लगा था। दूसरा कारण यह प्रतीत होता है कि आर्य समाजियों में गुरुकुल शिक्षा प्रणाली के प्रति वह श्रद्धा और निष्ठा नहीं रही थी जो श्रद्धा व निष्ठा गुरुकुल स्थापना काल में थी। तीसरा यह भी कारण हो सकता है कि तकनीकी शिक्षा प्रारम्भ हो गयी थी। उसकी और साधारण जनता का झुकाव बढ़ता गया था, सम्भवतः इसी कारण धीरे-धीरे गुरुकुल में छात्रों की संख्या कम होती गयी होगी। गुरुकुल कांगड़ी के प्रशासन एवं प्रबन्धकों को यह स्थिति सन्तोषजनक नहीं लग रही थी। उनका यह विचार था कि इस समय अपना राज्य है। स्वतन्त्रता आन्दोलन में आर्य समाज और गुरुकुल का बहुत बड़ा योगदान रहा है। भारतवर्ष ने स्वतन्त्रता आन्दोलन के इतिहास में वीर आर्य समाजियों ने भी यह स्पष्ट रूप में माना है कि स्वतन्त्रता आन्दोलन में जो व्यक्ति

जेलों में गये, उनमें 80 प्रतिशत आर्य समाजी होते थे, श्री सीताभिराम पट्टाभिराम शास्त्री ने यह बात स्पष्ट रूप में लिखी है। इसलिए गुरुकुल कांगड़ी के अधिकारियों व विद्या सभा के सदस्यों में यह विचारधारा जोर पकड़ती चली गयी कि गुरुकुल कांगड़ी को एक चार्टेड यूनिवर्सिटी के रूप में भारत सरकार स्वीकार करें। यद्यपि चार्टेड विश्वविद्यालयों पर सरकार का कुछ नियन्त्रण भी रहता है, पर यह भी सही है कि उसकी स्वायत्तता भी सीमित हो जाती है। परन्तु उस समय गुरुकुल के संचालकों का यह विचार था कि इस समय अपना राज्य है और अपनी सरकार है, इसलिए सीमित सरकारी नियन्त्रण में कोई हानि नहीं हैं। क्योंकि विश्वविद्यालय का संचालन तो उसके संविधान द्वारा ही किया जायेगा जो प्रबन्ध समितियां होगी जैसे शिष्ट परिषद्, कार्य परिषद् आदि उनमें गुरुकुल के अधिकारी गण, आर्य प्रतिनिधि सभा के प्रतिनिधि गण सदस्यों के रूप में होगे ही। इसलिए गुरुकुल कांगड़ी को चार्टेड विश्वविद्यालय बनाने में कोई हानि नहीं है।

अत: 10 जनवरी 1948 के दिन विद्यासभा द्वारा निम्नलिखित प्रस्ताव स्वीकार किया गया- "अब वह समय आ गया है कि जब गुरुकुल विश्वविद्यालय के वर्तमान प्रबन्ध और संचालन में परिवर्तन करके इसे सरकार से चार्टर प्राप्त विश्वविद्यालय के रूप में चलाया जाए। अत: गुरुकुल को एक चार्टर विश्वविद्यालय बनाने के लिए सब आवश्यक प्रयत्न और व्यवस्था यथा सम्भव शीघ्र से शीघ्र की जानी चाहिए। परन्तु चार्टर प्राप्त करने में इस बात का पूर्ण ध्यान रखना चाहिए कि जिससे गुरुकुल को अपने मौलिक सिद्धान्तों और आदर्शों को छोड़ना न पड़े। 29 और 30 जनवरी 1949 को विद्यासभा की बैठकों में गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय (चार्टेड यूनिवर्सिटी) के उस बिल का प्रारूप विचारार्थ प्रस्तुत किया गया, जिसे सरकार से स्वीकृत करके गुरुकुल को चार्टर प्राप्त विश्वविद्यालय बनाया जाए।"

इस उपर्युक्त प्रस्ताव के अनुसार गुरुकुल कांगड़ी के अधिकारियों ने न केवल पत्र लिखे, अपितु राजनैतिक दबाव बढ़ाने के लिए सरकार से कई बार कुछ राजनैतिक नेता और सभा के नेतागण बार-बार मिलते रहे और उनसे यह आग्रह करते रहे कि गुरुकुल कांगड़ी को चार्टेड विश्वविद्यालय बनाया जाय। सरकार पक्ष का ये कहना था कि गुरुकुल कांगड़ी की अपनी कुछ परिसीमाएं हैं उसका स्वरूप पूर्ण रूपेण नहीं बदला जा सकता है इसलिए चार्टेड विश्वविद्यालय बनाने के लिए जो नियम एवं उपनियम है उनका गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय परिपालन नहीं कर सकता है। चार्टेड विश्वविद्यालय बनाने के लिए पार्लियामेन्ट द्वारा प्रस्ताव पारित करना आवश्यक है। प्रस्ताव पारित तभी किया जा सकता है जब एक कमीशन गुरुकुल कांगड़ी का निरीक्षण करें और अपनी संस्तुति में इसे चार्टेड विश्वविद्यालय बनाने की रिपोर्ट प्रस्तुत करें। चार्टेड विश्वविद्यालय बनाने के लिए यह आवश्यक है कि उस संस्था के पास पर्याप्त रूप से सम्पत्ति हो अथवा अन्य सम्पदा हो, छात्रों की संख्या बहुत अधिक हो, इसके साथ-साथ वह संस्था सरकार के समस्त नियमों कानूनों को मानने के लिए तैयार हो। जो कि गुरुकुल कांगड़ी इसके लिए तैयार नहीं है। अतः गुरुकुल कांगड़ी को चार्टेड यूनिवर्सिटी बनाने के प्रयत्न सफल नहीं हुए। यह अवश्य हुआ कि उत्तर प्रदेश सरकार और भारत सरकार कुछ आर्थिक सहायता अवश्य प्रदान करती रही। जिससे कि अनेक विधाओं में यह संस्था अपना विकास कर सकी। इसी काल में कृषि महाविद्यालय और विज्ञान महाविद्यालय की भी स्थापना हुई।

कृषि विद्यालय

पंजाब आर्य प्रतिनिधि सभा ने 22 मार्च 1921 को महाविद्यालय के पाठ्यक्रम में कृषि को भी एक पर्याय विषय के रूप में स्वीकार कर लिया था। परन्तु 1924 में गंगा में बाढ़ आ जाने के कारण वहाँ की खेती की भूमि अस्त-व्यस्त अवस्था में हो गयी थी। इसलिए इस विषय का अध्ययन बन्द कर देना पड़ा

था। गुरुकुल के इस नये परिसर में खेती योग्य भूमि की कोई न्यूनता नहीं थी। अतः 16 सितम्बर 1951 को विद्या सभा ने पुनः कृषि महाविद्यालय खोलने का निश्चय किया। केन्द्रीय सरकार व उत्तर प्रदेश की राज्य सरकार ने इस कार्य के लिए पर्याप्त धन अनुदान के रूप में प्रदान किया। इस प्रकार सन् 1955 में कृषि महाविद्यालय व्यवस्थित रूप में आरम्भ हो गया। यहाँ यह ज्ञातव्य है कि कृषि महाविद्यालय का पाठ्यक्रम उत्तर प्रदेश सरकार द्वारा निर्धारित पाठ्यक्रम के अनुसार ही कृषि विद्यालय में अध्ययन-अध्यापन प्रारम्भ हुआ। यहाँ जो छात्र दो वर्ष तक शिक्षा प्राप्त कर सरकारी परीक्षा उत्तीर्ण कर लेते थे, उन्हें सरकारी डिप्लोमा प्रदान किया जाता था। इसके साथ ही यह विचार था कि इस कृषि विद्यालय में डिप्लोमा के पश्चात् धीरे-धीरे इसका विकास करते हुए इसे कृषि विज्ञान की उच्च शिक्षा हेतु महाविद्यालय के रूप में परिवर्तित किया जायेगा। परन्तु यह विचार क्रियान्वित नहीं हो पाया। कृषि विद्यालय का गुरुकुल के साथ इतना ही सम्बन्ध रहा कि यह गुरुकुल के परिसर में स्थित था और उसके प्रबन्ध के लिए जो समिति बनाई गयी थी उसमें गुरुकुल के अधिकारी गण भी थे। वास्तव में इसका सम्पूर्ण व्यय सरकार ही वहन करती थीं। उसके शिक्षकों की नियुक्ति भी सरकार द्वारा ही की जाती थी। सरकार द्वारा निर्धारित नियम ही इस कृषि विद्यालय में चलते थे। प्रवेश भी उन्हीं नियमों के अनुसार चलता था। गुरुकुल की जो मान्यताएं अथवा और विशेषताएं है उनको दृष्टि में रखकर कोई नियम नहीं बनाये गये थे। यह भी कोई व्यवस्था नहीं की गयी थी कि कृषि विद्यालय में जो छात्र अध्ययन करते है उनकी जीवनचर्या अथवा आचरण गुरुकुल की मर्यादाओं के अनुसार होंगे तथा उनका रहन-सहन यहाँ के ब्रह्मचारियों के समान ही होगा। उत्तर प्रदेश के राज्य नियोजन विभाग की ओर से इस कृषि विद्यालय में ग्राम प्रशिक्षण केन्द्र की भी स्थापना हुई थी। जिसमें ग्रामसेवकों को प्रशिक्षण देने का कार्य होता था। इस ग्राम सेवकों के प्रशिक्षण केन्द्र में प्रशिक्षणार्थियों की संख्या 110 थी। सरकार द्वारा ही इसकी इमारत के लिए धन दिया गया था और इसका भी सब खर्च सरकार द्वारा वहन किया जाता था। कृषि विद्यालय तथा ग्राम प्रशिक्षण केन्द्र में छात्र एवं प्रशिक्षणार्थियों की कुल संख्या 230 थी। उस समय के गुरुकुल के अधिकारियों को यह अवश्य सन्तोष था कि गुरुकुल परिसर में इतने अधिक विभाग खुलते जा रहे है। परन्तु गुरुकुल के उद्देश्यों की पूर्ति के लिए यह विद्यालय कोई सहायक सिद्ध नहीं हो रहा था। कृषि विद्यालय के छात्र क्योंकि गुरुकुल के नियन्त्रण में नहीं थे इसलिए कई बार गुरुकुल परिसर में उनके द्वारा अनुशासनहीनता तथा झगड़े भी हो जाते थे। कुल मिलाकर यह कहा जा सकता है कि जिस उत्साह के साथ कृषि विद्यालय को खोला गया था उससे गुरुकुल के अधिकारियों को निराशा ही हाथ लगी।

आयुर्वेद महाविद्यालय

गुरुकुल कांगड़ी में आयुर्वेद को एक पर्याय विषय के रूप में प्रारम्भ किया गया था। जो छात्र पर्याय विषय के रूप में आयुर्वेद का अध्ययन करते थे उनकां आयुर्वेद के साथ संस्कृत, अंग्रेजी वेद और दर्शन भी अनिवार्य रूप से पढ़ना पड़ता था। पहले पहल उन्हें भी विद्यालंकार की उपाधि प्रदान की जाती थी परन्तु 1927 में आयुर्वेदालंकार की उपाधि भी प्रदान की जाने लगी और यह जानकर आश्चर्य होगा कि आयुर्वेदालंकार की उपाधि तथा वेद विषय शीघ्र ही बहुत लोकप्रिय हो गये। क्योंकि आयुर्वेदालंकार उपाधि प्राप्त स्नातक आयुर्वेद की चिकित्सा करना प्रारम्भ कर देते थे। इसलिए उनकों अपनी आजीविका अर्जित करना सरल हो जाता था। यही कारण था कि 1956 में विद्यासभा द्वारा एक ऐसा प्रस्ताव स्वीकृत किया गया कि गुरुकुल में आयुर्वेद के छात्रों की संख्या और अधिक बढ़ने लगी क्योंकि 16 जनवरी 1950 में विद्या सभा ने अपनी बैठक में यह निम्नलिखित प्रस्ताव स्वीकार किया था कि आयुर्वेद महाविद्यालय में ऐसे विद्यार्थी (डे० स्कॉलर्स) भी पढ़ने के लिए प्रविष्ट हो सकेंगे जो किसी कारण गुरुकुल आश्रम में निवास न कर सकते

हों और केवल आयुर्वेद महाविद्यालय में अध्ययन के लिए आना चाहते हों। ऐसे छात्रों के लिए गुरुकुल में निर्धारित आयु, अविवाहित जीवन, निरामिष भोजन, मादक वस्तुओं के सेवन न करने तथा शिक्षा योग्यता आदि विषयक नियमों का पालन करना आश्रमवासी विद्यार्थियों की भांति आवश्यक होगा। इन छात्रों से निर्धारित शुल्क लिया जायेगा।

आयुर्वेद महाविद्यालय की कुछ वर्ष तक "वार्षिक आयुर्वेद पत्रिका" के नाम से एक पत्रिका प्रारम्भ हुई थी।[5] उसके सम्पादक डॉ॰ राजेन्द्र कुमार अग्रवाल आयुर्वेदालंकार रीडर रसशास्त्र एवं भैषज्य कल्पना विभाग थे। इसके अनुसर आयुर्वेद महाविद्यालय का परिचत संक्षिप्त रूप में इस प्रकार दिया है- गुरुकुल कांगड़ी के संस्थापक स्वामी श्रद्धानन्द की विश्वविद्यालय की यह परिकल्पना रही थी कि जहाँ पर विश्व अर्थात् समस्त विश्व के मुख्य-मुख्य विषयों का अध्यापन होता हो वहीं विश्वविद्यालय है। गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय में एक विषय के रूप में आयुर्वेद विषय का प्रारम्भ विद्यालंकार के पाठ्यक्रम में पर्याप्त समय से ही था। इसलिए कितने ही विद्यालंकार हुए जो आगे चलकर बहुत ही योग्य चिकित्सक सिद्ध हुए। जैसे कि हम पूर्व भी वर्णन कर चुके है कि आयुर्वेद महाविद्यालय की स्थापना सन् 1922 में गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय के अन्तर्गत की गयी थी। उस समय यहाँ पर आयुर्वेद महाविद्यालय में तुलनात्मक पाठ विधि के अनुसार आयुर्वेद तथा एलोपैथिक का तुलनात्मक अध्ययन कराया जाता था। स्नातकों को आयुर्वेदालंकार की उपाधि प्रदान की जाती थी। आगे चलकर समस्त भारत में आयुर्वेदालंकार की उपाधि को मान्यता प्रदान की गयी थी। इसके साथ ही आयुर्वेद के स्नातकोत्तर अध्ययन के रूप में आयुर्वेद वाचस्पति की स्नातकोत्तर उपाधि से अलंकृत किया जाता था। आयुर्वेदालंकार उपाधि से पूर्व आयुर्वेद के स्नातकों को भी विद्यालंकार की उपाधि से ही विभूषित किया जाता था। उस समय आयुर्वेद के पाठ्यक्रम में सम्मिलित होने के लिए प्रवेश योग्यता हाईस्कूल या उसके समकक्ष परीक्षा थी।

आयुर्वेद महाविद्यालय ने भारत वर्ष में अपनी पहचान बना ली थी। देश स्वतन्त्र होने के पश्चात्, जिस समय गुरुकुल कांगड़ी के प्रशासन का ध्यान अथवा यह मांग पैदा हुई कि हमें देश स्वतन्त्रता के पश्चात् सरकारी अनुदान से परहेज नहीं करना चाहिए। उस समय विद्या सभा ने एक प्रस्ताव पारित किया कि आयुर्वेद महाविद्यालय की मान्यता के लिए भी प्रयास किये जाए। इस प्रयास के अन्तर्गत इस आयुर्वेद महाविद्यालय को भारतीय चिकित्सा परिषद् उत्तर प्रदेश से सम्बद्ध कर दिया गया। आयुर्वेद परिषद् से सम्बद्ध हो जाने पर आयुर्वेदालंकार का पूर्व पाठ्यक्रम धीरे-धीरे परिवर्तित होता चला गया, मिश्रित चिकित्सा प्रणाली का, जो पाठ्यक्रम भारतीय चिकित्सा परिषद् उत्तर प्रदेश का था उसे पूर्ण रूपेण प्रारम्भ किया गया। इसके अनुसार आयुर्वेद तथा एलोपैथी के विषयों के पृथक्-पृथक् रूप से अध्ययन तथा परीक्षा की व्यवस्था थी। इस पाठ विधि के अनुसार स्नातकों को बी.आई.एम.एम. की उपाधि प्रदान की जाने लगी। इसके पश्चात् सन् 1957 में प्रवेश योग्यता हाईस्कूल से बदलकर विज्ञान विषय से इन्टर मीडिएट या समकक्ष परीक्षा निर्धारित कर दी और उपाधि को परिवर्तित करके ए.एम.बी.एस. नाम रखा गया। पुनः 1958 में बोर्ड ने डिग्री को बदलकर आयुर्वेदाचार्य (बी.ए.एम.एस.) कर दिया और इसकी प्रवेश योग्यता इन्टरमीडियट साइन्स ग्रुप(बी) कर दी गयी। इस समय बोर्ड ने अपने पाठ्यक्रम में परिवर्तन करके शुद्ध आयुर्वेद का पाठ्यक्रम लागू कर दिया था। परन्तु इस व्यवस्था के अनुसार आयुर्वेद के विषयों का स्पष्टीकरण आधुनिक ढंग से भी करने की व्यवस्था थी। सन् 1971 में आयुर्वेद महाविद्यालय में छात्रों ने एक आन्दोलन खड़ा कर दिया। उनकी मांग थी कि आयुर्वेद महाविद्यालय को कानपुर विश्वविद्यालय से सम्बन्धित कर दिया गया था। इस प्रकार यह आयुर्वेद महाविद्यालय कानपुर विश्वविद्यालय के आयुर्वेद संकाय के रूप में हो गया। इस समय भी प्रवेश योग्यता इन्टरमीडियट साइन्स ग्रुप(बी) स्नातक को आयुर्वेदाचार्य (बी.ए.एम.एस.) उपाधि प्रदान की जाती थी और दी जाती है।

यहाँ यह ज्ञातव्य है कि इस संस्था का इन्डियन मेडीसन बोर्ड से सम्बद्ध होने से पूर्व इसका सम्पूर्ण प्रबन्ध गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय की विद्या सभा द्वारा किया जाता था। अर्थात् आयुर्वेद महाविद्यालय की स्थापना गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय ने ही की थी। इसलिए उसका समस्त आर्थिक भार गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय ही वहन करता था। बोर्ड से सम्बद्ध होने के पश्चात् आयुर्वेद महाविद्यालय का 50 प्रतिशत व्यय अथवा खर्च उत्तर प्रदेश सरकार से प्राप्त अनुदान से वहन किया जाने लगा और शेष 50 प्रतिशत खर्चा गुरुकुल कांगड़ी की प्रबन्ध सभा करती थी। इस प्रकार शनै-शनै निर्धारित पाठ्यक्रम के अनुसार स्टाफ, साज-सज्जा, उपकरण आदि का प्रबन्ध करने के कारण आयुर्वेद महाविद्यालय का बजट बहुत अधिक वृद्धि को प्राप्त होने लगा था। उत्तर प्रदेश सरकार केवल 50 प्रतिशत ही खर्च वहन करती थी। इसलिए शेष 50 प्रतिशत का प्रबन्धं गुरुकुल कांगड़ी की विद्या सभा को करना होता था, उसकी आमदनी केवल फार्मेसी द्वारा प्रदत्त धन से ही होती थी। इसलिए गुरुकुल कांगड़ी की आर्य विद्या सभा खर्चा वहन करने में असमर्थ सी हो गयी थी। यहाँ आयुर्वेद महाविद्यालय में छात्रों एवं समस्त शिक्षक और शिक्षकेत्तर कर्मचारियों की मांग थी कि आयुर्वेद महाविद्यालय को राजकीय महाविद्यालय घोषित किया जाय। इस मांग को लेकर गुरुकुल कांगड़ी में एक तूफान सा खड़ा हो गया। उधर गुरुकुल कांगड़ी के अपने ही त्रिशासन आदि को लेकर, "यह कुलपति वैध अथवा अवैध है" के विवाद चरमसीमा पर पहुंच चुके थे। इन सब परिस्थितियों के कारण आर्य विद्या सभा ने आयुर्वेद महाविद्यालय को चलाने में अपनी असमर्थता प्रकट करते हुए यह प्रस्ताव पारित किया कि आयुर्वेद महाविद्यालय की चल-अचल सम्पत्ति को उत्तर प्रदेश सरकार को दे दिया जाय। यह प्रस्ताव 15-5-1977 को पारित किया गया। इस प्रस्ताव के अनुसार शासनादेश संख्या 4765 सैक्शन 9/5/185/77 चिकित्सा अनुभाग (ई) द्वारा उत्तर प्रदेश शासन ने विद्या सभा को निलंबित करके 22 जुलाई 1977 को स्थानीय न्यायाधीश हरिद्वार को आयुर्वेद महाविद्यालय का प्रशासक नियुक्त किया। यद्यपि इस समय भी शासन द्वारा 50 प्रतिशत ही खर्चा दिया जाता था परन्तु कुछ समय पश्चात् 75 प्रतिशत अनुदान देना प्रारम्भ कर दिया। उत्तर प्रदेश शासन ने 10 अगस्त 1978 को अपने शासनादेश संख्या 6626 सेक्शन 9/5426/74/7 के द्वारा प्रबन्ध तन्त्र को भंग करके आयुर्वेद महाविद्यालय का प्रान्तीयकरण कर दिया।

यद्यपि उस समय आयुर्वेद महाविद्यालय के शिक्षक और शिक्षकेतर कर्मचारियों को एक प्रसन्नता विशेष का अनुभव हुआ होगा। गुरुकुल कांगड़ी की प्रबन्ध सभा को कुछ विवादों के कारण कोई भी असमर्थता रही हो, परन्तु इसका बड़ा ही दुःखद परिणाम भी सामने आया। यहाँ यह ज्ञातव्य है कि जिस समय चौ० चरण सिंह उत्तर प्रदेश सरकार के मुख्यमंत्री थे, उस समय भी उत्तर प्रदेश के आयुर्वेद के छात्रों ने उत्तर प्रदेश सरकार को विवश-सा कर दिया था कि हमे किसी विश्वविद्यालय से सम्बद्ध किया जाय। उस समय चौ० चरण सिंह ने मुख्यमन्त्री के रूप में तत्कालीन कुलपति आचार्य प्रियव्रत को पत्र लिखा था कि उत्तर प्रदेश सरकार अपने सभी आयुर्वेद महाविद्यालयों को गुरुकुल विश्वविद्यालय को देना चाहती है। अतः आप आयुर्वेद संकाय के रूप में गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय से सम्बन्द्ध कर ले। इसका समस्त व्यय का वहन उत्तर प्रदेश सरकार करेगी। इससे यह अर्थ निकलता है कि गुरुकुल कांगड़ी आयुर्वेद महाविद्यालय का महत्व एवं यहाँ के योग्य स्नातकों का वर्चस्व इतना बढ़ा हुआ था कि उत्तर प्रदेश के मुख्यमन्त्री को यहाँ के कुलपति से प्रार्थना करनी पड़ी थी। यदि उस समय आयुर्वेद महाविद्यालय को विज्ञान महाविद्यालय की तरह आयुर्वेद संकाय के रूप में गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय ने अपने अन्दर समाहित कर लिया होता तो, ऋषियों द्वारा प्रचलित किए गये शुद्ध आयुर्वेद की रक्षा हो जाती और आयुर्वेद की रक्षा करने में गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय सक्षम हो पाता। इसके साथ यह महती हानि उठानी पड़ी थी कि

गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय का एक बहुत बड़ा भू-भाग उत्तर प्रदेश सरकार को आयुर्वेद महाविद्यालय के माध्यम से चला गया। जिन दानियों ने गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय से प्रभावित होकर इतना बड़ा भू-भाग दान के रूप में प्रदान किया था वह सब व्यर्थ हो गया। उस समय यदि विश्वविद्यालय अनुदान आयोग तथा शिक्षा मंत्रालय भारत सरकार से एक प्रोजेक्ट बनाकर शुद्ध आयुर्वेद का उच्चतम अध्ययन (शोध) केन्द्र के रूप में बड़ी सरलता से मान्यता ली जा सकती थी।

जिस समय आयुर्वेद महाविद्यालय को राजकीय महाविद्यालय बनाया गया उस समय यहाँ पर आयुर्वेद के सुयोग्य चिकित्सक तथा आयुर्वेद के महान् विद्वान् तैयार करना उद्देश्य था। उस समय आयुर्वेद संहिताओं तथा आयुर्वेद विषयों के ज्ञान के साथ आधुनिक चिकित्सा विज्ञान का भी समुचित अध्ययन कराया जाता था। सभी विषयों में क्रियात्मक शिक्षा की भी समुचित व्यवस्था थी। महाविद्यालय में 80 शय्याओं का सुसज्जित अन्तरंग चिकित्सालय ही था। जिसमें शल्य, शालक्य, काय चिकित्सा और प्रसूति विभाग थे। यहाँ पर सुयोग्य चिकित्सकों के द्वारा रोगियों की शल्य चिकित्सा तथा काय चिकित्सा की पूर्ण व्यवस्था थी। यहाँ अनेक प्रकार के मेजर आपरेशन की व्यवस्था भी थी, जिनमें प्लास्टिक सर्जरी भी थी। प्रतिवर्ष लगभग दो सौ आपरेशन किये जाते थे। अन्तरंग चिकित्सालय में लगभग चार सौ रोगी चिकित्सा प्राप्त करते थे। बहिरंग विभाग में प्रतिवर्ष लगभग 30 हजार रोगी चिकित्सा लाभ उठाते थे। रोगियों को सभी प्रकार की गुरुकुल कांगड़ी फार्मेसी द्वारा उत्तम आयुवैदिक औषधियां दी जाती थी। राजकीय आयुर्वेदिक कॉलेज बनने के पश्चात् तो आयुर्वेद् की ओषधियां नाम को दी जाती है। उस समय महाविद्यालय मे एक शल्य क्रिया भवन था जो सभी आधुनिक उपकरणों से सज्जित था। निदान प्रयोगशाला में रोगियों के मल-मूत्र, रक्त, श्लेष्मा आदि की रासायनिक तथा सूक्ष्मदर्शी द्वारा परीक्षा की पूर्ण व्यवस्था थी। छात्रों को इन परीक्षणों का अभ्यास भली-भांति कराया जाता था। महाविद्यालय का द्रव्य गुण संग्रहालय बहुत ही उत्तम था। जिसको देखने के लिए हजारों यात्री प्रतिवर्ष यहाँ आते थे। इस संग्रहालय में सैकड़ों प्रामाणिक औषधियां, दुर्लभ हरी पत्तियां, सुदूर देशों में उत्पन्न और अप्राप्य औषधियों के रंगीन चित्र तथा वनस्पति फलक संग्रहित किये गये थे। महाविद्यालय के मत्स्यालय में अनेक प्रकार की सुन्दर मछलियां थी। यहाँ पर एक अनूठा संग्रहालय था जिसमें जीव विज्ञान, वनस्पति विज्ञान, शरीर शास्त्र, प्रकृति ज्ञान, विकास कार्य आदि से सम्बन्धित दुर्लभ सामग्री सुरक्षित थी। इसके अतिरिक्त सुरक्षित जीव जन्तु, अस्थिपंजर, मिट्टी के नमूने वनस्पतियां चार्ट्स आदि से यह संग्रहालय सुसज्जित था। सफेद भालू इस संग्रहालय में विशेष आकर्षण का कारण था। छात्रों द्वारा कांगड़ी पार से लाए गये एक हाथी का अस्थिपंजर इस संग्रह की शोभा को चार चांद लगाता था। इसी प्रकार लोमड़ी को निगलते हुए अजगर का अस्थिपंजर भी इस संग्रह के आकार की वृद्धि करता था। उत्तर-प्रदेश के किसी भी आयुर्वेद महाविद्यालय में इस प्रकार का सुसज्जित एवं श्रेष्ठ संग्रहालय नहीं था। महाविद्यालय की वनस्पति वाटिका में सैकड़ों प्रकार की वनस्पतियां थी, जिनके द्वारा छात्रों को द्रव्य गुण का क्रियात्मक ज्ञान कराया जाता था। यहाँ पर द्रव्य गुण संग्रहालय तथा वनस्पति वाटिका देखने के लिए प्रतिवर्ष अनेक आयुर्वेद महाविद्यालयों के छात्र आते थे। यहाँ महाविद्यालय का रस शास्त्र विभाग, पंचकर्म विभाग पूर्ण रूपेण सुसज्जित था। यहाँ महाविद्यालय का रस शास्त्र विभाग, पंचकर्म, विभाग पूर्ण रूपेण सुसज्जित था। यहाँ पर पंचकर्म भवन में रोगियों के स्नेहन, स्वेदन, अवगाहन, अस्थापना, अनुवासन की पूर्ण व्यवस्था थी। यहाँ पर जीर्णशीर्ण रोगियों के कठिन रोगों का भी सफलता पूर्वक उपचार किया जाता था। छात्रों को इसकी क्रियात्मक शिक्षा दी जाती थी। शवच्छेदन भवन में विद्यार्थियों के क्रियात्मक की पूर्ण व्यवस्था थी। यहाँ इस गृह में 20 शवों पर एक साथ कार्य किया जा सकता था। शवों को प्रीजर्व करके रखा जाता था। इसके साथ ही मनुष्य की अस्थियों का संग्रह किया जाता था। शरीर क्रिया विज्ञान प्रयोगशाला में 40

विद्यार्थी एक साथ क्रियात्मक ज्ञान प्राप्त करते थे। यहाँ पर रस, रक्त, मूत्र, मल आदि की पूर्ण परीक्षा की व्यवस्था थी। आयुर्वेद महाविद्यालय के छात्रों के लिए एक सुन्दर छात्रावास और भोजनालय की व्यवस्था भी थी।

आयुर्वेद महाविद्यालय के स्नातकों में अनेक स्नातक योग्य चिकित्सक तथा चिकित्सा क्षेत्र के विविध क्षेत्रों में उच्च कोटि के विद्वान् माने जाते है। इस महाविद्यालय के अनेक स्नातकों ने विदेशों में जाकर स्नातकोत्तर उच्च अध्ययन किया है। अनेक स्नातकों ने शल्य चिकित्सा में विपुल ख्याति अर्जित की है। इनमें आचार्य ब्रह्मदत्त शर्मा, आचार्य निरञ्जनदेव आयुर्वेदाचार्य, आचार्य धर्मदत्त वैद्य, वैद्य रणजीत राय देसाई आयुर्वेदाचार्य, डॉ॰ इन्द्रसेन जेतली, जयदेव विद्यालंकार, डॉ॰ अनन्तानन्द, वैद्य सत्यदेव, डॉ॰ बलराम आयुर्वेदालंकार, डॉ॰ अत्रिदेव (एम.डी.) म्यूनिख विश्वविद्यालय (डॉ॰ नारायणदत्त आयुर्वेदालंकार (एम.डी.) म्यूनिख विश्वविद्यालय (डॉ॰ राजेश्वर आयुर्वेदालंकार) एम.डी. म्यूनिख वि.वि. (डॉ॰ राजपाल सिंह आयुर्वेदालंकार) डी.म्यूनिख वि.वि. (डॉ॰ धर्मानन्द केसरवानी आयुर्वेदालंकार) एम.डी. म्यूनिख वि.वि. (एम.डी. (रोम), टी. डी.डी. (इटली) जेड.टी. (वियना) जेड-चिरूजी (बर्लिन) आदि अनेक सुयोग्य स्नातकों में जो योग्य चिकित्सक एवं प्रसिद्ध शल्य चिकित्सक के रूप में सुविख्यात है। जिन्होंने भारत में ही आयुर्वेद की उच्च शिक्षा प्राप्त की, जो आयुर्वेद महाविद्यालय के गौरव कहे जा सकते है। जिन्होंने आयुर्वेद महाविद्यालय में सुयोग्य प्राध्यापक के रूप में सेवा की, उनमें डॉ॰ धर्मानन्द केसरवानी, वैद्य धर्मदत्त, डॉ॰ राधाकृष्ण, डॉ॰ रामदयाल कपूर, डॉ॰ बेलीराम, डॉ॰ सुन्दरलाल भण्डारी, डॉ॰ इन्द्रसेन जेटली, वैद्य निरन्जन देव डॉ॰. अनन्तान्द, वैद्य रामनाथ, डॉ॰ रामरक्ष पाठक, डॉ॰ आनन्द मोहन अरोड़ा आदि अनेक आयुर्वेद के विद्वान् प्राध्यापक गण हुए है जिन्होंने आयुर्वेद जगत् में अपना ही नाम नहीं किया अपितु अनेक सुयोग्य आयुर्वेद के विद्वान् उत्पन्न किये है।

उत्तर प्रदेश के आयुर्वेद कमीशन ने सन् 1926 में आयुर्वेद महाविद्यालय के विषय में लिखा था कि- "गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय का मेडिको आयुवैदिक कॉलेज उच्च प्रतिष्ठा प्राप्त प्रथम कोटि का कॉलेज है, इसका सुयोग्य प्राध्यापक मण्डल और उनके अध्यापन की अत्याधुनिक परिशोधित शैली, इसकी शिक्षा सामग्रियों की सम्पूर्णता, इसका उत्तमोत्तम पुस्तकों का संग्रह और इसका विशाल दृष्टिकोण विशिष्ट रूप से सराहनीय है।"

इस महाविद्यालय के प्रारम्भ से ही कुशल प्राचार्य हुए है जिनके नेतृत्व में यह निरन्तर उन्नति करता रहा है। इन सभी प्राचार्यो ने अपने सतत् परिश्रम द्वारा कॉलेज की निरन्तर उन्नति की और अग्रसर करने में योगदान किया है।

महाविद्यालय के प्राचार्यों का कार्यकाल निम्नलिखित रहा है-

1.	डॉ॰ राधाकृष्ण	सन् 1922 से 1939 तक
2.	वैद्य धर्मदत्त	सन्1939 से
3.	डॉ॰ रामरक्ष पाठक	सन् 1943 से 1947 तक
4.	डॉ॰ जवाहर लाल	सन् 1948 से 1951 तक
5.	डॉ॰ सुन्दर लाल भण्डारी	सन् 1951 से 1954 तक
6.	वैद्य नेरन्द्रनाथ	सन् 1954 से 1956 तक
7.	वैद्य निरंजन देव	सन् 1956 से 1965 तक
8.	डॉ॰ अनन्तारानन्द	सन् 1965 से 1977 तक

9.	डॉ० क्रान्ति कृष्ण	सन् 1977 (जनवरी 77 से मार्च 77)
10.	डॉ० धर्मपाल सिंह	सन् 1977 (14 मार्च 77 से 23 जुलाई 77)
11.	डॉ० नरेन्द्रपाल वर्मा	सन् 1977 (24 जुलाई से 5 अक्टूबर 1980 तक)

आयुर्वेद की औषधियों का निर्माण गुरुकुल कांगड़ी के आयुर्वेद महाविद्यालय में लगभग 70 वर्ष पहले प्रारम्भ किया था। इन औषधियों की प्रसिद्धि शीघ्र ही सारे भारत में फैल गयी। उस समय आयुर्वेद की औषधियों की मांग पशिचम भारत और वर्तमान पाकिस्तान में बहुत अधिक थी। आज गुरुकुल कांगड़ी फार्मेसी एक प्रसिद्ध आयुर्वेद संस्थान के नाम से विख्यात है। गुरुकुल कांगड़ी फार्मेसी पर उसके आरम्भ से लेकर आज तक के इतिहास को एक अलग अध्याय के रूप में प्रस्तुत किया जा रहा है।

जून 1952 में गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय में विशिष्ट व्याख्यान मान्य पं० बुद्धदेव जी विद्यालंकार के हुए। पं० बुद्धदेव विद्यालंकार सप्ताह भर गुरुकुल में रहे, उनके व्याख्यान विकासवाद, अध्यात्मवाद और मोक्षवाद इन विषयों पर सम्पन्न हुए। विद्यालंकार महोदय ने यह सिद्ध किया कि भौतिकवाद और अध्यात्मवाद का समन्वय हमें भारतीय संस्कृत वाङ्मय में ही प्राप्त होता है। इसी व्याख्यान श्रृंखला में श्री अरविन्द आश्रम के विख्यात विद्वान् श्री अम्बालाल पुराणी जी ने श्री अरविन्द के जीवन, कर्म और उनकी दार्शनिक पृष्ठ भूमिका को विस्तार पूर्वक समझाया।[6]

गुरुकुल कांगड़ी का 52 वां महोत्सव 11 से 14 अप्रैल के दिनों में सम्पन्न हुआं। स्वामी अभेदानन्द का बहुत ही सुन्दर विचारात्तेजक व्याख्यान हुआ, मध्याह्न के पश्चात् आचार्य नरदेव शास्त्री वेदतीर्थ की अध्यक्षता में वेद सम्मेलन सम्पन्न हुआ। इस वेद सम्मेलन में ब्रह्मचारियों के निबन्ध वाचन किये गये। वेद सम्मेलन के पश्चात् पं० प्रकाशवीर शास्त्री के तेजस्वी व्याख्यान हुआ। उत्सव के दूसरे दिन स्वामी व्रतानन्द जी महाराज का भूलोकोत्थान के साधन विषय पर एक उपदेश हुआ। इसके पश्चात् महाशय कृष्ण जी की अध्यक्षता में सरस्वती सम्मेलन हिन्दी में प्रारम्भ हुआ। इस सम्मेलन में चर्चा हुई कि आज समस्त विश्व दो समूहों में विभाजित है- अमेरिका और रूस। भारत इनके मध्य में मध्यम मार्ग अपनाना चाहता है। "अमेरिका का जोर इस बात में है कि मनुष्य के जीवन स्तर को नीचे लाकर आर्थिक विषमता दूर करनी चाहिए। भारत स्वेच्छापूर्वक काम को नैतिक भावना पर बल देकर आर्थिक विषमता को दूर करना चाहता है। यह धार्मिक भावना ही समस्या का हल ला सकती है।" पं० विश्वनाथ त्यागी ने वैदिक वर्ण व्यवस्था की महत्ता प्रदर्शित करने वाला एक विचारोत्तेजक भाषण दिया। इसी प्रकार श्री प्रकाशवीर शास्त्री ने "भारतीय संस्कृति में नारी का स्थान" विषय पर बहुत ही मनोहर भाषण दिया। इसके पश्चात् स्वामी सत्यदेव परिव्राजक ने अपने भाषण में कहा कि हमें स्वराज्य तो मिल गया है परन्तु अब हमें इसे सुराज्य बनाना है। सुराज्य बनाने पर ही हमारे कष्ट दूर हो सकेगें।

रात्रि में मेरठ कालेज के प्रो० धर्मेन्द्रनाथ तर्कशिरोमणि ने "संस्कृत विद्या को खोज और अनुशीलन के लिए भागीरथी प्रयत्न करने चाहिए" विषय पर व्याख्यान किया। उत्सव के तीसरे दिन दीक्षान्त समारोह प्रारम्भ हुआ। इस समारोह में पं० ठाकुर दत्त अमृतधारा वाले जो उस समय सभा के प्रधान और विश्वविद्यालय के चान्सलर थे। उन्होंने कुलपताका का आरोहण किया। और सभी ने शोभायात्रा के रूप में सभा मण्डप की ओर चलना प्रारम्भ किया। प्रमाण पत्र वितरित करने के पश्चात् श्री विजन कुमार मुखोपाध्याय ने अंग्रेजी भाषा में दीक्षान्त भाषण दिया। इसके बाद उन्होंने उसी भाषण का सार संस्कृत भाषा में भी बताया। इसी दीक्षान्त अवसर पर श्रीयुत् गुरुजी माधवराव गोलवलकर उत्सव मण्डप में पधारे। उन्होंने नवस्नातकों का स्वागत और अभिनन्दन करते हुआ कहा "आज इस शुभ अवसर पर महर्षि दयानन्द का वह आज पूर्ण वचन याद आ रहा है:- "क्वं साम्राज्य वादिन:" आर्य साम्राज्य के नाम से भय खाने की जरूरत नहीं हैं।

क्योंकि हम उनके द्वारा सत्य श्रेष्ठ और अटल सिद्धान्तों को प्रतिष्ठित करना चाहते है। आत्मविश्वास के बल पर ही महान् आर्य साम्राज्य स्थापित किया जा सकता है। आज स्थिति क्या है ? चारों ओर से वातावरण भौतिकताग्रस्त हैं। कहा जाता है धीरे बोलो, कम बोलो मत बोलो। सर्वत्र दब्बूपन की भावना दीख रही है। ऐसी निकृष्ट भावना के सामने आत्मविश्वास को बुलन्द करने वाला भारत है। "वयं साम्राज्य वादिन:" उसे पुन: जागृत करने की आवश्यकता है। स्वयं पर श्रद्धा रखकर आगे बढ़ने का मार्ग निकालना हमारा कार्य होना चाहिए।"[7]

जून 1952 में अमरीकन दूतावास की शिक्षाधिकारिणी श्रीमती रूपराईट ने गुरुकुल में आकर गुरुकुल के विषय में "उन्होंने गुरुकुल की स्थापना, विशेषताएं, कार्य का प्रकार, विस्तार आदि बातों का परिचय बड़ी अभिरूचि के साथ प्राप्त किया। गुरुकुल के कार्य और वातावरण से बहुत प्रभावित हुई। शीतकाल में पुन: अपने मित्रों के साथ आने की इच्छा प्रकट की गयी।"[8]

मैसूर के भूतपूर्व मेयर श्री एन. केशव अयंगर (भारतीय संसद के सदस्य) भी उसी दिन गुरुकुल में पधारे। वे गुरुकुल के प्रति इतने श्रद्धालु थे कि उन्होंने गुरुकुल कांगड़ी की परिक्रमा बड़ी प्रसन्नता प्रकट करते हुए की थी। उन्होंने अपने उद्‌गार प्रकट करते हुए कहा था कि "यहाँ की प्रसन्न बदन बाल मण्डली को निहार कर हृदय खिल उठा है। क्या ही अच्छा हो मैसूर में भी उसी नमूने की एक संस्था स्थापित हो जाए। निश्चय ही यह संस्था हमारे देश के लिए गौरवरूप है।[9]

अगस्त 1952 में 3865 व्यक्ति संग्रहालय को देखने आये, इनमें उत्तर प्रदेश से 1030, पंजाब से 1780, दिल्ली से 536, मध्यप्रदेश से 40, बिहार से 130 बंगाल से 178, मद्रास से 42, बम्बई से 232, राजपूताना से 58, मध्यभारत से 16, सौराष्ट्र से 20 । डॉ० वासुदेवशरण अग्रवाल काशी हिन्दू विश्वविद्यालय ने उस समय संग्रहालय के अध्यक्ष को लिखा था कि "आप चलते नहीं दौड़ते है। भारतीय कला के सुप्रसिद्ध मर्मज्ञ, कलकत्ता विश्वविद्यालय के ललित कला विभाग के पूर्व उपाध्याय तथा भारतीय कला पर प्रमाणित अनेक पुस्तकों के प्रणेता श्री अद्धेन्द्र कुमार गांगुली की इस संग्रहालय के सम्बन्ध में शुभ सम्मति यह है कि शिक्षा की दृष्टि से यह संग्रहालय बहुत महत्वपूर्ण है। हरिद्वार के सबसे प्राचीन मन्दिर मायादेवी के ऊपर से उतरे सिन्दूर के .2, ढाई इंच मोटे खण्ड श्री रामेश बेदी के प्रयत्न से जूना अखाड़े के महन्त श्री वैजनाथ जी से प्राप्त हुए है। मूर्तियों पर सिन्दूर का लेप कभी-कभी किया जाता है, इस लेप की तह भी बहुत पतली रहती है। एक तह पर दूसरी तह गढ़ते रहने से अब इस खण्ड में हजारों तह नज़र आती है। अनुमान होता है कि सिन्दूर को इतना मोटा रूप धारण करने में हजार साल से अधिक समय लग गया होगा। इस सिन्दूर की वैज्ञानिक पद्धतियों द्वारा परीक्षण किया जा रहा है और परतों का अध्ययन करने का प्रयत्न किया जा रहा है। माइक्रोस्क्रोप से सेक्सन लेकर उसी माइक्रोस्कोपिक लाइट (आणुविक्षिक फलक) तैयार की जायेगी और उससे माइक्रोफोटोग्राफ लिया जायेगा। आशा है कि फोटोग्राफ की परिवर्तित रूप में परते इतनी स्पष्ट और पृथक्-पृथक् दीखने लगेगी, जिससे उनकी ठीक-ठीक गणना की जा सकेगी।"[10]

अक्टूबर 1952 में आर्य समाज के प्रसिद्ध विद्वान् श्री अलगूराय शास्त्री गाँधी जयन्ती के अवसर पर गुरुकुल में पधारें। महाविद्यालय के छात्रों ने स्टेशन पर ही उनका स्वागत किया। आप ने समस्त गुरुकुल में परिक्रमा की। गाँधी जयन्ती के अवसर पर युग पुरूष गाँधी जी की महत्ता एवं विशेषताओं पर प्रकाश डाला। उसी के साथ गुरुकुल शिक्षा विधि के प्रथम मंत्र दाता महर्षि दयानन्द की जीवन दृष्टि और कार्य प्रणाली की तुलनात्मक समीक्षा करते हुए दोनों ही को महापुरुषों के रूप में प्रस्तुत किया। इन्हीं दिनों महाराष्ट्र के प्रसिद्ध मनीषी एल. फिलिंस्टन, मुम्बई के प्रोफेसर एन. जे. सैडे और एम.ए.एच.डी. भी गुरुकुल

परिसर में पधारे। उन्होंने गुरुकुल शिक्षा पद्धति पर शिक्षा प्रणालियों में उत्कृष्ट प्रणाली विषय को लेकर अपने विचार अभिव्यक्त किये।[11]

गुरुकुल के सुयोग्य स्नातक श्री जयदेव वेदालंकार विशेष अध्ययन के लिए लंदन विश्वविद्यालय में गये थे, वहाँ उन्होंने डॉ॰ टर्नर के निर्देशन में प्रमोद चन्द्रोदय नामक संस्कृत नाटक पर विशेष शोध किया था। इस कार्य के लिए उन्होंने इंग्लैण्ड और फ्रांस के विविध पुस्तकालयों में विद्यमान कोई प्राचीन सोलह हस्तलिखित प्रतियों की छानबीन करके एक विराट् खोजपूर्ण शोध प्रबन्ध लिखा था। वहीं से उनको पी-एच.डी. उपाधि से सम्मानित किया गया था। इस अवसर पर गुरुकुल में पधारने पर उनका भव्य स्वागत किया गया।

उत्तर-प्रदेश योजना विभाग के उपमंत्री श्री ठाकुर फूल सिंह गुरुकुल के संग्रहालय में पधारे। उन्होंने पुरातत्व संग्रहालय को बड़ी ही तन्मयता से अवलोकित किया। इसके अतिरिक्त उपगृहमंत्री श्री युत् एन "दातार" महोदय ने गुरुकुल में आकर वेदमन्दिर और संग्रहालय का निरीक्षण किया। संग्रहालय में आपने ऐतिहासिक नक्शे, लिपि व शिलालेखों की छापों को बड़ी ही रुचि से देखा। इसी प्रकार सितम्बर मास में सरकारी ट्रेनिंग कॉलेज बिकानेर, आयुर्वेदिक कॉलेज बनारस, आयुर्वेदिक कॉलेज उदयपुर आदि संस्थाओं के छात्र गुरुकुल परिसर को अवलोकनार्थ पधारे। उन्होंने गुरुकुल संग्रहालय तथा पुस्तकालय का निरीक्षण किया।

भारतीय संसद के सदस्य उत्तर प्रदेश कार्य समिति के प्रधान श्री अलगूराय शास्त्री गाँधी जयन्ती के अवसर पर गुरुकुल में आये और उन्होंने संग्रहालय का निरीक्षण करते हुए निम्नलिखित विचार प्रकट किये- "जो देखा उससे चकित सा रह गया कि अपने ही पुरुषार्थ से ऐसा सुन्दर संग्रहालय गुरुकुल के ब्रह्मचारियों ने किस प्रकार रच डाला। इसके लिए उनकी जितनी प्रशंसा की जाय ... धन्य है यह संस्था और इसके परिचालक जो चुपचाप अपना स्तुत्य कार्य हिमालय के चरणों में बैठे-बैठे कर रहे हैं।"[12]

नवम्बर 1952 में दीपावली के पश्चात् गुरुकुल के ब्रह्मचारी शिवालिक की उपत्यकाओं में सिद्धाश्रम, धर्मकुण्ड, गौरी वन, चिल्ला, लालढांग आदि वन खण्डों में यात्रा पर गये। इन दिनों में प्रायः ब्रह्मचारी आस-पास के जंगलों में प्रारम्भ से ही भ्रमणार्थ जाते रहे है। क्योंकि इन दिनों में आंवला और वन्य बेलों की बड़ी बहार रहती है। इस बार जो ब्रह्मचारी जंगल में भ्रमणार्थ गये तो रसलसवाईपर नामक भयंकर सांप को पकड़कर ले आये। एक दूसरे छात्रों की मण्डली एक बड़े शेर की खोपड़ी खोज करके ले आयी।[13]

उत्तर प्रदेश के शिक्षा मंत्री

26 नवम्बर को प्रातः उत्तरप्रदेश के शिक्षा मंत्री श्री हरगोविन्द सिंह अपने सहकर्मियों सहित गुरुकुल के परिसर में पधारे। उनके आगमन का स्वागत श्री पंडित इन्द्र विद्यावचस्पति और आचार्य प्रियव्रत ने अन्य उपाध्यायों के साथ किया। दोपहर का भोजन भी उन्होंने गुरुकुल में ही किया। कुछ विश्राम के पश्चात् उन्होंने गुरुकुल के समस्त विभागों का अवलोकन किया। परिसर के भ्रमण के पश्चात् वेद मन्दिर में उनका अभिनन्दन किया गया। इसके बाद उनका भाषण हुआ।

मंसूरी के प्रसिद्ध अमेरिकन विद्यालय उडस्ट स्कूल के छात्र-छात्राएं गुरुकुल परिसर में पधारे उन्होंने गुरुकुल के संग्रहालय को बड़ी ही रुचि से देखा। इसी मास में प्रागैतिहासिक काल के विद्वान् डॉ॰ यज्ञदत्त शर्मा गुरुकुल में पधारे। उन्होंने प्रागैतिहासिक कालीन समस्याओं पर प्रकाश डाला। यहाँ यह ज्ञातव्य है कि डॉ॰ यज्ञदत्त शर्मा गुरुकुल के पुराने उपाध्याय श्री कन्हैयालाल जी के सुयोग्य पुत्र है। उनके भाषण में यह बतलाया गया था कि हमारी भारत की प्राचीन सांस्कृतिक धरोहर भूमि में दबी हुई है। उसको उजागर करने के लिए प्रसिद्ध ऐतिहासिक स्थानों का उत्खनन करना आवश्यक है।

गुरुकुल विश्वविद्यालय के पुस्तकालय में अनेक उत्तमोत्तम ग्रन्थों की वृद्धि हो रही थी। कुछ संस्थाओं और विद्वानों ने गुरुकुल को अपने ग्रन्थ भेंट किए, उनमें काशी के बाबूराम चन्द्रबर्मा, अकोला के श्री प्रभुदयाल अग्निहोत्री, श्री युधिष्ठिर मीसांसक बनारस, श्री माधवप्रसाद मोरगंज, श्री हरदयाल सिंह फारेस्ट आफिसर देहरादून, श्री हरिदत्त वेदालंकार गुजरात राष्ट्रीय विद्यापीठ अहमदाबाद, ट्रावनकोर विश्वविद्यालय आदि के नाम उल्लेखनीय है। गुरुकुल ने इन सबका धन्यवाद किया था।[14]

उत्तर प्रदेश वन विभाग के उपमंत्री श्री जगमोहन सिंह नेगी ने गुरुकुल में आकर गुरुकुल परिसर में समस्त विभागों का अवलोकन किया। उन्होंने कहा कि विशेषकर गुरुकुल कांगड़ी फार्मेसी शुद्ध आयुर्वेद की महती सेवा कर रही है। उन्होंने संग्रहालय को इतनी सूक्ष्म दृष्टि से अवलोकित किया कि निरीक्षण में कई घण्टे लगाये।

दिसम्बर सन् 1952 में स्वामी श्रद्धानन्द बलिदान दिवस बड़े धूमधाम से मनाया गया। इसी समय संस्कृतोत्साहिनी सभा द्वारा वेणीसंहार नाटक के कर्ण अश्वत्थामा संघर्ष वाले प्रकरण का अभिनय प्रस्तुत किया गया। यह सभा पं० बुद्धदेव विद्यालंकार की अध्यक्षता में सम्पन्न हुई थी। श्रद्धानन्द सप्ताह के अवसर पर हॉकी टूर्नामेन्ट का आयोजन किया।[15]

गुरुकुल में केम्ब्रिज के प्रोफेसर

केम्ब्रिज विश्वविद्यालय के संस्कृत विभाग के प्रोफेसर रोनाल्ड स्मिथ जनवरी 1952 में गुरुकुल में आये थे। मान्य रोनाल्ड महोदय भारत की उन संस्थाओं का निरीक्षण कर रहे थे जहाँ संस्कृत भाषा और साहित्य का अनुशीलन एवं अनुसंधान कार्य होता हो। गुरुकुल में आप का स्वागत किया गया। उन्होंने स्वागत का उत्तर देते हुए अपने भाषण में कहा- "आप ने अपनी गौरवपूर्ण सांस्कृतिक भाषा के साथ जीवित सम्पर्क बनाया हुआ है। यह बड़े आनन्द का विषय है कि मैंने अपने जीवन में संस्कृत भाषा को इस प्रकार सहज और अस्खलित रूप में बोलते हुए कभी नहीं सुना। संस्कृत एक पूर्ण भाषा है। ध्वनि शास्त्र की दृष्टि से भी बहुत महिमामयी है। संस्कृत का शब्द भण्डार इतना विशाल और गूढ़ अर्थों का बाहक है। उसके परिभाषिक शब्दों का विशेषत: दार्शनिक शब्दों का अंग्रेजी में पूर्ण अर्थवाही अनुवाद करना असंभव सा है। लैटिन और फ्रैंच भाषा संस्कृत शब्दों के भावों को पर्याप्त रूप में अनुवाद में परिणत कर सकती है। आप ने मनस् और क्रतु आदि शब्दों के उदाहरण देते हुए इस बात को विशेष रूप से स्पष्ट किया। आपने आगे कहा कि- "संस्कृत साहित्य और दर्शन शास्त्रों में जिस उदात्त जीवन दर्शन की परिकल्पना हुई है उसी के कारण भारतीय जीवन में मानसिक शान्ति और चरित्र की उर्ध्वगामिता हुई है।[16] 22 फरवरी 1953 को गुरुकुल का जन्मोत्सव मनाया गया। प्रभातकालीन शोभा यात्रा का आयोजन किया गया। वेद मन्दिर में सभा सम्पन्न हुई। आचार्य प्रियव्रत ने गुरुकुल शिक्षा के महत्व पर ब्रह्मचारियों को प्रेरणादायक भाषण दिया।

इसी मास स्वीडन की एक विदुषी महिला गुनेल गुमेशान विश्वविद्यालय परिसर में पधारीं। आप भिन्न-भिन्न जातियों-बिरादरियों के रहन-सहन, खान-पान रीति-रिवाज और कर्मकाण्ड आदि का अनुशीलन कर रही थी। अप्रैल 1953 में गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय का वार्षिक उत्सव बड़ी धूमधाम से मनाया गया था। उसमें सर्वप्रथम व्याख्यान स्वामी व्रतानन्द जी महाराज का हुआ जिनका विषय था "मौत की मौत"। इसके बाद पं० बिहारीलाल शास्त्री का भाषण आर्यों का सार्वभौम राज्य विषय का हुआ। सरस्वती सम्मेलन में विषय था "राष्ट्र संघ विश्व शान्तिकरणाय कल्पते"। इस सम्मेलन की अध्यक्षता इलाहाबाद विश्वविद्यालय के प्रोफेसर बाबूराम सक्सेना ने की थी। इसके पश्चात् पं० ठाकुर दत्त शर्मा अमृतधारा फार्मेसी देहरादून का भाषण धर्म और निरोगता" पर सम्पन्न हुआ। इसी प्रकार स्वामी ईश्वरानन्द महाराज का व्याख्यान हुआ। इसके साथ आनन्द स्वामी जी महाराज का व्याख्यान हुआ। इस वार्षिक उत्सव पर गौ सम्मेलन भी किया गया। इस सम्मेलन की अध्यक्षता डॉ० देशमुख कृषि मंत्री भारत सरकार ने की थी।

1 वैशाख, 2010 (1953) को विश्वविद्यालय का दीक्षान्त समारोह हुआ। दीक्षान्त भाषण उत्तर प्रदेश के राज्यपाल श्री के.एम. मुंशी ने प्रदान किया। उन्होंने ब्रह्मचारियों को आशीर्वाद प्रदान किया। इसी वर्ष वैदिक स्वप्न विज्ञान" नामक ग्रन्थ श्री पं॰ भगवत्दत्त वेदालंकार अध्यक्ष वेद अनुसंधान विभाग, गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय हरिद्वार का प्रकाशित हुआ।[17]

फरवरी सन् 1954 में गुरुकुल विश्वविद्यालय के छात्र कई स्थानों पर वाद-विवाद प्रतियोगिताओं में भाग लेने के लिए गये और सभी प्रतियोगिताओं में विजय प्राप्त करके लौटे।

गुरुकुल के पुराने मित्र, श्री काशी राष्ट्रीय विद्यापीठ में संस्कृत साहित्य के उपाध्याय और बनारस के पण्डित सभा के सभापति पंण्डित गोपाल शास्त्री दर्शन केसरी गुरुकुल में पधारे। गुरुकुल के प्रस्तोता श्री वागीश्वर विद्यालंकार ने उनका स्वागत किया। श्री शास्त्री ने "पाणिनि व्याकरण को सीखने की सरल विधि" का स्पष्टीकरण किया।

पूर्वी अफ्रीका के केन्या प्रदेश के मूल निवासी एक प्राध्यापक लुबाई महोदय भारतीय शिक्षणालयों का अवलोकन करते हुए गुरुकुल में आये। आप कई दिन तक गुरुकुल में रहे और गुरुकुल में ब्रह्मचारियों से बहुत ही घुलमिल गये। आप ने समीप के कई ग्रामों में जाकर यहाँ के ग्राम्य जीवन को समीप से अवलोकित किया।

फार्मेसी का नया भवन

गुरुकुल कांगड़ी फार्मेसी 30 वर्षों से प्रामाणिक आयुर्वेदिक औषधियों का निर्माण करके अपने देश की सेवा कर रही थी। फार्मेसी का धीरे-धीरे विकास हो रहा था। औषधियों के निर्माण की अधिकता के कारण निर्माणशाला पर्याप्त सिद्ध नहीं हो रही थी। इसलिए स्वामिनी सभा की आज्ञा से कनखल से ज्वालापुर की ओर (जहाँ आज भी स्थित है) जाने वाले मार्ग पर गुरुकुल की भूमि में फार्मेसी का सर्व सुविधायुक्त सुन्दर नवीन भवन बनकर तैयार हो गया था। इस नये भवन का निर्माण दिसम्बर 1953 में ही पूर्ण हो गया था। अत: 2 जनवरी की संध्या को स्वामिनी सभा के प्रधान श्री महाशय कृष्ण जी की अध्यक्षता में नये भवन में गृह प्रवेश विधि के अनुसार यज्ञ सम्पन्न हुआ। इस समारोह में विद्यासभा के सदस्य गण उपप्रधान श्री चरणदास पुरी, पं॰ इन्द्र विद्यावाचस्पति, पं॰ भीमसेन विद्यालंकार, दिल्ली के श्री हंसराज गुप्त आदि महानुभाव सम्मिलित हुए। फार्मेसी के व्यवसायाध्यक्ष श्री दीनदयालु शास्त्री ने फार्मेसी के प्रारम्भिक इतिहास कार्य पद्धति और विकास का परिचय दिया था। महाशय कृष्ण ने यह मंगल कामना की थी कि "यह फार्मेसी भारत की बड़ी फार्मेसियों में अपना स्थान बनाये।"[18]

मार्च 1954 में गुरुकुल के सुयोग्य स्नातक श्री ब्रह्मदत्त आयुर्वेदालंकार (वेगुसराय) आयुर्वेद कालेज के आचार्य पद पर प्रतिष्ठित हुए। सूरत के आयुर्वेद महाविद्यालय के उपाचार्य श्री रणजीत राव आयुर्वेदालंकार को उनके विशद् ग्रन्थ आयुर्वेद क्रिया शरीर पर अखिल भारतीय वैद्य सम्मेलन में 500 रुपये का पारितोषिक प्रदान किया गया तथा वैद्य राजशंकरदा जी स्मारक समिति की ओर से उसी ग्रन्थ के लिए स्वर्ण पदक दिया गया। इसी प्रकार मुद्राराक्षस का अभिनय" में गुरुकुल के सुयोग्य स्नातक श्रीयुत् क्षितीश वेदालंकार को अभिनय करने पर मेरठ कॉलेज के संस्कृत विभाग की ओर से पुरस्कार प्रदान किया गया।

मार्च 1954 में ही भारत के रक्षामंत्री गुरुकुल परिसर में आये और उन्होंने भारत सरकार की ओर से पुराने शस्त्र संग्रहालय को प्रदान किये। उन्होंने इसी प्रकार आदिवासियों द्वारा महात्मा गाँधी को प्रदान की गयी वस्तुएं संग्रहालय को प्रदान की थी। उनमें तीर और तरकस थे।

14 मार्च 1954 को भारत सरकार के शिक्षा मंत्रालय के प्रमुख परामर्श दाता प्रो॰ हुमायूं कबीर विशेष

रूप से गुरुकुल की कार्य प्रवृत्तियों के अवलोकन के लिए यहाँ पधारे उन्होंने समस्त विश्वविद्यालय परिसर का निरीक्षण किया। 2 बजे उनका कुलवासियों ने स्वागत किया। गुरुकुल के कुलपति पं॰ इन्द्र विद्यावचस्पति ने उनका स्वागत किया। मान्य अतिथि महोदय ने उत्तर देते हुए कहा कि- "हमारे पूवर्जो ने ज्ञान-विज्ञान के क्षेत्र में बड़ा अवदार्यपूर्ण भाव अपने चित्त में रखा था। इतिहास हमें बताता है कि हमारे पुरखे पश्चिम में विकसित होने वाले ज्ञान-विज्ञान को आत्मसात करते रहे है। मुझे यह देखकर बड़ी प्रसन्नता हो रही है कि ज्ञान प्रकाश को आत्मसात करने के लिए तथा पूर्वजों की धरोहर को परम्परा के रूप में आप ने इस विद्या निकेतन में चालू रखा है।[19]

उत्कृष्ट साहित्य निर्माण के लिए गुरुकुल के स्नातक श्री अत्रिदेव विद्यालंकार को उत्तर प्रदेश सरकार की ओर से 500 रुपये का पुरस्कार प्रदान किया गया। यह पुरस्कार उनको उनके प्रसिद्ध ग्रन्थ "क्लीनिकल मेडिसन" पर दिया गया था।

गुरुकुल के वार्षिकोत्सव पर स्वामी अभेदानन्द सरस्वती, श्री धर्मदेव विद्यावाचस्पति, पं॰ शिवकुमार शास्त्री, एअर महोदय, डीन आफ आर्टस फेकल्टी लखनऊ विश्वविद्यालय्, पं॰ लोकनाथ तर्कवाचस्पति और प्रधान आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब, श्री महाशय कृष्ण के व्याखान हुए। दीक्षान्त समारोह बड़ी धूमधाम से सम्पन्न हुआ। नव स्नातकों को आशीर्वाद एवं दीक्षान्त भाषण माननीय चन्द्रभानु गुप्त स्वास्थ्य मंत्री उत्तरप्रदेश सरकार ने प्रदान किया। इसी वार्षिकोत्सव पर आयुर्वेद सम्मेलन का भी आयोजन किया गया। इस सम्मेलन के अध्यक्ष श्री दत्तात्रेय कुलकर्णी, डिप्टी डायरेक्टर आफ मेडिकल एण्ड हेल्थ सर्विस उत्तर प्रदेश थे। इसी वार्षिकोत्सव के अवसर पर कृषि सम्मेलन का भी आयोजन किया गया। इस सम्मेलन के सभापति चौ॰ चरण सिंह, माल तथा कृषि मंत्री उत्तर प्रदेश थे। उन्होंने अपने अध्यक्षीय भाषण में महर्षि दयानन्द को स्मरण करते हुए कहा कि वे एक युग द्रष्टा थे। वे एक ज्योति थे और वे एक ऐसे दीपक थे जिससे अनेक दीपकों ने प्रकाश प्राप्त किया था।[20]

जून 1954 के ग्रीष्मावकाश में छात्रों की एक मण्डली गंगोत्री की सरस्वती यात्रा पर गयी और दूसरी एक मण्डली गुजरात और महाराष्ट्र की यात्रा पर गयी थीं। छात्रों ने अपनी इन सरस्वती यात्राओं के अवसरों पर गुरुकुल शिक्षापद्धति की विशेषताओं पर व्याख्यान दिये। जून 1954 में डर्बन (दक्षिण अफ्रीका) के आर्य प्रतिनिधि सभा के एक प्रमुख कार्यकर्त्ता तथा वहाँ के अंग्रेजी पत्र के प्रतिनिधि श्री बी. भारत सिंह गुरुकुल में पधारे थे। आपने दक्षिण अफ्रीका में भारतीयों की राजनैतिक और सामाजिक अवस्था पर कुलवासियों के समक्ष एक प्रभावपूर्ण व्याख्यान दिया। आप ने अपने व्याख्यान में बताया कि "दक्षिण अफ्रीका में कुल साढ़े तीन लाख भारतीय रहते है। 70 वर्षो से भारतीयों का वहाँ जाना और बसना प्रारम्भ है। परन्तु भारतीयों की राजनैतिक स्थिति अच्छी नहीं है। वहाँ पर भारतीय भूमि मोल नहीं ले सकते है। श्वेत लोगों के मुहल्ले में वे मकान नहीं ले सकते है।" उन्होंने यह भी बतलाया कि "वहाँ के सामाजिक उत्थान के लिए आर्य समाज ने बहुत ही प्रशंसनीय कार्य किया है। गुरुकुल कांगड़ी के सुयोग्य स्नातक श्री नरदेव वेदालंकार ने आर्य समाज के प्रचार के साथ-साथ हिन्दी भाषा के प्रचार के लिए बहुत ही सराहनीय कार्य किया है। मुझे यह कहने में कोई संकोच नहीं है कि गुरुकुल कांगड़ी के प्रति दक्षिण अफ्रीका के भारतीय मूल के हिन्दू लोग ऋणी रहेगे। गुरुकुल के अनेक स्नातकों ने वहाँ उल्लेखनीय कार्य किये है।

आयुर्वेद कॉलेज में विशेष व्याख्यान का आयोजन मलेरिया विषय पर किया गया। दिल्ली से केन्द्रीय मलेरिया संस्थान के उपसहायक संचालक डॉ॰ जी.पी.सेन गुप्ता का व्याख्यान हुआ।

दिसम्बर 1954 में श्रद्धानन्द बलिदान दिवस कुलवासियों ने प्रत्येक वर्ष की भांति बड़े उत्साह और श्रद्धा के साथ मनाया। 5 बजे ब्रह्मचारियों ने प्रातः प्रभातफेरी का आयोजन पूरे कुल परिवार में करके

वातावरण को प्रभात गीतो से रंगीन बना दिया था, गुरुकुल में प्रात: काल से अपूर्व उत्साह और चहल-पहल विद्यमान थी। साढ़े 8 बजे समस्त कुलवासी शोभायात्रा के रूप में एकत्रित होकर प्रवेश द्वार से झण्डा चौक की ओर चले। इस शोभा यात्रा में सबसे आगे विश्वविद्यालय की वादक मण्डली मनोरम स्वरों में बैण्ड बजा रही थी। बीच-बीच में चौराहों पर रुक-रुक कर कुल के यशोगीत गाये गये। झण्डा चौक पर पहुंच आचार्य प्रियव्रत जी ने नवीन कुल पताका फहराते हुए कुलपिता के जीवन व्रतों और संकल्पों की ओर कुलवासियों का ध्यान आकृष्ट किया। इसके पश्चात् वेद मन्दिर में एक सभा का आयोजन किया गया। इस अवसर पर श्री पं० धर्मपाल विद्यालंकार ने गुरुकुल के उद्देश्यों पर बड़ा ही प्रभावशाली भाषण दिया। इस श्रद्धानन्द बलिदान दिवस के अवसर पर ही सांस्कृतिक कार्यकलापों में महाविद्यालय के छात्रों द्वारा चन्द्रगुप्त नाटक का अभिनय प्रस्तुत किया गया। इस अभिनय के सफल आयोजन पर समस्त कुलवासियों ने ब्रह्मचारियों को बधाई प्रदान की। इसी अवसर पर अगले दिन विद्यालय विभाग के ब्रह्मचारियों की ओर से रात्रि को नाटक का अभिनय प्रस्तुत किया गया। इस नाटक अभिनय को भी कुलवायों ने भावपूर्ण दृष्टि से अवलोकित किया। श्रद्धानन्द सप्ताह के अवसर पर ही एक संगीत सम्मेलन का आयोजन किया गया। इस सम्मेलन में दिल्ली के गन्धर्व महाविद्यालय के नियामक पं० विनयचन्द्र अपने अनेक संगीतज्ञों और वादकों के साथ पधारे थे। दो दिन तक समस्त कुलवासियों को इन कलाकारों ने अपनी मनोहारिणी कला प्रदर्शन कर कुलवासियों को आप्लावित किया। इस अवसर पर वीर, रौद्र, वीभत्स आदि रसों का अति मनोहर प्रदर्शन किया गया था। इसी प्रकार ताण्डव नृत्य का भी अभिनय दर्शकों ने बहुत पसन्द किया था। इसी अवसर पर श्रद्धानन्द हॉकी टूर्नामेन्ट का भी आयोजन किया गया। इस बार बीस टीमों ने टूर्नामेन्ट में भाग लिया। इस टूर्नामेन्ट का उद्घाटन श्रवणनाथ ज्ञान मन्दिर हरिद्वार के अध्यक्ष स्वामी शंकरानन्द ने किया। इस वर्ष कृषि कॉलेज लुधियाना और डी.एच.ए. दल अमृतसर का अन्तिम मुकाबला हुआ। जय-पराजय का कोई निर्णय नहीं हो पाया, इसलिए चल विजयोपहार दोनों टीमों को प्रदान किया गया।[21]

जून 1956 में दिल्ली विश्वविद्यालय के कुलपति डॉ० गणेश सखाराम महाजनी तथा उनके साथ इतिहास विभाग के प्रो० डॉ० विश्वम्भर प्रसाद गुरुकुल में पधारे। उन्होंने अपने भाषण में कहा कि "दिल्ली विश्वविद्यालय गुरुकुल की अपेक्षा कार्य की दृष्टि से बहुत बड़ा है परन्तु गुरुकुल के शान्त, पावन और आकर्षक वातावरण को देखकर यहाँ पर मन रम जाना चाहता है।" माननीय महाजनी महोदय ने महाविद्यालय की शिक्षा व्यवस्था के विषय मे कई महत्वपूर्ण परामर्श प्रदान किए। इसी प्रकार डॉ० विश्वेश्वर प्रसाद के इतिहास के विषय में अध्ययन व्यवस्था के लिए अनेक प्रकार के अमूल्य अनुभव एवं संस्मरण सुनाये और बतलाया कि "इनको भी आप अपने अध्यापन व्यवस्था में सम्मिलित करे।" जून में ही काशी के प्रतिष्ठित रईस ललित कला के विद्वान् डॉ० राय गोविन्द चन्द गुरुकुल में आये। आप ने संग्रहालय में कांगड़ा शैली के चित्रों का तथा अन्य पुरातत्व की वस्तुओं का सूक्ष्म दृष्टि से अवलोकन किया। आपको यह देखकर आश्चर्य हुआ कि गुरुकुल कांगड़ी ने अपने ही प्रयासों से इतना बड़ा पुरातत्व संग्रहालय विकसित किया है।[22] अप्रैल 1956 के वार्षिकोत्सव के अवसर पर दीक्षान्त भाषण श्रीयुत् अनन्त शयनम् अयंगर ने प्रदान किया। आप ने अपने दीक्षान्त भाषण में कहा कि जिस प्रकार का दीक्षान्त समारोह गुरुकुल कांगड़ी में भव्यता के साथ और प्राचीन परम्पराओं के अनुसार आयोजित किया जाता है। ऐसा दीक्षान्त समारोह अन्य किसी विश्वविद्यालय में नहीं किया जाता है। आपने दीक्षान्त भाषण के अतिरिक्त ये शब्द कहे कि "जब यहाँ का आचार्य उपनिषदों के अनुसार सत्यंवद, धर्म चार स्वाध्यायान् मा प्रमदितव्यम् आदि उपनिषद् वाक्यों को बोलता है तो ऐसा प्रतीत होता है कि आकाश से देवता ऋचाओं को बोल रहे हो।" इस दीक्षान्त समारोह में नव स्नातकों को दिल्ली विश्वविद्यालय के संस्कृत विभाग के अध्यक्ष डॉ० नरेन्द्र नाथ चौधरी ने संस्कृत

भाषा में आशीर्वचन कहे।[23] इसी प्रकार श्री दीनदयालु शास्त्री, स्वामी नारायणानन्द और आर्य प्रतिनिधि सभा के उपप्रधान पं॰ बुद्धदेव विद्यालंकार ने भी नव स्नातकों को आशीर्वाद दिया।

जुलाई 1956 में मद्रास विश्वविद्यालय के दर्शन विभाग के अध्यक्ष डॉ॰ महादेवन अपने शिष्यों सहित गुरुकुल में पधारे। आप ने गुरुकुल परिसर का निरीक्षण किया और गुरुकुल की प्रगति पर सन्तोष अभिव्यक्त करते हुए कहा कि मैं 1931 में भी गुरुकुल के दर्शनार्थ आया था। इसी महीने में बैंकाक (थाईलैंड के भिक्षु श्री थारा धामा) पाली पंडित थाई दूतावास के माध्यम से गुरुकुल में आए। गुरुकुल में आपने संस्कृत भाषा का अध्ययन प्रारम्भ किया और महाविद्यालय के ब्रह्मचारियों, को पाली भाषा का अध्यापन भी किया।

आयुर्वेद कमीशन

21 जून 1956 को आयुर्वेद (दवे समिति) के सदस्य श्री दयाशंकर दवे आरोग्य मंत्री सौराष्ट्र, श्री शान्ति लाल साह आरोग्य मंत्री बम्बई राज्य, डॉ॰ प्राण जीवन मेहता, श्री वासुदेव भाई द्विवेदी तथा श्री कुलकर्णी जी उत्तर प्रदेश आयुर्वेद विभाग के उपसंचालक, गुरुकुल में आयुर्वेद महाविद्यालय के निरीक्षणार्थ पधारे। आप ने आयुर्वेद महाविद्यालय के समस्त विभागों-शल्य क्रिया भवन, निदान प्रयोगशाला, चिकित्सालय, पंचकर्म भवन, प्रकृति विद्या संग्रहालय, आयुर्वेदीय औषधि संग्रह, पुस्तकालय और पुरातत्व संग्रहालय आदि का निरीक्षण किया। इस कमीशन ने अपनी रिपोर्ट आयुर्वेद मेडिकल बोर्ड को प्रस्तुत की थी।

जब गुरुकुल परिसर में यह ज्ञात हुआ कि पंजाब सरकार ने गुरुकुल कांगड़ी वि.वि. की अलंकार और विद्याधिकारी की उपाधियों को अपने राज्य की बी.ए. और मैट्रिक के समकक्ष स्वीकार कर लिया है तो प्रसन्नता की लहर फैल गयी।[24]

अगस्त 1956 में गुरुकुल के स्नातक डा॰ धर्मानन्द केसरवानी आयुर्वेदालंकार (एम.डी.) लखनऊ के राजकीय आयुर्वेद महाविद्यालय के आचार्य बनाये गये, उनके गुरुकुल में पधारने पर उनका भव्य स्वागत किया गया। अखिल भारतीय चिकित्सा संघ की देहरादून शाखा का वार्षिक सम्मेलन देहरादून में सम्पन्न हुआ। उसमें आयुर्वेद महाविद्यालय के चिंकित्सकों ने सक्रिय भाग लिया।

13 अगस्त 1956 में केन्द्र के शिक्षा सचिव श्री सैदेन महोदय गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय में पधारे। उन्होंने तीन घन्टे तक गुरुकुल परिसर का परिभ्रमण व निरीक्षण किया उनका कुलवासियों की ओर से स्वागत किया गया। सचिव महोदय ने अपने भाषण में कहा कि "इस शताब्दी के प्रारम्भ में भारत में शिक्षा विषयक प्रयत्नों के लिए अनेक संस्थाएं प्रारम्भ हुई जिनमें गुरुकुल कांगड़ी, शान्ति निकेतन, काशी विद्यापीठ और जामिया मिलिया की सेवायें अपना विशेष स्थान रखती है। मुझे यह जानकर प्रसन्नता हुई है कि प्राचीन आदर्शों के साथ-साथ इन संस्थाओं ने उदारतापूर्वक नवीन विज्ञानों और विद्याओं को भी अपने पाठ्यक्रम में समावेश करते हुए नवीन और प्राचीन शिक्षा विधि का समन्वय करते हुए सुन्दर नमूना पेश किया।[25]

थाइलैंड के नेवल अटैंची श्री यू. सुन्दर सीमा ट्रेड कमीश्नर, श्री नोआ औई थाई दूतावास के अधिकारी पी. फाको आदि मान्य अधिकारियों ने गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय का अवलोकन किया। आप की मण्डली में वहाँ की भिक्षुणी नन्दमाला भी सम्मिलित थी। आप ने गुरुकुल की अतिथि पुस्तक में यह लिखा था कि "गुरुकुल भारत वर्ष का एक बढ़िया विद्याकेन्द्र है, थाई देश के भिक्षु स्थित धर्म गुरुकुल में रहकर संस्कृत भाषा का अध्ययन कर रहे है और गुरुकुल के छात्र उनसे पाली भाषा पढ़ते है।"

गुरुकुल के सुयोग्य स्नातक इतिहास के मर्मज्ञ विद्वान् श्री जयचन्द विद्यालंकार को "भारतीय कृष्टि (संस्कृति) का खाका" नामक ग्रंथ पर पंजाब सरकार ने 800 रुपये का पुरस्कार प्रदान किया। गुरुकुल-वासियों

को यह जानकर बड़ी ही प्रसन्नता हुई थी। गुरुकुल संग्रहालय को वन अनुसंधानशाला, देहरादून की ओर से बेंत भेंट किये गये।[26]

पुरातत्व संग्रहालय मथुरा के अध्यक्ष श्री कृष्णदत्त वाजपेयी ने शरत्कालीन व्याख्यान माला के सिलसिले में सितम्बर के अन्त में तीन व्याख्यान दिये। उन्होंने पुरातत्वीय खोज द्वारा प्राचीन मूर्तियों तथा स्थापत्य के चित्रों को प्रस्तुत करते हुए अपने भाषण को सुगम एवं सरल बना दिया था। अक्टूबर 1956 में अन्तर्राष्ट्रीय संग्रहालय आन्दोलन के सिलसिले में संग्रहालय सप्ताह बड़े उत्साह के साथ मनाया गया। इनमें श्री मदन गोपाल ने, श्री रामेश वेदी, श्री चम्मत स्वरूप और श्री शंकरदेव विद्यालंकार ने पुरातत्व के विभिन्न विषयों पर व्याख्यान प्रस्तुत किये।[27]

23 सितम्बर 1956 को भारत सरकार के उप शिक्षामंत्री गुरुकुल परिसर में पधारे। डॉ॰ श्रीमाली ने वेद महाविद्यालय, आयुर्वेद महाविद्यालय, कृषि विद्यालय, संग्रहालय, पुस्तकालय आदि समस्त विभागों का अवलोकन किया। वेद मन्दिर में उनका स्वागत किया गया। स्वागत करते हुए कुलपति श्री इन्द्र विद्यावाचस्पति ने गुरुकुल कांगड़ी का संक्षित परिचय दिया। स्वागत के पश्चात् माननीय डॉ॰ श्री माली जी ने कहा कि "किसी भी राष्ट्र की उन्नति और महिमा उसके सामाजिक मांगल्य से मापी जा सकती है। हमें देखना होगा कि हमारी शिक्षा विधि और संस्कृति हमारे सामाजिक कल्याण के लिए क्या कर रही है ? वह हमारे समाज की आवश्यकताओं को और आदर्शों को पूर्ण कर रही है या नहीं, इसी पर हमारी शिक्षा प्रणाली की सफलता निर्भर है।"[28]

नवम्बर 1956 में श्री अरविन्द आश्रम पाण्डिचेरी के अन्तर्राष्ट्रीय विद्या मन्दिर में अन्तर्राष्ट्रीय विषयों के प्रो॰ डॉ॰ जयहोमस्मिथ (मूलतः अमेरिका वासी) ने गुरुकुल कागड़ी की शरतकालीन व्याख्यानमाला के क्रम शान्ति की साधना विषय पर एक प्रभावशाली व्याख्यान दिया। आप ने अपने व्याख्यान में कहा कि "विश्व में शान्ति स्थापना उपायों पर अनेक विद्वानों और महापुरूषों ने गहन विचार मन्थन किया है। प्रभावशाली पुरूषों ने शान्ति साधना के लिए अनेक राजनैतिक, आर्थिक और सामाजिक योजनाएं प्रस्तुत की हैं परन्तु विश्व शान्ति अभी तक एक प्रमुख चिन्ता बनी है।"

दीपावली के अवकाश के समय अनेक शिक्षण संस्थाओं के छात्र व प्राध्यापक गुरुकुल को अवलोकनार्थ एवं ज्ञानवर्धन के लिए गुरुकुल परिसर में आये। इनमें ये संस्थाएं है- प्रशिक्षण महाविद्यालय भागलपुर, विद्या मन्दिर कारणवन बडौदा, जोडिया हाईस्कूल जोड़िया सौराष्ट्र, श्रौफ हाईस्कूल बडौदा, सरस्वती मन्दिर हाईस्कूल, अहमदाबाद, नीलरतन सरकार मेडिकल कॉलेज कलकत्ता, लॉ कॉलेज अहमदाबाद, हिन्दू इन्टर कॉलेज बिजनौर, हरिपुर गर्ल्स स्कूल सूरज, नूतन सर्व विद्यालय विसनगर, गुजरात, आयुर्वेद विद्यालय उदयपुर, आयुर्वेद महाविद्यालय वेगुसराय (बिहार), सैनिक स्कूल देहरादून, आयुर्वेद महाविद्यालय जयपुर, सरकारी कृषि विद्यालय झांसी, कृषि विद्यालय इटावा, इन उपर्युक्त शिक्षण संस्थाओं के छात्र एवं अध्यापक गण गुरुकुल परिसर में अपना ज्ञान-वर्धन करने के लिए आये थे। इससे स्पष्ट होता है कि गुरुकुल कांगड़ी को अन्य संस्थाएं एक राष्ट्रीय प्रतिष्ठान के रूप में देखती थी। इस समय के युग में गुरुकुल वास्तव में एक तीर्थ स्थान-सा था।[29]

हिन्दी के प्रतिष्ठित उपन्यासकार श्री गुरूदत्त गुरुकुल में पधारे और उन्होंने अपने समस्त ग्रन्थ गुरुकुल के पुस्तकालय को भेंट स्वरूप प्रदान किए। इसी माह श्री अमरनाथ विद्यालंकार गुरुकुल में पधारे। आप 1925 में गुरुकुल के स्नातक बने थे। पंजाब में आप आरोग्य मंत्री बनाये गये। श्री विद्यालंकार ने गुरुकुल के स्नातक बनने के पश्चात् पंजाब के राजनैतिक जीवन में अपने आपको दीक्षित किया था। कुलवासियों ने उनका अभिनन्दन एवं स्वागत किया।

जनवरी 1957 में गुरुकुल के तीन सुयोग्य स्नातक विभिन्न सदनों के लिए पुनः निर्वाचित हुए। इनमें विनायकराव विद्यालंकार, हैदराबाद से लोक सभा के लिए कांग्रेस टिकट पर चुने गये। श्री दीनदयालु शास्त्री तथा श्री अमरनाथ विद्यालंकार क्रमशः उत्तर प्रदेश एवं पंजाब विधान सभाओं के लिए निर्वाचित हुए। यह सामाचार विदित होते ही गुरुकुल परिसर में हर्ष की लहर दौड़ गयी। आयुर्वेद महाविद्यालय की अमृत वाटिका के समीप नवीन छात्रावास और भोजनालय की सुन्दर इमारत बनकर तैयार हो गयी। इसी प्रकार वेद मन्दिर के समीप ही पुरातत्व संग्रहालय का निर्माण हुआ। इस वर्ष स्वामी श्रद्धानन्द की जन्म शताब्दी के रूप में श्री इन्द्र विद्यावाचस्पति द्वारा लिखित "मेरे पिता" इसी प्रकार "श्रद्धानन्द स्वाध्याय मंजरी" और आचार्य प्रियव्रत वेदवाचस्पति द्वारा विरचित 'मेरा धर्म' नामक ग्रन्थ प्रकाशित हुए।[30]

गुरुकुल कांगड़ी के संग्रहालय में श्री पं० हरिदत्त वेदालंकार निदेशक संग्रहालय के निर्देशन में संग्रहालय के अन्दर अनेक नवीन मुद्राएं अनेक नये चित्र जिनमें क्षीर सागर में शेषशायी विष्णु, कमलालया लक्ष्मी के गजों द्वारा अभिषेक को और तैमूर लंग को प्रदर्शित किया है। ऐसे अनेक नये चित्र प्राप्त हुए। इसी प्रकार नई मूर्तियों में वेशभूषा, आमोद-प्रमोद, केश-विन्यास आदि की अनेक प्राचीन भारत की मूर्तियों संग्रहालय को उपलब्ध करायी गयी। इसी प्रकार संग्रहालय में कालिदास द्वारा वर्णित पक्षियों के चित्र विथिका भी सुसज्जित की गयी। श्री मदनमोहन नागर संग्रहालय संचालक उत्तर प्रदेश तथा श्री कृष्णदत्त वाजपेयी अध्यक्ष मथुरा संग्रहालय द्वारा भी अनेक वस्तुएं संग्रहालय को प्राप्त हुई। डॉ० अर्जुन सिंह चेयरमैन डिस्टिक बोर्ड सहारनपुर द्वारा मुगलकालीन चांदी के सिक्के प्रदान किये गये।[31]

उत्तर प्रदेश आयुर्वेदिक तथा तिब्बी ऐकेडमी लखनऊ ने 1956-57 के वर्ष में आयुर्वेद के उत्कृष्ट ग्रन्थों पर बारह पुरस्कार प्रदान किये इनमें तीन पुरस्कार गुरुकुल के स्नातकों को प्राप्त हुए। ये है- गुरुकुल आयुर्वेद महाविद्यालय के चरक तथा चिकित्सा के प्राध्यापक श्री धर्मदत्त विद्यालंकार को उनकी अंग्रेजी पुस्तक "आयुर्वेदिक इन्टरप्रटेशॅन ऑफ मेडिसन" पर साढ़े तीन सौ रुपये का पुरस्कार मिला। श्री. अत्रिदेव विद्यालंकार को उनकी "संस्कृत साहित्य में आयुर्वेद" ग्रन्थ पर 350 रुपये का पुरस्कार प्राप्त हुआ। श्री रामेश बेदी को उनकी पुस्तकें 'देहात की दवाएं' पर सौ रुपये का पुरस्कार प्राप्त हुआ। कुलवासियों को यह जानकर अत्यधिक प्रसन्नता हुई।

अप्रैल 1957 में श्री चिन्तामणि द्वारिका नाथ देशमुख ने दीक्षान्त भाषण प्रदान किया। इनका यह दीक्षान्त भाषण संस्कृत भाषा में था। उनके स्वागत में अभिनन्दन पत्र प्रस्तुत किया गया। जिसका कुछ अंश इस प्रकार है- "गणित आदि जैसे नीरस तथा काव्य साहित्य जैसे सरस विषयों में समान गति रखने" वाले आपको पाकर बहुमुखी प्रतिभा अपने आप को कृतकृत्य मान रही है। देश की अर्थनीति को ठीक दिशा में संचालन करने की आपकी असाधारण क्षमता को बुद्धिमान् आज भी स्वीकार करते है। आप इतने निर्भय तथा मनस्वी है कि मतभेद होने पर आपने भारत के गौरवास्पद वित्तमंत्रीं पद को ठुकरा दिया और अब आप विश्वविद्यालय अनुदान आयोग के सभापति बनकर सरस्वती की निःस्वार्थ सेवा कर रहे है।[32]

आयुर्वेद महाविद्यालय के ऊपर के तले पर जीव विज्ञान प्रयोगशाला का भवन निर्मित हुआ। इसमें जीव विज्ञान के विषय में कई प्रकार के शोध एवं छात्रों की क्रियात्मक परीक्षा के लिए छात्रों को सुविधा प्राप्त होगी। मई मास उन्नीस सौ सत्तावन में गुरुकुल वि.वि. का अवलोकन करने के लिए केन्द्रीय मंत्री श्री दातार, उत्तर प्रदेश के मंत्री श्री हुकुम सिंह तथा विकास कमिश्नर श्री भगवन्त सिहं गुरुकुल परिसर में पधारे। गुरुकुल कांगड़ी के सब विभागों को देखकर इनको यह आश्चर्य हुआ कि बिना सरकार के शतप्रतिशत अनुदान के इतनी बड़ी संस्था चलायी जा सकती है।

गुरुकुल कांगड़ी में प्रारम्भ से ही सभी राष्ट्रीय पर्व स्वाधीनता दिवस, वनमहोत्सव आदि सामाजिक पर्वों को बड़ी धूमधाम से मनाया जाता रहा हैं अगस्त 1957 में विशेष भाषणों का आयोजन किया गया। इनमें श्री ओमप्रकाश वेदालंकार अध्यक्ष हिन्दी विभाग डी.ए.वी. कॉलेज अम्बाला और डॉ॰ हरिप्रकाश आयुर्वेदालंकार के भाषण हुए। दोनों ने ही अपने भाषण में हिन्दी आन्दोलन, जो पंजाब में चलाया जा रहा था। उसके कारणों को विस्तारपूर्वक समझाया।

21 सितम्बर 1957 को साढ़े चार बजे कृषि महाविद्यालय के नवीन छात्रावास का उद्घाटन समारोह सम्पन्न हुआ। इस नये छात्रावास का नाम "डा॰ राजेन्द्रप्रसाद छात्रावास" रखा गया। इस छात्रावास में लगभग 100 छात्र सुविधापूर्वक रह सकते थे।

शिलान्यास

3 अक्टूबर 1957 बृहस्पतिवार प्रात: 8 बजे विजय दशमी के शुभ अवसर पर विज्ञान भवन की शिलान्यास विधि सम्पन्न हुई। इस अवसर पर सबसे पूर्व एक वृहद् यज्ञ का आयोजन किया गया। यहाँ यह ज्ञातव्य है कि गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय में महाविद्यालय प्रारम्भ होने के साथ-साथ ही विद्यालंकार में विज्ञान विषय भी वैकल्पिक विषय के रूप में पढ़ाया जा रहा था। उस समय यह आवश्यकता अनुभव की गयी थी कि विद्यालंकार में विज्ञान विषय लेकर जो अध्ययन किया जाता है उसको वह मान्यता नहीं मिलती जो बी.एस.सी. उत्तीर्ण स्नातकों को मिलती है। सम्भवत: इसलिए यह आवश्यकता अनुभव हुई कि महाविद्यालय स्तर पर अलग से विज्ञान महाविद्यालय के भवनों का निर्माण किया जाय। डॉ॰ महाजनी पूर्व वाइस चान्सलर दिल्ली विश्वविद्यालय के कर-कमलों से इस महाविद्यालय के भवन का शिलान्यास किया गया, उन्होंने इस अवसर पर उन्होंने अपने भाषण में कहा कि वैज्ञानिक शिक्षा की आवश्यकता महत्व एवं उपादेयता, आज के युग में बहुत ही अधिक प्रासंगिक है। आज का युग विश्व में विज्ञान में क्रान्ति के रूप में गिना जायेगा, उन्होंने यह भी बतलाया कि अणु शक्ति एवं विद्युत् तथा भाप शक्ति का प्रयोग विनाश की अपेक्षा निर्माण में ही अधिक है।[34]

17 नवम्बर 1957 को श्री दयालु मिश्र को विद्यालय विभाग में मुख्याध्यापक पद पर नियुक्त किया गया। पं॰ सुखदेव दर्शन वाचस्पति, प्राचार्य कला महाविद्यालय एवं शिक्षा अध्यक्ष ने गुरुकुल के माननीय नये मुख्याध्यापक का स्वागत किया तथा सभी अध्यापकों एवं छात्रों से परिचय कराया।[35]

8 दिसम्बर 1857 को पं॰ हरिदत्त वेदालंकार जो कि इतिहास विभाग के अध्यक्ष थे, उनको हिन्दुस्तानी एकेडमी उत्तर प्रदेश की ओर से उनके ग्रन्थ हिन्दू परिवार मीमांसा को सर्वोत्तम कृति के रूप में एक हजार रुपये का पुरस्कार प्रदान किया गया। यहाँ यह ज्ञातव्य है कि यह ग्रन्थ पहले भी पाण्डुलिपि के रूप में 1946 में. बंगाल हिन्दी मण्डल कलकत्ता द्वारा एक हजार दो सौ रूपये के पुरस्कार से सम्मानित किया जा चुका था।[36]

हिन्दी सत्याग्रहियों का सम्मान

यह सर्वविदित ही है कि 1957 में पंजाब में हिन्दी आन्दोलन अपना उग्र रूप धारण कर चुका था। आन्दोलन भी आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के तत्वावधान में स्वामी आत्मानन्द सरस्वती जो पंजाब आर्य प्रतिनिधि सभा के भी प्रधान थे, उनकी अध्यक्षता में हिन्दी आन्दोलन का संचालन हुआ था। इस आन्दोलन में गुरुकुल कांगड़ी के छ: ब्रह्मचारी जिनमें नवलकिशोर, श्री सुभाषचन्द, श्री श्यामनाथ, श्री वेदप्रकाश, श्री हंम सिंह और श्री प्रेमनाथ ने गुरुकुल से अवकाश लेकर "हिन्दी रक्षा आन्दोलन" में भाग लिया ब्रह्मचारी हंम सिंह ने अम्बाला और फिरोजपुर में छ: मास तक कारावास में कष्ट सहन किया। अन्य ब्रह्मचारियों ने

चार मास तक जालन्धर जेल में कारावास के अन्दर कष्ट सहन किया। दिनांक 3 जनवरी 1958 को जब वे गुरुकुल में वापिस आये तो वेद मन्दिर में आचार्य प्रियव्रत की अध्यक्षता में उनका भव्य स्वागत किया गया। अनेक उपाध्याय गण ने उनकों आशीर्वाद प्रदान किया। उनके अनेक साथियों ने उनका भव्य स्वागत किया।

10 अप्रैल 1958 को गुरुकुल कांगड़ी के उपकुलपति पं॰ इन्द्र विद्यावाचस्पति का आर्य समाज और राजनीति विषय पर अत्यधिक महत्वपूर्ण व्याख्यान हुआ। यह व्याख्यान इसलिए भी अधिक महत्वपूर्ण था कि उस समय आर्य समाज में यह अत्यधिक चर्चा का विषय रहता था कि आर्य समाज को सक्रिय राजनीति में भाग लेना चाहिए या नहीं। माननीय पं॰ इन्द्र विद्यावाचस्पति ने अपने भाषण में कहा कि "दो प्रकार की राजनीति है सैद्धान्तिक और व्यावहारिक। सैद्धान्तिक राजनीति में भाग लेने से आर्य समाज और देश दोनों को लाभ होगा और सम्भव है कि राजनीति को भी एक नई दृष्टि प्राप्त हो। परन्तु व्यावहारिक राजनीति में भाग लेने से आर्य समाज अपने मार्ग से भटक जायेगा। आर्य समाज का प्रधान कार्य वेदप्रचार एवं समाज सुधार है। आर्य समाज को अपने मुख्य लक्ष्य "कृण्वन्तो विश्वमार्यम्" को नहीं छोड़ना चाहिए। दलगत राजनीति में भाग लेने से जहाँ आर्य समाज की प्रतिष्ठा को चोट पहुंचेगी वहाँ सामाजिक एवं राष्ट्रीय सुधारों में भी कमी हो जायेगी।"[37] इसी महीने में गुरुकुल परिसर में निम्नलिखित विशिष्ट अतिथि भी पधारे, जिनमें नई दिल्ली से केन्द्रीय शासन के कृषि शिक्षा विभाग के प्रधान श्री एल.एस.एस. कुमार। उत्तर प्रदेशीय शासन के वनस्पति चिकित्सक डा॰ माथुर। कृषि विभाग के एक उच्चाधिकारी श्री वी.के.शर्मा। सुप्रसिद्ध क्रान्तिकारी राजा महेन्द्र प्रताप (संसद सदस्य) भी गुरुकुल में पधारे। राजा महेन्द्र प्रताप गुरुकुल की गतिविधियों से सुपरिचित थे। उन्होंने कहा कि गुरुकुल कांगड़ी उन्नति के पथ पर आरूढ़ है। यह देखकर मुझे प्रसन्नता हुई।

डॉ॰ डी.एफ. लखानी सहायक मंत्री भारत सरकार 21.4.1958 को गुरुकुल में पधारे। महाराष्ट्र के प्रसिद्ध विद्वान् पं॰ विष्णुनरहरि "क्षीर सागर" भी गुरुकुल में आये थे। श्री विष्णुनरहरि ने 9-5-58 के पत्र में नासिक के सम्पादक को लिखा था कि "गुरुकुल के पवित्र वातावरण से मन पवित्र हुआ। प्रेमपूर्ण आतिथ्य के लिए मैं गुरुकुल के अधिकारी गण को कृतज्ञता एवं धन्यवाद देता हूँ। इसी मास राज्य परिषद् के सदस्य और रंगमंच के प्रसिद्ध कलाकार श्री पृथ्वीराज कपूर अपनी मण्डली के साथ 28.4.58 को गुरुकुल में पधारे। उन्होंने अपने भाषणों में बतलाया कि मैं 1915 में 8 वर्ष की आयु में अपने दादा के साथ गंगा के उस पार गुरुकुल में आया था। मेरे पिता जी की इच्छा थी कि मैं गुरुकुल में ही अध्ययन करूं। परन्तु पारिवारिक परिस्थितियों के कारण मैं यहाँ प्रविष्ट नहीं हो सका। 43 वर्षों के पश्चात् दूसरे रूप में मुझे यहाँ आने में बड़ी प्रसन्नता हो रही है। यहाँ शिक्षा पाने और देने वाले आप लोग बड़े सौभाग्यशाली है। वे माताएं भी धन्य है जिन्होंने अपने बच्चों को यहाँ छोड़ा है। आप की एक बड़ी विशेषता प्राचीन संस्कृति के साथ सम्बन्ध है। रेडियों का एरियल कितना ऊंचा हो यदि उसका भूमि के साथ सम्बन्ध नहीं होगा तो वह ठीक नहीं बज सकता। इसी प्रकार हम आजकल भले ही विज्ञान के क्षेत्र में कितनी ही उन्नति क्यों न करें, किन्तु हमारा यदि प्राचीन संस्कृति के साथ सम्बन्ध नहीं है तो हम वास्तविक उन्नति नहीं कर सकते है।[38]

मदन मोहन विद्यासागर का अफ्रीका को प्रस्थान

गुरुकुल कांगड़ी के सुयोग्य स्नातक पं॰ मदन मोहन विद्यासागर वेदालंकार जो अनेकों वर्ष तक सार्वदेशिक सभा की ओर से दक्षिण भारत में वैदिक धर्म का प्रचार करते रहे, वे पूर्वी अफ्रीका में वैदिक प्रचार के लिए गये।

विश्वविद्यालय अनुदान आयोग का आगमन

1 जून 1958 को भारत सरकार द्वारा नियुक्त विश्वविद्यालय अनुदान आयोग के (जिसके अध्यक्ष डॉ॰ चिन्तामणि द्वारिकानाथ देशमुख गत वर्ष गुरुकुल पधारे थे) सात सदस्य श्री मेनन, दिल्ली विश्वविद्यालय के डॉ॰ वैन जी, केरल के श्री फ्लिप, लखनऊ वि.वि. के विभागाध्यक्ष श्री पाण्डेय, श्री निरोईया तथा श्री थापर आयोग के मंत्री वर्मा जी सहित गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय के निरीक्षणार्थ पधारे। 2 जून को उन्होंने वेद महाविद्यालय, पुस्तकालय, वाचनालय, आयुर्वेद महाविद्यालय, फार्मेसी आदि का निरीक्षण किया। उनका वेदमन्दिर में स्वागत किया गया और उन्होंने स्वागत के उत्तर में कहां कि यह आयोग शीघ्र भारत सरकार को अपना प्रतिवेदन प्रस्तुत करेगा कि गुरुकुल कांगड़ी को शीघ्र ही विश्वविद्यालय की मान्यता प्राप्त हो सके।[39]

सिंह द्वार का निर्माण

गुरुकुल के क्षेत्र में आगमन के लिए कोई द्वार नहीं था इसलिए कनखल की सड़क से गुरुकुल मार्ग प्रारम्भ होता है वहाँ पर सिंह द्वार की योजना बनाई गयी। इसकी आधारशिला सुप्रसिद्ध दानी सेठ श्री रामरखामल द्वारा सम्पन्न हुई। जुलाई मास में भारत के उच्चतम न्यायालय के प्रधान न्यायाधीश श्री एस.आर. दास गुरुकुल परिसर में पधारें। उन्होंने परिसर को देखकर बहुत ही अधिक प्रसन्नता अभिव्यक्त की। भारत सरकार के खाद्य मंत्री श्री अजीत प्रसाद जैन भी गुरुकुल में पधारे। आप ने समस्त गुरुकुल परिसर को बड़ी श्रद्धा से अवलोकित किया। गुरुकुल की कार्य व्यवस्था से बहुत प्रभावित हुए।

पं॰ जवाहर लाल नेहरू का गुरुकुल में आगमन

भारत के प्रथम प्रधानमंत्री पं॰ जवाहरलाल नेहरू ने अगस्त 1958 को गुरुकुल कांगड़ी के विज्ञान महाविद्यालय भवन का उद्‌घाटन किया। इस अवसर पर उन्होंने अपने भाषण में कहा कि "गुरुकुल कांगड़ी बहुत की दूरदर्शिता का परिचय दे रहा है। उन्होंने कहा कि गुरुकुल भारतीय प्राचीन संस्कृति की शिक्षा के साथ-साथ आधुनिक विज्ञान की शिक्षा का प्रबन्ध भी उच्चस्तरीय स्तर पर कर रहा है।" एक अगस्त को ही पं॰ नेहरू पुरातत्व संग्रहालय का निरीक्षण करने पधारे। उस समय संग्रहालय अध्यक्ष पं॰ हरिदत्त वेदालंकार ने संग्रहालय के विभिन्न भाग उन्हें दिखलाये। सबसे पहले पं॰ नेहरू को औरंगजेब की लिखी "कुरान शरीफ" की एक मुद्रित प्रति को दिखलाया तो पं॰ नेहरू ने पूछा "इसकी मूल प्रति कहाँ सुरक्षित है ?" इसके बाद उन्होंने पुरातत्व संग्रहालय के सभी विभागों को बड़े ध्यान से देखा। इसके बाद जब उनका भाषण हुआ तो उन्होंने संग्रहालय में जो हथियार देखें थे उनका उल्लेख किया। इस अवसर पर उनसे यह भी प्रार्थना की गयी थी कि कुछ उपहार स्वरूप संग्रहालय को कुछ वस्तुएं भेंट करने का कष्ट करें। गुरुकुल से जाने के बाद उन्होंने पं॰ हरिदत्त वेदालंकार को 31 अगस्त 1958 को एक पत्र लिखा। वह पत्र इस प्रकार है- "प्रिय हरिदत्त जी आपके दो पत्र कुछ दिन हुए मिले थे, उनके साथ मेरे भाषण की रिपोर्ट भी आयी थी उसको मैंने पढ़ा। गुरुकुल के संग्रहालय को देखकर मुझे खुशी हुई थी। अनेक प्रकार की चीजें वहाँ जमा है और विद्यार्थियों को उनको देखकर लाभ होता होगा। मैं आशा करता हूँ कि संग्रहालय बढ़ेगा और उन्नति होगी।"[40]

आपका-जवाहरलाल नेहरू।

यह ज्ञातव्य है कि बाद में नेहरू जी ने कुछ चीजे पुरातत्व संग्रहालय के लिए भेजी थी। गुरुकुल का वार्षिकोत्सव इस वर्ष 19 से 22 अक्टूबर तक समारोह पूर्वक सम्पन्न हुआ। यह सम्भवतः गुरुकुल के इतिहास में पहली बार था कि वार्षिकोत्सव अप्रैल में न होकर अक्टूबर में सम्पन्न हो पाया। इस वार्षिकोत्सव

में वेद सम्मेलन, संस्कृत सम्मेलन समाज सुधार सम्मेलन, राष्ट्रीय शिक्षा सम्मेलन आयुर्वेद सम्मेलन सम्पन्न हुए। इस समय यह उल्लेखनीय है कि समाज सुधार सम्मेलन के अध्यक्ष श्री काका कालेलकर थे।

मोती घाट

नवम्बर 58 के प्रारम्भ में ही गुरुकुल के मोती घाट की मरम्मत की गयी क्योंकि इन दिनों में गंगा नहर 15 दिन तक बन्द रहती थी। मोती घाट पर 30 फीट ऊंचे फट्टे का पुनर्निर्माण किया गया। यहाँ यह ज्ञातव्य है कि गुरुकुल के मोती घाट पर विद्यालय विभाग के छोटे-छोटे ब्रह्मचारियों को तैरने का प्रशिक्षण दिया जाता रहा है। यह 30 फीट ऊंचा फट्टा लोहे का बनाया गया था और इसके ऊपर लकड़ी के फट्टे बिछायें गये थे। यह वास्तव में गुरुकुल के अन्य दर्शनीय स्थानों के समान पर्यटकों के आकर्षण का केन्द्र था। गुरुकुल के छात्र इस पर कूद कर तैरने का प्रशिक्षण लेते थे। वे धीरे-धीरे तैरने में पारंगत हो जाते थे।[41]

गुरुकुल संग्रहालय को नई भेंट

1 अगस्त 1958 को भारत के प्रधानमंत्री पं० जवाहरलाल नेहरू विज्ञान महाविद्यालय का उद्घाटन करने के लिए आये थे। यह हम बतला चुके हैं। जैसा कि लिखा जा चुका है कि उनसे गुरुकुल संग्रहालय को कुछ अमूल्य वस्तुएं भेंट करने के लिए प्रार्थना की गई थी। इन उपहारों को 14-02-1959 को संग्रहालयाध्यक्ष ने प्रधानमंत्री के निवास स्थान नई दिल्ली से प्राप्त किया। ये 18 उपहार है जिनका विवरण देना यहाँ अपेक्षित है-

लकड़ी की चौकी पर एक बुद्ध विहार का पत्थर में बना हुआ नमूना, लकड़ी से बनी हुई मस्जिद्, रूस से प्राप्त लकड़ी का खिलौना जिसमें एक रीछ की गाड़ी को तीन घोड़े खींच रहे है।, सिलोन (श्री लंका) समाधि में भगवान् बुद्ध की मूर्ति, बुद्ध की धातु की मूर्ति 25-5-56 को क्वीन्स के शरणार्थी व्यापारी संघ द्वारा प्रदत्त।, अशोक को सिंह शीर्ष-एल्युमीनियम कार्पोरेशन द्वारा 2-9-57 को प्राप्त।, एक लकड़ी के बक्से में काली नक्कासीदार लकड़ी का प्याला, मध्य प्रान्त नागपुर से प्राप्त एक गोल लकड़ी का पट, सीसे के केस में एक बगैर हत्थे का फावड़ा तथा लकड़ी का एक छोटा हट, एक फावडा, दो कुल्हाड़े, टीन का बना मुलेखा मिस्त्री का बनाया हुआ हंल चलाते हुए व्यक्ति का चित्र, चम्बा से प्राप्त पहाड़ी गढ़ढी जाति के दुल्हा-दुल्हन की गुडियाएं, अमरावती से रूपचरण लाल, राम चरणलाल जायसवाल द्वारा बनी एक बूढ़े व्यक्ति की तस्वीर, एक फ्रेम में दो हाथियों की रूप रेखा, हिन्दी, चीनी और भारतीय राष्ट्रीय पताकाओं सहित, नागपुर के 64 वें कांग्रेस, अधिवेशन का लकड़ी में बना चित्र, एक सीसे के फ्रेम में चन्दन की बनी राम, लक्ष्मण, सीता की मूर्ति, भारत का नया राष्ट्रीय पंचांग।

आयुर्वेद महाविद्यालय में प्रधानाचार्य वैद्य निरञ्जजन देव जी निमन्त्रण पर "त्रिदोष" पर व्याख्यान देने के लिए 15 जनवरी को अयोध्या शिवकुमारी आयुर्वेद महाविद्यालय वेगूसराय (मुंगेर) गये। आपका भव्य स्वागत करते हुए वहाँ पर आपको अभिनन्दन पत्र प्रदान किया गया। आप ने त्रिदोष विषयक अत्यंत सारगर्भित एवं विद्वतापूर्ण तीन व्याख्यान दिए जिन्हें बहुत पसन्द किया गया।

दिनांक 27.01.59 को दिल्ली विश्वविद्यालय के हिन्दी के उपाध्याय श्री डॉ० विजयेन्द्र जी एम.ए. पी-एच.डी. ने छायावाद पर एवं 28.01.59 को "आचार्य रामचन्द्र शुक्ल एक आलोचक के रूप में" विषय पर अत्यन्त सारगर्भित एवं विद्वतापूर्ण व्याख्यान दिया। दिनांक 29.1.59 को दिल्ली विश्वविद्यालय के संस्कृत विभाग के अध्यक्ष श्री डॉ० चन्द्रभानु गुप्त एम.ए., पी-एच.डी. का "भारतीय नाट्य विकास की परम्परा" विषय पर सुन्दर व्याख्यान हुआ। उपर्युक्त दोनों शिक्षा प्रद व्याखानों के लिए उक्त विद्वान् महानुभावों का गुरुकुल की ओर से हार्दिक धन्यवाद किया गया।

इसके अतिरिक्त 19.2.59 को सहारनपुर जिला शिक्षाधिकारी महोदय का "विद्यार्थी कैसे देश सेवा करें" इस विषय पर अत्यन्त शिक्षाप्रद एवं प्रेरणास्पद व्याख्यान हुआ। आप गुरुकुल विज्ञान महाविद्यालय का निरीक्षण करने के लिए पधारे थे। आप यहाँ की सुव्यवस्था एवं शान्त वातावरण देखकर अत्यन्त प्रभावित हुए।[42]

अमरावती से अध्यापकों की एक यात्री टोली, जिसमें शिवाजी शिक्षा समिति द्वारा संचालित कुछ संस्थाओं के प्रतिनिधि थे, गुरुकुल अवलोकनार्थ आए। इन्होंने बड़ी ही श्रद्धा से गुरुकुल के समस्त विभागों को देखा और बहुत अधिक प्रभावित हुए।

हिन्दी के प्रसिद्ध विद्वान् लोकसभा के सदस्य सेठ गोविन्ददास 20 मई 59 को गुरुकुल में पधारे, गुरुकुल में स्मस्त विभागों को देखने के पश्चात् निम्नलिखित उद्गार प्रकट किये, "यमनोत्री, गंगोत्री, केदारनाथ और बद्रीनाथ इस उत्तराखण्ड के चारों धाम की यात्रा कर मैंने हरिद्वार में गुरुकुल कांगड़ी का निरीक्षण किया। मैं सनातन धर्म का अनुयायी हूँ। परन्तु इतने पर भी पूज्य स्वामी श्रद्धानन्द जी और भाई इन्द्रविद्यावाचस्पति से मेरा घनिष्ठ सम्बन्ध रहा। यह मेरा दुर्भाग्य रहा कि गुरुकुल के संस्थापक स्वामी श्रद्धानन्द से मेरा इतना घनिष्ठ सम्बन्ध रहने पर भी इससे पूर्व मैंने गुरुकुल के दर्शन नहीं किये थे, इस बार गुरुकुल को देखकर मुझे अत्यन्त हर्ष हुआ है। इस संस्था ने देश के शिक्षा क्षेत्र में ऐतिहासिक कार्य किया है। और यह भी ऐसे समय में जब देश पराधीन था। इस संस्था के संचालको और अध्यापकों ने जो निस्वार्थ सेवा की है वह इतिहास का विषय है। स्वराज्य के पश्चात् यह स्वाभाविक था कि इस संस्था के संचालक स्वतन्त्र भारत की सरकार से सभी कुछ की आशा करते, परन्तु यह खेद की बात है कि उन्हें ऐंसी सरकारी सहायता न प्राप्त हो सकी जैसी होनी चाहिए थी।"

गुजरात के प्रसिद्ध लेखक तथा भारत के लब्ध प्रतिष्ठित साहित्यकार तथा राज्य सभा के मनोनीत सदस्य श्री काका साहेब कालेलकर गुरुकुल में 24.5.59 को पधारे। उन्होंने गुरुकुल का परिभ्रमण किया और कहा कि आज गुरुकुल में घर जैसा आनन्द आया और यहाँ के ब्रह्मचारियों से मिलकर बड़ी ही प्रसन्नता हुई।[43]

गुरुकुल कांगड़ी के सुप्रसिद्ध स्नातक डॉ० धर्मानन्द आयुर्वेदालंकार एवं विद्यामार्तण्ड भारत सरकार के स्वास्थ्य मंत्रालय में आयुर्वेदिक परामर्शदाता नियुक्त किये गये। जब इस समाचार का पता गुरुकुलवासियों को ज्ञात हुआ तो गुरुकुल परिसर में एक प्रसन्नता की लहर दौड़ गयी।

जून 1959 में गुरुकुल कांगड़ी के सुयोग्य स्नताक श्री पं० दीनदयालु शास्त्री सिद्धान्तालंकार उत्तर प्रदेश सरकार में उपशिक्षा मंत्री नियुक्त किये गये। 24 जून 1959 को समस्त कर्मचारी एवं प्राध्यापक गण ने उनका अभिनन्दन किया।[44]

30 जून 1959 को गुरुकुल भूमि में आचायं सम्मेलन हुआ। इसमें 40 गुरुकुलों के आचार्यों ने भाग लिया। शिक्षा सम्बन्धी अनेक समस्याओं पर इस सम्मेलन में विचार किया गया क्योंकि भारत के समस्त गुरुकुलों के भविष्य के विषय में यह चिन्ता अभिव्यक्त की जा रही थी कि गुरुकुलों के सम्बन्ध में समस्त गुरुकुल किसी एक निर्णय पर पहुंचकर सरकार के समक्ष कोई ऐसा प्रस्ताव रख सके कि गुरुकुलों के स्वरूप की रक्षा करते हुए भारत सरकार अनुदान प्रदान करें।

4 अगस्त 1959 को उत्तर प्रदेश के राज्यपाल महामान्य वैंकट वराहगिरि वन महोत्सव के अवसर पर गुरुकुल में आये। समस्त कुलवायिों ने उनका स्वागत किया। आपने गुरुकुल के समस्त विभागों का अवलोकन किया। आपने अपने उद्गार प्रकट करते हुए कहा था कि गुरुकुल के विषय में मेरी बचपन से ही रुचि रही है। यहाँ के विषय में अनेक प्रचलित कहानियां सुना करते थे, यहाँ आकर अवलोकित किया तो ज्ञात हुआ कि गुरुकुल एक विकसित संस्था है। यहाँ पर कई दिन तक निवास करने के पश्चात् ही इसे गहराई से जाना जा सकता है।

गुरुकुल कांगड़ी के उपकुलपति पं० इन्द्र विद्यावाचस्पति को भारत सरकार की ओर से केन्द्रीय संस्कृत मण्डल का मान्य सदस्य मनोनीत किया गया।[45]

राष्ट्रीय छात्र सेना

राष्ट्रीय छात्र सेना (एन.सी.सी.) के भवन का निर्माण का कार्य 1958 में प्रारम्भ हुआ। गुरुकुल के वार्षिकोत्सव पर श्री के.एल. श्रीमाली शिक्षामंत्री भारत सरकार का कैडिट्स ने अभिवादन किया। गुरुकुल के कैडिट्स ने अखिल भारतीय राष्ट्रीय छात्र सेना शिविर और उत्तर प्रदेश की राष्ट्रीय छात्र सेना रैली में सक्रिय भाग लिया।

सन् 1959 में कैडिट्स ने तीन कैम्पों में भाग लिया। प्रथम शिविर नवम्बर मास में लच्छीवाला में सैनिक प्रशिक्षण शिविर में लगा। इसमें अनेक महाविद्यालयों ने भाग लिया था। शूटिंग्स ट्राफी, लाइन्स इन्स्पैक्शन ट्राफी, बॉलीबाल ट्राफी और कबड्डी ट्रॉफी आदि इन ट्रॉफियों में गुरुकुल कांगड़ी के कैडिट्स ने कई पुरस्कार प्राप्त किये ब्रह्मचारी दयानन्द ने इन शिविरों में अनेक शक्तिशाली प्रदर्शन प्रस्तुत किये। वहाँ शिविराध्यक्ष ने ब्रह्मचारी दयानन्द के शारीरिक प्रदर्शन को देखकर उन्हें कई पुरस्कार प्रदान किये। इसी तरह अल्मोड़ा, देहरादून और लखनऊ में भी एन.सी.सी. शिविरों में गुरुकुल कांगड़ी के कैडिट्स ने सक्रिय भाग लिया। राष्ट्रीय छात्र सेना भवन की आधार शिला अप्रैल 1959 में रखी गयी। इस भवन के निर्माणार्थ भारत सरकार ने 9050 रुपये का अनुदान दिया। इस भवन का लगभग 18000 रुपये व्यय होने थे।[46]

देश स्वतन्त्र होने के पश्चात् कांगड़ी का प्रशासन इस प्रयास में लगा हुआ था कि गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय को भारत सरकार की ओर से शत प्रतिशत अनुदान प्राप्त हो। यह हम लिख ही आये है कि गुरुकुल कांगड़ी को भारत सरकार द्वारा विश्वविद्यालय की मान्यता दी जाय। यह बार-बार प्रयास किया गया परन्तु उसमें बहुत अधिक सफलता प्राप्त नहीं हुई थी। 31 अगस्त 1959 को श्री प्रकाशवीर शास्त्री ने लोकसभा में एक प्रश्न पूछा कि गुरुकुल कांगड़ी को जामियां मिलिया इस्लामिया और वनस्थली विद्यापीठ को दस वर्षों में कितना-कितना अनुदान प्रदान किया गया। उस समय के शिक्षा मंत्री भारत सरकार डॉ० कालूलाल श्रीमाली ने लोकसभा को बतलाया कि इन वर्षों में जामिया मिलिया इस्लामियां को कुल 35,74806 रुपये अनुदान प्रदान किया गया। इन्हीं वर्षों में गुरुकुल कांगड़ी को 730000 और वनस्थली विद्यापीठ को 522140 रुपये प्रदान किये गये। मान्य श्री प्रकाशवीर शास्त्री ने सरकार से रोष प्रकट करते हुए कहा कि अनुदान में इतना अधिक वैषम्य क्यों किया गया ? जबकि गुरुकुल कांगड़ी एक राष्ट्रीय प्रतिष्ठान के रूप मे विख्यात है।[47]

आर्य विद्यासभा ने फिर एक बार प्रस्ताव पारित किया कि गुरुकुल कांगड़ी को विश्वविद्यालय बनाने हेतु अलग से सोसायटी एक्ट के अन्तर्गत गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय नाम से पंजीकृत कराया जाये।

गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय (हरिद्वार) पंजीकृत

CERTIFICATION OF REGISTATION OF SOCITIES ACT. XXI OF 1860 No. 622 of 1960, 1961

I here by cerfify that **GURUKUL KANGRI VISHWAVIDYALAYA (HARIDWAR)** ... has this day been registered under the societies registation act. XXI of 1860.

Given under my hand at Lucknow. This 17th day of March one thousand Nine Hundred and Sixty One.

Registration fee Rs. 50 only

Registrar of societies.
Utter Pradesh Lucknow.

चतुर्थ अध्याय

गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय की हीरक जयन्ती

सन 1960 में गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय की हीरक जयन्ती बड़ी धूम-धाम से मनायी गयी। इस अवसर पर अनेक कार्यक्रम आयोजित किये गये। इसी अवसर पर "गुरुकुल के साठ वर्ष" नामक ग्रन्थ भी प्रकाशित किया गया। "गुरुकुल के साठ वर्ष" नामक ग्रन्थ में गुरुकुल के साठ वर्ष का इतिहास प्रस्तुत किया गया। हीरक जयन्ती के पश्चात् पं॰ इन्द्र विद्यावाचस्पति जो कि 20 वर्ष से भी अधिक कुलपति एवं मुख्याधिष्ठाता पद पर रहे, उनको गुरुकुल से भावभीनी विदाई दी गई। 28 अगस्त 1960 को दिल्ली में उनका स्वर्गवास हो गया। गुरुकुल में जब यह समाचार ज्ञात हुआ तो अत्यधिक गहरा शोक छा गया, क्योंकि पं॰ इन्द्र विद्यावाचस्पति का जब स्वर्गवास हुआ तो वे दिल्ली में अनेक सामाजिक संस्थाओं के अध्यक्ष एवं सदस्य थे। उनके स्वर्गवास होने के पश्चात् दिल्ली में लालकिले का आधा झण्डा झुकाया गया था। 1960 में ही पं॰ सत्यव्रत सिद्धान्तालंकार को आर्य विद्या सभा ने मुख्याधिष्ठाता एवं कुलपति नियुक्त किया।

दिसम्बर 1960 में पं॰ सत्यव्रत सिद्धान्तालंकार को केन्द्रीय रक्षा मन्त्रालय ने कर्नल पद पर अलंकृत किया। यह विश्वविद्यालय के लिए बड़े गौरव की बात थी कि सरकार द्वारा विश्वविद्यालय की मान्यता न होने पर भी विश्वविद्यालय में एन.सी.सी. का कार्यक्रम कई वर्षों से चल रहा था, कर्नल की उपाधि उसी कुलपति को प्रदान की जाती है, जिसके विश्वविद्यालय में एन.सी.सी. होती है।

गुरुकुल में सरकारी समिति का आगमन

20 दिसम्बर को एक समिति शिक्षामन्त्रालय भारत सरकार की ओर से गुरुकुल का निरीक्षण करने के लिए आयी। इसका मुख्य उद्देश्य यह था कि गुरुकुल कांगड़ी को अन्य विश्वविद्यालयों की तरह मान्यता प्रदान की जाये। तीन विशिष्ट विद्वानों की इस समिति ने गुरुकुल के समस्त विभागों का निरीक्षण किया। इस समिति में कलकत्ता विश्वविद्यालय के अमरेटिश प्रोफेसर और उस समय बंगाल विधान परिषद् के मान्य अध्यक्ष डॉ॰ सुनीति कुमार चटर्जी और भारत के केन्द्रीय सरकार के शिक्षा परामर्शदाता डॉ॰ परमेश्वर दीन शुक्ल तथा इस समिति के अध्यक्ष के रूप में भारतवर्ष के सर्वोच्च न्यायालय के भूतपूर्व प्रधान न्यायाधीश एवं संस्कृत मण्डल के अध्यक्ष माननीय श्री पतंजलि शास्त्री सम्मिलित थे। समस्त विभागों का निरीक्षण करने के बाद एक स्वागत सभा का आयोजन किया गया। तीन संस्कृत संवाद तथा इंग्लिश लिटरेरी सोसायटी द्वारा "दि बिशप्स केन्डल" नामक अंग्रेजी भाषा में एकांकी अभिनय आदि सांस्कृतिक कार्यक्रम प्रस्तुत किया गया।

समिति के अध्यक्ष श्री पतंजलि शास्त्री ने संस्कृत में कहा कि "यह मेरा परम सौभाग्य है जो मुझे गुरुकुल दर्शन का अवसर प्राप्त हुआ। यहाँ प्रचलित शिक्षा प्रणाली को देखकर में अत्यन्त प्रसन्न हुआ हूँ। यहाँ न केवल भारतीय संस्कृति के मूल विषय पढ़ाये जाते हैं अपितु आधुनिक विज्ञान आदि का अध्यापन भी अत्यन्त प्रयत्नपूर्वक होता है। अतएव यह विश्वविद्यालय अन्य विश्वविद्यालयों के समान ही स्थान प्राप्त करे, ऐसा प्रयत्न हम समिति के सदस्यों को करना ही है।[48]

मान्य श्री सुनीति कुमार चटर्जी ने अपने अंग्रेजी भाषण में कहा कि "एक संस्था के रूप में संस्थापित यह संस्था बिना किसी सरकारी सहायता के विकास प्राप्त करती चली गयी। मैं संस्था के अधिकारियों को

तथा यहाँ के प्रशासन को धन्यवाद प्रदान करता हूँ।" आप ने स्वामी दयानन्द स्वामी श्रद्धानन्द तथा आर्य समाज द्वारा "संस्कृत, संस्कृति राष्ट्रीय शिक्षा, नारी उत्थान तथा अनेक सामाजिक सुधारों के साथ "सादा जीवन उच्च विचार" आदि आदर्शों के लिए किये गये कार्यों की मुक्त कण्ठ से सराहना की।

केन्द्रीय सरकार के शिक्षा परामर्शदाता माननीय डॉ॰ शुक्ल ने हिन्दी में कहा कि "गुरुकुल शिक्षा प्रणाली का हमें बहुत घमण्ड है, इसके बल का यही प्रमाण है कि राज्य के बिना विशेष सहयोग पर भी यह संस्था न केवल खड़ी रही बल्कि शान से सिर ऊंचा किए रही।"[49] इस सभा के अन्त में माननीय कुलपति सत्यव्रत सिद्धान्तालंकार ने बताया कि "अंग्रेजी शासन काल में सरकारी अनुदान के लिए हमने कभी प्रार्थना नही की थी अपितु स्वयं सरकार देना चाहती थी, परन्तु राष्ट्रीय संस्था होने के नाते विदेशी सरकार से अनुदान प्राप्त करना अनुचित समझा गया था। परन्तु इस समय देश स्वतन्त्र हो चुका है इसलिए हम सरकार से निवेदन कर रहे हैं कि अन्य विश्वविद्यालयों की भांति इसको भी विश्वविद्यालय की मान्यता प्रदान की जाए।"

12 जनवरी सन् 1961 को श्रद्धेय कुलपति डॉ॰ सत्यव्रत सिद्धान्तालंकार ने गुरुकुल के विद्यार्थियों के स्वास्थ्य और आयु की उन्नति के लिए योगासनों की शिक्षा की विशेष व्यवस्था की थी इसके लिए ब्र॰ भारती को नियुक्त किया गया।

22 जनवरी उन्नीस सो इकसठ को एक पत्र उपर्युक्त समिति की रिपोर्ट के रूप में प्राप्त हुआ। इस रिपोर्ट में माननीय पतंजलि शास्त्री ने लिखा था कि- "मैं गुरुकुल में अपने उस सुहावने दिवस और दृश्य को जीवन में कभी नहीं भूल सकूंगा"। इसी प्रकार डॉ॰ सुनीति कुमार चटर्जी ने भी प्रशंसा करते हुए लिखा था कि "मैं गुरुकुल में उस दिन नाटक के अभिरूप से बहुत अधिक प्रभावित था कि मेरे आंखों से आंसू गिरने लगे"। इसी प्रकार की प्रशंसा डॉ॰ परमेश्वर दीन शुक्ल ने भी अपने पत्र में की थी।

21 फरवरी 1961 को गुरुकुल स्थापना दिवस मनाया गया। वेद मन्दिर में सभा आयोजित की गयी। आचार्य प्रियव्रत वेद वाचस्पति की अध्यक्षता में यह सभा सम्पन्न हुई। सभा के अन्त में आचार्य प्रियव्रत ने अपने भाषण में कहा कि-"विद्यार्थियों को एवं उपाध्यायों को तथा गुरुकुल के अधिकारी गण को आत्म निरीक्षण करना चाहिए कि गुरुकुल अपनी मूल नीति से न भटक जाये।"

1 मार्च 1961 को उत्तर प्रदेश सरकार के वन मंत्री श्री अलगूराय शास्त्री एवं आर्य जगत् के सुप्रसिद्ध नेता महाशय कृष्ण गुरुकुल में पधारे। दोनों ने समस्त विभागों का निरीक्षण और गुरुकुल की उन्नति से सन्तोष अभिव्यक्त किया।

3 मार्च उत्तर प्रदेश के शिक्षा मंत्री मान्य आचार्य श्री जुगल किशोर गुरुकुल में पधारे। उन्होंने गुरुकुल के समस्त विभागों का अवलोकन किया और यह इच्छा अभिव्यक्त की कि मैं गुरुकुल के दर्शनार्थ पुनः गुरुकुल में आऊंगा।

नवीन भवनों का निर्माण

गुरुकुल संग्रहालय के लिए नवीन भवन की रूपरेखा दिल्ली वास्तुकार श्री शिवव्रत दत्त ने तैयार की थी। पहले संग्रहालय वेद मन्दिर के ऊपर वाले भाग में ही था। संग्रहालय का नवीन भवन बनाने के लिए उसकी आधार शिला सन् 1960 में मुख्यमंत्री (उ.प्र.) डॉ॰ सम्पूर्णानन्द ने रखी थी। यह भी निर्माण कार्य प्रारम्भ हो गया था, केन्द्रीय सरकार ने इस वर्ष संग्रहालय के भवन निर्माण के लिए 50000 रुपये का अनुदान दिया था।

स्नातक भवन

गुरुकुल के स्नातकों को गुरुकुल आगमन के समय उन्हें ठहराने के लिए वर्तमान अतिथि भवन के सामने स्नातक भवन का निर्माण कार्य प्रारम्भ हो गया।

31 मार्च सन् 1961 को गुरुकुल के छः स्नाताकों को हिन्दी भाषा में उत्तम रचनाओं पर उत्तर-प्रदेश सरकार ने 'साहित्य पुरस्कार देकर सम्मानित किया। इन विद्वानों में डॉ॰ सत्यकेतु विद्यालंकार, श्री जयचन्द्र विद्यालंकार, श्री हरिदत्त वेदालंकार श्री इन्द्र विद्यावाचस्पति (मरणोपरान्त) पं॰ चन्द्र गुप्त विद्यालंकार, श्री विद्यानिधि सिद्धान्तलंकार थे।

राष्ट्रपति राजेन्द्र प्रसाद जी का आगमन

31 मार्च सन् 1961 को श्रद्धेय राष्ट्रपति डॉ॰ राजेन्द्र प्रसाद 12 बजे गुरुकुल में पधारे। उनका सबसे पूर्व संस्कृत श्लोकों से स्वागत किया गया। डॉ॰ राजेन्द्र प्रसाद का गुरुकुल से पुराना सम्बन्ध रहा था। वे तीन या चार बार गुरुकुल में पहले भी आ चुके थे। गुरुकुल के कुलपति पं॰ सत्यव्रत सिद्धान्तालंकार ने उनका स्वागत किया और यह आशा भी अभिव्यक्त का कि गुरुकुल शीघ्र ही एक शिक्षण संस्था के रूप में मान्यता प्राप्त करेगा। माननीय राष्ट्रपति ने अपने भाषण में कहा कि "विज्ञान द्वारा प्रदत्त भौतिक उन्नति और मानवीय मूल्यों पर स्थित नैतिक उन्नति ये दोनों साथ-साथ चलने चाहिए। केवल अभ्युदय या निःश्रेयस पर बल देना एकांगी है। दोनों पर समान रूप से बल देना सच्ची शिक्षा है। इसी में मानव का कल्याण है। मुझे प्रसन्नता है कि गुरुकुल इस दिशा में प्रयत्नशील है।"[50] यहाँ एक घटना का उल्लेख करना आवश्यक है कि इससे पूर्व जिस समय डॉ॰ राजेन्द्र प्रसाद राष्ट्रपति बने ही थे, उस समय भी गुरुकुल में आये थे। गुरुकुल से जाने के पश्चात् आचार्य प्रियव्रत वेदवाचस्पति को बिहार के एक छात्र श्री जगन्नाथ के प्रवेश के सम्बन्ध में एक पत्र लिखा था, पत्र की भाषा इस प्रकार थी कि-"मैं भारत के प्रथम नागरिक होने के नाते आप से प्रार्थना कर रहा हूँ कि एक मेरे परिचित का पुत्र पैर से पोलियो रोग ग्रस्त है। उसे आप गुरुकुल में प्रवेश देने का कष्ट करें। उस छात्र पर जो भी व्यय होगा वह दिया जायेगा।" जहा यह ज्ञातव्य है कि उस समय गुरुकुल में अपाहिज बच्चे को छात्र के रूप में प्रवेश देने का नियम नहीं था क्योंकि यहाँ पर प्रारम्भ से ही डॉ॰ के स्वास्थ्य परीक्षण के पश्चात् ही प्रवेश दिया जाता था। आचार्य प्रियव्रत जी के समकक्ष एक विचित्र समस्या उपस्थित हो गयी थी। आचार्य प्रियव्रत ने राष्ट्रपति के पत्र का उत्तर देते हुए लिखा था कि "आप की गुरुकुल पर सदैव कृपा रही है, आप ने मुझसे जो प्रार्थना की है कि एक छात्र को प्रवेश करने के सम्बन्ध में मुझे ऐसा खेद से लिखना पड़ रहा है कि गुरुकुल के वर्तमान नियमों के अनुसार उसे प्रवेश देने में मैं असमर्थ हूँ। परन्तु मैं आप को यह अवश्य आश्वासन देता हूँ कि इस प्रकार के नियम का अपवाद विद्या सभा द्वारा ही किया जा सकता है। विद्या सभा की शीघ्र ही बैठक होने वाली है। मैं आपके इस पत्र को विद्यासभा की बैठक में प्रस्तुत करूंगा, वहाँ पर अपनी पूर्ण शक्ति से इस प्रस्ताव को पारित कराने का भी प्रयत्न करूंगा।"

इस प्रकार जगन्नाथ का गुरुकुल कांगड़ी में प्रवेश सम्भव हो पाया और उसने यहाँ से विद्यालंकार की उपाधि प्राप्त की। इससे यह ज्ञात होता है कि उस समय के अधिकारी यहाँ के नियमों का पालन कितनी कठोरता से करते थे।

दीक्षान्त समारोह

इस वर्ष गुरुकुल कांगड़ी के दीक्षान्त समारोह पर माननीय मुख्यमंत्री श्री चन्द्रभानु गुप्त ने बारह अप्रैल को नव स्नातकों को दीक्षान्त एवं आशीर्वाद प्रदान किया। उन्होंने दीक्षान्त भाषण देते हुए कहा कि मैं

जब-जब भी इस संस्था में आया हूँ यहाँ से कुछ सीखकर ही गया हूँ और अब भी इसलिए आया हूँ महर्षि दयानन्द के अनुयायी स्वामी श्रद्धानन्द ने अंग्रेजों के समय गुरुकुल कांगड़ी की स्थापना करके एक क्रान्ति की थी।[51]

इस वार्षिकोत्सव पर वेद सम्मेलन, सरस्वती सम्मेलन, राष्ट्रीय शिक्षा सम्मेलन आदि सम्मेलनों का भी आयोजन किया गया था।

कन्या गुरुकुल में दीक्षान्त समारोह

7 मई 1964 को कन्या गुरुकुल महाविद्यालय में दीक्षान्त समारोह का आयोजन किया गया। इस अवसर पर प्रो॰ सत्यव्रत सिद्धान्तालंकार मुख्याधिष्ठाता एवं उपकुलपति ने दीक्षान्त भाषण प्रदान किया। दीक्षान्त भाषण देते हुए आपने कहा था कि आधुनिक शिक्षा पद्धति भारतीय संस्कृति सभ्यता तथा परम्पराओं के विपरीत है। गुरुकुल शिक्षा पद्धति ही भारतीय संस्कृति के अनुरुप है।[52]

नवम आर्य महासम्मेलन और गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा की स्वर्ण जयन्ती और नवम आर्य महासम्मेलन दिल्ली के रामलीला मैदान में 16 मई 1961 से 21 मई 1961 तक धूमधाम से आयोजित किया गया। इस अवसर पर श्री पं॰ बुद्धदेव विद्यालंकार, श्री धर्मदेव विद्यामार्तण्ड, प्रो॰ सत्यव्रत सिद्धान्तालंकार, आचार्य प्रियव्रत वेदवाचस्पति, क्षितीश कुमार वेदालंकार और पं॰ भगवद्दत्त वेदालंकार ने गुरुकुल के स्नातकों के रूप में ओजस्वी भाषण प्रदान किए। 19 मई को शोभा यात्रा का आयोजन किया गया। इस शोभा यात्रा में 3 लाख स्त्री-पुरुष सम्मिलित हुए थे। शिक्षण संस्थाओं ने इस शोभा यात्रा में बढ़ चढ़ करके भाग लिया था। शिक्षा संस्थाओं का नेतृत्व आर्य समाज की शिरोमणि शिक्षा संस्था गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय के ब्रह्मचारी कर रहे थे। इस अवसर पर जितने भी सम्मेलन आयोजित किये गये थे। उनमें गुरुकुल के स्नातकों ने अपने विद्वत्तापूर्ण भाषण प्रदान किये थे।[53]

विश्वविद्यालय विधेयक अगले सत्र में

जैसा कि हम यह लिख चुके हैं कि गुरुकुल कांगड़ी को विश्वविद्यालय की मान्यता देने का प्रयास 1950 के पश्चात् से चल रहा था। इस विषय में भारत सरकार ने समिति भी गठित की थी, जो कि गुरुकुल में आकर निरीक्षण कर चुकी थी। इन सब के परिणाम स्वरूप भारत सरकार के निश्चयानुसार लोकसभा में गुरुकुल कांगड़ी को विश्वविद्यालय का रूप देने के लिए 7 अगस्त को प्रारम्भ होने वाले लोकसभा के वर्षाकालीन सत्र में विधेयक लाने की बात कही गयी थी।[54]

"सोवियत भूमि" अंग्रेजी-हिन्दी मासिक पत्रिका के मुख्य सम्पादक सपरिवार गुरुकुल में पधारे। कई दिन तक आप गुरुकुल में अतिथि के रूप में रहे। इनका आर्यसमाज गुरुकुल कांगड़ी में "रूस जैसा मैंने देखा" विषय पर भाषण हुआ।

गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय के भूतपूर्व उपकुलपति पं॰ इन्द्र विद्यावाचस्पति की धर्मपत्नी माता चन्द्रावती 10 जून 1961 को श्रद्धा निकुंज में निर्मित इन्द्र कुटी में आयीं। गुरुकुल की उन्नति को देखकर उन्होंने सन्तोष अभिव्यक्त किया।

विश्वविद्यालय का वेदमन्दिर से प्रारम्भ होकर आयुर्वेद महाविद्यालय के मुख्य मार्ग तक कच्चा रास्ता पक्की सीमेन्टेड सड़क के रूप में बनकर तैयार हुआ। विज्ञान महाविद्यालय के एक विभाग के रूप में जीव एवं वनस्पति शास्त्र की उच्च शिक्षा देने के लिए विशाल भवन बनकर तैयार हुआ। इस भवन का निर्माण केन्द्रीय सरकार के अनुदान से हुआ।

जून मास में ही आर्य प्रतिनिधि सभा बम्बई का एक शिष्ट मण्डल गुरुकुल के दर्शनार्थ आया। गुरुकुल का परिभ्रमण करके यह शिष्ट मण्डल बहुत ही प्रसन्न हुआ। यह प्रतिनिधि मण्डल आर्य प्रतिनिधि उत्तर-प्रदेश के अध्यक्ष पं॰ प्रकाशवीर शास्त्री के साथ गुरुकुल में आया था।

24 जुलाई 1961 को उत्तर प्रदेश सरकार की श्रममंत्री श्रीमती सुचेता कृपलानी गुरुकुल में पधारी थी। आप कृषि विचार गोष्ठी का उद्घाटन करने के लिए आयी थी। यह गोष्ठी कृषि विद्यालय में सम्पन्न हुई थी। श्री शान्ति प्रपन्न शर्मा उत्तर प्रदेश सरकार के विद्युत् उपमंत्री भी गुरुकुल परिसर में अवलोकनार्थ आये थे। श्री रामनारायण त्रिपाठी उत्तर प्रदेश विधानसभा के उपाध्यक्ष 10 जुलाई को गुरुकुल में पधारे। आपने अपने सुपुत्र ब्र॰ राजेश को प्रथम श्रेणी में प्रविष्ट कराया। इसी प्रकार अखिल भारतीय प्रजा सोसलिष्ट पार्टी के पूर्व अध्यक्ष एवं प्रसिद्ध नेता आचार्य कृपलानी गुरुकुल में पधारे। उन्होंने गुरुकुल को देखकर बहुत ही प्रसन्नता अभिव्यक्त की थी।[55]

21 सितम्बर 1961 को वेद मन्दिर में विश्वविद्यालय व्याख्यानमाला के प्रथम व्याख्यान के रूप में डॉ॰ जे.पी. सूद मेरठ कालेज मेरठ के राजनीति विभाग के अध्यक्ष का समाजवाद विषय पर प्रभावशाली व्याख्यान हुआ। उन्होने अपने भाषण में कहा कि वर्तमान सरकार का रेक्सों द्वारा किया जाने वाला समाजवाद तब तक सफल नहीं हो सकता जब तक उसका प्रभाव मानव के अन्तःस्थल तक न हो जाये।

21 अक्टूबर 1961 को भारत सरकार के स्वास्थ्य मंत्री श्री दत्तात्रेय करमरकर सपत्नीक तथा स्वास्थ्य परामर्शदात्री समिति के सदस्यों सहित गुरुकुल भूमि में पधारे। आप ने गुरुकुल के समस्त विभागों का निरीक्षण किया। श्री मंत्री महोदय के साथ भारत में बर्मा के राजदूत हरएक्सीलेन्सी माथिरी थुधम्या दाओ खिन क्याई भी गुरुकुल में आयी थी। आप भी गुरुकुल का अवलोकन करके गुरुकुल से बहुत ही प्रभावित हुई।

इस समय गुरुकुल विश्वविद्यालय के प्रस्तोता पद (कुलसचिव) पद पर डॉ॰ रामनाथ वेदालंकार (अध्यक्ष) संस्कृत विभाग कार्य कर रहे थे। 5 अक्टूबर सन् 1961 को केन्द्रीय स्वास्थ्य मंत्रालय की आयुर्वेद चिकित्सा पद्धति के मुख्य परामर्शदाता डॉ॰ सी. द्वारकानाथ जी गुरुकुल कांगड़ी आयुर्वेद महाविद्यालय के विस्तार तथा उसमें अनुसंधान आदि के प्रशिक्षण की व्यवस्था करने की योजनाओं पर विचार विमर्श करने के लिए पधारे। आप ने आयुर्वेद महाविद्यालय का निरीक्षण किया तथा यहाँ के शिक्षण तथा आयुर्वेद की गतिविधियों से अत्यधिक प्रभावित हुए।

गुरुकुल कांगड़ी के सुयोग्य स्नातक वेदों के प्रकाण्ड विद्वान् पं॰ धर्मदेव विद्यावाचस्पति एवं विद्यामार्तण्ड जो कि गुरुकुल में वेदोपाध्याय पद पर रहें, को 8 अक्टूबर 61 को सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा दिल्ली की धर्मार्य सभा का आगामी तीन वर्ष के लिए सर्व सम्मति से प्रधान निर्वाचित किया गया था। उनके इस निर्वाचन से गुरुकुल गौरवान्वित हुआ, क्योंकि इस धर्मार्य सभा में समस्त भारत के आर्यसमाजों एवं प्रतिनिधि सभाओं के लिए वेद, धर्म, दर्शन और कर्मकाण्ड आदि के विषय में जो निर्णय किये जाते हैं वे आर्य समाज में अन्तिम माने जाते हैं।

2 नवम्बर 1961 को मद्रास के राज्यपाल श्री विष्णुराम जी मेधी सपरिवार गुरुकुल विश्वविद्यालय में पधारे। सहायक मुख्याधिष्ठाता पं॰ धर्मपाल विद्यालंकार, वि.वि. के आचार्य प्रो॰ सुखदेव दर्शनवाचस्पति, तथा अन्य महाविद्यालयों के प्राध्यापकगण ने उनका स्वागत किया। उन्होंने गुरुकुल का निरीक्षण किया। यहाँ की गुरुकुल शिक्षा पद्धति को देखकर बहुत ही प्रभावित हुए।[56]

यह ज्ञातव्य है कि पं॰ सुखदेव दर्शनवाचस्पति आचार्य रामदेव जी के आदेश पर 1943 में लगभग आचार्य प्रियव्रत जी के बाद ही गुरुकुल में दर्शन विभाग के उपाध्याय पद के लिए नियुक्त हुए थे। बाद

में चलकर आप कला महाविद्यालय के प्राचार्य, विश्वविद्यालय के उपाचार्य पद पर प्रतिष्ठित किये गये थे। समस्त भारत में आप आर्य समाज के दार्शनिक विषयों पर बड़े ही गहन विषयों के प्रवक्ता के रूप में जाने जाते थे। आपकी नियुक्ति पण्डित सत्यव्रत सिद्धान्तालंकार द्वारा हुई थी।

अखिल भारतीय श्रद्धानन्द हॉकी टूर्नामेंन्ट गत वर्षों की तरह इस वर्ष भी श्रद्धानन्द सप्ताह के अवसर पर 22 दिसम्बर से 29 दिसम्बर 61 तक आयोजित किया गया। इस हॉकी टूर्नामेन्ट में नोर्द्रन (उत्तरीय) रेलवे दिल्ली, डी.एच.ए. अम्बाला, वेस्टर्न रेलवे, कोटा, कुरूक्षेत्र, दिल्ली, देहरादून, चण्डीगढ़, आदि स्थानों की टीमों ने टूर्नामेन्ट में भाग लिया। हॉकी मैदान में प्रतिदिन लगभग 1000 दर्शकों ने टूर्नामेन्ट को देखा।

17 दिसम्बर 61 को बम्बई में विश्व संस्कृत परिषद् का आयोजन किया गया था। इस सम्मेलन में गुरुकुल कांगड़ी तथा गुरुकुल पत्रिका के सम्पादक पं० धर्मदेव विद्यामार्तण्ड ने अपना शोध पत्र प्रस्तुत किया। आप के शोध पत्र से अनेक विद्वान् बहुत अधिक प्रभावित हुए।[57]

28 जनवरी 1962 को गुरुकुल की ओर से ग्राम प्रधानों के शिविर में आरोग्य केन्द्र का आर्युवद महाविद्यालय की ओर से संचालन किया गया। इसमें अनेक रोगियों ने पंच शुद्धि कर्म किया। श्रद्धानन्द बलिदान सप्ताह के अवसर पर पूर्व की भांति विभिन्न कार्यक्रमों का आयोजन किया गया।

4 मार्च 1962 को गुरुकुल विश्वविद्यालय के यशस्वी कुलपति सत्यव्रत सिद्धान्तालंकार का पंजाब सरकार की ओर से एक समारोह में अभिनन्दन किया गया। मान्य कुलपति को एक अभिनन्दन पत्र एवं ग्यारह सौ रुपये तथा एक उत्तरीय भेंट स्वरूप प्रदान किया गया। इस समारोह की अध्यक्षता राजस्थान के राज्यपाल श्री गुरुमुख निहाल सिंह ने की थी।[58]

गुरुकुल का शरीर सौष्ठव और व्यायाम के क्षेत्र में भी नाम रहा है इसलिए यहाँ जो ब्रह्मचारी सबसे अधिक शक्तिशाली होता था उसको भीम की उपाधि से विभूषित किया जाता था, जिनमें ब्र० सुदर्शन ब्र० राजेशवरनाथ ब्र० सुधाकर भीम तथा ब्र० दयानन्द को भीम की उपाधि से विभूषित किया गया था। ब्र० सुधाकर भीम तो अपने ऊपर से सड़क कूटने के रोलर को छाती के ऊपर से उतरवा लेते थे। इन्होंने देश एवं विदेश में अनेक व्यायाम के प्रदर्शन किए थे। ये 40 मन का पत्थर छाती पर रखवाकर पलट देते थे इसी प्रकार ब्र० दयानन्द का शारीरिक सौष्ठव इतना सुन्दर माना जाता था कि उनके शरीर को "दूसरा दयानन्द" नाम से मान्यता प्रदान की जाती थी। दर्शक जब उनके सुन्दर शरीर को देखते थे तो उनके मुख से सहसा निकल जाता था कि क्या कोई इतना भी सुन्दर हो सकता है? ब्र० दयानन्द के विषय में एक किवदन्ती प्रसिद्ध है कि वे दिल्ली के हवाई अड्डे पर एअरफोर्स की भर्ती को देखने के लिए दिल्ली गये हुए थे तो भर्ती करने वाले कमाण्डेन्ट की पुत्री ने जब ब्र० दयानन्द को देखा तो वह अपने पिता के पास आयी और उनसे आग्रह किया- "मैं सामने खड़े इस नवयुवक से शादी करना चाहती हूँ।" कमाण्डेन्ट महोदय ने ब्र० दयानन्द को बुलाया और पूछा "तुम क्या काम करते हो?" उसने कहा कि "मैं गुरुकुल कांगड़ी में आयुर्वेद महाविद्यालय का छात्र हूँ। अभी कोई नौकरी नहीं करता हूँ।" कमाण्डेन्ट ने कहा "नौकरी करना चाहोगे?" ब्रह्मचारी ने कहा "यदि नौकरी मिल जाये तो अवश्य कर लूँगा।" इस तरह ब्र० दयानन्द को तुरन्त एअरफोर्स के कार्यालय में अच्छी नौकरी दे दी गयी और उसके बाद में उसका विवाह भी वहीं सम्पन्न हो गया।

भीम बनने की इसी परम्परा में विद्यालंकार प्रथम वर्ष के छात्र ब्र० शिवकुमार 1962 में भीम की उपाधि से विभूषित हुआ।

मार्च 1962 में जब यह समाचार गुरुकुल कांगड़ी में प्रसारित हुआ कि गुरुकुल के स्नातक लोकसभा के लिए श्री युद्धवीर सिंह महेन्द्रगढ़ क्षेत्र से चुन लिये गये हैं तो गुरुकुल में प्रसन्नता की लहर दौड़ गयी। श्री युद्धवीर सिंह सबसे कम आयु के सदस्य थे। उस समय उनकी आयु 32 वर्ष थी। दूसरा एक प्रसन्नता

का समाचार यह भी प्राप्त हुआ था कि वाराणसेय विश्वविद्यालय के नवनिर्वाचित कुलपति डॉ॰ वैंकटेश मूर्ति, 1920 के आस-पास कई वर्ष तक गुरुकुल के छात्र रहे थे, को गुरुकुल की ओर से बधाई सन्देश भेजा गया।[59]

अप्रैल 1962 में 11 अप्रैल से गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय का 62वां वार्षिकोत्सव प्रारम्भ हुआ। इसका प्रारम्भ आर्य प्रतिनिधि सभा के प्रधान पं॰ बुद्धदेव विद्यालंकार के कर कमलों द्वारा ध्वजोत्तोलन के साथ किया गया। इस अवसर पर वेद सम्मेलन सरस्वती सम्मेलन और व्यायाम सम्मेलन का आयोजन किया गया।

दीक्षान्त समारोह

गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय का दीक्षान्त समारोह बड़ी धूमधाम से आयोजित किया गया। इस दीक्षान्त भाषण के लिए मुख्य अतिथि के रूप में भारत सरकार के गृहमंत्री श्री लाल बहादुर शास्त्री पधारे थे। दीक्षान्त समारोह के प्रारम्भ में जैसा कि आज तक भी यह परम्परा प्रचलित है कि एक शोभायात्रा का आयोजन किया जाता रहा है। अतिथि भवन से माननीय गृहमंत्री जी इस शोभायात्रा में सम्मिलित हुए। दीक्षान्त यज्ञ के पश्चात् नव स्नातकों को वेश प्रदान किया गया। उसके पश्चात् आचार्य प्रियव्रत वेद-वाचस्पति ने स्नातकों को उपाधि प्रदान की। इसके साथ ही गृहमंत्री महोदय को भी विश्वविद्यालय की सर्वोच्च उपाधि विद्यामार्तण्ड से विभूषित किया। मान्य शास्त्री ने अपने दीक्षान्त भाषण में कहा कि गुरुकुल में यह बहुत अच्छी परम्परा है कि यहाँ नाम के सामने जाति सूचक शब्द नहीं लगाये जाते हैं। आपने यह भी बतलाया कि मेरी माता जी चाहती थी कि मैं भी गुरुकुल में आकर पढ़ूं। परन्तु मेरे स्वास्थ्य ने साथ नहीं दिया। परन्तु मुझे बिना पढ़े ही गुरुकुल की सर्वोच्च उपाधि प्राप्त हो गयी है। मैं गुरुकुल के अधिकारियों का बहुत ही आभारी हूँ।[60]

डॉ॰ सत्यकेतु विद्यालंकार तथा श्री दीनदयालु जी सिद्धान्तालंकार दोनों ही उत्तर प्रदेश राज्य विधान परिषद् में रुहेलखण्ड और देहरादून के क्षेत्र से सदस्य चुने गए थे। उत्तर-प्रदेश सरकार के शिक्षा मंत्री आचार्य जुगल किशोर जी 22 अप्रैल 62 को गुरुकुल कांगड़ी में पधारे। उन्होंने इस अवसर पर कहा कि "जब मैं हरिद्वार अथवा हरिद्वार के आसपास आता हूँ तो मेरी इच्छा होती है कि मैं गुरुकुल कांगड़ी के दर्शनार्थ अवश्य गुरुकुल में आऊँ और तब आकर मेरे मन को शान्ति मिलती है।"[61]

स्वर्गीय पं॰ इन्द्रविद्यावाचस्पति की स्मृति में उनकी धर्मपत्नी चन्द्रावती जी ने गुरुकुल पुस्तकालय को उनके द्वारा संग्रहीत 2000 पुस्तकें भेंट की थी। श्रद्धेय माता जी पं॰ इन्द्र जी के शरीर की भस्म भी गुरुकुल के खेतों के लिए लायी थी। यहाँ यह ज्ञातव्य है कि पं॰ इन्द्र विद्यावाचस्पति स्वामी श्रद्धानन्द के सुयोग्य पुत्र और गुरुकुल के सुयोग्य स्नातक तथा गुरुकुल के पूर्व कुलपति थे।

पंचायती प्रशिक्षण केन्द्र के लिए गुरुकुल को साढ़े बासठ हजार रूपये का अनुदान प्राप्त हुआ। यह अनुदान उत्तर प्रदेश सरकार की तरफ से प्राप्त हुआ था। मई मास में नवभारत टाइम्स दैनिक के प्रधान सम्पादक श्री अक्षय कुमार जैन भी गुरुकुल में पधारे।

गुरुकुल विश्वविद्यालय के आचार्य श्री प्रियव्रत वेदवाचस्पति के कनिष्ठ पुत्र श्री चन्द्रकान्त ने अपने बड़े भाई श्रुतिकान्त विद्यालंकार के पास ब्रिटिश-गायना के लिए 7 जून को प्रस्थान किया।

आन्ध्र प्रदेश के मान्य राज्यपाल श्री भीमसेन सच्चर गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय में पधारे। उन्होंने अपने उद्‌गार प्रकट करते हुए कहा कि "मैं अनेक बार गुरुकुल की पुण्यभूमि में आया हूँ। कुछ वर्ष एवं समय के पश्चात् गुरुकुल आकर एवं यहाँ का शान्त वातावरण मुझे आकर्षित कर लेता है।"

आयुर्वेद महाविद्यालय के इण्डियन मेडिसन बोर्ड लखनऊ द्वारा यह सन्तोष अभिव्यक्त किया गया कि गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय के इस महाविद्यालय का आयुर्वेद के क्षेत्र में विशिष्ट योगदान रहा है।

गुरुकुल पत्रिका जुलाई 62 के अंक में "कुलमाता का सम्मान" शीर्षक से समाचार प्रकाशित किया गया- "अत्यन्त हर्ष का विषय है कि केन्द्रीय शिक्षा के सचिवालय द्वारा प्रकाशित विज्ञप्ति के अनुसार विश्वविद्यालय अनुदान आयोग के परामर्श पर केन्द्रीय सरकार ने गुरुकुल कांगड़ी को विश्वविद्यालय घोषित करने की घोषणा की है। इसकी अधिसूचना 19 जून को शिक्षा मंत्रालय भारत सरकार ने विश्वविद्यालय अनुदान आयोग कानून (1956) की धारा यू-3 के अनुसार की गयी है। यह मान्यता 3 वर्ष के लिए स्थायी रूप में प्रदान की गई। तीन वर्ष के पश्चात् फिर भी समिति निरीक्षण के लिए आयेगी।"[62]

18 जुलाई 62 को अमेरिका के वैदिक सोसाइटी के संस्थापक, आर्यसमाज अमेरिका के प्रथम कोटि के अधिकारी डॉ॰ मार्क्स अपने मित्र के आठ वर्षीय पुत्र मास्टर डीन को साथ लेकर कुलभूमि में पधारे। डॉ॰ मार्क्स यहाँ वैदिक साहित्य संस्कृत, भारतीय दर्शन हिन्दी आदि भारतीय विषयों का अध्ययन करने के लिए आये। पं॰ धर्मदेव विद्यामार्तण्ड दो घन्टे प्रतिदिन उनको संस्कृत पढ़ाते थे। मास्टर डीन को गुरुकुल में प्रविष्ट करा दिया गया। उनका नाम बदलकर दिनेश कुमार आर्य रखा गया। दिनेश कुमार आर्य ने कई वर्ष तक गुरुकुल में अध्ययन किया। सम्भवत: यहाँ से वे विद्याधिकारी उत्तीर्ण करके गये थे। उसके पश्चात् उनके विषय में यह ज्ञात हुआ कि वे अमेरिका में संस्कृत से एम.ए. करके किसी यूनिवर्सिटी में संस्कृत प्रवक्ता बन गये थे।[63]

डॉ॰ कोठारी का गुरुकुल में आगमन

11 सितम्बर को विश्वविद्यालय अनुदान आयोग के अध्यक्ष डॉ॰ दौलत सिंह जी कोठारी गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय का निरीक्षण करने के लिए सपरिवार गुरुकुल में आये। श्री कोठारी जी ने महाविद्यालयों का, पुस्तकालय और संग्रहालय का निरीक्षण किया। दोपहर पश्चात् कोठारी जी के सम्मान में वेदमन्दिर में वृहद् सभा का आयोजन किया गया। सभा के आरम्भ में गुरुकुल विश्वविद्यालय के उपकुलपति कर्नल सत्यव्रत सिद्धान्तालंकार ने अभिनन्दन पत्र डॉ॰ कोठारी को भेंट किया। इस अवसर पर महाविद्यालय के छात्रों द्वारा हिन्दी, संस्कृत और अंग्रेजी तीनों भाषाओं में वाद-विवाद आयोजित किया गया, सभा के अन्त में मान्य कोठारी जी ने विश्वविद्यालय के अधिकारियों का धन्यवाद करते हुए कहा कि "मुझे हर्ष व गर्व है कि आप विद्या दान जैसे अतिशय उच्च कार्यों में लगे हुए हैं। जिनका देश व राष्ट्र के लिए बहुत अधिक महत्व है। प्रत्येक संस्था की उन्नति उसके संचालकों के ऊपर निर्भर करती है। तो भी हमारा कर्तव्य है कि हम भी इसकी उन्नति के लिए सहायता कर सकें। अत: विश्वविद्यालय अनुदान आयोग जो मदद दे सकेगा उसके लिए वह अपने आप को धन्य समझेगा ऐसा करना उसका कर्तव्य ही है। मैं अपने सम्मान के लिए पुन: धन्यवाद देता हूँ।"[64]

यहाँ यह ज्ञातव्य है कि उनके भाषण का शेष सार पृथक् से विस्तार रूप में आगे दिया गया है।

वनस्पति अनुसंधान संस्थान योजना

भारत सरकार ने इस वर्ष से गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय में आयुर्वेद महाविद्यालय में ही वनस्पति अनुसंधान नाम का नया विभाग प्रारम्भ किया। इस योजना के अध्यक्ष के रूप में डॉ॰ अनुकूल चन्द्र डे, भूतपूर्व अनुसंधान अधिकारी वन अनुसंधान विभाग देहरादून को नियुक्त किया गया। इस योजना के अन्तर्गत हिमालय में उत्पन्न होने वाली वनस्पतियों को जो वनस्पतियां दुर्लभ हैं, अथवा ऐसी वनस्पतियां जिनका प्रयोग औषधियों में नहीं हो पाया। इन सब वनस्पतियों का अध्ययन करना तथा औषधि की दृष्टि से इन

वनस्पतियों के गुण को जांचना और गुण की मात्रा को सुनिश्चित करना आदि इस योजना का मुख्य उद्देश्य था। यहाँ यह लिखना पड़ रहा है कि इस योजना को आयुर्वेद महाविद्यालय तक ही सीमित रखा गया। यदि विश्वविद्यालय अनुदान आयोग से स्वीकृति लेकर विश्वविद्यालय का विभाग बनाया गया होता तो आज वह विभाग बहुत अधिक विकसित हो जाता। परन्तु यह योजना कुछ वर्षों तक ही चली और आगे चलकर यह अनुसंधान संस्थान समाप्त हो गया।

इस वर्ष विश्वविद्यालय व्याख्यानमाला के अन्तर्गत विशिष्ट व्याख्यान हुए। प्रथम व्याख्यान 22 सितम्बर 62 को भागलपुर विश्वविद्यालय के हिन्दी विभाग के अध्यक्ष प्रो॰ वीरेन्द्र विद्यावाचस्पति का "राष्ट्रभाषा की वर्तमान समस्याएं" विषय पर हुआ। दूसरा व्याख्यान मेरठ कालेज के संस्कृत विभाग के अध्यक्ष डॉ॰ शिवराज का "ऋग्वेद काल में परिवार परम्परा" विषय पर खोजपूर्ण व्याख्यान हुआ।

बलिदान जयन्ती समारोह सम्पन्न

सन् 1957 में पंजाब में आर्य समाज के नेतृत्व में हिन्दी सत्याग्रह किया गया था। इस सत्याग्रह में कई आर्य समाज के कार्यकर्त्ता शहीद हुए थे। उन शहीदों की स्मृति में यह "बलिदान जयन्ती समारोह" मनाया गया था। इसका आयोजन 7 से 14 अक्टूबर 62 तक किया गया। गुरुकुल कांगड़ी के स्नातकों का इस बलिदान जयन्ती समारोह में बहुत ही अधिक योगदान था। इस समारोह के आयोजक गुरुकुल कांगड़ी के यशस्वी स्नातक डॉ॰ हरिप्रकाश आयुर्वेदालंकार थे जो आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के भी महामंत्री थे। गुरुकुल के कई छात्रों में हिन्दी सत्याग्रह में भाग लिया था। आयोजक समिति के अध्यक्ष गुरुकुल के ही स्नातक पं॰ बुद्धदेव विद्यालंकार थे। इस अवसर पर साहित्य सम्मेलन के अध्यक्ष धर्मदेव विद्यामार्तण्ड, शिक्षा सम्मेलन के अध्यक्ष पं॰ सत्यव्रत सिद्धान्तालंकार, आर्य युवक सम्मेलन के अध्यक्ष गुरुकुल के आचार्य प्रियव्रत वेदवाचस्पति थे। इनके अतिरिक्त भी अनेक स्नातकों ने जिनमें श्री सुखदेव दर्शनवाचस्पति उपाचार्य गुरुकुल कांगड़ी, क्षितीश कुमार वेदालंकार, पं॰ हरिशरण सिद्धान्तालंकार आदि के प्रभावशाली भाषण भी हुए थे। लेखक स्वयं भी विद्या-विनोद द्वितीय खण्ड के छात्र के रूप में गुरुकुल के अन्य छात्रों के साथ सम्मिलित हुआ था। यहाँ गुरुकुल से बहुत से उपाध्याय वर्ग, पचास छात्र गण, इसके साथ ही कन्या गुरुकुल देहरादून की छात्राएं भी इस समारोह में भाग लेने के लिए आयी थी। यह कहना अतिशयोक्ति नहीं होगा कि इस समारोह की समस्त व्यवस्था गुरुकुल कांगड़ी के छात्रों एवं स्नातकों ने ही की थी।[65]

20 अक्टूबर से 26 अक्टूबर 62 तक आरोग्य केन्द्र गुरुकुल कांगड़ी की ओर से हरिद्वार कनखल, ज्वालापुर, आर्य इन्टर कालेज मायापुर, सनातन धर्म हायर सेकेन्डरी स्कूल कनखल, आर्य वानप्रस्थ आश्रम ज्वालापुर, जगजीतपुर, जमालपुर आदि स्थानों से आरोग्य सप्ताह आयोजित किया गया। इस आरोग्य सप्ताह के अवसर पर जहां विभिन्न रोगियों की चिकित्सा की गई और आयुर्वेद के सामान्य ज्ञान एवं नुस्खों को सामान्य जनता को बतलाया एवं समझाया गया।

उत्तर प्रदेश सरकार के उपशिक्षा मंत्री माननीय श्री वेशवान राय, 4 नवम्बर 62 को गुरुकुल कांगड़ी में पधारे। उन्होंने गुरुकुल कांगड़ी को बड़ी श्रद्धा से अवलोकित किया।

अमेरिका की अतिथि छात्र के रूप में कुमारी विश मेरी पैरिस गुरुकुल में वेद तथा उपनिषदों का अध्ययन करने के लिए आयी मिस मैरी को पं॰ धर्मदेव विद्यामार्तण्ड ने एक घन्टा प्रतिदिन वेद एवं उपनिषदों का अध्ययन कराया। मिस मैरी को भारतीय अध्यात्म विद्या के साथ बहुत अधिक श्रद्धा थी। यहाँ पर इसका भारतीय नामकरण भी किया गया। पंडित जी ने इनका नाम कुमारी मैत्री रखा। वे कहा करती थी कि "भारत से अच्छा दुनिया में कोई देश नहीं है।"[66]

फरवरी 1966 में प्रान्तीय विश्वविद्यालय अनुदान आयोग के चार सदस्य श्री मदन मोहन जी की अध्यक्षता में विज्ञान महाविद्यालय के निरीक्षण के लिए पधारे। यहाँ यह उल्लेखनीय है कि सन् 1962 में विश्वविद्यालय की मान्यता केवल प्राच्य और मानविकी विद्याओं के लिए मिली थी। उस समय विज्ञान महाविद्यालय उसमें सम्मिलित नहीं था। विज्ञान महाविद्यालय उस समय महाविद्यालय के रूप में आगरा विश्वविद्यालय से सम्बद्ध था। इसलिए समय-समय पर सरकारी अनुदान प्राप्त करने के लिए निरीक्षण हुआ करता था। इस आयोग ने विज्ञान महाविद्यालय के सभी भवनों का निरीक्षण किया। सभा में यह आश्वासन दिया गया कि "हम विज्ञान महाविद्यालय को अधिक से अधिक अनुदान मिले, इसकी संस्तुति करेंगे। विश्वविद्यालय व्याख्यानमाला के अन्तर्गत 28 जनवरी 1964 को हिन्दी साहित्य के सुप्रसिद्ध समालोचक, सागर विश्वविद्यालय के हिन्दी विभाग के अध्यक्ष एवं आर्ट्स फैकल्टी के डीन आचार्य नन्द दुलारे वाजपेयी ने गुरुकुल कांगड़ी की प्रशंसा करते हुए कहा कि (इस संस्था ने एक इतिहास रचा है, आप उस इतिहास की धरोहर को सुरक्षित करें, मेरा आप से यही निवेदन है।)[67]

विज्ञान महाविद्यालय में रुड़की विश्वविद्यालय के डॉ॰ नरेश चन्द्र वार्ष्णेय, डॉ॰ सारस्वत का क्रमशः "भौतिकी और वास्तविकता" एवं "परमाणु रचना एवं उनका तत्व से गुणों के सम्बन्ध" विषय पर व्याख्यान हुए।

6 अप्रैल 1964 को आरोग्य शिविर का आयोजन किया गया, प्रो॰ सत्यव्रत सिद्धान्तालंकार ने इसका उद्घाटन किया। यह समारोह तीन दिन तक चला। इसमें यह जोर दिया गया कि आयुर्वेद के मूल स्वरूप को सुरक्षित रखना चाहिए। इसमें पंचपुरी के सभी वैद्यों ने अपने मौलिक विचारों को प्रस्तुत किया। इस शिविर में अनेक रोगियों की चिकित्सा भी की गई।

गुरुकुल कांगड़ी का 64वां वार्षिकोत्सव प्रारम्भ हुआ। इसमें सर्वप्रथम आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के प्रधान एवं कुलाधिपति प्रो॰ राम सिंह ने ओम् ध्वजा का उत्तोलन किया। यज्ञ के पश्चात् वेद सम्मेलन हुआ, अन्य सम्मेलनों में सरस्वती और कवि सम्मेलन भी हुए। इस वर्ष का दीक्षान्त समारोह 14 अप्रैल 1964 को सम्पन्न हुआ। दीक्षान्त समारोह में दीक्षान्त अभिभाषण उत्तर प्रदेश के राज्यपाल श्री डॉ॰ विश्वनाथ दास ने प्रदान किया। माननीय राज्यपाल महोदय ने अपने भाषण में कहा "मैं प्रार्थना करता हूँ कि परमेश्वर विद्यार्थियों को वह निष्ठा और मानसिक शक्ति प्रदान करे, जिससे कि वे साधना की अवधि में अपने आप को इतना सुसज्जित कर ले कि वे मानसिक शारीरिक और भावनात्मक विकास के उच्चतम शिखर पर पहुंच सके।" इस अवसर पर पं॰ पूर्णचन्द्र विद्यालंकार ने नव स्नातकों का स्वागत किया। संन्यासियों की ओर से आस्ट्रेलिया से आये स्वामी सूर्य प्रेमानन्द ने नवस्नातकों को आशीर्वाद दिया। विश्वविद्यालय के कुलधिपति सभा प्रधान प्रो॰ राम सिंह ने नव स्नातकों को वेद मन्त्रों द्वारा अन्तिम उपदेश एवं आशीर्वाद प्रदान किया।[68]

बंगाल में गुरुकुल का सेवा दल

मई 1964 के अन्तिम सप्ताह में पूर्वी पाकिस्तान से विस्थापितों के लिए गुरुकुल कांगड़ी के एक छात्रों का दल बंगाल में रिलीफ सोसाइटी के रूप में सार्वदेशिक सभा की ओर से गया। इस सेवा दल के अध्यक्ष ब्र॰ जयदेव वेदालंकार प्रथम वर्ष, ब्र॰ शंकर सिंह, ब्र॰ राजबल तथा मध्य प्रदेश के ब्र॰ जयदेव थे। वहाँ पर इन छात्रों ने लगभग दो मास तक जो हिन्दू स्त्री-पुरुष भूखे-प्यासे आते थे, उनको चिवड़ा एवं गुड़ तथा कपड़े आदि प्रदान किये। इस अवसर पर लगभग एक हजार विस्थापितों का चिवड़ा गुड़, कपड़ा और साबुन दिया गया। यह भारत के अन्तिम "गेदे" रेलवे स्टेशन पर अन्य संस्थाओं के भी सहायतार्थ शिविर थे। उन शिविरों में भारत साधु समाज का शिविर भी था। इस शिविर के दौरान ही एक दिन भारत साधु

समाज के अध्यक्ष जो कलकत्ता से आये थे, 80 वर्षीय स्वामी जी गुरुकुल कांगड़ी के शिविर में पधारे और वहाँ आकर बैठ गये, बैठकर वे आंखों में आंसू भरकर रोने लगे। उस समय इस ग्रन्थ के लेखक डा. जयदेव वेदालंकार (जो उस समय छात्र के रूप में थे) ने स्वामी जी से प्रार्थना करते हुए पूछा कि क्या आप से मेरे साथी ने अभद्र व्यवहार किया? अथवा इससे कोई गलती हो गयी है? तो मैं सभी साथियों की ओर से आप से क्षमा याचना चाहता हूँ। स्वामी जी ने गम्भीर स्वर में कहा नहीं, तुम्हारे किसी भी साथी से गलत व्यवहार नहीं हुआ, बल्कि मैं तो इसलिए भावुक हो गया था कि गुरुकुल कांगड़ी के संस्थापक स्वामी श्रद्धानन्द के साथ कन्धे से कन्धा मिलकर मैंने शुद्धि आन्दोलन में कार्य किया था। वह स्वामी श्रद्धानन्द का एक ऐसा तूफान सा आन्दोलन था, जिसमें जब हम एक गांव को शुद्ध करते थे तो अगले गांव के मुसलमान भाई हमारी घन्टों प्रतीक्षा किया करते थे। तुम उसी गुरुकुल के छात्र हो। मैं तो तुम्हें आशीर्वाद प्रदान करने आया हूँ।" यहाँ यह ज्ञातव्य है कि उस युग में (1920 के आस-पास) शुद्धि करने का किसी गैर आर्यसमाजी संगठन ने समर्थन किया था, अथवा शुद्धि आन्दोलन में भाग लिया था तो केवल "भारत साधु समाज" ही था। अन्य सनातन धर्म के जितने भी संगठन थे वे शुद्धि आन्दोलन के विरुद्ध थे।(69)

जून 1964 में गुरुकुल के सुधाकर भीम सुरक्षा कोष के लिए प्रोग्राम करते हुए पंजाब के फिरोजपुर जिले में दुर्घटनाग्रस्त हो गये थे, वहाँ हस्पताल से अवकाश लेकर स्वास्थ्य लाभ के लिए गुरुकुल में पधारे। सुधाकर भीम ने 1956 में तीन कार एक साथ रोककर देहरादून में प्रो॰ राममूर्ति का रिकार्ड तोड़ा था। सुधाकर भीम का बहुत ही भव्य एवं दर्शनीय स्वास्थ्य था।[70]

आयुर्वेद महाविद्यालय के प्रो॰ श्री दुर्गादास को अनुशासनहीनता में आयुर्वेद महाविद्यालय से निष्कासित कर दिया गया था। उन्होंने अपने किसी सम्बन्ध से "सरिता" के सम्पादक को गुरुकुल में भेजा। यहाँ यह ज्ञातव्य है कि "सरिता" पत्रिका हिन्दू विरोधी मानी जाती थी। उस समय सरिता के प्रत्येक अंक में एक वेद मंत्र की व्याख्या भी प्रकाशित की जाती थी। वह व्याख्या इस प्रकार की होती थी कि लोग उसको पढ़कर कहे कि क्या यही वेद है? उनमें किसी न किसी प्रकार से हिन्दू धर्म को अवैज्ञानिक तथा पाखण्ड युक्त बताने का प्रयास किया जाता था। उसके सम्पादक जब गुरुकुल में आये तो उन्होंने गुरुकुल के रमणीय वातावरण को भी धूल-धूसरित वातावरण लिखा था। "सरिता" में उस समय यहाँ के अधिकारियों के विरोध में व्यक्तिगत और संस्थागत दोष लगाये थे। डॉ॰ सत्यव्रत सिद्धान्तालंकार जैसे प्राच्य विद्याओं के उद्भट विद्वान्, जिनके दर्जनों, बड़े-बड़े ग्रन्थ प्रकाशित थे, जिनको अनेक प्रान्तीय एवं राष्ट्रीय पुरस्कारों से अलंकृत किया गया था। उनको बी.ए. ना पास कुलपति के रूप में लिखा था। उस समय प्रो॰ सत्यव्रत सिद्धान्तालंकार ने गुरुकुल कांगड़ी के विषय में श्वेतपत्र जारी किया था जो गुरुकुल पत्रिका के जुलाई-अगस्त अंक में प्रकाशित किया गया था। "सरिता" में उस समय जो गुरुकुल शिक्षा पद्धति पर आक्षेप किये थे, उनका एक-एक का उत्तर इस श्वेत पत्र में विस्तृत रूप में दिया गया था। इस श्वेत पत्र के जारी होने के पश्चात् "सरिता" में गुरुकुल के प्रति जो भ्रामक प्रचार किया जा रहा था वह बन्द हो गया था।[71]

नवम्बर 22 से 24 नवम्बर 64 तक नेशनल फीजिक्स एफिसीऐन्सी टेस्ट का केन्द्र गुरुकुल कांगड़ी में भी रखा गया, इसमें गुरुकुल के छात्र और अन्य गुरुकुल वासियों ने भी भाग लिया।

प्रो॰ सुब्रह्मण्यम अय्यर जो कि अवकाश प्राप्त प्रिन्सिपल लॉ कालेज त्रिवेन्द्रम्, गुरुकुल में पधारे थे, वे दक्षिण भारतीय सामवेदी ब्राह्मण थे। उन्होंने गुरुकुल में प्राचीन भारतीय संस्कृति पर कई व्याख्यान दिये। इसके साथ ही उन्होंने चारों वेदों की शाखाओं संहिताओं के विभिन्न देशों में प्रचलित सस्वर वेद पाठ का प्रदर्शन किया।

गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय के कुलपति प्रो० सत्यव्रत सिद्धान्तालंकार को राष्ट्रपति डॉ० राधाकृष्णन् ने शिक्षा शास्त्री के रूप में राज्य सभा में मनोनीत किया। इस प्रसन्नता के अवसर पर 27 नवम्बर 1964 को विश्वविद्यालय में अवकाश घोषित किया गया।

अक्टूबर मास में धन्वन्तरी त्रयोदशी के अवसर पर आरोग्य सप्ताह का आयोजन किया गया। पंचपुरी में आर्य इन्टर कालेज मायापुर, ज्वालापुर इन्टर कालेज, कनखल चौक, कन्या गुरुकुल कनखल, आदि संस्थाओं में समारोह आयोजित किए गये एवं रोगियों के रोग का निदान भी किया गया।[72]

विज्ञान महाविद्यालय के जीव विज्ञान विभाग के अध्यक्ष प्रो० चम्पत स्वरूप को आगरा विश्वविद्यालय से इस माह पी-एच.डी. की उपाधि प्रदान की गई। इसी जनवरी 60 में प्राचीन भारतीय इतिहास विभाग के उपाध्याय श्री राजगोपाल अय्यर ने काशी हिन्दू विश्वविद्यालय से पी-एच.डी. की उपाधि प्राप्त की। श्रद्धानन्द बलिदान सप्ताह के अवसर पर गुरुकुल के आचार्य प्रियव्रत वेदवाचस्पति ने अपने उद्‌बोधन में कहा था कि "गुरुकुल ऊंची इमारतों का नाम नहीं, गुरुकुल एक विचार का नाम है। इसे क्रियात्मक रूप से जीवन में ढ़ालना चाहिए।"[73]

गुरुकुल कांगड़ी विद्यालय विभाग के छठी एवं अष्टम कक्षा के सभी छात्र गुरुकुल झज्जर (रोहतक) के स्वर्णजयन्ती महोत्सव पर भेजे गये। यह महोत्सव 17 फरवरी से 20 फरवरी 1966 को मनाया गया। इस अवसर पर गुरुकुल शिक्षा प्रणाली पर आचार्य प्रियव्रत वेदवाचस्पति का व्याख्यान हुआ। 22 फरवरी 1966 को गुरुकुल स्थापना दिवस मनाया गया। वेद मन्दिर में सभा का आयोजन किया। इसमें वेद महाविद्यालय के आचार्यगण के भाषण हुए। अध्यक्ष पद से आचार्य प्रियव्रत वेदवाचस्पति ने अपना उद्‌बोधन देते हुए बतलाया "गुरुकुल शिक्षा प्रणाली ऐसी शिक्षा प्रणाली है जो प्राचीनतम भी है और आधुनिकतम भी।"[74]

गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय का 66वां वार्षिकोत्सव 11 अप्रैल से 14 अप्रैल 66 तक सम्पन्न हुआ। इस अवसर पर वेद सम्मेलन, संस्कृत सम्मेलन और आयुर्वेद सम्मेलन आयोजित किये गये। संस्कृत सम्मेलन में विश्वविद्यालय के छात्रों, जिसमें श्री रामप्रसाद, श्री जयदेव, श्री रघुवीर और प्रकाशवीर ने अपने निबन्ध वाचन किये। सम्मेलन की अध्यक्षता आर्य प्रतिनिधि सभा के महामंत्री श्री रघुवीर सिंह शास्त्री ने की थी। उन्होंने लगभग सवा घन्टे तक संस्कृत भाषा के महत्व पर संस्कृत में ही अपना भाषण प्रस्तुत किया था।

13 अप्रैल 66 को दीक्षान्त समारोह आयोजित किया गया। दीक्षान्त अभिभाषण के लिए भारत सरकार के रक्षा मंत्री श्री माननीय यशवन्त राव बलवन्तराव चह्वाण पधारे थे। दीक्षान्त समारोह का संचालन डॉ० गंगाराम गर्ग (कुलसचिव) ने किया था। दीक्षान्त भाषण में माननीय चह्वाण जी ने नव स्नातकों को आशीर्वाद देते हुए कहा कि "सभी शिक्षा प्रणालियों में गुरुकुल शिक्षा प्रणाली ही विशिष्ट है।"

भूतपूर्व रक्षा मंत्री श्री महावीर त्यागी ने भी इस अवसर पर नव स्नातकों को आशीर्वाद प्रदान किया। अन्त में नव स्नातकों को वेद मन्त्रों से आशीर्वाद डॉ० मंगलदेव शास्त्री ने प्रदान किया। कुलाधिपति प्रो० राम सिंह ने भी इस अवसर पर नव स्नातकों को आशीर्वाद देते हुए आगामी कुछ वर्षों में इन्जीनियरिंग कालेज तथा लॉ कालेज की घोषणा की थी।

श्री महेन्द्र प्रताप शास्त्री एक जून 66 से विश्वविद्यालय के नये कुलपति नियुक्त हुए। माननीय शास्त्री का 35 वर्षों से शिक्षा के विभिन्न क्षेत्रों में अनुभव था। उनका विद्यासभा भवन में एक जून 66 को सायंकाल 5 बजे भव्य स्वागत किया गया। उनके स्वागत समारोह में अन्य कर्मचारियों के अतिरिक्त विश्वविद्यालय

के कुलाधिपति प्रो॰ राम सिंह तथा श्री पं॰ जगदेव सिंह सिद्धान्ती संसद सदस्य ने भी मान्य कुलपति का अभिनन्दन किया।[75]

जुलाई 66 में आगरा विश्वविद्यालय से एक उप समिति निरीक्षण करने के लिए गुरुकुल में आयी थी। इस समिति में बरेली कालेज के अध्यक्ष तथा डीन फैकल्टी आफ आर्ट्स आर.ए. मिश्रा, सेन्ट जान्स कालेज के प्रधानाचार्य तथा पद्मश्री पी.टी. चाण्डी थे। उन्होंने सभी महाविद्यालयों का निरीक्षण किया। इस कमेटी का उद्देश्य यह था कि आगरा विश्वविद्यालय हमारी उपाधि अलंकार एवं एम.ए. आदि को अपने समकक्ष मान्यता प्रदान करें। इस समिति की संस्तुति पर आगरा विश्वविद्यालय ने अपने समकक्ष हमारी उपाधियों को मान्यता भी दी थी। 14 सितम्बर 1966 को विश्वविद्यालय में हिन्दी दिवस मनाया गया। इसमें यह जोर दिया गया कि यदि विज्ञान जैसे विषयों को भी हिन्दी भाषा के माध्यम से पढ़ा जाये तो हमारे यहाँ के अथवा भारत के सभी विश्वविद्यालयों से निकलने वाले स्नातक अधिक प्रतिभाशाली सिद्ध होंगे। इस समारोह की अध्यक्षता विश्वविद्यालय के कुलपति माननीय महेन्द्र प्रताप शास्त्री ने की थी। इसमें अनेक वक्ताओं ने भाषण दिये थे।[76]

5 अक्टूबर 66 को राजस्थान आयुर्वेदिक बोर्ड के डायरेक्टर महोदय गुरुकुल में पधारे। उनके साथ आयुर्वेद कालेज के छात्रों का दल भी गुरुकुल में आया। केन्द्रीय हिन्दी संस्थान आगरा की ओर से अहिन्दी भाषी क्षेत्रों के लगभग 200 अध्यापक एवं अध्यापिकाएं अपने छात्र-दल के साथ गुरुकुल में अवलोकनार्थ आयें। इसी मास में उड़ीसा से श्री त्रिपाठी संसद सदस्य ने आयुर्वेद महाविद्यालय का निरीक्षण किया। उसके पश्चात् उनका आयुर्वेद विषय पर संस्कृत में दो घन्टे तक भाषण हुआ। बी.एच.ई.एल. कारखाना हरिद्वार के रूसी इन्जीनियरों के निवेदन पर हरिद्वार का सांस्कृतिक और ऐतिहासिक महत्व विषय पर गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय के प्रीचन इतिहास एवं पुरातत्व संग्रहालय के निदेशक पं॰ हरिदत्त वेदालंकार का भाषण हुआ।[77]

20 अगस्त 1967 को रात्रि 8 बजे पंचायती राज प्रशिक्षण केन्द्र के सभा भवन में महाविद्यालय के छात्रों ने सांस्कृतिक संगोष्ठी का आयोजन किया। इस अवसर पर "वीर के वेग" वरुण के अश्रु, श्रृंगार की सज्जा, तथा हास्य की मधुरता के रसों का अभिनय किया गया। मनोविज्ञान विभाग में 13 अगस्त को श्री कृपानारायण सक्सेना का व्याख्यान हुआ। हिन्दी विभाग के तत्वावधान में 22 सितम्बर को श्री प्रयाग नारायण त्रिपाठी का प्रयोगवाद व नयी कविता पर एक विश्लेषणात्मक व्याख्यान हुआ। श्री त्रिपाठी जी अखिल भारतीय आकाशवाणी केन्द्र में एक कुशल प्रशासक भी थे।

इतिहास विभाग के अध्यक्ष पं॰ हरिदत्त वेदालंकार का 24 सितम्बर 67 को मध्यप्रदेश सरकार की साहित्य परिषद् द्वारा उनके कूटनीति विषयक ग्रन्थ अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्ध पर 1965 का 1500 रुपये का कौटिल्य पुरस्कार प्रदान किया गया। उनके इस पुरस्कार प्राप्ति के पश्चात् विद्या सभा भवन में उनका पंचपुरी की ओर से भव्य स्वागत किया गया। इस सभा में यह भी जानकारी दी गयी थी कि पं॰ हरिदत्त वेदालंकार को यह आठवीं बार पुरस्कार प्राप्त हुआ है। पं॰ हरिदत्त वेदालंकार ने सबका धन्यवाद करते हुए अपने भाषण में कहा कि "इसका सारा श्रेय गुरुकुल कांगड़ी को जाता है जिसके पवित्र वातावरण में बैठकर मैंने शिक्षा प्राप्त की थी।"[78]

14 नवम्बर 67 को वेद मन्दिर में तपोनिष्ठ आचार्य भगवान देव का अभिनन्दन किया गया। आचार्य भगवान देव को भारत सरकार ने संस्कृत आयोग का सदस्य मनोनीत किया था। उनका अभिनन्दन करते हुए आचार्य प्रियव्रत ने कहा था कि "मैं आचार्य जी की त्याग और तपस्या से सदा प्रभावित रहा हूँ। आचार्य

भगवान देव की तुलना में गुरुकुल कांगड़ी के संस्थापक स्वामी श्रद्धानन्द से करता हूँ। विश्वविद्यालय के रजिस्ट्रार डॉ० गंगाराम गर्ग ने विश्वविद्यालय की ओर से अभिनन्दन पत्र प्रस्तुत किया। उन्होंने कहा कि "वास्तव में यह सम्मान आचार्य भगवान देव का नहीं है अपितु आर्य जगत् का है।" सभा के अन्त में आचार्य भगवान देव ने हरियाणा का इतिहास और संस्कृति पर अपना विशिष्ट व्याख्यान दिया।[79]

अंग्रेजी विरोधी आन्दोलन

उत्तर प्रदेश के सभी विश्वविद्यालयों में अंग्रेजी विरोधी आन्दोलन जोर पकड़ता जा रहा था। गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय के छात्रों ने दर्शन शास्त्र विभाग के छात्र जयदेव वेदालंकार और आयुर्वेद महाविद्यालय के छात्र श्री शिवप्रसाद शर्मा के नेतृत्व में 5 दिसम्बर 67 को "हिन्दी विरोधी काला विधेयक" के विरोध में सांकेतिक हड़ताल की, तथा वेद, विज्ञान, आयुर्वेद तथा कृषि महाविद्यालय के सभी छात्रों ने गुरुकुल प्रांगण से एक जुलूस निकाला। यह जुलूस इन्टर कालेज ज्वालापुर, भल्ला कालेज, एस.एम. जैन महाविद्यालय से होता हुआ हरिद्वार के मुख्य बाजार में अंग्रेजी के सभी दुकानों के बोर्डों को काला करते हुए पहुँचा। सुभाष घाट पर यह जुलूस सभा के रूप में परिवर्तित हो गया, जिसकी अध्यक्षता जयदेव वेदालंकार ने की। इसमें अनेक छात्रों ने ओजस्वी व्याख्यान दिये। अन्त में अध्यक्ष ने प्रस्ताव पारित कर केन्द्रीय सरकार से अनुरोध किया कि "सरकार की दूरदर्शिता इसी में है कि इस हिन्दी विरोधी काले विधेयक को अविलम्ब वापस ले," नहीं तो भारत में खून की क्रान्ति हो सकती है।"80

गुरुकुल कांगड़ी का 68वां वार्षिकोत्सव 12 अप्रैल से प्रारम्भ हुआ। इसमें वि.वि. के कुलपति एवं आर्य प्रतिनिधि सभा के प्रधान प्रो० राम सिंह ने ध्वजारोहण किया। उन्होंने सम्बोधित करते हुए कहा कि "यह ओ३म् ध्वज हमें "कृण्वन्तो विश्वमार्यम्" का पाठ पढ़ाता है। यहाँ के कर्मचारियों और ब्रह्मचारियों को यह संकल्प लेना चाहिए, हमें समस्त संसार को आर्य बनाना है।" इसके पश्चात् वेद सम्मेलन से उत्सव का कार्यक्रम प्रारम्भ हुआ। 13 अप्रैल को 2 बजे से आयुर्वेद सम्मेलन प्रारम्भ हुआ। इस सम्मेलन की अध्यक्षता उत्तर प्रदेश लखनऊ के निदेशक श्री मुकन्दीलाल ने की थी। इस सम्मेलन में वैद्य रामनाथ ने शुद्ध आयुर्वेद के प्रयोग पर बल दिया। उन्होंने यह भी बताया कि "आयुर्वेद की खोज ऋषि मुनियों की खोज थी। हमें उन ऋषियों की खोज का पूर्ण परिज्ञान नहीं है इसलिए हमारे नुस्खे कई बार असफल हो जाते हैं।"

इस वर्ष का दीक्षान्त समारोह 14 अप्रैल 68 को आयोजित किया गया। इस वर्ष लगभग एम.ए., एम.एस.सी. अलंकार सहित लगभग 150 छात्रों ने उपाधियाँ प्राप्त की। दीक्षान्त अभिभाषण के लिए भारत सरकार के राज्यशिक्षा मंत्री तथा आर्य समाज के यशस्वी नेता प्रो० शेर सिंह पधारे। गत वर्षों की भांति कार्यालय से शोभा यात्रा के रूप में नव स्नातक एवं समस्त अधिकारीगण तथा आर्य जनता ने प्रस्थान किया। गुरुकुल के आचार्य प्रियव्रत वेद वाचस्पति ने नव स्नातकों को विश्वविद्यालय के मुद्रांकित प्रमाणपत्र प्रदान किये। उन्होंने इस अवसर पर भावपूर्ण मुद्रा में नव स्नातकों को अन्तिम उपदेश भी दिया। इस अवसर पर संन्यासी गण की ओर से स्वामी समर्पणानन्द द्वारा नव स्नातकों को प्रेरणादायक उद्बोधन दिया गया। उपकुलपति महोदय द्वारा विश्वविद्यालय की वार्षिक रिपोर्ट प्रस्तुत की गई। अपनी रिपोर्ट में माननीय कुलपति ने बतलाया कि "आठ विभिन्न विषयों में नये उपाध्याय गणों की नियुक्ति की जायेगी। पुस्तकालय, मनोविज्ञान प्रयोगशाला आदि के लिए कुल मिलाकर 1145000 रुपयों का अनुदान प्राप्त हुआ।" अन्त में कुलाधिपति महोदय ने नव स्नातकों को आशीर्वाद प्रदान किया। 15 अप्रैल को मध्याह्न के बाद "राष्ट्र भाषा सम्मेलन" का आयोजन किया गया। इस सम्मेलन की अध्यक्षता, हिन्दी के उद्भट् विद्वान् आचार्य किशोरी दास वाजपेयी ने की थी। इस सम्मेलन के मुख्य वक्ता दिल्ली विश्वविद्यालय

में हिन्दी विभाग के प्रो० आचार्य विजयेन्द्र स्नातक थे। 15 अप्रैल को प्रातः काल 10 बजे 50 ब्रह्मचारियों का वेदारम्भ संस्कार हुआ। इस उत्सव में विशेष व्याख्यान स्वामी ब्रह्ममुनि, आचार्य भगवान देव, स्वामी समर्पणानन्द, स्वामी सत्यमुनि, प्रो० राम सिंह, श्री जयदेव सिंह सिद्धन्ती और श्री रघुवीर सिंह शास्त्री, संसद सदस्य के हुए।

स्नातक मण्डल का नव निर्वाचन

14 अप्रैल को तीन बजे विद्यालय के प्रार्थना भवन में डॉ० शान्ति स्वरूप की अध्यक्षता में स्नातक मण्डल का निर्वाचन सम्पन्न हुआ। स्नातक मण्डल के मंत्री श्री निरूपण विद्यालंकार ने पूरे वर्ष की गतिविधि एवं प्रगति से अवगत कराया। पुराने स्नातकों एवं नवस्नातकों के परिचय के पश्चात् निर्वाचन निम्न प्रकार सर्वसम्मति से हुआ। इसमें प्रधान स्वामी समर्पणानन्द, उपप्रधान -श्री जयदेव वेदालंकार, उपमंत्री-भारत भूषण विद्यालंकार द्वितीय उपमंत्री-मंगलदेव विद्यालंकार, कोषाध्यक्ष-सुशील विद्यालंकार, इसमें यह भी निर्णय हुआ कि स्नातक परिचायिका का प्रकाशन किया जाये।[81] सम्बन्ध में सभी स्नातकों को प्रपत्र भेजे गये। इस सम्बन्ध में पर्याप्त सामग्री संकलित की गई।

गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय के रजिस्ट्रार डॉ० गंगाराम गर्ग एक वर्ष के अवैतनिक अवकाश पर भारत सरकार के शिक्षा मंत्रालय में विशिष्ट अधिकारी नियुक्त होकर गये थे। उनके स्थान पर डॉ० राजगोपाल अय्यर, स्थायी रूप में कुलसचिव नियुक्त किये गये। डॉ० अय्यर इतिहास विभाग में प्रवक्ता थे। विश्वविद्यालय के वैदिक साहित्य के उपाध्याय पं० धर्मदेव वेदवाचस्पति का कार्यकाल समाप्त होने पर विश्वविद्यालय की सेवा से मुक्त हो गये। पं० धर्मदेव ऐसे कर्तव्यनिष्ठ एवं विनम्र विद्वान् थे जो भी छात्र उनसे अध्ययन करते थे, उनकी कर्तव्यनिष्ठा की छाप सदैव उनके हृदय पर अंकित हो जाती थी। पं० धर्मदेव विश्वविद्यालय के पुस्तकालय के पुस्तकालयाध्यक्ष भी रहे। तथा विद्यालय-विभाग में सहायक मुख्याध्यापकपद पर रहे। विद्यालय से ही प्रोन्नत करके वेद महाविद्यालय में भेजा गया था। जून 1968 को आयुर्वेद महाविद्यालय में 40 वर्ष अधिक कार्य करने वाले डॉ० सत्यपाल के सेवा निवृत्त होने पर समस्त विश्वविद्यालय की ओर से विश्वविद्यालय भवन में भाव-भीनी विदाई दी गयी। उनके सम्मान में बोलते हुए वक्ताओं ने कहा था कि उनकी लगन, सेवा सुश्रुषा और चिकित्सा कौशल अद्भुत थी। डॉ० सत्यपाल वर्षों तक विद्यालय विभाग के अस्पताल में चिकित्सक भी रहे। उनके पिता पक्के आर्य-समाजी थे। इसी वर्ष स्नातक परिचायिका प्रकाशित करने का कार्यक्रम भी प्रारम्भ हुआ था।[82]

20 दिसम्बर 1972 को आस्ट्रेलिया के विशिष्ट विद्वान् डॉ० जे. जॉर्डन गुरुकुल में पधारे। डॉ० जोंर्डन "डेवोलप्मेन्ट ऑफ थॉट्स आफ दयानन्द" विषय पर विशेष अनुसंधान कर रहे थे। इस विषय का कार्य फरवरी 73 तक पूर्ण कर लेंगे, उनका यह निश्चय था। उनका यह विचार था कि आर्य समाज की शताब्दी के समय तक उनका ग्रन्थ प्रकाशित हो जायेगा। डॉ० जॉर्डन आस्ट्रेलियन नेशनल यूनिवर्सिटी केनवरा में एशियाई संस्कृति के रीडर थे। आप ने भगवत् गीता पर 1950 में पी-एच.डी. की उपाधि प्राप्त की थी।

केन्द्रीय शिक्षा मन्त्रालय द्वारा गुरुकुल समिति का गठन

गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय के अधिकारी गण समय-समय पर यह प्रयास करते रहे कि भारत के समस्त गुरुकुलों का एक पाठ्यक्रम अथवा एक विश्वविद्यालय हो। मान्य कुलपति पं० रघुवीर सिंह शास्त्री ने इस विषय में भारत सरकार शिक्षा मंत्रालय से प्रयास करके भारत सरकार की ओर से ही एक समिति का गठन कराया। श्री रघुवीर सिंह शास्त्री की अध्यक्षता में ही तीन सदस्यों की एक कमेटी गठित की गयी।

दिसम्बर मास में ही 24 दिसम्बर को हॉकी टूर्नामेन्ट का आयोजन किया गया। इसमें हरियाणा, दिल्ली पंजाब की अनेक टीमों ने भाग लिया। ओलम्पिक खिलाड़ी श्री गुरुजीत सिंह और हरपाल सिंह के खेल प्रदर्शन ने दर्शकों का मन मोह लिया था। इस टूर्नामेन्ट का सफल संचालन डॉ॰ राजकुमार रावत ने किया था।

8 जनवरी से 14 जनवरी 1973 तक विश्वविद्यालय के वेद मन्दिर में संग्रहालय सप्ताह का आयोजन किया गया। इस अवसर पर अनेक दर्शकों ने पुरातत्व संग्रहालय को बड़े ही मनोयोग से अवलोकित किया। 18 जनवरी को विश्वविद्यालय के विद्या सभा भवन में काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के अध्यक्ष नेशनल फैलो डॉ॰ एन. के. देवराज का "आर्यसमाज व हिन्दू धर्म" विषय पर व्याख्यान हुआ।

27 जनवरी 73 को दिल्ली विश्वविद्यालय की ओर से पण्डित इन्द्र विद्यावाचस्पति की स्मृति में एक अखिल भारतीय संस्कृत आशुवाक् प्रतियोगिता का आयोजन किया गया। इस प्रतियोगिता में गुरुकुल कांगड़ी के छात्र श्री धर्मवीर ने सर्वप्रथम स्थान प्राप्त किया। यहाँ गुरुकुल में इनका सम्मान किया गया।

गुरुकुल कांगड़ी का 73वां वार्षिकोत्सव बड़ी धूम-धाम से सम्पन्न हुआ था। उत्सव का प्रारम्भ स्वामी सर्वानन्द महाराज के कर कमलों द्वारा ध्वजारोहण से हुआ।

श्रीमती इन्दिरा गाँधी का आगमन

13 अप्रैल 1973 को दीक्षान्त अभिभाषण एवं नवस्नातकों को आशीर्वाद प्रदान करने के लिए श्रीमती इन्दिरा गाँधी प्रधान मंत्री भारत सरकार आयी थी। दीक्षान्त समारोह स्थल पर बहुत ही अधिक जनसमुदाय की भीड़ थी, स्वयं लेखक उस सभा स्थल का संयोजक था। विश्वविद्यालय का पूरा परिसर जन समुदाय से भरा हुआ था। लगभग चारों ओर आधा किलोमीटर तक व्यक्ति ही व्यक्ति नजर आ रहे थे। श्रीमती इन्दिरा गाँधी का दीक्षान्त भाषण खुले पण्डाल में ही हुआ। श्रीमती इन्दिरा गाँधी ने नव स्नातकों को आशीर्वाद में कहा कि "तुम ही कल के नेता और प्रशासक होंगे।" माननीय रघुवीर सिंह शास्त्री कुलपति ने श्रीमती इन्दिरा गाँधी का स्वागत करते हुए कहा था कि "गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय ही नहीं है अपितु स्वतंत्रता आन्दोलन का एक राष्ट्रीय प्रतिष्ठान भी है। यहाँ पर महात्मा गाँधी कई बार गुरुकुल में पधारे थे। भारत के प्रथम राष्ट्रपति डॉ॰ राजेन्द्र प्रसाद, भारत के प्रथम प्रधानमंत्री आपके पिता पं॰ जवाहरलाल नेहरू भी गुरुकुल में आये थे। आप ने गुरुकुल में पधार कर उसी परम्परा का निर्वहण किया। इसलिए गुरुकुल सदा आपका आभारी रहेगा और आप का सदा आशीर्वाद रहेगा।"[83]

इस अवसर पर वेद सम्मेलन, राष्ट्रीय एकता सम्मेलन, आर्य सम्मेलन, आयुर्वेद सम्मेलन और व्यायाम सम्मेलन का आयोजन किया गया। राष्ट्रीय एकता सम्मेलन की अध्यक्षता प्रो॰ शेर सिंह राज्य कृषि मंत्री भारत सरकार ने की थी। आर्य सम्मेलन स्वामी ओमानन्द की अध्यक्षता में सम्पन्न हुआ था। व्यायाम सम्मेलन श्री योगेन्द्रपाल शास्त्री की अध्यक्षता में सम्पन्न हुआ।

प्रो॰ सिन्हा का बलिदान

21 सितम्बर 1973 की रात्रि को जब श्री ओमप्रकाश सिन्हा, अध्यक्ष रसायन शास्त्र अपने क्वार्टर में शोध पत्र लिख रहे थे, उस समय किसी ने उनका नाम लेकर आवाज दी, उस आवाज पर, जब उन्होंने पीछे मुड़कर देखा तो उनकी गोली मारकर निर्ममतापूर्वक हत्या कर दी गयी। प्रो॰ सिन्हा गाँधी वादी विचारधारा के एक भद्र प्रोफेसर थे। उनका समाचार मिलते ही समस्त गुरुकुल में शोक का वातावरण छा गया। समस्त गुरुकुलवासी और पंचपुरी के हजारों नर-नारी उनकी अन्तिम यात्रा में सम्मिलित हुए थे। रसायन प्रयोगशाला का नाम बदलकर ओमप्रकाश सिन्हा रसायन प्रयोगशाला रख दिया गया।

जर्मन फार्मेसिस्ट शिष्ट मण्डल का आगमन

अक्टूबर 1973 में 25 जर्मनी औषधि निर्माणकर्त्ताओं के एक शिष्ट मण्डल का गुरुकुल में आगमन हुआ। डॉ॰ इन्द्रसेन जेतली ने उन्हें गुरुकुल के प्रांगण में तैयार किये गये अनेक औषधि निर्माण में काम आने वाले वृक्षों तथा जड़ी-बूटियों के सम्बन्ध में जानकारी करायी। आयुर्वेद महाविद्यालय तथा गुरुकुल के औषध निर्माण फार्मेसी विभाग को देखकर शिष्ट मण्डल बहुत प्रभावित हुआ। यहाँ से वे अनेक प्रकार के फूल तथा पत्ते आदि ले गये।[84]

न्यूजीलैंड निवासी श्री सी.टी. पामर हिन्दी सीखने के लिए गुरुकुल कांगड़ी में पधारे। उन्होंने महीनों तक नियमित रूप में हिन्दी भाषा का अध्ययन किया।

प्रो॰ रामप्रसाद वेदालंकार को वेद विभाग में चयन समिति ने रीडर एवं अध्यक्ष पद पर नियुक्त किया।

22 जनवरी 1974 को प्रो॰ लेपुड ऑक्सफोर्ड विश्वविद्यालय में पधारे। विज्ञान महाविद्यालय में भूकम्प के सम्बन्ध में उनका भाषण हुआ। विश्वविद्यालय के छात्रों तथा प्राध्यापकों ने उनके भाषणों को बड़े ही मनोयोग से सुना।

नये कुलाधिपति का भव्य स्वागत

आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के चुनाव में जो कि पंजाब उच्च न्यायालय के देख-रेख में सम्पन्न हुआ। उसमें स्वामी इन्द्रवेश प्रधान पद पर निर्वाचित हुएं पंजाब आर्य प्रतिनिधि सभा के प्रधान होने के नाते वे विश्वविद्यालय के कुलाधिपति भी बने। 3 जनवरी 74 को कुलाधिपति स्वामी इन्द्रवेश का गुरुकुल में आगमन हुआ। वेद मन्दिर में उनके भव्य स्वागत का आयोजन किया गया। स्वागत सभा में श्री रघुवीर सिंह शास्त्री कुलपति गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय, स्वामी अग्निवेश, श्री पृथ्वी सिंह आजाद, श्री सत्यदेव स्नातक ने उनका स्वागत किया।[85]

श्री विनोदचन्द्र सिन्हा रीडर इतिहास विभाग को "शुंग कालीन भारत" विषय पर, कुरुक्षेत्र विश्वविद्यालय हरियाणा द्वारा पी-एच.डी. की उपाधि से अलंकृत किया गया।

मान्य कुलपति श्री रघुवीर सिंह शास्त्री 22 अप्रैल 74 को संस्कृत कार्यक्रम परामर्श दात्री समिति की बैठक में भाग लेने के लिए बंगलौर गये। वहाँ मान्य शास्त्री जी ने इस समिति में प्रस्ताव रखा कि दिल्ली से प्रतिदिन 5 मिनट संस्कृत भाषा में समाचार प्रस्तुत होना चाहिए। उनके इस प्रस्ताव को स्वीकार कर लिया गया।

गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय का दीक्षान्त समारोह अप्रैल में वैशाखी के दिनों में ही सम्पन्न हुआ। इस अवसर पर वेद सम्मेलन, राष्ट्र निर्माण सम्मेलन, आर्य समाज सम्मेलन और व्यायाम सम्मेलन आदि का आयोजन किया गया। इस वर्ष दीक्षान्त भाषण आर्य जगत् के सुप्रसिद्ध संन्यासी स्वामी ब्रह्ममुनि विद्यामार्तण्ड ने दिया। स्वामी ब्रह्ममुनि ने इस बात पर जोर दिया कि "यहाँ के स्नातकों को किसी भी दशा में गुरुकुल को नहीं भूलना चाहिए"। यहाँ जो तुम्हें प्राचीन संस्कृति की शिक्षा प्राप्त हुई है, वह तुम्हें समस्त जीवन में प्रेरित करती रहेगी।"[86]

आयुर्वेद महाविद्यालय में 2.6.74 को डॉ॰ राममूर्ति मिश्र (ब्रेन सर्जन) का मस्तिष्क विषय पर विशेष व्याख्यान हुआ। उन्होंने सूईयां चुभाकर बेहोश करने की चीनी पद्धति पर विस्तृत प्रकाश डाला।

गुरुकुल विश्वविद्यालय के पुराने स्नातक इतिहास के प्रसिद्ध विद्वान् जिन्होंने पेरिस से डी.लिट् की उपाधि प्राप्त की थी, डॉ॰ सत्यकेतु विद्यालंकार को कुलपति पद पर प्रतिष्ठित किया गया। 2 जुलाई 1974

को वेद मन्दिर में उनके स्वागत में भव्य अभिनन्दन सभा का आयोजन किया गया। उनके स्वागत समारोह में स्वामी सर्वानन्द महाराज, श्री रामगोपाल शाल वाले, श्री पृथ्वी सिंह आजाद, स्वामी अग्निवेश, श्री निरूपण विद्यालंकार, कुलाधिपति स्वामी इन्द्रवेश उपस्थित थे। इसी प्रकार मान्य कुलपति महोदय का विद्यालय विभाग, फार्मेसी विभाग, आदि स्थानों पर भी भव्य स्वागत किया गया।

गुरुकुल कांगड़ी की स्वामिनी सभा आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब सरकार के साथ "भारत वर्ष का इतिहास" नामक पुस्तक पर चला आ रहा विवाद समाप्त हो गया। इस पुस्तक में वेदों तथा महापुरुषों के विषय में अनर्गल व बेहूदी बातें लिखी हुई थी, जिसके कारण एक भयंकर आन्दोलन की आशंका हो गयी थी परन्तु पंजाब के मुख्यमंत्री श्री ज्ञानी जैल सिंह ने स्वामी इन्द्रवेश सभा के महामंत्री श्री वीरेन्द्र, स्वामी अग्निवेश, श्री रामगोपाल शाल वाले, पृथ्वी सिंह आजाद को अपने निवास पर इस विषय में विचार विमर्श करने के लिए आमन्त्रित किया था। विचार विमर्श के पश्चात् माननीय मुख्यमंत्री ने यह निर्णय किया कि "इतिहास की इस पुस्तक से आपत्तिजनक अंश को हटा दिया जायेगा, उस समिति में गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय के कुलपति डॉ॰ सत्यकेतु विद्यालंकार भी होंगे। यह समिति शीघ्र ही गठित की जायेगी।"

गुरुकुल कांगड़ी में जब यह समाचार ज्ञात हुआ कि "पंजाब हरियाणा के विभाजन के आन्दोलन के स्वरूप आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के प्रधान एवं गुरुकुल कांगड़ी वि.वि. के कुलाधिपति स्वामी इन्द्रवेश को गिरफ्तार कर लिया गया है" तो गुरुकुल कांगड़ी में उनकी गिरफ्तारी के विरोध में एक सभा आयोजित की गयी, उसमें निम्नलिखित प्रस्ताव पारित किया गया–

"आर्य समाज गुरुकुल कांगड़ी आर्य प्रतिनिधिसभा पंजाब के प्रधान तथा गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय के कुलाधिपति स्वामी इन्द्रवेश की गिरफ्तारी पर हार्दिक रोष प्रकट करती है और हरियाणा सरकार की वर्तमान नीति का घोर विरोध करती है। पिछले चार मास में स्वामी इन्द्रवेश को दो बार गिरफ्तार करके हरियाणा सरकार ने यह बता दिया है कि वहाँ हरियाणा में आर्य समाज की गतिविधियों को सहन करने को तैयार नहीं है। यह एक ऐसी चुनौती है जिसे आर्य समाज कभी भी स्वीकार नहीं करेगा। आर्य समाज आज तक किसी के सामने नहीं झुका है, हरियाणा सरकार के सामने भी नहीं झुकेगा।"[87]

27 जुलाई 74 को श्री रघुनाथ रेड्डी श्रम मंत्री भारत सरकार का गुरुकुल में आगमन हुआ। उनके स्वागत में एक वृहद् सभा का आयोजन किया गया। इसमें गुरुकुल के अनेक वक्ताओं ने अपने विचार प्रस्तुत किये।

गुरुकुल कांगड़ी की स्थापना जिन आदर्शों को लेकर हुई थी उनमें से एक आर्य समाज तथा वैदिक धर्म के प्रचार प्रसार के लिए उच्चकोटि के प्रचारक, उपदेशक एवं कार्यकर्त्ता तैयार करना था, गुरुकुल के स्नातकों ने इस दिशा में बड़ा ही महत्वपूर्ण कार्य किया। यह विदित ही है कि गुरुकुल की स्थापना आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब की ओर से की गई थी। अतः यह स्वाभाविक ही था कि आर्य प्रतिनिधि सभा की गतिविधियों में गुरुकुल के स्नातक सक्रिय योगदान देते था पंजाब प्रान्त में धार्मिक सामाजिक और राजनैतिक जागृति उत्पन्न करने की जिज्ञासा तथा इच्छा रखते। इस आशय के अनुरूप गुरुकुल के अनेक स्नातकों ने अपने-अपने क्षेत्र अथवा अपने-अपने विषय में आर्यसमाज के क्षेत्र को प्रभावित किया। श्री युधिष्ठिर विद्यालंकार (स्वामी व्रतानन्द) महर्षि दयानन्द के अनन्य भक्त थे। उन्होंने आजन्म ब्रह्मचारी व्रत धारण किया। धर्म और आर्य समाज की जीवन भर सेवा की थी। प्रारम्भ में आप कुछ समय आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब में उपदेशक रहे, बाद में आपने चित्तौड़ में गुरुकुल की स्थापना की थी। आजीवन आप गुरुकुल चित्तौडगढ़ का संचालन करते रहे।

श्री भीमसेन विद्यालंकार ने अनेकों वर्ष तक पंजाब आर्य प्रतिनिधि सभा के मंत्री के रूप में श्लाघनीय कार्य किया। स्नातक होने के पश्चात् एक वर्ष तक मैसूर में भी वैदिक धर्म के प्रचार और दलितोद्धार का कार्य किया। आप ने वर्षों तक कोल्हापुर में वैदिक धर्म का प्रचार बड़ी योग्यता से किया था।

श्री समर सिंह वेदालंकार लगभग 17 वर्ष तक आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के महोपदेशक रहे थे, उनके पश्चात् हरियाणा प्रतिनिधि सभा में वेद प्रचार मण्डल के रूप में कार्य किया। आपकी गणना सभा के उच्चकोटि के विद्वानों में की जाती थी। आपने दो वर्ष सभा के पत्र बलिदान का भी सम्पादन किया।

सुप्रसिद्ध विद्वान् पं० हरिशरण सिद्धान्तालंकार आर्य संस्कृति के एक तपस्वी प्रचारक थे। एक सरल सादगी वेश में वेदों के उद्भट् विद्वान् सामवेद के भाष्यकार के रूप में आज भी आर्य जनता उनको याद करती है। श्री गुरुदत्त सिद्धान्तालंकार वर्षों तक आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब और प्रादेशिक सभा के अन्तर्गत प्रचार करते रहे। श्री चन्द्रगुप्त वेदालंकार बहुत समय तक आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के उपदेशक के रूप में कार्य करते रहे। आज भी जब किसी ओजस्वी वक्ता का जिक्र किया जाता है तो चन्द्रगुप्त वेदालंकार का नाम स्वत: आ जाता है। संभवत: यह माना जाता है कि गुरुकुल के स्नातकों में श्री चन्द्रगुप्त वेदालंकार सबसे ओजस्वी वक्ता थे। उनके भाषण को सुनने के लिए हजारों श्रोता एकत्रित हो जाते थे।

श्री दीनानाथ सिद्धान्तालंकार एक सुयोग्य एवं ख्याति प्राप्त उर्योपदेशक थे। आपने सामाजिक, धार्मिक व सुधार सम्बधी प्रवृत्तियों में पूर्ण सहयोग दिया। आप ने शुद्धि आन्दोलन में बढ़-चढ़ कर भाग लिया था। आप ने एक बार विधवा विवाह पर सार्वजनिक भाषण दिया तो विरोधियों ने आप पर लाठियों का प्रहार भी किया।

श्री पं० सुखदेव दर्शनवाचस्पति जहाँ दर्शन के उद्भट् विद्वान् थे वहीं आप ने आर्यसमाज के प्रचार के क्षेत्र में बहुत अधिक नाम किया। आप न केवल पंजाब, उत्तर में ही नहीं, अपितु बंगाल, महाराष्ट्र बर्मा आदि में वैदिक धर्म का प्रचार करते रहे। आप के दार्शनिक व ओजपूर्ण व्याख्यान आज भी बहुत अधिक पसन्द कियें जाते हैं। जब गुरुकुल कांगड़ी में स्नातकों की आवश्यकता अनुभव हुई तो आप को गुरुकुल कांगड़ी में बुलाया गया और यहाँ पर लगभग 30 वर्ष तक दर्शन विभाग के अध्यक्ष, कला महाविद्यालय के प्राचार्य और उपाचार्य पदों पर सफलतापूर्वक कार्य किया।

श्री क्षितीश कुमार वेदालंकार ने सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा के तत्वावधान में मध्यप्रदेश में तथा आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के उपदेशक के रूप में अनेक वर्षों तक कार्य किया। आप बहुत ही तेजस्वी वक्ता माने जाते थे। आपकी वाणी में इतना आकर्षण था कि आपके आने का समाचार पाकर दूर-दूर से लोग आपके भाषण सुनने की अभिलाषा रखते थे। आप ने हैदराबाद में आर्य सत्याग्रही जत्थे का नेतृत्व करके छ: मास जेल यात्रा भी की। दक्षिण भारत के दक्षिण केसरी श्री विनायक राव विद्यालंकार जिन्होंने इंग्लैंड से बैरिस्टर की उपाधि प्राप्त की थी, दक्षिण भारत में आर्यसमाज का आप ने क्रान्तिकारी कार्य किया। हैदराबाद की सरकार भी आप से घबराती थी। हैदराबाद सत्याग्रह का नेतृत्व भी दक्षिण भारत की ओर से आपने किया था।

श्री यशपाल सिद्धान्तालंकार ने आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के वेद प्रचार अधिष्ठाता के रूप में, महोपदेशक के रूप में प्रशंसनीय कार्य किया था। आपने आर्य धर्म प्रचार प्रसार के लिए आसाम, बर्मा में कार्य किया। इसके साथ ही आप कन्या गुरुकुल देहरादून के मुख्याधिष्ठाता भी रहे। आप एक बहुत विनम्र उपदेशक माने जाते थे। श्री धर्मदेव विद्यालंकार (स्वामी धर्मानन्द सरस्वती) ने ग्यारह वर्षों तक सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा के सहायक मंत्री, धर्मार्य सभा के मंत्री तथा अध्यक्ष के रूप में प्रशंसनीय सेवा की थी। आप ने दक्षिण भारत में 14 आर्य समाजों की स्थापना की तथा हिन्दी में वैदिक धर्म के प्रचार-प्रसार

का कार्य बड़ी ही कुशलता के साथ सम्पन्न किया। उनके सामने कई ऐसे अवसर भी आये जब दक्षिण के संस्कृत पण्डितों के साथ शास्त्रार्थ करना पड़ा। ऐसे समय में आपका संस्कृत व दक्षिण भाषाओं का पाण्डित्य बहुत ही सहायक सिद्ध हुआ। आप अनेकों भाषाओं के विद्वान् थे। आप दिन-रात आर्यसमाज के लिए लेखन कार्य करते थे। पं० धर्मदेव विद्यामार्तण्ड का जीवन बड़ा ही सीधा और सरल था। आपके अनेक विद्वतापूर्ण ग्रन्थ प्रकाशित हुए। उन ग्रन्थों में वेदों का यथार्थ स्वरूप आज भी याद किया जाता है।

जिन स्नातकों ने दक्षिण भारत में वैदिक धर्म का प्रचार व प्रसार किया। उनमें श्री सत्यव्रत सिद्धान्तालंकार, श्री पं० केशवदेव सिद्धान्तालंकार, पं० मदनमोहन विद्यासागर विद्यालंकार, श्री भीमसेन विद्यालंकार आदि का नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय है। पं० सत्यव्रत सिद्धान्तालंकार तथा श्री देवेश्वर ने बंगलौर (मैसूर राज्य) में लगभग 5 वर्ष तक रहकर वैदिक धर्म का प्रचार एवं राष्ट्रभाषा के प्रसार में रात-दिन परिश्रम किया। आप दोनों ने बंगलौर में दयानन्द ब्रह्मचर्य आश्रम की भी स्थापना की थी।

श्री केशवदेव सिद्धान्तालंकार ने आन्ध्रप्रदेश और मद्रास में धार्मिक व सामाजिक कार्य किये। आंप के सद् प्रयत्नों से तमिल भाषी प्रदेश और आन्ध्र में 15 आर्य समाजों की स्थापना भी हुई थी। उस समय तमिलभाषी क्षेत्र में आर्य प्रचार-प्रसार तथा हिन्दी का प्रचार-प्रसार करना बहुत ही अधिक जटिल समस्या थी।

उत्तर प्रदेश आर्य प्रतिनिधि सभा को सुसंगठित और प्रबल बनाने में पं० धर्मपाल विद्यालंकार का योगदान भी विस्मरण नही किया जा सकेगा। आप कई वर्ष तक सभा के प्रधान, कार्यालय में संचालक तथा सहायक मंत्री के रूप में कार्य करते रहे। आपने आर्यमित्र के अवैतनिक सम्पादक के पद पर भी कार्य किया। आर्य प्रतिनिधि सभा उत्तर प्रदेश की ओर से आपने हरिद्वार में आर्य समाज मन्दिर का निर्माण करवाया। आप अपने नगर बदायूं में भी आंर्य समाज की गतिविधियों में सक्रिय रूप से भाग लेते रहे।

पं० मदन मोहन विद्यासागर वेदालंकार अपनी विद्वता और समाज सेवा के कारण हैदराबाद में बहुत अधिक लोकप्रिय माने जाते हैं। आप दक्षिण में सार्वदेशिक सभा की ओर से आर्य समाज के प्रमुख प्रचारक, ऋषि दयानन्द के अनन्य भक्त और तेजस्वी वक्ता माने जाते हैं। आप ने आर्यसमाज के सिद्धान्तों पर शास्त्रार्थ भी किये। आप वैदिक कर्मकाण्ड के दक्षिण भारत में प्रामाणिक विद्वान् माने जाते हैं। आपके पुस्तकालय में सहस्त्रों ग्रन्थ उपलब्ध हैं।

विदेशों में गुरुकुल के स्नातकों का आर्य समाज के प्रचार में योगदान

गुरुकुल के अनेकों स्नातक वैदिक धर्म के प्रचार एवं प्रसार के लिए विदेशों में गये। उनमें से बहुत से स्नातक तो वहीं जाकर बस गये और जीवन भर वैदिक धर्म का प्रचार व प्रसार करते रहे। वहाँ उन्होंने वैदिक धर्म का प्रचार करने के साथ-साथ हिन्दी भाषा का परिज्ञान ही नहीं कराया, अपितु उनमें से कईयों को हिन्दी भाषा व साहित्य का विद्वान् भी बनाया।

आर्य प्रतिनिधि सभा फीजी के निमन्त्रण पर 27 सितम्बर 1927 को फीजी की राजधानी सूबा में गुरुकुल के एक पुराने सुयोग्य स्नातक पं० अमीरचन्द्र विद्यालंकार ने प्रवेश किया और स्थायी रूप में वहाँ जाकर बस गये। आप ने अपने कार्यों से समस्त द्वीप को प्रभावित कर लिया। आप ने वहाँ वैदिक धर्म और शिक्षा का प्रचार इतनी योग्यता से किया कि वहाँ की प्रतिनिधि सभा, साधारण जनता और सरकार को भारी सन्तोष हुआ। आपकी योग्यता से प्रभावित होकर वहाँ के लोग अपने बच्चों को भारत भेजने के लिए अत्यधिक उत्सुक हो गये। वहाँ से बहुत से बालक बालिकायें, गुरुकुल में प्रवेश लेने के लिए आने लगे और वहीं के गुरुकुल लोरीका में प्रवेश लेने लगे। आपकी कार्य दक्षता इतनी प्रभावशाली थी कि आपको

फीजी में शिक्षा प्रचार के जनक के रूप में देखा जाने लगा। आप से पहले यहाँ हिन्दी तो क्या, अंग्रेजी भाषा के स्कूलों की भी बहुत अधिक न्यूनता थी। माननीय विद्यालंकार ने स्थान-स्थान पर डी.ए.वी. स्कूल हिन्दी पाठशाला और आर्य कन्या पाठशालाएं स्थापित की। यह कहना अतिशयोक्ति नहीं होगा कि आप ने फीजी में शिक्षण संस्थाओं का जाल सा बिछा दिया। आज भी फीजी में अधिकतर पाठशालाएं आर्यसमाज द्वारा संचालित होती हैं। इसका श्रेय पं॰ अमीर चन्द्र विद्यालंकार को जाता है। आप वहाँ की पार्लियामेन्ट में सदस्य भी रहे। आजीवन वहाँ के यूरोपियनों और फीजी लोगों के आदर के पात्र बने रहे।

पूर्व अफ्रीका में आर्य समाज की प्रवृत्ति को उजागर करने वाले अथवा गति देने वालों में पं॰ सत्यपाल सिद्धान्तालंकार (प्रसिद्ध क्रान्तिकारी किशोरी लाल जी व पं॰ चन्द्रकेतु जी के बड़े भ्राता) का नाम सदा श्रद्धा के साथ याद किया जायेगा। पं॰ सत्यपाल सन् 1921 में स्नातक हुए। इन्होंने सन् 22 से 24 तक बर्मा में प्रचार कार्य किया। सन् 1927 में वे पूर्व अफ्रीका गये और वहाँ नैरोबी में केन्द्र बनाकर 30-35 वर्षों तक कार्य करते रहे। वहाँ उन्होंने हिन्दी तथा संस्कृत सिखाने का कार्य भी किया। वे धनी और निर्धन का भेद भाव किये बिना प्रत्येक घर में सेवा करने के लिए पहुंच जाते थे। स्थानीय मांसाहारी अफ्रीकी प्रजा के बीच उबले हुए कन्दमूल खाकर वे महीनों तक कार्य करते रहे। किसी भी स्थान पर पहुंचने में अपमान की परवाह न करके इस विद्वान् ने वहाँ की प्रजा की निस्वार्थ सेवा में अपना जीवन खपा दिया। उन्होंने इस प्रकार की निस्वार्थ सेवाभाव की प्रेरणा बौद्ध और ईसाई मिशनरियों से प्राप्त की थी। उन्होंने पूर्व अफ्रीका की जनता में पिता का सत्कार पाया और गुरुकुल का नाम उज्ज्वल किया। पुराने गुरुकुल में एक बार चिते से इनकी भिडन्त हुई थी, उसमें चिते को हॉकियों से पीट-पीट कर मार डाला था। पुराने स्नातकों में पं॰ ईश्वर दत्त विद्यालंकार ने यूरोप और अफ्रीका के देशों में प्रचार-प्रसार का कार्य किया। वे योग और धनुर्विधा के अद्‌भुत प्रदर्शनों के लिए प्रसिद्ध थे।

अफ्रीका, कीनिया, युगाण्डा और टांगानिका के प्रदेशों में जाकर स्थायी रूप से आर्य समाज का प्रचार करने वाले गुरुकुल के स्नातकों में श्री सत्यदेव वेदालंकार (भारद्वाज), श्री धर्मेन्द्रनाथ विद्यालंकार, श्री देवनाथ विद्यालंकार, श्री रणधीर वेदालंकार और अमृतपाल वेदालंकार के नाम विशेष रूप में गिनाये जा सकते हैं। दारेश्शलाम को केन्द्र बनाकर श्री देवनाथ वेदालंकार ने 5-7 वर्षों तक बहुत अच्छा कार्य किया था।

मोजाम्बिक के लॉरेन्स मार्क्‌विश् शहर में भारत सेवक समाज के आश्रम में पं॰ रविशंकर सिद्धान्तालंकार, पं॰ सुमन्तराय विद्यालंकार ने कई वर्षों तक बहुत अच्छे सामाजिक कार्य किये। वहाँ केबैरा नगर में पं॰ मतिमान वेदालंकार और रोडेशिया के कुलवायो नगर में पं॰ हरिदेव वेदालंकार ने कई वर्षों तक अध्यापन व प्रचार का कार्य किया।

दक्षिण अफ्रीका में भारतीयों की बड़ी बस्ती है, वहाँ सात लाख भारतीय हैं, यहाँ 1947 में पं॰ नरदेव वेदालंकार का आगमन हुआ। आप ने दक्षिण अफ्रीका में आर्य समाज और हिन्दी प्रचार-प्रसार की आधार शिला रखी। आप ने हिन्दी प्रचार के लिए केन्द्रीय हिन्दी शिक्षा संघ नामक संस्था की स्थापना की। जिसके अन्तर्गत 5 हिन्दी संस्थाएं चल रही हैं। माननीय पं॰ नरदेव वेदालंकार इस संघ के 25 वर्ष अध्यक्ष रहे। आपके प्रयासों से हजारों विद्यार्थियों एवं स्त्री पुरुषों ने हिन्दी परीक्षा उत्तीर्ण भी की थी। आप आर्य प्रतिनिधि सभा के अन्तर्गत वेद निकेतन और वैदिक पुरोहित मण्डल के प्रधान भी रहे। आप ने वहाँ वैदिक पुरोहित प्रशिक्षण केन्द्र भी प्रारम्भ किया।

दक्षिण अफ्रीका में 1935 में 1945 तक श्री सुधीर कुमार विद्यालंकार ने और उनके पश्चात् श्री अरुण कुमार विद्यालंकार ने वहाँ शिक्षा के क्षेत्र में बहुत अच्छा कार्य किया था।

भारत सरकार द्वारा विश्वविद्यालय की मान्यता मिलने से पूर्व के गुरुकुल के इतिहास का हम यदि सिंहावलोकन करे तो यह स्पष्ट रूप में पाते हैं कि उस समय गुरुकुल से निकलने वाले स्नातक अधिक ओजस्वी, संघर्षशील और एक विशिष्ट उद्देश्य को लेकर गुरुकुल माता के प्रति अपने कर्त्तव्य का परिपालन करने के लिए अग्रसर रहते थे, उस संमय के स्नातकों का एक उद्देश्य था कि गुरुकुल की स्थापना जिस उद्देश्यों को लेकर हुई थी, उन उद्देश्यों के प्रति हम खरे उतरे। हम गुरुकुल के ऋण से उऋण होवें। स्वामी श्रद्धानन्द की अन्त:प्रेरणा सदा उनके हृदय में संचारित होती रहती थी।

(सरकार द्वारा मान्यता प्राप्त डिम्ड टु बी यूनिवर्सिटी)

गुरुकुल कांगड़ी के स्थापना काल में ही प्राचीन और नवीन विचार धाराओं में टकराव होता रहा है। उस टकराव में आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब जो गुरुकुल कांगड़ी की स्वामिनी सभा थी मुख्य भूमिका के रूप में अपना पार्ट अदा करती रही। आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के संचालकों में दो दल बन गए उनमें से एक दल का कहना था कि अब देश स्वतन्त्र हो चुका है इसलिए सरकार से अनुदान प्राप्त करके गुरुकुल कांगड़ी को विश्वविद्यालय के रूप में मान्यता प्राप्त करने का प्रयास करना चाहिए। इस वर्ग में गुरुकुल कांगड़ी के कुछ स्नताक भी सम्मिलित थे, क्योंकि उनके सामने एक क्रियात्मक और व्यावहारिक पहलु यह था कि जब वे गुरुकुल कांगड़ी में स्नातक बनकर निकले तो गुरुकुल की किसी भी उपाधि की मान्यता नहीं थी। जो मध्यम वर्ग से सम्बन्धित थे उनको पूर्ण शिक्षा प्राप्त करने के पश्चात् भी पुनः हाई स्कूल इंटर और बी.ए. की सरकारी परीक्षाएं उत्तीर्ण करनी पड़ी थी। उनमें से जो छात्र उच्च वर्ग से आये थे उन्होंने अपने परम्परागत व्यापार अथवा कार्यो को संभाल लिया था। इन कटु अनुभवों के आधार पर यह आवश्यकता अनुभव की जाने लगी कि गुरुकुल कांगड़ी को विश्वविद्यालय की मान्यता प्राप्त कराई जाय। गुरुकुल कांगड़ी को आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब की आर्य विद्या सभा संचालन कर रही थी उस आर्य विद्या सभा में अनेक बार यह विचार आया परन्तु आर्य विद्या सभा में ही विरोध होने के कारण यह विचार एवं प्रस्ताव दबता चला गया।

जिस समय महात्मा गाँधी ने ब्रिटिश सरकार से असहयोग आन्दोलन प्रारम्भ किया था, उसके अनन्तर अनेक राष्ट्रीय शिक्षा संस्थाएं स्थापित हुई थी। जिनमें काशी विद्यापीठ वाराणसी, गुजरात विद्यापीठ अहमदाबाद, जमिया मिलिया, इस्लामिया नई दिल्ली आदि राष्ट्रीय शिक्षण संस्थाएं मुख्य रूप में थी। इन राष्ट्रीय संस्थाओं से उच्च शिक्षा का प्रबन्ध था परन्तु विदेशी ब्रिटिश सरकार से न कोई मान्यता प्राप्त थी और नहीं कोई सम्बन्ध था। इसलिए इनकी डिग्रियों को भी सरकार द्वारा मान्यता प्राप्त नहीं थी। इन राष्ट्रीय संस्थाओं में गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय और विश्वभारती शान्ति निकेतन की स्थापना असहयोग आन्दोलन से बहुत पूर्व 1921 ईसवीं में गुरुकुल कांगड़ी के समान शान्ति निकेतन में भी वहाँ उच्च स्तर की शिक्षा की व्यवस्था हो चुकी थी ये दोनों शिक्षण संस्थायें अविकल्प रूप में राष्ट्रीय थी और सरकारी प्रभाव से पूर्णतय मुक्त थी। इन समस्त उपयुक्त राष्ट्रीय शिक्षण संस्थाओं को भी अनेक बार संकटों का तथा अनेक समस्याओं का सामना करना पड़ा था। इसलिये विदेशी शासन से मुक्ति के पश्चात् 1947 में स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद सरकार से सम्बन्ध न रखने का कोई अर्थ नहीं रह गया था। यह भावना इस सभी शिक्षण संस्थाओं में आ गयी थी कि सरकार से सम्बन्ध बनाकर सरकारी मान्यता प्राप्त की जाय। इसके परिणाम स्वरूप सर्वप्रथम 1951 में भारत का संसद में स्वीकृत कानून द्वारा विश्व भारतोको विश्व विद्यालय (यूनिवर्सिटी) बना दिया गया। यह प्रभाव गुरुकुल कांगड़ी के संचालको पर भी पड़ा और उन्होंने भी अन्य विश्व विद्यालयों तथा सरकार सम्बन्ध बनाना प्रारम्भ कर दिया। जिसके परिणाम स्वरूप उ॰प्र॰, बिहार, बम्बई की सरकारी तथा अन्य कुछ विश्वविद्यालयों में अलंकार को डिग्री को बी.ए. के समकक्ष स्वीकार कर लिया था जिसके

कारण गुरुकुल के नव स्नातको के लिये सरकार नौकरियों को प्राप्त करना सरल हो गया था। परन्तु गुरुकुल के उस समय के अधिकारी जिसमें पं॰ इन्द्रविद्यावाचस्पति, पं॰ सत्यव्रत सिद्धान्तालंकार और डॉ॰ हरिप्रकाश आयुर्वेदालंकार आदि अनेक पुरातन स्नातक तथा गुरुकुल के अधिकारियो को केवल अलंकार की डिग्रियों को मान्यता से सन्तोष नहीं हुआ, उन्होंने यह प्रयास तीव्र कर दिया कि गुरुकुल कांगड़ी को भी विश्वविद्यालय की मान्यता प्राप्त कराई जाय इसलिये वे सरकार एवं शिक्षा मन्त्रालय के सम्मुख अपना पक्ष प्रस्तुत करने लगे कि गुरुकुल कांगड़ी एक सुविकसित शिक्षण संस्था हैं। विश्वभारती की तरह इसको भी विश्वविद्यालय भारत सरकार द्वारा बनाया जाय गुरुकुल कांगड़ी को भी संसद द्वारा कानून पास करके चार्टर यूनिवर्सिटी बनाया जाय उसमे उनको सफलता भी प्राप्त नहीं हुई। इन्हीं दिनों सन् 1956 में भारत सरकार द्वारा विश्वविद्यालय अनुदान आयोग की (यूनिवर्सिटी ग्रान्ड कमीशन) को सरकार द्वारा स्थापना की गयी। इस विश्वविद्यालय अनुदान आयोग की धारा यू-3 के अन्तर्गत एक कानून बनाया गया हैं। कि धारा 3 के अनुसार देश के राष्ट्रीय महत्व के उच्च शिक्षा के जो राष्ट्रीय शिक्षणालय हैं। उनको यूनिवर्सिटी के समकक्ष (डिम्ड टू बी यूनिवर्सिटी) के रूप में स्वीकार करने का आयोग को अधिकार हैं। इस धारा के अनुसार विश्वविद्यालय अनुदान आयोग ने काशी विद्यापीठ, गुजरात विद्यापीठ, जामिया मिलिया दिल्ली, टाद्य इन्स्टीट्यूट ऑफ सोशल सांइसेज आदि अनेक शिक्षणालयों को डिम्ड टू बी यूनिवर्सिटी को मान्यता दी।

गुरुकुल कांगड़ी के अधिकारियों एवं स्नातकों ने भी इस धारा के अन्तर्गत डिम्ड टू बी यूनिवर्सिटी कं प्रयास तेज कर दिये और अन्ततः आर्य विद्या सभा ने तथा आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब ने अपनी अंतरंग में यह प्रस्ताव प्रस्तुत किया कि गुरुकुल कांगड़ी की सभा यह स्वीकार करती है कि गुरुकुल कांगड़ी को विश्वविद्यालय बनाने हेतु अलग से गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय के रूप में पृथक् से पंजीकृत कराया जाय इस तरह दिनांक........ 1961 में 1860 सोशायटी एक्ट के अन्तर्गत गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय के नाम से पंजीकृत कराया गया। दिनांक .... मास सितम्बर 1962 में श्री डॉ॰ दौलत सिंह कौठारी की अध्यक्षता में गुरुकुल कांगड़ी को विश्व विद्यालय .के रूप में मान्यता के पश्चात् विश्वविद्यालय अनुदान आयोग के अध्यक्ष श्री डॉ॰ दौलत सिंह कोठारी जो उस समय विश्वविद्यालय अनुदान आयोग के अध्यक्ष मीथे। गुरुकुल में निरीक्षण के लिये आये। गुरुकुल कांगड़ी के समस्त विभाग पुस्तकालय, वेद मन्दिर आदि का निरीक्षण किया। निरीक्षण करने के पश्चात् वेद मन्दिर के सभागार में एक सभा का आयोजन किया गया, उस सभा में मुख्य अतिथि के रूप में भाषण देते हुए कहा था कि "गुरुकुल कांगड़ी एक प्राचीन वैदिक शिक्षा पद्धति को लेकर राष्ट्रीय प्रतिष्ठान के रूप में वेद, वैदाङ्ग तथा प्राच्य विद्याओं में पठन-पाठन में सबसे अग्रणी रहा हैं। गुरुकुल कांगड़ी ने अनेक क्षेत्रों में भारतीय जनमानस को प्रभावित किया है। यह गुरुकुल कांगड़ी का ही धैर्य और साहस था कि 1905 ईसवी के आपपास अपने संस्थान में हिन्दी माध्यम से अध्ययन अध्यापन कराया। देश के स्वतंत्रता आन्दोलन में भी गुरुकुल के स्नातकों ने सम्पादक और पत्रकार के रूप में, उनकी ओजस्वी लेखनी ने भारतीय जनमानस को उद्वेलित किया था।

किसी भी राष्ट्र की प्राचीन धरोहर तथा सांस्कृतिक विरासत को संभाल के रंखना तथा उसकी रक्षा करना उस राष्ट्र का परम कर्तव्य माना जाता है। आर्य समाज के संस्थापक ने जिस प्राचीन गुरुकुल शिक्षा प्रणाली को अपने अमर ग्रन्थ सत्यार्थ प्रकाश में विस्तार पूर्वक लिखा था, उनके ही शिष्य महात्मा मुंशी राम ने जो बाद में स्वामी श्रद्धानन्द के रूप में विख्यात संन्यासी बने, गुरुकुल कांगड़ी की स्थापना करके मानो हजारों वर्ष पुरानी भारतीय परम्परा एवं शिक्षण पद्धति को पुनर्जीवित करने का कार्य क्रिया था।

आज मैंने और मेरे साथियों ने गुरुकुल का निरीक्षण किया है। छात्रों की संख्या और भवनों की दृष्टि से यह संख्या एक महाविद्यालय के समकक्ष भी नहीं हैं। जिसे गुरुकुल कांगड़ी महाविद्यालय कहता है उसमें

विद्याविनोद के प्रथम खण्ड और द्वितीय खण्ड में केवल 9 छात्र है। जिसे गुरुकुल कांगड़ी डिग्री अर्थात् वेदालंकार, विद्यालंकार जो बी.ए. के समकक्ष उपाधियाँ हैं उसके दोनों वर्षों में केवल 8 छात्र है। इनकी इतनी कम संख्या होने पर भी भारत सरकार ने गुरुकुल कांगड़ी जो कि एक भारतीय संस्कृति का प्रसिद्ध संस्थान हैं। उसे डिम्ड टू बी यूनिवर्सिटी को मान्यता प्रदान की है।

मैं इस समय गुरुकुल कांगड़ी के समस्त अधिकारियों को यह भी स्पष्ट रूप में कहना चाहूंगा कि आज भारत वर्ष में 90 विश्वविद्यालय हैं उन विश्वविद्यालयों में आधुनिक विज्ञान एवं भौतिकता का बोलबाला है। इसलिये वे विश्वविद्यालय आपके संस्थान का अनुकरण करना चाहें तो करें परन्तु आप किसी विश्वविद्यालय का अनुकरण न करें। मैं यह बात इसलिये कह रहा हूँ कि गुरुकुल कांगड़ी के मूल स्वरूप में कोई परिवर्तन न हो क्योंकि यदि आपने उन विश्वविद्यालयों का अनुकरण प्रारम्भ कर दिया तो गुरुकुल कांगड़ी का मूल स्वरूप बिगड़ जायेगा। जो कि इस संस्था और राष्ट्र दोनों के लिये हानिकारक होगा।

गुरुकुल कांगड़ी के उस समय के अधिकारी मुख्याधिष्ठात पं॰ सत्यव्रत सिद्धान्तलंकार आचार्य प्रियव्रत वेदवाचस्पति सहायक मुख्याधिष्ठाता पं॰ धर्मपाल विद्यालंकार थे। इनमें यद्यपि आचार्य प्रियव्रत वेदावाचस्पति ने जिस समय विद्यासभा में गुरुकुल कांगड़ी को विश्वविद्यालय बनाने का प्रस्ताव आया तो उस प्रस्ताव के विरोध में अपना मत अंकित कराया था, परन्तु प्रस्ताव पारित हो जाने के पश्चात् उन्होंने ईमानदारी के साथ विश्वविद्यालय बनाने का पर्याप्त प्रयास किया।

अन्ततः गुरुकुल कांगड़ी के प्रशासन अथवा पंजाब आर्य प्रतिनिधि सभा के प्रयत्न के परिणामस्वरूप 19 जून 1962 के दिन भारत सरकार के शिक्षा मन्त्रालय ने गुरुकुल कांगड़ी को अपने नोटिफिकेशन के द्वारा विश्वविद्यालय के रूप में मान्यता प्रदान की। इस प्रकार गुरुकुल कांगड़ी की स्थापना के 60 वर्ष पश्चात् सरकार के साथ उसका घनिष्ठ सम्बन्ध हुआ इसका यह परिणाम हुआ कि गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय का पूरा खर्चा विश्वविद्यालय अनुदान आयोग एवं भारत सरकार द्वारा दिया जाने लगा। गुरुकुल कांगड़ी के साथ ही काशी विद्यापीठ वाराणसी को विश्वविद्यालय की मान्यता प्राप्त हुई थी। काशी विद्यापीठ वाराणसी को 1973 में उत्तर प्रदेश सरकार द्वारा चार्टर यूनिवर्सिटी की मान्यता प्राप्त की गयी है परन्तु अनेक प्रयास करनें पर भी गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय को डिम्ड टूँ बी यूनिवर्सिटी से चार्टर यूनिवर्सिटी के रूप में सफलता प्राप्त नहीं हुई।

विश्वविद्यालय की स्थिति प्राप्त हो जाने के पश्चात् गुरुकुल कांगड़ी के संचालकों एवं प्रशासकों को यह आवश्यकता अनुभव हुई कि गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय का इससे पूर्व संचालन पंजाब आर्य प्रतिनिधि सभा द्वारा गठित विद्या सभा करती थी विश्वविद्यालय के संचालन हेतु एक नये संविधान एवं नियमावली की आवश्यकता है क्योंकि नियमों के अनुसार गुरुकुल के प्रधान अधिकारी मुख्याधिष्ठाता एवं आचार्य होते थे। जिनकी नियुक्ति विद्या सभा करती थी। यूनिवर्सिटी के रूप में मान्यता प्राप्त हो जाने के पश्चात् विश्वविद्यालय का नया संविधान बनाया जाय उस नये संविधान में उस प्रकार संचालन समिति के नाम रखें जाये जो भारत सरकार एवं विश्वविद्यालय अनुदान आयोग को भी मान्य हो इसलिये गुरुकुल कांगड़ी दो विभागों में विभाजित हो गया यह भी निश्चित किया गया कि विद्या सभा को भंग न किया जाय अपितु गुरुकुल का विद्यालय विभाग, गौशाला, कृषि और म्यूजियम आदि का संचालन विद्या सभा के ही अधीन रहे। विश्वविद्यालय अनुदान आयोग नई दिल्ली से जिन विभागों के लिये अनुदान प्राप्त नहीं हो रहा है उनका संचालन गुरुकुल अपनें साधनों द्वारा ही करेगा।

विश्वविद्यालय का संविधान

गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय के लिए जो संविधान निर्मित किया गया वह लगभग-लगभग वैसा

ही है जो अन्य विश्वविद्यालयों का संविधान होता है। यद्यपि चार्टर यूनिवर्सिटी का संविधान एवं गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय के संविधान में कुछ मौलिक अन्तर भी रखा गया। इस संविधान में इस विश्वविद्यालय के संविधान को संचालन समितियों के निम्नलिखित नाम रखे गए सीनेट (शिष्ट परिषद्), सिंडीकेट समितियों के निम्नलिखित नाम रखे (कार्यपरिषद्) और एकेडमिक कौंसिल (शिक्षा पटल) को स्थान दिया गया। मुख्याधिष्ठाता के स्थान पर कुलपति, आचार्य के स्थान पर आचार्य (प्रो० वाइस चान्सलर) तथा कुल सचिव ये मुख्य अधिकारियों के नाम नये संविधान में रखे गए। सर्वोच्च और सर्वप्रथम पद चान्सलर कुलाधिपति के रूप में माना गया। विश्वविद्यालय के इस नये संविधान के अनुसार पंजाब आर्य प्रतिनिधि सभा के प्रधान को पदेन कुलाधिपति पद पर प्रतिष्ठत किया गया। वाइस चान्सलर (कुलपति) की नियुक्ति विजिटर के द्वारा किए जाने का प्रावधान किया गया। परिद्रष्टा (विजिटर) की नियुक्ति सीनेट द्वारा किए जाने का प्रावधान किया गया। कानूनी दृष्टि से गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय के नये संविधान को सीनेट द्वारा पारित कराके औपचारिक रूप से लखनऊ में पंजीकृत करा दिया गया। इस प्रसंग में यह भी कहना आवश्यक है कि डा० सत्यकेतु के अनुसार "गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय का जो नया संविधान जिस समय तैयार किया था वह निर्दोष नहीं था। उसे जल्दी में ही तैयार किया गया था और उसमें अनेक कमियाँ रह गई थी। आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब का गठन लोकतंत्रवाद पर आधारित है उसके सदस्य विविध आर्य समाजों द्वारा चुने जाते हैं। उसके प्रधानमंत्री आदि पदाधिकारियों का चुनाव वार्षिक होता है। प्रजातंत्र के आधार पर इन सभाओं में दलबंदी का विकरित हो जाना स्वाभाविक है।" गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय के सीनेट के सदस्यों की संख्या आर्य प्रतिनिधि सभाओं का दलगत प्रतिनिधि सभाओं का प्रभाव समय समय पर पड़ता रहता है। सरकारी अधिकारी यद्यपि इसे पसंद नहीं करते हैं इसलिये समय-समय पर संविधान में परिवर्तन संशोधन करने हेतु अनेक समितियों का भी गठन हुआ और समय-समय पर सरकार द्वारा भी आदर्श संविधान (MODEL) की रूप रेखा भी भेजी गई। संविधान के संशोधन के लिए अनेक बार विचार मंथन हुआ, परन्तु पूर्ण रूपेण सरकारी करण, संविधान का नहीं हो पाया है।

यह सब होते हुए भी गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय अनेक झंझावतों को पार करता हुआ भी विश्वविद्यालय की (यूनिवर्सिटी) स्थिति में अक्षुण्ण रूप में विद्यमान है।

जिस समय विश्वविद्यालय को मान्यता प्राप्त हुई उस समय केवल वेद महाविद्यालय और कला महाविद्यालय को ही मान्यता प्राप्त हुई थी। उस समय विज्ञान महाविद्यालय को आगरा विश्वविद्यालय से साइंस कॉलेज के रूप में मान्यता प्राप्त थी। इसलिए बी.एस.सी. की उपाधियाँ आगरा विश्वविद्यालय के द्वारा ही प्रदान की जाती थी। इसमें विज्ञान महाविद्यालय को विश्वविद्यालय के अन्तर्गत न रखने के कई कारण हो सकते हैं। उसका सर्वप्रथम यह कारण रहा होगा कि क्योंकि इस कॉलेज को आगरा विश्वविद्यालय के कॉलेज की मान्यता प्राप्त है। हो सकता है उस कॉलेज के अध्यापकगण एवं उसके छात्र उसे स्वीकार न करें। दूसरा कारण यह भी हो सकता है कि गुरुकुल कांगड़ी प्राच्य विद्याओं के लिए प्रसिद्ध है इसलिए विज्ञान संकाय के रूप में मान्यता न प्राप्त हो। तीसरा कारण यह भी हो सकता है कि जिस समय विश्वविद्यालय बनाने के लिए प्रयास किए गए हमें उन ज्ञापनों में विज्ञान महाविद्यालय का नाम ही न हो इसलिए प्रारम्भ में जिन विषयों की मान्यता मिली उनमें वैदिक साहित्य, संस्कृत साहित्य, दर्शनशास्त्र प्राचीन इतिहास, हिन्दी साहित्य, मनोविज्ञान, अंग्रेजी साहित्य और गणित विषयों में उच्चस्तरीय अध्ययन (एम.ए.) के पाठ्यक्रम निर्मित करके एम.ए. की कक्षाएं प्रारम्भ की गई।"

गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय का जो नया संविधान सीनेट द्वारा स्वीकृत किया गया उसमें उसके उद्देश्य एवं प्रयोजनों को निम्नलिखित प्रकार से दर्शाया गया है।

यहाँ हिन्दी रूपान्तर प्रस्तुत किया जा रहा है :-

1. इस संस्था का नाम गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय है इसके समस्त अधिकार विश्वविद्यालय की सीनेट (शिष्ट परिषद्) में अवस्थित रहेंगे।
2. इसका पंजीकृत कार्यालय गुरुकुल कांगड़ी हरिद्वार में अवस्थित रहेगा।
3. इस संस्थान के उद्देश्य निम्न प्रकार हैं-

(अ) यह विश्वविद्यालय लड़के एवं कन्याओं को शिक्षित करेगा चाहे वे किसी जाति अथवा किसी भी परम्परा अथवा वंश से क्यों न हो, यह संस्था भारत की वैदिक एवं प्राच्य भारतीय सभ्यता के अनुसार जीवन की आश्रम पद्धति जिसमें ब्रह्मचर्य पूर्वक जीवन बिताते हुए वेद, वेदाङ्ग, संस्कृत भाषा और साहित्य और विभिन्न आधुनिक विषय विज्ञान तथा अन्य भाषाओं के उच्च अध्ययन और अपने छात्रों को उत्तम नागरिक के रूप में निर्माण करने जो देश की सेवा और मानवता की सेवा करेंगे। तथा इसके साथ ही यह विश्वविद्यालय अन्य सुपात्र शिक्षण संस्थाओं को भी सम्बद्ध करेगा।

(ब) यह विश्वविद्यालय शिक्षा के माध्यम के रूप में हिन्दी या संस्कृत के द्वारा शिक्षा देगा और शिक्षा का प्रसार करेगा।

(क) संस्कृत भाषा और उसके साहित्य प्राच्य विद्याओं को समस्त शाखाओं के साथ आधुनिक विद्याओं का अध्ययन भी करायेगा।

(ख) हिन्दी भाषा उसके साथ क्षेत्रीय भाषाएं और विदेशी भाषाओं की शिक्षा का भी प्रबन्ध होगा।

(ग) आयुर्वेद और आधुनिक चिकित्सा विज्ञान की शिक्षा देना।

(घ) प्राकृतिक शारीरिक और चिकित्सा विज्ञान इसके साथ मानव की समाज शास्त्र और इनके साथ-साथ अन्य दूसरे विषयों के शिक्षा का प्रबन्ध। जो समय-समय पर सीनेट द्वारा स्वीकृत किए जाएंगे।

(ङ) क्रियात्मक विषय जैसे कला, क्राफ्ट्स, कृषि, ग्राम उद्योग और वाणिज्य आदि की शिक्षा आदि का प्रबन्ध करना।

(च) चित्रकला, ललित कला, संगीतादि की शिक्षादि का प्रबन्ध करना।

(छ) प्राध्यापक प्रशिक्षण।

(ज) शारीरिक और योग की शिक्षा।

(स) ज्ञान विज्ञान का उच्च स्तरीय शोध कार्य के साथ-साथ साहित्य का प्रकाशन जैसे ग्रन्थ, लघु पुस्तिकाएं तथा अन्य प्रकार की सामग्री जो समाज का विकास एवं निर्माण करे इन कार्यों के लिए प्रिन्टिंग प्रेस को स्थापित करना व व्यवस्था करना।

(द) अन्य विश्वविद्यालय एवं प्रशासन के साथ सहयोग करना जिससे विश्वविद्यालय अपने उद्देश्य में एवं संकल्प में तत्पर है।

(ध) विश्वविद्यालय की आवश्यकता के अनुसार प्राध्यापक, रीडर और प्रोफेसर पद सृजन किए जाएं।

(र) शैक्षणिक गति विधियों के अनुसार व्यवहार करना।

(य) परीक्षाओं का आयोजन करना और उपाधियाँ डिप्लोमा सर्टिफिकेट्स आदि वितरित करना।

(ल) विश्वविद्यालय अनुदान आयोग से पूर्व सहमति प्राप्त कर किसी विशिष्ट विद्वान् को सम्मानित उपाधि से अलंकृत करना।

(म) इस संस्था के विकास के लिए चल-अचल संपत्ति को ग्रहण करना। भूमि को क्रय करना। धन संपत्ति आदि को भी प्राप्त करना।

(न) जो संस्था की संपत्ति समय-समय पर एकत्रित की गई है। आवश्यकतानुसार बेचना, क्रय करना, स्थानान्तरण करना आदि की व्यवस्था संस्था के लिए करना।

(च) धन एकत्रित करने के लिए शुल्क तथा अन्य प्रकार के शुल्क जो सीनेट या सिंडीकेट द्वारा स्वीकृत किये गये हैं उपहार, दान तथा अन्य प्रकार के साधनों से प्राप्त धन जो इस के खर्चे एवं विकास के लिए आवश्यक हों।

(छ) आवासीय छात्रों का नियन्त्रण रखते हुए उनको अनुशासन में रखना। उनके स्वास्थ्य एवं अन्य सामान्य कल्याण का प्रबन्ध करना।

(ज) प्राशासनिक तथा अन्य आवश्यक पदों को जो आवश्यक हों उनका सृजन करना।

(झ) विश्वविद्यालय के कर्मचारियों के कर्तव्य एवं आचरणों को निर्धारित एवं नियंत्रित करना।

(ट) उपर्युक्त विषयों के विषय में जो भी आवश्यक हो उन पर उचित कार्यवाही करना।

4. इस विश्वविद्यालय को जो स्वायत्त शिक्षण संस्था है वह अपने उद्देश्यों एवं अपने कर्तव्यों को उचित प्रकार से क्रियान्वित करना।
5. इस विश्वविद्यालय के महाविद्यालय निम्नलिखित होंगे- वेद महाविद्यालय और कला महाविद्यालय।

1. सीनेट (शिष्ट परिषद्) का गठन

शिष्ट परिषद् के निम्नलिखित सदस्य होंगे।

1. पंजाब आर्य प्रतिनिधि सभा द्वारा मनोनीत 15 प्रतिनिधि।
2. विश्वविद्यालय का कुलपति।
3. महाविद्यालयों के आचार्य एवं प्रिंसिपल।
4. विश्वविद्यालय का कोषाध्यक्ष।
5. पंजीकृत स्नातकों के दो प्रतिनिधि।
6. पंजीकृत स्नातिकाओं का एक प्रतिनिधि (कन्या गुरुकुल देहरादून)
7. कन्या गुरुकुल महाविद्यालय देहरादून का मैनेजर।
8. केन्द्रीय सरकार का नामित एक प्रतिनिधि।
9. उत्तर प्रदेश सरकार द्वारा नामित्त एक प्रतिनिधि।
10. विश्वविद्यालय अनुदान आयोग द्वारा नामित तीन विद्वान् प्रतिनिधि
11. एक प्राध्यापक प्रतिनिधि।
12. कुलाधिपति द्वारा नामित 7 प्रतिनिधि जिसमें शिक्षाविद्, उद्योग पति, प्रशासक और सामान्य कार्यकर्त्ता होंगे।

विशेष-

1. विश्वविद्यालय का कुलसचिव पदेन सीनेट का सचिव होगा।

2. उपर्युक्त प्रतिनिधियों का सेवाकाल कुलसचिव को छोड़कर तीन वर्ष होगा, परन्तु अगले प्रतिनिधियों की नियुक्ति तक निरन्तर सदस्य रहेंगे।

3. सीनेट (शिष्ट परिषद् के अधिकार)-

विश्वविद्यालय के निर्धारित स्मृति पत्र (MEMORONDOM) एवं नियम के अनुसार निम्नलिखित सोनेट के अधिकार एवं कार्य होंगे।

1. समय-समय पर विश्वविद्यालय की नीति एवं कार्यक्रमों का निर्धारण करना।
2. विश्वविद्यालय के नियमों एवं प्रस्तावों पर विचार करना। वार्षिक आय-व्यय का लेखा-जोखा की तथा ऑडिट रिपोर्ट्स पर विचार करना।
3. कुलाधिपति द्वारा किसी मामले पर परामर्श मांगने पर परामर्श देना।
4. आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब या विश्वविद्यालय अनुदान आयोग भारत सरकार के शिक्षा मंत्रालय से पूर्व अनुमति लेकर विश्वविद्यालय की संपत्ति को कहीं लगाना अथवा संपत्ति खरीदना और संपत्ति को स्थानान्ततिरत करना।
5. आचार्य वेद एवं कला महाविद्यालय को नामित उप समिति के अनुसार नियुक्ति करना।
6. उसके साथ अन्य कार्य जो विश्वविद्यालय के नियमों ने निर्धारित किए हों।

3. सीनेट (शिष्ट परिषद्) की बैठक-

1. सीनेट की बैठक वित्तीय वर्ष में कम से कम एक बार होगी। बैठक के लिए 1/3 सदस्यों का उपस्थित होना अनिवार्य होगा।
2. कुलाधिपति सीनेट के बैठक की अध्यक्षता करेंगे 2 उनकी अनुपस्थिति में कुलपति सीनेट का अध्यक्ष होगा।

4. परिद्रष्टा (विजिटर)-

विश्वविद्यालय में एक परिद्रष्टा का पद होगा, जिसकी नियुक्ति शिष्ट परिषद् द्वारा की जाएगी। उसको (परिद्रष्टा) यह अधिकार होगा कि वह किसी भी मामले के समबन्ध में इन्कवारी (निरीक्षण) कराकर अपनी रिपोर्ट सिंडीकेट को प्रेषित कर सकता है। परिद्रष्टा विश्वविद्यालय की किसी भी समिति उप समिति का सदस्य नहीं होगा। परिद्रष्टा पद पर उसी व्यक्ति की नियुक्ति हो सकती है जो किसी भी विश्वविद्यालय के कुलपति अथवा उच्च न्यायालय का न्यायाधीश हो। परिद्रष्टा की नियुक्ति 3 वर्ष के लिए की जाएगी। वह अपने कार्यालय में अगले विजिटर की नियुक्ति तक कार्य करता रहेगा।

कार्य परिषद् विजिटर के रिपोर्ट को सीनेट (शिष्ट परिषद्) को क्रियान्वयन के लिए प्रेषित करेगी।

1. सुप्रसिद्ध नागरिक
2. शिष्ट परिषद् (सीनेट) किसी भी भारतीय नागरिक जो प्रसिद्ध व्यक्तित्व एवं प्रशासक हो उसे परिद्रष्टा पद हेतु आमन्त्रित कर सकती है।
3. परिद्रष्टा का कार्यकाल 3 वर्ष का होगा।

5. कार्य परिषद् (सिंडीकेट)-

विश्वविद्यालय में एक कार्य परिषद् का गठन होगा, यह विश्वविद्यालय की कार्यकारिणी सामान्य कार्यों को एवं नियमों को क्रियान्वित करने वाली समिति होगी।

(क) कार्य परिषद् का गठन एवं उसके निम्नलिखित सदस्य होंगे।

1. कुलपति

(1) आचार्य/प्राचार्य (2) विश्वविद्यालय का कोषाध्यक्ष

(3)-(4) शिष्ट परिषद् द्वारा नामित दो प्रतिनिधि। दो प्राध्यापक निर्वाचित प्रतिनिधि 12-13 विश्वविद्यालय अनुदान द्वारा नामित दो शिक्षाविद् 14 उत्तर प्रदेश सरकार द्वारा नामित एक प्रतिनिधि 15-भारत सरकार द्वारा नामित एक प्रतिनिधि।

कुल सचिव पदेन सीनेट का सचिव होगा।

अधिकार और कार्य-

कार्य परिषद् कार्यकारिणी के रूप में कार्य करेगी।

1. कार्य परिषद् पदों के सृजन, नियुक्ति शिक्षक और शिक्षकेतर कर्मचारी तथा कर्मचारियों से कार्य (एवं ड्यूटी) लेते हुए उनको उनकी सेवाओं से मुक्त करने का अधिकार कार्य परिषद् का होगा इसमें कुलपति और आचार्य को छोड़कर।
2. शिक्षक और शिक्षकेतर कर्मचारियों को अवकाश देने और मना करने का अधिकार होगा, वाइस चान्सलर को छोड़कर।
3. विश्वविद्यालय के समस्त अधिकार प्रशासन, वित्तीय प्रबन्ध एवं धन की इनवेस्ट आदि के अधिकार इसके ही होंगे।
4. कार्य परिषद् संस्था के कार्य एवं प्रशासन हेतु नियम, उपनियम की समय-समय पर सृजन कर सकती हैं संस्था में सुन्दर रूप में कार्य करती हुई अपने अधिकार एवं कर्त्तव्यों का पालन करें।
5. शिक्षक, शिक्षकेतर कर्मचारी और छात्रों को अनुशासित करने हेतु अपने अधिकारों का क्रियान्वयन कर सकती है।
6. शिक्षा पटल की संस्तुति पर अपने अधिकारों के परिप्रेक्ष्य में शैक्षणिक प्रशासन नये पाठ्यक्रम, शुल्क तथा छात्रावासादि गतिविधियों को विश्वविद्यालय में लागू करेगी।
7. शिष्ट परिषद् के निर्णयों का क्रियान्वयन करेगी और उत्तरदायी होगी।
8. कार्य परिषद् दिन-प्रतिदिन के कार्यों के लिए चाहे वे, प्राशासनिक, वित्तीय और शैक्षणिक मामलों में अपने अधिकारियों को अंधिकार दे सकती है।

6. बैठक (मीटिंग)-

1. कार्य परिषद् की वर्ष में चार बैठकें होंगी।
2. कार्य परिषद् के सदस्यों को 1/3 उपस्थिति कोरम के रूप में मान्य होंगी।
3. विश्वविद्यालय के अधिकारियों को छोड़कर अन्य सदस्यों को कार्य-काल की अवधि 3 वर्ष होगी।

विश्वविद्यालय के प्राशासनिक अधिकारीगण

7. कुलाधिपति-

1. आर्य प्रतिनिधि सभा का अध्यक्ष पदेन कुलाधिपति होगा।

2. कार्यावधि समाप्त होने पर अगले कुलाधिपति की नियुक्ति होने तक कुलाधिपति कार्य करते रहेगें।

3. सीनेट शिष्ट परिषद् की बैठकों की अध्यक्षता और दीक्षान्त समारोह की अध्यक्षता करेंगे।

8. कुलपति-

4. विश्वविद्यालय का एक कुलपति होगा जो समस्त प्राशासनिक और शैक्षणिक कार्यों पर नियन्त्रण करेगा, यह शैक्षणिक और मुख्य कार्यकारी अधिकारी होगा। इसका पद कुलाधिपति के बाद द्वितीय क्रम पर माना जायेगा। कुलपति पदेन कार्यपरिषद्, शिक्षा पटल और वित्त समिति का अध्यक्ष होगा। वह विश्वविद्यालय के सामान्य कार्यकलापों पर नियंत्रण रखेगा।

5. कुलपति, विश्वविद्यालय को नीति और आचार जो कि प्रशासन तथा शैक्षणिक को नियमित करते हुए शिष्ट परिषद् के प्रति उत्तरदायी होगा।

6. कुलपति सम्पूर्ण समय के लिए अधिकारी होगा। परिद्रष्टा द्वारा उसकी नियुक्ति होगी, जो एक उपसमिति के द्वारा कम से कम तीन नाम प्रस्तावित होंगे। उपसमिति का गठन-

   (1) परिद्रष्टा का एक प्रतिनिधि (2) कुलाधिपति द्वारा नामित एक प्रतिनिधि (3) विश्व विद्यालय अनुदान आयोग द्वारा नामित एक प्रतिनिधि परिद्रष्टा का नामित प्रतिनिधि इस उप समिति का अध्यक्ष होगा।

(घ) कुलपति का कार्यकाल तीन वर्ष का होगा, नियुक्ति की तिथि से। यह पुनर्नियुक्ति के लिए भी योग्य होगा। कार्यअवधि समाप्त होने पर अगले कुलपति की नियुक्ति होने तथा कार्य पर आने पर कुलपति अपने कार्य पर नियुक्त रहेगा।

(ङ) कुलपति का कार्यकाल एवं उसकी आयु सीमा 65 वर्ष तक होगी। यदि किसी विशिष्ट प्रसिद्ध विद्वान् के विषय में विश्वविद्यालय अनुदान आयोग की पूर्व स्वीकृति लेकर उसकी आयु सीमा बढ़ायी जा सकती है।

9. प्रो॰ वाइस चान्सलर-

1. वेद महाविद्यालय का आचार्य पदेन विश्वविद्यालय का प्रो॰ वाइस चान्सलर होगा। वह छात्रों के अनुशासन का निरीक्षण करेगा और कुलपति द्वारा निर्धारित ड्यूटी (कर्त्तव्य) का पालन करेगा।

2. आचार्य की नियुक्ति सीनेट द्वारा गठित उपसमिति एवं कुलपति द्वारा संस्तुति करने पर सीनेट नियुक्ति करेगी।

3. कुलपति की अनुपस्थिति एवं अवकाश पर जाने पर वह कुलपति का कार्य करेगा।

10. कुलसचिव (रजिस्ट्रार)-

1. कुलसचिव की नियुक्ति चयन समिति की संस्तुति पर कार्य परिषद् करेगी। कुल सचिव कुलपति के निर्देश पर सामान्य प्रशासन, कार्यालय का नियंत्रण, संपत्ति की व्यवस्था वित्त तथा परीक्षाओं का नियन्त्रण और कुलपति द्वारा दिए गए कार्य करेगा। वह शिष्ट परिषद् कार्य परिषद्, शिक्षा पटल और संकायों के सचिव के रूप में होगा।

2. कुल सचिव की नियुक्ति नियमित कर्मचारी के रूप में होगी।

   (इस सयम संविधान में कुल सचिव की नियुक्ति 5 वर्ष की कार्य अवधि तक होती है।) वह पुनः नियुक्ति के लिए भी योग्य माना जा सकता है।

3. कुल सचिव कार्य परिषद् के अधिकार का प्रयोग करने में समर्थ है तीन महीने का नोटिस देकर अथवा तीन मास का वेतन देकर सेवाएं समाप्त की जा सकती है।
4. कार्य परिषद् उपकुलसचिव या सहायक कुलसचिव की नियुक्ति कर सकती है जो कुलसचिव के निर्देशानुसार कार्य करेंगे।

11. वित्त अधिकारी-

विश्वविद्यालय में एक वित्त अधिकारी होगा जिसकी नियुक्ति डेपुटेशन के आधार पर की जाएगी। भारत सरकार के ऑडिटर जनरल के कार्यालय से उसकी नियुक्ति की जायेगी।

1. वह वार्षिक बजट तैयार करने तथा विश्वविद्यालय के वित्त एवं लेखा-जोखा, आय-व्यय का विश्वविद्यालय के प्रति उत्तरदायी होगा।
2. उसे धन को नियमानुसार खर्च करने तथा जो विश्वविद्यालय रुपया व्यय कर रहा है उसकी स्वीकृति का उत्तदायित्व भी उसी का होगा।
3. कुलपति द्वारा अन्य दिए गए कार्यों को भी करेगा।

12. कोषाध्यक्ष-

कोषाध्यक्ष का चयन सीनेट 3 वर्ष के लिए करेगी।

1. कोषाध्यक्ष पदेन सीनेट और सिंडीकेट का सदस्य होगा।
2. वह अवैतनिक स्थिति में कार्य करेगा।
3. यदि किसी कारण से कोषाध्यक्ष का पद खाली होगा तो उसके रिक्त स्थान को सिंडीकेट (कार्य परिषद्) भर सकती है। वह तब तक कार्य करेगा। जब तक कि शिष्ट परिषद् की वार्षिक बैठक में उसे चयनित नहीं किया जाता।
4. कोषाध्यक्ष सामान्य निरीक्षण बजट आदि का करेगा और द्वितीय नीति के विषय में विश्वविद्यालय को सलाह देगा।

13. प्रबन्ध तन्त्र (प्राशासनिक समितियाँ)-

विश्वविद्यालय में निम्नलिखित प्रशासन समितियाँ होंगी।

(क) शिष्ट परिषद् (ख) सिंडीकेट (ग) शिक्षा पटल (घ) वित्त समिति (ङ) संकाय तथा (च) अन्य और प्रबन्ध समितियां जो सीनेट द्वारा निश्चित की जाएं।

14. महाविद्यालयों के प्राचार्य गण-

1. वेद महाविद्यालय का प्राचार्य, आचार्य होगा।
2. अन्य महाविद्यालयों के प्राचार्य की नियुक्ति कार्य परिषद् द्वारा की जाएगी। उनकी यह नियुक्ति सेलेक्शन कमेटी की संस्तुति के आधार पर होगी।
3. प्राचार्य पदेन संकायों का सदस्य होगा।

15. शिक्षा पटल-

1. विश्वविद्यालय की शिक्षा पटल शैक्षणिक परिषद्, होगी। यह शिक्षा पटल शिक्षा का स्तर पाठ्यक्रम से परीक्षाएं आदि के सामान्य नियमों का पालन करने को नियंत्रण करेगी और अन्य अधिकार जो कार्य परिषद् द्वारा दिए जाएंगे उन कर्त्तव्यों के प्रति उत्तरदायी होगी।

2. यह शिक्षा पटल अन्य सामान्य कार्यकलाप जैसे परीक्षाएं आदि तथा अन्य शिक्षा सम्बन्धी मामलों का भी अवलोकन करेगी।

3. शिक्षा पटल परीक्षाओं का प्रबन्ध तथा शिक्षा सम्बन्धी अन्य विवादित मामलों का अन्तिम निर्णय लेगी। चाहे वह शिक्षा सम्बन्धी हो चाहे परीक्षा सम्बन्धी।

16. शिक्षा पटल के निम्नलिखित सदस्य होंगे जिनका कार्य काल तीन वर्ष का होगा-

1. कुलपति 2. आचार्य वेद महाविद्यालय (प्रो॰ वाईस चान्सलर) 3. प्राचार्या कन्या गुरुकुल देहरादून 4. तीन संकायाध्यक्ष जो परिचक्र क्रम में होंगे। 5. तीन विभागों के अध्यक्ष (परिचक्र क्रम से) 6. महाविद्यालयों के तीन प्राचार्य 7. पांच सदस्य शिष्ट परिषद् द्वारा नामित जो अपने विषय के प्रसिद्ध विद्वान् होंगे 8. एक प्रतिनिधि प्राध्यापक गण का 9. पंजीकृत स्नातकों द्वारा चयनित तीन प्रतिनिधि।

नोट:- स्नातक वहीं पंजीकृत हो सकते हैं जिनको पांच वर्ष स्नातक हुए हो गए हो वही चुनाव में भाग ले सकते हैं।

10. शिक्षा मन्त्रालय भारत सरकार द्वारा नामित एक प्रतिनिधि। 11. उ॰प्र॰ शिक्षा मंत्रालय द्वारा नामित एक प्रतिनिधि।

12. दो या इससे अधिक अपने विषय के प्रसिद्ध विद्वान् शिक्षा पटल द्वारा नामित किए जाऐंगे।

नोट:- शिक्षा पटल के समस्त सदस्य 30 से अधिक नहीं होंगे।

17. कुलपति पदेन शिक्षा पटल की बैठकों के अध्यक्ष होंगे, उनकी अनुपस्थिति में आचार्य अध्यक्ष होगा।

18. कुल सचिव शिक्षा पटल का सचिव होगा।

19. शिक्षा पटल की बैठक उसकी सदस्य संख्या की 1/3 उपस्थिति अनिवार्य होगी।

20. सामान्य तथा शिक्षा पटल की बैठक वर्ष में दो बार होगी। पाठ्यक्रमों के निर्धारण हेतु शिक्षा पटल की बैठक जुलाई में होगी। इसलिए शिक्षा समितियों की बैठकें जून तक हो जाएं, ताकि पाठ्यक्रमों में परिवर्तन एवं परिवर्धन शिक्षा पटल द्वारा जुलाई में किया जा सके। यह आवश्यक है कि अगले सत्र के प्रारम्भ में ही शिक्षा पटल की अवश्य बैठक हो।

21. शैक्षणिक संकाय

निम्नलिखित संकाय होंगे। शिक्षा पटल के निर्देशानुसार इनमें वृद्धि भी की जा सकती है।

(अ) प्राच्य विद्या संकाय, जो सामान्य रूप से संस्कृत भाषा और उसका समस्त साहित्य (जिन प्राच्य विद्याओं का आधार संस्कृत साहित्य होगा वे विषय इस प्राच्य विद्या संकाय में होंगे।

(आ) मानविकी संकाय, इस संकाय में सामान्य तथा आधुनिक कला के विषय और मानविकी विषय सम्मिलित होंगे।

(ई) कृषि संकाय, इस संकाय में सामान्य रूप में कृषि-विज्ञान सम्बन्धी विषय होंगे।

(उ) विज्ञान संकाय, इसमें सामान्यतया आधुनिक विज्ञान के विषय होंगे।

(ऊ) प्रत्येक संकाय में कार्य परिषद् द्वारा निर्धारित विभाग सम्मिलित होंगे।

(ऋ) प्रत्येक संकाय का निम्नलिखित रूप में गठन होगा।

(1) संकाय का अध्यक्ष (डीन)।

(2) संकायों के सभी प्रोफेसर।

(3) संकाय के सभी प्रोफेसर।

(4) एक शिक्षा विद् विषय विशेषज्ञ के रूप में जिसका विश्वविद्यालय से कोई सम्बन्ध न हो जो संकाय द्वारा नामित किया जाए।

(5) शिक्षा पटल द्वारा दो चयनित विद्वान् प्रतिनिधि। संकाय के अधिकारियों को छोड़कर जो पेदन सदस्य है अन्य सदस्यों की कार्यावधि 3 वर्ष की होगी।

(6) विभाग का यह अध्यक्ष जो प्रो॰ होगा वह परिचक्र से संकाय का डीन होगा। उसकी अवधि दो वर्ष की होगी। यदि किसी संकाय में कोई प्रोफेसर नहीं है तो वरिष्ठतम रीडर उसका डीन होगा। डीन अपने संकाय में सूचना जारी करेगा।

22. चयन समितिः विश्वविद्यालय की एक चयन समिति होगी जो नियुक्तियाँ करेगी। उसके निम्नलिखित सदस्य होंगे।

1. वाइस चान्सलर (कुलपति) 2. परिद्रष्टा का प्रतिनिधि। 3. गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय का आचार्य 4. सम्बन्धी विभाग का अध्यक्ष 5. विषय विशेषज्ञ जो उस विषय का विद्वान् हो जो विश्वविद्यालय से सम्बन्धित न हो जिसका चयन सिंडीकेट द्वारा किया जाएगा। 6. एक प्रतिनिधि सीनेट द्वारा नामित जिसकी कार्य अवधि तीन वर्ष होगी। कुल सचिव पदेन चयन समिति का सचिव होगा। चयन समिति के सदस्यों की बैठक के लिए 3 की उपस्थिति अनिवार्य होगी।

23. वित्त समिति-

एक वित्त समिति होगी जिसके निम्नलिखित सदस्य होंगे।

1. वाइस चान्सलर (कुलपति) अध्यक्ष 2. कोषाध्यक्ष 3. एक शिष्ट परिषद् का प्रतिनिधि 4. एक भारत सरकार द्वारा नामित प्रतिनिधि 5. उत्तर प्रदेश द्वारा नामित एक प्रतिनिधि।

विशेषः- रजिस्ट्रार पदेन इसका सचिव होगा।

24. कोषाध्यक्ष-

वित्त समिति की बैठक की कार्यवाही करेगा। वित्त समिति की बैठक वर्ष में कम से कम दो बार होंगी। वित्त समिति के सदस्यों की संख्या में से तीन की उपस्थिति अनिवार्य होगी।

25. वित्त समिति के निम्नलिखित कार्य होंगे।

1. वित्त सम्बन्धी बजट का निरीक्षण करना और जो विश्वविद्यालय द्वारा रेकरिंग और नॉन रेकरिंग प्रस्तावों पर विचार करके निर्धारण करना। 2. वार्षिक बजट तथा वित्तीय आय-व्यय का ब्यौरा सीनेट की बैठक के लिए तैयार करना। 3. विश्वविद्यालय के समस्त धन के स्रोतों से प्राप्त धन का रेकरिंग और नॉन रेकरिंग के खर्चे के लिए धन को निश्चित करना।

26. खाते और ऑडिट

1. गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय के निम्नलिखित लेखा-जोखा का हिसाब रखा जाएगा, जो उसके समस्त धन प्राप्त करने के स्रोत हैं और उसकी सम्पत्तियाँ हैं उनका नियमित हिसाब रहेगा।

2. गुरुकुल विश्वविद्यालय के खाते तथा उनका समस्त आय व्यय का वार्षिक ऑडिट, भारत सरकार के ऑडिटर जनरल अथवा उसके द्वारा अधिकृत अधिकारी द्वारा किया जाएगा। उसमें

होने वाले व्यय तथा अन्य सम्बन्धित ऑडिट रिपोर्ट भारत सरकार के ऑडिटर जनरल को भेजी जायेगी। उसका व्यय गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय द्वारा वहन किया जाएगा।

3. नियंत्रक तथा भारत सरकार के ऑडिटर जनरल तथा उसके द्वारा अधिकृत कोई अधिकारी गुरुकुल कांगड़ी के हिसाब-किताब जो भारत सरकार के ऑडिटर जनरल को सरकार के आय-व्यय के लोखा-जोखा का आडिट करने के विभिन्न खातों तथा अन्य आवश्यक जानकारी जैसे आय-व्यय पंजिकृत बिल आदि आवश्यक कागजात देखने के हैं।

4. ऑडिट रिपोर्ट के परिणाम को ऑडिटर विश्वविद्यालय के प्रशासन को प्रेषित करेगा जिसमें उसकी सम्मत्तियाँ भी होंगी। उसी की एक प्रतिलिपि शिक्षा मंत्रालय भारत सरकार को जाएगी। ऑडिटर एक प्रतिलिपि को शिक्षा भारत सरकार (शिक्षा मन्त्रालय) को भी भेज सकता है।

27. सदस्यता से वंचित

यदि कोई गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय के किसी भी समिति का सदस्य अपने कर्त्तव्य का दोषी एवं जिस समिति का वह सदस्य है उसके कर्त्तव्य के विमुख पाया जाये तथा विश्वविद्यालय के निर्धारित नियमों का भंग करते हुए अनैतिक आचरण करते हुए पाया जाय तो उसे उस समिति की सदस्याता से च्युत किया जा सकता है अर्थात् उसकी सदस्यता समाप्त की जा सकती है।, परन्तु ऐसा करने के लिए उस समिति (कार्य परिषद् शिष्ट परिषदादि) के समस्त सदस्यों की संख्या के 2/3 सदस्यों द्वारा वह प्रस्ताव पास किया गया हो।

28. समिति के रिक्त स्थानों की प्रतिपूर्ति

किसी भी कारण से समितियों के रिक्त स्थान जो कि स्थाई अथवा पदेन के अतिरक्ति सदस्यों के स्थान रिक्त हो जाने पर विश्वविद्यालय के किसी भी समिति, उपसमिति के सदस्य के रिक्त स्थान को शीघ्रतिशीघ्र सुविधानुसार व्यक्ति अथवा समिति द्वारा चयनित किया जा सकता है, अथवा अधिकृत किया जा सकता है। यह प्रतिपूर्ति तब तक ही की जा सकती है जब तक उसका कार्यकाल समाप्त हो।

29. विश्वविद्यालय के अधिकार

विश्वविद्यालय की किसी भी परिषद् अथवा किसी भी अधिकारी को यह अधिकार नहीं है कि वह रिक्त स्थानों की प्रतिपूर्ति बिना किसी कारण के कर सकें।

30. कानूनी प्रक्रिया एवं कार्यवाही

संस्था अथवा विश्वविद्यालय के किसी भी कानूनी अभियोग अथवा कोई कानूनी प्रक्रिया कुलपति के प्रति की जायेगी अथवा कुलपति द्वारा अधिकृत व्यक्ति (अधिवक्तादि) विश्वविद्यालय के प्रति कानूनी कार्यवाही करने के लिए नियुक्त होगा। अर्थात् वह संस्था के प्रति उन अभियोगों आदि में विश्वविद्यालय की ओर से कानूनी कार्यवाही कर रहा है विश्वविद्यालय के प्रति उत्तरदायी होगा विश्वविद्यालय की समस्त संपत्ति अथवा संपत्ति का स्थानान्तरणादि तथा उस पर व्यय होने वाले खर्चे शुल्कादि के लिए बाइस चान्सलर किसी भी व्यक्ति को उपर्युक्त उद्देश्यों के लिए अपने अधिकारों को व्यक्ति या व्यक्तियों को दे सकता है।

31. औद्योगिक अध्ययन के लिए परिषद् का गठन

एक औद्योगिक परिषद् का गठन किया जाएगा जो फार्मेसी, रसायन, औद्योगिक विभाग तथा कायशाला और प्रिन्टिंग प्रेस आदि हेतु छात्रों को क्रियात्मक प्रशिक्षण देने की व्यवस्था करेगी जिसमें आयुर्वेदिक

डिप्लोमा, औद्योगिक रसायन, क्राफ्ट, कृषि आदि के द्वारा आय तथा व्यय का लेखा-जोखा आर्य सभा के निर्देशानुसार शैक्षणिक उद्देश्य के लिए उक्त औद्योगिक परिषद् करेगी।

1. एक परिषद् होगी जो कि औद्योगिक अध्ययन के निमित्त जिसका गठन होगा। जो फार्मेसी रासायनिक फार्मेसी रासायनिक फैक्ट्री और प्रिन्टिंग प्रेस तथा कार्यशालादि का निरीक्षण करेगी।
2. इस परिषद् के निम्नलिखित 13 सदस्य होंगे।

   (क) आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब का उपप्रधान इस बोर्ड का अध्यक्ष होगा। (ख) मुख्याधिष्ठाता (कुलपति) (ग) आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब का सचिव (घ) फार्मेसी का व्यवस्थापक जिसकी नियुक्ति 3 वर्ष के लिए आर्य विद्या सभा करेगी (ङ) आचार्य गुरुकुल कांगड़ी (च) प्राचार्य आयुर्वेद कॉलेज (छ)कोषाध्यक्ष आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब (ज) आर्य प्रतिनिधि सभा द्वारा नामित चार प्रतिनिधि (3 वर्ष के लिए) (झ) कुल सचिव प्रशासन (न) एक कनिष्ट व्यवस्थापक पदेन सचिव होगा।

नोट:- यह औद्योगिक परिषद् अथवा व्यवसाय पटल सभा की पूर्व स्वीकृति लेकर अन्य व्यवसाय (फार्मेसी) प्रारम्भ कर सकती है।

32. संविधान में संशोधन

संविधान के किसी भी कानून अथवा धारा में परिवर्तन करना अथवा उस धारा के विकल्प में अन्य धारा को जोड़ना अथवा किसी धारा को समाप्त करना, किसी भी नियम अथवा उस नियम में किसी प्रकार का परिवर्तन परिवर्धन तथां समाप्त करने का अधिकार विश्वविद्यालय की शिष्ट परिषद् को तभी होगा जब संविधान के प्रथम नियम को छोड़कर इसके सदस्यों की कुल संख्या की 2/3 सदस्यों द्वारा प्रस्ताव पारित किया गया हो तथा नियमानुसार नोटिस देकर संविधान परिवर्तन हेतु विशेष बैठक आमन्त्रित की गई हो। भारत सरकार की स्वीकृति आवश्यक होगी।

33. सोसायटी (संस्था) का विघटन

यदि संस्था का कोई विघटन होना ही हो तो वह तभी संभव है जब इस संगठन की कोई भी संपत्ति है, जो दान दाता द्वारा दी गई है उस दान दाता और उस संस्था की सहमति हो। उसकी सम्पत्ति का विभाजन सदस्यों में नहीं किया जा सकता है, अपितु सोसायटी की सम्पूर्ण सम्पत्ति आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब को चली जायेगी। कार्य परिषद् तथा अन्य किसी उप समिति को संविधान के परिवर्तनादि की कार्यवाही का अधिकार नहीं है।

गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय का गठन गुरुकुल कांगड़ी नामक संस्था जिसका संचालन आर्य विद्या सभा कर रही थी उसके प्रस्ताव अथवा आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के प्रस्ताव द्वारा किया गया था। गुरुकुल कांगड़ी तथा उसकी संचालिका आर्य विद्या सभा का अपना संविधान था जब विश्वविद्यालय के रूप में पंजीकृत कराया गया तो विश्वविद्यालय का अलग संविधान बनाया गया। इसलिए इसे संशोधित अर्थात् आर्य विद्या सभा द्वारा संशोधित करके जो दिनांक 27.3.1964 को पारित करके संस्था को शिष्ट परिषद् ने स्वीकृत किया। उसके बाद शिक्षा मन्त्रालय भारत सरकार ने इसे स्वीकार किया। इस प्रकार से विश्वविद्यालय का नया संविधान विश्वविद्यालय में लागू किया गया।

सन् 1962 में जब विश्वविद्यालय को मान्यता प्राप्त हुई उस समय महाविद्यालय में चार कक्षाएं होती थी। विद्या विनोद प्रथम खण्ड, विद्या विनोद द्वितीय खण्ड जो इन्टर मीडिएट के समकक्ष थी वेदालंकार

प्रथम वर्ष और वेदालंकार द्वितीय वर्ष वास्तव में जो बी.ए. के समकक्ष मानी जाती थी। उस समय प्रत्येक विभाग में एक ही (प्राध्यापक) होता था। जो इन चारों कक्षाओं को पढ़ाता था केवल वेद में जो केवल दो प्राध्यापक थे क्योंकि वेद के ही आचार्य प्रियव्रत वेदवाचास्पति शैक्षणिक एवं प्रशासन का भी कार्य देखते थे। इसलिए दो अध्यापक थे। उस समय के प्रत्येक विभाग के प्राध्यापक का नाम देना उचित होगा क्योंकि उन्हीं के कार्यकाल में गुरुकुल कांगड़ी को विश्वविद्यालय अनुदान आयोग द्वारा विश्वविद्यालय का दर्जा देने का सम्मान प्राप्त हुआ था। इसके साथ ही अध्यापक गण को सरकार से ही वेतन आदि मिलना प्रारम्भ हुआ था। उस समय का प्राध्यापक स्टॉफ निम्नलिखित था।

1. वेद विभाग- (I) आचार्य प्रियव्रत वेद वाचस्पति (II) प्रो॰ धर्मदेव विद्यावाचस्पति
2. दर्शन विभाग- प्रो॰ सुखदेव दर्शन वाचस्पति।
3. संस्कृत विभाग- डा॰ रामनाथ वेदालंकार।
4. प्राचीन इतिहास विभाग- पं॰ हरिदत्त वेदालंकार।
5. हिन्दी विभाग- डा॰ सुरेश कुमार विद्यालंकार।
6. मनोविज्ञान विभाग- डा॰ हरगोपाल सिंह।
7. अंग्रेजी विभाग- डा॰ गंगाराम।
8. गणित विभाग- सुरेशचन्द्र त्यागी, बी.एसं.सी।

उपर्युक्त प्राध्यापकगण थे। इन उपर्युक्त विभागों में एम.ए. का उच्च स्तरीय अध्ययन प्रारम्भ हुआ। इसके पश्चात् प्रत्येक विभाग में विश्व विद्यालय के नियमानुसार ज्यों-ज्यों विश्वविद्यालय अनुदान आयोग ने प्राध्यापक पदों का सृजन किया त्यों-त्यों नये प्राध्यापाकों की नियुक्तियाँ प्रारम्भ हो गयी। विश्वविद्यालय की मान्यता के प्रारम्भ से ही दो दल थे जिनमें से एक दल यह चाहता था कि गुरुकुल कांगड़ी को विश्वविद्यालय के रूप में मान्यता, न दिलायी जाए। परन्तु उस दल की स्थिति कमजोर हो गयी थी और आर्य विद्या सभा में बहुमत विश्वविद्यालय को मान्यता दिलाने लायक हो गया था। गुरुकुल कांगड़ी को डिम्ड टू॰वी॰ यूनिवर्सिटी की मान्यता प्राप्त हुई थी। यह मान्यता यूनिवर्सिटी एक्ट-3 के अन्तर्गत हुई थी इसका स्पष्ट उद्देश्य यह था कि जिस राष्ट्रीय संस्था का अपना कोई विशिष्ट उद्देश्य हो और उसी उद्देश्य को लेकर उस संस्था ने भारतीय राष्ट्रीय चेतना को प्रभावित किया हो उस विशिष्ट क्षेत्र में विशिष्ट विद्वान् साहित्यकार आदि उत्पन्न किए हों। गुरुकुल कांगड़ी को भी अपनी ऐतिहासिक पृष्ठभूमि रही थी जिसने अनेक वेदों के विद्वान् प्राचीन इतिहास के विद्वान्, दर्शन के विद्वान् अनेक साहित्यकार, अनेक सामाजिक चेतना को जागृत करने वाले समाज सुधारक राजनीति के पंडित और स्वतन्त्रता आन्दोलन में जन चेतना को जगाने वाले उन्नायक उत्पन्न किए थे। जिनका वर्णन करना यहाँ अप्रासंगिक होगा। इस संस्था में सबसे विशिष्ट बात यह थी कि यह संस्था प्राच्य विद्याओं तथा आधुनिक ज्ञान विज्ञान की संगम थी जो कि अन्य किसी संस्था में यह विशिष्टता नहीं थी। इसलिए विश्वविद्यालय अनुदान आयोग को भी यह अभिप्रेत था कि इस संस्था में जो वेद-वेदाङ्ग का अनुशीलन इस संस्था के स्थापना काल से है उसको जीवित रखा जाये। और इन विषयों में उच्चअध्ययन एवं शोध का क्रम जारी रहना चाहिए। इसलिए ही संभवतः 9 अप्रैल 1963 को आयोग की रिपोर्ट में यह कहा गया था कि गुरुकुल को अपनी शिक्षा विषयक भावी योजनाओं को बनाते हुए विज्ञान और मानविकी विषयों का भी समन्वित समायोजन रखना चाहिए इसलिए 1971 में गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय को विज्ञान संकाय (महाविद्यालय) खोलने की अनुमति प्रदान कर दी गई थी जैसा कि हम देख चुके हैं कि गुरुकुल कांगड़ी में डिग्री कक्षाओं तक विज्ञान महाविद्यालय आगरा विश्वविद्यालय के अन्तर्गत पहले से ही चल रहा था, उस विज्ञान महाविद्यालय को विश्वविद्यालय के अन्तर्गत अर्थात्

गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय के विज्ञान महाविद्यालय के रूप में स्थानान्तरित कर 1971 में विश्वविद्यालय के अंश के रूप में समाहित कर लिया गया था। इस विज्ञान महाविद्यालय में भौतिक विज्ञान, प्राणी विज्ञान और वनस्पति शास्त्र का अध्ययन अध्यापन का प्रारम्भ किया गया था प्रारम्भ में ही जिन आठ विषयों में स्नातकोत्तर तक की शिक्षा की अनुमति हो गई थी उनमें अंग्रेजी, गणित और मनोविज्ञान सदृश विषयों का अध्यापन वेद शास्त्रों के अध्ययन के सहायक रूप में न होकर स्वतन्त्र रूप में व्यवस्था थी जो छात्र वेद या संस्कृत में एम.ए. करते थे उन्हें न अंग्रेजी पढ़नी होती थी न गणित और न कोई अन्य आधुनिक विषय। गणितादि में ऐसे छात्र अध्ययन कर सकते थे जिन्हें संस्कृत का कुछ भी ज्ञान न हो। उस समय इस विषय में पुराने स्नातक तथा अन्य आर्य समाज के सदस्यों में यह चर्चा होती थी कि गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय में चाहे एम.ए. किसी भी विषय में किया जाये यहाँ के उत्तीर्ण एम.ए. को भी संस्कृत और प्राच्य विद्याओं का ज्ञान होना अपेक्षित होना चाहिए। विश्वविद्यालय अनुदान आयोग के सम्मुख इस विश्वविद्यालय की पृष्ठ भूमि स्पष्ट थी कि वेद-शास्त्र, संस्कृत, प्राचीन भारतीय इतिहास तथा अन्य प्राचीन ज्ञान-विज्ञान पर विशेष ध्यान भी उसे देना था क्योंकि यहाँ के अध्ययन-अध्यापन की पृष्ठ भूमि में ये मुख्य विषय थे। यही कारण था कि विश्वविद्यालय अनुदान आयोग ने तथा समय समय पर विजिटिंग कमेटियों ने यह कहना प्रारम्भ कर दिया था कि इस विश्वविद्यालय की स्थापना एवं मान्यता जिस मुख्य उद्देश्य एंव प्रयोजन को लेकर प्रदान की थी उन विषयों का उच्च अध्ययन एवं शोध अवश्य होना चाहिए। जब यहाँ के अधिकारी गण आधुनिक विषय तथा अन्य विश्वविद्यालयों की तरह मांग करते रहे उस समय उनको विश्वविद्यालय अनुदान आयोग के अधिकारी सही सलाह दिया करते थे कि आपका विश्वविद्यालय एक विशेष उद्देश्य जिसमें वैदिक साहित्य तथा प्राच्य विद्या के विषयों के उच्च अध्ययन के लिए है न कि बी.ए. आदि डिग्रियां प्रदान करने के लिए।

गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय का विकास एवं प्रगति

गुरुकुल कांगड़ी को डिम्ड टु॰वी॰ विश्वविद्यालय की मान्यता एवं स्वीकृति मिल जाने के पश्चात् सन् 1965 में प्रो॰ सत्यव्रत सिद्धान्तालंकार जो उस समय गुरुकुल कांगड़ी के मुख्याधिष्ठाता थे। जिनका मनोनयन महा-महिम राष्ट्रपति द्वारा राज्य सभा में किया जा चुका था। गुरुकुल के एक सुयोग्य स्नातक थे और सार्वजनिक जीवन में उनकी बहुत प्रतिष्ठा थी, गुरुकुल कांगड़ी को विश्वविद्यालय की मान्यता दिलाने में उनका बहुत बड़ा योगदान था। प्रो॰ सत्यव्रत सिद्धान्तालंकार को ही गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय का प्रथम कुलपति (वाइस चान्सलर) नियुक्त किया गया। प्राचार्य पद पर प्रतिष्ठित पं॰ प्रियव्रत वेद वाचस्पति, जो वेदशास्त्रों के प्रकाण्ड विद्वान् थे आर्य समाज के क्षेत्र में जिनका बहुत अधिक सम्मान था। वे ही प्रो॰ वाइस चान्सलर एवं सिंडीकेट (कार्य परिषद्) शिक्षा पटलादि का गठन कर लिया गया था, गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय के रूप में गुरुकुल कांगड़ी का विविधवत् संचालन सुचारू रूप से होने लगा। जिन उपर्युक्त आठ विषयों में स्नातकोत्तर स्तर का अध्ययन प्रारम्भ करने की स्वीकृति विश्वविद्यालय अनुदान आयोग द्वारा प्रदान की गई थीं जो उनके द्वारा नये प्राध्यापकों की नियुक्ति की गई। पहले गुरुकुल कांगड़ी में केवल स्नातक स्तर तक के अध्ययन की व्यवस्था थी इसलिए प्रायः विषयों में एक-एक ही प्राध्यापक रखा जाता था। स्नातकोत्तर कक्षाएं प्रारम्भ हो जाने के पश्चात् चार-चार प्राध्यापक नियुक्त किए जाने लगे। गुरुकुल के प्राध्यापक वर्ग में ऐसे प्राध्यापक वर्ग की भी नियुक्ति हो गई थी जो गुरुकुल की मान्यतओं आदर्शों से अपरिचित थे क्योंकि उनकी शिक्षा दीक्षा आधुनिक कॉलेजों, विश्वविद्यालयों में हुई थी। डॉ॰ सत्यकेतु विद्यालंकार ने आर्य समाज के इतिहास भाग 3 में पृष्ठ 631 पर यह आक्षेप किया है कि "इन नये प्राध्यापकों में अनेक ऐसे भी थे जिनकी वैदिक धर्म तथा आर्यसमाज के प्रति कोई आस्था नहीं थी गुरुकुल

कांगड़ी को स्थापित हुए आधी शती से अधिक समय बीत चुका था। यहाँ शिक्षा प्राप्त कर सैकड़ों स्नातक हो चुके थे। गुरुकुल यह दावा कर चुका था कि उसके स्नातक हिन्दी संस्कृत वेद शास्त्र प्राचीन भारतीय इतिहास के प्रकाण्ड पंडित होते हैं।

इस दावे में सच्चाई थी। गुरुकुल के बहुत से स्नातकों ने इन विषयों में गंभीर विद्वान् के रूप में अच्छी ख्याति भी प्राप्त की थी पर आश्चर्य की बात है कि वेद, संस्कृत, हिन्दी, प्राचीन भारतीय इतिहास, दर्शन शास्त्र सदृश विषयों के बहुसंख्यक प्राध्यापक भी ऐसे व्यक्ति नियुक्त किए गए जो गुरुकुल के स्नातक नहीं थे। इसका परिणाम यह हुआ कि गुरुकुल कांगड़ी का वातावरण उन आदर्शों परम्पराओं के अनुरूप नहीं रह गया था जिनको सम्मुख रखकर इस संस्था की स्थापना की गई थी।

विश्वविद्यालय की मान्यता प्रदान होने के पश्चात् सन् 1967 में बी.एच.यू. वाराणसी विश्वविद्यालय के दर्शन शास्त्र के प्रो० टी.आर. मूर्ति की अध्यक्षता में प्रथम विजिटिंग कमेटी· विश्वविद्यालय अनुदान आयोग नई दिल्ली ने भेजी थी। क्योंकि विश्वविद्यालय की मान्यता प्राप्त करते समय यह कहा गया था कि यह मान्यता अस्थाई रूप में 3 वर्ष के लिए दी गई है पुनः विजिटिंग कमेटी आयेगी और उसकी रिपोर्ट पर स्थायी मान्यता प्राप्त की जा सकेगी। मैं डॉ० जयदेव वेदालंकार उस समय दर्शन शास्त्र में एम.ए. का छात्र होने के रूप में छात्र प्रतिनिधि की स्थिति में कुछ मांगे लेकर उस कमेटी के समक्ष प्रस्तुत हुआ था यहाँ कुछ त्रुटियाँ होने पर भी उस विजिटिंग कमेटी ने विश्वविद्यालय अनुदान आयोग नई दिल्ली को भेजी गई अपनी रिपोर्ट में स्थाई मान्यता प्राप्त करने की संस्तुति प्रदान की थी इस विजिटिंग कमेटी के समय आचार्य प्रियव्रत वेदवाचस्पति कुलपति पद पर कार्य कर रहे थे।

विज्ञान महाविद्यालय को विश्वविद्यालय में समाहित करने के पश्चात् भी विज्ञान महाविद्यामय में बी-एस.सी. तक का ही अध्ययन-अध्यापन होता रहा। इधर विश्वविद्यालय की स्नातकोत्तर कक्षाओं में अध्ययन करने के लिए उतनी बड़ी संख्या में छात्र प्रवेश लेने के लिए नहीं आए जितनी संख्या की आशा की गई थी, क्योंकि उस समय विद्यालंकार और वेदालंकार में कम ही छात्र होते थे और लगभग आठ या दस स्नातक ही प्रतिवर्ष स्नातक हो रहे थे इसलिए शिक्षा पटल द्वारा यह पारित किया गया कि प्राच्य विद्या के विषयों में भी अन्य समान्य विश्वविद्यालयों से बी.ए. परीक्षा उत्तीर्ण स्नातक भी गुरुकुल विश्वविद्यालय की स्नातकोत्तर कक्षाओं में प्रवेश ले सकते हैं यह स्वीकृति वेद संस्कृत सहित सभी विषयों के लिए प्रदान की गई थी। इसके पश्चात् भी छात्रों की संख्या इतनी अधिक नहीं बढ़ सकी जिसका कि यहाँ उल्लेख किया जा सके।

गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय के नये संविधान के अनुसार कुलपति की नियुक्ति 3 वर्ष के कार्यकाल के लिए होती थी यद्यपि प्रो० सत्यव्रत सिद्धान्तालंकार ने गुरुकुल को विश्वविद्यालय के रूप में मान्यता प्रदान करवाने के लिए रात-दिन अथक परिश्रम किया था और उन्होंने यह भी प्रयास किया था कि गुरुकुल की मान्यताए एवं परम्परायें अक्षुण्ण रूप में जीवित रहें। यह सब कुछ होने पर भी सन् 1966 में मान्य सत्यव्रत जी को कुलपति बने 3 वर्ष व्यतीत हो चुके थे उनके स्थान पर भी महेन्द्र प्रताप शास्त्री की कुलपति पद पर नियुक्ति विवादास्पद रूप में की गई उस समय विश्वविद्यालय के परिद्रष्टा के तथा कुलाधिपति के मध्य विवाद हो जाने के कारण एक पक्ष ने श्री महेन्द्र प्रताप शास्त्री को तथा दूसरे पक्ष ने प्रो० सत्यकेतु विद्यालंकार को कुलपति बनाने का प्रयास किया। इस तरह दो कुलपतियों की नियुक्ति का परिणाम यह हुआ कि शिक्षा मंत्रालय भारत सरकार ने अनुदान देना बन्द कर दिया उन्हीं दिनों प्रो० शेर सिंह जो इस समय विश्वविद्यालय के परिद्रष्टा हैं (भारत सरकार में राज्य शिक्षा मंत्री थे, मार्च में अनुदान के विवाद को लेकर उस पर निर्णय करने की स्थिति उनके सम्मुख आयी तो उन्होंने विश्वविद्यालय के

अधिकारियों और सभा के अधिकारियों से त्याग पत्र लेकर इस विवाद को सुलझा दिया। इस तरह महेन्द्र प्रताप शास्त्री केवल (1966) में ही कुलपति पद से मुक्त हो गए आचार्य, प्रियव्रत वेदवाचस्पति को कार्यकारी कुलपति के रूप में मनोनीत किया गया। आचार्य प्रियव्रत वेदवाचस्पति की विधिवत् नियुक्ति 1968 में की गई और 1971 तक कुलपति पद पर प्रतिष्ठित रहे उस समय अंग्रेजी विभाग के प्राध्यापक डॉ॰ गंगाराम गर्ग कुलसचिव पद पर कार्य कर रहे थे।

नये वेतनमान विषयक विवाद

1970 में गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय के प्राध्यापक वर्ग को यह जानकर आश्चर्य हुआ कि विश्वविद्यालय अनुदान आयोग नई दिल्ली ने प्राध्यापकों के लिए नए वेतनमान 1966 से ही प्रदान किए थे। आचार्य प्रियव्रत वेदवाचस्पति को प्राध्यापकों द्वारा यह अवगत कराया गया तो फाइल में जीओ (आदेश) को देखकर उनको भी आश्चर्य हुआ उन्होंने उसी समय में वेतनमान लागू करने की बात तुरन्त मान ली थी। परन्तु वेतनमान लागू होने में बहुत विलम्ब हो चुका था इसलिए प्राध्यापकों में अत्यधिक रोष था डॉ॰ निगम शर्मा के नेतृत्व में इस मांग को लेकर कि हमारे वेतनमान 1966 से ही दिए जाएं, आमरण अनशन और हड़ताल प्रारम्भ हो गई शिक्षामंत्रालय भारत सरकार द्वारा प्राध्यापकों का वेतनमान 1966 से लागू करने की बात मान ली गई, उस समय तक आचार्य प्रियव्रत वेदवाचस्पति के विरूद्ध यह वातारण बन चुका था उस समय आर्य प्रतिनिधि सभा के साथ-साथ यहाँ के स्नातकों की भी महत्त्वपूर्ण भूमिका रहती थी। उस समय स्नातकों के नेता डॉ॰ हरिप्रकाश आयुर्वेदालंकार थे। आचार्य प्रियव्रत जी का कार्यकाल कुलपति के रूप में 1971 में समाप्त हो गया। पं॰ रघुवीर सिंह शास्त्री जो संस्कृत और वेद शास्त्रों के प्रकाण्ड पंडित थे, उनको कुलपति पद पर प्रतिष्ठित किया गया। यह लेखक को अच्छी तरह स्मरण है कि वेद मंदिर में निवर्तमान कुलपति आंचार्य प्रियव्रत का विदाई समारोह और नए कुलपति पं॰ रघुवीर सिंह शास्त्री का स्वागत समारोह था। उस समय आचार्य प्रियव्रत वेदवाचस्पति ने अपने हृदय की पीड़ा को अभिव्यक्त करते हुए कहा था कि "मेरे कार्यकाल के अन्तिम चरण में जो मेरे साथ यहाँ दुर्वव्यवहार हुआ है वह दुर्व्यवहार मेरे किसी शत्रु के साथ भी न हो यह मैं ईश्वर से प्रार्थना करता हूँ।"

गुरुकुल विश्वविद्यालय के नए कुलपति पं॰ रघुवीर सिंह शास्त्री

जैसा कि हम उल्लेख कर चुके हैं कि पं॰ रघुवीर सिंह शास्त्री संस्कृत भाषा और वेद शास्त्र के प्रकाण्ड विद्वान् थे। आर्य समाज एवं आर्यप्रतिनिधि सभा में उनकी उच्च स्थिति थी। वे धारा प्रवाह संस्कृत में भाषण देने की क्षमता रखते थे तथा भाषण देते थे। वे एक नीति कुशल सूझ-बूझ रखने वाले व्यक्ति थे। वे आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के मंत्री रह चुके थे। यहाँ पर कुलपति के रूप में आने से पूर्व एम. पी. रह चुके थे। उनके कार्यकाल में विश्वविद्यालय ने पर्याप्त उन्नति भी की थी। उनके कार्य काल में ही विश्वविद्यालय अनुदान आयोग ने महाविद्यालय के भवनों के निर्माण के लिए पहली बार बड़ा अनुदान प्रदान किया था। इस अनुदान से ही 25 बड़े कक्ष निर्मित किए गए थे। पं॰ रघुवीर सिंह शास्त्री के कार्यकाल को सभाओं के विवाद होने पर भी एक संतोषजनक कार्यकाल कहा जा सकता है क्योंकि उन्हीं के कार्यकाल में श्रीमती इंदिरा गाँधी विश्वविद्यालय के दीक्षान्त समारोह में दीक्षान्त भाषण देने आयी थी। श्रीमती इंदिरा गाँधी के दीक्षान्त भाषण का सार एक अन्य अध्याय में प्रस्तुत किया गया है। उनके दीक्षान्त स्थल पर लोगों की इतनी भीड़ उमड़ आयी थी कि स्थानीय प्रशासन को संभालना कठिन हो गया था। इस ग्रन्थ का लेखक (डॉ॰ जयदेव वेदालंकार) दीक्षान्त स्थल का विश्वविद्यालय प्रशासन की ओर से तथा सरकार के मध्य में समन्वयक था। श्री रघुवीर सिंह शास्त्री के कार्यकाल को संतोषजनक एवं उत्तम व्यवस्था के

रूप में याद किया जा सकता है। आर्यप्रतिनिधि सभा पंजाब के वार्षिक अधिवेशन पर एक वर्ष के लिए प्रतिवर्ष चुनाव होता था। हरियाणा प्रदेश में गुरुकुलों की स्थापना के पश्चात् वहाँ आर्य समाज का प्रचार एवं प्रसारं बढ़ गया था। इसलिए हरियाणा प्रदेश जो कि ग्रामों के रूप में बसता है वहाँ धीरे-धीरे आर्य समाज के सदस्यों की पंजाब की अपेक्षा अधिक संख्या बैठ गई। इसका परिणाम यह हुआ कि आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब का गठन हुआ था, उसका सञ्चालन प्राय: पंजाब के आर्यप्रतिनिधि सभा के प्रतिनिधियों द्वारा ही हुआ था। गुरुकुल कांगड़ी की व्यवस्था भी पंजाब के आर्य प्रतिनिधियों द्वारा ही संचालित होती थी। यद्यपि पंजाब और हरियाणा दोनों के आर्य प्रतिनिधियों की आर्य समाज में एक जैसी आस्था थी, परन्तु दोनों प्रदेशों के रहन-सहन, बोल चाल एवं व्यवहार में बहुत अधिक अन्तर था। संभवत: यह भी कारण रहा होगा कि पंजाब के आर्य प्रतिनिधि ही नेतृत्व करते रहे थे। हरियाणा के आर्य प्रतिनिधियों के बढ़ते हुए वर्चस्व को देखकर उनको अच्छा न लगा हो यह स्वाभाविक ही था। धीरे-धीरे यह मतभेद दो दलों के रूप में विभाजित हो गया। उस समय पंजाब हरियाणा और दिल्ली तक पंजाब आर्य प्रतिनिधि सभा का ही आधिपत्य था। वहाँ कि मुकद्दमें बाजी तथा विवाद की विस्तृत चर्चा करना यहाँ संभव नहीं है परन्तु उन सब विवादों का अन्तिम परिणाम एवं प्रभाव गुरुकुल कांगड़ी पर बहुत अधिक हुआ। जो गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय की अबाध गति से उन्नति हो रही थी, उसमें व्यवधान उत्पन्न होने लगा।

गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय में छात्रों की संख्या का प्रश्न हमेशा बना रहा है। अन्य कारणों के साथ छात्रों की उस समय हरिद्वार में संख्या लगभग 50 या 60 हजार थी, इसमें अधिकतम सामान्य व्यवसायी और एक बहुत बड़ा भाग साधु-सन्तों के आश्रमों का रहा है। अत: यहाँ आबादी अधिक नही थी। बनारस, जालन्धर दिल्ली लखनऊ और मेरठ आदि बड़े-बड़े नगरों में बहुत बड़ी जन संख्या होने के कारण वहाँ छात्रों की संख्या बहुत अधिक थी वैसे भी स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात् स्थान स्थान पर महाविद्यालय स्थापित हो गये थे। जिसके कारण महाविद्यालयों में शिक्षा प्राप्त करने के लिए छात्रों को दूर नहीं जाना पड़ता था। अपने नगरों से दूर वहाँ छात्र जाते थे जो संस्थाएं विशेष आकर्षण और विशेषताओं के लिए प्रसिद्ध थी। गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय में ऐसे कोई नए विषय का आकर्षण नहीं था। इसलिए छात्रों की संख्या बहुत अधिक नहीं बढ़ पायी थी। इसलिए यह विचार किया गया कि महाविद्यालय में अध्ययन प्रात: काल या सांय काल किया जाये। इस विचार को जब क्रियान्वित किया गया तो कुछ छात्रों की संख्या बढ़ी क्योंकि यहाँ ऐसे बहुत कर्मचारी थे जो रेलवे, बैंक तथा अन्य सरकारी कार्यालयों में काम करते थे और उच्च अध्ययन भी करना चाहते थे। कार्यालय के समय से पहले या उसके पश्चात् अध्ययन की व्यवस्था होने पर सरकारी विभागों तथा अन्य कर्मचारी यहाँ शिक्षा के लिए प्रवेश लेने लगे। इस प्रकार स्नातकोत्तर कक्षाओं में 200 से अधिक छात्रों की संख्या हो गयी थी। स्नातकोत्तर महाविद्यालय में यह संख्या संतोषजनक मानी जा सकती थी। क्योंकि यहाँ पर केवल 8 विषयों में ही एम्.ए. (स्नातकोत्तर) की व्यवस्था थी। संस्कृत और वेद जैसे ऐसे प्राचीन विषय थे जो बहुत अधिक छात्रों को आकर्षित नहीं कर पाते थे। विज्ञान की शिक्षा का प्रबन्ध केवल बी.एससी तक ही था, विज्ञान के किसी भी विषय में एम.एस.सी एवं स्नातकोत्तर अध्ययन की व्यवस्था की स्वीकृति विश्वविद्यालय अनुदान आयोग द्वारा प्राप्त नहीं हुई थी। हरिद्वार में अन्यत्र कहीं स्नातक स्तर तक विज्ञान के अध्ययन की व्यवस्था नहीं थी। इसलिए विज्ञान महाविद्यालय में छात्रों की संख्या संतोषजनक रही थी। गुरुकुल कांगड़ी महाविद्यालय में समाज शास्त्र राजनीति शास्त्र, अर्थशास्त्र, भूगोल और आर्ट्स विषयों की स्नातक स्तर तक की व्यवस्था गुरुकुल में नहीं हो पायी थी। इसलिए गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय के प्रबन्ध तन्त्र पर दो प्रकार के दबाव पड़ने लगे। जैसा कि हम लिख चुके हैं कि गुरुकुल कांगड़ी के अध्यापकों में इस प्रकार के प्राध्यापकों की भी नियुक्ति

हो चुकी थी जो विचार धारा से गुरुकुल पद्धति के पक्षधर नहीं थे इसलिए छात्रों की सख्या बढ़ाने के लिए आधुनिक विषयों को प्रारम्भ किया जाय इसके साथ-साथ विद्यालंकार, वेदालंकार की डिग्री देना भी बन्द किया जाए उसके स्थान पर स्नातक स्तर की उपाधि बी.ए. की जाय। उसमें गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय में शिक्षक संघ की स्थापना भी हो चुकी थी इसलिए यह विचार धारा सबल होती चली गई कि गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय में बी.ए. की कक्षाएँ प्रारम्भ की जाय। इस विचार धारा के साथ साथ एक दूसरी विचार धारा भी जोर पकड़ने लगी कि इस विश्वविद्यालय में सह शिक्षा प्रारम्भ की जाय। यद्यपित उस समय गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय में अपनी स्थिति को देखते हुए विश्वविद्यालय में छात्रों को संख्या बढ़ाने के लिए कई सुविधाएँ पहले से ही प्रदान की गई थी। जैसे विद्या विनोद में प्रवेश के लिए विद्याधिकारी उत्तीर्ण करना आवश्यक नही था। कोई भी छात्र जिसके पास संस्कृत और इंगलिश भाषा विषय हो विद्या-विनोद में प्रवेश ले सकता था। इसी प्रकार अलंकार, विद्यालंकार और वेदालंकार में प्रवेश लेने के लिए विद्या विनोद उत्तीर्ण क़राना आवश्यक नहीं रह गया था अपितु किसी भी बोर्ड से आवश्यक विषयों के साथ इन्टर मीडिएट उत्तीर्ण करने पर विद्यालंकार और वेदालंकार में प्रवेश लेने की अनुमति प्रदान कर दी गई थी। इसलिए यह सब सुविधा होने पर भी गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय क्योंकि डिम्ड टुबी विश्वविद्यालय था चार्टर विश्वविद्यालय नही था इसलिए आर्य समाजियों में अन्य व्यक्ति अपने बच्चों का प्रवेश दिलाने में हिचकिचाते थे। केवल आर्य समाजी ही अपने बच्चों को पढ़ाने के लिए भेजते थे। जैसाकि हम ऊपर जिक्र कर चुके हैं कि गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय की मूलभूत मान्यताओं को परिवर्तित करने के लिए यहाँ एक प्रकार से विरोधी स्वर उभरने लगे थे। शिक्षा पटल की बैठकों में कई बार उनके द्वारा यह प्रयास किया गया कि यहाँ पर बी.ए. क़क्षाएँ प्रारम्भ की जाय परन्तु यह वर्ग विशेष अपने इस प्रयत्न विशेष में सफल नहीं हो पाया था इसलिए एक दूसरी मांग जोर पकड़ने लग पड़ी थी कि गुरुकुल कांगड़ी में सह शिक्षा प्रारम्भ की जाय। इस समय के आर्यप्रतिनिधि सभा के अधिकारियों ने जोर देकर कहा कि चाहे इस संस्था को बन्द करना पड़े परन्तु गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय के मूल सिद्धान्तों के विरुद्ध यहाँ कोई व्यवस्था नहीं की जा सकती है इसलिए समय समय पर उभरने वाले विरोधी स्वर दबते चले गये।

जब कुछ विषयों में एम.ए. की कक्षाओं में छात्रों की संख्या सन्तोष जनक हो गई थी तो उस समय विद्यालंकार, वेदालंकार के छात्रों की संख्या एम.ए. की तुलना में बहुत कम हो गई थी। इसलिए गुरुकुल के प्रबन्धकों को यह चिन्ता होनी स्वाभाविक थी कि छात्र संख्या बढ़ाने के क्या उपाय किए जाएँ।

विश्वविद्यालय अनुदान आयोग की समिति का आगमन

विश्वविद्यालय अनुदान आयोग द्वारा समय-समय पर समस्त विश्वविद्यालय एवं शिक्षण संस्थाओं का लेखा जोखा तथा कार्य कलाप एवं गतिविधि का निरीक्षण कियां जाता है इसलिए 1971 में विश्वविद्यालय अनुदान आयोग द्वारा एक समिति गठित की गई थी जो विश्वविद्यालय के कार्यकलापों की जाँच करेंगी। इस प्रकार की निरीक्षण समितियाँ विश्वविद्यालय अनुदान आयोग समय-समय पर समस्त विश्वविद्यालयों के लिए प्रगति के अवलोकनार्थ नियुक्त किया करता है। इस उक्त समिति ने अपनी निरीक्षण रिपोर्ट 1972 में विश्वविद्यालय अनुदान आयोग को प्रस्तुत कर दी थी। इस रिपोर्ट में गुरुकुल के कार्य कलाप एवं प्रगति के विषय में संतोष नहीं प्रकट किया गया था अपितु विश्वविद्यालय के प्रशासन को सावधान करते हुए कई सुझाव भी दिए थे और यह आशा भी व्यक्त की गई थी कि गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय का प्रशासन एवं अधिकारीगण इन सुझावों को क्रियान्वित करने के लिए प्रयत्न करेंगे। उस समय श्री रघुवीर सिंह जी शास्त्री गुरुकुल के कुलपति थे। उन्होंने रिपोर्ट के विषय में विश्वविद्यालय अनुदान आयोग को लिखा था कि "यह सत्य है कि पर्याप्त समय से जो विशेष परिस्थितियाँ विश्वविद्यालय में रही है, उनके कारण यहाँ

उस ढंग से कार्य नहीं होता रहा जैसा कि अपेक्षित था परन्तु एक जुलाई 1971 से जब मैंने विश्वविद्यालय का कार्यभार संभाला था, निरन्तर यह प्रयत्न किया जा रहा है कि यह विश्वविद्यालय अपने विलुप्त गौरव को पुनः प्राप्त कर ले। श्री शास्त्री जी से पूर्व आचार्य प्रियव्रत वेदवाचस्पति गुरुकुल के कुलपति थे। आर्य प्रतिनिधि सभा के आन्तरिक झगड़ों के कारण उन्हें अनेक प्रकार की कठिनाइयों का सामना करना पड़ा था, इसलिए विश्वविद्यालय की उस प्रकार की उन्नति नहीं हो पा रही थी जिस प्रकार की उन्नति अपेक्षित की जा रही थी। प्रशासन के सर्वोच्च सभा के अधिकारियों के मध्य चुनाव में जीत या पराजय का अन्तिम प्रभाव गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय की व्यवस्था पर, गुरुकुल को स्थापना काल से ही पड़ता रहा है, परन्तु इस समय विश्वविद्यालय का समस्त व्यय विश्वविद्यालय अनुदान आयोग एवं भारत सरकार वहन करती है इसलिए विजिटिंग कमेटी का विश्वविद्यालय की प्रगति के विषय में असन्तोष प्रकट करना विश्वविद्यालय के लिए एक गंभीर समस्या बन सकती थी। श्री रघुवीर सिंह शास्त्री के कार्य काल में सभा की आन्तरिक कलह पूर्ववत् जारी रही इसलिए उनके प्रगतिशील व्यक्तित्व से जो विश्वविद्यालय की उन्नति की अपेक्षा की जा रही थी वह प्रगति नहीं हो पायी थी। विश्वविद्यालय अनुदान आयोग द्वारा भेजी गई कमेटी की रिपोर्ट में असंतोष प्रकट करने के कारण गुरुकुल की प्रगति का पुनः निरीक्षण करने के उद्देश्य से 6 सितम्बर 1972 को आयोग ने एक अन्य कमेटी को गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय का निरीक्षण करने हेतु भेजा। जिनमें निम्नलिखित महानुभाव नियुक्त किए गए थे-मेरठ विश्वविद्यालय के वाइस चान्सलर श्री जे. एन. कपूर, बम्बई विश्वविद्यालय के प्रोफेसर श्री टी.जी. मेनकर और भारत सरकार के शिक्षा मन्त्रालय के निदेशक श्री आर.एस. चित्कारा। 13 नवम्बर 1973 को उक्त कमेटी सदस्यों ने आकर गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय के प्रत्येक कार्य कलाप एवं सभी महाविद्यालयों का सूक्ष्मता से अध्ययन किया और अपनी रिपोर्ट प्रस्तुत की थी उसका संक्षिप्त विवरण इस प्रकार है, गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय के वेद महाविद्यालय एवं कलामहाविद्यालय में विद्यार्थियों की कुल संख्या 91 है जिनमें 16 विद्यार्थी अलंकार (स्नातक स्तर) की कक्षाओं में और 75 विद्यार्थी स्नातकोत्तर (एम.ए.) की कक्षाओं में है। प्राध्यापक गण की संख्या 30 है। इस प्रकार तीन विद्यार्थियों के लिए एक अध्यापक है ऐसी संस्था के लिए जिसमें विश्वविद्यालय के स्तर का समस्त प्रबन्ध तन्त्र विद्यमान है, छात्रों की संख्या बहुत ही न्यून है। कमेटी ने अपनी रिपोर्ट में यह भी प्रस्तुत किया था कि गुरुकुल कांगड़ी को विश्वविद्यालय स्थिति की संस्था के रूप में जो मान्यता प्रदान की गई थी। उसका मुख्य कारण यह था कि वैदिक वांङ्मय तथा संस्कृत साहित्य के उच्च शोध में विशिष्टता प्राप्त करके इन विषयों में उच्च शोध साहित्य का निर्माण एवं रचना की जाय। विश्वविद्यालय का ध्यान इन्हीं विषयों की ओर केन्द्रित रहे परन्तु कमेटी इस निष्कर्ष पर पहुँची है कि इन विषयों में कोई विशेष कार्य नहीं हुआ। क्योंकि स्नातकोत्तर के स्तर के विद्यार्थियों में से केवल 6 छात्र वेद और चार विद्यार्थी संस्कृत साहित्य में है अन्य विद्यार्थी इन विषयों में हैं जिनके अध्ययन अध्यापन की अच्छी से अच्छी सुविधा अन्य विश्वविद्यालयों और महाविद्यालयों में पहले से ही उपलब्ध है इसलिए कमेटी ने यह संस्तुति की थी कि गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय को विश्वविद्यालय के रूप में रखने का कोई लाभ नहीं है अतः इसे किसी चार्टर विश्वविद्यालय के साथ महाविद्यालय के रूप में सम्बद्ध किया जा सकता है जो विश्वविद्यालय अनुदान आयोग द्वारा इस विश्वविद्यालय पर बहुत अधिक धन खर्च किया जा रहा है। यह बहुत कुछ खर्चा कम हो जायेगा। 7 अक्टूबर 1974 को आयोग ने अपनी कमेटी की रिपोर्ट पर विचार किया और 2 अक्टूबर को उसकी एक प्रति गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय को नोटिस के रूप में गुरुकुल कांगड़ी के कुलसचिव के पास प्रेषित कर दी गई और उसमें यह कहा गया कि दिसम्बर मास के अन्त तक विश्वविद्यालय अपना पक्ष एवं उस रिपोर्ट के उत्तर में अपना निवेदन विश्वविद्यालय अनुदान आयोग को भेज सकता है। जिस समय यह नोटिस के रूप में पत्र गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय में आया

उस समय डॉ॰ सत्यकेतु विद्यालंकार गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय के कुलपति नियुक्त किए जा चुके थे और श्री रघुवीर सिंह शास्त्री का कार्यकाल समाप्त हो चुका था।

मान्यता समाप्त होने का भय

गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय में उक्त कमेटी की रिपोर्ट पर विश्वविद्यालय आयोग द्वारा नोटिस के रूप में पत्र भेजने पर गुरुकुल परिसर में हड़कम्प मच गया। विश्वविद्यालय परिसर में सन्नाटा सा छा गया डा॰ सत्यकेतु विद्यालंकार स्तब्ध रह गये। विश्वविद्यालय के परिसर में यह बात आग की तरह तीव्र गति से फैल गयी कि विश्वविद्यालय अनुदान आयोग द्वारा गुरुकुल कांगड़ी को विश्वविद्यालय की मान्यता समाप्त की जा रही है शिक्षक और शिक्षकेतर कर्मचारी परस्पर एकत्रित होकर चिन्तित हो गए और यह चिन्तन मन्थन प्रारम्भ हो गया कि विश्वविद्यालय को टूटने से कैसे बचाया जाये। समस्त शिक्षक और शिक्षकेतर कर्मचारी विश्वविद्यालय के प्रशासन से मिले और निवेदन किया कि हमें विश्वविद्यालय अनुदान आयोग एवं शिक्षा मन्त्रालय भारत सरकार में अपना मत स्थापित करने के लिए जाने की अनुमति प्रदान की जाये। डॉ॰ जयदेव वेदालंकार के (स्वयं लेखक) संयोजकत्व में 8 प्राध्यापक गण का एक दल विश्वविद्यालय की ओर से अपना पक्ष प्रस्तुत करने के लिए दिल्ली भेजा गया इस दल में प्रो॰ वी.पी. शुक्ल (विज्ञान) प्रो॰ सदाशिव भगत (अंग्रेजी विभाग), प्रो॰ चन्द्रशेखर त्रिवेदी (मनोविज्ञान विभाग) डॉ॰ जबर सिंह सेंगर (इतिहास विभाग, और डॉ॰ निगम शर्मा (संस्कृत विभाग) सम्मिलित थे। देव योग से उन्हीं दिनों विश्वविद्यालय अनुदान आयोग की बैठक भी होने जा रही थी जिसमें विश्वविद्यालय के भविष्य के बारे में विचार किया जाना था प्राध्यापक गण का यह दल दिल्ली में विश्वविद्यालय अनुदान आयोग के अनेक सदस्यों से मिला। आय़ोग के सचिव शिक्षा मंत्री नुरूल हसन और तत्कालीन गृहमंत्री कमलापति त्रिपाठी से भी मिला। विश्वविद्यालय के दल के संयोजक डॉ॰ जयदेव वेदालंकार ने अपना तर्क प्रस्तुत करते हुए कहा कि जिस समय विश्वविद्यालय को मान्यता दी गयी थी उस समय केवल विश्वविद्यालय के डिग्री कक्षाओं में आठ विद्यार्थी अध्ययन करते थे तत्कालीन विश्वविद्यालय अनुदान आयोग के अध्यक्ष डॉ॰ कोठारी ने यह स्पष्ट रूप से कहा था कि गुरुकुल कांगड़ी में छात्रों की संख्या एवं संकायों के भवनों की संख्या एक महाविद्यालय के छात्र संख्या एवं भवनों की संख्या से बहुत कम है। मैं केवल इस संस्था को इसलिए मान्यता देने की संस्तुति कर रहा हूँ कि इस संस्था ने प्राचीनतम शिक्षा प्रणाली को पुनर्जीवित किया है इसलिए इसे पुरातत्वीय सामग्री मानकर इसका संरक्षण करने के लिए विश्वविद्यालय की मान्यता प्रदान की जा रही है क्या यह संस्था पुरातत्वीय सामग्री नहीं रही। इस दल ने यह भी तर्क दिया कि विश्वविद्यालय अनुदान आयोग द्वारा समय-समय पर भेजी जाने वाली विजिटिंग कमेटी के सदस्यों के कुछ निर्धारित मानक नहीं है अपितु उस समय के जो ऑफिसरों की अपनी मान्यताएं है उनका प्रभाव कमेटियों की रिपोर्टों में स्पष्ट देखा जा सकता है। 1971 की विजिटिंग कमेटी की रिपोर्ट में यह कहा गया था कि यह संस्था जिसका विशिष्ट उद्देश्य है, यह उद्देश्य के प्रति संतोषजनक कार्य नहीं कर रही है। 1973 की कमेटी ने छात्रों की संख्या की बात प्रारम्भ कर दी जबकि विश्वविद्यालय की छात्र संख्या समस्त छात्रों के पंजीकृत संख्यानुसार मानना चाहिए यहाँ केवल संकाय विशेष के छात्रों की संख्या को ही मानक बनाया गया है यह सर्व विदित है कि प्राच्य विद्याओं के विषयों में छात्रों की संख्या प्रायः न्यून ही रहती है। हमारे विश्वविद्यालय के वर्तमान कुलपति डॉ॰ सत्यकेतु विद्यालंकार ने पेरिस से प्राचीन इतिहास में डी॰ लिट की उपाधि प्राप्त की है। उस विश्वविद्यालय के प्राच्य विद्याओं के विशिष्ट विद्वान् आठ वर्ष के उक्त विषय के छात्रों की प्रतीक्षा कर रहे थे इसलिए प्राच्य विद्याओं के विषयों के छात्रों की संख्या को लेकर आप विश्वविद्यालय की मान्यता समाप्त नहीं कर सकते हैं। क्योंकि जब आपने विश्वविद्यालय की मान्यता दी थी उस. समय

छात्रों की संख्या नगण्य थी। इस दल ने यह भी तर्क दिया कि विजिटिंग कमेटी की रिपोर्ट विश्वविद्यालय अनुदान आयोग के विपरीत है, क्योंकि विश्वविद्यालय आयोग में विश्वविद्यालय के मान्यता के जो मानक माने गए हैं उनमें एक प्रकार की कोई शर्त नहीं रखी गई है अतः यह रिपोर्ट राजनीति से प्रेरित प्रतीत होती है।

जब यह प्राध्यापकों का दल तात्कालीन गृहमंत्री कमलापति त्रिपाठी को मिला तो विश्वविद्यालय अनुदान आयोग की यह बैठक उसी दिन होने जा रही थी। यह दल प्रातः काल 7 बजे गृहमंत्री महोदय से समय लेकर मिला अन्य तर्कों के साथ दल ने गृहमंत्री महोदय को यह भी समझाया कि शिक्षा मन्त्रालय का सम्पूर्ण कार्य राज्य शिक्षा मंत्री श्री नुरूल हसन देख रहे हैं। यदि इस समय गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय की मान्यता समाप्त की जाती है तो भारत में समस्त आर्य समाजों की संख्या लगभग 50 लाख तक है यदि गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय की मान्यता समाप्त की जाती है तो भारत में साम्प्रदायिक दगें भड़क उ़ठेगें। गुरुकुल कांगड़ी के प्रति हिन्दू मात्र आस्था रखता हैं इसलिए आप श्री नुरूल हसन को यह समझाए कि शिक्षा मन्त्रालय का प्रतिनिधि गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय को मान्यता समाप्त न होने दें। तर्कों से प्रभावित होकर श्री कमला पति त्रिपाठी ने श्री नुरूल हसन से टेलीफोन पर लम्बी बात की थी।

उस समय विश्वविद्यालय में आचार्य पद पर डॉ॰ रामनाथ वेदालंकार जो वेदों एवं संस्कृत साहित्य में प्रकाण्ड विद्वान् माने जाते है। शिक्षक एवं शिक्षकेतर कर्मचारियों को दिल्ली भेजने में आचार्य ने विशेष रूप से सहयोग प्रदान किया। इस प्रकार शिक्षक कर्मचारी और विश्वविद्यालय के अधिकारी वर्ग के प्रयास से विश्वविद्यालय की मान्यता समाप्त होने से बच गयी।

डॉ॰ सत्यकेतु विद्यालंकार इतिहास के क्षेत्र में एक विशेष ख्याति प्राप्त लेखक एवं विद्वान् माने जाते थे। परन्तु आर्य समाज के समस्त विवादों और आर्यप्रतिनिधि सभा के अन्दर के कार्य कलापों से वे बहुत अधिक परिचित नहीं थे इसलिए प्रशासक की दृष्टि से उनकों प्रशासक के रूप में नहीं माना जाता है। इसलिए उनके समय में विद्यालंकार एवं वेदालंकार उपाधियों को समाप्त करकें उनके स्थान पर बी.ए. की डिग्री दी जाय। इस मांग का जोर बढ़ने लगा। गुरुकुल में सह-शिक्षा प्रारम्भ की जाय यह मांग भी जोर पकड़ने लगी।

डॉ॰ सत्यकेतु विद्यालंकार कुलपति पद पर नियुक्त हुए, परिस्थितियों के विवरण प्रस्तुत करना यहाँ आवश्यक प्रतीत होता है। दिसम्बर 1973 में आर्य प्रतिनिधि सभा के पदाधिकारियों का चुनाव हाई कोर्ट चंडीगढ़ के तत्वावधान में सम्पन्न हुआ था यहाँ पर भी उल्लेख करना उचित होगा कि हरियाणा अधिकतर ग्रामों के रूप में बसता है इसलिए हरियाणा के प्रायः समस्त ग्रामों में आर्यसमाजी हैं पंजाब के ग्रामों से धीरे-धीरे आर्य समाज के प्रचार के अभाव में पंजाब कें ग्रामों में आर्यसमाजों की संख्या बहुत कम होती चली गई। पंजाब के आर्य समाज धारे-धीरे शहरों तक ही सीमित हो गये थे इसलिए हरियाणा के आर्य प्रतिनिधि बहुत अधिक संख्या में हो जाते थे। पंजाब प्रदेश के जो आर्य समाज के नेता सभा के अधिकारी बनते आ रहे थे, उनके स्थान पर हरियाणा के आर्य नेता आर्य प्रतिनिधि सभा के अधिकारी बनने लगे। इस तरह परस्पर पंजाब में पाक सभा अधिवेशन के पश्चात् आर्य प्रतिनिधि सभा में अन्तर कलह एवं मुकदमें बाजी, प्रतिनिधियों की संख्या को लेकर प्रारम्भ हो गई थी अन्ततः विवाद हाईकोर्ट तक पहुंच गया। अन्ततः हाईकोर्ट चंडीगढ़ ने अपनी देख-रेख में पंजाब प्रतिनिधि सभा का चुनाव सम्पन्न कराया। पंजाब प्रतिनिधि सभा के इस चुनाव में स्वामी इन्द्रवेश सभा के प्रधान चुन लिए गये थे। स्वामी इन्द्रवेश के मुकाबले में आर्य समाज के प्रसिद्ध नेता स्वामी रामेश्वरानन्द जी थे। पंजाब प्रदेश के आर्य समाज के नेताओं ने अपना प्रत्याशी न खड़ा करके स्वामी इन्द्रवेश जी (जो हरियाणा के ही थे) का समर्थन किया। अन्ततः स्वामी

इन्द्रवेश की विजय हुई। सभा के अन्य अधिकारियों को मनोनीत करने का अधिकार स्वामी इन्द्रवेश जी को मिल गया था। उन्होंने पंजाब प्रदेश के आर्य समाज के प्रसिद्ध नेता श्री वीरेन्द्र जी को मंत्री पद पर नियुक्त किया। इस प्रकार अनेक पद और अंतरंग सभा में पंजाब के प्रतिनिधियों का बहुमत हो गया। इसी प्रकार विद्या सभा में भी पंजाब के व्यक्तियें का वर्चस्व स्थापित हो गया था। अतः परिणामतः यह कहा जा सकता है कि पंजाब आर्य प्रतिनिधि सभा पर जो वर्चस्व कई वर्षों से हरियाणा के आर्य नेताओं का था, वह वर्चस्व समाप्त हो गया। स्वामी इन्द्रवेश जी गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय के संविधान के अनुसार, आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के प्रधान होने के नाते कुलाधिपति भी बन गए। इस प्रकार नई सीनेट भी बनी और कुलपति श्री रघुवीर सिंह शास्त्री का कुलपति का कार्य भी समाप्त हो गया था। इन उपर्युक्त परिस्थितियों में डॉ॰ सत्यकेतु विद्यालंकार विश्वविद्यालय के निर्धारित नियमों के अनुसार कुलपति पद पर 2 जुलाई 1974 को आसीन हुए।

डॉ॰ सत्यकेतु के कुलपति बनने के पश्चात् उनके सामने कई उग्र समस्याएं आकर खड़ी हो गई। जैसा कि हम उल्लेख कर चुके हैं विश्वविद्यालय अनुदान आयोग द्वारा जो कमेटी गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय के निरीक्षण के लिए नियुक्त की थी, उसकी रिपोर्ट 3 नवम्बर 1973 को विश्वविद्यालय अनुदान आयोग नई दिल्ली को प्रस्तुत कर दी थी, जिसका संक्षिप्त विवरण हम कर ही चुके हैं। उस कमेटी की रिपोर्ट का उत्तर देना शेष था। इस रिपोर्ट से गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय के शिक्षक और शिक्षकेतर कर्मचारी भयभीत थे ही, शिक्षक एवं कर्मचारी अपने प्रयास में लगे हुए थे जिसका उल्लेख किया जा चुका है। ऐसे विकट समय में मानो डॉ॰ सत्यकेतु विद्यालंकार की यह अग्नि परीक्षा थी। मान्य कुलपति डॉ॰ सत्येकतु जी इसमें सफल भी हुए वे अनेक बार विश्वविद्यालय अनुदान आयोग नई दिल्ली के अध्यक्ष और शिक्षा मन्त्रालय के अनेक अधिकारियों से मिले। उन्होंने जो रिपोर्ट का उत्तर विश्वविद्यालय के प्राध्यापकों तथा अन्य गणमान्य स्नातकों के सहयोग से तैयार कराया थाा उस उत्तर को प्रतिवेदन के रूप में विश्वविद्यालय अनुदान आयोग की प्रस्तुत किया। मान्य कुलपति डॉ॰ विद्यालंकार ने इस प्रतिवेदन के साथ विश्वविद्यालय के लिए एक विस्तृत योजना भी तैयार की उस योजना में यह निवेदन किया गया था कि गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय के संस्कृत, वेद-शास्त्र एवं भारतीय ज्ञान के अध्ययन, अध्यापन का शोध केन्द्र बनाया जाय उस इण्डोलॉजी प्राच्च विद्या उच्च शोध केन्द्र में विविध प्राच्य विषयों को लेकर के दर्जनों अन्वेषण वेता अनेकों वर्ष तक गम्भीर शोध करके उच्च शोध ग्रन्थों का सृजन करें। उनकी इस योजना को पर्याप्त प्रतिष्ठा मिली। इन सब प्रयासों का यह परिणाम हुआ कि विश्वविद्यालय अनुदान आयोग ने यह निर्णय लिया कि विश्वविद्यालय की मान्यता को समाप्त नहीं किया। प्रस्ताव में यह कहा गया कि गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय को सुव्यवस्थित ढंग से विकसित होने के लिए अवसर प्रदान किया जाय।

मान्य कुलपति जी के समक्ष दूसरी समस्या यह उभर करके आयी कि पंजाब आर्य प्रतिनिधि सभा के दो दलों का कुप्रभाव अन्ततः गुरुकुल कांगड़ी विश्व विद्यालय के कर्मचारियों पर भी पड़ा था, इसलिए पंजाब आर्य प्रतिनिधि सभा पर पंजाब प्रदेश के आर्य नेताओं का वर्चस्व बढ़ जाने के कारण कुछ सभा के अधिकारियों की तरफ से यह विचार प्रस्तुत किया जाने लगा कि जो कर्मचारी हरियाणा वर्ग के माने जाते है उनकी सेवाएं समाप्त कर दी जाय उस समय के समाचार पत्रों में लगभग 45 कर्मचारियों की एक लिस्ट प्रकाशित भी हुई थी जिनमें कितने ऐसे कर्मचारियों के नाम भी थे जिनमें कुछ कर्मचारी पंजाब के तथा अन्य कर्मचारी बंगलादि अन्य प्रदेशों के थे। इसमें यह प्रतीत होता है कि सभा की दलबन्दी के कारण यहाँ कर्मचारियों की भी ढलबन्दी हो गई थी। मान्य कुलपति डॉ॰ सत्यकेतु विद्यालंकार के समक्ष यह विचार प्रस्तुत किया गया तो उन्होंने कहा कि मैं किसी भी कर्मचारी को सभा की दल बन्दी के कारण सेवा मुक्त

नहीं कर सकता हूँ। हाँ यदि कोई कर्मचारी विश्वविद्यालय के प्रशासन के आदेशों की अवहेलना करता हैं और बार-बार अनुशासन हीनता करता है तो उस पर अनुशासनात्मक कार्यवाही की जायेंगी। मान्य कुलपति के इस आदेश एवं आचरण में शिक्षक एवं शिक्षकेतर कर्मचारियों में उनका कद एवं उनकी प्रतिष्ठा बहुत अधिक बढ़ गई थी। वास्तव में उस समय में विश्वविद्यालय के प्रशासन तन्त्र पर स्नातकों का एक वर्ग विशेष रूप से लगभग हावी सा हो गया था। परन्तु डॉ॰ सत्यकेतु विद्यालंकार अपने निश्चय पर अडिग रहे और किसी भी कर्मचारी की सेवा समाप्त नही की। इस विकट परिस्थिति में डॉ॰ सत्यकेतु विद्यालंकार विश्वविद्यालय के आन्तरिक प्रबन्ध को सुव्यवस्थित करने में पूर्ण रूपेण सफल रहे। इसलिए उनको विश्वविद्यालय की समस्त प्रबन्ध समितियों में प्राध्यापकों का पूर्ण सहयोग प्राप्त हुआ। उस समय की कार्य परिषद् में डॉ॰ नारायण शर्मा और डॉ॰ जयदेव वेदालंकार प्राध्यापक प्रतिनिधि के रूप में मान्य कुलपति डॉ॰ सत्यकेतु विद्यालंकार का कार्य परिषद् में पूर्ण समर्थन करते थे। सभा के पदाधिकारियों को उन पर हावी नहीं होने देते थे और दोनों महानुभावों में मान्य कुलपति को आश्वासन दिया कि समस्त शिक्षकगण आपके साथ हैं आप न्याय के पथ से विचलित न हो।

कुलपति महोदय की इन सफलताओं के पश्चात् भी गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय की आन्तरिक समस्याओं का भी अन्त नहीं हुआ था। एक तीसरी समस्या आकर के उनके सम्मुख खड़ी हो गई। आयुर्वेद महाविद्यालय की समस्या उस समय गुरुकुल के दो विभाग थे। एक विभाग उच्च शिक्षा विभाग जिनका वेतनमान सरकार द्वारा दिया जाता था। यह विभाग विश्वविद्यालय का विभाग है, इसके अतिरिक्त विद्यालय विभाग, आयुर्वेद महाविद्यालय और म्यूजियम के विभाग थे। जिनमें केन्द्रीय वेतनमान प्रदान नहीं किए जाते थे। इन विभागों में आयुर्वेद महाविद्यालय की बड़ी विचित्र स्थिति थी, क्योंकि जिस समय गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय को सरकार ने मान्यता प्रदान की थी उस समय भारत सरकार ने आयुर्वेद महाविद्यालय को विश्वविद्यालय के संकाय के रूप में मान्यता प्रदान नहीं की थी, इसलिए आयुर्वेद महाविद्यालय कानपुर यूनिवर्सिटी के साथ सम्बद्ध था, उसी के पाठ्यक्रम का निर्धारण, कौन अध्यापक, कौन प्राध्यापक नियुक्त किए जाएं उनके वेतनमान का निर्धारण और छात्रों के प्रवेश के नियम, उपनियम आदि के समस्त अधिकार कानपुर विश्वविद्यालय के निर्धारित मानकों के द्वारा होते थे। आयुर्वेद महाविद्यालय का समस्त व्यय गुरुकुल कांगड़ी को वहन करना पड़ता था। आयुर्वेद महाविद्यालय पर खर्च होने वाले सम्पूर्ण व्यय का आधा भाग उत्तर प्रदेश सरकार द्वारा और शेष आधा व्यय जिसमें चिकित्सालय आदि भी सम्मिलित था, के खर्चे का वहन गुरुकुल कांगड़ी को खर्च करना पड़ता था। यह प्रश्न उपस्थित हुआ कि आयुर्वेद महाविद्यालय पर व्यय की जाने वाली राशि जो लगभग 3 लाख रूपया था उसका प्रबन्ध कहां से किया जाय, क्योंकि गुरुकुल के आय के स्रोत कृषि, फार्मेसी, बाग और मकानों के किराये के रूप में ही थे उनसे इतना धन प्राप्त नहीं होता था कि आयुर्वेद महाविद्यालय के लिए 3 लाख रूपयों का प्रबन्ध किया जा सके। खर्चा बढ़ने का कारण वेतन एवं औषधियों के दाम बढ़ना आदि भी था, आमदनी के स्रोत उतने ही सीमित ये अर्थात् आय कम थी और खर्चा बहुत अधिक हो गया था। अतः गुरुकुल के सामने यह समस्या थी कि इस समस्या से कैसे निपटा जाय। यहाँ यह ज्ञातव्य है कि उस समय गुरुकुल विश्वविद्यालय का कुलपति ही मुख्याधिष्ठाता होता था इसलिए अन्ततः इस समस्या का निराकरण भी मान्य डॉ॰ विद्यालंकार और आर्य विद्या सभा के द्वारा ही किया जाना था। इस उपर्युक्त समस्या के समाधान के लिए दो प्रकार के उपाय सामने आये उनमें से पहला उपाय यह था कि आमदनी बढ़ायी जाय औद दूसरा उपाय यह था कि आयुर्वेद महाविद्यालय के शिक्षक एवं कर्मचारियों की संख्या कम की जाये या उनको वेतनमान भी कम दिया जाये। उनको प्रेरित किया जाय कि वे गुरुकुल की सेवा त्याग भाव से करें परन्तु यह उपाय व्यावहारिक नहीं था, क्योंकि उस समय गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय एवं अलीगढ़ विश्वविद्यालय के वेतन वेतनमान के अनुसार दिए जाते

थे। यह वेतन की बहुत ही आर्थिक विषमता थी यदि विश्वविद्यालय के किसी कर्मचारी को हजार रुपये वेतन के रूप में मिलते थे तो आयुर्वेद महाविद्यालय के कर्मचारी को उस समकक्ष कार्य पर पांच सौ अथवा छः सौ से अधिक वेतन नहीं दिया जाता था। इस स्थिति में यह आशा कैसे की जा सकती थी कि उन कर्मचारियों को यह उपदेश दिया जाये कि तुम यहाँ त्याग पूर्वक सेवा करो। इन सब कारणों से आयुर्वेद महाविद्यालय के शिक्षक एवं शिक्षकेतर कर्मचारियों में घोर असंतोष पैदा हो गया। मान्य कुलपति ने आमदनी बढ़ाने के बहुत प्रयत्न किए और जो उन्होंने आमदनी बढ़ाने के उपाय प्रस्तुत किए थे उन उपायों पर आर्य विद्या सभा की सहमति प्राप्त नहीं कर पाये। उस समय आयुर्वेद महाविद्यालय के शिक्षक एवं शिक्षकेत्तर कर्मचारी दिशाविहीन से हो गए। उनको उस समय यह चाहिए था कि आयुर्वेद महाविद्यालय को शुद्ध आयुर्वेद पद्धति पर प्रतिष्ठित करके आयुर्वेद के उच्च शोध अध्ययन के लिए विश्वविद्यालय अनुदान आयोग द्वारा गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय के ही रूप में मान्यता प्रदान की जाय। डॉ॰ सत्यकेतु विद्यालंकार कुलपति महोदय ने इस विषय में पुराने आयुर्वेद के स्नातकों की सहायता से इस सम्बन्ध में उचित प्रयास भी किए। परन्तु उनके प्रयास इसलिए सफल नहीं हुए कि यहाँ आयुर्वेद महाविद्यालय में आयुर्वेद को मिश्रित प्रणाली प्रचलित थी। इससे केन्द्रीय सरकार सहमत नहीं थी। एक कानूनी बाधा यह भी थी कि मेडिकल बोर्ड द्वारा तकनीकी दृष्टि से मान्यता प्रदान करना कठिन था परन्तु यदि मान्य कुलपति के प्रयास के साथ आयुर्वेद महाविद्यालय उनका सहयोग करता तो सम्भवतः इस समस्या से निबटा जा सकता था। परन्तु आयुर्वेद महाविद्यालय में एक क्रान्ति का बिगुल बज गया था जिसमें जोरदार मांग की जाने लगी थी कि आयुर्वेद महाविद्यालय को राजकीय आयुर्वेद महाविद्यालय बनाया जाय।

डॉ॰ सत्यकेतु विद्यालंकार एक साहित्यकार तथा इतिहास के प्रसिद्ध लेखक माने जाते थे। प्राचीन भारतीय इतिहास के प्रामाणिक विद्वानों में उनकी गिनती होती थी। गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय में अनेक समस्याओं ने उग्र रूप धारण कर रखा था। उन्होंने यह अनुभव करना प्रारम्भ किया कि यदि मैं राजनीति के चक्रव्यूह में फंसा रहा तो मेरी जो प्रतिष्ठा एक विद्वान् के रूप में मानी जाती है, यह धूमिल हो जाएगी यदि मैं यही संघर्ष करता रहा तो इस दलबंदी राजनीति के चक्रव्यूह में मेरी विद्वता भी समाप्त हो जाएगी यद्यपि गुरुकुल कांगड़ी मेरी मातृ संस्था है तथापि यहाँ की दलगत राजनीति में काम करना उनके लिए असंभव था उन्होंने गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय का कुलपति बनना इसलिए स्वीकार किया था कि वे गुरुकुल को संस्कृत, वेद शास्त्र तथा प्राचीन भारतीय ज्ञान के अध्ययन अध्यापन तथा उच्च शोध का अति विशाल राष्ट्रीय संस्थान के रूप में विकास करना चाहते थे, उनको यह अपना स्वप्न धूलि होता सा प्रतीत होने लगा और इस विषय में इस निष्कर्ष पर पहुंचे कि यहाँ पर किसी भी प्रकार से कार्य करना सम्भव नहीं है, इसलिए उन्होंने स्वेच्छा पूर्वक गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय के कुलपति पद से त्याग-पत्र दे दिया। विश्वविद्यालय के कुलाधिपति स्वामी इन्द्रवेश ने उनसे बार-बार अनुरोध किया कि वे अपना त्याग पत्र वापिस ले लें, परन्तु डॉ॰ सत्यकेतु त्याग-पत्र वापिस लेने को तैयार नही हुए और सितम्बर 1975 में गुरुकुल से चले गए।

गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय पर पंजाब आर्य प्रतिनिधि सभा की दलगत राजनीति का प्रभाव इतना अधिक पड़ गया था कि यहाँ कमचारी भी सभा की राजनीति में सक्रिय भाग लेने लग गए थे, इसलिए अनुशासन हीनता बहुत अधिक बढ़ गई थी। आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के अधिकारियों ने यह सोचना प्रारम्भ कर दिया था कि गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय की, अनुशासन हीनता आदि की समस्याओं को दूर करने तथा पुनः अनुशासन स्थापित करने के लिए यह आवश्यक है कि इस विश्वविद्यालय के कुलपति पद पर कोई कुशल प्रशासक नियुक्त किया जाय। इसलिए गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय के कुलपति की ढूंढ प्रारम्भ हो

गई थी। क्योंकि यह माना जाने लगा कि किसी शिक्षा शास्त्री, साहित्यकार और विद्वान् पद पर आसीन किया जाय वह यहाँ के प्रशासन को अच्छी प्रकार से संभाल लेगा। इस उपर्युक्त दृष्टि से डॉ॰ सत्यकेतु विद्यालंकार के उत्तराधिकारी के रूप में श्री बलभद्र कुमार हूजा को स्वभावतः इसलिए भी पसंद किया गया कि उनके पिता श्री गोवर्धन गुरुकुल कांगड़ी के मुख्याध्यापक के रूप में सेवा कर चुके थे। श्री हूजा भी बचपन में गुरुकुल के परिसर में ही पले और बड़े हुए थे। उनके पिता श्री गोवर्धन दास गुरुकुल के विद्यालय विभाग में मुख्याध्यापक पद पर भी कार्य कर चुके थे। उन्होंने यहाँ रहते हुए विज्ञान की अनेक पुस्तकों का हिन्दी में प्रणयन भी किया था। इसलिए श्री बलभद्र हूजा की गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय के कुलपति के रूप में बनने पर अत्यधिक प्रसन्नता अनुभव हुई। यहाँ गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय के समस्त कर्मचारी, स्नातक एवं सभा के सभी वर्गों के व्यक्तियों ने श्री हूजा जी का उत्साह पूर्वक स्वागत किया।

कुलपति के रूप में श्री बलभद्र कुमार हूजा ने एक कुशल प्रशासक के रूप में कार्य करना प्रारम्भ कर दिया उन्होंने अपने मस्तिष्क में यह योजना बनाई कि समस्त शिक्षक एवं शिक्षकेतर कर्मचारियों को इस प्रकार व्यस्त किया जाय कि वे अनेक गति विधियों में लगे रहे इसलिये उन्होंने विद्यालय विभाग में भी ब्रह्मचारियों को सामाजिक एवं शैक्षणिक गतिविधियों में इतना व्यवस्थित कर दिया कि कुछ समय के लिए विश्वविद्यालय परिसर में पूर्णरूपेण अनुशासन स्थापित हो गया। मान्य कुलपति जी किसी प्राध्यापक के सम्पर्क में आते ही यह जांच लेते थे कि इसकी प्रवृत्ति किस प्रकार की है। वे जब यह देखते थे कि अमुक विद्वान् प्राध्यापक अच्छा लेखक बन सकता है तो उसकी लेखन की प्रतिभा को प्रेरित करते थे। उस अध्यापक को शोध पत्र पत्रिकाओं में लेख लिखने के लिये प्रेरित करते थे। उन्होंने क्रीड़ा के क्षेत्र में कई प्रकार के खेलों को समय-समय पर आयोजित करके विश्वविद्यालय के परिसर को स्वस्थ एवं शान्तिमय बनाने का प्रयास किया। उनका यह भी विचार था कि वास्तविक गुरुकुल विद्यालय-विभाग है। इसलिए विश्वविद्यालय के प्रोफेसरों को भी गुरुकुल-विभाग के ब्रह्मचारियों की प्रतिभाओं को विकसित करने के लियें ड्यूटी लगाया करते थे। उल्लेखनीय गतिविधियों में प्रातःकाल ब्रह्मचारियों को योग करवाना प्राणायाम सिखानें के लिये योग के अध्यापक के रूप में श्री ईश्वर भारद्वाज को लाना सन्ध्या के मन्त्रों का शुद्ध उच्चारण करवाना, सायं कालीन समय में सन्ध्या के पश्चात् संस्कृत के श्लोकों का उच्चारण करवाना, वाद-विवाद प्रतियोगिता, अनेक प्रकार के खेलों का आयोजन करवाना विद्यालय विभाग में 'ध्रुव' नाम की मासिक पत्रिका प्रारम्भ करना, उस पत्रिका में विद्यालय विभाग के ब्रह्मचारियों द्वारा अनेक प्रकार के लेख, कवितादि ब्रह्मचारियों के द्वारा लिखवाना आदि अनेक प्रकार की गतिविधियों को श्री बलभद्र कुमार हूजा कुलपति महोदय ने प्रारम्भ किया।

विश्वविद्यालय में गुरुकुल पत्रिका के प्रकाशन को नियमित करते हुये उसमें जो भी प्राध्यापक गण लेखन में रुचि रखते थे, उनसे बार-बार प्रार्थना करते थे कि आप गुरुकुल पत्रिका में अपना लेख अवश्य लिखें। विश्वविद्यालय के प्राध्यापकों में भी योग की प्रवृत्ति को उत्पन्न करने के लिये योग की कक्षायें, चर्चायें और सभाओं आदि के आयोजन से प्राध्यापकों में योग की प्रवृत्ति को उत्पन्न करने का प्रयास किया। विश्वविद्यालय के छात्रों को भी व्यस्त रखने के लिये उनको संगठित करके अनेक प्रकार की स्पर्धाओं द्वारा उनके बौद्धिक स्तर को बढ़ाने के लिये प्रयास किया। छात्रों को समूहों में एवं वर्गों में आबंटित किया गया जैसे नेहरू ब्रिगेड, सुभाष ब्रिगेड़, और पटेल ब्रिगेड आदि के रूप में छात्रों को नाना प्रकार के उत्साहित करते रहते थे। गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय में आर्य समाज का भी वातावरण विकसित हो इसलिये श्री कुलपति महोदय आर्य समाज के सत्संगों में नियमित रूप से जाते थे। स्थानीय एवं बाहर के विद्वानों को बुलाकर आर्य समाज के सिद्वान्तों पर व्याख्यान कराते थे।

उपर्युक्त प्रकार के कुलपति महोदय ने गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय के प्राशासनिक शैक्षणिक और सामाजिक वातावरण को ठीक एवं उन्नत करने का प्रयास किया। स्थानीय प्रशासन की दृष्टि में गुरुकुल के सम्मान को बढ़ाने का प्रयास किया।

मान्य कुलपति की बचपन की स्मृतियाँ कांगड़ी ग्राम से तथा गुरुकुल कांगड़ी की पुण्य भूमि से जुड़ी हुई थी इसलिये उन्होंने गुरुकुल कांगड़ी की पुण्य भूमि पर जाना प्रारम्भ कर दिया। विशेष पर्वों के अवसर पर समस्त शिक्षक एवं शिक्षकेतर कर्मचारी गण ब्रह्मचारियों को गुरुकुल पुण्य भूमि पर ले जाया जाता था, वहाँ पर ले जाकर यज्ञ सत्संग और विविध, क्रीडाओं का आयोजन किया जाता था। सारा दिन आमोद-प्रमोद में व्यतीत होता था। मान्य कुलपति जी अनेक अवसरों पर कई-कई दिन भी गुरुकुल कांगड़ी की पुण्य भूमि में रात्रियों में रहा करते थे। उनके साथ कुछ प्राध्यापक एवं कर्मचारी भी रहते थे।

श्री कुलपति महोदय जहाँ विश्वविद्यालय के परिसर को अनुशासित बनाना चाह रहे थे साथ ही साथ गुरुकुल की ख्याति को भी बढ़ा रहे थे उसके साथ-साथ ही उन्होंने भारत शिक्षा मन्त्रालय और विश्वविद्यालय अनुदान आयोग में बार-बार जाकर के विश्वविद्यालय की स्थिति को दृढ़ करने का प्रयास किया। इस प्रयास का परिणाम यह हुआ कि विश्वविद्यालय अनुदान आयोग के अधिकारी गण गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय को कुछ-कुछ ठीक दृष्टि से देखने लगें। श्री कुलपति महोदय ने उनके साथ रहे हुये प्राशासनिक अधिकारियों को भी कई बार विश्वविद्यालय परिसर में आमंत्रित किया और उनके भाषण कराये। उनके भाषणों द्वारा उच्च श्रेणी के छात्रों को यह प्रेरणा मिलती थी कि हमें भी भारतीय प्राशासनिक सेवा आई.ए.एम., पी.सी. एस. आदि की राष्ट्रीय प्रतियोगिताओं में प्रतियोगी बनकर प्राशासनिक सेवाओं में जाने का प्रयास करना चाहियें।

श्री बलभद्र कुमार हूजा एक प्राशासनिक अधिकारी के रूप में गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय को सभी प्रकार से ठीक करने का प्रयास कर रहे थे कि पूर्व कुलपतियों की तरह उनके सामने भी अनेक समस्याऐं आने लगी, एक समस्या तो यही आ रही थी कि वे निर्द्वन्द्व रूप में गुरुकुल के प्रशासन को ठीक करने में सफल क्यों हो रहे है। उनमें उनके लिये सबसे बड़ी समस्या बन रहा था आयुर्वेद महाविद्यालय। यहाँ दिन प्रतिदिन कोई न कोई समस्या उत्पन्न हो जाती थी जैसा कि पहले बतला चुके है कि आयुर्वेद महाविद्यालय में वेतनादि की असमानता को लेकर गहरा असंतोष बढ़ता जा रहा था। इसके साथ ही सभाओं के विवाद भी गहराने लग गये थे।

पंजाब आर्यप्रतिनिधि सभा का त्रिशाखन के रुप में विभाजन

पंजाब आर्य प्रतिनिधि सभा में क्षेत्रीय और जातिगत आधार पर जो दलबंदी या गुटबन्दी बहुत दिनों से चली आ रही थी स्वामी इन्द्रवेश के प्रधान चुने जाने पर उसका अन्त नहीं हो गया था। पंजाब आर्य प्रतिनिधि सभा की सीमायें पंजाब, हरियाणा, हिमाचल प्रदेश और दिल्ली प्रदेश बन चुके थे। आर्य समाज के क्षेत्र के कुछ नेताओं का यह विचार था कि राजनैतिक प्रान्तों की तरह से आर्य प्रतिनिधि सभाओं का गठन करना चाहिये, इसलिये धीरे-धीरे यह विचार जोर पकड़ने लगा कि अभी जो पंजाब, हरियाणा और दिल्ली प्रान्तों के अनुसार तीनों प्रान्तो को पृथक्-पृथक् आर्य प्रतिनिधि सभायें अच्छा कार्य कर सकेंगी उसके साथ ही पंजाब और हरियाणा के संघर्ष का भी अन्त हो जायेगा।

सन् 1975 में भारत में आपात काल की घोषणा कर दी गई थी। जो राजनैतिक पार्टियां कांग्रेस पार्टी के विरोध में थी उनके नेताओं को गिरफ्तार करके जेल में भेज दिया गया। उन नेताओं में स्वामी इन्द्रवेश और उनके साथी अग्निवेश भी थे, जो गिरफ्तार कर लिये गये थे और जेल भेज दिये गये थे। स्वामी इन्द्रवेश

के जेल में होने के कारण प्रतिनिधि सभा के उपप्रधान आचार्य पृथ्वीसिंह आज़ाद गुरुकुल कांगड़ी के कुलाधिपति का काम करने लगे और पंजाब की प्रतिनिधि सभा का काम भी करने लगे। यहाँ यह उल्लेख करना आवश्यक है कि सार्वदेशिक आर्य प्रतिनधि सभा नई दिल्ली, आर्य समाज के संगठन का सर्वोच्च संगठन माना जाता है। समस्त आर्य प्रतिनिधि सभाएं उसके आदेश का पालन करने के लिएं बाध्य हैं। सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा ने अपनी अंतरंग सभा में यह प्रस्ताव पारित किया था कि सभी आर्य प्रतिनिधि सभाएं राजनैतिक दृष्टि से प्रान्तों के अनुसार अपना विभाजन एवं गठन कर लें। इस प्रस्ताव के अनुसार आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब ने एक नौ सदस्यों की समिति गठित की उस नौ सदस्यों की समिति में से तीन सदस्यों की एक उप-समिति भी गठित की गई। इन सभी समिति एवं उपसमितियों की संस्तुति के अनुसार जब स्वामी इन्द्रवेश जी जेल में ही थे, पंजाब प्रतिनिधि सभा को अंतरंग सभा ने त्रिशाखन का प्रस्ताव स्वीकार कर लिया और त्रिशाखन के लिए उसके सिद्धान्त व सभाओं की सम्पत्ति के विषय में भी निर्णय लिया कि जो पंजाब प्रतिनिधि सभा की संपत्ति जिस प्रान्त में है उस प्रान्त की आर्य प्रतिनिधि सभा उसकी मालिक हो जाएगी। गुरुकुल कांगड़ी के सम्बन्ध में भी यह निश्चय हुआ कि उस पर तीनों (पंजाब, हरियाणा और दिल्ली) सभाओं का संयुक्त अधिकार रहेगा। गुरुकुल कांगड़ी की विद्या सभा एवं सीनेट में तीनों सभाओं के बराबर-बराकर प्रतिनिधि रहेंगे। त्रिशाखन के निर्णय को क्रियान्वित करने तथा, उसके कारण उत्पन्न हुए विवादों एवं समस्या का समाधान क्रने के लिए सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा के प्रधान श्री रामगोपाल शालवाले को सब अधिकार दे दिए गए। तीनों सभाओं के पदाधिकारियों को भी सामयिक एवं तदर्थ समिति के रूप में नियुक्ति कर दी गई और इसी के साथ यह भी निर्णय किया गया कि गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय के संविधान को भी पुनः गठित किया जाएगा। इन सब निर्णयों की संपुष्टि अम्बाला में सम्पन्न हुए आर्य प्रतिनिधि सभा के वार्षिक अधिवेशन में की गई।

स्वामी इन्द्रेवश जी और उनके साथी जब जेल से छूटकर आये तो उन्होंने त्रिशाखन के सिद्धान्त को अस्वीकार कर दिया उनका कहना था कि उनकी अनुपस्थिति में जो निर्णय किए गए हैं मैं उनसे सहमत नहीं हूँ।

गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय में विवाद की चरम सीमा एवं नया विवाद

आर्य प्रतिनिधि सभा के उपर्युक्त विवाद के कारण स्वामी इन्द्रवेश जी ने यह कहा कि मैं अब भी गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय का चयनित कुलाधिपति हूँ, दूसरी और पंजाब आर्य प्रतिनिधि सभा के प्रधान श्री वीरेन्द्र जी मनोनीत किए गए थे, क्योंकि वे पंजाब आर्य प्रतिनिधि सभा के प्रधान मनोनीत किए गए थे, इसलिए उनका यह मानना था कि गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय का कुलाधिपति मैं हूं। इस प्रकार स्वामी इन्द्रवेश ने श्री बलभद्र कुमार हूजा की कुलपति पद पर नियुक्ति को अनुचित बतलाया। गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय के कुलाधिपति पद पर दो दावेदार हो गऐ थे, स्वामी इन्द्रवेश और श्री वीरेन्द्र जी, सभाओं की दलगत राजनीति का प्रभाव गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय के शिक्षक एवं शिक्षकेत्तर कर्मचारियों पर भी पड़ना स्वाभाविक था इसलिए यहाँ के कर्मचारियों में भी दो दल बन गए उस समय गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय के कुलसचिव पद पर डॉ० गंगाराम गर्ग लगभग 6 वर्ष से कार्य कर रहे थे। उन्हीं दिनों में गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय के कुलपति श्री बलभ्रद कुमार हूजा आस्ट्रेलिया में गए हुए थे। कुलपति पद का कार्य आचार्य को न सौंप करके डॉ० गंगाराम गर्ग को ही कार्यकारी कुलपति के रूप में कार्यभार सौंप गए थे।

इन उपर्युक्त परिस्थितियों के कारण 7 जून 1976 को गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय पर स्वामी इन्द्रवेश तथा उनके साथियों ने डॉ० गंगा राम गर्ग को कुलपति बनाकर गुरुकुल कांगड़ी पर एक प्रकार से

अपना संपूर्ण अधिकार कायम कर लिया। श्री बलभद्र कुमार हूजा विश्वविद्यालय के पसिर से बाहर ही खड़े रह गये। सभा त्रिशाखन को लेकर के मुकदमें बाजी प्रारम्भ हो गयी। गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय के दो कुलाधिपति, दो कुलपति और दो कुलसचिव दावेदार के रूप में हो गये थे। इसलिए शिक्षा मन्त्रालय भारत सरकार और विश्वविद्यालय अनुदान आयोग ने अनुदान देना बन्द कर दिया। स्वामी इन्द्रवेश ने कुलसचिव पद पर श्री बलजीत सिंह आर्य की नियुक्ति की थी। श्री बलभ्रद कुमार हूजा ने द्वितीय परिसर के रूप में दिल्ली में विश्वविद्यालय का कैम्प कार्यालय बना लिया था। इस अवधि में कर्मचारियों तथा शिक्षकों के दो दल होने पर भी विश्वविद्यालय में कार्य पर आना नहीं छोड़ा था। कर्मचारियों के सतत् प्रयास से शिक्षा मन्त्रालय एवं विश्वविद्यालय अनुदान आयोग ने गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय के परिसर में आकर सीधे रूप में शिक्षक एवं शिक्षकेतर कर्मचारियों को बिल बनाकर वेतन वितरित किया था। इस प्रकार गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय 6-7 महीने लड़खड़ाते हुए चला।

स्थानीय प्रशासन के सहयोग तथा श्री रघुवीर सिंह शास्त्री पूर्व कुलपति गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय के सहयोग से 7 जनवरी 1977 को श्री बलभ्रद कुमार हूजा ने पुनः विश्वविद्यालय पर अधिकार कर लियां गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय में श्री बलभ्रद कुमार हूजा के पुनः आने पर अनुशासन स्थापित हो गया इन्हीं दिनों में पं० रघुवीर सिंह शास्त्री को आचार्य एवं प्रो० वाइस चान्सलर पद पर नियुक्त किया गया। कुछ महीनों के पश्चात् श्री बलभद्र कुमार हूजा और श्री शास्त्री जी में मतभेद हो गए इसलिए शास्त्री जी पुनः दिल्ली लौट गए। जुलाई 1977 में अवकाश के दिनों में श्री विजयपाल सिंह वर्मा ने श्री स्वामी इन्द्रवेश के द्वारा कुलपति के रूप में गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय पर कार्यालय तथा समस्त परिसर पर अधिकार कर लिया। जिस दिन यह अधिकार हुआ उस समय विश्वविद्यालय के समस्त कर्मचारी आश्चर्य चकित एवं आवाक् रह गए। गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय में आतंक का साम्राज्य स्थापित होने लगा। यद्यपि कर्मचारी इस समय भी दो वर्गों में बंटे हुए थे तथापि समस्त कर्मचारी इस समय भी दो भागों में बटकर अपना-अपना कार्य करते रहें विश्वविद्यालय अनुदान आयोग एवं शिक्षा मन्त्रालय भारत सरकार ने पुनः अनुदान देना बन्द कर दिया। विश्वविद्यालय परिसर में धीरे-धीरे अशान्ति का साम्राज्य स्थापित हो गया। शिक्षक एवं शिक्षकेतर कर्मचारियों ने श्री विजय पाल सिंह वर्मा से वेतन मांगना प्रारम्भ कर दिया। इस प्रकार दो तीन मास उनसे लगातार वेतन न मिलने पर प्रतिमास श्री विजय पाल सिंह वर्मा से वेतन माँगा जाने लगा। जब कर्मचारियों नं यहाँ पर परिसर में विद्यामान अपने आप को कुलपति पद पर घोषित करने वाले श्री विजय पाल सिंह वर्मा से वेतन माँगा तो उस आवेदन पत्र की प्रतिलिपि शिक्षामंत्रालय भारत सरकार को भेजी जाने लगी, उस पर श्री विजयपाल सिंह वर्मा ने आपत्ति की उस पर कर्मचारियों ने कहा कि भारत सरकार को जो प्रार्थना की जा रही है उसकी प्रतिलिपि हमें भेजने का अधिकार है और हम तो आपके हाथ ही मजबूत कर रहे हैं कि आप विश्वविद्यालय में हमसे कार्य ले रहे हैं तो हमारे वेतन का प्रबन्ध करना आपका नैतिक कर्त्तव्य ही नहीं अपितु आपकी ड्यूटी भी है। इसलिए आप हमारे वेतन को देने का प्रबन्ध कीजिए। श्री विजय पाल सिंह वर्मा सरकारी अनुदान को प्राप्त करने में असफल रहे। विश्वविद्यालय परिसर में उनके द्वारा नियुक्त व्यक्तियों ने अशान्ति फैलाना प्रारम्भ कर दिया। अन्ततः नवम्बर 1977 में विश्वविद्यालय के बहुसंख्यक अर्थात् 125 कर्मचारियों में से 105 शिक्षक एवं शिक्षकेतर कर्मचारियों ने अपने कार्य पर जाना बन्द कर दिया। कार्य पर न जाने का कारण एक यह भी था कि श्री बलभद्र कुमार हूजा तथा उनके प्रशासन ने अस्थायी रूप में विश्वविद्यालय को बन्द कर दिया था, समस्त कर्मचारियों को नोटिस भेज दिया था कि विश्वविद्यालय अनिश्चित काल के लिए बन्द कर दिया गया है। यदि आप इस आदेश की अवहेलना करके अवैध कुलपति श्री विजय पाल सिंह वर्मा का आदेश मानते हैं तो उसका सम्पूर्ण उत्तरदायित्व आपका होगा। इधर वेतन न मिलने के कारण कर्मचारी हताश एवं दुःखी हो गए थे। गुरुकुल कांगड़ी फार्मेसी ने कर्मचारियों

को दो मास का वेतन वितरित कर दिया। लगभग 20 कर्मचारियों को छोड़कर सभी कर्मचारियों ने फार्मेसी से वेतन ले लिया और श्री विजयपाल सिंह वर्मा के आदेश का पालन बन्द कर दिया।

समस्त शिक्षक एवं शिक्षकेतर कर्मचारियों की एक संयुक्त बैठक हुई जिसमें एक संयुक्त समिति का गठन दिया गया। इस संयुक्त समिति के अध्यक्ष सर्व सम्मति से डॉ॰ जयदेव वेदालंकार को चुना गया।

यह विवाद इतना गहराता गया कि विश्वविद्यालय परिसर में बड़ी विचित्र स्थिति उत्पन्न हो गई थी। इस विवाद के समाधान के लिए अनेक प्रकार के प्रयास किए गए। गुरुकुल कांगड़ी का पूर्ण परिसर पूर्ण रूपेण आतंकवाद की छाया में आ गया था। किसी भी समय कोई भी दुर्घटना घटित हो सकती थी। समाचार पत्रों में प्रतिदिन गुरुकुल कांगड़ी के विषय में नए-नए समाचार छपते थे। डॉ॰ जयदेव वेदालंकार के सतत् प्रयास से स्थानीय आर्य समाज और आर्य समाज की अन्य संस्थाएं इस आन्दोलन में सहयोग करने लग गयी थी। आर्य वानप्रस्थाश्रम ज्वालापुर अन्य सभी संस्थाएं इस प्रयास में लगी हुई थी कि यह विवाद किसी न किसी रूप में निपट जाना चाहिए। 23 दिसम्बर 1977 के दिन एक विशाल शोभा यात्रा का आयोजन किया और इस अवसर पर भी वीरेन्द्र जी प्रधान आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब को भी आमन्त्रित किया गया। स्थानीय प्रशासन ने विश्वविद्यालय परिसर में अशान्ति के भय से 144 धारा लगा दी 23 दिसम्बर 1977 को दो सौ व्यक्ति शोभा यात्रा में सम्मिलित हुए। उस समय के सी.ओ. हरिद्वार तथा स्थानीय न्यायाधीश गुरुकुल परिसर में उपस्थित थे। श्रद्धानन्द द्वार से जब शोभायात्रा गुरुकुल परिसर की ओर बढ़ने लगी तो स्थानीय न्यायाधीश के आदेश से सी.ओ. श्री दिग्विजय सिंह ने लगभग दो सौ व्यक्तियों को गिरफ्तार कर लिया। 2 दिसम्बर के समाचार पत्रों ने इस समाचार को मुख्य समाचार के रुप में प्रकाशित किया। 24 दिसम्बर 1977 के दैनिक हिन्दुस्तान टाइम्स ने अपने मुख्य पृष्ठ पर "हरिद्वार में दो सौ आर्य समाजी गिरफ्तार" शीर्षक से समाचार छापा था। सभी आन्दोलनकारियों को चार पुलिस के ट्रकों में भरकर रात्रि के बारह बजे रूड़की जेल में भेज दिया गया। कार्यवाही करने के पश्चात् सहारनपुर जेल में भेज दिया गया। चार दिन जेल में रखने के पश्चात् श्री वीरेन्द्र जी सहित समस्त आन्दोलनकारियों को रिहा कर दिया। जनवरी के प्रथम सप्ताह 1977 से इस आन्दोलन ने एक नया रूप धारण कर लिया। स्थानीय न्यायाधीश के कार्यालय के सामने क्रमिक अनशन प्रारम्भ हो गया। और यह अनशन लगभग 15 दिन के पश्चात् आमरण अनशन में परिवर्तित हो गया। आर्य समाज गुरुकुल कांगड़ी में डॉ॰ निगम शर्मा ने अनशन प्रारम्भ किया और अखिल भारतीय स्तर पर श्री राम गोपाल शालवाले प्रधाने सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा दिल्ली और इनके साथ श्रीमती पुष्पा विद्यालंकार ने आर्य समाज दीवान हॉल में अनिश्चित कालीन आमरण अनशन प्रारम्भ किया।

राजनैतिक दबाव देने के लिए डॉ॰ जयदेव वेदालंकार के नेतृत्व में प्रो॰ जबर सिंह सेंगर, प्रो॰ विजय शंकर आदि ने दिल्ली में जाकर प्रधानमंत्री के नाम एक ज्ञापन पर 18 एम॰पी॰ के हस्ताक्षर करवाकर के वह ज्ञापन प्रधान मंत्री को दिया उस ज्ञापन में प्रधानमंत्री से कहा गया था कि

सेवा में,

श्री प्रधानमंत्री भारत सरकार "नई दिल्ली"

विषयः- संसद सदस्यों द्वारा गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय की सात मास से चली आ रही अत्यन्त गंभीर स्थिति पर प्रधानमंत्री से अपील।

महोदय,

जैसा कि आपको ज्ञात है कि गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय हरिद्वार की पिछले मास से स्थिति चिन्ताजनक चल रही है और सरकार द्वारा अनुदान देना बन्द है। जिसके परिणाम स्वरूप वहाँ के उपाध्यायों,

कर्मचारियों तथा छात्रों ने आपकी सरकार से स्थिति को सामान्य बनाने के लिए प्रतिवेदन और प्रतिनिधि मंडलों द्वारा प्रार्थना की थी। इसके साथ ही क्रमिक ओर आमरण अनशन तक भी करना पड़ा। स्थिति इतनी गंभीर थी कि कर्मचारियों के अतिरिक्त श्री राम गोपाल शालवाले प्रधान सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा को भी आमरण अनशन करना पड़ा। स्थिति की गंभीरता को समझते हुए आपने दोनों पक्षों की सहमति से विश्वविद्यालय के लिए प्रशासन नियुक्त करने की घोषणा की। परन्तु सुना जाता है कि प्रशासक के काम में अनेक अड़चने आ रही हैं। अतः आपसे निवेदन है कि प्रशासक को प्रभावकारी बनाने के लिए उनको पूर्ण प्राशासनिक तथा कानूनी अधिकार दिए जाये। ताकि संस्था में समान स्थिति होकर विश्वविद्यालय का कार्य जो पिछले सात मास से ठप्प पड़ा है सुचारु रूप से चल सके। झगड़ों को देखते हुए अनुदान केवल प्रशासक को हीं दिया जाय जिससे स्थायी कर्मचारियों को कोई हानि न होने पाये। आशा है कि आप शीघ्र ही समस्या का समाधान करने की कृपा करेंगे।

इस ज्ञापन पर हस्ताक्षर करने वाले संसद सदस्यों के नाम इस प्रकार हैं- श्री तेजप्रताप सिंह, श्री रामचरण, डॉ॰ भगवानदास, श्री राघवेन्द्र सिंह, शंकर देव, श्रीमती शान्ति देवी, श्री सूरजभान, श्री चंदन सिंह, श्री रूपलाल सोमानी श्री कन्हैयालाल आदि अठारह संसद सदस्यों के हस्ताक्षर थे।

माननीय प्रधानमंत्री श्री मोरार जी देसाई ने इस समस्या के समाधान के लिए गाँधी ग्रामोद्योग संघ के अध्यक्ष श्री सोम देव वेदालंकार को गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय का प्रशासक नियुक्त किया था। श्री सोमदेव जी दो बार गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय में आए भी थे। परन्तु एक पक्ष ने उनका सहयोग नहीं किया। इसलिए वे वापिस चले गए, क्योंकि उनको कोई कानूनी अधिकार नहीं था।

न्यायालय द्वारा प्रशासक की नियुक्ति-

इसके प्रश्चात् श्री प्रधानमंत्री जी कुछ अस्वस्थ हो गये थे। संभवतः यह कारण रहा होगा कि उस समय भारत सरकार के शिक्षा मंत्री श्री प्रताप चन्द्र बंगाल के रहने वाले थे और स्वामी अग्निवेश के शिक्षक भी रहे थे। लगभग उसी समय श्री विजयपाल सिंह वर्मा ने इलाहाबाद उच्च न्यायालय में एक याचिका दायर की थी कि यह उच्च न्यायालय शिक्षा मन्त्रालय भारत सरकार और विश्वविद्यालय अनुदान आयोग को यह आदेश दे कि गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय को इनसे मिलने वाले अनुदान को जारी किया जाय। शिक्षा मन्त्रालय भारत सरकार के अधिवक्ता ने न्यायालय में उपस्थित होकर यह बयान दिया कि हमारे रिकार्ड में गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय के कुलपति श्री बलभद्र कुमार हूजा हैं। सरकार ने इस बयान से श्री विजयपाल सिंह वर्मा की याचिका को न्यायालय में यह कहकर निरस्त कर दिया कि इस प्रकार का आदेश नहीं दिया जा सकता है। हां यदि श्री विजयपाल सिंह वर्मा सिविल कोर्ट में जाकर अपना अभियोग प्रारम्भ कर सकते हैं। श्री विजय पाल सिंह वर्मा ने सिविल जज रुड़की के न्यायालय में इसी प्रकार का एक मुकदमा प्रारम्भ कर दिया। इस मुकदमें में तीन पक्ष वादी-प्रतिवादी के रूप में आ खड़े हो गए। वादी श्री विजयपाल सिंह, वर्मा, प्रतिवादी श्री बलभद्र कुमार हूजा एवं तीसरा पक्ष शिक्षक एवं शिक्षकेतर कर्मचारियों के संयुक्त समिति के संयोजक डॉ॰ जयदेव वेदालंकार कर्मचारियों के प्रतिनिधि के रूप में उपस्थित हुए। वादी और प्रतिवादी की और से इलाहाबाद उच्च न्यायालय के प्रसिद्ध अधिवक्ता और कर्मचारियों की ओर से सुप्रीम कोर्ट के प्रसिद्ध महाधिवक्ता स्व॰ आर.के.गर्ग न्यायालय में प्रस्तुत हुए। यह ज्ञातव्य है कि स्व॰ श्री आर.के.गर्ग ने संयुक्त समिति से किसी भी प्रकार की अपनी फीस नहीं ली थी। श्री आर.के.गर्ग ने उसी तारीख पर यह आदेश जारी करवाया था कि गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय के संचालन के लिये जब तक इस अभियोग का निर्णय न हो तब तक एक प्रशासक की नियुक्ति की जाती है। तीनों पार्टियों के वकीलों से कहा गया कि इस विषय में सहमति प्राप्त करके एक अच्छे प्रशासक अथवा न्यायाधीश का

नाम सुझायें। उससे अगली तारीख पर संयुक्त समिति की ओर से सात न्यायाधीशों के नाम सहमति पत्र सहित प्रस्तुत किए। उसमें दिल्ली उच्च न्यायालय के प्रधान न्यायाधीश का भी नाम था। अन्य पक्षों की ओर से जो नाम प्रस्तुत किए गए उनमें श्री बलराम उपाध्याय इलाहाबाद हाई कोर्ट का नाम भी था। अत: सितम्बर 1978 में श्री बलराम उपाध्याय को गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय का प्रशासक नियुक्त कर दिया गया। श्री बलराम उपाध्याय ने गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय प्रशासक के रूप में कार्य संभाला। वे शिक्षा मन्त्रालय भारत सरकार गए। शिक्षा मन्त्रालय भारत सरकार ने गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय को अनुदान देना प्रारम्भ कर दिया। श्री जस्टिस बलराम उपाध्याय ने विश्वविद्यालय के स्थायी शिक्षक एवं शिक्षकेतर कर्मचारियो को अपने एक ही आदेश पर विश्वविद्यालय की सेवा में वापिस नहीं लिया अपितु एक-एक शिक्षक एवं कर्मचारी की व्यक्तिगत फाइल को देखकर आदेश करने प्रारम्भ हो गए।

यहाँ यह बतलाना आवश्यक प्रतीत होता है कि जिस समय श्री बलभद्र कुमार हूजा के कुल सचित ने कर्मचारियों को जब नोटिस दिया तो किस मान्य कुलपति महोदय ने अनिश्चित काल के लिए विश्वविद्यालय को बन्द कर दिया है, कोई भी कार्यालय एवं महाविद्यालय नहीं खुलेंगे। यदि कोई कर्मचारी एवं शिक्षक अवैध अधिकारियों के अधिकार का पालन करता है तो वह उसकी अपनी व्यक्तिगत जिम्मेदारी होगी, उसके वेतनादि की जिम्मेदारी विश्वविद्यालय की नहीं होगी। इस आदेश पर शिक्षक एवं शिक्षकेतर कर्मचारियों ने अपनी ड्यूटी पर जाना बन्द कर दिया। श्री विजयपाल सिंह वर्मा द्वारा नियुक्त कुलसचिव ने शिक्षक एवं शिक्षकेतर कर्मचारियों को एक नोटिस भेजा कि गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय खुला हुआ है आप उसमें कार्य पर क्यों नही आ रहे हैं यदि तीन दिन के अन्दर-अन्दर आप कार्य पर नहीं आयेगें तो आपके विरूद्ध अनुशासनात्मक कार्यवाही की जाएगी। जिस दिन इस नोटिस का उत्तर देना था उस दिन डॉ० जयदेव वेदालंकार प्रवक्ता दर्शन विभाग ने मुन्शिफ हरिद्वार के न्यायालय में स्थगन आदेश देनें के लिए एक मुकदमा दायर किया। जिसमें प्रार्थना की थी कि गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय में इस समय दो कुलपति कार्य कर रहे है जिनमें से एक का आदेश है कि विश्वविद्यालय अनिश्चित काल के लिए बन्द है। दूसरे कुलपति महोदय ने आदेश दिया है कि विश्वविद्यालय खुला हुआ है यदि आप अपनी ड्यूटी पर नहीं आए तो आपके विरुद्ध अनुशासनात्मक कार्यवाही की जाएगी। इसलिए उन दोनों को कोई भी आदेश देने से रोका जाय ताकि वे मेरे विरूद्ध अनुशासनात्मक कार्यवाही न करें। इस बाद के अपील सिविल जज रुड़की न्यायालय में की गई उस पर जस्टिस सी.पी. मिश्र ने यह स्पष्ट आदेश दिया कि दोनों पार्टियों को निषिद्ध किया जाता है। डॉ० जयदेव वेदलंकार पर कोई कार्यवाही न करें। जब तक कोई न्यायोचित कुलपति निश्चित किए जाते हैं, तब तक ये अपनी ड्यूटी प्रशासक अथवा रिसीवर के आदेशानुसार सम्पन्न करेंगे।

इतने स्पष्ट आदेश के बाद भी और उसी सिविल जज के द्वारा नियुक्त प्रशासक श्री बलराम उपाध्याय ने सितम्बर मास से दिसम्बर मास तक फाइल का बहाना बनाकर उनको अपनी ड्यूटी करने का आदेश नहीं दिया। यद्यपि उनका आचरण न्यायालय की अवमानना का मामला बनता है। इस प्रकार से बलराम उपाध्याय एक पक्षीय होकर कार्य कर रहे थे।

न्यायालयों में अभियोग धीरे-धीरे ही चल पाते हैं इसलिए सन् 1980 के प्रारम्भ में श्री बलराम उपाध्याय, श्री विजयपाल सिंह जो उस समय अस्थायी रूप मे कुलसचिव पर कार्य कर रहे थे उनको प्रशासक का कार्यभार संभाल कर त्याग पत्र देकर वापिस इलाहाबाद चले गए और इस प्रकार न्यायाधीश श्री सी.पी. मिश्रा ने श्री प्रो० विजयपाल सिंह को विश्वविद्यालय के प्रशासक के रूप में मान लिया। इस समय विश्वविद्यालय में दोनों पक्षों के कुल सचिव एवं कुलपतियों को वेतन नहीं मिल रहा था। शेष स्थायी कर्मचारियों को वेतन प्राप्त हो रहा था।

यद्यपि विश्वविद्यालय में प्रशासक नियुक्त हो गया था। परन्तु गुरुकुल विद्यालय विभाग में एवं समस्त परिसर में श्री विजयपाल सिंह वर्मा का ही अधिकार था। इस प्रकार दोनों ओर की पार्टियों में तनाव बना रहता था। समय-समय पर उस तनाव के कारण अशोभनीय घटनाएं भी हो जाती थी।

श्री विजयपाल सिंह प्रो० गणित विभाग का झुकाव श्री बलभ्रद कुमार हूजा के पक्ष की और हो गया था और गुरुकुल कांगड़ी के समस्त परिसर पर पुनः आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के प्रधान श्री वीरेन्द्र जी का अधिकार भी हो गया था तथापि कुलपति निवास पर श्री विजयपाल सिंह वर्मा का ही कब्जा बना रहा 2 जुलाई 1980 का वह शुभ दिन आया कि सेशन जिला जज ने इस वाद पर अपना निर्णय दिया और अपने निर्णय में स्पष्ट आदेश दिया कि श्री बलभद्र कुमार हूजा गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय के वैध कुलपति है और श्री वीरेन्द्र आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब विश्वविद्यालय के कुलाधिपति है। यहा यह कहना अतिशयोक्ति पूर्ण नहीं होगा कि जो चमन उजड़ने लगा था वह पुनः हरा भरा हो गया।

इस समस्त विवाद में गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय के 9 प्रोफेसर, 9 उपाध्यायगण और 15 शिक्षकेतर कर्मचारियों की सेवायें समाप्त कर दी गई थी।

श्री बलभद्र कुमार हूजा ने अगस्त 1980 में पुनः गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय के कुलपति पद पर सक्रिय रूप में कार्य करना प्रारम्भ कर दिया। डॉ० आर.एल. वार्ष्णेय जिनकों कि विवाद के समय में भी कुलसचिव पद पर नियुक्त किया था वे कुलसचिव पद पर कार्यवाहक कुलसचिव के रूप में कार्य करते रहे। डॉ० आर. एल० वार्ष्णेय के पश्चात् श्री धर्मपाल हीरा को कुलसचिव पद पर नियुक्त किया गया। उन्होंने जिस प्रकार सरकारी काम-काज सुनिश्चित व्यवस्था में फाइलों पर चलते हैं, इसलिए कांगड़ी विश्वविद्यालय में फाइलिंग सिस्टम, प्रारम्भ किया जो कि सम्भवतः इससे पूर्व विश्वविद्यालय में नही होता था।

संविधान में परिवर्तन

यहाँ यह उल्लेख करना आवश्यक है कि त्रिशाखन जो पंजाब आर्य प्रतिनिधि सभा का हो गया था परन्तु उसके अनुसार गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय के संविधान में यथोचित परिवर्तन नहीं हो पाया था। विश्वविद्यालय के विवाद समाप्त होने पर श्री बलभ्रद कुमार हूजा ने सबसे पहले यह आवश्यकता अनुभव की थी कि नए परिप्रेक्ष्य में विश्वविद्यालय के संविधान में संशोधन करना परमावश्यक है। इसलिए उन्होंने 10 अक्टूबर 1981 की सीनेट में विश्वविद्यालय के संविधान में निम्नलिखित संशोधन किये। जिस संशोधन को शिक्षा मन्त्रालय भारत सरकार ने अपने पत्र संख्या एफ० 11-18/84 यू०-3 दिनांक 1.9.84 की अधिसूचना द्वारा इस संशोधित संविधान को स्वीकृति प्रदान की थी। संविधान का हिन्दी रूपान्तर का उल्लेख कर चुके हैं यहाँ पर केवल जो संशोधन किए गए थे उनका ही हिन्दी रूपान्तर अगले अध्याय से प्रस्तुत किया जा रहा है।

* * *

सन्दर्भ संकेत

1. स्वामी श्रद्धानन्द पृष्ठ 562
2. महाविद्यालय विभाग में उपाध्यायों के लिए प्राप्त धन का वितरण-
   आर्य प्रतिनिधि सभा, इस्ट अफ्रीका-आर्य सिद्धान्त के लिए- 30000 रुपये

डॉ॰ प्राण जीवन मेहता, रंगून-प्राचीन इतिहास के लिए 30000 रुपये
डॉ॰ ठाकुर दत्त शर्मा, अमृत धारा लाहौर-वैदिक शोध कार्य 30000 रुपये
डॉ॰ वी.डी. मेहता, रंगून - आयुर्वेद के लिए 25000 रुपये
विविध दानियों द्वारा - आयुर्वेद के लिए 30874 रुपये
श्री कृपाराम रावलपिंडी -आर्य सिद्धान्त के लिए 23000 रुपये
अफ्रीका के आर्य बन्धुओं से - संस्कृत के लिए 17542 रुपये
अफ्रीका के आर्य बन्धुओं से -वेद के लिए 30000 रुपये
श्री जगन्नाथ कलकत्ता - आयुर्वेद के लिए 29000 रुपये
श्री लब्भूराम नय्यड, लुधियाना - प्राच्य दर्शन के लिए 30000 रुपये
डिपुटी निहालचन्द्र ट्रस्ट दिल्ली - मुख्याध्यापक के लिए 25000 रुपये

नोटः-"आर्यसमाज का इतिहास" तीसरा भाग - पृष्ठ - 336

इसके अतिरिक्त जमुनालाल बजाज, वर्धा और शाहपुर महाराज के कुमार ने 30000-30000 रुपये का ब्याज प्रतिवर्ष देना स्वीकार किया था, जिससे दो अध्यापकों का वेतन दिया जाता था।

3. गुरुकुल पत्रिका अंक 9, 1952 पृष्ठ 30
4. गुरुकुल पत्रिका जून 1952 पृष्ठ 30
5. आ. पत्रिका पृष्ठ 13 से 15
6. गुरुकुल पत्रिका वर्ष 4 पूर्णांक-40, 1952 पृष्ठ 29
7. गुरुकुल पत्रिका मई 1952 - पृष्ठ-40, 1952 पृष्ठ 29
8. गुरुकुल पत्रिका जून 1952 पृष्ठ संख्या 62
9. वही
10. गुरुकुल पत्रिका जुलाई 1952 - पृष्ठ 63, 64
11. गुरुकुल पत्रिका अक्टूबर 1952 पृष्ठ 96
12. गुरुकुल पत्रिका नवम्बर 1952 पृष्ठ 125
13. गुरुकुल पत्रिका नवम्बर 1952 पृष्ठ 127
14. गुरुकुल पत्रिका नवम्बर 1952 पृष्ठ 127
15. गुरुकुल पत्रिका दिसम्बर 1952 पृष्ठ 160
16. गुरुकुल पत्रिका जनवरी 1953 पृष्ठ 189
17. गुरुकुल पत्रिका अप्रैल 1953 पृष्ठ 221 एवं 224
18. गुरुकुल पत्रिका फरवरी 1954 पृष्ठ 223
19. गुरुकुल पत्रिका अप्रैल 1954 पृष्ठ 283
20. गुरुकुल पत्रिका अप्रैल 1954 पृष्ठ 287
21. गुरुकुल पत्रिका दिसम्बर 1954 पृष्ठ 159-160
22. गुरुकुल पत्रिका दिसम्बर 1956 पृष्ठ 351
23. गुरुकुल पत्रिका अप्रैल 1956 पृष्ठ 286
24. गुरुकुल पत्रिका जुलाई 1956 पृष्ठ 378
25. गुरुकुल पत्रिका सितम्बर 1956 पृष्ठ 62
26. गुरुकुल पत्रिका सितम्बर 1956 पृष्ठ 63
27. गुरुकुल पत्रिका अक्टूबर 1956 पृष्ठ 96
28. गुरुकुल पत्रिका अक्टूबर 1956 पृष्ठ 93
29. गुरुकुल पत्रिका नवम्बर 1956 -गुरुकुल समाचार

30. गुरुकुल पत्रिका फरवरी 1957 पृष्ठ 385
31. गुरुकुल पत्रिका मई 1957 पृष्ठ 385
32. गुरुकुल पत्रिका अप्रैल 1957 पृष्ठ 336
33. गुरुकुल पत्रिका सितम्बर 1957 पृष्ठ 71
34. गुरुकुल पत्रिका अक्टूबर 1957 पृष्ठ 107
35. गुरुकुल पत्रिका नवम्बर 1957 पृष्ठ 143
36. गुरुकुल पत्रिका दिसम्बर 1957 पृष्ठ 179
37. गुरुकुल पत्रिका अप्रैल 1958 पृष्ठ 324
38. गुरुकुल पत्रिका मई 1958 पृष्ठ 359, 360
39. गुरुकुल पत्रिका जून 1958 पृष्ठ 397
40. गुरुकुल पत्रिका सितम्बर 1958 पृष्ठ 67
41. गुरुकुल पत्रिका नवम्बर 1958 पृष्ठ 144
42. गुरुकुल पत्रिका फरवरी 1959 पृष्ठ 252
43. गुरुकुल पत्रिका मई 1959 पृष्ठ 357
44. गुरुकुल पत्रिका जून 1959 पृष्ठ 393
45. गुरुकुल पत्रिका अगस्त 1959 पृष्ठ 30
46. गुरुकुल पत्रिका अगस्त 1959 पृष्ठ 29, 30
47. गुरुकुल पत्रिका अगस्त 1959 पृष्ठ 30
48. गुरुकुल पत्रिका जनवरी 1961 पृष्ठ 218
49. गुरुकुल पत्रिका जनवरी 1961 पृष्ठ 219
50. गुरुकुल पत्रिका मई 1961 पृष्ठ 365
51. गुरुकुल पत्रिका मई 1961 पृष्ठ 366
52. गुरुकुल पत्रिका जून 1961 पृष्ठ 401
53. गुरुकुल पत्रिका जून 1961 पृष्ठ 402
54. गुरुकुल पत्रिका जून 1961 पृष्ठ 403
55. गुरुकुल पत्रिका जून 1961 पृष्ठ 34
56. गुरुकुल पत्रिका नवम्बर, दिसम्बर
57. गुरुकुल पत्रिका जनवरी 1962
58. गुरुकुल पत्रिका मार्च 1962
59. गुरुकुल पत्रिका अप्रैल 1962 पृष्ठ 343
60. गुरुकुल पत्रिका मई 1962 पृष्ठ 382
61. गुरुकुल पत्रिका मई 1962 पृष्ठ 384
62. गुरुकुल पत्रिका जुलाई 62 पृष्ठ 461
63. गुरुकुल पत्रिका अगस्त 1962 पृष्ठ 39
64. गुरुकुल पत्रिका अक्टूबर 1962 पृष्ठ 117
65. गुरुकुल पत्रिका नवम्बर 1962 पृष्ठ 157
66. गुरुकुल पत्रिका दिसम्बर 1962 पृष्ठ 200
67. गुरुकुल पत्रिका फरवरी 1964 पृष्ठ 158
68. गुरुकुल पत्रिका अप्रैल, मई 1964 पृष्ठ 366-67
69. गुरुकुल पत्रिका जून, जुलाई 64 पृष्ठ 446
70. गुरुकुल पत्रिका जुलाई 64
71. गुरुकुल पत्रिका अगस्त 1964 पृष्ट 1 से 12
72. गुरुकुल पत्रिका नवम्बर, दिसम्बर 1964 पृष्ठ 270-269
73. गुरुकुल पत्रिका दिसम्बर 64 पृष्ठ 312
74. गुरुकुल पत्रिका फरवरी 1966 पृष्ठ 389-390
75. गुरुकुल पत्रिका जून 1966 पृष्ठ 374
76. गुरुकुल पत्रिका अक्टूबर 1966 पृष्ठ 51
77. गुरुकुल पत्रिका नवम्बर 66 पृष्ठ 232
78. गुरुकुल पत्रिका अगस्त 67 पृष्ठ 98
79. गुरुकुल पत्रिका दिसम्बर 67 पृष्ठ 279
80. गुरुकुल पत्रिका दिसम्बर 67 पृष्ठ 280
81. गुरुकुल पत्रिका अप्रैल, मई 68 पृष्ष्ठ 487, 488
82. गुरुकुल पत्रिका जून, जुलाई 1968 पृष्ठ 567
83. गुरुकुल पत्रिका मई 1973
84. गुरुकुल पत्रिका सितम्बर 1973
85. गुरुकुल पत्रिका जनवरी 1974
86. गुरुकुल पत्रिका जून 1974
87. गुरुकुल पत्रिका जुलाई पृष्ठ 494, 495

पंचम-अध्याय

सन् 1980 के पश्चात् के गुरुकुल कांगड़ी के संविधान में परिवर्तन किया गया। जो इस प्रकार है- केवल परिवर्तित धाराओ के हिन्दी रूपान्तर धारा-5 के अनुसार निम्नलिखित, विश्वविद्यालय के कान्स्टीट्यूशन कॉलेज होंगे:-

1. वेद और कला महाविद्यालय हरिद्वार।
2. साईंस कॉलेज हरिद्वार।
3. कन्या गुरुकुल महाविद्यालय देहरादून।
4. और अन्य महाविद्यालय/स्कूल इसके बाद जो स्थापित किए जाएं।

विश्वविद्यालय के संशोधित नियम एवं उपनियम

1. शिष्ट परिषद्

शिष्ट परिषद् में निम्नलिखित होंगे।

आर्य प्रतिनिधि सभाओं- पंजाब, हरियाणा और दिल्ली के पांच-पांच प्रतिनिधि। अर्थात् तीनों सभाओं के 15 प्रतिनिधि।

* समस्त पूर्व कुलपति।

* विश्वविद्यालय का कोषाध्यक्ष।

* भारत सरकार द्वारा नामित एक प्रतिनिधि।

* तीन शिक्षाविद् नामित विश्वविद्यालय अनुदान आयोग नई दिल्ली।

* कुलाधिपति द्वारा नामित सात प्रतिनिधि जिनमें शिक्षाविद्, उद्योगपति, व्यापारी प्रशासक और सामाजिक कार्यकर्त्ता होंगे।

8 कुलपति के चयन के लिए एक नामित प्रतिनिधि कुलाधिपति, एक नामित प्रतिनधि विश्वविद्यालय अनुदान आयोग, एक नामित प्रतिनिधि परिद्रष्टा। परिद्रष्टा का प्रतिनिधि कमेटी का अध्यक्ष होगा।

2. वित्ताधिकारी

विश्वविद्यालय में एक अधिकारी वित्त-अधिकारी होगा जो कि जनरल के कार्यालय से नियुक्त किया जायेगा।

1. वह वित्ताधिकारी वार्षिक बजट एवं वार्षिक लेखा-जोखा विश्वविद्यालय के अधिकारियों के सामने प्रस्तुत करेगा एवं उसके प्रति उत्तरदायी होगा।
2. जो धन जिस उद्देश्य के लिए अथवा जिस विभाग के लिए स्वीकृत होगा उसको उसी में व्यय किया जाये इसके प्रति वह उत्तरदायी होगा।
3. अन्य उन ड्यूटियों को करेगा जो वाइस चान्सलर द्वारा सौंपी गई है।

4. कुलाधिपति की नियुक्ति प्रधान आर्य प्रतिनधि सभा पंजाब, प्रधान आर्य प्रतिनिधि सभा हरियाणा और प्रधान आर्य प्रतिनिधि सभा दिल्ली। इन तीनों की एक कमेटी कुलाधिपति की नियुक्ति की संस्तुति करेगी और इस कमेटी की संस्तुति को शिष्ट-परिषद् द्वारा स्वीकृत किया जायेगा।

विवाद समाप्त हो जाने के पश्चात् विश्वविद्यालय की स्थिति बड़ी ही शोचनीय हो गई थी। पुनः इस संस्था को आबाद सा करना था। इसलिए श्री बलभद्र कुमार हूजा कुलपति को तीसरी बार भी कुलपति नियुक्त किया गया। उनकी तीसरी बार नियुक्ति के पश्चात् उन्होंने गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय के अन्दर शैक्षणिक वातावरण को ठीक करना प्रारम्भ किया। इसलिए गुरुकुल में बाहर के विश्वविद्यालय के विद्वानों का आना प्रारम्भ हो गया।

सितम्बर 1982 में वैदिक शिक्षा राष्ट्रीय कार्यशाला का आयोजन दर्शनशास्त्र विभाग के तत्वावधान में किया। यह संभवतः राष्ट्रीय संगोष्ठी एवं राष्ट्रीय कार्यशाला के रूप में प्रथम राष्ट्रीय सेमीनार था जिस प्रकार के राष्ट्रीय सेमीनार अन्य विश्वविद्यालयों में सम्पन्न हुआ करते हैं। इस राष्ट्रीय कार्यशाला में लगभग 25 वैदिक विद्वान् अन्य विश्वविद्यालयों के यहाँ पर आये और उन्होंने अपने शोध-पत्र वाचन किए। इस कार्यशाला के निदेशक डॉ॰ जयदेव वेदालंकार थे जो दर्शन विभाग के विभागाध्यक्ष भी थे।

5 जून 1983 को पर्यावरण दिवस पर एक बृहद् संगोष्ठी का आयोजन किया गया। देश के अनेक विद्वानों ने इस संगोष्ठी में अपने शोध-पत्र वाचन किए। इस संगोष्ठी का उद्घाटन भारत सरकार के पर्यावरण मंत्रालय के उपमंत्री मान्य श्री दिग्विजय सिंह ने किया। अपने उद्घाटन भाषण में माननीय मंत्री जी ने कहा कि "प्राचीन भारत में पर्यावरण की रक्षा का प्रश्न इतना जटिल नहीं था जितना कि आज का भयंकर समस्या के रूप में उभर आया है। गुरुकुल कांगड़ी एवं गुरुकुल पद्धति का अर्थ ही पर्यावरण की रक्षा के पर्याय के रूप में माना जाता है क्योंकि गुरुकुलों की स्थापना वनों में, पर्वतों की उपत्याकाओं में होती थी।" इस वर्ष गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय को भारत सरकार की ओर से पर्यावरण के अध्ययन के लिए दस लाख रुपयें का अनुदान भी स्वीकार किया गया था।

9 मार्च 1983 को विश्वविद्यालय अनुदान की विजिटिंग कमेटी गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय की छठी पंचवर्षीय योजना को अंतिम रूप देने के लिए गुरुकुल कांगड़ी में आयी। इस समिति के अध्यक्ष श्री रमारंजन जी मुखर्जी कुलपति वर्द्धमान वि.वि. प्रो॰ आर.सी. गौड़ अलीगढ़ विश्वविद्यालय, प्रो॰ एम.एम. रैना पंजाब विश्वविद्यालय, श्री बी.आर. क्वात्रा उपसचिव विश्वविद्यालय अनुदान आयोग इस समिति के सचिव थे।

प्रोफेसर पद सृजन

इस समिति ने विश्वविद्यालय के समस्त विभागों का निरीक्षण किया। प्रत्येक विभाग की आवश्यकतानुसार समिति ने अपनी रिपोर्ट विश्वविद्यालय अनुदान आयोग को प्रस्तुत की। इसी समिति की संस्तुति पर विश्वविद्यालय को पचास लाख रुपये का अनुदान विश्वविद्यालय अनुदान आयोग द्वारा देना स्वीकार किया गया। इस अनुदान के अतिरिक्त सात प्रोफेसर पदों का सृजन भी किया गया। यहाँ यह ज्ञातव्य है कि इससे पूर्व विश्वविद्यालय में प्रोफेसर पद नहीं था, केवल रीड़र पद तक ही नियुक्तियाँ की जाती थी।

इस वर्ष अप्रैल में दीक्षान्त समारोह में भारत के प्रसिद्ध वैज्ञानिक आर्य सन्यासी स्वामी सत्यप्रकाश ने दीक्षान्त भाषण एवं नवस्नातकों को आशीर्वाद प्रदान किया। अगस्त में मान्य कुलपति श्री हूजा जी ने अन्तर्राष्ट्रीय कुलपति सम्मेलन में तेरहवें राष्ट्र मंडल विश्वविद्यालय सम्मेलन, ब्रह्मींघम (इंग्लैण्ड) में भाग लिया। मान्य कुलपति ने इसी अवसर पर आयरलैण्ड, फ्रांस, हालैण्ड, पश्चिमी जर्मनी, बैल्जियम आदि देशों

के प्रमुख विश्वविद्यालयों का भी अवलोकन किया। इस वर्ष पद्मश्री विजयचन्द्र मौदगिल्य प्राचार्य गन्धर्व महाविद्यालय नई दिल्ली जिनकी प्रारम्भिक शिक्षा गुरुकुल में ही हुई थी, वे गुरुकुल परिसर में पधारे और उन्होंने गुरुकुल विभाग के ब्रह्मचारियों को संगीत की शिक्षा प्रदान की। इसी वर्ष 26 दिसम्बर 1983 को लोकसभा अध्यक्ष श्री बलराम जाखड़ गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय के निमन्त्रण पर कांगड़ी ग्राम में पधारे। (जहां गुरुकुल की स्थापना हुई थी।) माननीय कुलपति श्री हूजा ने कांगड़ी ग्राम के विकास को विस्तारपूर्वक समझाया। श्री बलराम जाखड़ यह सब जानकर बहुत अधिक प्रभावित हुए।

इस वर्ष विश्वविद्यालय में अमेरिकन अध्ययन के एकल भारतीय संगठन का 18 वाँ वार्षिक अधिवेशन मनाया गया। इस सम्मेलन में लगभग सौ प्रतिनिधि बाहर के सम्मिलित हुए जिनमें उल्लेखनीय है, अवध विश्वविद्यालय के मल्होत्रा, इलाहाबाद, लखनऊ विश्वविद्यालय प्रोफेसर गण। जैसा कि हम लिखते आये है कि सन् 1980 के पश्चात् भी कुलपति हूजा जी ने विश्वविद्यालय के शैक्षणिक वातावरण में बहुत अधिक सुधार करने का प्रयास किया इसलिए गुरुकुल पत्रिका, आर्यभट्ट, वैदिक पथ आदि पत्रिकाएं नियमित रूप से प्रकाशित होने लगी थी। इसी श्रृंखला में महर्षि दयानन्द की निर्वाण शताब्दी के अवसर पर ऋषि दयानन्द की साधना और सिद्धान्त नामक ग्रन्थ भी प्रकाशित किया गया और अजमेर में निर्वाण शताब्दी के अवसर पर माननीय कुलपति श्री हूजा और इस ग्रन्थ के प्रस्तुतकर्त्ता डॉ॰ जयदेव वेदालंकार ने अपने हाथों से आम जनता को वितरित किया।

गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय में वेद एवं कला महाविद्यालय के वेद, संस्कृत, प्राचीन भारतीय इतिहास और हिन्दी विभागों में पी-एच.डी. हेतु अनुसंधान करने की स्वीकृति प्राप्त हुई थी। इस वर्ष 1983 में दर्शन विभाग में भी अनुसंधान कार्य प्रारम्भ करने की विश्वविद्यालय अनुदान आयोग ने स्वीकृति प्रदान की। 1983 में मनोविज्ञान, अंग्रेजी तथा विज्ञान महाविद्यालय के वनस्पति विज्ञान, और रसायन-विज्ञान आदि विभागों में भी पी-एच.डी. करने की अनुमति प्राप्त करने का प्रयास किया गया। इसी वर्ष विश्वविद्यालय में भारतीय विश्वविद्यालयों के सम्मानित विद्वानों के व्याख्यानों का आयोजन किया गया जिनमें मगध विश्वविद्यालय, गया के इतिहास के प्रोफेसर डॉ॰ उपेन्द्र ठाकुर, जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय में सेन्ट्रल एशिया अध्ययन के अध्यक्ष डॉ॰ राम राहुल, दिल्ली विश्वविद्यालय के मनोविज्ञान के अध्यक्ष डॉ॰ एच.सी. गांगुली, रांची विश्वविद्यालय के दर्शन विभाग के प्रो॰ एवं अध्यक्ष डॉ॰ आर.एस.श्रीवास्तव और मुजफ्फनगर के प्रो॰ विश्वनाथ मिश्र ने विजिटिंग फैलों के रूप में आकर व्याख्यान दिए। इन प्रसिद्ध विश्वविद्यालयों विद्वानों के आगमन से जहां विश्वविद्यालय की कीर्ति फैलने लगी वहीं पर विश्वविद्यालय का शैक्षणिक अध्ययन भी उच्च अध्ययन के अनुकूल होने लगा।

जैसा कि यह वर्णन हो चुका है कि विश्वविद्यालय में नए पदों की स्वीकृति हो गई थी इसलिए प्राध्यापकों की नियुक्ति के लिए विषय विशेषज्ञ के रूप में जो विद्वान् विश्वविद्यालय परिसर में पधारे उनमें कुछ प्रसिद्ध विश्वविद्यालयों के विद्वान् प्रोफेसरों के नाम उल्लेखनीय हैं। इनमें जगन्नाथपुरी विश्वविद्यालय के कुलपति डॉ॰ सत्यव्रत शास्त्री, गुजरात विद्यापीठ के कुलपति डॉ॰ रामलाल पारीख, कश्मीर विश्वविद्यालय के कुलपति श्री वहीद मलिक और वर्धमान विश्वविद्यालय के कुलपति प्रो॰ रामारंजन मुखर्जी, ये विद्वान् अपने-अपने विषयों के विषय विशेषज्ञ के रूप में आए थे।

छठी पंचवर्षीय योजना में अन्य पदों के साथ विश्वविद्यालय अनुदान आयोग ने एक चेयर की स्थापना की स्वीकृति प्रदान की थी। इनमें चार विषयों के उच्च अध्यचन के लिए प्रावधान किया था जिसमें वैदिक साहित्य, भारतीय दर्शन, धर्म और आधुनिक पुनर्जागरण के सम्बन्ध में चेयर की स्थापना करने का प्रावधान किया था। इस चेयर के निदेशक के रूप में दर्शन विभाग के अध्यक्ष को मनोनीत करने का प्रावधान किया

था, परन्तु किन्हीं कारणों से विश्वविद्यालय इस चेयर को प्रारम्भ नहीं कर सका। इसी वर्ष विश्वविद्यालय में इलाहाबाद विश्वविद्यालय के न्यायाधीश श्री के.एन.सिंह, कर्नाटक उच्च न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश श्री लाओस, वियतनाम और कम्पूचिया के राजदूत भी विश्वविद्यालय परिसर में पधारे, गुरुकुल शिक्षा प्रणाली की विशेषताओं को जानकर बहुत अधिक प्रभावित हुए।

स्वीकृत अनुदान के कारण गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय में आठ प्रोफेसर क्वार्ट्स के निर्माण का कार्य प्रारम्भ हुआ। इसका शिलान्यास। फरवरी 1984 को परिद्रष्टा डॉ॰ सत्यव्रत सिद्धान्तालंकार ने किया। इस अवसर पर विश्वविद्यालय के कुलाधिपति श्री वीरेन्द्र जी भी उपस्थित थे।[1]

20 नवम्बर 1983 को विक्रम विश्वविद्यालय उज्जैन में कालिदास अकादमी द्वारा आयोजित अखिल भारतीय संस्कृत वाद-विवाद प्रतियोगिता में छात्र श्री दूधपुरी गोस्वामी (अलंकार प्रथम खण्ड) ने प्रथम स्थान प्राप्त किया तथा श्री सत्यदेव एम.ए. द्वितीय खण्ड के छात्र ने तृतीय स्थान प्राप्त कर विश्वविद्यालय की गौरव वृद्धि की।

दर्शन विभाग में पांच छात्र पी-एच.डी. हेतु शोध कार्य डा॰ जयदेव वेदालंकार के निर्देशक में कर रहे थे जिनके शोध विषय इस प्रकार थे- आयुर्वेदिक ग्रन्थों में सांख्य दर्शन के मूल तत्व, आचार्य शंकर रामानुज और महर्षि दयानन्द के दर्शन का तुलनात्मक अध्ययन, श्री अरविन्द और महर्षि दयानन्द का तुलनात्मक परिशीलन, न्याय और बौद्ध दर्शन की प्रमाण मीमांसा का तुलनात्मक अध्ययन, महात्मा गाँधी और महर्षि दयानन्द एक परिशीलन। इन उपर्युक्त विषयों में महर्षि दयानन्द के दर्शन के विविध रूपों को लेकर शोध कराया गया जिससे कि गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय का मूल उद्देश्य होता है। डॉ॰ वेदालंकार द्वारा ही दयानन्द दर्शन पर कई ग्रन्थ लिखे गए हैं। इतिहास विभाग में प्रोफेसर पद का सृजन किया गया और डॉ॰ विनोद चन्द्र सिन्हा को 15 फरवरी 1984 को प्रोफेसर पद पर नियुक्त किया गया। इतिहास विभाग के ही डॉ॰ सिन्हा ने इस पद से त्यागपत्र दे दिया और कुलपति श्री हूजा ने प्रो॰ सिन्हा को कुल सचिव चयन समिति का सचिव नियुक्त किया। विश्वविद्यालय में इस वर्ष योग्यता प्रोन्नत योजना लागू की गई। इस योजना के क्रियान्वयन का दायित्व भी प्रो॰ सिन्हा को ही सौंपा गया। इस वर्ष पुरातत्व संग्रहालय में दो नई विथिकाओं का समावेश किया गया। ये अष्ट धातुकक्ष एवं चित्रकला कक्ष नाम की वीथिकाएं थी। आंग्ल भाषा विभाग में डॉ॰ राधेलाल वार्ष्णेय जो सन् 1977-80 तक कुलसचिव पद पर रहे थे, उन्होंने इस वर्ष कुलपति के सचिव के रूप में भी 1984 में कार्य किया।

हिन्दी विभाग में डॉ॰ अम्बिका प्रसाद वाजपेयी ने तुलसी के काव्य का मनोवैज्ञानिक विशलेषण पर डी.लिट्. की उपाधि प्राप्त की और डा॰ विष्णुदत्त राकेश ने हिन्दी के ध्वनिवादी आचार्यों पर शोध प्रबन्ध लिखा। इस विषय पर उन्होंने भी डी.लिट्. की उपाधि प्राप्त की।

विज्ञान महाविद्यालय में विश्वविद्यालय अनुदान की संस्तुति के आधार पर कई पदों का सृजन किया गया जिसमें गणित विभाग में प्रोफेसर पद और वनस्पति विज्ञान विभाग में प्रोफेसर पद स्वीकार किए गए। जन्तु विज्ञान विभाग के डॉ॰ बी.डी. जोशी के निर्देशन में विज्ञान महाविद्यालय के पन्द्रह छात्रों का एक दल सरस्वती यात्रा पर दक्षिण भारत के कई विश्वविद्यालयों में गया। जैसे कि उन्होंने मद्रास विश्वविद्यालय में सर्प संग्रहालय आदि अनेक स्थलों का अवलोकन किया और जन्तु विज्ञान सम्बन्धी अनेक नई जानकारियाँ प्राप्त की।

वनस्पति विज्ञान-विभाग के पर्यावरण संरक्षण एवं संवृद्धि विषय पर एक संगोष्ठी का आयोजन किया गया। इस संगोष्ठी में बाहर से आये अनेक वैज्ञानिकों ने भाग लिया। इस अवसर पर शोध पत्र पढ़े गए थे उनकी एक स्मारिका भी प्रकाशित की गई।

गुरुकुल विश्वविद्यालय में पत्रिका का प्रकाशन तो नियमित रूप से हो ही रहा है इसके साथ ही इस वर्ष आंग्ल भाषा में वैदिक पाथ नामक "जनरल ऑफ वैदिक इण्डोलॉजिकल एण्ड साइन्टिफिक रिसर्च" के नाम से प्रकाशित किया गया। इस जनरल को अधिक प्रभावशाली बनाने के लिए परामर्शदाता मंण्डल का पुनर्गठन किया गया। इसमें मैक्सिकों विश्वविद्यालय के संस्कृत विभाग के अध्यक्ष डॉ॰ मोटा को तथा धर्मयुग में नवनीत आदि प्रसिद्ध पत्रिकाओं के भूतपूर्व सम्पादक श्री सत्यकाम विद्यालंकार आदि को सदस्य बनाया गया। इस पत्रिका का यही उद्देश्य है कि आंग्ल भाषा के माध्यम से भारतीय धर्म, संस्कृति और दर्शन का ज्ञान कराया जाये। इस वैदिक पथ के प्रायः वैदिक साहित्य, भारतीय संस्कृति और धर्म पर ही लेख प्रकाशित किए जाते थे। इसका सम्पादन मनोविज्ञान विभाग के रीडर डॉ॰ हरगोपाल सिंह ने किया।[2] कन्या गुरुकुल महाविद्यालय देहरादून में रीडर आचार्य रामदेव चिकित्सालय में चिकित्सा की उत्तम सुविधा प्राप्त है। सन् 1984 में इस चिकित्सालय में 29 हजार रोगियो की चिकित्सा की गई। 4 नवम्बर 1983 को कन्या गुरुकुल का जन्मोत्सव कुलभूमि में सामारोह पूर्वक मनाया गया। इसमें सर्वप्रथम वृहद् यज्ञ का आयोजन किया गया। इस अवसर पर संगीत, नाटक और अभिनय के अत्यन्त रोचक कार्यक्रमों ने दर्शकों को प्रभावित किया। जिला स्तरीय खेलकूद प्रतियोगिता में कुमारी रेणु ने सर्वश्रेष्ठ छात्रा के रूप में प्रथम स्थान प्राप्त किया। इस प्रकार कन्या गुरुकुल महाविद्यालय देहरादून को गौरवशाली स्थान प्राप्त कराया। कन्या गुरुकुल की छात्राओं ने इस वर्ष देहरादून जिले के सभी खेल एवं क्रीड़ाओं में भाग लिया। कुमारी सुमन ने 500 मीटर की दौड़ में प्रथम स्थान प्राप्त किया। जनवरी 1984 में छात्राओं का राष्ट्रीय सेवा योजना शिविर तपोवन में आयोजित किया गया। इस शिविर का उद्घाटन श्री बलभद्र कुमार हूजा कुलपति विश्वविद्यालय ने किया। इस शिविर में छात्राओं ने सड़क बनाने का कार्य किया, ग्रामों में साक्षरता अभियान चलाया और ग्रामीण महिलाओं को सफाई कढ़ाई-बुनाई और पढ़ाई का कार्य सिखाया। इस शिविर के समापन में आचार्या श्रीमती दयमन्ती उपस्थित थी।[3]

विद्यालय विभाग में 1983 में छात्रों की संख्या 187 थी। पं॰ सत्यकाम विद्यालंकार को विद्यालय विभाग का पृथक् आचार्य नियुक्त किया गया। पं॰ सत्यकाम विद्यालंकार गुरुकुल के संस्थापक स्वामी श्रद्धानन्द के दौहित्र थे। आप नवनीत के सम्पादक भी रहे थे। विद्यालय विभाग में मान्य कुलपति के प्रयास से संगीत शिक्षण का प्रबन्ध भी किया गया। इसी प्रयास के अन्तर्गत मनोविज्ञान विभाग के प्राध्यापक एक-एक वेद मंत्र छात्रों को प्रतिदिन पढ़ाते और कण्ठस्थ कराते। श्री चन्द्रशेखर त्रिवेदी के इस प्रयास से 100 वेदमन्त्रों का एक संकलन गोवर्धन ज्योति पुस्तक की षष्ठ रश्मि के रूप में संघड़ विद्या सभा के सहयोग से प्रकाशित किया गया। इसी कार्यक्रम के अन्तर्गत डॉ॰ जयदेव वेदालंकार अध्यक्ष दर्शन विभाग को यह कार्य दिया गया कि वे प्रतिदिन सांय काल संध्या के पश्चात् ब्रह्मचारियों को संस्कृत के श्लोकों का सस्वर पाठ कराया करें। अर्थात् छन्दोबद्ध रीति से श्लोकों का गायन करें। 2 अक्टूबर 1983 को पठानकोट (पंजाब) में आयोजित संस्कृत श्लोक अन्त्याक्षरी प्रतियोगिता में भी बसन्त कुमार अध्यापक के नेतृत्व में चार ब्रह्मचारियों का दल दूसरा स्थान प्राप्त कर लौटा। विद्यालय भण्डार में गोबर गैस प्लान्ट की स्थापना की गयी स॰ मुख्याधिष्ठाता कैप्टन देशराज जी रहे। इनसे पूर्व श्री धर्मवीर विद्यालंकार। स. मुख्याधिष्ठाता रहें। इस 1983-84 में ही विद्यालय विभाग के मुख्याध्यापक ने विद्या सभा से यह मांग की थी कि विद्यालय विभाग में शौचालयों की आवश्यकता, तख्तों, पलंगों की आवश्यकता, क्रीडा सामग्री का अभाव की पूर्ति, अतिथि निवास की व्यवस्था और विज्ञान प्रयोगशाला हेतु उपकरणों की महती आवश्यकता है।[4]

विजिटिंग कमेटी का आगमन

गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय को भारत सरकार से अनुदान मिलना 1962 से प्रारम्भ हो गया था।

विद्यालय विभाग को केवल फार्मेसी को छोड़कर अन्यत्र कहीं से भी अनुदान नहीं मिल रहा था। इसलिए विद्यालय विभाग का विकास उस गति से नहीं हो पा रहा था जिस गति से विश्वविद्यालय का विकास हो रहा था। मार्च 1983 में विश्वविद्यालय अनुदान आयोग की विजिटिंग कमेटी ने मान्य कुलपति के आग्रह पर विद्यालय विभाग का भी निरीक्षण किया। जब कमेटी ने अपनी रिपोर्ट विश्वविद्यालय अनुदान आयोग को प्रस्तुत की तो उसमें यह भी संस्तुति की गई थी कि मुस्लिम विश्वविद्यालय अलीगढ़ की तरह यू.जी. सी. को गुरुकुल कांगड़ी वि.वि. को प्रथम कक्षा से ही अर्थात् विद्यालय विभाग से ही मान्यता देकर सम्पूर्ण व्यय का वहन किया जाए। इस प्रस्ताव के क्रियान्वयन के लिए विधासभा का प्रस्ताव एवं स्वीकृति आवश्यक थी। यद्यपि विद्यालय विभाग के कर्मचारी और अध्यापक गण यह चाहते थे कि यह प्रस्ताव पारित हो जाये परन्तु किन्हीं कारणों से यह उक्त प्रस्ताव पारित नहीं हो पाया। सम्भवत: यह कारण रहा होगा कि गुरुकुल की स्वामिनी सभा अपने स्वामित्व को नहीं छोड़ना चाहती होगी। परन्तु यह भय उचित प्रतीत नहीं होता क्योंकि आर्य विद्या सभा के सदस्य बहुसंख्यक रूप मे रहते ही है, जैसे कि विश्वविद्यालय कीं प्रबन्ध समितियों में स्वामिनी सभाओं के सदस्य आज भी बहुसंख्यक रूप में हैं काश यदि वैसा हो पाता तो विद्यालय विभाग आर्थिक अभाव से मुक्त हो जाता।

गुरुकुल कांगड़ी फार्मेसी भी विश्वविद्यालय के अन्तर्गत विश्वविद्यालय अनुदान आयोग द्वारा मान्यता प्राप्त करें अर्थात् तीनों संस्थाएं जिसमें विश्वविद्यालय, विद्यालय विभाग और फार्मेसी का एक ही प्रशासन तन्त्र हो यह मांग भी कर्मचारियों की ओर से समय-समय पर उठती रही है।

श्रीमती माधुरी शाह का आगमन

विश्वविद्यालय अनुदान आयोग की अध्यक्षा श्री मती माधुरी शाह अक्टूबर 1984 में विश्वविद्यालय परिसर में पधारी थी। विश्वविद्यालय परिसर में वे थोड़े ही समय तक रही परन्तु उसी समय श्री जी.वी. के. हूजा कुलपति महोदय ने उनसे यह प्रार्थना की कि यहाँ विश्वविद्यालय में कम्प्यूटर प्रशिक्षण प्रारम्भ करना चाहते है। आप हमारे यहाँ कम्प्यूटर देने की कृपा करें। श्रीमती माधुरी शाह ने जाते-जाते मान्य कुलपति से प्रार्थना को स्वीकार करते हुए कहा कि मुझे स्वीकार है इस विषय में योजना बनाकर विश्वविद्यालय अनुदान आयोग को प्रस्तुत करें। मान्य कुलपति ने शीघ्र ही योजना बनाकर विश्वविद्यालय अनुदान आयोग को प्रस्तुत की और कुछ ही महीनों पश्चात् विश्वविद्यालय अनुदान आयोग ने इसे स्वीकार कर लिया। जनवरी 1985 में अखिल भारतीय संद्य विश्वविद्यालय के तत्वावधान में विश्वविद्यालय में अनुसूचित तथा जनजातियों के प्रश्न को लेकर उत्तर क्षेत्रिय कुलपतियों का दो दिवसीय सम्मेलन विश्वविद्यालय परिसर में हुआ। उद्घाटन समारोह की अध्यक्षता पद्मश्री आर.एस. मिश्र कुलपति लखनऊ विश्वविद्यालय ने की थी। उद्घाटन भाषण नियन्त्रक भारत सरकार श्री टी.एन.चतुर्वेदी ने किया। इसी अवसर पर अखिल भारतीय विश्वविद्यालय संघ के संयुक्त सचिव श्री अंजनी कुमार ने प्रस्तावना भाषण किया। इस अवसर पर जो शोध पत्र वाचन किए गए, उनमें मुख्य रूप से यह विचार अभिव्यक्त किए गए थे कि आरक्षण नीति को पुन: निरीक्षित करना अपेक्षित है। इनमें एक विचार यह भी मुख्य रूप से उभर कर आया कि देश में जाति-पाति का जहर पुन: बढ़ रहा है। यदि हमारी शिक्षा नीति में गुरुकुल शिक्षा नीति की स्वीकार करके समान शिक्षा, समान भोजन की व्यवस्था अखिल भारतीय स्तर पर गांव को इकाई मानकर की जाये तो आरक्षण की नीति कुछ वर्ष पश्चात् स्वत: समाप्त हो जाएगी।

श्री जी.वी.के. हूजा कुलपति ने अपने स्वागत भाषण, जो उन्होंने दीक्षान्त समारोह के अवसरो पर दिया था, कहा था कि "इस अवसर पर क्योंकि यह मेरा अन्तिम प्रतिवेदन है, इसलिए मैं विश्वविद्यालय के आचार्यों, ब्रह्मचारियों एवं कर्मचारियों से भी कहना चाहूँगा, जैसे गुरुदेव विरजानन्द ने महर्षि दयानन्द जी से

दक्षिणा मांगी थी उसी प्रकार मैं स्वामी श्रद्धानन्द को मानकर गुरु दक्षिणा की मांग करता हूँ। आज़ स्तर तथा वेतनमान तथा अन्य सुविधाओं की दृष्टि से हम देश के नए विश्वविद्यालयों के समकक्ष खड़े है। मैं चाहूँगा कि वर्ष में कम से कम 250 दिन तथा सप्ताह में 40 घन्टें विश्वविद्यालय में कार्य करने का व्रत लें। गुरुकुल के कर्मचारी आर्य समाज के कोश में अपने आय का एक प्रतिशत दें तथा जनसाधारण तक कल्याणी वेद वाणी का सन्देश पहुंचायें। सत्य, ऋत्, दीक्षा, दृढ़संकल्प, आस्तिकता तप और यज्ञ की दीक्षा लेकर समाज में मन से सेवा करें। तभी गुरुकुल शब्द अपनी सार्थकता प्रामाणित कर सकेगा। मुझे संतोष तब होगा जब यहाँ के सब आचार्य तथा शिष्य संस्कृत में बात करेंगे। अंग्रेजी तथा अन्य अन्तर्राष्ट्रीय भाषाओं में दक्षता प्राप्त करेंगे तथा संस्कृत का सन्देश पूर्वोत्तर भारत में तथा विदेशी भाषा के माध्यम से पहुचायेंगे।[5] दयानन्द का सन्देश विदेशी भाषाओं में करें, आप लोगों को यह अन्तर्राष्ट्रीय चुनौती है। श्री पं० सत्यदेव भारद्वाज वेदालंकार ने 13-4-1985 को दीक्षान्त भाषण दिया।

वेद विभाग में पी-एच.डी. हेतु शोध कार्य सुचारू रूप से सन् 1962 से चल रहा है। 1984 में वेद विभाग में 13 छात्र पी-एच.डी. हेतु पंजीकृत थे।

संस्कृत विभाग में भी 1962 से ही पी-एच.डी. हेतु शोध कार्य प्रारम्भ हुआ था अनेक छात्र यहाँ से पी-एच.डी. की उपाधि प्राप्त कर चुके। इस विभाग में 1984 में 10 शोध छात्र शोध हेतु पंजीकृत हुए।

दर्शनशास्त्र विभाग में सितम्बर 1984 में मानवीय मूल्य और समाज में अन्त: सम्बन्ध विषय पर एक राष्ट्रीय संगोष्ठी का आयोजन किया। इसके साथ ही उत्तर प्रदेश दर्शन परिषद् का दशम वार्षिक समारोह भी आयोजित किया गया गया। इस संगोष्ठी के लिए सम्भवत: प्रथम बार विश्वविद्यालय अनुदान आयोग से दस हजार रुपये और इंडियन कौसिल ऑफ फिलोसॉफीकल रिसर्च नई दिल्ली से दस हजार रुपये का अनुदान प्राप्त हुआ। यहाँ पर ज्ञातव्य है कि इससे पहले विश्वविद्यालय के इतिहास में राष्ट्रीय संगोष्ठियों के आयोजन हेतु अनुदान प्राप्त नहीं हुआ था। इस संगोष्ठी का निर्देशन डा० जयदेव वेदालंकार अध्यक्ष दर्शन विभाग के निर्देशकत्व में सम्पन्न हुआ। इस संगोष्ठी के अवसर पर वाचन किए गए शोध पत्रों का शोध-पत्र संकलन ग्रंथ के रूप में प्रकाशित हुआ जिसका सम्पदान डॉ० जयदेव वेदालंकार ने किंया था। सन् 1984 के सत्र में दर्शन विभाग में सात छात्र पी-एच.डी. के लिए पंजीकृत हुए थे। यहाँ यह ज्ञातव्य है कि दर्शन विभाग में पी-एच.डी. हेतु शोध कार्य का प्रारम्भ 1984 में ही प्रारम्भ हुआ था।

मनोविज्ञान विभाग में भी पी-एच.डी. का कार्य 1984 में ही प्रारम्भ हुआ। दो छात्र पी-एच.डी. हेतु पंजीकृत हुए थे। विश्वविद्यालय में प्रोन्नत योजना के अन्तर्गत श्री ओ.पी.मिश्र को प्रोफेसर पद पर प्रोन्नत किया गया। मान्य कुलपति ने प्रो.ओ.पी. मिश्र को डीन स्टूडेन्ट वेल फेयर के पद पर नियुक्त किया। इसके अतिरिक्त उन्हें विश्वविद्यालय के राष्ट्रीय सेवा योजना का कोर्डीनेटर तथा विश्वविद्यालय में स्थापित विश्वविद्यालय सेवा योजना सूचना एवं प्रेरणा केन्द्र का प्रमुख मनोनीत किया गया। इसके अतिरिक्त उन्हें प्रौढ़ शिक्षा समिति की सलाहकार समिति तथा चयन समिति में सदस्य के रूप में नियुक्त किया गया। इस विभाग के डॉ० हरगोपाल सिंह ने वैदिक पाथ नामक शोध पत्रिका का सम्पादन किया।

प्राचीन भारतीय इतिहास, संस्कृति एवं पुरातत्व विभाग में सन् 1962 से ही पी-एच.डी. हेतु शोध कार्य प्रारम्भ हो गया था। 1984 के सत्र में इस विभाग में शोध छात्रों की संख्या 14 थी। डॉ० विनोद चन्द्र सिन्हा को विश्वविद्यालय अनुदान आयोग ने नेशनल फैलो घोषित किया। यह विश्वविद्यालय के लिए सम्मान का विषय था। इस वर्ष में इस विभाग में भारत के प्रसिद्ध पुरातत्वविद डॉ० आर.सी. अग्रवाल विजिटिंग प्रोफेसर के रूप में नियुक्त हुए। श्री अग्रवाल ने अनेक इतिहास के सम्बन्ध में छात्रों के लिए ज्ञानवर्द्धक भाषण दिए। इसी वर्ष डॉ० विनोद चन्द्र सिन्हा का नया ग्रन्थ "ग्लोरियस आर्ट ऑफ एज प्रकाशित हुआ। डॉ० जबर सिंह

सेंगर का भी ग्रन्थ भारत कम्बूज सम्बन्ध मेरठ से प्रकाशित हुआ। इसी विभाग के डॉ० श्याम नारायण सिंह उप कुलसचिव पद पर भी कार्यरत थे।[6]"

विश्वविद्यालय अनुदान आयोग ने पुरातत्व संग्रहालय के लिए 50 हजार रुपये का अनुदान स्वीकार किया था। पुरातत्व संग्रहालय के अपने 11 सौ ग्रन्थ भी संगृहीत हैं। यह संग्रहालय आस-पास के क्षेत्र में पुरातात्विक सर्वेक्षण करता रहता है इस वर्ष श्यामपुर, कुन्डी सोरा, बण्डावर जिला, इमलीखेडा, जीवन हेडी, सुल्तानपुर, नसीरपुर, सरसावा, मायापुर एवं सती कुण्ड (जिला- सहारनपुर) गेरूवे रंग के भांड के लिए प्रसिद्ध है। अभी तक की खोज में पूर्णत: नवीन योग है कि सरसावा से महाभारत कालीन वित्रित धूसरमृद् भांड प्राप्त हुए हैं। कालसी क्षेत्र में भूरे मृद् भांड एवं काले ओएदाल मृदभाण्डों के समकालीन मृद्भांड की भांति भी इस क्षेत्र का महत्वपूर्ण योगदान रहा।

आंग्ल भाषा विभाग में भी सन् 1984 से ही पी-एच.डी. हेतु शोध कार्य प्रारम्भ हुआ। इसी 1984 के सत्र में 4 शोध छात्र पंजीकृत हुए। लेंगुएज लेबोरेटरी नाम से विभाग में 30 हजार रुपये का अनुदान विश्वविद्यालय अनुदान आयोग द्वारा स्वीकार किया गया जिसमें इस लेबोरेटरी के लिए उपकरण खरीदे गए।

हिन्दी विभाग में भी इसी वर्ष पी-एच.डी. हेतु शोध कार्य प्रारम्भ हुआ। 1984 के सत्र में ही कुरुक्षेत्र विश्वविद्यालय के पूर्व कुलपति डॉ० गणपति चन्द्र गुप्त को विजिटिंग प्रोफेसर के रूप में नियुक्त किया गया। डॉ० गणपति चन्द्र के हिन्दी विभाग में अनेक व्याख्यान हुए। डॉ० विष्णुदत्त राकेश का "दस महाविद्या मीमांसा" नामक ग्रन्थ इसी वर्ष प्रकाशित हुआ।

गणित विभाग में अप्रैल 1984 को प्रो० एस.एल.सिंह की प्रोफेसर पद पर नियुक्ति हुई। विभाग में इसी सत्र में डॉ० जोशी द्वारा कम्प्यूटर विषय पर भाषण प्रदान किया गया।

विज्ञान महाविद्यालय के अन्तर्गत चलने वाले गणित विभाग में श्री सुरेशचन्द्र त्यागी प्राचार्य विज्ञान महाविद्यालय को प्रोन्नत योजना के अन्तर्गत प्रोफेसर पद पर प्रोन्नत किया गया।

भौतिकी विज्ञान विभाग में यू.जी.सी. प्राप्त अनुदान से एम.एम.सी. के लिए प्रयोगशाला का निर्माण किया गया। एम.एस.सी. प्रयोगशाला के लिा 54 हजार रूपये के उपकरण तथा 25 हजार के अन्य सामान खरीदा गया। यू.जी.सी. के रिपोर्ट के अनुसार भौतिकी विज्ञान विभाग में एम-एस.सी. कक्षाएं प्रारम्भ करने की स्वीकृति प्रदान कर दी गई थी। डॉ० हरिश्चन्द्र ग्रोवर अध्यक्ष भौतिक विभाग में अपने विभाग के अतिरिक्त कुछ माह पर्यन्त वित्ताधिकारी पद पर भी कार्य किया। रसायन विभाग में इस सत्र मं विश्वविद्यालय अनुदान आयोग की स्वीकृति के अनुसार इम्पलायल रसायन में एक सर्टीफिकेट कोर्स "कॉमर्सियल मेथड्स और केमिकल एनेलेसिस प्रारम्भ किया गया। विभाग में एम्पायड रसायन में पी.जी. डिप्लोमा भी प्रारम्भ करने की स्वीकृति प्रांप्त हुई। इसी सत्र में रसायन विभाग में एस.एन. टण्डन प्रोफेसर एवं अध्यक्ष रुड़की विश्वविद्यालय तथा एस.के. श्रीवास्तव प्रोफेसरों के अध्यक्ष का विभाग में भाषण हुए। इसी विभाग के डॉ० रजनीश दत्त कोशिक को विश्वविद्यालय अनुदान आयोग द्वारा शोध परियोजना के अन्तर्गत अगस्त 1984 को स्वीकृति मिली।"

जन्तु विज्ञान विभाग में विश्वविद्यालय अनुदान आयोग की स्वीकृति के अनुसार माइक्रो बॉयोलोजी विषय में स्नातकोर कक्षाओं का आयोजन हुआ। प्रोन्नत योजना के अन्तर्गत डॉ० टी.आर. सेठ को रीडर पद पर प्रोन्नत किया गया। डॉ० बी.डी. जोशी चयन प्रक्रिया के द्वारा प्रोफेसर पद पर अप्रैल 1985 को नियुक्त किए गए। कुलपति मान्य श्री हूजा जी के द्वारा श्री बी.डी. जोशी को अनेक समितियों का समायोजन कार्य सौंपा गया।[7]

राष्ट्रीय सेवा योजना के अन्तर्गत विश्वविद्यालय में राष्ट्रीय सेवा योजना के विभिन्न कार्यक्रम प्रारम्भ किए गए। अनेक अवसरों पर विश्वविद्यालय परिसर में सफाई, बागवानी, गुड़ाई आदि के कार्य किए गए। कांगड़ी ग्राम में जाकर दस दिवसीय शिविर का आयोजन किया गया। शिविर के दोनों में पगडंडियों का निर्माण गांव के कुओं की सफाई नालियों का निर्माण, ग्राम वासियों के स्वास्थ्य, परिवार नियोजन सम्बन्धी परियोजना, सफाई आदि के नियम को गांव वासियों को समझाया गया। इसी 1984 के सत्र में राष्ट्रीय सेवा योजना के अन्तर्गत अनेक प्रकार के कार्यक्रमों का भी आयोजन किया गया।

गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय की स्थापना काल से ही सामाजिक कार्यों में विशेष अभिरुचि रही है। परन्तु विश्वविद्यालय बनने के पश्चात् जो विश्वविद्यालय अनुदान आयोग की विभिन्न शोध योजनाएं प्रारम्भ हो गई थी उन्हीं योजना के अन्तर्गत जन्तु विज्ञान विभाग को भारत सरकार के पर्यावरण एवं वन मन्त्रालय ने हरिद्वार के निकट हिमालय के शिवालिक श्रृंखलाओं में स्थित कण्वाश्रम क्षेत्र में पर्यावरण एवं सुधार हेतु लगभग नौ लाख 68 हजार रूपये का धन स्वीकृत किया गया। इस योजना के निर्देशक विभागाध्यक्ष डॉ॰ बी.डी. जोशी बनाए गए।

वनस्पति विज्ञान विभाग में यू-सी.जी. के द्वारा स्वीकृत 1984 के सत्र में एम.एस.सी. माइक्रो बायोलॉजी की कक्षाएं प्रारम्भ हुई। क्रेडिट सिस्टम के अनुसार इसका पाठ्यक्रम बनाया गया। प्रोन्नत योजना के अन्तगर्गत डॉ॰ विजयशंकर को प्रोफेसर पद पर प्रोन्नत किया गया।

पुस्तकालय विभाग

गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय में पुस्तकालय का प्रारम्भ लगभग उसके प्रारम्भं के साथ ही हो गया था। इस समय तक पुस्तकालय में अनेक विभाग प्रारम्भ कर दिए गए थे। जो इस प्रकार विभाजित किए गए। सन्दर्भ ग्रन्थ, पत्रिका संग्रह, आर्य साहित्य संग्रह, आयुर्वेद संग्रह, विभिन्न विषयों के हिन्दी पुस्तक संग्रह, विज्ञान संग्रह, अंग्रेजी साहित्य संग्रह, पं॰ इन्द्र जी संग्रह, दुर्लभ पुस्तक संग्रह, पाण्डुलिपि संग्रह, गुरुकुल प्रकाशन संग्रह, प्रतियोगितात्मक पुस्तक संग्रह, शोध प्रबन्ध संग्रह, रूसी साहित्य संग्रह, आरक्षित पुस्तक संग्रह, उर्दू संग्रह, मराठी संग्रह, इन 20 विभागों में पुस्तकालय को 84 के सत्र में विभाजित किया गया। इसी 84 के सत्र में ही पुस्तकालय के अन्तर्गत एक नई सेवा मान्य कुलपति श्री जी.वी.के. हूजा की प्रेरणा के श्रद्धेय गोवर्द्धन जी शास्त्री की स्मृति में प्रारम्भ की गई इस ग्राम्य पुस्तकालय में 1000 पुस्तकों का प्रबन्ध किया गया। इसी प्रकार श्यामपुर ग्राम में भी ग्राम पुस्तकालय के अन्तर्गत 250 पुस्तकों का एवं वाचनालय का प्रबन्ध किया गया। इसी सत्र में विश्वविद्यालय के छात्रों को प्रतियोगितात्मक परीक्षाओं में सफलता प्राप्त करने में प्रोत्साहन देने हेतु विश्वविद्यालय पुस्तकालय ने प्रतियोगितात्मक पुस्तक संग्रह की स्थापना की। और इसमें यह भी संग्रह किया गया कि प्रतियोगी परीक्षाओं के सम्बन्ध में जितनी भी पत्रिकाएं प्रकाशित हो रही है वे सभी पुस्तकालय में मंगायी जायें। इस प्रकार उक्त कार्य के लिए लगभग 300 ग्रन्थ और मंगाए गए। श्री जगदीश प्रसाद विद्यालंकार के पुस्तकालय अध्यक्ष बनने पर पुस्तकालय को व्यवस्थित किया गया। पुस्तकालय में ही भारतवर्ष के सुप्रसिद्ध पुस्तकालय वैज्ञानिक श्री डी.आर.कालिया ने विजिटिंग फैलो के रूप में 3 माह तक अपना मार्ग दर्शन प्रस्तुत किया। भारत सरकार द्वारा पुस्तकालय अध्यक्ष संघ की ओर से राष्ट्रीय पुस्तकालय संगोष्ठी का आयोजन 23 मई से 25 मई 1985 तक किया गया। इस सम्मेलन के विभिन्न शोध पुस्तकालय के लगभग 60 प्रतियोगियों ने भाग लिया। इस संगोष्ठी का आयोजन टी.आर. चन्द्रशेखरन महाप्रबन्धक भेल रानीपुर द्वारा किया गया। सम्मेलन के मुख्य अतिथि रुड़की विश्वविद्यालय के कुलपति श्री सी.पी. गुप्ता थे। पुस्तकालय को छठी पंचवर्षीय योजना के अन्तर्गत यू.जी.सी. से 10.25 लाख रूपये का अनुदान प्राप्त हुआ। इस अनुदान से 7 हजार दो सौ विभिन्न विषयों के ग्रन्थ क्रय किए गए।[8]

इस सत्र में क्रीड़ा विभाग में अनेक कार्यक्रमों का आयोजन किया गया। इस वर्ष भारतीय विश्वविद्यालय संगठन नई दिल्ली में उत्तर विश्वविद्यालय बैडमिन्टन पुरूष एवं महिला टूर्नामेन्ट का भार गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय को दिया गया। टूर्नामेन्ट का आयोजन खेल भवन बी.एच.ई.एल. में किया गया। इसका उद्घाटन 23 दिसम्बर 1984 को कुलपति श्री बलभद्र कुमार हूजा जी ने किया। यहाँ यह ज्ञातव्य है कि गुरुकुलीय इतिहास में प्रथम बार अन्तर विश्वविद्यालय टूर्नामेन्ट का आयोजन किया गया था। गुरुकुल विश्वविद्यालय की क्रिकेट टीम अन्य विश्वविद्यालयों में कई स्थानों पर खेलने के लिए गई।

प्रौढ़ शिक्षा सतत् एवं विस्तार विभाग में इस वर्ष अगस्त 1984 को प्रौढ़ शिक्षा प्रशिक्षकों के प्रशिक्षण कार्यक्रम का उद्घाटन मान्य कुलपति श्री बलभद्र कुमार हूजा ने किया। डॉ॰ त्रिलोक चन्द्र के संयोजन मे यह कार्यक्रम सम्पन्न हुआ। यह ज्ञातव्य है कि प्रौढ़ शिक्षा का प्रारम्भ डॉ॰ त्रिलोकचन्द्र की देख-रेख में ही हुआ था। डॉ॰ त्रिलोकचन्द्र दर्शन विभाग में प्रवक्ता पद पर कार्य कर रहे थे। प्रौढ़ शिक्षा विभाग ने कांगड़ी ग्राम में श्यामपुर ग्राम में बहादुरपुर-जट सराय आदि ग्रामों में विभिन्न कार्यक्रमों का आयोजन किया। चयनित परियोजना अधिकारी श्री प्रभात कुमार सक्सेना ने 7 फरवरी 1984 को अपना कार्य भार ग्रहण किया। इसी प्रकार 23 फरवरी 85 को इस विभाग को गति एवं उन्नति प्रदान करने के लिए समन्वय के पद पर डॉ॰ ए.के. नारायण की नियुक्ति की गई। उन्होंने अपना भार 15-2-85 को ग्रहण कर लिया। यह ज्ञातव्य है कि डॉ॰ इन्द्रायण रसायन विभाग में रीडर पद पर नियुक्त हुये थें

विश्वविद्यालय में मान्य कुलपति श्री हूजा के प्रयासों के फलस्वरूप 1 नवम्बर 82 को शारीरिक, मानसिक एवं आध्यात्मिक उन्नति हेतु इस विश्वविद्यालय में योग केन्द्र की स्थापना हुई थी। डॉ॰ त्रिलोकचन्द्र प्रवक्ता दर्शन विभाग और डॉ॰ ईश्वर भारद्वाज योग प्रशिक्षक विद्यालय विभाग इन दोनों ने अवैतनिक रूप से कार्य करते हुए दो त्रैमासिक प्रशिक्षण कार्यक्रम पूर्ण किए। विश्वविद्यालय की शिक्षा पटल सिंडीकेट तथा सीनेट द्वारा इस केन्द्र को प्रमाणपत्र पाठ्यक्रम चलाने की स्वीकृति दी गई थी। विश्वविद्यालय अनुदान आयोग की विजिटिंग कमेटी ने इस केन्द्र का निरीक्षण किया तो इस विभाग को मान्यता प्रदान की और एक प्रशिक्षक पद का सृजन भी किया। चयन समिति की संस्तुति पर डॉ॰ ईश्वर भारद्वाज को प्रशिक्षक पद पर नियुक्त किया गया। उन्होंने 9 नवम्बर 84 से अपने पद का कार्यभार संभाल लिया था। योग केन्द्र की शिक्षा समिति का भी गठन किया गया। इसमें निर्णय किया गया कि योग प्रशिक्षण की अवधि चार मास की होगी। इस प्रकार प्रशिक्षण चार-चार मास के दो होंगे।

गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय में 26-27 जुलाई 84 को राष्ट्रीय स्तर पर परीक्षाओं के सुधार के लिए एक कार्यशाला का आयोजन गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय में किया गया। यह आयोजन अखिल भारतीय विश्वविद्यालय संघ के प्रोफेसर बी.नटराजन की अध्यक्षता में हुआ। इस कार्यशाला में महत्वपूर्ण निर्णय लिए गए। इन निर्णयों में एक निर्णय यह था कि क्रेडिट प्रणाली को लागू किया जाय। समग्र परीक्षा प्रणाली को परिवर्तित करके परीक्षणार्थ अवलोकित किया जाय।

गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय में प्रथम बार एक महत्वपूर्ण परिवर्तन हुआ कि श्री वीरेन्द्र जी प्रधान आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब जो 31-8-85 तक कुलाधिपति पद पर प्रतिष्ठित रहे। उनके इस पद पर निवर्तमान होने पर 1-9-85 को डॉ॰ सत्यकेतु विद्यालंकार कुलाधिपति पद पर प्रतिष्ठित हुए यह ज्ञातव्य है कि डॉ॰ सत्यकेतु विद्यालंकार किसी भी आर्य प्रतिनिधि सभा के प्रधान नहीं थे। जैसा कि हम यह लिख आये है कि सन् 1981 की शिष्ट परिषद् ने विश्वविद्यालय के संविधान में यह महत्पवूर्ण परिवर्तन किया था कि आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब, आर्य प्रतिनिधि सभा हरियाणा और दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा से प्रधान तीनों मिलकर विश्वविद्यालय के कुलाधिपति के चयन की संस्तुति शिष्ट परिषद् को करेंगे शिष्ट परिषद

की पुष्टि के पश्चात् कुलाधिपति की नियुक्ति मानी जायेगी। अतः इसी नियम के अन्तर्गत डॉ॰ सत्यकेतु विद्यालंकार जो भारतीय इतिहास के उद्भट् विद्वान् माने जाते थे, उनको कुलाधिपति पद पर प्रतिष्ठित किया गया।

नये कुलपति

श्री बलभद्र कुमार हूजा का तृतीय बार का भी कार्यकाल 1-9-85 को समाप्त हो गया था, अनके स्थान पर नये कुलपति के रूप में डॉ॰ सत्यकाम वर्मा जो दिल्ली विश्वविद्यालय के संस्कृत विभाग के प्रोफेसर पद पर कार्यरत थे, उन्हें 2-9-85 को विश्वविद्यालय के कुलपति पद पर नियुक्त किया गया। श्री सत्यकाम वर्मा गुरुकुल कांगड़ी के ही योग्य स्नातकों में ही माने जाते थे।

डॉ॰ सत्यकाम वर्मा का कार्यकाल दुर्भाग्य से 1-2-86 तक ही रहा। यद्यपि डॉ॰ सत्यकाम वर्मा ने विश्वविद्यालय की प्रगति के लिए कई विशिष्ट कार्यक्रम भी बनाए। उन्होंने विश्वविद्यालय अनुदान आयोग से संकायों के निर्माण के लिए 30 लाख रूपये का अनुदान भी स्वीकृत कराया था। परन्तु उन्हीं दिनों उनके कुलपति निवास में एक घटना घटित हुई एक ड्राईवर ने जो कि कुलपति की गाड़ी का ही ड्राईवर था एक लिखित शिकायत कुलाधिपति और विजिटर महोदय को प्रस्तुत की थी कि मान्य कुलपति डॉ॰ सत्यकाम वर्मा ने मेरे से अपने कुत्ते के लिए मांस मंगवाया था। उसे फ्रिज में रखा गया था। बस इस घटना ने एक चिंगारी का कार्य किया। स्थानीय समाचार पत्रों में यह घटना मुख्य समाचार के रूप में प्रकाशित हुई। मान्य कुलाधिपति ने कुलपति डॉ॰ सत्यकाम वर्मा को आदेश दिया कि इस घटना पर विचार करने के लिए शिष्ट परिषद् की बैठक बुलाई जाय। डॉ॰ सत्यकाम वर्मा ने किन्हीं कारणों से इस आदेश का पालन नहीं किया। उनके इस आदेश के उल्लंधन के पश्चात् विश्वविद्यालय के परिद्रष्टा डॉ॰ सत्यव्रत सिद्धान्तालंकार ने इस सम्बन्ध में एक कमेटी गठित की। जिसकी संस्तुति पर मान्य परिद्रष्टा के आदेश पर डॉ॰ सत्यकाम वर्मा को कुलपति पद से मुक्त कर दिया गया और उनके स्थान पर प्रो॰ रामप्रसाद वेदालंकार आचार्य एवं उपकुलपति को कार्यवाहक कुलपति के रूप में नियुक्त किया गया। इधर गुरुकुल कांगड़ी के मुख्याधिष्ठाता पद पर डॉ॰ हरिप्रकाश जी जो फार्मेसी के व्यवसायाध्यक्ष भी थे कार्यरत रहे।

नये कुलपति की नियुक्ति

श्री रामचन्द्र शर्मा (अवकाश प्राप्त आई.ए.एस.) को विधिवत् 22-3-86 को कुलपति पद पर नियुक्त किया गया। विश्वविद्यालय के विटिजर डॉ॰ सत्यकेतु विद्यालंकार महोदय को भी राष्ट्रपति पुरस्कार तथा हिन्दी ग्रन्थ अकादमी से अपने लेखन कला के क्षेत्र में पुस्तकों पर पुरस्कार मिल चुका है। विश्वविद्यालय परिसर में श्री बलभद्र कुमार हूजा 9 वर्ष तक कुलपति पद पर आसीन रहे थे। 2-9-85 को उनको भावभीनी विदाई दी गई थी। यहाँ यह उल्लेखनीय है कि श्री हूजा को 9 वर्ष का कार्यकाल बहुत ही उथल-पुथल का कार्यकाल रहा जिसमें लगभग 4 वर्ष तक विश्वविद्यालय में घोर अशान्ति व्याप्त रही थी। परन्तु 3 जुलाई 1980 के पश्चात् श्री बलभद्र कुमार हूजा ने इस संस्था में पुनः प्राणों का संचार किया इसके बाद के पांच वर्षों में श्री हूजा ने विश्वविद्यालय के विकास के पथ को अग्रसर ही नहीं किया अपितु शिक्षा मंत्रालय भारत सरकार और विश्वविद्यालय अनुदान आयोग की दृष्टि में विश्वविद्यालय की दशा को अच्छे रूप में अवलोकित कराया।

अप्रैल 1986 को विश्वविद्यालय के परिद्रष्टा डॉ॰ सत्यव्रत सिद्धान्तालंकार पूर्व संसद सदस्य ने दीक्षान्त समारोह के अवसर पर अपना दीक्षान्त भाषण एवं नवस्नातकों को आशीर्वाद प्रदान किया। दीक्षान्त समारोह की अध्यक्षता कुलाधिपति डॉ॰ सत्यकेतु विद्यालंकार ने की थी।

छठी योजना के अन्तर्गत विश्वविद्यालय अनुदान आयोग ने दस विभागो में प्रोफेसर पद निर्मित किये थे। इस वर्ष अंग्रेजी विभाग में डॉ॰ वार्ष्णेय तथा मनोविज्ञान विभाग में डॉ॰ हरगोपाल सिंह की प्रोफेसर पद पर नियुक्ति की गई थी।

1985-86 के वर्ष में विश्वविद्यालय में तीन मुख्य संगोष्ठियाँ आयोजित की गई। फरवरी में इतिहास विभाग ने आर्यों के मूल स्थान विषय पर एक सम्मेलन किया। इसी महीने में ही नई शिक्षा नीति पर एक सेमीनार किया गया। सत्र के प्रारम्भ में चैलेन्ज ऑफ एजुकेशन पर एक पेपर रीडिंग सत्र हुआ। भारत की नई शिक्षा नीति पर विश्वविद्यालय की ओर से 3 भाषाओं में नई भारतीय शिक्षा नीति का क्या प्रारूप हो ?, विश्वविद्यालय की ओर से यह उक्त प्रारूप तैयार करके भारत सरकार को प्रेषित किया गया। इस सम्बन्ध में विश्वविद्यालय ने एक उपसमिति का गठन किया था। इस उपसमिति के संयोज डॉ जयदेव वेदालंकार को नियुक्त किया था। भारत सरकार को नई शिक्षा नीति तैयार करके प्रेषित की गई थी।

दर्शन विभाग के तत्वावधान में अखिल भारतीय दर्शन परिषद् का राष्ट्रीय अधिवेशन सम्मेलन 5 से 8 मार्च 1986 में डॉ॰ जयदेव वेदालंकार के निर्देशन में सम्पन्न हुआ।[9]

यह वर्ष कन्या गुरुकुल महाविद्यालय देहरादून के लिए हर्ष का विषय था कि यह संस्था विश्वविद्यालय की दूसरे कैम्पस के रूप में बन गई थी। सन् 85-86 के सत्र में नवम्बर मास में मंडलीय स्तर पर गढ़वान में सम्पन्न राष्ट्रीय गान प्रतियोगिता में कन्या गुरुकुल देहरादून की छात्राओं ने प्रथम स्थान प्राप्त करके रनिंग शील्ड प्राप्त की थी। दिसम्बर मास में जिला स्तर पर आयोजित पल्लव भाव गीत प्रतियोगिता में छात्राओं ने प्रथम स्थान प्राप्त क़रके शील्ड प्राप्त की। इसी प्रकार अनेक छात्राओं ने जिला स्तर, मंडलीय स्तर तथा प्रादेशिक स्तर पर अनेक खेल-कूद प्रतियोगिताओं में भाग लिया और विजयश्री प्राप्त की थी।

इस वर्ष विश्वविद्यालय के छात्रों ने संस्कृत विभाग के तत्वावधान में उज्जैन की प्रसिद्ध कालिदास शील्ड संस्कृत भाषण- प्रतियोगिता में प्राप्त की और विश्वविद्यालय के छात्र श्री दूधपुरी गोस्वामी ने प्रथम स्थान प्राप्त किया। शिकागो विश्वविद्यालय के एक शोधार्थी श्री जैक लेबलीन ने विश्वविद्यालय के पुस्तकालय में अनुसंधान कार्य किया।

वेद विभाग में नए-नए विषयों पर अनुसंधान कार्य किए गए, इनमें वैदिक मंत्रों के उच्चारणों और यज्ञ के वैज्ञानिक परीक्षणों के कार्य का आधुनिक वैज्ञानिक पद्धति के आधार पर शोध कार्य प्रारम्भ किया। इसी सत्र में वैदिक यज्ञों, यज्ञ पात्रों तथा याज्ञिक सामग्री के प्रदर्शन के लिए वेद संग्रहालय बनाना प्रारम्भ किया।[10]

हिन्दी विभाग के केन्द्रीय निदेशालय द्वारा संचालित अहिन्दी क्षेत्रीय विद्वानों द्वारा हिन्दी क्षेत्र में दी जाने वाली भाषण माला योजना के अन्तर्गत गुजरात के हिन्दी आचार्य डॉ॰ सुरेशचन्द्र त्रिवेदी के चार व्याख्यान हुए। काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के आचार्य डॉ॰ त्रिभुवन सिंह, दिल्ली विश्वविद्यालय के हिन्दी आचार्य तथा अध्यक्ष डॉ॰ महेन्द्र कुमार एवं पंजाब विश्वविद्यालय चण्डीगढ़ के हिन्दी विभाग के अध्यक्ष डॉ॰ धर्मपाल मैनी विश्वविद्यालय में पधारे तथा विद्यार्थियों को अनुसंधान प्रक्रिया से परिचित कराया। काशी हिन्दू विश्वविद्यालय में पधारे तथा विद्यार्थियों को अनुसंधान प्रक्रिया से परिचित कराया। काशी हिन्दू विश्वविद्यालय में आयोजित राष्ट्रीय संगोष्ठी में "भारतेन्दु और दयानन्द" पर हमारे हिन्दी के प्रोफेसर डॉ॰ विष्णुदत्त राकेश ने विशेष वक्ता के रूप में भाषण दिया।

प्राचीन भारतीय इतिहास संस्कृति एवं पुरातत्व के तत्वावधान में विश्वविद्यालय ने भारतीय इतिहास अनुसंधान परिषद् एवं विश्वविद्यालय अनुदान आयोग के सौजन्य से दिनांक 31 जनवरी 1986 से 4 फरवरी

86 तक क्रमशः युगों से चली आ रही शिक्षा के ऐतिहासिक परिपेक्ष्य में एवं आर्य समस्या एवं नागर समस्या विषयों पर राष्ट्रीय संगोष्ठियाँ आयोजित की गई।

रसायन विभाग में इस सत्र में पी.जी. डिप्लोमा इन कमर्शियल मैथड्स ऑफ कैमीकल एनेलेशिस पाठ्यक्रम प्रारम्भ किया। जन्तु विज्ञान विभाग में जहाँ माइक्रोबायोलोजी में एम-एस.सी कक्षाएें प्रारम्भ की गई थी, विभाग में नई नियुक्तियाँ भी हुई थी। इस विभाग में अन्य अध्ययन अध्यापन के अतिरिक्त हिमालय शोध योजना पर अनुसंधान कार्य जारी रहा। इस सम्बन्ध में प्रयोगशाला को विकसित किया गया।[11]

इस वर्ष राष्ट्रीय सेवा योजना के अन्तर्गत विभिन्न सामाजिक कार्य किए गए। कांगड़ी ग्राम में ही चतुर्थ वार्षिक शिविर लगाया गया। वहाँ पर 60 घरों में, घरों के पीछे किचन शौके पीट बनाए गए। गाँव को मुख्य सड़क से जोड़ने वाली 200 मीटर लम्बी खडन्जे की सड़क को बनाया गया। इसी अवसर पर 6 बड़े-बड़े गढ़ों को मिट्टी से पाटा गया ताकि मच्छर पैदा नहीं हों। ये सभी कार्य डॉ॰ बी.डी. जोशी के निर्देशन में सम्पन्न हुए।

विश्वविद्यालय के पुस्तकालय में सन् 85-86 के सत्र में 23 हजार दो सौ पाठकों ने पुस्तकालय की प्रचुर सामग्री का उपयोग किया। पुस्तकालय में जो शिक्षा के साथ आंशिक रोजगार योजना प्रारम्भ की थी, वह इस वर्ष भी जारी रही और अनेक छात्रों ने इस योजना का लाभ उठाया। सन् 85-86 में 500 पुस्तकें प्रातियोगितात्मक परीक्षा सेवा संग्रह में मंगायी गई। इस वर्ष पुस्तकालय में 31-1-86 से 4-2-86 तक पुस्तकालय में उपलब्ध इतिहास से सम्बद्ध एवं 19वीं शती की पुस्तकों को प्रदर्शित किया गया। इसी प्रकार 6-3-86 से 9-3-86 तक विश्वविद्यालय में सम्पन्न हुई दर्शन परिषद् गोष्ठी पर एक पुस्तक प्रदर्शन का आयोजन किया गया। इन गोष्ठियों में उपस्थित विद्वान् प्रतिनिधि गणों ने सैकड़ों की संख्या में प्रदर्शनी को बड़ी सुरुचिपूर्ण दृष्टि से अवलोकित किया।[12]

भारतीय मनोविज्ञान पर यू.जी.सी. समर शिविर का आयोजन विश्वविद्यालय परिसर में 25 जून से 9 जुलाई 86 जुलाई तक किया गया। इस शिविर में भारतीय विश्वविद्यालयों से आये शिक्षकों एवं शोधार्थियों ने भाग लिया। इस शिविर के निदेशक डॉ॰ हरगोपाल सिंह प्रोफेसर मनोविज्ञान विभाग थे। इस शिविर का मुख्य उद्देश्य यह था कि इस समय भारतीय विश्वविद्यालयों में केवल पाश्चात्य मनोविज्ञान पढ़ाया जाता है जो कि भारतीय चेतना के परिप्रेक्ष्य में अपूर्ण है। प्राचीन भारतीय साहित्य में मनोविज्ञान के अनेक विभिन्न विषयों का वर्णन सूत्र रूप में उपलब्ध है। अतः आधुनिक मनोविज्ञान के साथ प्राचीन भारतीय मनोविज्ञान का अध्ययन-अध्यापन भी विश्वविद्यालयों में कराया जाय। भारतीय मनोविज्ञान पाठ्यक्रमों में प्राचीन मनोविज्ञान को भी स्थान मिले, यहीं इस शिविर का मुख्य उद्देश्य था। इसलिए इस शिविर में वैदिक मनोविज्ञान, वैदिक मनोचिकित्सा, यौगिक व्यक्तित्व प्रकार एवं सम्वर्द्धन, गीता का मानस ज्ञान, पराभनोविज्ञान, स्वर विज्ञान, और मानव व्यवहार, आयुर्वेद एवं मानसिक स्वास्थ्य, जैन मनोविज्ञान, उपनिषद् एवं पुराणों में मनोविज्ञान आदि विषयों का प्रशिक्षण इस शिविर में प्रदान किया गया। इस शिविर का उद्घाटन विश्वविद्यालय के परिद्रष्टा डॉ॰ सत्यव्रत सिद्धान्तलंकार ने किया। मान्य प्रतिनिधि गण का स्वागत श्री कुलपति आर.सी. शर्मा ने किया।

कन्या गुरुकुल देहरादून में 27 अक्टूबर 85 को आर्य विद्या सभा की बैठक श्री वीरेन्द्रजी प्रधान आर्य प्रतिनिधि सभा की अध्यक्षता में हुई। इस अवसर पर छात्राओं ने रोचक सांस्कृतिक कार्यक्रम प्रस्तुत किया। कन्या गुरुकुल महाविद्यालय देहरादून में भी राष्ट्रीय सेवा योजना कार्यक्रम के अन्तर्गत 1 मार्च 86 से 10 मार्च तक सैन्य शहनशाही आश्रम देहरादून में आयोजित किया गया। इस शिविर में छात्राओं ने हरिजनों के

घरों में सफाई, कढ़ाई तथा बुनाई सिखाने का कार्य किया। वहाँ के स्थानीय लोगों को झुग्गी, झोपड़ियों की तथा नालियों की सफाई, रसोईघर के बाहर और स्नानागार में स्वच्छता आदि का परीक्षण प्राप्त कराया।[13]

योग केन्द्र में भी इस वर्ष अनेक कार्यक्रम आयोजित किए गए, छात्रों को योग का प्रशिक्षण क्रियात्मक रूप में प्रदान किया गया।

सप्त पंचवर्षीय योजना-अनुदान

सन् 86-87 के सत्र में सप्त पंचवर्षीय योजना के अन्तर्गत विश्वविद्यालय अनुदान आयोग ने गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय के लिए 50 लाख रुपये की धन राशि स्वीकार की थी। विश्वविद्यालय के द्वितीय परिसर कन्या गुरुकुल देहरादून के लिए इसके अतिरिक्त 5 लाख रुपये स्वीकार किये। विश्वविद्यालय के कुलपति श्री आर.सी. शर्मा ने अनुदान आयोग के अधिकारियों विशेषकर अध्यक्ष प्रो॰ यशपाल तथा उपाध्यक्ष डॉ॰ सच्चिदानन्द मूर्ति का धन्यवाद प्रेषित किया था। इस वर्ष विशेष रूप से वेद विभाग के अन्तर्गत वेद संग्रहालय जिसमें यज्ञ के प्रकार, यज्ञ पात्र, यज्ञ वेदियों तथा समिधा आदि के वैदिक रूपों का संकलन किया गया।

"इस वर्ष का दीक्षान्त भाषण उ.प्र. के मुख्यमंत्री श्री वीरबहादुर सिंह ने प्रदान किया। मान्य कुलपति ने उनका परिचय देते हुए बतलाया था कि गोरखपुर के एक साधारण ग्राम में जन्म लेकर भी अपने व्यक्तित्व-क्रियाशीलता से श्री सिंह एक राष्ट्रीय स्तर के नेता बने। संघर्ष, निष्ठा, दूरदृष्टि प्राशासनिक क्षमता और लोक हृदय से सम्पन्न होने के कारण नेतृत्व में सहज गुणों से मंडित आपका व्यक्तित्व हमारे स्नातकों को सार्वजनिक जीवन में उतरकर सफलता प्राप्त करने में प्रेरणा देगा।"[14]

हिमालय पर्यावरण योजना के अन्तर्गत 1 अगस्त 1986 से 12 अगस्त तक वृक्षारोपण शिविर का आयोजन कोटद्वार में किया गया। इस शिविर का उद्घाटन भारत सरकार के मंत्री श्री ब्रह्मदत्त ने एक वृक्ष का पौधा लगा करके किया। इस अवसर पर उन्होंने कहा कि "भारतीय जाति के उद्भव और विकास का साक्षी हिमालय और उसका पर्यावरण यदि सुरक्षित न रहा तो निश्चय ही गंगा, यमुना आदि पवित्र नदियों, वनस्पतियों खनिज-पदार्थ आदि के संसाधनों का यह अक्षय स्रोत नष्ट हो जायेगा।"

जन्तु विज्ञान विभाग के तत्वावधान में 15 दिसम्बर से 18 दिसम्बर तक मत्स्य एवं पर्यावरण पर राष्ट्रीय संगोष्ठी का आयोजन किया गया। इस संगोष्ठी में देश-भर से आए 220 वैज्ञानिकों ने भाग लिया, तथा 92 वैज्ञानिकों ने अपने शोधपत्र प्रस्तुत किए। इस संगोष्ठी का उद्घाटन उ.प्र. सरकार के मंत्री श्री सीताराम निषाद् ने किया। समापन के समय कुलाधिपति डॉ॰ सत्यकेतु विद्यालंकार उपस्थित हुए, उनकी अध्यक्षता में इस संगोष्ठी का समापन हुआ। इस संगोष्ठी के निदेशक डॉ॰ बी.डी. जोशी थे।

इस वर्ष डॉ॰ सत्यव्रत सिद्धान्तालंकार परिद्रष्टा का कार्यकाल समाप्त हुआ, उनके स्थान पर शिष्ट परिषद् ने सर्व सम्मति से 16-4-87 को श्री सोमनाथ मरवाह वरिष्ठ अधिवक्ता उच्च न्यायालय दिल्ली को परिद्रष्टा पद पर नियुक्त किया। उनका 16 मई को वेद मन्दिर में सार्वजनिक अभिनन्दन किया गया।

संस्कृत विभाग में 22 अगस्त को संस्कृत दिवस को समारोह पूर्वक मनाया गया। यह आयोजन श्री केशवनन्द जी की अध्यक्षता में सम्पन्न हुआ। इसमें अनेक विद्वानों ने संस्कृत भाषा के उत्थान पर प्रकाश डाला। श्रद्धानन्द बलिदान सप्ताह के अवसर पर अनेक प्रतियोगिताओं का आयोजन किया गया। बैडमिन्टन टूर्नामेंट में ब्रह्मचारियों ने उत्साह-पूर्वक भाग लिया। इसी अवसर पर हॉकी, बॉलीबाल आदि खेल प्रतियोगिताओं का भी आयोजन किया गया। इसी अवसर पर स्वामी जी की स्मृति में एक राष्ट्रीय स्तर की व्याख्यान माला का शुभारम्भ किया गया। इसमें भारतीय साहित्य, संस्कृत, दर्शन, विज्ञान, समाजसेवा और स्वाधीनता आन्दोलन

के इतिहास पर व्याख्यान कराने का कार्यक्रम बनाया गया। 4 मार्च 1982 को इस प्रसार व्याख्यान माला का उद्घाटन भाषण हिन्दी के प्रसिद्ध साहित्यकार तथा गाँधीवादी विचारक श्री विष्णुप्रभाकर ने दिया। उनका विषय था भारतीय नवजागरण और स्वामी श्रद्धानन्द। इसका संयोजन डॉ० विष्णुदत्त राकेश ने किया।

20-29 मार्च तक एन.सी.ई.आर.टी. (राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्) दिल्ली की ओर से यहाँ समूह गान प्रशिक्षण शिविर का आयोजन किया गया। उ.प्र. के 43 प्रशिक्षणार्थियों ने इसमें भाग लिया। इस शिविर का उद्घाटन पंजाब आर्य प्रतिनिधि सभा के प्रधान श्री वीरेन्द्र जी ने किया। उ.प्र. के मुख्यमंत्री श्री बलदेव सिंह आर्य इस सम्मेलन के मुख्य अतिथि थे। देश के प्रसिद्ध संगीत शास्त्री श्री विनय मुद्गल, श्री कनुल घोष, डॉ देश पाण्डेय आदि ने इसमें प्रशिक्षण दिया।

दर्शनशास्त्र विभाग में इस वर्ष आई.ए.एस., पी.सी.एस. प्राशासनिक सेवाओं की परीक्षाओं में बैठने वाले छात्रों के लिए मार्ग दर्शन की व्यवस्था की गई। विभाग में विश्व की प्रमुख समस्याओं का दार्शनिक योगदान विषय पर जो संगोष्ठी की गई थी, उसके शोध पत्रों का संकलन का प्रकाशन विश्वविद्यालय की ओर से मार्च 1987 में किया गया। इस सम्रय विभाग में पी-एच.डी. के नौ शोध छात्र पंजीकृत थे। इस वर्ष विभाग के डॉ० जयदेव वेदालंकार अध्यक्ष जोधपुर विश्वविद्यालय में और डॉ० उमराव सिंह बिष्ट जोधपुर विश्वविद्यालय में अखिल भारतीय दर्शन परिषद् के वार्षिक अधिवेशन में शोध-पत्र वाचन करने गए।

मनोविज्ञान विभाग में इस वर्ष डॉ० हरगोपाल सिंह बंगलौर में इंडियन साइन्स कान्फ्रेंस में सत्र के अध्यक्ष बनें और वहाँ पर अथर्ववेद में मनोविज्ञान विषय पर शोध-पत्र वाचन किया। विभाग में इस वर्ष डॉ० लाल वचन त्रिपाठी प्रो० एवं अध्यक्ष मनोविज्ञान विभाग गोरखपुर विश्वविद्यालय ने पाठ्यक्रम समिति में भाग लिया। 86-87 के सत्र में मनोविज्ञान विभाग में पी-एच.डी. हेतु 8 छात्र पंजीकृत किए गए।

प्राचीन इतिहास एवं पुरातत्व विभाग में 17 शोध छात्र पी-एच.डी. हेतु शोध कार्य में रत थे। इस वर्ष विभाग में डॉ० उपेन्द्र ठाकुर मगधं वि.वि., डॉ० विमल चन्द्र पाण्डेय पंजाब वि.वि. चंडीगढ़, मेरठ वि.वि. के प्रो० डॉ० के.के. शर्मा विश्वविद्यालय में आए और इतिहास विभाग के तत्वावधान में प्राचीन इतिहास विषय पर भाषण दिए।

पुरातत्व संग्रहालय में 86-87 के सत्र में अनेक विकास कार्य किये गए जिसमें उ.प्र. सरकार की सहायता से प्रथम तल पर पूर्वीय वीथिका में काष्ठ पारदर्शी दर्पण विभाजन भीत्ति का निर्माण कराया गया जिससे लम्बी दीघ तीन भागों में विभाजित हो गई। इन तीनों कक्षों में क्रमशः अस्त्र-शस्त्र कक्ष, विविध कक्ष एवं दग्धपूर्ण अनुकृतियां प्रदर्शित की गई हैं। इसी प्रकार प्रस्तर प्रतिभा कक्ष में ईंट द्वारा निर्मित आधार स्तम्भ कर काष्ठ एवं पारदर्शी काँच द्वारा प्रदर्श पटल का निर्माण किया गया। इस वर्ष संग्रहालय में दर्शकों की संख्या 9839 रही थी। इस समय संग्रहालय के निर्देशक का कार्य डॉ० जबर सिंह सेंगर प्रवक्ता इतिहास विभाग कर रहे थे।

आंग्ल भाषा विभाग में 9 छात्र पी-एच.डी. हेतु शोध कार्य कर रहे थे। प्रो० आर.एल. वार्ष्णेय को यू.ज़ी.सी द्वारा फैलोशिप प्रदान की गई। आप इस वर्ष कुरुक्षेत्र विश्वविद्यालय में शोधपत्र वाचन करने गए। इसी प्रकार प्रो० सदाशिव भगत भी अवध विश्वविद्यालय, पटना विश्वविद्यालय और कुरूक्षेत्र विश्वविद्यालय में व्याख्यान देने गए।

गणित विभाग में इस सत्र में पी-एच.डी. उपाधि का कार्यक्रम प्रारम्भ हुआ था। डॉ० वीरेन्द्र अरोड़ा को पी-एच.डी. उपाधि गढ़वाल विश्वविद्यालय ने प्रदान की थी। डॉ० एस.एल.सिंह ने इलाहाबाद वाराणसी और बैंगलोर में जाकर शोध-पत्र प्रस्तुत किए।

रसायन विभाग में जो पी.जी. डिप्लोमा प्रारम्भ किया गया था उसके समस्त उत्तीर्ण छात्रों को सर्विस मिल गई थी। उक्त डिप्लोमा में छात्रों को जल, मृदा, तेल, वसा, साबुन, सीमेन्ट, लवण, अयस्क, उर्वरक आदि के विश्लेषण का प्रशिक्षण दिया जाता था। इसी वर्ष विभाग ने पी.जी. डिप्लोमा के स्थान पर एम. एस.सी. रसायन विभाग में प्रारम्भ करने की योजना विश्वविद्यालय अनुदान आयोग को प्रेषित की गई थी।

वनस्पति विज्ञान विभाग में देशज औषध पौधों का संरक्षण एवं नृवंशीय वानस्पतिक दृष्टान्त विषय पर 26 सितम्बर 1986 को राष्ट्रीय संगोष्ठी का आयोजन किया गया। इस संगोष्ठी का संयोजन डॉ॰ पुरूषोत्तम कौशिक ने किया। डॉ॰ कौशिक के नेतृत्व में भारत सरकार ने पर्यावरण एवं वन विभाग के हिमालय की आर्किड्स पार्यवणिक जीव-विज्ञान की शोध योजना को स्वीकार किया।

विश्वविद्यालय अनुदान आयोग ने विश्वविद्यालय को कम्प्यूटर प्रयोगशाला की स्वीकृति दिसम्बर 1986 को प्रदान की। इसमें एक सिस्टम इंजीनियर तथा एक प्रोग्रामर, कम्प्यूटर प्रयोगशाला को व्यवस्थित करने के लिए कार्यरत थे।

गुरुकुल विश्वविद्यालय के पुस्तकालय में विश्वविद्यालय अनुदान आयोग द्वारा सातवीं पंच वर्षीय योजना के अन्तर्गत 4 लाख रुपये का अनुदान स्वीकार किया गया। इस अनुदान से 2631 नए ग्रन्थ पुस्तकालय हेतु क्रय किए गए। 14-4-1987 को उत्तर प्रदेश के मुख्यमंत्री श्री वीरबहादुर सिंह दीक्षान्त समारोह के अवसर पर पुस्तकालय में भी पधारे थे। उन्होंने यह अनुभव किया कि पुस्तकालय के पास भवनों की न्यूनता है इसलिए उन्होंने 7 लाख रुपये उ.प्र. सरकार की ओर से प्रदान करने की घोषणा की। कुछ महीनों के पश्चात् ही 7 लाख रुपया विश्वविद्यालय को भेज दिया गया था। इस वर्ष संस्कृति मंत्रालय भारत सरकार द्वारा वर्ष 86-87 हेतु पुस्तकालय को दुर्लभ पाण्डुलिपि की सुरक्षा हेतु 66500 रुपये का अनुदान स्वीकार किया गया इसके अन्तर्गत पुस्तकालय में उपलब्ध वैदिक साहित्य, संस्कृत साहित्य, संदर्भ संग्रह, भारतीय दर्शन एवं प्राच्य विद्याओं से सम्बद्ध पुस्तकों की बिबिल्योग्राफी बनाए जाने का कार्यक्रम किया गया। इसी वर्ष पुस्तकालय ने आर्य प्रतिनिधि सभा हरियाणा की शताब्दी समारोह के अवसर पर एक विराट् पुस्तक प्रदर्शनी का आयोजन किया। इस प्रदर्शनी का उद्घाटन श्री सूर्यदेव जी प्रधान आर्य प्रतिनिधि सभा दिल्ली ने 15-5-87 को किया।

इस वर्ष राष्ट्रीय छात्र सेना ने अनेक कार्यक्रम आयोजित किए। वार्षिक प्रशिक्षण शिविर जमनीपुर गांव देहरादून में लगाया गया। जिसमें छात्रों ने बड़ी ही राष्ट्रीय भावना के साथ उत्साहपूर्वक भाग लिया।

राष्ट्रीय सेवा योजना ने इस वर्ष अनेक सामाजिक कार्यों में छात्रों को लगाया। हरिद्वार के अस्पतालों में जाकर छात्रों ने रोगियों की सेवा एवं सुश्रूषा में सहयोग किया। वार्षिक शिविर के अवसर पर छात्रों ने घर-घर जाकर परिवार नियोजन, सामान्य स्वास्थ्य, स्त्री-शिक्षा और प्रौढ़ शिक्षा आदि अनेक विषयों की जानकारी ग्रामवासियों को दी।

इस वर्ष विश्वविद्यालय ने कांगड़ी ग्राम विकास योजना को प्रारम्भ किया। इस योजना के अन्तर्गत मिलन केन्द्र का निर्माण किया। शराब की ठेके की दुकान को बस्ती से दूर हटाने का सफल प्रयास किया गया।

प्रौढ़ सतत् शिक्षा एवं विस्तार कार्यक्रम के अन्तर्गत विश्वविद्यालय में अनेक कार्यक्रमों का आयोजन किया गया। इस कार्यक्रम के अन्तर्गत मिश्रपुर, अजितपुर, बहादुरपुर जट, कांगड़ी गांव और हरिनगर आदि ग्रामों में 20 सूत्री कार्यक्रम राष्ट्रीय एकता कल्याण आदि ग्राम वासियों को प्रशिक्षित किया गया।

क्रीडा एवं योग विभाग में अगस्त 86 से ही क्रिकेट, हॉकी, बैडमिन्टन, कबड्डी और बॉलीबाल के

खेलों का आयोजन किया गया। गुरुकुल की टीम ने श्रद्धानन्द समारोह पर आयोजित कबड्डी टूर्नामेन्ट में प्रथम स्थान प्राप्त किया। इस विभाग ने 22 दिसम्बर 1986 को आर्यवीर शरीर सौष्ठव व योग प्रक्रिया का आयोजन किया। इसमें अनेक संस्थाओं के प्रतिभागियों ने भाग लिया। इस अवसर पर आर्य समाज के प्रसिद्ध संन्यासी स्वामी ओमानन्द सरस्वती मुख्य अतिथि थे।[15] अप्रैल में दीक्षान्त भाषण श्री वी.एस. देशपाण्डेय पूर्व मुख्य न्यायाधीश ने प्रस्तुत किया एवं नवस्नातकों को आशीर्वाद प्रदान किया।

विश्वविद्यालय के 87-88 के सत्र में विश्वविद्यालय में विभिन्न विषयों में प्रोफेसर एवं आचार्य पद जो विश्वविद्यालय अनुदान आयोग द्वारा प्रदान किए गए, उन पदों पर नियुक्ति की जाती रही।

15 मई से 18 मई 89 तक दर्शन विभाग की ओर से डॉ॰ जयदेव वेदालंकार ने शिक्षा पद्धति में मूल्य तथा श्री भर्तृहरि और विड्गेंस्टाइम के भाषा दर्शन पर एक राष्ट्रीय सम्मेलन का आयोजन किया। इस समारोह का उद्घाटन श्री सोमनाथ मरवाह परिद्रष्टा विश्वविद्यालय ने किया। दिल्ली वि.वि के प्रोफेसर डॉ॰ सन्तोष कुमार ने इस समारोह की अध्यक्षता की थी। इसमें 25 विश्वविद्यालयों के विद्वान् प्रतिनिधि गण ने भाग लिया था, जिनमें पंजाब वि.वि. के प्रोफेसर डॉ॰ धर्मेन्द्र गोयल जो कि उत्तर भारत के दर्शन के उद्भट विद्वान् माने जाते थे। डॉ॰ जयदेव वेदालंकार को अखिल भारतीय दर्शन परिषद् के वार्षिक अधिवेशन 8 अक्टूबर 87 के अवसर पर मुरादाबाद में उनके शोध ग्रन्थ भारतीय दर्शन की समस्याएं, पर स्वामी प्रणवानन्द दर्शन पुरस्कार से पुरस्कृत किया गया। इनको 5 हजार रुपये नकद और प्रशस्ति पत्र प्रदान किया गया। डॉ॰ वेदालंकार ने श्रीनगर कश्मीर वि.वि. में, दिल्ली वि.वि. की अन्तर्राष्ट्रीय दर्शन संगोष्ठी में शोध-पत्र वाचन किये। इसी विभाग के डॉ॰ विजयपाल शास्त्री ने 87 में मुरादाबाद में आयोजित सेमीनार में शोध पत्र वाचन किया। इसी विभाग के डॉ॰ त्रिलोक चन्द्र ने कृषि वि.वि. सोलन में शोध-पत्र वाचन किया। इसी प्रकार दिल्ली में 1 जुलाई से 18 जुलाई 87 तक डॉ॰ त्रिलोकचन्द ने नशा छुडवाने के लिए योग और संगीत पर शोध-पत्र वाचन किए और नशा छुड़वाने के लिए अनेक प्रयोग भी किए। इस समय दर्शन विभाग में 6 शोध छात्र पी-एच.डी. कर रहे थे।

इस वर्ष विश्वविद्यालय अनुदान आयोग के उपाध्य तथा अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति प्राप्त दार्शनिक पद्म भूषण डॉ॰ केसरी राम मूर्ति गुरुकुल में पधारे। उनका 25 जून 87 को वेदों में वेदान्त का ज्ञान विषय पर विद्वता पूर्ण व्याख्यान हुआ। कुलपति आर.सी. शर्मा ने अभिनन्दन-पत्र तथा उत्तरीय प्रदान कर डॉ॰ मूर्ति का सम्मान किया। इस सभा की अध्यक्षता वि.वि. के पूर्व कुलपति एवं परिद्रष्टा डॉ॰ सत्यव्रत सिद्धान्तालंकार ने की थी। सभा संयोजन दर्शन विभाग के अध्यक्ष डॉ॰ जयदेव वेदालंकार ने किया।

जुलाई 87 में सिडनी में होने वाले विश्वविद्यालय प्रशासकों के अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलन में विश्वविद्यालय के कुलसचिव डॉ॰ वीरेन्द्र अरोड़ा ने सक्रिय भाग लिया तथा सिडनी मैलबोर्न केनबरा (आस्ट्रेलिया) एवं सिंगापुर के विश्वविद्यालयों ने प्राशासनिक क्रिया-कलाप तथा प्रणाली का अवलोकन किया।

अहिन्दी भाषी क्षेत्रों के हिन्दी अध्येता छात्र-छात्राओं का एक अध्ययन दल केन्द्रीय हिन्दी निदेशालय, भारत सरकार के शोध सहायक श्री अश्विनी कुमार सहाय के साथ गुरुकुल में पधारा। इस दल में आसाम, उड़ीसा, इम्फाल, अरूणाचल, आन्धप्रदेश तथा कर्नाटक के छात्र मौजूद थे। गुरुकुल के प्राचीन प्रकाशन शिक्षक क्षेत्र में बहुत अधिक ख्याति प्राप्त थे। यह प्रकाशन प्रायः समाप्त हो गया था। कुलपति श्री आर. सी. शर्मा ने श्रद्धानन्द अनुसंधान प्रकाशन के नाम से इसे पुनः चालू किया। केन्द्र की ओर से वैदिक साहित्य संस्कृति और समाज दर्शन तथा शोध सारावली नामक दो ग्रन्थों के प्रकाशन अप्रैल में हुआ। वैदिक साहित्य संस्कृति और समाज दर्शन ग्रन्थ डॉ॰ सत्यव्रत सिद्धान्तालंकार के व्यक्तित्व और कृतित्व का देश के मूर्धन्य विद्वानों द्वारा किया गया आकलन था। इस ग्रन्थ का विमोचन दिल्ली उच्च न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश

श्री बी.एस. देशपाण्डेय ने किया। शोध सारावली का विमोचन विश्वविद्यालय के परिद्रष्टा श्री सोमनाथ मरवाह ने किया।[16]

इस वर्ष गुरुकुल पत्रिका, प्रह्लाद, आर्यभट्ट और वैदिक पथ नियमित रूप से प्रकाशित हुए।

गुरुकुल का एक प्रमुख दर्शनीय स्थल पुरातत्व संग्रहालय माना जाता है। इस वर्ष पुरातत्व संग्रहालय के लिए 1 लाख रुपये अनुदान प्राप्त हुआ। उ.प्र. सरकार से 12 हजार रुपये का अनुदान प्राप्त हुआ। भारत सरकार द्वारा 30 हजार रुपये का अनुदान पाण्डुलिपि की सुरक्षा हेतु प्राप्त हुआ। इस 87-83 के सत्र में डॉ० सत्यव्रत सिद्धान्तालंकार द्वारा ताम्रपत्र, अभिनन्दन पत्रादि 10 की संख्या में प्राप्त हुए। डॉ० ज्ञानचन्द्र रावल उपाध्याय हिन्दी विभाग ने 12 सिक्के (ताम्र सिक्के) संग्रहालय को प्रदान किए। इसी प्रकार श्रीराम कुमार नारंग ने ज्वालापुर के आधुनिक काल ताम्र एवं निकिल के 22 सिक्के संग्रहालय को भेंट किये। स्वामी श्रद्धानन्द जी के जन्म स्थल तलवन से एक प्राचीन कृष्ण की मूर्ति श्री रधुवीर चन्द्र जोशी ने भेंट स्वरूप संग्रहालय को प्रदान की। इस समय प्राचीन भारतीय इतिहास संस्कृति एवं पुरातत्व विभाग में 13 छात्र शोध कर रहे थे। विभाग ने इस वर्ष वि.वि. अनुदान आयोग के सहयोग से राष्ट्रीय संगोष्ठी का आयोजन किया। इस संगोष्ठी का विषय था, प्राचीन भारत में स्थानीय शासन, जिसमें अनेक विश्वविद्यालयों के इतिहास के प्रसिद्ध विद्वान् सम्मिलित हुए। अध्ययन-अध्यापन के अतिरिक्त इतिहास विभाग ने प्रशासन के कार्यों में भी योगदान किया। विभाग के प्रो० एवं अध्यक्ष डॉ० सिन्हा ने वित्ताधिकारी का कार्यभार सम्भाला, डॉ० जबर सिंह सेंगर पुरातत्व संग्रहालय के निदेशक पद पर कार्य कर रहे थे। डॉ० श्याम नारायण सिंह (रीडर) ने विश्वविद्यालय के उप कुलसचिव पद पर गत वर्षों से कार्य किया। डॉ० राकेश शर्मा को विश्वविद्यालय के प्रशासन द्वारा एन.सी.सी. के लेफ्टीनेंट पद का कार्य सौंपा।

वेद विभाग में आचार्य रामप्रसाद वेदालंकार प्रो० एवं अध्यक्ष ने 52 धारा, यज्ञसुधा आदि ग्रन्थों की रचना की। आपने भारत की अनेक शिक्षण संस्थाओं में वेद के विभिन्न विषयों पर व्याख्यान प्रदान किए। डॉ० भारत भूषण विद्यालंकर (रीडर) के निर्देशन में अमेरिका विश्वविद्यालय शिंकागों के छात्र जॉन अर्ल यूगेलिन को पी-एच.डी. हेतु मार्ग दर्शन प्राप्त हुआ। आपने नेपाल में भी जाकर वेदों पर व्याख्यान दिए। डॉ० भारत भूषण ने वैदिक प्रयोगशाला में निदेशक पद पर कार्य किया।

डॉ० सत्यव्रत राजेश के निर्देशन में तीन शोध छात्र पी-एच.डी. कर रहे थे। आपने भारत के अनेक स्थानों में जाकर महाराष्ट्र, उत्तर काशी, इलाहाबाद आदि स्थानों में वेदों के विभिन्न विषयों को लेकर व्याख्यान प्रदान किये।

डॉ० मनुदेव बन्धु प्रवक्ता वेद विभाग ने "वेदोऽखिलो धर्ममूलम्" नामक ग्रन्थ की संस्कृत में रचना की। उत्तर प्रदेश, राजस्थान, बिहार और दिल्ली के अनेक स्थानों पर जाकर वेदों पर व्याख्यान प्रदान किए। संस्कृत विभाग ने मार्च 87 में सरस्वती परिषद् की ओर से त्रिभाषण प्रतियोगिता, वाद-विाद प्रतियोगिता, श्लोकोच्चारण प्रतियोगिता का आयोजन अखिल भारतीय स्तर पर किया, जिसमें दरभंगा विश्वविद्यालय, लालबहादुर शास्त्री संस्कृत विद्यापीठ दिल्ली, बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय आदि विश्वविद्यालयों के प्रतिभागियों ने भाग लिया। डॉ० निगम शर्मा रीडर एवं अध्यक्ष संस्कृत विभाग के निर्देशन में 6 शोधार्थी कार्य कर रहे थे। अप्रैल में आकाशवाणी रामपुर से "अपमिश्रित खाद्यान्नम्" विषय पर आपने वार्ता प्रस्तुत की थी। डॉ० निगम शर्मा ने दिल्ली वि.वि. में इन्द्र विद्यावाचस्पति वाद-विवाद प्रतियोगिता के निर्णायक पद पर भी कार्य किया। डॉ० वेद प्रकाश शास्त्री रीडर संस्कृत विभाग ने कालिदास पर शोधं पत्र वाचन किया। इसी प्रकार मार्च 87 में एल.आर. स्नातकोत्तर महाविद्यालय साहिबाबाद में आयोजित संगोष्ठी में प्रमुख वक्ता के रूप में शोध पत्र वाचन किया। डॉ० रामप्रकाश प्रवक्ता संस्कृत विभाग के निर्देशन में 4 शोध छात्र व्याकरण

के विषयों पर इस सत्र में शोध कार्य कर रहे थे। डॉ॰ महावीर अग्रवाल ने आकाशवाणी रामपुर से दो संस्कृत वार्ताएं प्रसारित की। आपने वैदिक म्यूजियम के सहायक के रूप में भी कार्य किया।[17]

हिन्दी विभाग में प्रो. एवं अध्यक्ष डॉ॰ विष्णुदत्त राकेश ने वैदिक संस्कृति और दर्शन के वैज्ञानिक भाष्यकर डॉ॰ सत्यव्रत सिद्धान्तालंकार ग्रन्थ का सम्पादन किया। आपने आकाशवाणी नजीबाबाद से वार्ताएं प्रसारित की। हिन्दी साहित्य की अनेक विधाओ में आपने सक्रिय योगदान प्रदान किया। डॉ॰ ज्ञानचन्द्र रावल प्रवक्ता हिन्दी विभाग ने विविध पत्रिकाओं में अनेक लेख प्रकाशित किए। डॉ॰ भगवान देव पाण्डेय प्रवक्ता हिन्दी विभाग ने विभागीय गतिविधियों में सक्रिय भाग लिया। डॉ॰ सन्तराम वैश्य ने विश्वविद्यालय द्वारा आयोजित संगोष्ठियों में सक्रिय भाग लिया।

गणित विभाग में 87,88 के सत्र में पी-एच.डी. हेतु तीन छात्र पंजीकृत थे। डॉ॰ एस.सी. त्यागी प्रोफेसर गणित विभाग, विज्ञान महाविद्यालय के प्राचार्य पद पर आसीन थे। प्रो॰ एल.एल. सिंह ने अनेक शोध पत्रिकाओं में अपने शोध पत्र प्रकाशित किए। डॉ॰ महीपाल सिंह ने मेरठ वि.वि. से पी-एच.डी. की उपाधि प्राप्त की। डॉ॰ विजयपाल सिंह ने विभाग की अनेक गतिविधियों में सक्रिय भाग लिया। डॉ॰ हरवंश लाल ने गढ़वाल वि.वि. से गणित में पी-एच.डी. के उपाधि प्राप्त की। प्रो॰ एस.एल. सिंह के सम्पादकत्व में प्राकृतिक एवं भौतिकी शोध-पत्रिका का प्रकाशन हुआ। गणित विभाग में इस वर्ष शोध प्रबन्ध हिन्दी भाषा के माध्यम से प्रस्तुत करने का प्रावधान किया।

भौतिक विज्ञान विभाग में एम.एस.सी. की कक्षायें प्रारम्भ की गई। प्रयोगशाला के लिए यू.जी.सी. द्वारा प्रदत्त अनुदान से उपकरण क्रय किये गये। डॉ॰ हरिश्चन्द्र ग्रोवर अध्यक्ष ने कई शोध पत्र प्रकाशित किए। डॉ॰ बी.पी. शुक्ला ने कुरूक्षेत्र वि.वि. से पी-एच.डी. की उपाधि प्राप्त की। डॉ॰ राजेन्द्र कुमार अग्रवाल ने परीक्षाओं की व्यवस्था में सक्रिय भाग लिया। डॉ॰ परमानन्द पाठक यू.जी.सी. प्रोजेक्ट लेकर उस पर शोध कार्य कर रहे थे। डॉ॰ रामकुमार पालीवाल जो रसायन विभाग के अध्यक्ष थे, ने जोधपुर वि.वि. में संगोष्ठी में शोध-पत्र वाचन किया। डॉ॰ इन्द्रायण ने जोधपुर वि.वि. में अपना शोध-पत्र प्रस्तुत किया। डॉ॰ रजनीश दत्त कौशिक ने यू.जी.सी. से शोध प्रोजेक्ट स्वीकार कराया। डॉ॰ रणधीर सिंह ने 24 फरवरी 88 को दिल्ली वि.वि. में आयोजित संगोष्ठी में शोध-पत्र वाचन किया।

जन्तु-विज्ञान विभाग में इस वर्ष पी-एच.डी. की उपाधि की स्वीकृति यू.जी.सी. सं प्राप्त की। दिसम्बर 87 में विभाग ने एक शोध पत्र संकलन प्रकाशित किया। डॉ॰ बी.डी. जोशी प्रो॰ एवं अध्यक्ष ने इस सत्र में 9 शोध पत्र प्रकाशित कराए। आकाशवाणी नजीबाबाद से दो रेडियों वार्ताएं प्रस्तुत की। डॉ॰ टी.आर.सेठ के निर्देशन में लघु शोध प्रबन्ध प्रस्तुत किया गया। डॉ॰ ए.के. चोपडा ने मगध वि.वि. बोध गया में एक शोध पत्र प्रस्तुत किया। डॉ॰ दिनेश भट्ट का शोध पत्र एक अन्तर्राष्ट्रीय कान्फ्रेंस में प्रस्तुत किया गया। दूसरा शोध पत्र इन्होंने बी.एच.यू. वाराणसी में प्रस्तुत किया।

वनस्पति विज्ञान विभाग के प्रोफेसर एवं अध्यक्ष डॉ॰ विजय शंकर ने लघु शोध प्रबन्धों के अतिरिक्त यू.जी.सी. द्वारा स्वीकृत प्रोजेक्ट पर शोध कार्य किया। डॉ॰ पुरुषोत्तम कौशिक प्रवक्ता ने दो प्रोजेक्टों पर शोध-कार्य किया। डॉ॰ गंगा प्रसाद गुप्ता प्रवक्ता ने विभाग के अन्य क्रियाकलापों में सक्रिय भाग लिया तथा दो शोध-पत्र प्रस्तुत किए। कम्प्यूटर प्रयोगशाला के भवन निर्माण का कार्य इस सत्र में पूर्ण हुआ और कम्प्यूटर विभाग में पी.जी. डिप्लोमा पाठ्यक्रम इस सत्र में प्रारम्भ हुआ। प्रयोगशाला के अध्यक्ष के रूप में डॉ॰ नरेन्द्र पराशर ने प्रयोगशाला को व्यवस्थित करने का कार्य सम्पन्न किया।

पुस्तकालय में 87, 88 के सत्र में 24200 पाठकों ने पुस्तकालय का लाभ उठाया। पुस्तकालय में

21 विभिन्न संग्रह विभाग हैं। इस वर्ष भी छात्रों के सहायतार्थ योजना के अन्तर्गत कई छात्रों को पारिश्रमिक प्रदान किया गया।

राष्ट्रीय छात्र सेना के मेजर वीरेन्द्र अरोड़ा के कुलसचिव बनने के पश्चात् उन्होंने त्याग-पत्र दे दिया था। डॉ॰ राकेश शर्मा को एन.सी.सी. का चार्ज सौंपा गया। 8 अक्टूबर से 18 अक्टूबर 87 तक वि.वि. के एन.सी.सी. कैडिट्स ने कोटद्वार में वार्षिक प्रशिक्षण शिविर में भाग लिया। वहाँ पर अनेक कार्यों में भी सक्रिय भाग लिया। इस वर्ष बी. प्रमाण-पत्र के लिए 10 तथा सी. प्रमाण-पत्र की परीक्षा 7 कैडीट ने उत्तीर्ण की।[18]

राष्ट्रीय सेवा योजना के अन्तर्गत 87-88 के सत्र में निम्नलिखित कार्य सम्पन्न हुए। इसके कार्यक्रम अधिकारी डॉ॰ ए.के. चोपडा ने 25-26 मई 87 को लीटरेसी हाउस लखनऊ में आयोजित जन साक्षरता अभियान के अन्तर्गत मास्टर ट्रेनर्स के प्रशिक्षण के कार्यक्रम में भाग लिया। वि.वि. परिसर में 250 गड्ढे खोदकर उनमें वृक्षारोपण किया। इस वर्ष भी नियमित शिविर का आयोजन 24-12-87 से 2-1-88 तक किया गया।

प्रौढ़ सतत् शिक्षा एवं विस्तार विभाग श्री अनिल चोपड़ा निदेशक के मार्गदर्शन में कार्य कर रहा था। इस वर्ष 100 महिलाओं को साक्षर बनाया गया। इस 87 के सत्र में रुड़की वि.वि. के सहयोग से गु.का. वि.वि. के प्रागंण में सोलर कुकर का प्रशिक्षण दिया गया।

क्रीड़ा विभाग के अध्यक्ष पद से प्रो॰ ओमप्रकाश मिश्र के त्यागपत्र देने के पश्चात् डॉ॰ अम्बुज कुमार शर्मा प्रवक्ता इंगलिश विभाग को क्रीडा समिति का अध्यक्ष बनाया गया। इस वर्ष वि.वि. के छात्रों की गोरखपुर, कुमायूं, अलीगढ़ और अम्बाला आदि स्थानों पर टीमें खेलने गई। इसी वर्ष उत्तर क्षेत्रीय क्रिकेट प्रतियोगिता में वि.वि. की टीम कुरुक्षेत्र वि.वि. में खेलने गई।

योग केन्द्र में 87-88 के सत्र में अनेक कार्यक्रम आयोजित किए गए। इनमें दो योग प्रशिक्षण सर्टिफिकेट पाठ्यक्रमों की परीक्षाएं सम्पन्न हुई। श्रद्धानन्द सप्ताह के अवसर पर योग प्रतियोगिता का आयोजन किया गया। इसमें हरियाणा, सहारनपुर, मुजफ्फर नगर तथा स्थानीय योग साधकों ने भाग लिया। स्वामी ओमानन्द सरस्वती ने इस प्रतियोगिता की अध्यक्षता की। गत वर्ष की भांति इस सत्र में भी वि.वि. स्वास्थ्य केन्द में वि.वि. के कर्मचारी एवं अन्य स्थानीय व्यक्ति चिकित्सा कराने आये। स्वास्थ्य केन्द्र के निदेशक डॉ॰ बालकृष्ण भारद्वाज रिटायर्ड स्वास्थ्य सचिव उ.प्र. ने स्वास्थ्य केन्द्र में निदानिक व्यवस्था की थी। यहाँ पर अन्य स्वास्थ्य सेवा भी उपलब्ध है।[19] श्री डा॰ सत्यकेतु का कुलाधिपति पद का कार्यकाल समाप्त होने पर प्रोफेसर शेर सिंह प्रधान आर्य प्रतिनिधि सभा हरियाणा को शिष्ट परिषद् ने कुलाधिपति पद पर नियुक्त किया।

जिस समय श्री सोमनाथ मरवाह को परिद्रष्टा 16-4-87 को शिष्ट परिषद् ने मनोनीत किया था, उस समय शिष्ट परिषद् के कुछ सदस्यों ने उनकी नियुक्ति पर यह कहकर आपत्ति की थी कि श्री सोमनाथ मरवाह को वि.वि. के संविधानानुसार परिद्रष्टा नहीं बनाया जा सकता है। परन्तु बहुमत से उनको परिद्रष्टा बना दिया गया था, परन्तु कुछ समय बाद वह विवाद पुनः जोर पकड़ गया। उस समय वि.वि. के कुलाधिपति प्रो॰ शेर सिंह बन चुके थे। शिष्ट परिषद् के सदस्य भी नए आ गए थे। शिष्ट परिषद् में यह प्रस्ताव 1988 में आया कि श्री सोमनाथ मरवाह को परिद्रष्टा पद से हटाया जाय और उसके स्थान पर किसी अन्य को वि.वि. का परिद्रष्टा बनाया जाय। वि.वि. के संविधान में परिद्रष्टा पद के लिए किसी उच्च न्यायालय के न्यायाधीश तथा पूर्व कुलपति को परिद्रष्टा पद पर नियुक्त किया जा सकता है। एक अन्य प्रावधान भी परिद्रष्टा पद पर नियुक्त करने का है कि जिस किसी विशिष्ट व्यक्ति को परिद्रष्टा बनाना हो

वह भारत का विशिष्ट नागरिक होना चाहिए। शिष्ट परिषद् में बहुमत से वह प्रस्ताव पारित हो गया जिसके तहत श्री सोमनाथ मरवाह को परिद्रष्टा पद से हटा दिया गया। यहाँ पर स्पष्ट करना अपेक्षित है कि कुलपति आर.सी. शर्मा ने उस समय कुलाधिपति प्रो. शेर सिंह का आदेश मानने में आनाकानी की इसलिए श्री आर. सी. शर्मा कुलपति को माननीय कुलाधिपति प्रो॰ शेर सिंह ने कुलपति महोदय के कार्यकाल समाप्त होने से पूर्व 18-3-89 को निलम्बित कर दिया तथा उनके स्थान पर प्रो॰ रामप्रसाद वेदालंकार आचार्य एवं प्रो॰ वाइस चान्सलर को अस्थाई रूप से कुलपति पद पर नियुक्त किया गया।

शिष्ट परिषद् ने अपनी बैठक में आचार्य प्रियव्रत वेदवाचस्पति को नया परिद्रष्टा नियुक्त किया। 5-5-1990 के नए कुलपति श्री सुभाष विद्यालंकार की नियुक्ति की गई। इधर 1987-88 के वर्ष में गुरुकुल कांगड़ी विद्यालय में श्री निरूपण विद्यालंकार आचार्य पद पर प्रतिष्ठित रहे तथा श्री प्रि॰ अर्जुन देव जी गुरुकुल के मुख्याधिष्ठता का कार्य देखते रहे। श्री अर्जुनदेव जी के कार्यकाल में गुरुकुल में अनुशासन, सफाई, अध्ययन व अध्यापन का कार्य सुचारु रूप से चला।

लगभग दो वर्ष तक वि.वि. में कुछ अव्यवस्था सी रहने के पश्चात् वि.वि.में पुन: व्यवस्था स्थापित हुई। अप्रैल 1990 में दीक्षान्त भाषण श्री चीमन भाई मेहता शिक्षा राज्य मंत्री भारत सरकार ने प्रदान किया। नवस्नातकों को उन्होंने आशीर्वाद भी दिया। श्री चीमन भाई मेहता के स्वागत में श्री सुभाष विद्यालंकार कुलपति ने यह बतलाया था कि आप 42 के भारत छोड़ों आन्दोलन तथा 1955 के गोवाद्वीप आन्दोलन में जेल गये। गुजरात में श्रम, परिवहन और जेल मंत्री के रूप में अनेक उल्लेखनीय कार्य किये थे।[20]

वि.वि. अनुदान आयोग ने आठवीं पंचवर्षीय योजना के लिए विश्वविद्यालय के अधिकारी गण को विचार-विमर्श करने हेतु दिल्ली से बुलाया गया था। वि.वि. ने वि.वि. अनुदान आयोग के समक्ष अपनी विभिन्न वृहद् परियोजनाओं को प्रस्तुत किया। इस वर्ष वि.वि. में व्याख्यान देने के लिए अनेक विशिष्ट विद्वानों को बुलाया गया। उनमें विशिष्ट विद्वान् हिन्दी के आलोचक डॉ॰ विजयेन्द्र स्नातक का भारतीय मनीषा के प्रतीक पं॰ इन्द्र विद्यावाचस्पति विषय पर व्याख्यान हुआ। अन्य विद्वानों के व्याख्यानों में श्रीमती लक्ष्मी बाई, डॉ॰ पी. अवतार कुरुक्षेत्र वि.वि., डॉ॰ कृष्णदत्त वाजपेयी, सागर वि.वि., डॉ॰ रमाशंकार तिवारी, डॉ॰ वेदप्रकाश उपाध्याय चंड़ीगढ़ वि.वि., डॉ॰ रमाकान्त शुक्ल, डॉ॰ महेन्द्र कुमार दिल्ली वि.वि., डॉ॰ शिव शेखर मिश्र लखनऊ वि.वि., काशी विद्यापीठ के कुलपति डॉ॰ त्रिभुवन सिंह, भारत सरकार के संस्कृत परामर्शदाता डॉ॰ रामकृष्ण शर्मा आदि विद्वानों के विभिन्न अवसरों एवं गोष्ठियों में व्याख्यान हुए। 16 से 28 नवम्बर 90 को वि.वि. में अखिल भारतीय प्राच्य विद्या सम्मेलन को आयोजित किया गया। इस सम्मेलन में विभिन्न संगोष्ठियों का आयोजन किया गया। इसमें लगभग भारत के समस्त विश्वविद्यालयों के 650 प्रतिनिधि गण ने भाग लिया। इस सम्मेलन का उद्घाटन भारत के प्रसिद्ध वैज्ञानिक ... राज्य मंत्री भारत सरकार ने किया।

वेद विभाग में 89-90 के सत्र में प्रो॰ रामप्रसाद वेदालंकार ने बी.एच.यू. वाराणसी में, डी.ए.वी. कॉलेज मुजफ्फरनगर, मार्च में महाराष्ट्र में राष्ट्रीय संस्कृत सम्मेलन आदि विश्वविद्यालयों एवं महाविद्यालयों में व्याख्यान दिये। डॉ॰ भारतभूषण विद्यालंकार का आथर्वणिक राजनीति ग्रन्थ प्रकाशित हुआ। आपने चंडीगढ़ वि.वि. चडीगढ़ विश्वेश्वरानन्द वैदिक आश्रम होशियारपुर और कानपुर में होने वाली संगोष्ठियों में शोध-पत्र प्रस्तुत किए। इस समय वेद विभाग में 7 छात्र पी-एच.डी. हेतु शोध कार्य कर रहे थे।

संस्कृत विभाग में प्रो॰ वेद प्रकाश शास्त्री ने उत्तर प्रदेश संस्कृत अकादमी लखनऊ, विक्रम वि.वि. उज्जैन, कालिदास जयन्ती समारोह, लाजपतराय स्नातकोत्तर महाविद्यालय साहिबाबाद की संगोष्ठियों में शोध पत्र वाचन किए। डॉ॰ महावीर अग्रवाल ने संस्कृत दिवस समारोह का समायोजन किया। दिल्ली, साहिबाबाद,

हापुड़, हावडा मेंअपने शोध-पत्र प्रस्तुत किए। डॉ० सत्यदेव निगमालंकार के पर्यावरण प्रदूषण का वैदिक समाधान, राम के जीवन में धर्म शोध लेख प्रकाशित हुए।

दर्शनशास्त्र विभाग में 16 से 19 दिसम्बर तक "क्या तार्किक भाववाद" तत्वमीमांसा का स्थान ले सकता है ? विषय पर राष्ट्रीय सेमीनार का आयोजन किया गया। इसमें 20 विश्वविद्यालयों के जिसमें बम्बई, कलकत्ता, कर्नाटक, गुजरात, अहमदाबाद, तमिलनाडु, भुवनेश्वर आदि वि.वि. के प्रतिनिधि गण ने अपने-अपने शोध-पत्र प्रस्तुत किए। इस सम्मेलन के निदेशक डॉ० जयदेव वेदालंकार थे। डॉ० वेदालंकार के निर्देशन में 4 शोध छात्र शोध कार्य में रत थे। राष्ट्रीय सेमीनार के साथ-साथ उ.प्र. दर्शन परिषद् का वार्षिक अधिवेशन भी दर्शन विभाग के तत्वावधान में ही सम्पन्न हुआ। वि.वि. की वार्षिक परीक्षाओं में प्रथम बार उड़न दस्ते का गठन किया गया। इस उड़न दस्ते के संयोजक भी डॉ० जयदेव वेदालंकार ही थे। सितम्बर 89 से अप्रैल 91 तक आपने वित्ताधिकारी पद पर भी कार्य किया। डॉ० विजयपाल शास्त्री ने इस वर्ष 6 शोध-पत्र विभिन शोध पत्रिकाओं में प्रकाशित किए। डॉ० त्रिलोकचन्द्र ने विभिन्न स्थानों पर योग के विभिन्न विषयोंपर व्याख्यान दिए। डॉ० यू.एस. बिष्ट का शोध ग्रन्थ "भाषा का प्रत्यय" विषय पर प्रकाशित हुआ।[21]

प्राचीन भारतीय इतिहास विभाग में 88-89 के सत्र में 16 छात्र पी-एच.डी. कर रहे थे। डॉ० विनोद चन्द्र सिन्हा ने चार शोध-पत्र प्रकाशित किये। डॉ० सिन्हा के ग्यारह ग्रन्थ प्रकाशित हो चुके थे। डॉ० जबर सिंह सेंगर ने संग्रहालय का संचालन सफलता पूर्वक किया। डॉ० राकेश कुमार शर्मा के दो शोध-पत्र प्रकाशित हुए। पुरातत्व संग्रहालय में इस वर्ष उ.प्र. सरकार से 20 हजार रुपये का अनुदान प्राप्त हुआ। सातवीं पंचवर्षीय योजना में वि.वि. अनुदान आयोग ने 1 लाख 50 हजार रुपये की धनराशि स्वीकार की थी। संग्रहालय में इस सत्र में फीजी के शोध छात्र श्री नेटराम शर्मा ने अमेरिका और हांगकांग की पांच मुद्राएं प्रदान की थी। इस वर्ष संग्रहालय में दर्शकों की संख्या 5550 रही थी। डॉ० जबर सिंह सेंगर के निर्देशन में संग्रहालय उन्नति के पथ पर अग्रसर था।

अंग्रेजी विभाग में डॉ० आर.एल. वार्ष्णेय का एक अंग्रेजी का ग्रन्थ प्रकाशित हुआ। डॉ० नारायण शर्मा ने मेरठ वि.वि. में शोध-पत्र प्रस्तुत किया। डॉ० अम्बुज कुमार शर्मा ने अध्यापन के अतिरिक्त क्रीडा अध्यक्ष पद का कार्य सम्पादन किया। उनका शोध ग्रन्थ भी प्रकाशित हुआ।

हिन्दी विभाग में 14 सितम्बर 1989 को हिन्दी दिवस के अवसर पर एक विचार गोष्ठी का आयोजन हुआ। यह गोष्ठी स्वामी आनन्द बोध सरस्वती प्रधान सार्वदेशिक सभा की अध्यक्षता में सम्पन्न हुई। इस संगोष्ठी में काशी हिन्दू वि.वि. के वरिष्ठ प्रोफेसर श्री डॉ० श्याम सुन्दर शुक्ल ने हिन्दी की समस्याओं पर प्रकाश डाला। डॉ० विष्णुदत्त राकेश प्रो० एवं अध्यक्ष हिन्दी विभाग ने हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग, महिला स्नातकोत्तर महाविद्यालय मेरठ आदि महाविद्यालयों में शोध-पत्र प्रस्तुत किये।

गुरुकुल कांगड़ी वि.वि. के वार्षिक उत्सव पर उत्तर प्रदेश के राज्यपाल श्री बी. सत्यनारायण रेड्डी पधारे थे। उनके सम्मान में एक सभा का आयोजन किया गया। माननीय श्री रेड्डी के भाई गुरुकुल कांगड़ी में पढ़े थे और सुना जाता है कि वे यहीं से संन्यासी बनकर चले गए थे। वि.वि. की वर्तमान उन्नति को देखकर माननीय रेड्डी जी अत्यधिक प्रभावित हुए थे। इस सम्मेलन का संचालन डॉ० विष्णुदत्त राकेश ने किया। डॉ० राकेश के सम्पादन में "बलदेव उपाध्याय अभिनन्दन ग्रन्थ, डॉ० किशोरीलाल अभिनन्दन ग्रंथ, डॉ० गोविन्दचन्द पाण्डेय अभिनन्दन ग्रन्थ आदि प्रकाशित हुए। डॉ० ज्ञानचन्द्र शास्त्री ने हिन्दी विभाग के छात्रों की सरस्वती यात्रा का नेतृत्व किया। डॉ० भगवानदेव पांण्डेय ने काशी हिन्दू वि.वि. पटेल वि.वि. बल्लभनगर गुजरात में अपने शोध-पत्र प्रस्तुत किये। डॉ० सन्तराम वैश्य ने अलीगढ़ मुस्लिम वि.वि. में शोध-पत्र प्रस्तुत किया और अपने दो शोध-पत्र प्रकाशित भी किए।"

मनोविज्ञान विभाग में प्रो० ओमप्रकाश मिश्र के निर्देशन में पांच शोध छात्र पी-एच.डी. कर रहे थे। वि.वि. के मनोविज्ञान विभाग के स्नातकोत्तर छात्रों ने यहाँ से गोवा तक सरस्वती यात्रा की। श्री सतीश चन्द्र धमीजा प्रोन्नत योजना के अन्तर्गत रीडर पद पर प्रोन्नत हुए। आपने विभाग के विकास में सक्रिय योगदान प्रदान किया। इसी वर्ष डॉ० सूर्यकुमार श्रीवास्तव को सीनियर वेतनमान प्रदान किया गया। डॉ० श्रीवास्तव ने इस वर्ष रुड़की वि.वि., गाँधी महाविद्यालय उरई में राष्ट्रीय सेमीनारों के अवसर पर शोध-पत्र प्रस्तुत किये। प्रो० ओ.पी. मिश्र मद्रास में आयोजित इन्टरनेशनल कान्फ्रेंस में भाग लेने गए और वहाँ शोध-पत्र प्रस्तुत किया। गणित विभाग में चार शोध छात्रों ने पी-एच.डी. के लिए शोध कार्य किया। इस वर्ष डॉ० एच.एल. गुलाटी को गढ़वाल वि.वि. से डी.फिल की उपाधि प्राप्त हुई डॉ० एस.एन.सिंह ने अनेक सेमीनारों में शोध-पत्र प्रस्तुत किये। डॉ० एस.एल. सिंह ने इस वर्ष 22-4-90 से 19-5-90 तक फ्रांस में पेरिस व लियोन के शोध स्थानों में कार्य किया। वहाँ पर वैदिक गणित पर भाषण भी दिया।[22]

भौतिकी विभाग में प्रयोगशाला के लिए नए उपकरणों का प्रयोग किया गया। रसायन विभाग में चल रहे पी.जी. डिप्लोमा में डिप्लोमा उत्तीर्ण छात्रों को तुरन्त नौकरी मिल जाती रही है। डॉ० ए.के. नारायण और डॉ० रणधीर सिंह के संचालन में क्रमशः यू.जी.सी. एवं सी.आई.आर. की शोध परियोजनाएं चल रही थी। डॉ० कौशल कुमार ने वि.वि. परिसर के सौंदर्यकरण का कार्य किया। डॉ० आर.डी. कौशिक का शोध-पत्र अन्तर्राष्ट्रीय पर्यावरण गोष्ठी में प्रस्तुत हुआ। डॉ० रणधीर सिंह ने कोचीन में आयोजित इंडियन साइन्स कांफ्रेन्स में अपना शोध-पत्र प्रस्तुत किया। डॉ० इन्द्रायण की विज्ञान वार्ताएं आकाशवाणी नजीबाबाद से प्रसारित की गई। डॉ० राजेन्द्र कौशिक टोरन्टो कनाडा में अन्तर्राष्ट्रीय संगोष्ठी में भाग लेने गए, वहाँ पर अपना शोध-पत्र प्रस्तुत कियां।

जन्तु विज्ञान विभाग में इस सत्र में एक शोध ग्रन्थ प्रकाशित कराया इसमें राष्ट्रीय गोष्ठी में प्रस्तुत शोध-पत्रों का संकलन था। डॉ० बी.डी. जोशी प्रो. एवं अध्यक्ष अन्तराष्ट्रीय कांफ्रेन्स में जो कि कुपियों यूनिवर्सिटी फाइनलैण्ड में आयोजित की गई थी, में शोध-पत्र वाचन किया। पटना वि.वि. और कश्मीर वि. वि. में राष्ट्रीय संगोष्ठियों में शोध-पत्र वाचन किए। इस वर्ष आपके 5 अन्य शोध-पत्र प्रकाशित हुए। डॉ० ए.के.चौपड़ा ने 5 शोध-पत्र प्रकाशित कराये। डॉ० चोपड़ा एन.एस.एस. के प्रोग्राम ऑफिसर भी 1989 तक रहे। डॉ० दिनेश भट्ट ने जुलाई 89 में अन्तर्राष्ट्रीय संगोष्ठी फिनलैण्ड में शोध-पत्र प्रस्तुत किया।

वनस्पति विज्ञान में डॉ० विजयशंकर के निर्देशन में चार शोध छात्र पी-एच.डी. का कार्य कर रहे थे। डॉ० विजय शंकर ने इस वर्ष सात शोध-पत्र प्रकाशित किए। डॉ० पुरूषोत्तम कौशिक ने दो शोध-पत्र प्रकाशित किए। डॉ० पुरुषोत्तम कौशिक इस वर्ष वाई केमिकल सोसायटी ऑफ लंदन द्वारा 32 वीं हार्डन कांफ्रेन्स में भाग लेने इंग्लैण्ड गए और वहाँ पर अपना शोध-पत्र प्रस्तुत किया।

कम्प्यूटर प्रयोगशाला एवं कम्प्यूटर विभाग में पी.जी. डिप्लोमा के कार्यक्रम सफलतापूर्वक सम्पन्न हुए। इस सयम श्री दिनेश विश्नोई प्रवक्ता और कर्मवीर भाटिया प्रोग्रामर कम्प्यूटर कार्य सम्पादन कर रहे थे।

पुस्तकालय विभाग में इस वर्ष वैदिक साहित्य एवं प्राचीन ग्रन्थों की वृद्ध सूची तैयर की गई थी और इसे श्रद्धानन्द अनुसंधान प्रकाशन केन्द्र से प्रकाशित किया गया। इसका सम्पादन डॉ० एस.के. श्रीवास्तव संग्रहालय क्यूरेटर तथा डॉ० जगदीश विद्यालंकार पुस्तकालय अध्यक्ष ने किया। इस वर्ष 6 हजार दो सौ रुपये की पुस्तक क्रय की गई। 89-90 के सत्र में 24 हजार दो सौ पाठकों ने पुस्तकालय का उपयोग किया। इस वर्ष नई पुस्तकें तीन हजार दो सौ पाठकों ने पुस्तकालय का उपयोग किया। इस वर्ष नई पुस्तकें तीन हजार तीन सौा अड़सठ क्रय की गई। इस समय पुस्तकालय में एक लाख सात हजार एक सौ नौ ग्रन्थ

उपलब्ध थे। इस सत्र में पुस्तकालय में कम्प्यूटर यूनिट की स्थापना की गई। दो शक्तिशाली कम्प्यूटर टर्मिनल लगाए गए।

राष्ट्रीय छात्र सेना डॉ॰ राकेश कुमार शर्मा के नेतृत्व में इस सत्र में कैडिट्स को एन.सी.सी. बटालियन मुख्यालय के आफिसरों लेफ्टिनेंट कर्नल एस.के. पाल, मेजर ग्रीनउड़ वि.वि. के कम्पनी कमाण्डर आदि ने वि.वि. परिसर तथा बी.एच.ई.एल. के परेड़ मैदान में प्रशिक्षण दिया। इस वर्ष बी. तथा सी. सर्टिफिकेट में बैठने वाले छात्रों की संख्या 13 तथा 14 थी। वि.वि. के समस्त कार्यक्रमों में जिसमें 15 अगस्त, 26 जनवरी आदि राष्ट्रीय कार्यक्रमों में कैडिट्स ने परेड की।

राष्ट्रीय सेवा योजना विभाग में इस वर्ष इस सत्र में नियमित शिविरों का आयोजन किया गया। दस दिवसीय विशेष वार्षिक शिविर 22-12-89 से 31-12-89 तक हरिपुर गांव में सम्पन्न हुआ। इस शिविर में जन साक्षरता कार्यक्रम, गांव की सड़कों की मरम्मत दो सौ वृक्षारोपण किये। 120 परिवारों का सामाजिक आर्थिक सर्वेक्षण, वन संपदा और भूमि संरक्षण तथा संस्कृति संरक्षण के महत्व के बारे में गोष्ठियों एवं चलचित्रों के माध्यम से दी गई। कार्यक्रमाधिकारी डॉ॰ दिनेश भट्ट के साथ डॉ॰ जयदेव वेदालंकार ने समन्वयक कार्य किया।

प्रौढ़ सतत् एवं शिक्षा विभाग के अन्तर्गत इस सत्र में 46 प्रौढ़ शिक्षा केन्द्रों के माध्यम से कार्य संचालन किया। इन केन्द्रों का संचालन मुख्यत: हरिजन क्षेत्रों, अल्पसंख्यक समुदायों पिछड़ें वर्गों के क्षेत्रों में किया गया।

क्रीड़ा विभाग ने इस वर्ष विभिन्न वि.वि. में हॉकी एवं क्रिकेट की टीमें खेलने के लिए लगभग दस वि.वि. में भेजी। इस वर्ष टेबल टेनिस की टीम भी प्रथम बार अन्तर विश्वविद्यालय प्रतियोगिता में भेजी गई।

योग केन्द्र विभाग में चार महीने की जगह एक वर्ष का डिप्लोमा पाठ्यक्रम प्रस्तुत किया गया। श्रद्धानन्द सप्ताह के अवसर पर योग प्रशिक्षण का कार्यक्रम आयोजित किया गया।

हरिद्वार में कन्याओं की उच्च शिक्षा के लिए जिसमें स्नातकोत्तर कक्षाओं का अध्यापन का प्रबन्ध हो इसकी मांग जोर पकड़ती गई थी। कोई उचित प्रबन्ध न होने के कारण कन्याओं की शिक्षा का प्रबन्ध गुरुकुल कांगड़ी परिसर में ही किया जाए, इसकी मांग होती रही थी। इसमें एक कारण यह था कि गु.का. वि.वि. में विज्ञान के नए-नए विषय प्रारम्भ हो गए थे। इसलिए यह मांग और अधिक जोर पकड़ने लगी थी। इस सम्बन्ध में अनेक आन्दोलन हुए। गु.का. वि.वि. के अधिकारियों का यह कहना था कि गुरुकुल शिक्षा प्रणाली में सह-शिक्षा करना संभव नहीं है। कुलपति श्री सुभाष विद्यालंकार ने साहस करके 1 जनवरी 1993 को कन्या गुरुकुल महाविद्यालय की कक्षायें आनन्दमयी सेवा सदन महिला इन्टर कॉलेज हरिद्वार में सान्ध्य कॉलेज के रूप में प्रारम्भ की। यह श्रेय श्री सुभाष विद्यालंकार को ही जाता है कि उन्होंने अलग से उच्च शिक्षा के लिए गु.का. वि.वि. के अंगीभूत महाविद्यालय के रूप में स्त्री शिक्षा प्रारम्भ की गई थी।

विश्वविद्यालय की इन उपलब्धियों के साथ गुरुकुल कांगड़ी विद्यालय में 1991-92 के वर्ष में श्री सुभाष विद्यालंकार मुख्याध्ठिाता तथा श्यामसुन्दर स्नातक आचार्य पद पर तथा पं॰ कृष्णचन्द्र जी (स्वतन्त्रता सेनानी) आयुर्वेदालंकार स. मुख्याधिष्ठाता पद पर कार्यशील रहे। विद्यालय के छात्रों ने जनपदीय सब जूनियर हॉकी प्रतियोगिता में प्रथम स्थान प्राप्त किया। सहारनपुर में प्रान्तीय स्तर की योगासान प्रतियोगिता में प्रथम स्थान प्राप्त किया। सहारनपुर में प्रान्तीय स्तर की योगासान प्रतियोगिता में कनिष्ठ वर्ग में विद्यालय के छात्र ब्र॰ महेन्द्रश्रेष्ठ कक्षा 6 तृतीय रहे।

वेद विभाग में सत्र 91-92 में प्रो॰ रामप्रसाद वेदालंकार की लघु पुस्तकें 5 की संख्या में प्रकाशित की गई। इसी वर्ष हिन्दू परिषद् इण्डोनेशिया के राजकीय आमंत्रण पर डॉ॰ भारतभूषण विद्यालंकार बाली तथा जकर्ता के वि.वि. में तथा हिन्दू परिषद् के कार्यक्रमों में शोध-पत्र वाचन करने के लिए 15 दिन के लिए इण्डोनेशिया गए। इसी वर्ष डॉ॰ मनुदेव बन्धु ने पर्यावरण मंत्रालय भारत सरकार, जीव, जन्तु कल्याण बोर्ड मद्रास द्वारा दिल्ली में आयोजित 5 दिवसीय जीवजन्तु अत्याचार निरोधक शिविर में भाग लिया। वेद विभाग 92-93 के सत्र में वेद प्रयोगशाला में कर्मकाण्डीय सामग्री एवं उपकरणों का संग्रह किया। दाक्षिणात्य वेदपाठी श्री कृष्ण भट्ट को विभाग के छात्रों को सस्वर वेद पाठ हेतु बुलाया गया और उन्होंने 6 माह तक छात्रों को सस्वर वेद पाठ का प्रशिक्षण दिया। 1992-93 के सत्र में वेद विभाग में 3 शोध छात्रों ने पी-एच.डी. की उपाधि प्राप्त की।

संस्कृत विभाग में दिसम्बर 1990 में श्री वेदप्रकाश शास्त्री प्रोफेसर पद पर नियुक्त किए गए। संस्कृत विभाग के छात्रों ने अगस्त 92 को संस्कृत दिवस बड़े उत्साह पूर्वक मनाया। इसकी अध्यक्षता वि.वि. के कुलपति डॉ॰ सुभाष विद्यालंकार ने की। विभागीय छात्रों ने अखिल भारतीय कालिदास समारोह के अन्तर्गत उज्जैन वि.वि. में आयोजित वाद विवाद प्रतियोगिता में चंडीगढ़ वि.वि. पंजाब एवं कुरुक्षेत्र वि.वि. में आयोजित प्रतियोगिताओं में भाग लिया तथा पुरस्कार भी प्राप्त किए। 92-93 के सत्र में संस्कृत विभाग में 5 शोध छात्रों को पी-एच.डी. की उपाधि से अलंकृत किया गया। प्रो॰ वेद प्रकाश शास्त्री ने 5 शोध-पत्र प्रकाशित कराये। 14-16 फरवरी 92 में निरुक्त पर हुए कम्प्यूटर सेमीनार ने शोध-पत्र वाचन किया। 19-25 अप्रैल 92 तक पूणे वि.वि. में एक संस्कृत एवं कम्प्यूटर पाठ्यक्रम पर विशेष संगोष्ठी में भाग लिया। डॉ॰ महावीर अग्रवाल जो कि विभाग के रीडर अध्यक्ष थे, यहाँ पर ज्ञातव्य है कि श्री सुभाष विद्यालंकार कुलपति महोदय ने वि.वि. में विभागों के अध्यक्ष पद को परिचक्र अर्थात् रोटेशॅन के रूप में कर दिया था। इस वरिष्ठ परिक्रम में डॉ॰ महावीर अग्रवाल विभाग के अध्यक्ष बन गए थे। डॉ॰ महावीर ने नवम्बर 91 को विक्रम वि.वि. उज्जैन में शोध पत्र वाचन किया। सत्र 92-93 में पूर्णे में आयोजित अखिल भारतीय प्राच्य विद्या सम्मेलन में भाग लिया। डॉ॰ सोमदेव शतांशु विभाग में रीडर पद पर नियुक्त किए गए थे। आपने फरवरी 1992 में उड़ीसा के फुलवाणी जिले में ईसाई बहुल क्षेत्र में कई स्थानों पर विश्व कल्याण यज्ञ के माध्यम से वेद के विभिन्न विषयों पर भाषण दिये। डॉ॰ ब्रह्मदेव विद्यालंकार प्रवक्ता पदपर नियुक्त किये गए। आपने पंजाब वि.वि. चंडीगढ़ में आयोजित संस्कृत प्रतियोगिताओं में छात्रों के साथ जाकर उनका मार्गदर्शन किया।

यहाँ पर ज्ञातव्य है कि कुलपति महोदय ने जिस प्रकार विभागों के अध्यक्ष को बाई रोटेशन से प्रारम्भ कर दिया था उसी प्रकार गु:का.वि.वि. के संविधानानुसार जो वैकल्पिक रूप में संकायों का प्रावधान किया गया था उसको शिक्षा पटल कार्य परिषद् और शिष्ट परिषद् में स्वीकृत कराया गया था कि वि.वि. में महाविद्यालय अथवा कॉलेज की प्रणाली को छोड़कर संकायों के रूप में वि.वि. की व्यवस्था चालू की जायेगी। इस प्रकार उन्होंने वि.वि. में चार संकाय प्रारम्भ किए। जिनमें प्रथम संकाय प्राच्य विद्या संकाय, द्वितीय मानविकी संकाय, तृतीय विज्ञान संकाय और चतुर्थ जीव विज्ञान संकाय, नाम रखे गये। प्राच्य विद्या संकाय का अध्यक्ष डॉ॰ जयदेव वेदालंकार को बनाया गया। मानविकी संकाय का अध्यक्ष प्रो॰ ओ.पी. मिश्र को बनाया गया। विज्ञान संकाय का अध्यक्ष डॉ॰ एस.एल. सिंह और जीव विज्ञान संकाय के अध्यक्ष पद पर डॉ॰ बी.डी. जोशी को नियुक्त किया गया। यहाँ यह अवश्य स्वीकार करना होगा कि श्री सुभाष विद्यालंकार कुलपति ने गुरुकुल कांगड़ी को एक विकसित वि.वि. के रूप में स्थापित करने का प्रयास किया था। क्योंकि उन्होंने महिला शिक्षा के लिए स्नातकोत्तर महाविद्यालय जो केवल कला विषयों में ही

नहीं अपितु विज्ञान के भी समस्त विषयों में बिना सरकारी अनुदान के प्रारम्भ करना एक प्रशंसनीय कार्य तो था ही, उसके साथ यह एक साहस पूर्ण कार्य भी था। अतः यह कहा जा सकता है कि नारी शिक्षा के उच्च अध्ययन के विषय में कुलपति श्री सुभाष विद्यालंकार ने एक नया इतिहास रचा था, जिसे वि. वि. के इतिहास में भुलाया नहीं जा सकेगा।

सत्र 92-93 में दर्शन विभाग में आई.सी.पी.आर. नई दिल्ली के सौजन्य से 24 से 26 मार्च 92 तक भारतीय दर्शन में कर्म सिद्धान्त विषय पर राष्ट्रीय संगोष्ठी का आयोजन किया गया इस संगोष्ठी से 25 वि. वि. के वरिष्ठ प्रोफेसरों ने अपने शोध-पत्र वाचन किए। इस संगोष्ठी के निदेशक के रूप में डॉ॰ जयदेव वेदालंकार ने संगोष्ठी का संचालन किया। विभाग के अन्य सभी प्राध्यापक गण ने इस गोष्ठी को सफल बनाने में पूर्ण सहयोग प्रदान किया। डॉ॰ जयदेव वेदालंकार को दिसम्बर 1990 में प्रो॰ पद पर नियुक्त किया गया। उसके बाद उनको प्राच्य विद्या संकाय का डीन भी नियुक्त किया गया। डॉ॰ वेदालंकार के इस समय तक वैदिक दर्शन (671 पृष्ठ), भारतीय दर्शन की समस्याएं (425 पृष्ठ) इस ग्रन्थ पर उनको राष्ट्रीय पुरस्कार प्राप्त हुआ था, उपनिषदों का तत्व ज्ञान, महर्षि दयानन्द की विश्वदर्शन को देन, महर्षि दयानन्द की साधना और सिद्धान्त आदि वि.वि. स्तरीय शोध विषयक ग्रन्थ प्रकाशित हो चुक थे। डॉ॰ वेदालंकार ने अन्तर्राष्ट्रीय सांस्कृतिक आदान-प्रदान कार्यक्रम के अन्तर्गत अमेरिका से आए छात्रों को ऋषिकेश में नटराज होटल में हिन्दू फिलोस्फी ऑफ लाइफ विषय पर संबोधित किया। डॉ॰ विजयपाल शास्त्री ने "पातंजल योग विमर्श" शोध ग्रन्थ प्रकाशित किया 1992-93 के सत्र में डॉ॰ शास्त्री ने सात शोध पत्र प्रकाशित किए। अखिल भारतीय संस्कृत सम्मेलन नामक संगोष्ठी राष्ट्रपति भवन नई दिल्ली में दिल्ली संस्कृत अकादमी द्वारा आयोजित की गई थी, उसमें शोध-पत्र वाचन किया। डॉ॰ त्रिलोकचन्द्र ने इलाहाबाद विश्वविद्यालय में रिफ्रेसर कोर्स में भाग लिया। डॉ॰ यू.एस.विष्ठ ने अखिल भारतीय दर्शन परिषद् के अधिवेशन में शोध-पत्र प्रस्तुत किया।

प्राचीन भारतीय इतिहास, संस्कृति एवं पुरातत्व विभाग में एक कष्टकारी दुर्घटना घटित हुई कि 27 अगस्त 91 को डॉ॰ जबर सिंह सेंगर की हत्या कर दी गई। 19 फरवरी 92 को प्रो॰ विनोदचन्द सिन्हा ने कार्यावकाश ग्रहण किया। प्रो॰ सिन्हा की प्राध्यापक संघ द्वारा विदाई दी गई। प्रो॰ के रिक्त पद पर डॉ॰ श्याम नारायण सिंह को नियुक्त किया गया। विभाग में इस सत्र में 7 शोध छात्र पी-एच.डी. कर रहे थे। इस 91-92 के सत्र में इतिहास विभाग ने ग्राम अजमेरीपुर में उतखनन कार्य किया। उत्खनन में एक चांदी का सिक्का मृद्भाण्ड तथा कुछ मिट्टी के खिलौने प्राप्त हुए।

आंग्ल भाषा विभाग में इस वर्ष डॉ॰ नारायण शर्मा ने श्री अरविन्द पर डी.लिट् की उपधि मेरठ विश्वविद्यालय से प्राप्त की। श्री एस.एस.भगत रीडर के निर्देशन में एक शोध छात्र ने पी-एच.डी. की उपाधि प्राप्त की थी। डॉ॰ श्रवण कुमार के चार शोध-पत्र प्रकाशित हुए। डॉ॰ अम्बुज कुमार शर्मा का नोवल्स ऑफ मुल्कराज आनन्द नामक ग्रन्थ प्रकाशित हुआ।

हिन्दी विभाग में 91 से 93 के सत्र में नवभारत टाइम्स के प्रधान सम्पादक डॉ॰ विद्यानिवास मिश्र, प्रसिद्ध उपन्यासकार श्री कृष्णचन्द्र शर्मा, काशी विद्यापीठ के कुलपति डॉ॰ त्रिभुवन सिंह, लखनऊ वि.वि. के हिन्दी विभाग के प्रो॰ डॉ॰ सूर्यप्रकाश दीक्षित, डॉ॰ श्याम सुन्दर शुक्ल पी.टी.आई. भाषा के सम्पादक डॉ॰ वेदप्रताप वैदिक दिल्ली विश्वविद्यालय के हिन्दी विभाग के डॉ॰ महेन्द्र के व्याख्यान हिन्दी विभाग में सम्पन्न हुए। हिन्दी पत्रकारिता के छात्र प्रशिक्षण के लिए दिल्ली, जयपुर और भोपाल गए। डॉ॰ विष्णुदत्त राकेश ने केन्द्रीय हिन्दी निदेशालय तथा म.प्र. शिक्षा अनुदान आयोग की बैठकों में विशेष रूप से भाग लिया। जनवरी 93 से डॉ॰ राकेश को मानविकी संकाय का डीन नियुक्त किया गया। डॉ॰ सन्तराम वैश्य

के निर्देशन में चार छात्र पी-एच.डी. हेतु कार्य कर रहे थे। 29 जनवरी 1992 को डॉ॰ सन्तराम वैश्य की रीडर पद पर नियुक्ति की गई। 1992 से विभागाध्यक्ष पद पर नियुक्त हुए। डॉ॰ ज्ञानचन्द रावल जोधपुर विश्वविद्यालय एवं जवाहरलाल नेहरू वि.वि. नई दिल्ली में रीफ्रेसर पाठ्यक्रम में भाग लिया। डॉ॰ भगवानदेव पाण्डेय के कई शोध-पत्र प्रकाशित हुए। डॉ॰ भगवानदेव पाण्डेय ने भी इस सत्र में रीफ्रेसर पाठ्यक्रम में प्रशिक्षण प्राप्त किया।

मनोविज्ञान विभाग में प्रो॰ ओ.पी. मिश्र के निर्देशन में तीन शोध छात्र पी-एच.डी हेतु शोध कार्य कर रहे थे। श्री सतीशचन्द्र धमीजा ने विभागाध्यक्ष के रूप में विभाग का कुशलतापूर्वक संचालन किया। इसी सत्र में उन्होंने मद्रास वि.वि. में आयोजित रिफ्रेसर पाठ्यक्रम में प्रशिक्षण प्राप्त किया। डॉ॰ सूर्य कुमार श्रीवास्तव ने रीसर्च प्रोजेक्ट पर कार्य करने के लिए वि.वि. की स्वीकृति प्राप्त की। डॉ॰ श्रीवास्तव के इस सत्र में 3 शोधपत्र प्रकाशित हुए। डॉ॰ चन्द्रपाल शेखर ने जोधपुर वि.वि. में रिफ्रेसर पाठ्यक्रम का प्रशिक्षण प्राप्त किया। श्री लाल नरसिंह नारायण ने मनोविज्ञान प्रयोगशाला का कुशलतापूर्वक संचालन किया। इनके लेख पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित भी हुए।

विज्ञान संकाय में बी.एस.सी. की कक्षाओं में छात्रों की संख्या निरन्तर बढ़ रही है। 92-93 के सत्र में छात्रों की संख्या 500 हो गई थी। गणित विभाग में पंजीकृत शोध छात्रों की संख्या 5 थी। प्रो॰ एस.एल. सिंह ने इस सत्र में 5 शोध पत्र प्रकाशित कराये।

भौतिकी विभाग में 91-92 के सत्र में एम.एस.सी. की कक्षायें प्रारम्भ की गई। इस सत्र में 6 शोध छात्र पी-एच.डी कर रहे थे।

रसायन विभाग में डॉ॰ इन्द्रायण की आकाशवाणी नजीबाबाद से वार्ताएँ प्रसारित हुई। आकाश्वाणी ने उनको विज्ञान विशेषज्ञ के रूप में भी मनोनीत किया। डॉ॰ रणधीर सिंह ने सितम्बर 92 में सरेह वि.वि. इंग्लैण्ड में इन्टरनेशनल सिम्पोजियम में अपना शोध-पत्र प्रस्तुत किया।

जन्तु विज्ञान विभाग में डॉ॰ बी.डी. जोशी की दो वार्ताएँ आकाशवाणी नजीबाबाद से प्रसारित हुई इनका विषय था पर्वतीय क्षेत्रों के विकास में अप्रवासीय पर्वतीयों का योगदान तथा वन्य जीवों के संरक्षण का उपाय। डॉ॰ डी.आर.खन्ना के इस सत्र में चार शोध पत्र प्रकाशित हुए।

वनस्पति विज्ञान विभाग में प्रो॰ बी.आर. ने नवम्बर 1991 में अपना विशिष्ट व्याख्यान एण्टीबाईडीज द्वारा सूक्षम जीवियों की पहचान पर दिया। आप जर्मन की टेक्नीकल यूनिवर्सिटी यूनीक के प्रो॰ थे। इसी प्रकार विभाग में प्रो॰ अजित वर्मा, प्रो॰ के.एल. एवं विश्वविख्यात प्रो॰ जे.जे. साह बडोदरा वि.वि. ने भी व्याख्यान दिया। इस 92-93 के सत्र में वनस्पति विज्ञान उद्यान में शीघ्र बढ़ने वाले पौधों की पौधशाला तैयार की गई, जो ईन्धन कांष्ठ के लिए अत्यन्त उपयोगी थी।

कम्प्यूटर विज्ञान विभाग व कम्प्यूटर केन्द्र में इस वर्ष डॉ॰ विनोद कुमार की रीडर पद पर नियुक्ति की गई। कम्प्यूटर विभाग में पी.जी. डिप्लोमा पाठ्यक्रम का कार्यक्रम सुचारू रूप से चला। डॉ॰ श्री दिनेश कुमार बिश्नोई द्वारा निरुक्त पर कम्प्यूटर के अनुप्रयोग विषय पर फरवरी 1992 में एक कार्यशाला का आयोजन किया गया। इसमें अनेक विद्वानों ने अपने-अपने शोध-पत्र वाचन किए। जुलाई 1992 में वि.वि. अनुदान आयोग की समिति ने विभाग का निरीक्षण किया। इस दौरान वि.वि. अनुदान आयोग के कम्प्यूटर सलाहकार प्रो॰ एस.आर. ठाकरे ने भारत में कम्प्यूटर का विकास विषय पर व्याखान दिया। कम्प्यूटरीय सुविधाओं को आधुनिक तथा अच्छा बनाने के लिए वि.वि. अनुदान आयोग ने विभाग से 20 हजार रूपये की परियोजना मांगी थी। इस सत्र में वि.वि. तथा बैंक के कर्मचारियों के लिए एक अंशकालिक 3 मासीय

प्रशिक्षण पाठ्यक्रम प्रारम्भ किया गया। इसमें बैंक कर्मचारियों ने बड़ी ही अभिरुचि से भाग लिया। महाविद्यालयों के शिक्षकों के लिए अल्पावधिप्रशिक्षण पाठ्यक्रमों को आयोजित करने के लिए विभांग को 6.45 लाख रुपये वि.वि. अनुदान आयोग से प्राप्त हुआ। मूलप्रति के 299 पृ० से पुस्तकालय विभाग में इस वर्ष से डॉ० जयदेव वेदालंकार समन्वयक एन.एस.एस के निर्देशक में खेल-कूद विभाग भारत सरकार की ओर से एक लाख रुपये का अनुदान प्राप्त किया गया था। यह शिविर सात दिन तक आयोजित किया गया था। इस शिविर के अवसर पर एक दिन नव चेतना सामाजिक जागरण के लिए शोभा यात्रा का अयोजन किया गया। इसका आयोजन श्री पारस कुमार जैन चेयरमैन नगरपालिका की अध्यक्षता में सम्पन्न हुआ था। इस शोभा यात्रा में लगभग हरिद्वार की समस्त शिक्षण संस्थाओं के छात्र एवं छात्राओं ने अपने-अपने नवचेतना के बैनरों सहित भाग लिया। उस समय के समाचार पत्रों ने यह लिखा था कि इस प्रकार का समाज जागरण कार्यक्रमों हेतु हरिद्वार में इससे पूर्व ऐसा अद्‌भूत कार्यक्रम का आयोजन नहीं हुआ था। हर की पौड़ी पर प्रो० आर. सी.शर्मा कुलपति की अध्यक्षता में एक विशाल सभा का आयोजन किया गया, इसमें हरिद्वार के समस्त सामाजिक संगठनों, शिक्षण संस्थाओं और राजनैतिक पार्टियों के अधिकारियों ने भाषण दिये। डॉ० जयदेव वेदालंकार ने सभा का संचालन किया। श्री पारस कुमार जैन ने शिविरार्थियों के लिए एक-एक तांबे की गंगा जली प्रदान की थी।

योग शिक्षा विभाग ने अपना पाठ्यक्रम एक वर्षीय डिप्लोमा पाठ्यक्रम प्रारम्भ किया थ। डॉ० ईश्वर भारद्वाज ने औपनिषदिक आध्यात्मिक विज्ञान प्रकाशित किया। इसी पत्र में कई शोध, लेख प्रकाशित किये। डॉ० भारद्वाज ने आकाशवाणी नजीबाबाद से योग एवं स्वास्थ्य पर वार्ता प्रसारित की थी।

कन्या गुरुकुल महाविद्यालय देहरादून में प्राच्य विद्याओं के साथ-साथ चित्रकला विभाग और संगीत विभाग मं भी अनेक गतिविधियां की गई। नवम्बर मास में कन्या गुरुकुल जन्मोत्सव बहुत धूमधाम से मनाया गया। छात्राओं ने विभिन्न सांस्कृतिक कार्यक्रम बहुत ही सुन्दर तरीके से प्रस्तुत किये। भारत विकास परिषद् द्वारा आयोजित "समूह गान प्रतियोगिता" में छात्राओं ने भाग लिया तथा विशिष्ट स्थान प्राप्त किया। वैल्हम गर्ल्स कॉलेज में शास्त्रीय संगीत प्रतियोगिता में कु० मीना ने भाग लिया तथा तृतीय स्थान प्राप्त किया। तरूण युवा मंच द्वारा आयोजित विभिन्न प्रतियोगिताओं में भाग लिया। अक्टूबर, नवम्बर 91 में विद्यालंकार की छात्राओं ने कलकत्ता, दार्जिलिंग आदि दर्शनीय स्थानों की सरस्वती यात्रा की संगीत गायन विभाग में श्रीमती प्रतिभा शर्मा ने तथा चित्रकला विभाग की श्रीमती भगवती गुप्ता ने लखनऊ वि.वि. से ऑरिएन्टेशन पाठ्यक्रम में प्रशिक्षण प्राप्त किया।

28 फरवरी 1992 को कुलपति श्री सुभाष विद्यालंकार ने डॉ० वीरेन्द्र अरोड़ा के कुलसचिव पद से त्यागपत्र देने के कारण डॉ० जयदेव वेदालंकार को अस्थायी रूप से कुलसचिव पद पर नियुक्त किया। लगभग चार मास के पश्चात् डॉ० वेदालंकार ने कुलसचिव पद से यह कहकर त्याग पत्र दे दिया कि मैं वर्तमान प्रशासन से तालमेल रखने में असमर्थ हूँ। इसलिए मैं अपने विभाग में वापिस लौट रहा हूँ। इसी घटना क्रम में आगे चलकर डॉ० भारत भूषण विद्यालंकार को कुलसचिव पद पर अस्थायी रूप से नियुक्त किया गया।

5 मई 1993को कुलपति श्री सुभाष विद्यालंकार का कार्यकाल सम्पन्न होने जा रहा था कि इसी मध्य में आठ अप्रैल 1993 को कुलाधिपति प्रो० शेर सिंह ने कुलपति श्री सुभाष विद्यालंकार को निलम्बित कर दिया। इसका कारण यह ज्ञात हुआ कि श्री सुभाष विद्यालंकार कुलपति पद को अगली तीन वर्ष की अवधि के लिए पाना चाहते थे। उन्होंने कुलाधिपति के निर्देश का उल्लंघन करते हुए, डॉ० वेंकटाचलम् कुलपति काशी विद्यापीठ बनारस के आवासीय कार्यालय में कुलपति के चयन की प्रक्रिया निश्चित की गई। यह

ज्ञातव्य है कि डॉ० वेंकटाचलम् कुलपति की चयन समिति में वि.वि. अनुदान आयोग के प्रतिनिधि थे। कुलाधिपति प्रो० शेर सिंह ने वि.वि. अनुदान आयोग के अध्यक्ष प्रो० रेड्डी से आग्रह किया कि इस अवैध चयन प्रक्रिया को रोकने का कष्ट करें क्योंकि इस चयन समिति में कुलाधिपति का भी प्रतिनिधि होता है। इसमें मैंने अभी अपने प्रतिनिधि का नाम ही नहीं भेजा क्योंकि मुझे आज ही प्रातःकाल तार प्राप्त हुआ है। कुलाधिपति के इस निवेदन को मानकर वि.वि. अनुदान आयोग के अध्यक्ष ने अपने प्रतिनिधि से कहा कि इस चयन प्रक्रिया में भाग न लें। इस प्रकार चयन समिति के तीन सदस्यों में से एक सदस्य श्रीमती दमयन्ती कपूर ही बैठक से भाग ले सकी। अतः यह कार्यवाही सम्पन्न नहीं हो सकी। इस प्रकार कुलपति सुभाष विद्यालंकार के दूसरी बार कुलपति बनने का स्वप्न अधूरा रह गया। इस तरह उपर्युक्त अनुशासन हीनता के कारण 7 अप्रैल 1993 को माननीय कुलाधिपति ने तार द्वारा कुलपति श्री सुभाष विद्यालंकार को निलम्बित कर दिया। और उनके स्थान पर आचार्य एवं प्रो० वाइस चान्सलर को अस्थाई रूप में कुलपति पद पर नियुक्त किया। श्री डॉ० भारतभूषण विद्यालंकार ने भी कुलसचिव पद पर अनुशासनहीनता की थी इसलिए उनको भी कुलसचिव पद से निलम्बित करके वापिस वेद विभाग में भेज दिया गया। प्रो० रामप्रसाद वेदालंकार अस्थाई कुलपति ने डॉ० जयदेव वेदालंकार को 11 अप्रैल 1993 को कुलसचिव पद पर नियुक्त किया।

14 अप्रैल 1993 को दीक्षान्त समारोह होना निश्चित हो चुका था। श्री राजेश पायलट गृहराज्य मंत्री भारत सरकार का आना निश्चित हुआ था परन्तु वे उपस्थित नहीं हो पाये थे, उनकी अनुपस्थिति में उनके द्वारा भेजे गए दीक्षान्त भाषण का वाचन शिष्ट परिषद् के मान्य सदस्य प्रो० प्रकाश वीर विद्यालंकार ने किया।

एक जुलाई 1993 को आर्य प्रतिनिधि सभा दिल्ली के महामंत्री एवं जाकिर हुसैन महाविद्यालय के प्रोफेसर डॉ० धर्मपाल का विधिवत् कुलपति पद पर चयन किया गया। इस प्रकार वि.वि. में बिना किसी अधिक विवाद के पुनः शान्ति स्थापित हो गई। साथ ही वे गुरुकुल कांगड़ी विद्यालय विभाग के मुख्याधिष्ठाता भी नियुक्त हुए। गुरुकुल के लिए सं. मुख्याधिष्ठाता के रूप में भू.पूर्व.स. मुख्याधिष्ठाता पं० धर्मपाल विद्यालंकार के पुत्र श्री महेन्द्र कुमार की नियुक्ति की गयी। इस समय विद्यालय के सुधार हेतु अनेक योजनाएं क्रियान्वित की गयी। अध्यापकों की ड्यूटी आश्रम में भी लगायी गयी। किन्तु वह एक औपचारिकता मात्र बनकर रह गयी। विद्यालय भण्डार में लकड़ी की भट्टियों के स्थान पर रसोई गैस के इस्तेमाल की योजना को लागू किया गया। भण्डार में इसके लिए अलग गैसे रखने का कमरा बनाया गया साथ ही भण्डार के कर्मचारियों के आवास हेतु दो कमरों तथा शौचगृह का निर्माण भी कराया गया।

1993 में आए महाराष्ट्र में भयंकर भूकम्प से पीड़ित जनों की सहायता के लिए गुरुकुल कांगड़ी वि.वि. के प्राध्यापकों तथा शिक्षकेतर कर्मचारियों ने एक दिन का वेतन प्रधानमंत्री राहत कोष में देने का निश्चय किया। डॉ० धर्मपाल कुलपति, डॉ० जयदेव वेदालंकार कुलसचिव, डॉ० श्रवण कुमार शर्मा अध्यक्ष शिक्षक संघ तथा शिक्षकेतर कर्मचारी संघ के सचिव श्री हेमन्त आत्रेय ने प्रधानमंत्री आवास पर जाकर एक लाख एक सौ रूपयें की धनराशि प्रधानमंत्री श्री माननीय नरसिम्हा राव को भेंट की। इस दल के साथ में डॉ० राजकुमार रावत मैनेजर गुरुकुल कांगड़ी फार्मेसी भी उपस्थित थे।

जून 1993 में वि.वि. अनुदान आयोग ने एम.सी.ए. का नवीन पाठ्यक्रम चलाने की अनुमति प्रदान की थी। इस प्रकार गुरुकुल कांगड़ी में छात्रों के लिए और कन्या गुरुकुल देहरादून में छात्राओं के लिए एम.सी.ए. का पाठ्यक्रम चलाया गया। महर्षि दयानन्द वि.वि. रोहतक के कुलपति ब्रिगेडियर ओ.पी. चौधरी तथा कुलाधिपति प्रो० शेर सिंह ने कम्प्यूटर के नवीन पाठ्यक्रम का उद्घाटन किया। इसके साथ ही

वि.वि. में आधुनिक विषय के साथ धर्म दर्शन एवं संस्कृति की अनिवार्यता के साथ अलंकार सामान्य (बी.ए.) का पाठ्यक्रम भी प्रारम्भ किया गया। इस पाठ्यक्रम के अन्तर्गत कई ग्रुप के पाठ्यक्रम प्रारम्भ किए गए।

अप्रैल 1993 में शिष्ट परिषद् की बैठक में सेवा निवृत्त इलाहाबाद हाईकोर्ट के जस्टिस श्री महावीर सिंह को परिद्रष्टा पद पर नियुक्त किया गया। माननीय जस्टिस महावीर सिंह बाद-विवादों से रहित सरल हृदय निष्पक्ष व्यक्ति माने जाते थे, उस समय आप सार्वदेशिक आर्य सभा की न्याय आर्य सभा के भी अध्यक्ष थे।

माननीय कुलपति डॉ॰ धर्मपाल के विश्वविद्यालय में आने पर एक नए युग का सूत्रपात प्रारम्भ हुआ। डॉ॰ जयदेव वेदालंकार कुलसचिव ने वि.वि. के विकास के लिए और मान्य कुलपति ने रात-दिन परिश्रम करना प्रारम्भ कर दिया। माननीय श्री रघुवीर सिंह शास्त्री के कुलपति कार्यकाल में कुछ नए भवनों का निर्माण वि.वि. अनुदान आयोग के अनुदान से हुआ था, उसके पश्चात् केवल श्री हूजा जी के कार्यकाल में वि.वि. अनुदान आयोग के अनुदान से केवल प्रो॰ क्वाटर्स का, जिसमें लगभग 18 लाख रुपये प्राप्त हुआ था, निमार्ण हुआ परन्तु वि.वि. अनुदान आयोग के अनुदान से लगभग 20 वर्षों से महाविद्यालयों एवं संकायों के नवीन भवनों का निर्माण नहीं हुआ था। यहाँ यह उल्लेख करना आवश्यक है कि श्री सुभाष विद्यालंकार ने जहां संकायों को प्रारम्भ किया था और स्त्री शिक्षा के लिए परिसर से बाहर कन्या महाविद्यालय को भी प्रारम्भ किया था। डॉ॰ धर्मपाल कुलपति ने कन्या महाविद्यालय की शिक्षा को और अधिक गति प्रदान की महिला महाविद्यालय सतीकुण्ड कनखल में कन्या महाविद्यालय को सन्ध्याकालीन महाविद्यालय के रूप में स्थानांतरित किया गया, क्योंकि हरिद्वार बहुत दूर पड़ता था।

सप्त पंचवर्षीय योजना में वि.वि. को संकाय के भवन निर्माण के लिए जो धन लगभग 25 लाख रुपया 3 वर्ष पूर्व स्वीकार किया गया था, उसका उपयोग किन्हीं कारणों से अभी तक नहीं किया गया था। वर्तमान कुलसचिव डॉ॰ वेदालंकार की तत्परता से उत्तर प्रदेशीय ग्रामीण अभियन्त्रण परिषद् की ओर से विज्ञान संकाय के भवनों का निर्माण प्रारम्भ हो गया। 6 मास के अन्दर भवन बनकर तैयार हो गए। इसी प्रकार शुल्क आदि को बचाकर भौतिकी विभाग, रसायन विभाग की नवीन प्रयोगशालाओं का निर्माण भी किया गया।

15 अप्रैल 1994 के दीक्षान्त अभिभाषण के लिए श्री अर्जुन सिंह शिक्षा मंत्री, भारत सरकार को आना था परन्तु वे नहीं आ पाये थे। दीक्षान्त समारोह में श्री जस्टिस महावीर सिंह कुलाधिपति श्री सूर्यदेव जी भी उपस्थित थे। दीक्षान्त अभिभाषण माननीय मंत्री जी की अनुपस्थिति में विश्वविद्यालय अनुदान आयोग के सचिव श्री इन्द्रजीत खन्ना ने वाचन किया।

वेद विभाग में 1994 के सत्र में डॉ॰ वीरेन्द्र कुमार शर्मा भूतपूर्व प्रिन्सिपल राज॰ आयुर्वेदिक कॉलेज लखनऊ, डॉ॰ निगम शर्मा, डॉ॰ ओमप्रकाश पाण्डेय, लखनऊ विश्वविद्यालय के विशिष्ट व्याख्यानों का आयोजन किया गया। वेद विभाग के वैदिक संग्रहालय में यज्ञीय पात्रों, हवनकुण्डों तथा अन्य जड़ी बूटियों का विशेष रूप से संकलन किया गया। पौर्णमास यज्ञ का वीडियों केसेट तथा वैदिक कर्मकाण्ड के प्रयोगात्मक ज्ञान कराने हेतु यज्ञीय पात्रों का संग्रह भी किया गया। विभाग में अलंकार सामान्य के छात्र तथा बी.एस.सी. छात्रों के लिए अनिवार्य रूप से धर्म, दर्शन और संस्कृति का पाठ्यक्रम पढ़ाया गया। प्रो॰ रामप्रसाद वेदालंकार जो आचार्य एवं प्रो॰ वाइस चान्सलर भी थे, ने तीन पुस्तके प्रकाशित की। डॉ॰ मुनदेव ने अनेक संस्थाओं में शोध पत्र वाचन किये। डॉ॰ दिनेशचन्द्र ने रोहतक में प्राच्य विद्या सम्मेलन में 26 दिसम्बर 94 को शोध पत्र वाचन किया। दिल्ली में भी आप ने शोध पत्र वाचन किया। डॉ॰ रूपकिशोर शास्त्री

की वृहद् शोध योजना के अन्तर्गत "वैदिक वाङ्मय निर्वचन कोष" जो विश्वविद्यालय अनुदान आयोग नई दिल्ली द्वारा स्वीकृत किया था, वह पर्याप्त रूप में सम्पन्न हो चुका था।

संस्कृत साहित्य विभाग में 24-25 और 26 मार्च 1995 को प्रो॰ वेदप्रकाश शास्त्री के संयोजन में "वैदिक वर्ण व्यवस्था का वैज्ञानिक आधार" विषय पर संगोष्ठी का आयोजन किया गया। उद्घाटन भाषण प्रो॰ शेर सिंह तथा समारोह की अध्यक्षता श्री सूर्यदेव कुलाधिपति विश्वविद्यालय ने की। डॉ॰ धर्मपाल कुलपति विश्वविद्यालय ने संगोष्ठी में आये हुए प्रतिनिधियों का स्वागत किया। इस संगोष्ठी में विभिन्न सत्रों की अध्यक्षता डॉ॰ वी.के. वर्मा, प्रो॰ बी.एच.यू., डॉ॰ यश.आर.भट्ट अध्यक्ष दर्शन विभाग दिल्ली विश्वविद्यालय, डॉ॰ करुणेश शुक्ल अध्यक्ष संस्कृत विभाग गोरखपुर वि.वि. डॉ॰ रणजीत सिंह प्रि॰ एवं शिष्ट परिषद् के सदस्य ने की थी। समापन समारोह की अध्यक्षता न्यायमूर्ति श्री महावीर सिंह परिदृष्टा विश्वविद्यालय ने की थी। प्रो॰ वेदप्रकाश शास्त्री ने कुरुक्षेत्र वि.वि., रोहतक गोरखपुर विश्वविद्यालय आदि विश्वविद्यालयों में शोध पत्र वाचन किये। प्रो॰ वेदप्रकाश शास्त्री ने इस 94-95 के सत्र में प्राच्य विद्या संकाय के अध्यक्ष पद को अलंकृत किया।

दर्शन शास्त्र विभाग में डॉ॰ विजयपाल शास्त्री की अध्यक्षता में महिला कॉलेज की ग्यारह छात्राएं स्नातकोत्तर में अध्ययन कर रही थी। डॉ॰ विजयपाल शास्त्री को मेरठ विश्वविद्यालय के दीक्षान्त समारोह पर "त्रिक् दर्शन का समीक्षात्मक तत्वमीमांसीय अध्ययन" विषय पर डी.लिट्. की उपाधि प्रदान की गयी। डॉ॰ त्रिलोकचन्द्र ने मई 94 में पंचमढ़ी में जबलपुर विश्वविद्यालय द्वारा आयोजित अखिल भारतीय दर्शन परिषद् में शोध पत्र वाचन किया। विभिन्न स्थानों पर योग शिविरों का भी आयोजन किया गया। डॉ॰ यू. एस. बिष्ट ने विभागीय अध्ययन में सहयोग प्रदान किया उनके निर्देशन में तीन शोध छात्र पी-एच.डी. कर रहे थे।

प्राचीन भारतीय इतिहास, संस्कृति एवं पुरातत्व विभाग के छात्रों ने दक्षिण भारत में शैक्षणिक एवं प्रशिक्षण लेने हेतु शोध यात्रा की थी। स्नातक स्तर पर व्यावसायिक शिक्षा से सम्बन्धित पाठ्यक्रम चलाये जाने की अनुमति 94-95 के सत्र में विश्वविद्यालय अनुदान आयोग ने प्रदान की। डॉ॰ कश्मीर सिंह विभागाध्यक्ष के निर्देशक में ये कार्य प्रारम्भ हुआ।

पुरातत्व संग्रहालय में इस (94-95) के सत्र में श्री हरनाम जौहर अध्यक्ष पंजाब विधान सभा चण्डीगढ़, श्री यशवीर सिंह अध्यक्ष खादी ग्रामोद्योग भारत सरकार, डॉ॰ गायत्री नाथ पन्त, कुलपति राष्ट्रीय संग्रहालय नई दिल्ली, श्री आई.एन.शिन् अध्यक्ष कोरिया व्यापार मण्डल और प्रो॰ लुकीमासा निशीमोरा जापान, आदि विशिष्ट अतिथियों ने संग्रहालय का अवलोकन किया। श्री सूर्यकान्त श्रीवास्तव क्यूरेटर संग्रहालय ने पाण्डुलिपि परिरक्षण परियोजना सम्बन्धी कार्यों को पूरा करने से पूर्व संग्रहालय के समस्त पाण्डुलिपि संग्रह का अवलोकन किया। अवलोकन में आर्य समाज के प्रवर्तक स्वामी दयानन्द सरस्वती द्वारा रचित सत्यार्थ प्रकाश की प्रथम प्रेस कापी उपलब्ध हुई। पाण्डुलिपि में स्वामी दयानन्द ने कहीं-कहीं पर संशोधन भी किये है।

योग शिक्षा विभाग में इस सत्र में अनेक कार्यक्रमों का आयोजन किया गया। योग के छात्र श्री सुरक्षित गोस्वामी एम.ए. द्वितीय वर्ष की दिल्ली दूरदर्शन पर योग साधना धारावाहिक और लखनऊ दूरदर्शन में योग प्रदर्शन का अवसर प्राप्त हुआ। डॉ॰ ईश्वर भारद्वाज ने विभिन्न संगोष्ठियों में शोध-पत्र वाचन किये।

हिन्दी विभाग में श्री जयकिशन प्रसाद खण्डेलवाल, डॉ॰ गंगाप्रसाद विमल निदेशक हिन्दी निदेशालय, डॉ॰ महेन्द्र कुमार, डॉ॰ नित्यानन्द शर्मा, आदि विद्वानों के व्याख्यान हुए। हिन्दी विभाग में इस समय 12 छात्र पी-एच.डी. हेतु शोध कार्य कर रहे थे।

श्रद्धानन्द वैदिक शोध संस्थान में डॉ॰ भारतभूषण विद्यालंकार निदेशक तथा डॉ॰ महावीर अग्रवाल उप निदेशक के रूप में इस संस्थान में अनेक परियोजनाओं की रूपरेखा के निर्माण में व्यस्त थे। वर्तमान में प्रो॰ महावीर जी कुल सचिव पद के साथ-साथ श्रद्धानन्द वैदिक शोध संस्थान के निदेशक के पद पर भी कार्यरत है।

आंग्लभाषा विभाग में डॉ॰ नारायण शर्मा, प्रो॰ एवं विभागाध्यक्ष के दो शोध पत्र प्रकाशित हुए। प्रो॰ एस. एस. भगत के निर्देशन में अमेरिकन एवं भारतीय कविता पर शोध कार्य किया गया। डॉ॰ श्रवण कुमार शर्मा ने मेरठ वि.वि. में कनाडियन साहित्य पर संगोष्ठी में शोध पत्र वाचन किया। डॉ॰ अम्बुज कुमार प्राध्यापक प्रतिनिधि के रूप में शिष्ट परिषद् के सदस्य निर्वाचित हुए। डॉ॰ ए.के. अग्रवाल के चार ग्रन्थ प्रकाशित हुए।

मनोविज्ञान विभाग में इस सत्र में बोर्ड ऑफ स्टडीज और शोध समिति की नियमित बैठक सम्पन्न हुई। इस सत्र में विभाग ने एक राष्ट्रीय सेमीनार "इको लोजिकल पर्सपेक्अिव एण्ड वेहैवीअर" विषय पर आयोजित किया। यह सेमीनार 24 से 26 नवम्बर 94 में सम्पन्न हुआ। इसमें 100 से अधिक विद्वान् प्रतिनिधि गण ने शोध-पत्र वाचन किये। इस सेमीनार की कार्यवाही 15 मिनट तक आकाशवाणी से प्रसारित की गयी। संगोष्ठी के सचिव के रूप में डॉ॰ एस.के. श्रीवास्तव ने कार्य किया। इस सेमीनार का संकलन भी प्रकाशित हुआ। मनोविज्ञान के तत्वावधान में पी.जी. डिप्लोमा मैनेजमेन्ट प्रारम्भ किया गया। इस पाठ्यक्रम को स्थानीय संस्थाओं ने बहुत ही पसन्द किया। श्री यश.सी. धमीजा की शिक्षा मनोविज्ञान, प्रारम्भिक सांख्यिकी और डिक्सेनरी ऑफ साइकोलाजिकल टर्म्स" नामक तीन पुस्तकें प्रकाशित हुई। डॉ॰ सी.पी. खोखर के निर्देशन में दो शोध छात्र पी-एच.डी. का कार्य कर रहे थे।

गणित विभाग में श्री विजयपाल सिंह विभागाध्यक्ष ने छात्राओं के अध्यापन के लिए अलग से व्यवस्था की। प्रो॰ एस.एल.सिंह गणित विभाग को 25 से 27 मई 95 को रामानुज मैथमेटिक्स सोसायटी ने सम्मानित किया। भौतिकी विभाग में इस वर्ष नई प्रयोगशाला का निर्माण किया गया।

रसायन विज्ञान विभाग ने अपने एम.एस.सी. के पाठ्यक्रम में वैदिक साहित्य में रसायन और आयुर्वेदिक वनस्पतियों को भी सम्मिलित किया। डॉ॰ ए.के. इन्द्रायण ने जापान में आयोजित सेमीनार में शोध-पत्र वाचन किया उसको प्रकाशित भी किया। विभागाध्यक्ष डॉ॰ कौशल कुमार ने अगस्त 1994 में जुरोन्डो यूनिवर्सिटी टोकियों जापान में आयोजित अन्तर्राष्ट्रीय सेमीनार में शोध-पत्र वाचन किया। इस सत्र में नई प्रयोगशाला का भी निर्माण हुआ।

जन्तु विज्ञान विभाग के प्रोफेसर बी.डी. जोशी ने दो शोध-पत्र प्रकाशित किए। विभागाध्यक्ष डॉ॰ ए. के. चोपडा ने विभिन्न सेमीनारों में चार शोध-पत्र वाचन किये और उनको प्रकाशित किया। डॉ॰ दिनेश भट्ट ने भी छः शोध-पत्र प्रकाशित किये। डॉ॰ टी.आर. खन्ना प्रवक्ता ने देवी अहिल्या विश्वविद्यालय इन्दौर में संगोष्ठियों में शोध-पत्र वाचन किये।

वनस्पति विज्ञान विभाग के 94-95 के सत्र में डॉ॰ पुरुषोत्तम कौशिक विभागाध्यक्ष ने 8 अगस्त 94 को भारत के राष्ट्रपति की ओर से दूरदर्शन विभाग द्वारा आमन्त्रित किये जाने पर हिमालय के आर्किड शीर्षक पर 15 मिनट का सचित्र तकनीकी कार्यक्रम प्रस्तुत किया जिसका सीधा प्रसारण दूरदर्शन द्वारा राष्ट्रीय स्तर पर प्रसारित किया गया। डॉ॰ कौशिक अमृतसर, रोहतक में आयोजित संगोष्ठियों में शोध वाचन करने गये। डॉ॰ डी.के. माहेश्वरी अतिथि प्रोफेसर के रूप में यू.आई.एम. विश्वविद्यालय जर्मन में एक मास के लिए गये। इसी प्रकार डॉ॰ माहेश्वरी जापान में भी एक मास तक वहाँ के विश्वविद्यालय में गये। डॉ॰ माहेश्वरी यू.जी.सी. के विशेषज्ञ के रूप में नेट परीक्षा में नियुक्त किये गये। डॉ॰ डी. के माहेश्वरी इस सत्र में जीव विज्ञान संकाय के डीन भी नियुक्त किये गये।

कम्प्यूटर विज्ञान विभाग के विभागाध्यक्ष डॉ॰ विनोद कुमार के पांच शोध-पत्र प्रकाशित हुए। दिल्ली, कलकत्ता, जबलपुर विश्वविद्यालयों में डॉ॰ विनोद कुमार ने संगोष्ठियों में शोध-पत्र वाचन किये। डॉ॰ कर्मजीत भाटिया ने रानी दुर्गावती जबलपुर विश्वविद्यालय में रिफ्रेसर पाठ्यक्रम में प्रशिक्षण प्राप्त किया। श्री सुनील कुमार प्रवक्ता के निर्देशन में विभाग के स्नातकोत्तर (एम.सी.ए.) छात्रों के लिए विभागीय पुस्तकालय का प्रारम्भ किया गया।

कम्प्यूटर केन्द्र में श्री दिनेश विश्नोई की अध्यक्षता में केन्द्र के विस्तार करने के लिए 20 लाख रुपये का अनुदान स्वीकार किया गया।

पुस्तकालय विभाग में इस सत्र में 3008 नए ग्रन्थ क्रय किए गये। गुरुकुल के पूर्व आचार्य एवं कुलपति आचार्य प्रियव्रत द्वारा संगृहीत 3000 ग्रन्थ पुस्तकालय को भेंट स्वरूप प्राप्त हुए। 94-95 के सत्र में 29 हजार 500 पाठकों ने पुस्तकालय का प्रयोग किया।[23]

शारीरिक शिक्षा विभाग को 94 के सत्र में अखिल भारतीय अन्तर विश्वविद्यालय योग चैम्पियनशिप में दूसरा स्थान प्राप्त हुआ। 29.9.94 को चित्रकूट ग्रोमोद्योग विश्वविद्यालय द्वारा यह प्रतियोगिता आयोजित की गयी थी। इस वर्ष गुरुकुल विश्वविद्यालय द्वारा स्क्वैश रैक्टि प्रतियोगिता का उद्घाटन 24-12-94 को प्रो॰ शेर सिंह पूर्वराज्य मंत्री भारत सरकार एवं पूर्व कुलाधिपति ने किया था। इस प्रतियोगिता में भारत के 14 विश्वविद्यालयों ने भाग लिया। डॉ॰ आर.के. सिंह डागर निदेशक क्रीड़ा विभाग ने सफल संचालन किया।

इसी वर्ष विभाग के निदेशक डॉ॰ आर.के.एस. डागर ने पी-एच.डी. की उपाधि प्राप्त की।

राष्ट्रीय सेवा योजना के नियमित वार्षिक शिविर 6.3.95 से 15.3.95 तक कांगड़ी ग्राम में आयोजित किया गया। जिसका उद्घाटन लखनऊ के श्री यादव प्रभारी राष्ट्रीय सेवा योजना द्वारा किया गया। शिविर में जन साक्षरता, पथ निर्माण, नालियों की सफाई, सोकपिटो का निर्माण, सड़क की मरम्मत आदि कार्य सम्पन्न कराये गये। राष्ट्रीय सेवायोजना के समन्वयक डॉ॰ ए.के. चोपडा तथा कार्यक्रम अधिकारी डॉ॰ डी. आर. खन्ना ने इस वर्ष एड्स के रोकथाम के लिए 36 छात्रों को प्रशिक्षित किया।

कन्या गुरुकुल स्नातकोत्तर महाविद्यालय देहरादून में 1993 में एम.सी.ए. का विविवत् अध्यापन प्रारम्भ हुआ। महाविद्यालय में पुस्तकालय, संस्कृत विभाग, अंग्रेजी विभाग चित्रकला विभाग, कम्प्यूटर विभाग और एम.बी.ए. विभाग और क्रीड़ा विभाग में सफलता पूर्वक परिश्रम से अध्यापन कार्य तथा अन्य गतिविधियों का संचालन हुआ।

मई 1994 में कम्प्यूटर विभाग की छात्राओं ने क्विज प्रतियोगिता में भाग लिया और इस प्रतियोगिता में कु॰ श्रद्धा आर्या और कु॰ श्रुति ने प्रथम स्थान प्राप्त किया। श्रीमती निपुर की अध्यक्षता में विभाग ने उन्नति की तथा विभाग में अनेक कार्यक्रमों का आयोजन किया गया।

वित्त एवं लेखा विभाग ने वित्त अधिकारी श्री जय सिंह गुप्ता के नेतृत्व में विश्वविद्यालय अनुदान आयोग से प्रतिवर्ष अधिक से अधिक अनुदान प्राप्त किया। सन् 1994-95 में एक करोड़ छियानवें लाख रुपये का अनुदान प्राप्त किया।[24]

1994-95 के वर्ष में गुरुकुल कांगड़ी विद्यालय के परिसर में विभिन्न कार्यक्रमों का संयोजन हुआ। 15 सितम्बर 94 को शिक्षक दिवस के अवसर पर उज्जैन से पधारे स्वामी शक्तीश्वरानन्द ने सभा की अध्यक्षता की। विद्यासभा के मंत्री श्री प्रकाशवीर विद्यालंकार, कुलपति एवं मुख्याधिष्ठाता डॉ॰ धर्मपालजी, आचार्य रामप्रसाद वेदालंकार, सं॰ मुख्याधिष्ठाता श्री मेहन्द्र कुमार ने इस अवसर पर अपने विचार प्रकट

किये। विजय दशमी के शुभ अवसर पर छात्रों ने कार्यक्रम प्रस्तुत किए। श्री मेहन्द्र कुमार जी ने विजयदशमी का महत्व बताया। दिनांक 1 मार्च 95 को विद्यालय विभाग के प्रार्थना कक्ष में डॉ० जयदेव वेदालंकार के कुलसचिव नियुक्त किए जाने पर विद्यालय अध्यापकों व छात्रों द्वारा माल्यार्पण किया गया। इस अवसर पर कुलपति व मुख्याधिष्ठाता डॉ० धर्मपाल जी, पं० महेन्द्र कुमार जी सं.मु., प्रो० वेदप्रकाश शास्त्री जी, शिक्षक संघ के अध्यक्ष डॉ० श्रवण कुमार फार्मेसी के व्यवसायाध्यक्ष श्री डॉ० राजकुमार रावत, मुख्याध्यापक डॉ० दीनानाथ जी उपस्थित थे 13 मार्च 95 को पं० सूर्यदेव जी के गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय के कुलाधिपति चुने जाने पर विद्यालय आगमन पर बैण्ड आदि के घोष से स्वागत किया गया। इस अवसर पर आर्य प्रतिनधि सभा दिल्ली के मंत्री श्री वेदव्रत जी, आचार्य रामप्रसाद जी डॉ० धर्मपाल जी, श्रीमान् वी.एस.मेहता विद्यमान थे। 13 अप्रैल 1994 को आर्य विद्या सभा की ओर से विद्यालय आश्रम के लिए प्रधान श्री सूर्यदेव जी के द्वारा मंत्री श्री प्रकाशवीर जी की अध्यक्षता में प्रसाधन कक्ष ब्रह्मचारियों के लिए अर्पित किया गया।

9 अप्रैल 1995 के वार्षिक दीक्षान्त अभिभाषण के लिए मुख्य अतिथि के रूप में श्री शिवराज पाटिल, लोक सभा अध्यक्ष भारत सरकार पधारे। माननीय कुलपति डॉ० धर्मपाल, कुलाधिपति श्री सूर्यदेव, परिद्रष्टा जस्टिस महावीर सिंह, आचार्य प्रो० रामप्रसाद वेदालंकार ने माननीय मुख्य अतिथि का स्वागत किया। दीक्षान्त समारोह के अवसर पर नव स्नातकों को आशीर्वाद, वि.वि. के कुलाधिपति, परिद्रष्टा महोदय, सार्वदेशिक सभा के प्रधान माननीय “श्री रामचन्द्रराव वन्देमातरम्” ने प्रदान किया।

9 अप्रैल 1995 को सायंकाल मध्याह्नोत्तर 3 बजे शिष्ट परिषद् की वार्षिक बैठक होनी निश्चित हुई थी, विश्वविद्यालय में प्रातःकाल से ही तनाव का वातावरण बना हुआ था। इस तनाव का कारण यह था कि यहाँ के कर्मचारी शिक्षक एवं कुछ अन्य व्यक्तियों का यह मत था कि गुरुकुल विश्वविद्यालय परिसर में ही यह विश्वविद्यालय के प्रशासन के लिए असम्भव है। इसी बात को लेकर पंचपुरी की प्रायः सभी राजनैतिक पार्टियों के नेता एवं व्यक्ति प्रातःकाल से विश्वविद्यालय परिसर में शिष्ट परिषद् की बैठक में ज्ञापन देने तथा अपनी बात को मनवाने के लिए प्रदर्शन के लिए एकत्रित हो रहे थे। तत्कालीन कुलसचिव डॉ० जयदेव वेदालंकार ने इसकी सूचना जिलाधिकारी, एस.पी. तथा अन्य तत्सम्बन्धित अधिकारियों को दे दी थी। प्रशासन ने कोई दुर्घटना न घटे इसका उचित प्रबन्ध किया था। लग़भग पी.ए.सी. के 75 जवान, स्थानीय पुलिस का भी प्रबन्ध किया गया था। जिस समय कुलसचिव महोदय दो बजकर 45 मिनट पर पुस्तकालय में, जहाँ पर शिष्ट परिषद् की बैठक होनी निश्चित थी, वहाँ पर आये, लगभग उस समय शहर के 300 स्त्री पुरुष उपस्थित थे। डॉ० वेदालंकार से उनके नेताओं ने कहा कि हम कुलाधिपति को अपना ज्ञापन देना चाहते है और उनसे बात करना चाहते है। कुलसचिव महोदय ने उन्हें कहा कि “आप चिन्ता न करें, मैं ज्ञापन देने का और आप से बात करने का पूरा प्रबन्ध करूगां, परन्तु कृपया आप सभी मुख्य गेट से बाहर चले जाये ताकि यहाँ विधिवत् शिष्ट परिषद् की वैठक हो सके। कुलसचिव महोदय ने भांप लिया कि स्थिति विस्फोटक हो सकती है, इसलिए सुरक्षाधिकारी वेदपाल सिंह को कहा कि स्थिति विस्फोटक हो सकती है, इसलिए पी.ए.सी. के जवानों को गेट पर तैनात कर दो। जब सुरक्षाधिकारी ने सी. ओ. सिटी पी.ए.सी. के आफिसर को निवेदन किया तो उन्होंने वहाँ आने से इन्कार कर दिया। तब कुलसचिव महोदय ने सुरक्षाधिकारी को जिलाधिकारी और एस.पी. से फोन पर बात करने को कहा, परन्तु इन अधिकारियों से बात करने में वह सफल न हो पाये। इस बीच में शिष्ट परिषद् के प्रायः सभी सदस्य पुस्तकालय में आ पहुंचे थे। और जब कुलाधिपति श्री सूर्यदेव एवं कुलपति डॉ० धर्मपाल आये तो नारे लगने लगे, भीड़ आक्रामक हो गयी। मुख्य गेट को खोलकर जबरदस्ती भीड़ अन्दर आ घुसी। शिष्ट परिषद् का घेराव प्रारम्भ किया गया। यह प्रयास भी किया गया कि सदस्यों से जबरदस्ती महिलाओं के लिए परिसर

में ही शिक्षा का प्रबन्ध किया जाय। तथा शिष्ट परिषद् बाध्य होकर इस प्रस्ताव को पारित करें। यह अशोभनीय दृश्य इतना विस्फोटक हो गया था कि विश्वविद्यालय के प्रारम्भ से लेकर और अब तक किसी भी शिष्ट परिषद् में ऐसी विस्फोटक स्थिति नहीं हुई थी। शिष्ट परिषद् के मान्य सदस्य स्वामी ओमानन्द सरस्वती ने कहा कि "आप हमसे जबरदस्ती यह नहीं करा सकते है। आप चाहे तो हमें गोली मार सकते है।" इसी प्रकार आचार्या श्रीमती दमयन्ती कपूर विद्यालंकार ने कहा "गुरुकुल कांगड़ी में मेरे जीते जी सहशिक्षा प्रारम्भ नहीं की जा सकती है।" जिस समय यह विस्फोटक स्थिति हुई, तो पुलिस का समस्त प्रशासन आ चुका था। और सभी पुलिस के अधिकारी गण, शहर न्यायाधीश भी शिष्ट परिषद् की बैठक में उपस्थित हो गये थे। राजनैतिक पार्टियों के दबाव में प्रशासन इतना पंगु हो गया था कि उस समय ऐसा प्रतीत होता था कि किसी का भी जीवन सुरक्षित नहीं है। स्वामी ओमानन्द सरस्वती का एक राजनैतिक नेता ने गला तक पकड़ लिया था उस समय समस्त प्रशासन मूक बन कर देखता रहा।

जब कुछ स्थिति शान्त हुई तो शिष्ट परिषद् की कार्यवाही प्रारम्भ की गई डॉ॰ जयदेव वेदालंकार ने इस सारी घटना का सम्पूर्ण उत्तरदायित्व अपने ऊपर लेते हुए अपने पद कुलसचिव पद से त्यागपत्र कुलधिपति को दे दिया। कुलधिपति ने त्यागपत्र को स्वीकार नहीं किया। उन्होंने कहा "इसमें आपका कोई दोष नहीं है। यह सब कुछ यहाँ के प्रशासन की कमजोरी के कारण हुआ है। आपने समय पर यहाँ के प्रशासन को कई बार अवगत करा दिया था। लगभग रात्रि के 10 बजकर 40 मिनट पर कुलाधिपति श्री सूर्यदेव ने घोषण की थी कि अगले सत्र से स्नातकोत्तर महिला महाविद्यालय का प्रबन्ध विश्वविद्यालय का प्रबन्धतंत्र करेगा। इस लिखित आश्वासन के बाद शिष्ट परिषद् का घेराव समाप्त किया गया। गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय के प्रशासन ने महिला महाविद्यालय के खोलने को एक चुनौती के रूप में स्वीकार करते हुए कन्या गुरुकुल महाविद्यालय के नाम से भूमि का प्रबन्ध करने के लिए प्रयास प्रारम्भ किये।"

कन्या गुरुकुल महाविद्यालय, हरिद्वार

मान्य कुलाधिपति की घोषणा के पश्चात् डॉ॰ धर्मपाल कुलपति और डॉ॰ जयदेव वेदालंकार कुलसचिव ने लगभग हरिद्वार के पचासों स्थान पर कन्या गुरुकुल महाविद्यालय की स्थापना के लिए भूमि क्रय करने हेतु निरीक्षण किया। जिस भूमि पर कन्या गुरुकुल महाविद्यालय की स्थापना अक्टूबर 1995 में कुलाधिपति श्री सूर्यदेव द्वारा शिलान्यास के रूप में की गयी थी, इस भूमि को क्रय करने के लिए जब कुलपति डॉ॰ धर्मपाल और कुलसचिव डॉ॰ जयदेव वेदालंकार श्री गणेशदास की दुकान पर ज्वालापुर गये तो डॉ॰ वेदालंकार ने इस भूमि को खरीदने के लिए अपनी बात इस प्रकार प्रारम्भ की थी कि "हमारे शास्त्रों में ब्रह्मदान एवं विद्या दान को श्रेष्ठ माना जाता है।हम इस भूमि पर कन्याओं के लिए महाविद्यालय प्रारम्भ करेंगे, अतः कन्यादान तो विशिष्ट दान कहा जाता है, इसलिए हम इस भूमि की कीमत नहीं दे पायेगे अतः आप अपनी भूमि की कीमत हमसे कम लेने का कष्ट करें।" श्री गणेश दास ने कहा "मुझे केवल आप डेढ़ लाख रुपया बीधां दे देवें।" इस पर डॉ॰ जयदेव वेदालंकार ने निवेदन किया कि हम आपको केवल 1 लाख 40 हज़ार रूपया प्रति बीधा दे पायेगे।" इस प्रकार कन्या गुरुकुल महाविद्यालय के लिए भूमि क्रय की गयी थी।

वेद विभाग में इस सत्र (95-96) में आचार्य रामप्रसाद वेदालंकार 31 जनवरी 1996 को 28 वर्ष की सेवा के पश्चात् सेवानिवृत्त हुए। वेद विभाग में डॉ॰ ओम प्रकाश पाण्डेय लखनऊ विश्वविद्यालय का "ब्राह्मण ग्रन्थों में प्रतिपादित धर्म" पर विशिष्ट व्याख्यान हुआ। वैदिक संग्रहालय तथा वैदिक प्रयोगशाला में वेद के छात्रों के लिए क्रियात्मक प्रशिक्षण के लिए षोड़श संस्कारों का प्रबन्ध किया गया।

अलंकार और बी.एस.सी. में "धर्मदर्शन और संस्कृति" का आवश्यक विषय के रूप में वेद के प्राध्यापक गण द्वारा अध्यापन प्रारम्भ किया गया। इसमें चारों वेदों के चुने हुए मंत्र, सत्यार्थप्रकाश, गीता, उपनिषद्, दर्शन और वैदिक साहित्य का सामान्य परिचय कराया जाता है।[25]

संस्कृत विभाग में प्रो॰ वेदप्रकाश शास्त्री की नियुक्ति आचार्य एवं प्रो॰ वाइस चान्सलर पद पर की गयी। डॉ॰ सोमदेव शतांशु संस्कृत विभाग के विभागाध्यक्ष पद पर आसीन हुए। इन्होंने विभिन्न संगोष्ठियों में दो शोध-पत्र प्रस्तुत किए। डॉ॰ महावीर अग्रवाल के निर्देशन में चार शोध छात्र पी-एच.डी. हेतु शोध कार्य में रत थे। इन्होंने कानपुर, पटेल कॉलेज शाकोरठी (महाराष्ट्र) में शोध-पत्र वाचन किए। डॉ॰ ब्रह्मदेव विद्यालंकार ने कुरुक्षेत्र विश्वविद्यालय में शोध-पत्र वाचन किया। इसके साथ ही उन्होंने 1 मई से 20 मई 96 तक कुरुक्षेत्र विश्वविद्यालय में ओएन्टेशॅन के पाठ्यक्रम का प्रशिक्षण प्राप्त किया।

दर्शन विभाग में डॉ॰ त्रिलोक चन्द्र की ब्रह्मचर्य का वैज्ञानिक स्वरूप नामक पुस्तक प्रकाशित हुई। डॉ॰ विजयपाल शास्त्री ने बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय और देहरादून में शोध पत्र वाचन किए।

अक्टूबर 1995 में इण्डियन फिलॉसोफिकल कांग्रेस का 17 वाँ वार्षिक अधिवेशन दर्शन विभाग में आयोजित किया गया। इसमें तत्वमीमांसा, ज्ञानमीमांसा, धर्म और आचार सम्बन्धी संगोष्ठियों का आयोजन किया गया। इसमें लगभग 300 प्रतिनिधिगण ने सक्रिय भाग लिया और लगभग 100 से अधिक शोध-पत्र वाचन किये गये। इस आयोजन के स्थानीय सचिव के रूप में डॉ॰ यू.एस. विंष्ट सीनियर प्रवक्ता दर्शन विभाग ने सफलतापूर्वक कार्य किया।

डॉ॰ यू.एस. बिष्ट ने दिल्ली विश्वविद्यालय और वाराणसी में शोध-पत्र वाचन किया। इनके संपादकत्व में शोध-पत्र संकलन भी प्रकाशित हुआ। डॉ॰ जयदेव वेदालंकार ने कुलसचिव पद का भार वहन करते हुए विभाग में अध्यापन कार्य भी संपन्न किया।

प्राचीन भारतीय इतिहास, संस्कृति एवं पुरातत्व विभाग में 8 शोध-छात्र पी-एच.डी कर रहे थे। विभाग के छात्र श्री देवेन्द्र कुमार गुप्ता ने वि.वि. अनुदान आयोग द्वारा आयोजित नेट की परीक्षा उत्तीर्ण की। इसी प्रकार श्री प्रवीण कुमार ने संघ लोक सेवा आयोग उत्तर प्रदेश की सेवा परीक्षा उत्तीर्ण की थी। विभागीय छात्रों द्वारा इस वर्ष शैक्षणिक यात्रा के अन्तर्गत कलकत्ता, भुवनेश्वर, कोणार्क आदि ऐतिहासिक स्थानों का भ्रमण किया गया। विभाग के प्रो॰ एस.एन. सिंह ने प्राच्य विद्या संकाय के डीन पद पर भी कार्य किया।

पुरातत्व संग्रहालय में समय-समय पर अनुदान प्राप्त होता रहा है। 95-96 के सत्र में उत्तदप्रदेश शासन के संग्रहालय पुस्तकालय की अभिवृद्धि हेतु 20000 रुपये का अनुदान प्राप्त हुआ था। इस सत्र में 15 मई 95 तक संग्रहालय के निदेशक पद पर डॉ॰ कश्मीर सिंह भिन्डर कार्यरत थे। 16 मई 95 से सत्रांत तक प्रो॰ वेद प्रकाश शास्त्री डीन प्राच्य विद्या संकाय, संग्रहालय के निदेशक पद पर कार्य करते रहे। संग्रहपाल श्री सूर्यकान्त श्रीवास्तव ने विभिन्न संगोष्ठियों में दो शोध-पत्र वाचन किये।

योग शिक्षा विभाग जहां डिप्लोमा के साथ प्रारम्भ हुआ था। उसका विकास होते होते स्नातकोत्तर कक्षाएं भी प्रारम्भ की गयी। विभाग में इस सत्र में 44 छात्र विभिन्न कक्षाओं में पंजीकृत हुए। डॉ॰ ईश्वर भारद्वाज ने विभागाध्यक्ष के रूप में विभाग को पर्याप्त विकसित किया। इस सत्र में आप ने चार शोध-पत्र वाचन किये।

मनोविज्ञान विभाग में इस सत्र में शोध समिति की बैठक सम्पन्न हुई। प्रो॰ ओ.पी. मिश्र के निर्देशन में दस शोध छात्र पी-एच.डी. कर रहे थे। प्रो॰ मिश्र ने मेरठ विश्वविद्यालय, गढ़वाल वि.वि., काशी विद्या पीठ की शोध समितियों में विषय विशेषज्ञ के रूप में भाग लिया। श्री एस.सी. धमीजा रीडर मनोविज्ञान

विभाग ने अध्यक्ष पद के अतिरिक्त पी.एम.आई.आर. के निदेशक पद पर भी कार्य किया। डॉ॰ एस.के. श्रीवास्तव ने एक पुस्तक प्रकाशित की तथा तीन शोध-पत्र प्रकाशित किए। श्री सी.पी. शेखर ने बम्बई में आयोजित संगोष्ठी में शोध-पत्र प्रकाशित किए। आप ने उस्मानिया विश्वविद्यालय में रिफ्रेसर प्रशिक्षण भी प्राप्त किया।

गणित विभाग में वैदिक रेखा गणित पर 31 अगस्त 1995 को राष्ट्रीय संगोष्ठी आयोजित की गई। इसके निर्देशक डॉ॰ एस.एल. सिंह सहायक निदेशक व डॉ॰ वीरेन्द्र अरोडा ने संगोष्ठी का सफलता पूर्वक संचालन किया। 31 अगस्त 1995 को प्रो॰ विजयपाल सिंह विभाग से सेवानिवृत्त हुए। इस अवसर पर विभाग में अपने पूर्व अध्यक्ष श्री विजयपाल सिंह को सम्मानित किया तथा भाव-भीनी विदाई दी। प्रो॰ एस. एल. सिंह को विज्ञान परिषद् ऑफ इण्डिया ने अपनी सिल्वर जुबली के अवसर पर पुरस्कृत किया। प्रो॰ एस.एल.सिंह ने श्लोवाकियां में सितम्बर 1995 दो सप्ताह तक, अक्टूबर 1995 में पोलैण्ड की 25 दिन तक विदेश यात्रा की तथा वहाँ के विभिन्न विषयों पर गणित विषय में व्याख्यान दिए। डॉ॰ वीरेन्द्र अरोडा विभागाध्यक्ष ने नेशनल सिम्पोजियम में शोध-पत्र वाचन किया। डॉ॰ महीपाल सिंह ने हैदराबाद में आयोजित शोध संगोष्ठी में शोध-पत्र वाचन किया।

भौतिकी विभाग में 1 जुलाई 1995 से डॉ॰ राजेन्द्र कुमार अग्रवाल अध्यक्ष पद पर नियुक्त हुए। विभाग में पांच शोध छात्र पी-एच.डी. हेतु पंजीकृत हुए। वैदिक भौतिकी का पाठ्यक्रम भी एम.एस.सी. के पाठ्यक्रम में सम्मिलित किया गया।

रसायन विभाग में छात्रों की संख्या बढ़ते हुए इस सत्र में 550 छात्र पंजीकृत हुए। डॉ॰ आर.डी. कौशिक की अध्यक्षता में कन्या गुरुकुल महाविद्यालय में भी रसायन विभाग की स्थापना की गई। वहाँ पर रसायन प्रयोगशाला का भी निर्माण हुआ। डॉ॰ आर.डी. कौशिक के निर्देशन में चार शोध-पत्र पी-एच. डी. का कार्य कर रहे थे। डॉ॰ ए.के. इन्द्रायण के निर्देशन में भी दो शोध छात्र पी-एच.डी. का कार्य कर रहे थे। डॉ॰ इन्द्रायण की पुस्तक "फन्डामेन्टल्स इन कमेस्ट्री" का तृतीय संस्करण प्रकाशित हुआ। डॉ॰ कौशल कुमार के पी-एच.डी. छात्रों के निर्देशन के साथ अन्तर्राष्ट्रीय शोध पत्रिका में शोध लेख प्रकाशित हुआ। डॉ॰ रणधीर सिंह कैलिफोर्निया के विश्वविद्यालय लॉस एंजेल्स में शोध करने गये। वहाँ उन्होंने 2 वर्ष तक शोध कार्य किया। डॉ॰ श्री कृष्ण ने विभागीय पुस्तकालय के इन्जार्च के रूप में कार्य किया।

जन्तु एवं पर्यावरण विज्ञान विभाग में 1995-96 के सत्र में विविध विश्वविद्यालयों के विद्वानों ने व्याख्यान दिये। इस सत्र में पर्यावरण विज्ञान पाठ्यक्रम एम.एस.सी. हेतु साढ़े पांच लाख रुपये का अनुदान वि.वि. अनुदान आयोग द्वारा प्रेषित किया गया। विभाग में डॉ॰ दिनेश भट्ट रीडर पद पर, डॉ॰ पी.सी. जोशी प्रवक्ता पद पर नियुक्त किये गये। अक्टूबर 95 में इन्डियन ऐकेडमी ऑफ इन्वायरमेन्टस साइन्सेज के सहयोग से पर्यावरण परिवर्तन का जैविक विविधता पर प्रभाव" नामक विषय पर राष्ट्रीय संगोष्ठी का आयोजन वि.वि. के कुलपति डॉ॰ धर्मपाल ने किया। डॉ॰ बी.बी. जोशी ने संगोष्ठी का संयोजन किया। विभाग की ओर से एक शोध पत्रिका भी प्रकाशित की गयी। डॉ॰ ए.के. चोपडा विभागाध्यक्ष के तीन शोध-पत्र प्रकाशित हुए। डॉ॰ दिनेश भट्ट रीडर विभाग के भी तीन शोधपत्र प्रकाशित हुएं। डॉ॰ टी.आर. खन्ना ने विभागीय कार्यों के साथ एन.एन.एस. के कार्यक्रम अधिकारी के रूप में भी कार्य किया।

वनस्पति विज्ञान विभाग डॉ॰ पुरुषोत्तम कौशिक की अध्यक्षता में सुचारु रूप से उन्नति के पथ पर आरुढ़ था। डॉ॰ कौशिक ने नानकदेव विश्वविद्यालय अमृतसर, महर्षि दयानन्द वि.वि. रोहतक और मुजफ्फरनगर में अयोजित राष्ट्रीय संगोष्ठियों में शोध-पत्र वाचन किया। प्रो॰ डी.के. माहेश्वरी ने विशेषज्ञ के रूप में

यू.जी.सी. दिल्ली संस्कृत एकादमी, राष्ट्रीय संस्कृत संस्थान दिल्ली आदि में कार्य सम्पादन किया। आप जर्मन में भी शोधकार्य के लिए गये। डॉ॰ माहेश्वरी 3 शोध प्रोजेक्ट पर कार्यरत इस सत्र में थे। डॉ॰ नवनीत प्रवक्ता विभाग ने 3 शोध-पत्र प्रकाशित किए। कम्प्यूटर विज्ञान विभाग के विभागाध्यक्ष डॉ॰ विनोद कुमार ने पांच शोध-पत्र प्रकाशित कराये। हैदराबाद में आयोजित संगोष्ठी में शोध-पत्र प्रस्तुत किया। कम्प्यूटर केन्द्र में आधुनिकतम कम्प्यूटर उपकरणों को स्थापित किया। जिसमें 486 एस.बक्स. कम्प्यूटर तथा 486 डी. एक्स. दो कम्प्यूटर डोस वर्क के लिए आधुनिक प्रिन्टर्स और स्कैनर्स शामिल किये गये। प्रयोगशाला के अध्यक्ष श्री दिनेश विश्नोई प्रयोगशाला के निर्माण में व्यस्त रहे।

पुस्तकालय विभाग में 95-96 के सत्र में 28000 रुपये की लागत से 1596 नये ग्रन्थ क्रय किये गये। उत्तर प्रदेश द्वारा 613 ग्रन्थ भेंट स्वरूप प्राप्त हुए। इस वर्ष 22774 पुस्तकें इश्यू की गई। विश्वविद्यालय के शोध छात्रों द्वारा किये गये शोध-कार्य के सम्बन्ध में शोध सारावली नाम से ग्रन्थ प्रकाशित किया गया।

अप्रैल 1996 में प्रतिवर्ष की भांति दीक्षान्त समारोह सम्पन्न हुआ। इसमें दीक्षान्त अभिभाषण के लिए चेक गणराज्य के राजदूत श्री ओदोलेन समेकल महोदय पधारे। उन्होंने छात्रों को दीक्षान्त अभिभाषण एवं आशीर्वाद हिन्दी भाषा में प्रदान किया। उन्होंने अपने दीक्षान्त भाषण में कहा था कि मेरी मातृभाषा चेक भाषा है। परन्तु में हिन्दी को अपनी दूसरी मातृभाषा मानता हूँ। उन्होंने आगे कहा कि "भारत मुझे बालकपन से ही आकर्षित करता रहा है। यह अनेक संस्कृतियों का विशाल देश उपमहाद्वीप है। हिन्दी भाषा को मैंने इस लिए चुना कि भारत की संस्कृति को जानने के लिए हिन्दी भाषा जानना मेरे लिए आवश्यक था।" दीक्षान्त समारोह के अवसर पर परिद्रष्टा जस्टिस महावीर सिंह, कुलाधिपति श्री सूर्यदेव आदि ने भी नव स्नातकों को आशीर्वाद प्रदान किया।[26]

विश्वविद्यालय की इन गतिविधियों के साथ-साथ गुरुकुल कांगड़ी के विद्यालय विभाग में भी अनेक गतिविधियों का संचालन हुआ। जो इस प्रकार अंकित किया गया। इस सत्र में विद्यालय में छात्रों की संख्या 211 आंकी गयी। डॉ॰ धर्मपाल जी मुख्याधिष्ठाता का मार्ग दर्शन प्राप्त कर कम्प्यूटर का शिक्षण भी 4 श्रेणी से प्रारम्भ किया गया। विद्याविनोद (11-12) कक्षाओं का अध्यापन भी विद्यालय में चालू रहा। स्वतन्त्रता दिवस, रक्षा बंधन, श्रीकृष्ण जन्माष्टमी, शिक्षक दिवस, गाँधी जयन्ती, आचार्य रामदेव दिवस स्वामी श्रद्धानन्द बलिदान पर्व, सुभाष जयन्ती, बसन्त पंचमी, स्वामी दयानन्द जन्मोत्सव, बोधोत्सव आदि सब पर्व विद्यालय में उल्लास पूर्वक मनाए गये। अनेक शैक्षिक एवं क्रीडात्मक प्रतियोगिताएँ भी सम्पन्न हुई।

वेद विभाग 1996-97 के सत्र में डॉ॰ महावीर मीमांसक, श्री छैलबिहारी गोयल, हाथरस, श्री प्रियव्रत दास उड़ीसा आदि वैदिक विद्वानों ने विशिष्ट व्याख्यान दिये। डॉ॰ मनुदेव विभागाध्यक्ष ने पंजाबी विश्वविद्यालय पटियाला, द्वारा आयोजित अन्तर्राष्ट्रीय सेमीनार देहरादून में पत्र वाचन किया। डॉ॰ मनुदेव बन्धु के निर्देशन में पांच शोध छात्र पी-एच.डी हेतु शोधकार्य कर रहे थे। डॉ॰ रूप किशोर शास्त्री ने जनवरी 97 में आयोजित दशम विश्व संस्कृत सम्मेलन में शोध-पत्र वाचन किया। उ.प्र. सरकार की संस्तुति पर श्री राज्यपाल रोमेश भण्डारी ने उ.प्र. संस्कृत संस्थान के लिए तीन वर्ष तक कार्यकाल हेतु सदस्य मनोनीत किया। डॉ॰ दिनेश चन्द्र शास्त्री ने दिल्ली संस्कृत अकादमी द्वारा 27 फरवरी से 1 मार्च 97 तक आयोजित वैदिक धनुर्वेद विज्ञान विषय पर शोध-पत्र वाचन किया। इसी प्रकार आपने जादवपुर विश्वविद्यालय कलकत्ता में आयोजित अखिल भारतीय प्राच्य विद्या सम्मेलन में वैदिक सुता विषय पर शोध-पत्र वाचन किया। डॉ॰ सत्यदेव निगमालंकार प्रवक्ता वेद विभाग ने श्री लाल बहादुर शास्त्री राष्ट्रीय संस्कृत संस्थान दिल्ली में पुनश्चर्या पाठ्यक्रम में प्रशिक्षण प्राप्त किया। आप ने भी दिल्ली संस्कृत अकादमी में वैदिक पर्यावरण विषय पर शोध-पत्र वाचन किया।

संस्कृत विभाग में संस्कृत विश्वविद्यालय दरभंगा बिहार के माननीय कुलपति पद्मश्री **डॉ॰ वि.** वेंकटाचलम् का "संस्कृत भाषा में महत्व एवं सम्बर्द्धन" विषय पर व्याख्यान हुआ। प्रो॰ **वेदप्रकाश शास्त्री** ने विभाग के अतिरिक्त आचार्य अखिल भारतीय संस्कृत सम्मेलन में शोध-पत्र वाचन किया। आपने अनेक विश्वविद्यालयों की शोध समिति एवं शिक्षा समिति के विशेषज्ञ के रूप में भाग लिया। डॉ॰ सोमदेव शतांशु जो विभागाध्यक्ष के रूप में भी प्रतिष्ठित थे। इनके निर्देशन में पांच शोध छात्र पी-एच.डी. के कार्य में शोधरत थे गुरुकुल विज्ञान आश्रम पाली राजस्थान द्वारा आयोजित सम्मेलन में शोध-पत्र वाचन किया। डॉ॰ महावीर रीडर संस्कृत विभाग के निर्देशन में सात शोध छात्र पंजीकृत हुए। दशम विश्वसंस्कृत सम्मेलन 3 जून से 8 जून 97 तक में शोध पत्र वाचन किया। मेरठ विश्वविद्यालय के दीक्षान्त समारोह के अवसर पर 20 मई को आपको डी.लिट्. की उपाधि से विभूषित किया गया। डॉ॰ ब्रह्मदेव प्रवक्ता संस्कृत विभाग ने कुरुक्षेत्र वि.वि. तथा श्री लाल बहादुर शास्त्री विद्यापीठ दिल्ली के पुनश्चर्या पाठ्यक्रम में प्रशिक्षण प्राप्त किया। आपने अखिल भारतीय प्राच्य विद्या मम्मेलन में "शेष शक्ति विमर्श" विषय पर शोध-पत्र वाचन किया।

दर्शन शास्त्र विभाग में फरवरी 97 में ("व्याप्तेः स्वरूपम् तद्ग्रहयोपायाश्च" विषय पर त्रिदिवसीय संगोष्ठी का आयोजन किया गया। इस संगोष्ठी के निदेशक प्रो॰ डॉ॰ जयदेव वेदालंकार थे। इस राष्ट्रीय संगोष्ठी में 20 विश्वविद्यालयों के विद्वान् प्रतिनिधियों ने शोध-पत्र वाचन किये। इसमें डॉ॰ डी. प्रह्लादाचार्य बैंगलौर विश्वविद्यालय (कर्नाटक), डॉ॰ पी.के. मुखोपाध्याय के नाम उल्लेखनीय है। डॉ॰ अशोक बोहरा सदस्य सचिव आई.सी.पी.आर. नई दिल्ली इस संगोष्ठी के मुख्य अतिथि थे। डॉ॰ जयदेव वेदालंकार के निदेशन में ही विश्वविद्यालय प्रशासकों की राष्ट्रीय संगोष्ठी भी विश्वविद्यालय में सम्पन्न हुई। इसमें अनेक विश्वविद्यालयों के कुलसचिव एवं उपकुलसचिवों ने भाग लिया इस संगोष्ठी में मुख्य अतिथि के रूप में श्री सोमपाल शास्त्री लोकसभा सदस्य द्वारा गठित विशिष्ट समिति के अध्यक्ष पद पर विभूषित, पधारे थे। इस संगोष्ठी का मुख्य विषय था "बदलते हुए परिवेश में विश्वविद्यालयों के निजीकरण की स्थिति में विश्वविद्यालयों के प्रशासकों की भूमिका। डॉ॰ त्रिलोक चन्द्र विभागाध्यक्ष ने शान्ति निकेतन में आयोजित अखिल भारतीय दर्शन परिषद् में शोधपत्र वाचन किया। डॉ॰ विजयपाल शास्त्री ने काशी हिन्दू विश्वविद्यालय में दर्शन संगोष्ठियों में शोध-पत्र वाचन किया। इस 96-97 के सत्र में दर्शन विभाग में 9 शोध छात्र पी-एच. डी के लिए पंजीकृत हुए। डॉ॰ यू.एस. बिष्ट ने 24 से 30 नवम्बर 96 में आयोजित विश्व दर्शन सम्मेलन में ज्ञान मीमांसा विभाग की अध्यक्षता की। इसके साथ ही उन्होंने आई.सी.पी.आर. दिल्ली, पाण्डीचेरी, बनारस, लखनऊ और गाजियाबाद में आयोजित संगोष्ठियों में शोध-पत्र वाचन किये। डॉ॰ सोहनपाल सिंह आर्य की विभाग में प्रवक्ता पद पर नियुक्ति की गयी।"

प्राचीन भारतीय इतिहास संस्कृति एवं पुरातत्व विभाग में डॉ॰ उदयवीर सिंह पूर्व संकायाध्यक्ष कुरुक्षेत्र वि.वि. नवम्बर 96 से मई 97 तक विजिटिंग प्रोफेसर के रूप में आमन्त्रित किये गये। इस विभाग में ग्यारह शोध छात्रों ने पी-एच.डी. हेतु पंजीकरण कराया। डॉ॰ कश्मीर सिंह के निर्देशन में 3 शोध छात्र पी-एच. डी. हेतु पंजीकृत थे। डॉ॰ राकेश शर्मा ने भारत में धार्मिक सहिष्णुता विषय पर माइनर रिसर्च प्रोजेक्ट के रूप में शोध कार्य किया। विभाग में प्रवक्ता पद पर डॉ॰ प्रभात सेंगर और डॉ॰ देवेन्द्र गुप्त नियुक्त हुए। तथा भारतीय पुरातत्व सर्वेक्षण विभाग द्वारा आयोजित मई 97 में चेतड़ु जिला कांगडा (हिमाचल) में उत्खनन का गहन प्रशिक्षण प्राप्त किया। डॉ॰ देवेन्द्र गुप्त ने भोगीलाल जैन इन्स्टीट्यूट से भाषा एवं लिपि विज्ञान के अयोजित प्रशिक्षण शिविर में भाग लिया। डॉ॰ एस.एन. सिंह प्रोफेसर ने प्राच्य विद्या संकायाध्यक्ष के रूप में अपने कर्त्तव्य का निर्वहण किया।

पुरातत्व संग्रहालय में इस सत्र (96-97) में उ.प्र. सरकार द्वारा प्रदत्त अनुदान से 20 हजार रुपये के ग्रन्थ क्रय किये गये। विश्वविद्यालय अनुदान आयोग द्वारा प्रदत्त अनुदान से प्राचीन हस्तलिखित गन्थों की विथिका को एक नया रूप देने के लिए 19100 रुपये के चार शोकेस बनवाये गये। संग्रहालय से संगृहीत पाण्डुलिपियों के रसायन उपचार के लिए एक लघु प्रयोगशाला भी स्थापित की गई। संग्रहालय की पाण्डुलिपियों का उपचार भी किया गया। इसी सत्र में संग्रहालय भवन के द्वितीय तल पर चार कमरों का निर्माण भी किया गया। इस सत्र में संग्रहालय में आये दर्शकों की संख्या 4930 रहीं। इस सत्र में विशिष्ट अतिथि के रूप में निम्नलिखित महानुभाव संग्रहालय के अवलोकनार्थ आये डॉ॰ साहब सिंह वर्मा, मुख्यमंत्री दिल्ली सरकार, डॉ॰ बलविन्द्र सिंह स्पेशल सचिव उ.प्र. सरकार डॉ॰ ए.एन. काजून यू.एस.ए. (अमेरिका), डॉ॰ ए.एल. वोडर्स रोमानिया डॉ के.पी. नोटियाल कुलपति गढ़वाल वि.वि., डॉ॰ देवनारायण शुभधन हालैण्ड, डॉ॰ महेन्द्र शोढ़ा विजिटिंग कमेटी के चेयरमैन एवं पूर्व कुलपति लखनऊ वि.वि. लखनऊ, डॉ॰ राकेश खुराना उपकुलपति इन्दिरा गाँधी वि.वि. आदि विशिष्ट महानुभाव पधारे थे।

योग विभाग में त्रैमासिक प्रमाणपत्र पाठ्यक्रम, एक वर्षीय डिप्लोमा पाठ्यक्रम के साथ एम.ए. स्नातकोत्तर शिक्षा का भी पाठ्यक्रम, चल रहा था। डॉ॰ ईश्वर भारद्वाज विभागाध्यक्ष का उपनिषदों में संन्यास योग नामक ग्रन्थ प्रकाशित हुआ। डॉ॰ भारद्वाज ने केन्द्रीय योग संस्थान नई दिल्ली, देहरादून और डॉ॰ हरिसिंह गौड़ वि.वि. सागर में आयोजित संगोष्ठियों में शोधपत्र वाचन किये। आपने आकाशवाणी नजीबाबाद तथा आकाशवाणी दिल्ली के राष्ट्रीय चैनल से दो वार्ताएँ प्रसारित की।

मनोविज्ञान विभाग में फरवरी 1997 में अन्तर्राष्ट्रीय कान्फ्रेन्स का आयोजन किया गया। इस कान्फ्रेन्स का उद्घाटन वि.वि. के कुलाधिपति श्री सूर्यदेव ने किया। समस्त प्रतिनिधियों का स्वागत कुलपति डॉ॰ धर्मपाल ने किया। विदेश से आने वाले प्रतिनिधि दक्षिण अफ्रीका, कनाडा. रसिया, सोलोवेनिया और अमेरिका से आये थे। विभाग के प्रो॰ ओ.पी. मिश्र ने मेरठ वि.वि. गढ़वाल, कानपुर और काशी वि.वि. में शोध समितियों के विषय विशेषज्ञ के रूप में भाग लिया। श्री एस.पी.सी. धमीजा ने इस सत्र में विभागाध्यक्ष पद के अतिरिक्त प्रबन्धन संकाय के अध्यक्ष के रूप में भी कार्य किया। डॉ॰ एस.के. श्री वास्तव ने इण्डियन काउन्सिल आफ सोसियल साइन्स एवं वि.वि. अनुदान आयोग से दो प्रोजेक्ट स्वीकृत करायें।

हिन्दी विभाग में केन्द्रीय हिन्दी निदेशालय नई दिल्ली के सहयोग से विभाग में अहिन्दी भाषी नवलेखकों का 23 जून 97 से एक शिविर आयोजित किया गया। हिन्दी विभाग के आचार्य डॉ॰ विष्णुदत्त राकेश ने विश्वविद्यालय के 96 वर्षों के दीक्षान्त भाषणों का संकलन "दीक्षालोक" नाम से प्रकाशित किया। हिन्दी विभाग के ही डॉ॰ कमलकान्त बुधकर ने पत्रकारों के विशिष्ट व्यक्तियों से साक्षात्कारों को भी "बातें मुलाकातें" रूप में सम्पादित किया। डॉ॰ सन्तराम वैश्य ने गुरुनानक देव वि.वि. अमृतसर, कुरुक्षेत्र वि.वि. , राष्ट्रीय रामायण मेला चित्रकूट में आयोजित राष्ट्रीय संगोष्ठियों में शोध-पत्र वाचन किया। डॉ॰ भगवान देव पाण्डेय के निर्देशन में शोध छात्र शोध कार्य हेतु पी-एच.डी. कर रहे थे। इस सत्र में विभाग में अनेक विद्वानों के व्याख्यान आयोजित किये गये जिनमें बालकवि बैरागी नई दिल्ली, डॉ॰ महेन्द्र कुमार, डॉ॰ महेन्द्रनाथ दूबे आगरा, प्रो॰ कैलाशचन्द्र भाटिया अलीगढ़, प्रो. हरिश्चन्द्र वर्मा, डॉ॰ उदय शंकर श्री वास्तव अलीगढ़ प्रो॰ प्रेमकान्त टंडन इलाहाबाद वि.वि. आदि विश्वविद्यालयों के विद्वानों के हिन्दी विभाग में व्याख्यान हुए। डॉ॰ ज्ञानचन्द्र रावल ने विभाग के कार्यों में विशेष रुचि से भाग लिया।

आंग्ल भाषा विभाग में डॉ॰ नारायण शर्मा मानविकी संकाय के संकायाध्यक्ष के रूपमें नियुक्त हुए और मार्च 97 तक डॉ॰ शर्मा विभागाध्यक्ष भी रहे। प्रो॰ नारायण शर्मा मेरठ वि.वि., कुमायूँ और इलाहाबाद विश्वविद्यालयों में विषय विशेषज्ञ के रूप में विभिन्न समितियों में आमन्त्रित किये गये। श्री सदाशिव भगत

रीडर विभागाध्यक्ष के रूप में नियुक्त किये गये। प्रो॰ भगत के निर्देशन में 3 शोधछात्रों ने पंजीकरण कराया। डॉ॰ श्रवण कुमार ने बारहवीं अन्तर्राष्ट्रीय आई.ए.सी.एस. कांफ्रेन्स जम्मू वि.वि. में आयोजित संगोष्ठी में शोधपत्र वाचन किया। डॉ॰ अम्बुज शर्मा के निर्देशन में तीन छात्रों ने शोध हेतु पंजीकरण कराया। डॉ॰ कृष्ण अवतार अग्रवाल ने रिफ्रेसर पाठ्यक्रम इलाहाबाद वि.वि. तथा हैदराबाद में प्रशिक्षण प्राप्त किया।

विज्ञान संकाय में 1996-97 के सत्र में 500 छात्रों ने शिक्षा प्राप्त की। गणित विभाग में 30 अप्रैल 1997 को डॉ॰ हरवंश लाल गुलाटी रीडर 60 वर्ष की आयु होने पर विश्वविद्यालय से सेवानिवृत्त हुए। उनको विभाग द्वारा भावभीनी विदाई दी गयी। विभाग के प्रो॰ श्यामलाल सिंह 96-97 के सत्र में दारूलेस्लाम विश्वविद्यालय में विजिटिंग प्रोफेसर के रूप में गये। डॉ॰ वीरेन्द्र अरोड़ा विभागाध्यक्ष नियुक्त हुए। उन्होंने संकायाध्यक्ष का भी कार्य किया। डॉ॰ वीरेन्द्र अरोड़ा को इन्टरनेशनल बायोग्राफिकल सेन्टर इंग्लैण्ड द्वारा "इन्टरनेशल मैन आफ दी ईयर" से सम्मानित किया गया। डॉ॰ अरोड़ा ने वि.वि. सेवा योजना एवं मंत्रणा केन्द्र के प्रमुख के रूप में भी कार्य किया। डॉ॰ विजयेन्द्र कुमार शर्मा रीडर विभाग ने भी विभाग के कार्यों के अतिरिक्त पारिभाषिक शब्दावली कार्यशाला में सक्रिय भाग लिया। डॉ॰ महीपाल सिंह रीडर ने वंशस्थली विद्यापीठ राजस्थान में आयोजित कान्फ्रेन्स में शोध-पत्र वाचन किया।

.भौतिकी विभाग में प्रयोशाला में नया विद्युतीकरण किया गया। डॉ॰ राजेन्द्र कुमार अग्रवाल विभागाध्यक्ष ने कन्या गुरुकुल महाविद्यालय हरिद्वार में भौतिकी विभाग की स्थापना की तथा प्रयोगशाला का निर्माण किया गया। डॉ॰ पी.पी. पाठक का शोध-पत्र प्रकाशित हुआ। डॉ॰ पाठक ने राष्ट्रीय बाल विज्ञान कांग्रेस का संयोजन किया। डॉ॰ हरिश्चन्द्र ग्रोवर ने विभाग के कार्यों में सक्रिय भाग लिया।

रसायन विज्ञान विभाग में एम.एस.सी. के पाठ्यक्रम को अत्याधुनिक तथा रोजगारोन्मुख के रूप में परिवर्तित किया गया। इस सत्र में प्रयोगशाला में पांच शोध सुविधायुक्त कक्षों की व्यवस्था, प्रयोगशाला में 20 अतिरिक्त सेल्फों का निर्माण किया गया। विभाग में गत वर्षों की भांति प्रो॰ ओ.पी. सिन्हा का बलिदान दिवस मनाया गया। विभागीय छात्र गोवा विश्वविद्यालय व सामुद्रिक शोध संस्थान डोनापोला की सरस्वती यात्रा के लिए गये। डॉ॰ आर.डी. कौशिक की अध्यक्षता में कन्या गुरुकुल महाविद्यालय हरिद्वार में रसायन प्रयोगशाला की स्थापना की गयी। डॉ॰ आर.डी. कौशिक विभागाध्यक्ष के निर्देशन में यू.जी.सी. शोध परियोजना का शोध कार्य हुआ। डॉ॰ कौशिक के छः शोधपत्र प्रकाशित हुए। डॉ॰ रामकुमार पालीवाल के निर्देशन में शोध-छात्र पंजीकृत हुए। डॉ॰ पालीवाल ने अनुशासन समिति के प्रोक्टर के रूप में कार्य किया। डॉ॰ ए. के. इन्द्रायण के निर्देशन में चार छात्रों ने शोध कार्य किया। यू.जी.सी. शोध परियोजना के निदेशक के रूप में शोधकार्य किया। डॉ॰ इन्द्रायण के तीन शोध-पत्र प्रकाशित हुए। डॉ॰ कौशल कुमार रीडर के निर्देशन में शोध-छात्र पंजीकृत हुए। डॉ॰ रणधीर सिंह रीडर रसायन विभाग का मेजर शोध प्रोजेक्ट यू.जी.सी. द्वारा स्वीकार किया गया। डॉ॰ रणधीर सिंह के दो शोध-पत्र प्रकाशित हुए। डॉ॰ श्रीकृष्ण ने विभागीय कार्यकलापों के साथ-साथ निर्देशन भी किया।

कम्प्यूटर विज्ञान विभाग के विभागाध्यक्ष डॉ॰ विनोद कुमार शर्मा तथा उनके अन्य सहयोगियों के तीन शोध-पत्र प्रकाशित हुए। डॉ॰ पी.के.यादव, डॉ॰ के.जे. भाटिया, श्री एम.पी.सिंह, श्री अरुण कुमार ने भी शोधपत्रों में अपना सहयोग प्रदान किया। श्री सुनील कुमार ने तकनीकी शब्दावली आयोग नई दिल्ली द्वारा आयोजित संगोष्ठी में शोध-पत्र वाचन किया। इस वर्ष कम्प्यूटर प्रयोगशाला में चार नये कम्प्यूटर लाये गये। श्री सुनील कुमार प्रवक्ता के निरीक्षण में विभागीय पुस्तकालय हेतु 200 ग्रन्थ खरीदे गये। कम्प्यूटर केन्द्र में इस सत्र में 3 लाख रूपये के नये कम्प्यूटर खरीदे गये। कम्प्यूटर केन्द्र में लगभग इस समय तक 50

लाख रुपये के आधुनिक कम्प्यूटर संयन्त्र शाफ्टवेयर उपलब्ध थे। मुख्य कार्यालय में एक अलग से कम्प्यूटर सेल का निर्माण किया गया। ताकि कार्यालय की आवश्यकताओं को पूरा किया जा सके। डॉ॰ अचल कुमार गोयल ने कम्प्यूटर केन्द्र में आयोजित कम्प्यूटर शब्दावली कार्यशाला में शोध-पत्र प्रस्तुत किया।

जन्तु एवं पर्यावरण विज्ञान विभाग में एम.एस.सी 1995-96 के सत्र में प्रारम्भ हुआ। जिसके अन्तर्गत इस सत्र में छात्रों को नवीनतम जानकारी प्राप्त कराने के लिए अनेक विश्वविद्यालयों एवं शोधसंस्थानों के विद्वानों के व्याख्यानों का आयोजन किया गया। अमेरिकन वैज्ञानिक डॉ॰ होस्ट रसल वासर ने पर्यावरण एवं स्वास्थ्य नामक विषय पर 20 नवम्बर 1996 को व्याख्यान दिया। विभाग के प्राध्यापकों द्वारा अपने ही प्रयास से शोध पत्रिका "हिमालयन शोध पत्रिका पर्यावरण और जन्तु विज्ञान" का नियमित प्रकाशन विगत दस वर्षों से किया गया। इस वर्ष एम.एस.सी के छात्रों को पर्यावरण सम्बन्धी ज्ञान अर्जित करने हेतु डॉ॰ पी.सी. जोशी और डॉ॰ डी.एस. मलिक के निर्देशन में सरस्वती यात्रा पर बंगलौर, ऊंटी एवं मैसूर स्थित विभिन्न शोध संस्थानों, विश्वविद्यालयों, वनविहार, नेशनल पार्क और सेन्च्यूरी आदि स्थानों पर भेजा गया। डॉ॰ वी.डी. जोशी माइक्रोबायालोजी और पर्यावरण विज्ञान विषयों के समन्वयक थे। इनके निर्देशन में शोध छात्रों ने पी-एच.डी. की उपाधि प्राप्त की। डॉ॰ जोशी दिल्ली वि.वि., कुरूक्षेत्र वि.वि., हिन्दी साहित्य अकादमी दिल्ली, में शोध-पत्र वाचन किये। डॉ॰ ए.के. चोपडा रीडर विभाग ने चार शोध-पत्र प्रकाशित कियें डॉ॰ दिनेश भट्ट का विज्ञान और टेक्नोलॉजी मंत्रालय द्वारा 6 लाख रुपये का एक शोध परियोजना प्रस्ताव स्वीकार किया गया। डॉ॰ डी.आर. खन्ना ने राष्ट्रीय संगोष्ठी में शोधपत्र वाचन किया। डॉ॰ प्रकाशचन्द्र जोशी की विश्व बैंक द्वारा संचालित परियोजना के अन्तर्गत एक वृहद् शोध योजना स्वीकृत की गयी। डॉ॰ देवेन्द्र सिंह मालिक ने डी.ए.वी. कालेज देहरादून द्वारा आयोजित संगोष्ठी में शोध-पत्र वाचन किया।

वनस्पति विज्ञान विभाग ने बायोटैक्नोलॉजी एवं 19 वीं एनुअल बोर्टेनिकल कान्फ्रैन्स का सफल आयोजन किया। विभाग के प्रो॰ एवं अध्यक्ष डॉ॰ डी.के. माहेश्वरी के निर्देशन में यह राष्ट्रीय संगोष्ठी आयोजित की गयी। इसमें भारत वर्ष के लगभग 200 प्रतिनिधि विद्वान् विभिन्न वि.वि. से सम्मिलित हुए तथा अनेकों शोध-पत्र प्रस्तुत किये गये। विश्वविद्यालय के द्वितीय परिसर कन्या गुरुकुल महाविद्यालय हरिद्वार की एम.एस.सी. की छात्राओं के लिए विभाग की ओर से व्याख्यान आयोजित किये गये। जिनमें डॉ॰ काणे (जर्मनी), डॉ॰ वी.एन.जौहरी पन्त वि.वि. पन्तनगर, डॉ॰ ए.पी. गर्ग मेरठ वि.वि., डॉ॰ लक्ष्मी नरसिंहम् तिरूचिरापल्ली वि.वि., डॉ. जे.के. गुप्ता पंजाब वि.वि. चण्डीगढ़ प्रभृति विद्वानों के व्याख्यान कराये गये। डॉ॰ डी.के. माहेश्वरी 96-97 के सत्र में एक महीने के लिए एक्सचेन्ज प्रोग्राम के अन्तर्गत रूस में गये। डॉ॰ पुरुषोत्तम कौशिक को एकेदमी आफ प्लान्ट साईन्स आफ इन्डिया का 1996 में अध्यक्ष चुना गया। डॉ॰ कौशिक ने 27 से 29 मार्च 1997 को सरदार भगवान सिंह पोस्ट ग्रेजुएट इन्स्टीच्यूट आफ बाय मेडिकल साइन्सिज के सूक्ष्म जैवकीय विभाग द्वारा आयोजित राष्ट्रीय संगोष्ठी में शोध-पत्र वाचन किया। डॉ॰ कौशिक के कई ग्रन्थ प्रकाशित हुए। डॉ॰ आर.सी. दूबे के दो ग्रन्थ इस सत्र में प्रकाशित हुए। तथा इस सत्र में इनके सात शोध-पत्र प्रकाशित हुए। डॉ॰ जी.पी. गुप्ता ने दो शोध-पत्र प्रकाशित किये। विभाग में आयोजित राष्ट्रीय सेमीनार 26 दिसम्बर से 28 दिसम्बर 1996 के स्थानीय सचिव के रूप में भी इन्होंने कार्य किया। डॉ॰ नवनीत प्रवक्ता ने विभाग में दो शोध-पत्र प्रकाशित कराये। तथा गुजरात विश्वविद्यालय अहमदाबाद में आयोजित रिफ्रेसर पाठ्यक्रम में प्रशिक्षण प्राप्त किया। श्रद्धानन्द वैदिक शोध एवं प्रकाशन संस्थान ने 96-97 के सत्र में "स्वामी श्रद्धानन्द समग्र मूल्यांकन" तथा "इन्द्र विद्यावाचस्पति कृतित्व के आयाम" पुस्तकों का प्रकाशन किया।

पुस्तकालय विभाग में इस सत्र में 486281 रुपये के नये ग्रन्थ क्रय किये गये। उ.प्र. सरकार द्वारा लगभग 14377 रुपये मूल्य के 503 ग्रन्थ भेंट स्वरूप प्राप्त हुए। इस सत्र में 23727 पुस्तकें इश्यू की गयी। "क्लासिकल राइटिंग ऑन वैदिक एण्ड संस्कृत लिटरेचर" का 800 पृष्ठों का ग्रन्थ पुस्तकालय में उपलब्ध 8000 ग्रन्थों जो कि वैदिक तथा संस्कृत साहित्य से सम्बद्ध को सूचीबद्ध किया गया। विश्वविद्यालय के पुस्तकालय के अन्तर्गत स्वामी श्रद्धानन्द अनुसंधान प्रकाशन केन्द्र का कार्य भी विगत वर्षों से चल रहा है। प्रकाशन के निर्देशक डॉ॰ विष्णुदत्त राकेश के प्रयास से अनेकों ग्रन्थ प्रकाशित किये गये। 96-97 के दीक्षान्त समारोह के अवसर पर दीक्षालोक नामक ग्रन्थ का विमोचन किया गया। विगत वर्षों की भांति शिक्षा के साथ आंशिक रोजगार योजना का कार्यक्रम इस सत्र में भी जारी रहा। 96-97 के सत्र में 30,000 पाठकों ने पुस्तकालय का उपयोग किया। इसी सत्र में 248 शोध पत्रिकाएं पुस्तकालय में मंगवाई गई। इसी सत्र में पुस्तकालय के समस्त ग्रन्थों की संख्या 124431 थी।

राष्ट्रीय छात्र सेना (एन.सी.सी.) विभाग ने गत वर्षों की भांति एन.सी.सी. के छात्रों को गहन प्रशिक्षण दिया। इस सत्र का वार्षिक प्रशिक्षण शिविर रायपुर देहरादून में लगाया गया। इस शिविर में रेडक्रास सोसायटी के लिए क्रेडिट्स ने रक्तदान भी किया।

शारीरिक शिक्षा विभाग की ओर से 96-97 के सत्र में पहली बार विश्वविद्यालय की एथलेटिक टीम ने अखिल भारतीय अन्तर्विश्वविद्यालय एथलेटिक्स प्रतियोगिता में भाग लिया। वि.वि. के टीमों ने ग्वालियर, कुरूक्षेत्र वि.वि., परमार वि.वि., पौड़ी, हिमाचल आदि में आयोजित खेलों में भाग लिया। डॉ॰ आर.के.एस. डागर को 96-97 के सत्र में अखिल भारतीय अन्तर विश्वविद्यालय वेट लिफ्टिंग एवं शरीर सौष्ठव प्रतियोगिता के पर्यवेक्षक का कार्य सौंपा गया।

कन्या गुरुकुल महाविद्यालय हरिद्वार में केवल स्नातकोत्तर एम.ए., एम.एस.सी. हेतु उच्च अध्ययन कराया जाता है। इस सत्र में 300 छात्राओं ने विभिन्न एम.ए., एम.एस.सी. की कक्षाओं में प्रवेश लिया। विभिन्न विषयों की छात्राओं ने लाल बहादूर शास्त्री प्राशासनिक सेवा अकादमी, कनाडा की प्रसिद्ध विदुषी ट्रेसा के व्याख्यान को श्रवण किया। शाधरा के मानसिक चिकित्सालय, वाडिया इंस्टीच्यूट देहरादून, आदि स्थानों पर छात्राओं को सरस्वती यात्रा के लिए भेजा गया। कन्या गुरुकुल महाविद्यालय के प्रभारी के रूप में डॉ॰ सुनृता विद्यालंकार महाविद्यालय के विकास के लिए प्रयत्नशील रही। कन्या गुरुकुल महाविद्यालय देहरादून में एम.बी.ए. एवं पी.एम.आई.आर के पाठ्यक्रम भी प्रारम्भ हुए। वेद एवं संस्कृत विभाग में डॉ॰ सरोज नौटियाल ने अपने अध्यापन कार्य के साथ राष्ट्रीय कार्यक्रमों के अवसर पर छात्राओं द्वारा संस्कृत में स्वागत गान, वन्दना भाषण नाटक आदि जो प्रस्तुत किये गये, वे इनके निर्देशन में ही प्रस्तुत हुए। हिन्दी विभाग में श्रीमती रंजना राजदान ने अपना अध्यापन कार्य परिश्रम एवं उत्साह के साथ किया। अंग्रेजी विभाग में श्रीमती हेमलता ने विद्यालंकार के साथ-साथ एम.ए. की कक्षाओं का भी अध्यापन कार्य किया। इस सत्र में श्रीमती हेमलता ने पी-एच.डी. की उपाधि प्राप्त की। प्राचीन भारतीय संस्कृति एवं इतिहास विभाग में डॉ॰ रेणु शुक्ला की प्रवक्ता पद पर नियुक्ति की गयी। संगीत विभाग में छात्राओं को भारतीय शास्त्रीय संगीत गायन एवं वादन की शिक्षा विगत वर्षों की भांति दी गयी। इसके साथ ही विभिन्न प्रान्तों का लोक संगीत गायन भी सिखाया गया। 96-97 के सत्र में देहरादून नगर की विभिन्न संस्थाओं में आयोजित सांस्कृतिक कार्यक्रमों में श्रीमती प्रतिभा शर्मा ने आर्य समाज के सुन्दर गीतों का एक कैसेट तैयार किया। डॉ॰ मीरादास गुप्ता ने इस सत्र में संगीत में पी-एच.डी. की उपाधि प्राप्त की। चित्र कला विभाग की छात्राओं ने अनेक चित्रकला के विभिन्न अवसरों पर सुन्दर सुसज्जित चित्र बनाये। कम्प्यूटर विभाग जो विगत चार वर्षों से प्रारम्भ होकर पूर्ण रूपेण विकसित हुआ। इस विभाग की अध्यक्षा श्रीमती निपुर के निर्देशक में 96-97 के

सत्र में प्रयोगशाला में नये कम्प्यूटर एवं प्रिन्टर क्रय किये गये। कम्प्यूटर विभाग में छात्रावास का विस्तार किया गया। इस विभाग का छात्रावास आधुनिकतम सुविधाओं से युक्त माना जाता रहा है। छात्रावास में श्रीमती आभा विद्यालंकार ने आश्रम अध्यक्षा का कार्यभार सम्भाला। इस छात्रावस में प्रात: एवं सायं सन्ध्या हवन भी कराया जाता है। 96-97 के सत्र में छात्राओं ने बैडमिन्टन, चैस, कैरम, टेबिल टेनिस आदि खेलों का अभ्यास किया। जिला स्तरीय क्रीडा प्रतियोगिता में छात्रों ने भाग लिया एवं कई पुरस्कार प्राप्त किये श्रीमति बलबीर कौर ने क्रीड़ा विभाग को सुचारू रूप से चलाया। महाविद्यालय के पुस्तकालय में अनेक दुर्लभ प्राचीन ग्रन्थ उपलब्ध तथा आधुनिक विषयों के इस सत्र में क्रय किये गये। श्रीमती सुदेश खन्ना पुस्तकालयाध्यक्षा के निर्देशन में पुस्तकालय में सुन्दर व्यवस्था रही।

कन्या गुरुकुल देहरादून की आचार्या श्रीमती दमयन्ती कपूर का संरक्षकत्व, महाविद्यालय में भी है।

विश्वविद्यालय के दीक्षान्त समारोह में मुख्य अतिथि के रूप में डॉ॰ आलेख उलत्सिफेरोव महोदय पधारे एवं नव स्नातकों को अभिभाषण एवं आशीर्वाद प्रदान किया। दीक्षान्त समारोह की अध्यक्षता श्री सूर्यदेव कुलाधिपति ने की। इस अवसर पर वि.वि. के परिद्रष्टा श्री जस्टिस महावीर सिंह ने नव स्नातकों को आशीर्वाद प्रदान किया।

विश्वविद्यालय अनुदान आयोग द्वारा गठित विजिटिंग कमेटी नवीं पंचवर्षीय योजना के अन्तर्गत शिक्षा के विकास योजनाओं के लिए गुरुकुल कांगड़ी हरिद्वार में 19 अप्रैल 1997 में आयी थी। इस कमेटी के अध्यक्ष डॉ॰ महेन्द्र सोढ़ी पूर्व कुलपति इन्दौर, तथा लखनऊ थे। तथा डॉ॰ अमरनाथ पाण्डेय काशी विद्यापीठ वाराणसी, विश्वविद्यालय अनुदान आयोग के उपसचिव सदस्य के रूप में थे। इस कमेटी ने 19 अप्रैल से 22 अप्रैल तक विश्वविद्यालय के विभिन्न विभागों, कन्या गुरुकुल महाविद्यालय हरिद्वार और कन्या गुरुकुल महाविद्यालय देहरादून का निरीक्षण किया। विजिटिंग कमेटी ने विश्वविद्यालय के विकास एवं उन्नति से संतोष अभिव्यक्त किया। इस कमेटी की संस्तुति पर वि.वि. अनुदान आयोग ने प्रशासन एवं संकायों के भवनों के निर्माण के लिए 50 लाख रूपये की स्वीकृति प्रदान की। कन्या गुरुकुल महाविद्यालय हरिद्वार को मान्यता प्रदान की तथा इस महाविद्यालय के लिए तथा समस्त विश्वविद्यालय के लिए दो प्रोफेसर पद, दस प्रवक्ता पद स्वीकृत किये।

19 अगस्त 1996 को डॉ॰ जयदेव वेदालंकार ने कुलसचिव पद से त्यागपत्र दे दिया। उनके स्थान पर डॉ॰ श्यामनारायण सिंह प्रोफेसर प्राचीन इतिहास विभाग को अस्थायी रूप में कुलसचिव पद पर नियुक्त किया गया। डॉ॰ वेदालंकार त्यागपत्र देने के पश्चात् दर्शन विभाग में अपने प्रोफेसर पद पर पुन: आ गये। उनके नियुक्ति पत्र में यह उनको अधिकार दिया गया था कि वे जब चाहे अपने विभाग में लौट सकते है।

30 जून 1996 को कुलपति डॉ॰ धर्मपाल का 3 वर्ष का कार्यकाल समाप्त हुआ। एक जुलाई 1996 को विश्वविद्यालय के परिद्रष्टा जस्टिस महावीर सिंह ने डॉ॰ धर्मपाल को पुन: कुलपति पद पर नियुक्त किया। तदनुसार डॉ॰ धर्मपाल ने पुन: 1 जुलाई 1996 को कुलपति पद का कार्यभार संभाल लिया।[27]

इसी प्रकार गुरुकुल कांगड़ी के विद्यालय विभाग में 96-97 के वर्ष में अनेक क्रियाकलाप हुए। सभी पर्व व त्यौहार मनाए गए। शिक्षक दिवस के अवसर पर श्री प्रकाशवीर जी विद्यालंकार मंत्री आर्य विद्या सभा के कर-कमलों द्वारा विद्यालय के वरिष्ठ अध्यापक श्री महावीर "नीर" विद्यालंकार को एक "स्मृति-शील्ड" प्रदान की गयी। इस अवसर पर मान्य मुख्याधिष्ठाता डॉ॰ धर्मपाल जी, सं॰ मुख्याधिष्ठाता श्री महेन्द्र कुमार जी, व्यवसायाध्यक्ष श्री डॉ॰ राजकुमार रावत भी विद्यमान थे।

सन् 1997-98 के सत्र में महर्षि दयानन्द विश्वविद्यालय अजमेर के कुलपति डॉ॰ चतुर्वेदी ने अपना

विशिष्ट व्याख्यान प्रदान किया। अन्य विद्वानों में डॉ॰ भवानीलाल भारतीय,. डॉ॰ ओमप्रकाश सिंघल, डॉ॰ सर्वजीत राय, डॉ॰ श्यामसुन्दर शुक्ल, डॉ॰ हरिमोहन आदि विद्वान् विश्वविद्यालय में पधारे और उन्होंने छात्रों के ज्ञान वर्धन के लिए विशिष्ट व्याख्यान दिये। प्राच्य विद्या संकाय के अध्यक्ष डॉ॰ श्यामनारायण सिंह के निर्देशन में संकाय ने इस सत्र में कई प्रतियोगिताओं और सम्मेलनों का आयोजन किया। संकाय के कतिपय छात्र अनुसंधान कार्य के लिए वि.वि. अनुदान आयोग द्वारा आयोजित परीक्षा आई.आर.एफ. में उत्तीर्ण हुए। संकाय में वेदालंकार प्रथम द्वितीय और तृतीय खण्ड के छात्र जो पूर्ववर्ती परीक्षा में प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण होते है उसमें से पांच छात्रों को अंक के आधार पर 500/- मासिक छात्रवृत्ति भी प्रदान करने का प्रावधान है।

वेद विभाग में वार्षिकोत्सव पर 51 कुण्डीय यज्ञ का आयोजन किया गया। वेद विभाग के अध्यक्ष डॉ॰ मनुदेव के निर्देशन में वेद विभाग में से सत्र में कई कार्यक्रम आयोजित किये गये। डॉ॰ रूपकिशोर शास्त्री के निर्देशन में वि.वि.अनु.आ. द्वारा स्वीकृत एवं अनुदानित वृहद् शोध योजना के अन्तर्गत वैदिक वाङ्मय निर्वचन कोष तैयार किया गया। डॉ॰ दिनेश शास्त्री के निर्देशन में भी यू.जी.सी. नई दिल्ली से वैदिक संहिताओं में उपलब्ध समस्त उपमाओं का संकलनात्मक एवं व्याख्यात्मक कोष हेतु एक लाख रुपये का आर्थिक अनुदान स्वीकार हुआ। डॉ॰ सत्यदेव निगमालंकार प्रवक्ता विभाग ने विभिन्न संस्थाओं में व्याख्यान प्रदान किया।

संस्कृत विभाग में 6 से 8 मार्च 98 तक "भारत में धर्म एवं राजनीति" विषय पर राष्ट्रीय शोध संगोष्ठी का आयोजन किया गया। उ.प्र. संस्कृत संस्थान द्वारा स्वातन्त्र्य स्वर्ण जयन्ती समारोह संगोष्ठी का आयोजन गुरुकुल विश्वविद्यालय के परिसर में ही किया गया। संस्कृत विभाग के प्रो॰ वेदप्रकाश शास्त्री आचार्य एवं प्रो॰ वाइस चान्सलर पद पर तथा मानविकी संकाय के अध्यक्ष पद पर भी प्रतिष्ठित रहे। डॉ॰ रामप्रकाश शर्मा रीडर विभाग के अध्यक्ष के रूप में कार्यरत थे। डॉ॰ सोमदेव शतांशु रीडर विभाग ने समर्पणानन्द वैदिक शोध संस्थान में व्याख्यान दिया। डॉ॰ ब्रह्मदेव विद्यालंकार प्रवक्ता का पंजाब विश्वविद्यालय की पत्रिका "परिभाषा" में शोध-पत्र प्रकाशित हुआ।

दर्शनशास्त्र विभाग के अध्यक्ष डॉ॰ त्रिलोचन्द्र थे। विभाग के प्रो॰ डॉ॰ जयदेव वेदालंकार के वैदिक साहित्य का इतिहास और भारतीय दर्शन में प्रमाण नामक ग्रन्थ भारतीय विद्या प्रकाशन दिल्ली से प्रकाशित हुए। डॉ॰ त्रिलोकचन्द्र ने जबलपुर वि.वि. तथा काशी हिन्दू विश्वविद्यालय बनारस में साधना और धार्मिक अनुष्ठान विषय पर व्याख्यान दिया। तथा आजीवन युवा रहने के उपाय नामक पुस्तक भी प्रकाशित की। डॉ॰ यू.एस. बिष्ट रीडर ने सागर वि.वि. रानी दुर्गावती वि.वि. जबलपुर में आयोजित गोष्ठियों में व्याख्यान दिये। डॉ॰ विजयपाल शास्त्री के निर्देशन में 5 शोध-पत्र पी-एच.डी. हेतु शोधकार्य कर रहे थे। डॉ॰ सोहनपाल सिंह प्रवक्ता विभाग ने विभाग की शैक्षणिक गतिविधियों में सक्रिय भाग लिया।

प्राचीन भारतीय इतिहास, संस्कृति एवं पुरातत्व विभाग में डॉ॰ उदयवीर सिंह सेवा निवृत्त प्रोफेसर कुरुक्षेत्र विश्वविद्यालय विजिटिंग प्रो॰ के रूप में आये और उन्होंने समय-समय पर छात्रों के लिए विशिष्ट व्याख्यान प्रदान किये। विभाग में डॉ॰ श्याम नारायण के निर्देशन में 6 शोध छात्र, डॉ॰ कश्मीर सिंह के निर्देशन में 4 शोध छात्र, डॉ॰ राकेश शर्मा के निर्देशन में 4 शोध छात्र, अनुसंधान कार्य कर रहे थे। इतिहास विभाग के छात्रों द्वारा दिल्ली मथुरा, आगरा और फतेहपुर सीकरी आदि स्थानों का शैक्षणिक भ्रमण किया गया। प्रो॰ श्यामनारायण सिंह ने विभाग के अध्यक्ष, प्राच्य विद्या संकाय के डीन और इसके अतिरिक्त कुलसचिव पद का भी कार्य किया। विभाग के वरिष्ठ प्रवक्ता डॉ॰ राकेश शर्मा ने अपने लघु रिसर्च प्रोजेक्ट हेतु शोध कार्य किया। डॉ॰ राकेश शर्मा ने अपने विभागीय कार्य के अतिरिक्त एन.सी.सी. के कम्पनी

कमाण्डर तथा डॉ॰ देवेन्द्र गुप्त ने विश्वविद्यालय के एन.एस.एस. के प्रोग्राम ऑफिसर के रूप में कार्य किया। डॉ॰ प्रभात कुमार प्रवक्ता इतिहास विभाग के इसी सत्र में स्वतन्त्रता की पचासवीं वर्षगांठ के उपलक्ष्य में हरिद्वार से एक "स्वतन्त्रता ज्योति" स्वामी श्रद्धानन्द जी के बलिदान दिवस पर कुलाधिपति श्री सूर्यदेव को दिल्ली में प्रदान की।

पुरातत्व संग्रहालय विभाग इतिहास विभाग की एक प्रयोगशाला के रूप में प्रयुक्त होता रहा है। पाण्डुलिपि परिरक्षण योजना के अन्तर्गत 72 पाण्डुलिपियों का परिरक्षण किया गया और संग्रहालय को अपनी विभिन्न परियोजनाओं के लिए 85 हजार रुपये का अनुदान मानव संसाधन विकास मंत्रालय से स्वीकृत हुआ। 97-98 के सत्र में विशिष्ट अतिथियों में प्रो॰ ह्यूरो नाकाकूझिको किन्की विश्वविद्यालय जापान, प्रो॰ भूदेव शर्मा जेवियर वि.वि. यू.एस.ए., प्रो॰ ओमप्रकाश सिंघल पेइचिंग वि.वि. चीन, डॉ॰ जोहरी लाल निर्देशक ओ.एन.जी.सी., डॉ॰ दयानन्द मिश्र भारत संसाधन विकास मंत्रालय दिल्ली आदि विशिष्ट विद्वान् संग्रहालय में अतिथि के रूप में आये।

योग विभाग के अध्यक्ष डॉ॰ ईश्वर भारद्वाज की अध्यक्षता में विभाग में अनेक कार्यक्रमों का आयोजन किया गया। डॉ॰ भारद्वाज ने शिमला, योग अनुसंधान नई दिल्ली गढ़वाल वि.वि., लखनऊ वि.वि. में व्याख्यान प्रदान किये। डॉ॰ सुरेन्द्र कुमार रिफ्रेसर पाठ्यक्रम में प्रशिक्षण के लिए गये।

हिन्दी विभाग में 97-98 के सत्र में डॉ॰ भवानीलाल भारतीय, डॉ॰ ओमप्रकाश सिंघल, डॉ॰ सर्वजीत राय काशी, डॉ॰ नरेश मिश्र रोहतक आदि विद्वानों के व्याख्यान हुए। हिन्दी विभाग में कबीर के छः सौवें जन्म वर्ष के अवसर पर एक त्रिदिवसीय संगोष्ठी मई 98 में आयोजित की गयी। इसमें अनेक विद्वानों ने कबीर साहित्य पर एवं सन्त साहित्य पर व्याख्यान प्रस्तुत किए। विभाग के प्रो॰ डॉ विष्णुदत्त, राकेश, डॉ॰ सन्तराम वैश्य रीडर डॉ॰ ज्ञानचन्द रावल रीडर, डॉ॰ कमलकान्त बुधकर वरिष्ठ प्रवक्ता ने विभाग में सक्रिय शैक्षणिक योगदान प्रदान किया।

आंग्ल भाषा विभाग में प्रो॰ बी.जी. टंडन उज्जैन, प्रो॰ एन.एन. द्विवेदी इलाहाबाद आये और अपने व्याख्यान प्रदान किये। श्री सदाशिव भगत रीडर एवं अध्यक्ष के निर्देशन में 3 शोध छात्रों ने अनुसंधान कार्य किया। डॉ॰ श्रवण कुमार शर्मा रीडर विभाग ने डी.लिट् उपाधि के लिए मेरठ वि.वि. में शोध प्रबन्ध प्रस्तुत किया। डॉ॰ शर्मा ने कुरूक्षेत्र वि.वि. पाण्डिचेरी वि.वि. में अपने शोध-पत्र प्रस्तुत किये। डॉ॰ अम्बुज कुमार शर्मा रीडर ने वि.वि. में सांस्कृतिक कार्यक्रम आयोजित किए। डॉ॰ के.ए. अग्रवाल ने इलाहाबाद वि.वि., हैदराबाद में अपने शोध-पत्र प्रस्तुत किये तथा "वैदिक पथ" इंग्लिश पत्रिका का सम्पादन किया।

मनोविज्ञान विज्ञाग में प्रो॰ सागर शर्मा, हिमाचल वि.वि. शिमला ने मनोविज्ञान विषय पर व्याख्यान प्रदान किया। डॉ॰ एस.के. श्रीवास्तव ने विभागाध्यक्ष के रूप में विभाग की उन्नति के लिए अनेक कार्यक्रम आयोजित किये। आपके निर्देशन में चार शोध छात्रों ने शोध कार्य किया। डॉ॰ श्रीवास्तव वि.वि. के छात्रावास का कार्य भी संचालन कर रहे है। डॉ॰ सी.पी., खोखर के निर्देशन में चार शोध छात्रों ने अनुसंधान का कार्य किया। श्री लाल नरसिंह नारायण ने अस्थायी रूप में विभाग में प्रवक्ता पद पर कार्य किया।

प्रोढ़ सतत् शिक्षा एवं प्रसार विभाग द्वारा चयनित क्षेत्र में सतत् शिक्षा के अन्तर्गत ग्रामीण आंचल में प्रशिक्षण कार्य का आयोजन किया। 27 से 30 नवम्बर 1997 को भारतीय प्रौढ़ शिक्षा संघ नई दिल्ली के सहयोग से यह आयोजन किया गया। इस सम्मेलन में 225 प्रतिभागियों ने भाग लिया। डॉ॰ आर.डी. शर्मा निर्देशक विभाग तथा डॉ॰ जसवीर मलिक कार्यक्रम अधिकारी ने उक्त सम्मेलन का संयोजन किया। विभाग द्वारा जनसंख्या शिक्षा के अन्तर्गत जनसंख्या एवं साक्षरता विषय पर एक ग्रन्थ भी प्रकाशित किया।

प्रबन्धन संकाय की स्थापना 1996 में की गई थी। प्रो॰ सतीशचन्द्र धमीजा संकायाध्यक्ष के रूप में नियुक्त किये गये। इस संकाय में 4 प्राध्यापकों की नियुक्ति भी की गयी। 13 दिसम्बर 1997 को इन्डस्ट्री फैकल्टी मीट का आयोजन किया गया। जिसमें ओ.एन.जी.सी. के कार्मिक महाप्रबन्धक श्री जोहरीलाल एवं अन्य औद्योगिक इकाइयों के गणमान्य प्रबन्धकों ने अपने अपने शोध-पत्र प्रस्तुत किये। एम.बी.ए. प्रथम सेमेस्टर कार्मिक प्रबन्ध के छात्रों के व्यावहारिक एवं क्रियात्मक ज्ञानवर्धन के लिए औद्योगिक सरस्वती यात्रा बंगलौर, गोवा; बम्बई, मैसूर दिल्ली आदि स्थानों में की गयी। इन उपर्युक्त स्थानों में स्थित प्रबन्ध संस्थानों का छात्रों ने अवलोकन किया। श्री एस.पी. सिंह प्रवक्ता ने एम.एल. सुखाडिया वि.वि. उदयपुर के प्रबन्धक संकाय द्वारा आयोजित राष्ट्रीय संगोष्ठी में शोध-पत्र प्रस्तुत किया। डॉ॰ विवेक साहनी ने, एल.बी.एड. एकेदमी प्रशासन मंसूरी में तीन दिन के प्रशिक्षण शिविर में व्याख्यान प्रस्तुत किये। प्रबन्ध संकाय के अन्तर्गत दो कक्ष, एक संगोष्ठी भवन तथा अन्य चार कक्षों का निर्माण किया गया।

गणित एवं सांख्यिकी विभाग में बी.एस.सी. स्तर पर सांख्यिकी विषय प्रारम्भ किया गया। इस सत्र में डॉ॰ प्रभाकर प्रधान की प्रवक्ता पद पर नियुक्ति की गई। प्रो॰ श्यामलाल सिंह ने अनेक वि.वि. में आयोजित संगोष्ठियों में अपने शोध-पत्र प्रस्तुत किये। डॉ॰ वीरेन्द्र अरोडा रीडर विभाग के निर्देशन में पी-एच.डी. हेतु छात्रों ने अनुसंधान कार्य किया। डॉ॰ विजयेन्द्र कुमार शर्मा विभागाध्यक्ष ने अपने सभी सहयोगियों के सहयोग से विभाग में शैक्षणिक गतिविधियों का विकास किया। डॉ॰ महीपाल सिंह ने राष्ट्रीय संगोष्ठी में शोध-पत्र प्रस्तुत किया।

भौतिकी विभाग में स्नातकोत्तर स्तर पर रोजगारोन्मुखी पाठ्यक्रम प्रारम्भ किया गया। डॉ॰ राजेन्द्र कुमार अग्रवाल विभागाध्यक्ष ने पाठ्यक्रम समिति की बैठक का 8 अगस्त 1997 को आयोजन किया। डॉ॰ पी. पी. पाठक के निर्देशन में तीन शोध छात्रों के विषय स्वीकृत हुए।

रसायन विज्ञान विभाग 97-98 के सत्र में छात्रों की संख्या 477 थी। विभागीय शोध समिति की दो बैठके की गई। इसमें एम.एस.सी. स्तर पर प्रवेश परीक्षा पाठ्यक्रम तथा सेमेस्टर परीक्षा प्रणाली प्रारम्भ किये जाने हेतु पाठ्यक्रम बनाये गये। समस्त प्रयोगशालाओं में एल.पी.जी. गैस की व्यवस्था की गई। विभाग में कम्प्यूटर हेतु एक लेजर प्रिन्टर क्रय किया गया। 20 सितम्बर 1997 को स्व॰ प्रो॰ ओमप्रकाश सिन्हा का बलिदान दिवस मनाया गया। विभाग ने प्रथम बार श्री ओमप्रकाश सिन्हा स्मृति व्याख्यान माला का आयोजन किया गया। जिसके अन्तर्गत रसायन विभाग में प्रो॰ डब्ल्यू.यू. मलिक द्वारा इलैक्ट्रो एनालिटिकल टैक्निकल्स पर 6 व्याख्यान प्रदान किये गये। विभाग में एम.एस.सी. छात्रों के लिए केमिकल कोलोकुअम प्रारम्भ किया गया। जिसके अन्तर्गत छात्रों ने अपने व्याख्यान विभिन्न विषयों पर प्रस्तुत किये।

प्रौद्योगिकी संकाय की स्थापना 24 अप्रैल सन् 1997 को हुई। जिसमें डॉ विनोद कुमार ने अहमदाबाद, इन्दिरा गाँधी ओपन वि.वि. में शोध-पत्र प्रस्तुत किये। डॉ॰ कर्मजीत भाटिया एवं श्री महेन्द्र असवाल के निर्देशन में एम.सी.ए. के छात्रों ने बैगलौंर मैसूर एवं गोवा के विभिन्न कम्प्यूटर संस्थानों में भ्रमण किया तथा तकनीक के विषय में व्यावसायिक जानकारी प्राप्त की। कम्प्यूटर केन्द्र में तीन अत्याधुनिक कम्प्यूटर क्रय किये गये जो मल्टी मीडिया तकनीक से युक्त थे।

जन्तु एवं पर्यावरण विज्ञान विभाग में 6 से 9 फरवरी 1998 को भारतीय पर्यावरण आकलन एवं जैव तकनीक विषय पर एक राष्ट्रीय गोष्ठी का आयोजन किया गया। इस संगोष्ठी के उद्घाटन के अवसर पर जिवा जी वि.वि. ग्वालियर के कुलपति प्रो॰ आर. दास उपस्थित थे। इस संगोष्ठी में लगभग 25 विश्वविद्यालयों के विद्वानों प्रतिनिधि गणों ने भाग लिया और अपने शोध-पत्र प्रस्तुत किये। विभाग में प्रो॰ बी.डी.जोशी, प्रो॰ टी.आर.सेठ, डॉ॰ ए.के. चोपड़ा, डॉ॰ दिनेश भट्ट, डॉ॰ देवेन्द्र सिंह मलिक डॉ॰ प्रकाशचन्द्र जोशी ने अनेकों संगोष्ठियों में शोध पत्र प्रस्तुत किये एवं शोध-पत्र प्रकाशित भी किए।

वनस्पति विज्ञान विभाग में डॉ॰ डी.के माहेश्वरी विषय विशेषज्ञ के रूप में यू.जी.सी. की समिति में नियुक्त किये गये। इसी प्रकार अन्य वि.वि. की शोध समितियों में विषय विशेषज्ञ के रूप में नियुक्त हुए। डॉ॰ पुरुषोत्तम कौशिक के निर्देशन में शोध छात्रों ने अनुसंधान कार्य किया एवं विभिन्न सेमीनारों में डॉ॰ कौशिक ने अपने शोध पत्र प्रस्तुत किए। इन्होंने अपने सात शोध-पत्र भी प्रकाशित किए। डॉ॰ आर.सी. दूबे का एक ग्रन्थ प्रकाशित हुआ। डॉ॰ दूबे ने दो शोध-पत्र प्रकाशित किए। डॉ॰ जी.पी. गुप्ता ने संगोष्ठी में शोध-पत्र प्रस्तुत किये।

श्रद्धानन्द वैदिक शोध संस्थान के निर्देशक प्रो॰ भारत भूषण विद्यालंकार ने इस सत्र में पं॰ इन्द्र विद्यावाचस्पति कृतित्व के आयाम नामक ग्रन्थ का प्रकाशन संस्थान से कराया।

पुस्तकालय विभाग में एक लाख अठावन हजार इक्यानवे रुपये की 1348 पुस्तकें क्रय की गयी। भारत सरकार तथा उत्तर प्रदेश सरकार द्वारा 80083 रुपये मूल्य की 756 पुस्तकें भेंट स्वरूप प्राप्त हुई। पुस्तकालय की ओर से क्लासिकल राइटिंग आन वैदिक एण्ड संस्कृत लिटरेचर, शोध एवं प्रकाशन सन्दर्भ, शोध सारावली, आदि ग्रन्थ प्रकाशित किये गये। 97-98 के सत्र में 30700 पाठकों ने पुस्तकालय का उपयोग किया। इस सत्र में पुस्तकालय ने 230 पत्रिकाएं एवं शोध पत्रिकाएं मंगाई गयी। 97-98 के सत्र में तक पुस्तकालय में 1 लाख 27 हजार 440 पुस्तकें उपस्थित थी।

राष्ट्रीय छात्र सेना विभाग में इस वर्ष 30 छात्र केडिट्स ने एन.सी.सी. के कैप्टेन डॉ॰ राकेश शर्मा के नेतृत्व में गहन प्रशिक्षण प्राप्त किया। स्वामी श्रद्धानन्द बलिदान दिवस पर सभी कैडिट्स ने उत्साहपूर्वक भाग लिया। इस सत्र वि.वि. के सीनियर अन्डर ऑफिसर शुभम् अग्रवाल को लार्ड एडिन ब्रा एवार्ड के लिए बटालियन स्तर पर चुना गया।

शारीरिक शिक्षा विभाग ने इस सत्र में नौ टीमों को अखिल भारतीय एवं उत्तर क्षेत्र के अन्तर्विश्वविद्यालय के प्रतियोगिताओं में भाग लेने के लिए भेजा गया। विभाग द्वारा हॉकी, कबड्डी, एवं क्रिकेट की टीम के लिए कोचिंग कैम्प का आयोजन किया गया। इसके परिणाम स्वरूप योग (एम.ए. द्वितीय वर्ष) के छात्र श्री जितेन्द्र कुमार ने सम्पूर्णानन्द संस्कृत वि.वि. द्वारा आयोजित अखिल भारतीय अन्तर्विश्वविद्यालय योग प्रतियोगिता में व्यक्तिगत चैम्पियन शिप में उत्तम प्रदर्शन करते हुए विश्वविद्यालय के लिए स्वर्णपदक प्राप्त किया। इस सत्र में अखिल भारत वि.वि. संघ द्वारा अखिल भारतीय वि.वि. तैराकी, वाटर पोलों तथा ड्राइविंग प्रतियोगिता का डॉ॰ आर.के. एस.डागर निदेशक क्रीड़ा विभाग को पर्यवेक्षक नियुक्त किया गया।

राष्ट्रीय सेवा योजना विभाग ने 27 जुलाई 97 से 31 जुलाई 97 तक पुल जटवाडा पर राष्ट्रीय सेवा योजना के दस दिवसीय शिविर कांवडियों के सेवार्थ लगाया गया। जिसमें छात्रों ने स्वच्छता, मुफ्त चिकित्सा एवं शहर के सफाई कार्यों में उत्साहपूर्वक भाग लिया। इस शिविर की विश्वविद्यालय के कुलपति डॉ॰ धर्मपाल, और डॉ॰ रणजीत सिंह विजिटर प्रतिनिधि ने अत्यधिक प्रशंसा की। नियमित शिविर 11 जनवरी 98 से 20 जनवरी 98 तक दस दिवसीय शिविर आयोजित किया गया। जिसमें राष्ट्रीय योजना के 110 छात्रों ने उत्साहपूर्वक भाग लिया। पल्सपोलियों के अन्तर्गत डॉ॰ पी.सी. जोशी और डॉ॰ देवन्द्र गुप्त के नेतृत्व में राष्ट्रीय सेवा योजना के छात्रों ने 12 स्वास्थ्य केन्द्रों पर पल्स पोलियों कार्यक्रमों स्वास्थ्य विभाग एवं चिकित्साकेन्द्रों के अधिकारियों की सहायता एवं सेवा प्रदान की।

कन्या गुरुकुल महाविद्यालय हरिद्वार के नये भवनों का लोकार्पण कुलाधिपति सूर्यदेव की अध्यक्षता तथा मुख्य अतिथि श्री केदारनाथ साहनी के सानिध्य में अक्टूबर 97 में किया गया। इस सत्र में संस्कृत, प्राचीन भारतीय इतिहास, हिन्दी विभाग, अंग्रेजी विभाग, मनोविज्ञान, पर्यावरण विज्ञान, सूक्ष्मजीव विज्ञान,

गणित और भौतिकी विज्ञान की समस्त प्राध्यापिकाओं ने अपने-अपने विभाग की प्रगति के लिए पर्याप्त परिश्रम किया और महाविद्यालय के सांस्कृतिक कार्यक्रमों में छात्राओं को प्रशिक्षित किया।

कन्या गुरुकुल स्नातकोत्तर महाविद्यालय देहरादून में इस 97-98 के सत्र में एम.बी.ए. एवं पी.एम. आई.आर. की जो कक्षाएं प्रारम्भ हुई थी उनके लिए छात्रावास का निर्माण किया गया। सम्प्रति महाविद्यालय में वेद, संस्कृत, हिन्दी, अंग्रेजी, मनोविज्ञान प्राचीन भारतीय इतिहास, संगीत चित्रकला, अर्थशास्त्र (जो इसी सत्र से प्रारम्भ किया गया) कम्प्यूटर और एम.बी.ए. विभागों में सुचारु रूप से पठन-पाठन के साथ-साथ अनेक सांस्कृतिक कार्यक्रमों को आयोजित किया। इस सत्र में कम्प्यूटर विभाग में इन्टरनेट की सुविधा प्रारम्भ हुई थी। क्रीड़ा विभाग की ओर से श्रीमती बलवीर कौर पी.टी.आई. द्वारा बैडमिन्टन, टैबिलटेनिस, कैरम आदि का अभ्यास कराया गया। इस सत्र में विद्यालंकार की छात्राएं वैष्णों देवी सरस्वती यात्रा पर गयी। छात्रावास में एम.सी.ए. एम.बी.ए. और पी.एम.आई.आर की छात्राएं अनुशासित रूप में रहीं तथा छात्रावास की अध्यक्षा श्रीमती आभा विद्यालंकार के नेतृत्व में छात्राओं ने नियमित रूप से सन्ध्या हवन किया। इसी सत्र में महाविद्यालय के परिसर में तीन मंजिली वृहद् कम्प्यूटर प्रयोगशाला का निर्माण हुआ।

राष्ट्र की स्वतन्त्रता स्वर्णजयन्ती कार्यक्रम के अन्तर्गत वि.वि. में कई कार्यक्रम आयोजित किये गये। वि.वि. अनुदान आयोग तथा मानव संसाधन मंत्रालय ने भी वि.वि. को यह निर्देश जारी किया था कि समस्त वि.वि. स्वतन्त्रता की पचासवीं वर्षगांठ पर विभिन्न प्रकार के कार्यक्रमों का आयोजन करें। 10 अगस्त को राष्ट्र की स्वतन्त्रता के उपलक्ष्य में विभिन्न क्षेत्रों में राष्ट्र की उपलब्धियों पर एक सामान्य ज्ञान प्रतियोगिता का आयोजन किया गया। इसमें हरिद्वार के विभिन्न विद्यालयों एवं महाविद्यालयों के छात्र छात्राओं को भाग लेने के लिए आमन्त्रित किया गया। इसमें जूनियर और सीनियर ग्रुप बनाये गये। इस प्रतियोगिता में लगभग 300 छात्र छात्राओं ने भाग लिया। छात्रों की प्रतियोगिताएं वि.वि. परिसर में और छात्राओं की प्रतियोगिता कन्या गुरुकुल महाविद्यालय हरिद्वार में आयोजित की गई। छात्रों में गुरुकुल कांगड़ी के बी.एस.सी. द्वितीय वर्ष के छात्र अंकुर रेजा प्रथम, एम.सी.ए. तृतीय वर्ष के छात्र जितेन्द्र सिंह गोसाई तथा एम.एस.सी. माइक्रोबायोलाजी प्रथम वर्ष के छात्र मनीष श्रीवास्तव तृतीय रहे। जूनियर ग्रुप में दिल्ली पब्लिक स्कूल के कक्षा बारह के छात्र प्रतीक मिश्र प्रथम रहे। इसी विद्यालय के कक्षा बारह के वरुण माटा कक्षा ग्यारह जतिन मल्होत्रा संयुक्त रूप से द्वितीय, कक्षा ग्यारह के अनूप जैन तृतीय स्थान पर रहे। स्वतन्त्रता के पचास वर्ष के उपलक्ष्य में विश्वविद्यालय के अध्यापकों के मध्य एक क्रिकेट मैच का आयोजन किया गया। जिसका उद्घाटन वि.वि. के कुलपति डॉ॰ धर्मपाल एवं कुलसचिव डॉ॰ एस.एन. सिंह ने क्रिकेट की बॉल को खेलकर किया। यह खेल बहुत ही रोमांचकारी रहा।

गुरुकुल कांगड़ी वि.वि. के 98 वे वार्षिकोत्सव एवं दीक्षान्त समारोह के अवसर पर दीक्षान्त अभिभाषण एवं नव स्नातकों को आशीर्वाद राष्ट्रीय पुस्तक न्यास के अध्यक्ष डॉ॰ सुमतीन्द्र राघवेन्द्र नाडिग ने प्रदान किया।

विश्वविद्यालय की इन गतिविधियों से तनिक हटकर 97-98 के वर्ष में हम गुरुकुल कांगड़ी विद्यालय विभाग के क्रिया कलापों पर भी दृष्टिपात कर लें तो समीचीन रहेगा। विद्यालय में इस वर्ष छात्रों की संख्या 260 रही। पूर्व की भांति सभी पर्वों व उत्सवों को मनाया गया। शैक्षिक व क्रीडा प्रतियोगिताओं में छात्रों ने भाग लेकर विद्यालय का नाम उज्ज्वल किया। सभी प्रकार की हिन्दी लेखन प्रतियोगिता, अंग्रेजी लेखन प्रतियोगिता, कला प्रतियोगिताओं का समायोजन किया गया। पंचपुरी (हरिद्वार) में "भारत विकास परिषद् की ओर से मंत्र एवं श्लोक पाठ प्रतियोगिता में वरिष्ठ वर्ग में ब्रह्मचारी मनीष 9 म ने द्वितीय तथा ब्र. मयंक 8म ने कनिष्ठ वर्ग में 3य स्थान प्राप्त किया। मण्डलीय सबजूनियर फुटबाल प्रतियोगिता गाजियाबाद में ब्रह्मचारी बीरबल 9म का चयन स्टेट (प्रान्त) के लिए हुआ। ध्यानचन्द्र हॉकी दिवस पर

विद्यालय की ए व बी टीमों ने प्रथम, द्वितीय स्थान प्राप्त किया। 97-98-99 के सत्र में विद्यालय में अनेक वस्तुएं पंखें, स्टील अलमारी, मेजे, स्टील टंकी दान में प्राप्त हुई। ये सब उपलब्धि कार्यवाहक मुख्याध्यापक महावीर 'नीर' के कार्यत्व में प्राप्त हुई।

1998-99 के सत्र में श्री सूर्यदेव कुलाधिपति को पुनः तीन वर्ष के लिए वि.वि. का कुलाधिपति निर्वाचित किया गया। वि.वि. के परिद्रष्टा जस्टिस श्री महावीर सिंह का स्वर्गवास हो जाने के पश्चात् परिद्रष्टा पद पर तीन वर्ष के लिए प्रो॰ शेर सिंह पूर्व राज्य मंत्री भारत सरकार एवं पूर्व कुलाधिपति को प्रतिष्ठित किया गया।

प्राच्य विद्या संकाय के अन्तर्गत वेद, दर्शन, संस्कृत, प्राचीन भारतीय इतिहास, संस्कृति एवं पुरातत्व, योग और शारीरिक शिक्षा विभाग आते है। जुलाई 98 को डॉ॰ जयदेव वेदालंकार को प्राच्य विद्या संकाय का संकायाध्यक्ष नियुक्त किया गया। इस सत्र में विभिन्न राष्ट्रीय संगोष्ठियों में एवं विभागों में प्रतिष्ठित विद्वानों का वि.वि. परिसर में आगमन हुआ। उनमें डॉ॰ अमरनाथ पाण्डेय, काशी विद्यापीठ वाराणसी (विजिटंग प्रोफेसर), प्रो॰ एस.आर.भट्ट दर्शन विभाग दिल्ली वि.वि., प्रो.डी. प्रह्लादाचार्य न्याय विभाग बेंगलौर वि.वि. कर्नाटक, प्रो॰ वेदप्रकाश उपाध्याय, संस्कृत विभाग पंजाब वि.वि. चण्डीगढ़, प्रो॰ बी.बी. चौबे विश्वेश्वरानन्द वैदिक शोध संस्थान, होशियारपुर, प्रो॰ आर.के. द्विवेदी इतिहास विभाग इलाहाबाद वि. वि., प्रो॰ एस.एन. मिश्र इतिहास विभाग लखनऊ वि.वि., डॉ॰ पीताम्बर झा कैवल्यधाम लोगोंवाला पूना (महाराष्ट्र), डॉ॰ नरेश कुमार निदेशक केन्द्रीय योग एवं प्राकृतिक चिकित्सा अनुसंधान परिषद् दिल्ली आदि थे।

श्रद्धानन्द वैदिक शोध संस्थान के निदेशक पद पर डॉ॰ महावीर की जनवरी 1999 में नियुक्ति की गयी।

प्राच्य विद्या संकाय के अध्यक्ष डॉ॰ जयदेव वेदालंकार को 5 जुलाई 98 को श्री मेघजी आर्य साहित्य पुरस्कार आर्य समाज शान्ताक्रुज मुम्बई के तत्वावधान में मारिशस के पूर्व राष्ट्रपति द्वारा 15 हजार रुपये की नकद राशि एवं रजत ट्राफी प्रदान की गयी। आई.सी.पी.आर. नई दिल्ली के सौजन्य से प्राप्त एक लाख रुपये की राशि से 28 मार्च से 30 मार्च 99 तक डॉ॰ वेदालंकार के निर्देशन में राष्ट्रीय सेमीनार "छल, जाति और निग्रह स्थान" विषय पर आयोजित किया गया। जिसमें लगभग 25 वि.वि. के विद्वानों ने अपने शोध-पत्र प्रस्तुत किये। सितम्बर 1998 में अखिल भारतीय दर्शन परिषद् का अधिवेशन दर्शन विभाग के तत्वावधान में सम्पन्न हुआ। इस अधिवेशन में लगभग 100 विश्वविद्यालयों के 150 विद्वान् प्रतिनिधिगण ने भाग लिया। इस अवसर पर ज्ञान मीमांसा तत्व मीमांसा धर्मदर्शन और नीतिशास्त्र आदि विषयों पर संगोष्ठियाँ सम्पन्न हुई। दर्शन विभाग के रीडर डॉ॰ यू.एस.बिष्ट इस वार्षिक अधिवेशन के स्थानीय सचिव थे।

वि.वि. के पुरातत्व संग्रहालय में श्री विद्यासागर पोर्ट मोरेसबी में भारतीय उच्चायुक्त, लेफ्टिनेंट जनरल ओ.पी. कौशिक, कुलपति महर्षि दयानन्द वि.वि. रोहतक डॉ॰ इन्द्रप्रकाश पाण्डेय, निदेशक भारतीय संस्कृति संस्थान फ्रैंक फर्ट जर्मन एवं श्री करतार सिंह सहायक आयुक्त केन्द्रीय विद्यालय संगठन देहरादून पधारे।

मानविकी संकाय में हिन्दी, अंग्रेजी, मनोविज्ञान विभाग आते है। प्रो॰ डॉ॰ विष्णुदत्त राकेश को उनकी साहित्यिक सेवाओं के लिए भारत माता मन्दिर समन्वय सेवा न्यास हरिद्वार का राष्ट्रीय समन्वय पुरस्कार, संघड़ सभा जयपुर का आचार्य गोवर्धन शास्त्री पुरस्कार तथा उ.प्र. श्रमजीवन पत्रकार संघ बिजनौर अधिवेशन का प्रथम सम्पादकाचार्य रुद्रदेव शर्मा अवार्ड प्राप्त हुआ। इस संकाय के अध्यक्ष प्रो॰ वेदप्रकाश शास्त्री नियुक्त हुए।

अंग्रेजी के समकालीन साहित्य के राष्ट्रीय सम्मेलन का आयोजन हुआ। डॉ॰ कृष्ण अवतार अग्रवाल इस सम्मेलन के संयोजक थे। 98-99 के सत्र में अंग्रेजी विभाग में डॉ॰ मुकेश रंजन वर्मा की प्रोफेसर पद पर नियुक्ति हुई।

वि.वि. के प्रौढ़ सतत् शिक्षा एवं प्रसार विभाग में ओरिएन्टेशन कार्यशाला नवम्बर 3 से 7 ता. तक आयोजित की गई।

पुस्तकालय विभाग विश्वविद्यालय की स्थापना से अब तक लगभग 100 वर्ष के इतिहास में सन्दर्भ संग्रह, पत्रिका संग्रह, आर्य साहित्य संग्रह, आयुर्वेद संग्रह, विभिन्न विषयों का हिन्दी संग्रह, पाण्डुलिपि संग्रह, गुरुकुल प्रकाशन संग्रह, प्रतियोगात्मक संग्रह, शोध प्रबन्ध संग्रह, रूसी साहित्य संग्रह, आरक्षित पाठ्य पुस्तक संग्रह, ऊर्दू संग्रह, मराठी संग्रह, गुजराती संग्रह, गुरुकुल प्राध्यापक एवं स्नातक संग्रह, मानचित्र संग्रह, वेद मंत्र कैसेट संग्रह आदि 21 संग्रह वि.वि. के पुस्तकालय का यह विकसित रूप था।

प्रबन्धन संकाय में नई सहस्त्राब्दि में प्रबन्ध भारतीय सम्बन्ध विषय पर त्रिदिवसीय संगोष्ठी का आयोजन किया गया। इसके अतिरक्ति संकाय में 11 अप्रैल 1999 को वैदिक प्रबन्ध व्यवस्था विषय पर एक दिवसीय सम्मेलन का आयोजन किया गया। इस सत्र में प्रबन्धन संकाय के अन्तर्गत 150 व्यक्तियों के बैठने की क्षमता का आधुनिक सुविधाओं से सुसज्जित कान्फ्रैन्स हाल निर्मित हुआ। संकाय के अध्यक्ष प्रो॰ सतीश धमीजा नियुक्त हुए।

विज्ञान संकाय में 19 दिसम्बर से 22 दिसम्बर 98 तक इण्डियन मैथेमेटिकल सोसायटी की कान्फ्रैन्स आयोजित की गयी। संकाय के अध्यक्ष प्रो॰ श्यामलाल सिंह विजिटिंग प्रोफेसर के रूप में विदेश गये। 1 जुलाई 1999 को प्रो॰ ऐ.के. इन्द्रायण को विज्ञान संकाय का अध्यक्ष नियुक्त किया गया।

जीव विज्ञान सँकाय के अध्यक्ष डॉ॰ डी.के. माहेश्वरी को कोरिया से शैक्षिक यात्रा हेतु मनोनीत किया गया। उन्होंने 2 माह की विजिटिंग प्रोफेसर के रूप में जापान की यात्रा की। इस संकाय में डॉ॰ अनिल पूनिया कुरूक्षेत्र वि.वि0, डॉ॰ भरतराय काशी हिन्दू वि.वि. बनारस, डॉ॰ आई.के.शर्मा वरिष्ठ वैज्ञानिक केन्द्रीय भूमि जब बोर्ड, जल संसाधन मंत्रालय के अपने-अपने विषय पर विद्वतापूर्ण व्याख्यान हुए। इस संकाय में इस सत्र में नव निर्मित पर्यावरण विज्ञान भवन का लोकार्पण किया गया। डॉ॰ देवेन्द्र सिंह मलिक को सन् 1998 का युवा वैज्ञानिक पुरस्कार प्राप्त हुआ।

प्रोद्योगिकी संकाय (कम्प्यूटर) के अध्यक्ष डॉ॰ विनोद शर्मा के निर्देशन कें कम्प्यूटर विभाग में नये कम्प्यूटरों को क्रय किया गया। इसी संकाय के श्री कर्मजीत भाटिया को वृहद् शोध परियोजना के अन्तर्गत द्वितीय परियोजना हेतु ए.आई.सी.टी.ई. द्वारा साढ़े 12 लाख रुपये का अनुदान स्वीकार किया गया। संकाय में डॉ॰ वानी सिंह प्रो॰ रुड़की वि.वि., डॉ॰ सुधीर कैकर प्रो॰ जवाहरलाल नेहरू वि.वि. नई दिल्ली, डॉ॰ आर.सी. मित्तल प्रो॰ रुड़की वि.वि. आदि विद्वानों के व्याख्यान हुए।

कन्या गुरुकुल महाविद्यालय हरिद्वार में संस्कृत, हिन्दी, अंग्रेजी, मनोविज्ञान, गणित, पर्यावरण विज्ञान, रसायन, सूक्ष्म जीव विज्ञान, दर्शन और प्राचीन इतिहास में स्नातकोत्तर कक्षाओं में अध्ययन-अध्यापन सुचारु रूप से सफलता पूर्वक हुआ। इस सत्र में यहाँ डॉ॰ श्यामसुन्दर शुक्ल मनोविज्ञान में, डॉ॰ वी.के. झा रसायन विज्ञान में प्रो॰ विजय कुमार सूक्ष्म जीव विज्ञान में, डॉ॰ आई.के. शर्मा भारत सरकार दिल्ली, डॉ॰ डी.रैमिक, जर्मनी के विशिष्ट व्याख्यान हुए। 20 अक्टूबर 1999 को कन्या महाविद्यालय का प्रथम दीक्षान्त समारोह सम्पन्न हुआ। इसकी मुख्य अतिथि आचार्या दमयन्ती क़पूर देहरादून थी उन्होंने छात्राओं को दीक्षान्त भाषण एवं आशीर्वाद प्रदान किया।

कन्या गुरुकुल महाविद्यालय देहरादून में नये भवनों का निर्माण किया गया। नवम्बर 1998 में कन्या गुरुकुल देहरादून की स्थापना के अवसर पर लम्बे अन्तराल के पश्चात् दीक्षान्त समारोह आयोजित किया गया। इस समारोह में विद्यालंकार, एम.सी.ए. की छात्राओं को उपाधिपत्र प्रदान किए गये। इस दीक्षान्त समारोह के मुख्य अतिथि आचार्य रामनाथ वेदालंकार थे परन्तु उनके रुग्ण होने के कारण उनकी अनुपस्थिति में दीक्षान्त अभिभाषण पढ़ा गया। नवम्बर 1998 में भी द्वितीय दीक्षान्त भाषण कन्या गुरुकुल महाविद्यालय देहरादून में सम्पन्न हुआ। इस दीक्षान्त समारोह के मुख्य अतिथि वि.वि. के परिद्रष्टा प्रो॰ शेर सिंह थे। उन्होंने नव स्नातिकाओं को आशीर्वाद प्रदान किया। इस समारोह में डॉ॰ धर्मपाल कुलपति महोदय ने नव स्नातिकाओं को उपाधि प्रदान की। तथा वि.वि. के कुलाधिपति श्री सूर्यदेव ने नव स्नातिकाओं को आशीर्वाद दिया। इसी अवसर पर 26 अक्टूबर 1999 को कन्या गुरुकुल महाविद्यालय हरिद्वार के प्रथम दीक्षान्त के अवसर पर मुख्य अतिथि के रूप में आचार्या दमयन्ती कपूर ने दीक्षान्त अभिभाषण दिया। श्रीमती दमयन्ती कपूर को वि.वि. की ओर से मानद उपाधि विद्यामार्तण्ड से विभूषित किया गया। कन्या गुरुकुल महाविद्यालय देहरादून की प्राध्यापिकाओं एवं शिक्षकेतर कर्मचारियों ने श्रीमती दमयन्ती कपूर को उनका विद्यामार्तण्ड की उपाधि मिलने पर देहरादून परिसर में भव्य स्वागत किया।

इस वर्ष का दीक्षान्त समारोह 31 मार्च को होना निश्चित हुआ था। मुख्य अतिथि के रूप में श्री सोमपाल शास्त्री राज्य कृषिमंत्री को आना था, परन्तु गढ़वाल में भूकम्प आ जाने के कारण श्री सोमपाल शास्त्री नहीं आ पाये। उनके दीक्षान्त अभिभाषण को उनकी अनुपस्थिति में मान्य कुलपति डॉ॰ धर्मपाल ने ही वाचन किया। 30 जून 99 को मान्य कुलपति का कार्यकाल समाप्त हो गया था। निर्धारित प्रक्रिया के बाद डॉ॰ धर्मपाल को ही तीसरी बार विश्वविद्यालय के परिद्रष्टा प्रो॰ शेर सिंह ने कुलपति पद पर प्रतिष्ठित किया। तद्नुसार डॉ॰ धर्मपाल ने 1 जुलाई 1999 को कुलपति पद का कार्यभार पुनः सम्भाल लिया।

डॉ॰ धर्मपाल जी विश्वविद्यालय के कुलपति पद पर प्रतिष्ठित रहकर भी गुरुकुल कांगड़ी के विद्यालय विभाग को कभी भूले नहीं है। श्री वेदव्रत जी के मुख्याधिष्ठाता पद पर स्थापित रहते हुए भी डॉ॰ धर्मपाल जी गुरुकुल के अध्यापन कार्यों एवं गुरुकुल आश्रम, कृषि, गौशाला कार्यालय आदि विभागों का समय-समय पर निरीक्षण कर कार्यकर्त्ताओं को प्रोत्साहित करते रहते है। इसी सन्दर्भ में विद्यालय विभाग के चारों ओर ईंटों की दीवार का परकोटा बनाकर विद्यालय को सुरक्षा प्रदान की गयी। 1998-99 में विद्यालय में अनेक मुख्य कार्यक्रमों का निर्धारण हुआ। इस वर्ष छात्रों की संख्या में भी वृद्धि हुई। लगभग 348 छात्र अध्ययनरत रहे। आश्रम एवं विद्यालय-भण्डार की स्वच्छता व रखरखाव पर पूर्ण ध्यान दिया गया। छात्रों ने मण्डल एवं जिलास्तरीय खेलों में भाग लिया। अनेक पर्वों पर विभिन्न कार्यक्रम भी हुए।

गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्याल की वर्तमान स्थिति एवं उसका मूल्यांकन

गुरुकुल कांगड़ी को विश्वविद्यालय की स्थिति प्राप्त किये हुए सम्प्रति 38 वर्ष हो चुके है। इस समय गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय का चतुर्मुखी विकास भी हो रहा है। इस समय वेद, संस्कृत, दर्शन, प्राचीन भारतीय इतिहास, योग, हिन्दी साहित्य अंग्रेजी साहित्य, मनोविज्ञान की स्नातकोत्तर तथा पी-एच.डी. की उच्च उपाधि प्रदान की जाती है। विज्ञान के विषयों में गणित, रसायन-शास्त्र, भौतिकी विज्ञान, सांख्यिकीय, जन्तुविज्ञान, पर्यावरण विज्ञान, वनस्पति विज्ञान, सूक्ष्मजैविकी विज्ञान, स्नातकोत्तर एवं पी-एच.डी. की उपाधि प्रदान की जाती है। इसके साथ ही प्रबन्ध (एम.बी.ए.) और कम्प्यूटर में एम.सी.ए. में भी स्नातकोत्तर की उपाधि प्रदान की जाती है। इस समय में विश्वविद्यालय को वार्षिक बजट लगभग चार करोड़ रुपये है। गुरुकुल विश्वविद्यालय में शिक्षकेतर कर्मचारी गणों एवं प्राध्यापकगणों की संख्या कुल मिलाकर क्रमशः 250 एवं 100 है। एक समृद्ध पुस्तकालय भी विश्वविद्यालय में है। जिसमें लगभग डेढ़ लाख ग्रन्थ उपलब्ध

है। उनमें से कुछ ग्रन्थ तो अत्यधिक प्राचीन सन्दर्भ ग्रन्थ माने जाते है। छात्रों की संख्या यद्यपि प्राच्य विद्याओं के विषयों के छात्रों की संख्या बहुत अधिक नहीं बढ़ पायी है। गुरुकुल कांगड़ी को विश्वविद्यालय बने पर्याप्त समय हो गया है तो भी प्राच्य विद्या के विषयों की छात्र संख्या सन्तोषजनक नहीं कहीं जा सकती हैं। जिस समय विश्वविद्याल अनुदान आयोग नई दिल्ली ने मान्यता प्रदान की थी, उस समय उसका मुख्य उद्देश्य था कि इस संस्था में इन उक्त प्राच्य विद्या के विषयों में यह संस्था एक उच्च शिक्षा केन्द्र के रूप में विकसित हो सके। इस समय में विज्ञान विषयों के छात्रों की संख्या सन्तोषजनक है। विश्वविद्यालय में आधुनिकतम विज्ञान के विषयों के अध्ययन अध्यापन की व्यवस्था एक सुसज्जित आधुनिक विज्ञान की प्रयोगशालाएं भी उपलब्ध है। अतः कुल मिलाकर विज्ञान के विषयों में अध्ययन की विशेषता से सन्तोष अभिव्यक्त किया जा सकता है। गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय अनेक समय संक्रमण काल से गुजरता आया है। वहीं संक्रमणकाल अभी भी अर्थात् इस संस्था को स्थापित हुए 100 वर्ष बीत चुकने के बाद भी सम्मुख उपस्थित सा प्रतीत होता है।

गुरुकुल शिक्षा प्रणाली की सबसे महत्वपूर्ण विशेषता यह मानी जाती है कि छात्र छात्रावास में रहकर ब्रह्मचर्यपूर्वक तपस्यामय तथा अनुशासित जीवन व्यतीत करते हुए, उनकी दिनचर्या पर तथा उनके रहन-सहन गुरुजनों का नियन्त्रण रहे। यद्यपि मान्य पूर्व कुलपति श्री जी.वी.के. हूजा ने सन् 1980 के पश्चात् एक परिपाटी यह प्रारम्भ की थी कि प्रत्येक प्राध्यापक के नियन्त्रण में एक निश्चित छात्रों की संख्या दी जाती है, जिन्हें वे अपने अनुशासन में तथा मार्गदर्शन में रखकर उनके व्यक्तित्व का समग्र विकास करने में सहायक हो सके। यद्यपि यह परिपाटी आज भी जारी है तथापि इसे सन्तोषजनक नहीं माना जा सकता है। क्योंकि गुरुकुल कांगड़ी के सच्चे रूप में गुरुकुल के समय में शत प्रतिशत छात्र छात्रावास में ही निवास करते थे। आज लगभग 10 प्रतिशत छात्र ही छात्रावास में निवास नहीं करते है। यहाँ पर यह स्पष्ट कर देना उचित प्रतीत होता है कि गुरुकुल कांगड़ी के विद्यालय विभाग में तो आज भी शतप्रतिशत विद्यार्थी एवं ब्रह्मचारीगण गुरुकुल कांगड़ी के छात्रावास में ही निवास करते है। जिस प्रकार गुरुकुल के प्रारम्भिक समय में छात्रावास में प्रातः एवं सायंकाल सन्ध्या एवं हवन किया जाता था आज भी गुरुकुल कांगड़ी के विद्यालय विभाग में सन्ध्या एवं हवन किया जाता हैं। गुरुकुल कांगड़ी विद्यालय विभाग की स्थिति ढ़ीली होते हुए भी सन्तोषजनक कहीं जा सकती है परन्तु गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय विभाग में छात्रावास की बहुत अधिक न्यूनता है। जिस छात्रावास का अभी निर्माण हुआ है उसमें भी 200 छात्रों से अधिक छात्र छात्रावास में नहीं रह सकते है इसी प्रकार कन्या गुरुकुल महाविद्यालय में भी अभी तक छात्रावास बना ही नहीं है। जबकि महर्षि दयानन्द द्वारा प्रतिपादित शिक्षा पद्धति में यह आवश्यक था कि आचार्य ब्रह्मचारी को ऐसे अनुशासित एवं सुरक्षित रखता है जैसे कि माता अपने गर्भ के अन्दर शिशु को धारण करती है। इस अवस्था को वर्तमान समय में सन्तोषजनक नहीं कहा जा सकता है। गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय को इसके संस्थापक स्वामी श्रद्धानन्द और महर्षि दयानन्द के मन्तव्यों के अनुसार पूर्णरूपेण रखने के लिए वर्तमान प्रशासन को इस संक्रमण काल पर बहुत अधिक ध्यान देने की आवश्यकता है।

इसके लिए लेखक कुछ सुझाव प्रस्तुत करना चाहता है जो इस प्रकार है:-

1. गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय के वर्तमान प्रशासन को प्राच्य विद्या के विषयों को विकसित करने एवं जीवित रखने के लिए यह करना होगा कि प्राच्य विद्या विषयों की शिक्षा पूर्ण रूपेण निःशुल्क करनी होगी। इस सम्बन्ध में यह भी करना अपेक्षित है कि प्राच्य विद्या विषयों का छात्रावास अलग से बनाया जाये। यह छात्रावास लगभग 200 छात्रों के रहने का ही हो तो पर्याप्त होगा। परन्तु इस छात्रावास में यह व्यवस्था रहे कि प्रत्येक छात्र को निःशुल्क रूप में

भोजन उपलब्ध हो उसका भोजन इतना उत्तम हो कि उसके अच्छे स्वास्थ्य एवं बौद्धिक विकास के लिए पर्याप्त रूप में जितना आवश्यक है, उतना हो। इस छात्रावास में सम्पूर्ण व्यय नि:शुल्क एवं संस्था द्वारा वहन किया जाये।

2. इस छात्रावास में यह नियम भी आवश्यक रूप में हो कि छात्रों को तपस्यापूर्वक, ब्रह्मचर्य पूर्वक और अनुशासन में रहना पड़े, जिस प्रकार पूर्वकाल में गुरुकुल के महाविद्यालय (टी.एन. होस्टल) आश्रम में दोनों समय सन्ध्या एवं हवन में प्रत्येक छात्र का उपस्थित रहना आवश्यक था, उसी प्रकार इस वर्तमान समय में भी सन्ध्या हवन, शारीरिक व्यायाम आदि भी करने आवश्यक होगें।

3. गुरुकुल कांगड़ी के अन्दर किसी भी संकाय में अध्ययन करने वाले छात्र को जाति सूचक शब्दों को अपने नाम के पीछे प्रयोग करने की अनुमति न दी जाये। क्योंकि गुरुकुल शिक्षा पद्धति का मूल उद्देश्य जाति विहीन समाज का निर्माण करना है। किस छात्र का कौन वर्ण होगा, यह उसके स्नातक बनने पर आचार्य द्वारा प्रदान किया जा सकता है। जोकि वर्तमान व्यवस्थाओं में सम्भव प्रतीत नहीं होता। इसलिए यह परम आवश्यक है कि कोई भी छात्र अपने नाम के पीछे किसी जातीय सूचक शब्द का प्रयोग न करें तथा उसके प्रवेश के समय में छात्र के नाम में जाति सूचक शब्द न लिखा जाये और ना ही उसके प्रमाणपत्र में जाति सूचक शब्द का प्रयोग किया जाय। इसका पालन आवश्यक रूप में करना होगा।

जिस समय गुरुकुल कांगड़ी में छात्र हॉस्टल में रह कर शिक्षा प्राप्त करता था, उस समय उसके नाम के पीछे जाति सूचक शब्द का प्रयोग नहीं किया जाता था तो हॉस्टल (आश्रम) एवं छात्रावास में रहने वाले छात्रों में परस्पर किसी भी छात्र या अपने साथी की जाति का परिज्ञान नहीं होता था इसलिए परस्पर छात्रों में जाति का परिज्ञान न होने के कारण ऊँच-नीच की भावना नहीं पनपती थी। ज्ञात हो कि विद्यालय-विभाग में तो आज भी इस बात पर ध्यान दिया जाता है कि कोई भी ब्रह्मचारी जातिसूचक शब्द न लगाए। पहले समय के स्नातक परस्पर ऐसे ही व्यंवहार करते थे जैसे एक परिवार के भाई व्यवहार करते है। उस समय यह भावना इतनी विकसित हो गयी थी कि परस्पर दो या दो से अधिक सम्बोधन में छात्र भाईजी शब्द का प्रयोग करते थे जो कि एक पारिवारिक भावना को द्योतित करता था। वर्तमान समय में भारत की सामाजिक स्थिति भविष्य में बड़ी ही विस्फोटक बनती प्रतीत होती है। क्योंकि प्रजा तन्त्र में कुछ ही वर्षो के पश्चात् चुनाव होने आवश्यक होते है। उस चुनाव में जाति-पांति के उपयोग प्राय: सभी राजनैतिक पार्टियां पर्याप्त रूप से करती है। इसलिए समस्त समाज में जाति-पांति का समीकरण पुन: बनना प्रारम्भ सा हो गया है। इस जाति-पांति के समीकरण को न बनने दिया जाय इसमें एक बहुत महत्वपूर्ण भूमिका शिक्षण संस्थाएं ही निभाने में सक्षम हो सकती है। इसका नेतृतव गुरुकुल कांगड़ी को करना चाहिए। क्योंकि यदि हम यह कल्पना करे कि दो हजार छात्रों के लिए गुरुकुल में हॉस्टल बनाये जाये बिना किसी की जाति-पांति के पता लगे छात्र यहाँ अनुशासन में रहे, तो धीरे-धीरे समाज में जाति-पांति के इस भयंकर अभिशाप को समाप्त करने में सहयोग किया जा सकता है। इसी प्रकार यदि सौभाग्य से भारत की समस्त शिक्षण संस्थाओं में यह व्यवस्था कर दी जाय तो जाति-पांति के भविष्य में आने वाले तूफान से बहुत कुछ बचा जा सकेगा। उत्तर-प्रदेश के जैसे कुछ क्षेत्रों में जाति-पांति का ऐसा तूफान सा फैलता जा रहा है कि वह परस्पर विद्वेष, घृणा, फैलाने में महत्वपूर्ण भूमिका

निभा रहा है। यदि इसे नहीं रोका गया तो परस्पर जातियों में अन्तर्कलह में अत्यधिक वृद्धि होगी, उनके माण्डलिक नेता बनेंगे। वे नेता जातीय भावनाओं को उभार कर उनका अपने स्वार्थ के लिए उपयोग करेंगे। इसका अन्तिम दुष्परिणाम यह होगा कि यदि इसे न रोका गया तो देश में एक समय गृह-युद्ध की स्थिति उत्पन्न हो सकती है और यह दूर से एक द्रष्टा एवं प्रचेता के रूप में हिमाचल की उच्च शिखरों पर खड़े होकर देखने की कल्पना की जाय तो वह गृह युद्ध भारत के लिए बहुत भयंकर होगा।

इसलिए यह परम आवश्यक रूप में करना होगा कि जाति-विहीन समाज के निर्माण एवं विकास के लिए शिक्षा को ही उसका साधन बनाना आवश्यक है क्योंकि गुरुकुल कांगड़ी के उस युग में ऐसे सैंकड़ों स्नातक हुए थे जिन्होंने स्नातक बनने के पश्चात् अन्तर्जातीय विवाह किये थे। गुरुकुल कांगड़ी को अवश्य ही कुछ ऐसे उपाय करने होंगे जो सुनागरिक बनने के साथ जाति-पांति विहीन समाज के निर्माण करने में सहायक हो।

4. इस समय गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय में विज्ञान की शिक्षा का अत्यधिक विकास हुआ है। यह विकास आगे भविष्य में भी जारी रहे हमें इसमें कोई आपत्ति नहीं है, परन्तु यह विकास गुरुकुल के सिद्धान्त, आदर्श मूल्य एवं परम्पराओं की कीमत पर नहीं होना चाहिए अर्थात् हमारी यह स्पष्ट मान्यता है कि इस वर्तमान युग में आधुनिक से आधुनिक विषय (कम्प्यूटर आदि) की शिक्षा अवश्य दी जायें क्योंकि गुरुकुल शिक्षा प्रणाली आदर्शमयी परम्परा का नाम है न कि रूढ़िवादिता का। इसलिए गुरुकुल कांगड़ी में समय-समय पर आधुनिक विषयों को पढ़ाने में संकोच नहीं किया गया है। इसलिए ही यह संस्था प्राचीन आदर्शों के साथ-स्राथ प्रासंगिक एवं नवीन रूप में प्रतिष्ठित रही है। इस समय गुरुकुल कांगड़ी में वर्तमान प्रशासन की यह शक्ति सन्तुलन की परीक्षा भी है। क्योंकि वर्तमान एवं भविष्य में निकलने वाले स्नातकों को आधुनिक शिक्षा के साथ-साथ प्राचीन काल की नैतिक शिक्षा के मूल्यों का परिज्ञान भी उतना ही होना चाहिए, जितना कि उसे अपने विषय का परिज्ञान है। इस परिज्ञान को क्रियात्मक रूप देने का और छात्र को हृदयंगम कराने का सही समय और स्थान कक्षाओं में अध्ययन-अध्यापन के साथ हॉस्टल में (छात्रावास) उसकी दिनचर्या का वह नैतिक शिक्षा एवं गुरुकुल की मूल आदर्शमयी परम्परा उसके जीवन में मूर्तरूप में विकसित हो सके, उसके लिए आवश्यक है कि इस प्रकार की व्यवस्था उसके हॉस्टल में ही की जाये। क्योंकि गुरुकुल कांगड़ी की प्रथम नियमावली में जो व्यवस्था की गयी थी उसको सदैव गुरुकुल कांगड़ी के प्रशासन को अपने सम्मुख आदर्शरूप में रखना होगा। यदि ऐसा गुरुकुलीय प्रशासन तन्त्र नहीं कर पाया तो जो कुछ लोग एवं इतिहासकार यह आरोप लगाते है कि गुरुकुल कांगड़ी अपनी मान्यताओं को छोड़ चुका है वह सत्यसिद्ध हो जायेगा। जैसे कि- "यूनिवर्सिटी की स्थिति प्राप्त होने से पूर्व गुरुकुल कांगड़ी के महाविद्यालय विभाग के विद्यार्थियों के लिए भी छात्रावास विद्यमान था, उसमें सन्ध्या हवन भी हुआ करता था और विद्यार्थियों के जीवन को नियन्त्रित करने का प्रयत्न भी किया जाता था पर यूनिवर्सिटी बन जाने पर स्नातक तथा स्नातकोत्तर के विद्यार्थियों के लिए छात्रावास की व्यवस्था धीरे-धीरे कम होती गयी, और अब यह स्थिति आ गयी है कि विद्याविनोद, अलंकार तथा एम.ए. का कोई भी विद्यार्थी गुरुकुल के छात्रावास में नहीं रहता। ... यह भी स्वीकार करना होगा कि यूनिवर्सिटी के रूप में इस संस्था का जिस ढंग से विकास हुआ उससे गुरुकुल शिक्षा पद्धति की प्रायः सभी विशेषताएं लुप्त हो गयी और वह एक सामान्य कॉलेज की भांति होती चली गयी।"[28]

5. इसी सन्दर्भ में पांचवाँ सुझाव हमारा यह है कि इस गुरुकुल की भूमि पर अनेक महाविद्यालय चल रहे हैं जोकि विश्वविद्यालय से, कानपुर से व इलाहाबाद से सम्बन्ध रखते है। हमारा आशय (क) गुरुकुल कांगड़ी विद्यालय, (ख) राजकीय आयुर्वेद महाविद्यालय, कानपुर, (ग) गुरुकुल इन्टर साइन्स कॉलेज से है जो गुरुकुल की भूमि पर रहते हुए भी अलग सत्तायुक्त है। क्या कभी कोई दिन इनके एकीकरण का आएगा ? यह विश्वविद्यालय के अधिकारियों को गम्भीरता से सोचना चाहिए।

गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय के इतिहास का यदि हम सिंहावलोकन करें तो 1962 से गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय के इतिहास में एक नये युग का सूत्रपात हुआ। जिसमें वह स्वायत्त और आत्मनिर्भर संस्था न रहकर अपने व्यय के लिए पूर्णरूपेण भारत सरकार पर अवलम्बित हो गयी। अपने जीवन के 60 वर्ष के लगभग जब गुरुकुल एक स्वतन्त्र स्वायत्तशासी संस्था थी, उस समय तक इसकी उपलब्धियां किसी सीमा तक सन्तोषजनक थी। आर्य जनता की आशाएं किस सीमा तक पूर्ण हुई थी, यह भी विचार कर लेना आवश्यक प्रतीत होता है। साठ वर्षों के इस काल को दो भागों में विभक्त किया जाये तो पहला काल 1947 तक है, जिस समय गुरुकुल की अलंकार आदि उपाधियाँ सरकार अथवा विश्वविद्यालयों द्वारा मान्यता प्राप्त नहीं थी, दूसरा काल सन् 1947 से 1962 तक का था, जब गुरुकुल की स्वतन्त्र व स्वायंत्तशासी स्थिति थी, उस समय भारत सरकार तथा अनेक राज्य सरकारों द्वारा अलंकार की उपाधि बी.ए. के समकक्ष मान ली गयी थी। 1947 तक गुरुकुल के जो स्नातक हुए वे जीवन संघर्ष में तभी उन्नति कर सकते थे जब तक कि वस्तुतः योग्य हो, अपनी विद्वता व योग्यता के आधार पर किसी योग्य पद पर पहुंचने में समर्थ हो जाएं। उस समय के बहुत से स्नातक अपनी योग्यता के आधार पर पुनः शास्त्री आदि की परीक्षाएं उत्तीर्ण करते थे अथवा जर्मन फ्रांस आदि जाकर डॉक्ट्रेट की उपाधि प्राप्त करते थे। इस प्रकार के भी अनेक स्नातक हुए है जिनकी चर्चा हम किसी न किसी रूप में कर चुके है। इन उपर्युक्त तथ्यों को दृष्टि में रखने पर यह स्वीकार करना होगा कि एक शिक्षण संस्था के रूप में गुरुकुल कांगड़ी अपनी उपलब्धियों के आधार पर न केवल सन्तोष अनुभव कर सकता है अपितु गर्व भी कर सकता है। यहाँ पर महत्वपूर्ण बात यह है कि क्या गुरुकुल से आर्य समाज की आशाएं भी पूर्ण हुई है ? क्योंकि उस समय आर्य समाज का मुख्य उद्देश्य यह था कि वेदों तथा प्राचीन आर्य ग्रन्थों की पढ़ाई के लिएं तथा आर्योपदेशकों को तैयार करने के लिए एक विद्यालय की स्थापना करना गुरुकुल इसी उद्देश्य के लिए खोला गया था। क्या गुरुकुल द्वारा यह उद्देश्य पूरा हुआ है ? इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए भी गुरुकुल ने महत्वपूर्ण उपलब्धि प्राप्त की है। गुरुकुल के स्नातकों में अनेक ऐसे स्नातक गिनाएं जा सकते है जो कि वेद-वेदांङ्ग के प्रकाण्ड विद्वान् थे। उस समय अर्थात् गुरुकुल की स्थापना के समय जो लोग इस विचार धारा के थे कि गुरुकुल एक उपदेशक विद्यालय बने, वहाँ आर्योपदेशक तैयार किये जाये, उन्हें भी गुरुकुल से निराश होने की आवश्यकता नहीं है। गत अर्द्धशताब्दि में जिन उपदेशकों ने वैदिक धर्म के प्रचार के लिए सर्वाधिक आर्य समाज का प्रचार किया, उनमें गुरुकुल के स्नातकों की संख्या सबसे अधिक थी। यह भी सत्य है कि गुरुकुल के बहुत स्नातक आर्यसमाज के उपदेशक नहीं बने, परन्तु उनमें भी प्रायः किसी न किसी रूप में आर्य समाज का कुछ न कुछ कार्य अवश्य करते रहे। अब प्रश्न यह रह जाता है, गुरुकुल के सन् 1962 के पश्चात् डीम्ड टू

बी विश्वविद्यालय बनने पर गुरुकुल के कार्यों का मूल्यांकन किया जाय तो क्या गुरुकुल कांगड़ी के वर्तमान काल में निकलने वाले स्नातक गुरुकुल के उद्देश्य का आंशिक रूप से ही अथवा किसी न किसी रूप से पूर्ति कर रहे है या नहीं ? यहाँ एक ऐतिहासिक तथ्य को उजागर करना उचित होगा कि जब कोई भी संस्था प्रारम्भ हुआ करती है, उस समय उसका एक अपने अस्तित्व के लिए संघर्ष का काल होता है। वह संघर्ष उस समय के निकलने वाले स्नातक एवं व्यक्तियों में एक ओज एवं शक्ति का संचार करने का कारण बनता है। चाहे वह स्वतन्त्रता आन्दोलन हो, चाहे वह गुरुकुल कांगड़ी हो अथवा अन्य कोई उस समय की शिक्षण संस्था रही हो इसलिए उस प्रारम्भिक काल के स्नातकों और आज के इस काल के निकलने वाले स्नातकों की एकदम तकनीकी तुलना करना वर्तमान काल के स्नातकों के साथ कुछ अतिवादिता होगी यहाँ यह स्पष्ट करना आवश्यक प्रतीत होता है कि गुरुकुल कांगड़ी के स्नातकों का विभिन्न क्षेत्रों में कुछ स्नाताकों के नाम गिनाते रहे है उसी प्रकार सन् 1962 के पश्चात् होने वाले अनेकों स्नातकों के नाम गिनाये जा सकते है जो आर्यसमाज के विभिन्न क्षेत्रों में कार्यरत रहे है तथा जिन्होंने वेद वेदांङ्गो पर कार्य किया जैसे- ओमवीर विद्यालंकार, (हैदराबाद), धर्मवीर विद्यालंकार (महाराष्ट्र), शंकर सिंह वेदालंकार, भारत भूषण विद्यालंकार, आचार्य रामप्रसाद वेदालंकार, डॉ॰ विनोदचन्द्र विद्यालंकार, डॉ॰ जयदेव वेदालंकार (दिल्ली), डॉ॰ महेश वेदालंकार, श्री वेदसुमन वेदालंकार, श्री विश्ववर्धन वेदालंकार, जयदेव वेदालंकार (मध्य प्रदेश), डॉ॰ जगदीश प्रसाद विद्यालंकार, डॉ॰ ब्रह्मदेव विद्यालंकार, डॉ॰ प्रकाशवीर विद्यालंकार, डॉ॰ रधुवीर वेदालंकार, श्री तपेन्द्र वेदालंकार (आई.ए.एस.) डॉ॰ सूर्यप्रकाश विद्यालंकार, डॉ॰ प्रकाशचन्द्र वेदालंकार, श्री महावीर "नीर" विद्यालंकार आदि अनेक स्नातक 1962 के पश्चात् ही हुए है जिन के द्वारा वेद-वेदांङ्गों पर अनेक ग्रन्थ उपलब्ध है। दर्शन शास्त्र पर स्नातकों को अनेक रचनाएं भी लिखी गयी है जिनको पुरस्कृत भी किया जा चुका है। आज भी गुरुकुल के स्नातक पुरोहित से लेकर सभाओं में उपदेशक तथा आर्यसमाज के अधिकारी या सभाओं के अधिकारी आदि भी कितने ही स्नातक मिलेंगे। इसलिए विश्वविद्यालय बनने के पश्चात् गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय से निकलने वाले स्नातक आज भी कहीं न कहीं किसी न किसी प्रकार से आर्य समाज के कार्यों में रत है। यह कहना गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय के साथ अन्याय होगा कि वर्तमान समय में निकलने वाले स्नातक गुरुकुल के उद्देश्यों की पूर्ति नहीं कर रहे है। इस सत्य को भी प्रकाश में लाना आवश्यक समझता हूँ कि जो स्नातकोत्तर यहाँ तक की एम.एस.सी. उत्तीर्ण करने वाले छात्र जब अपने विभिन्न कार्य क्षेत्रों में जाते है तो उनमें से कुछ अवश्य ऐसे यहाँ के किसी विषय के छात्र क्यों न रहे हो, गुरुकुल शिक्षा के प्रति वे अपना लगाव अनुभव करते है।

इस समय यदि विशेष सावधान रहने की आवश्यकता है तो यह है कि विज्ञान के स्नातक एवं एम.एस.सी. के छात्रों को किसी प्रकार गुरुकुल के उद्देश्यों को हृदयंगम करा कर उनको गुरुकुल शिक्षा के प्रति आस्थावान बनाया जाय। इसके लिए उस प्रकार का पर्यावरण बनाना, उनको इस प्रकार के संस्कार प्रदान करना, यह वर्तमान प्रशासन का उत्तरदायित्व और एक चुनौती भी है जिसे उसे स्वीकार करना चाहिए।

6. गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय एक डीम्ड टु.बी. विश्वविद्यालय है। वि.वि. अनुदान आयोग ने जिस संस्थानों को डीम्ड टु.बी. विश्वविद्यालय की मान्यता प्रदान की है वो यह मानकर की

है कि उक्त संस्था का विशेष क्षेत्र में योगदान अर्थात् एक सीमित क्षेत्र रहा है। इसलिए गुरुकुल कांगड़ी को विश्वविद्यालय की स्थिति की संस्था स्वीकार करने में विश्वविद्यालय अनुदान आयोग का एक मुख्य प्रयोजन यह था कि यह संस्था वेद, संस्कृत, प्राचीन भारतीय इतिहास आदि विषयों के अध्ययन का उच्च शोध अथवा इस अपने विशिष्ट उद्देश्य में विकास कर सके। वस्तुतः यदि इस क्षेत्र में गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय का प्रशासन यदि आंख बन्द करके विज्ञान के विषयों का ही अन्धाधुन्ध विकास करता रहा तो आर्य समाज और आर्यप्रतिनिधि सभाओं को तो निराशा होगी ही, इसके साथ-साथ वि.वि. अनुदान आयोग एवं शिक्षा मंत्रालय भारत सरकार को भी निराशा ही होगी। क्योंकि विज्ञान और आधुनिक टेक्नोलॉजी के बड़े-बड़े संस्थान तथा विश्वविद्यालय विद्यमान है जिनका मुकाबला गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय किसी भी रूप में नहीं कर सकता है। अतएव आज नहीं तो कल वि.वि. के प्रशासन को यह अपना उद्देश्य अवश्य निर्धारित करना चाहिए कि जिस उद्देश्य की पूर्ति के लिए भारत सरकार ने अथवा विश्वविद्यालय अनुदान आयोग ने विश्वविद्यालय की स्थिति प्रदान की है वह उद्देश्य हमारा अवश्य करना चाहिए। इस उद्देश्य की पूर्ति एवं निर्धारण तभी सम्भव है जिसको हम सुझाव 1 व 2 में वर्णन कर चुके है, जब उनको विश्वविद्यालय में पूर्ण रूप से लागू करने का प्रावधान किया जाय। गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय की स्थापना 4 मार्च 1902 को हुई थी। सौ वर्ष के अन्तराल में गुरुकुल कांगड़ी ने अनेक तूफानों को पार किया हैं। अनेक राजनैतिक, धार्मिक और सामाजिक आन्दोलनों का साक्षात् द्रष्टा गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय है। 4 मार्च 2001 को गुरुकुल कांगड़ी का सौवां वर्ष प्रारम्भ हो रहा है। गुरुकुल कांगड़ी ने अपने सौ वर्ष के जीवन में अनेक बार उत्थान एवं पतन का दृश्य अवलोकित किया है। अनेक संघर्षों के बावंजूद यह संस्था अपने संस्थापक अमर हुतात्मा स्वामी श्रद्धानन्द की तपस्या के कारण उन्नति के शिखर पर आ पहुंची है। वर्तमान काल में गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय में निम्नलिखित महाविद्यालय संकाय और विभाग कार्यरत है।

प्राच्य विद्या संकाय- (वेद महाविद्यालय)- वेदविभाग, दर्शन विभाग, संस्कृत विभाग, योग, प्राचीन भारतीय इतिहास, संस्कृति एवं पुरातत्व विभाग हैं। इन विभागों में प्राच्य विद्याओं के समस्त विषयों को अपने-अपने विषय के उद्भट् विद्वान् अध्यापन एवं शोध कार्य कराते हैं। इसी संकाय में खेल एवं क्रीडा विभाग भी कार्यरत है।

मानविकीय संकाय- (कला महाविद्यालय)- इस संकाय में हिन्दी विभाग, मनोविज्ञान विभाग, और अंग्रेजी विभाग कार्यरत है।

जीव विज्ञान संकाय- इस संकाय में जन्तु विज्ञान विभाग, पर्यावरण विभाग, वनस्पति विज्ञान विभाग कार्यरत है।

विज्ञान संकाय (विज्ञान महाविद्यालय)- इस संकाय के अन्तर्गत गणित विभाग, भौतिकीय विभाग, रंसायन विज्ञान विभाग आते हैं।

प्रबन्धन संकाय- यह विश्वविद्यालय का एम.बी.ए. अर्थात् मास्टर ऑफ विजनिस प्रशासन का संकाय प्रारम्भ हुआ है। एम.बी.ए. करने के पश्चात् नौकरी सरलता से मिल जाती है। इसका यह अभिप्राय है कि गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय का झुकाव रोजगार प्रदान करने वाले विषयों के ओर भी हो गया है। यहाँ के स्नातकों को नौकरियां भी सरलता से मिल पाये।

प्रौद्योगिकीय संकाय- इस संकाय के अन्तर्गत वर्तमान युग का आधुनिकतम कम्प्यूटर विज्ञान विषय आता है। कम्प्यूटर में एम.सी.ए. का अध्ययन-अध्यापन गत सात वर्षों से प्रारम्भ हो चुका है। इस संकाय के अन्तर्गत ही गत वर्ष 2000 ई॰ में बी.टेक अर्थात् कम्पयूटर में इंजीनियरिंग का पाठक्रम भी प्रारम्भ हुआ है। इस संकाय का नाम प्रौद्योगिकीय महाविद्यालय भी रखा गया है।

कन्या गुरुकुल महाविद्यालय देहरादून- कन्या गुरुकुल महाविद्यालय, देहरादून विश्वविद्यालय का अंगभूत महाविद्यालय है। जहाँ छात्राओं को प्राचीन विषयों के साथ-साथ आधुनिकतम विषयों की शिक्षा भी दी जा रही है। सभी विषयों पर शोध कार्य किये जा रहे हैं।

कन्या गुरुकुल महाविद्यालय, हरिद्वार- विश्वविद्यालय में पढ़ाए जा रहे विषयों में महाविद्यालय में स्नातकोत्तर कक्षाएं चल रही है, तथा शोध कार्य भी चल रहे हैं।

पुस्तकालय- विश्वविद्यालय का पुस्तकालय संपूर्ण भारत एवं विदेशों के भी छात्रों के लिए पवित्र मंदिर के रूप में दुर्लभ ग्रन्थों का कोषागार है। पुस्तकालय में प्राचीन एवं अर्वाचीन विषयों की डेढ़ लाख से भी अधिक पुस्तकें तथा पाण्डुलिपियाँ मौजूद हैं। प्रौढ़ सतत् शिक्षा एवं प्रसार विभाग भी कार्यरत है।

नये कुलसचिव की नियुक्ति- अगस्त 1996 से कुलसचिव पद पर नियुक्ति नहीं हो सकी थी। इससे शिक्षकेतर कर्मचारियों में बहुत अधिक रोष था। मई 2000 ई॰ में कुलसचिव पद पर डॉ॰ महावीर अग्रवाल की स्थाई रूप से नियुक्ति हुई। डॉ॰ महावीर संस्कृत विभाग में प्रोफेसर पद पर कार्यरत थे आप एक सौम्य स्वभाव के व्यक्ति है। आप पी-एच.डी. एवं वैदिक साहित्य में डी.लिट्. की उच्चतम उपाधि से विभूषित है। संस्कृत भाषा में धारा प्रवाह भाषण करने में समर्थ है। आप एक मृदु भाषी के रूप में विद्वान् माने जाते है। विश्वविद्यालय का प्रशासन सम्भालना एक दुष्कर कार्य है। मैं इन की सफलता की कामना करता हूँ।

नये कुलाधिपति की नियुक्ति- पण्डित हरबंश लाल शर्मा, अध्यक्ष आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब को अप्रैल 2001 में शिष्ट परिषद् ने गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय के उच्चतम कुलाधिपति पद पर प्रतिष्ठित किया। पं॰ हरबंश शर्मा को आर्य समाज का भामाशाह माना जाता है। आप एक विनम्र करोड़पति व्यक्ति है, जो प्रतिवर्ष अनेक शिक्षण संस्थाओं को उदारता पूर्वक लाखों रूपया दान करते रहते हैं। यह विचित्र देव संयोग है कि सौ वर्ष पूर्व आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के द्वारा ही गुरुकुल कांगड़ी की स्थापना की गई थी। इस संस्था के सौवें वर्ष में भी आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब का प्रधान ही गुरुकुल विश्वविद्यालय के कुलाधिपति पद पर सुशोभित हैं। पं॰ हरवंश लाल शर्मा स्वामी विरजानन्द स्मारक समिति ट्रस्ट गुरुकुल करतारपुर को 16 वर्षों से प्रधान पद पर सुशोभित कर रहे है। इनके कुलाधिपति बनने से यह आशा की जाती है कि गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय और अधिक उन्नति करेगा।

गुरुकुल कांगड़ी का शताब्दी समारोह प्रारम्भ

गुरुकुल कांगड़ी की स्थापना 4 मार्च सन् 1902 को हुई थी। इसलिए 4 मार्च 2001 को गुरुकुल की स्थापना का सौवाँ वर्ष प्रारम्भ हुआ। 4 मार्च से 6 मार्च तक शताब्दी वर्ष विभिन्न सम्मेलनों द्वारा प्रारम्भ किया गया।

इस शताब्दी समारोह का उद्घाटन 4 मार्च 2001 को प्रातः यज्ञ से प्रारम्भ हुआ। इस उद्घाटन समारोह के मुख्य अतिथि श्री बच्चीसिंह रावत, केन्द्रीय राज्यमंत्री (विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी) थे। उन्होंने विधिवत् उद्घाटन समारोह का उद्घाटन किया। श्री बच्ची सिंह रावत ने अपने उद्घाटन भाषण में कहा कि "इस अवसर पर आज आप सब के बीच में अपने को पाकर अत्यन्त हर्षित एवं गौरवान्वित हूँ- कि आपने मुझे

हमारी वैदिक संस्कृति, साहित्य एवं परमपराओं के ध्वजवाहक शिक्षण संस्थान गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय की स्थापना के शताब्दी समारोह वर्ष की शुभारम्भ बेला में आमंत्रित किया है। निश्चय ही मैं आज राष्ट्रभक्ति एवं राष्ट्रधर्म से ओत-प्रोत इस पुण्य स्थली में आकर स्वयं को अत्यन्त गौरवान्वित अनुभव कर रहा हूँ। तत्कालीन विदेशी सरकार ने भारतीय जनमानस को जिस तरह आक्रांत, प्रताड़ित कर सामाजिक तथा धार्मिक रूप से प्रदूषित व कमजोर करके हमारी वैदिक संस्कृति को अपमानित कर एक दीनभावना से ग्रसित किया हुआ था, उस दीनहीन स्थिति से अपने स्वर्णिम अतीत तथा एक मानवतावादी आध्यात्मिक धर्म परायण राष्ट्रवादी चेतना की ओर ले जाने का एकमात्र उपाय यही था कि अपनी विस्मृत हुई गुरुकुल शिक्षा प्रणाली को पुनर्जीवित किया जाये। महर्षि दयानन्द के श्रेष्ठतम शिष्य स्वामी श्रद्धानन्द जी ने अपने साथियों के साथ मिलकर इसी तात्काालिक उद्देश्य की पूर्ति के लिए हिमालय की तलहटी में गंगा के तट पर अपने दो पुत्रों के साथ गुरुकुल का जो दीप प्रज्जवलित किया था वह हमारी वैदिक संस्कृति के प्रकाश से न केवल भारतीय जनमानस को प्रकाशित कर रहा है, अपितु विश्व में भारतीय ज्ञान-विज्ञान, संस्कृति, वसुधैव कुटुम्बकम् की पवित्र भावना तथा प्रकृति एवं पर्यावरण के साथ साहचर्य की भावना के प्रचारक, प्रसारक एवं संरक्षक का प्रतीक भी प्रतिष्ठित हो चुका है।

गुरुकुल शताब्दी के अवसर पर प्रथम दिन द्वितीय सत्र में आयोजित शिक्षा सम्मेलन की अध्यक्षता आर्य समाज के स्वामी संन्यासी शिरोमणी सार्वदेशिक आर्य सभा के प्रधान स्वामी ओमानन्द सरस्वती जी के द्वारा की गई, तथा इस शिक्षा सम्मेलन के मुख्य अतिथि उत्तरांचल राज्य की विधान सभा के अध्यक्ष श्री प्रकाश पंत जी थे।"

मुख्य अतिथि के रूप में उत्तरांचल के विधान परिषद् अध्यक्ष श्री प्रकाश पंत ने इस अवसर पर अपने विचार व्यक्त करते हुए कहा कि आज से सौ पूर्व गुरुकुल शिक्षा का दीप जिस महापुरुष ने प्रज्ज्वलित किया था, आज भी उसका प्रकाश शिक्षा जगत को अपनी आभा से उद्भासित कर रहा है। भारतवर्ष की संस्कृति बौद्धिक सम्पदा से भरी हुई है। वेद तो सब विज्ञान का आधार है लेकिन हम अपनी प्राचीन थाती को सम्भाल कर नहीं रख रहे हैं। गुरुकुल जैसी संस्थाये इस सांस्कृतिक विरासत को संरक्षित करने में अपना अमूल्य योगदान दे रही हैं।

गुरुकुल कांगड़ी के शताब्दी के तृतीय सत्र में विश्वविद्यालय के सभागार में स्नातक सम्मेलन का आयोजन किया गया। स्नातक सम्मेलन की अध्यक्षता गुरुकुल के वयोवृद्ध स्नातक सुप्रसिद्ध वैदिक विद्वान् डॉ॰ रामनाथ वेदालंकार ने की।

सम्मेलन में विशिष्ट अतिथि के रूप में पधारे उत्तरांचल के ग्राम्य विकास एवं प्रौद्योगिकी मंत्री माननीय श्री मनोहर सिंह- ग्रामवासी जी ने कहा कि भारतवर्ष की संस्कृति ही एक ऐसी उदार संस्कृति है जो एक व्यक्ति कि आस्था को दूसरे व्यक्ति की आस्था से जोड़ती है। सांस्कृतिक संरक्षण का उत्तरदायित्व गुरुकुल जैसी संस्थाओं का है तथा उत्तरांचल को गुरुकुल के रूप में ऐसी संस्था मिली है जो भारतीय संस्कृति की अस्मिता को पहचानने में प्रमुख भूमिका का निर्वाह कर रही है, हमें इसका गर्व है।

सम्मेलन के इस अवसर पर गुरुकुल के 75 वर्ष के ऊपर की आयु के प्रौढ़ स्नातकों का भावभीना स्वागत कर उनको स्मृति चिन्ह देकर, शाल ओढ़ाकर तथा रु॰ 1100 की भेंट प्रदान कर किया गया स्मृतिचिन्ह स्नातक प्रतिनिधि श्री राजेन्द्रनाथ पाण्डेय कमीशनर की ओर से भेंट किये गये। निम्नलिखित स्नातकों का स्वागत किया गया-

सर्व श्री डॉ॰ रामनाथ वेदालंकार, डॉ॰ कृष्ण कुमार, श्री दत्तात्रेय (सतीश), श्री जगत्प्रिय वेदालंकार, भाई श्री रामेमेश बेदी, श्री वीरेन्द्र कुमार, श्री हरिप्रसाद भाई विद्यालंकार, प्रो॰ वेदव्रत वेदालंकार, भाई मनोहर

विद्यालंकार, श्रीमती शान्ता विद्यालंकार, श्रीमती प्रभात शोभा, श्रीमती आचार्या दमयन्ती कपूर; श्री गुरुदत्त वेदालंकार, श्री देवमित्र विद्यालंकार, श्री मेहता विद्यालंकार आदि स्नातकों का अभिनन्दन किया गया।

सम्मेलन का समापन भाषण दिल्ली सरकार से आये नागरिक आपूर्ति मन्त्री योगेन्द्र शास्त्री जी ने दिया। उन्हें भी गुरुकुल के पूर्व स्नातक होने का गौरव प्राप्त है। सम्मेलन के मुख्य अतिथि मंत्री जी ने कहा कि गुरुकुल के स्नातकों ने समाज के हर क्षेत्र में प्रभावशाली भूमिका निभाई है। वे अच्छे पत्रकार के रूप में, साहित्यकार के रूप में, वैदिक के रूप में, इतिहासकार के रूप में, शिक्षक के रूप में, सभी क्षेत्रों में उन्होंने अपनी अलग पहचान बनाई है। डॉ० योगानन्द शास्त्री ने कहा कि किसी संस्था को यदि स्थापित हुए एक सौ वर्ष हो चुके हों और वह जीवित ही नहीं अपितु अपने नये आयामों से विकसित हो रही हो तो यह देखकर सहज ही अनुमान लगाया जा सकता है कि यहाँ प्रशासक अपने कर्त्तव्य का पालन ही नहीं कर रहे, अपितु संस्था के विकास के लिये कठोर परिश्रम भी कर रहे हैं। उन्होंने स्नातक सम्मेलन का उद्देश्य बतलाते हुए कहा कि गुरुकुल के प्राचीन स्नातक अपनी मातृ संस्था में आकर निरीक्षण करके सुझाव दे सकें कि यह संस्था उन्नति के शिखर पर कैसे पहुंचे, तो अत्यन्त सराहनीय होगा।

इस शताब्दी समारोह के द्वितीय दिवस अर्थात् 5 मार्च 2001 को चतुर्थ सत्र में नारी शिक्षा सम्मेलन का आयोजन किया गया। इस सम्मेलन की अध्यक्षता प्राचार्या श्रीमती दमयन्ती कपूर कन्या गुरुकुल महाविद्यालय देहरादून ने की थी। इस सम्मेलन की मुख्य अतिथि श्रीमती निरुपमा गौड़ थी। इस अवसर परश्रीमती निरुपमा गौड राज्यमंत्री उत्तरांचल सरकार ने अपने भाषण में कहा किं भारत की प्राचीन महान् नारियां जिन में सावित्री, गार्गी, जीजाबाई, झांसी की रानी लक्ष्मीबाई तथा प्रधानमन्त्री ईन्दिरा गाँधी सरीखी महिलायें आज की हमारी प्रेरणा की स्रोत है। इस अवसर पर भी स्नातिकाओं का सम्मान किया गया।

इस सम्मेलन में एम.ए. एवं एम.एस.सी. की छात्राओं ने विभिन्न कार्यक्रमों का प्रदर्शन किया।

गुरुकुल शताब्दी के तीसरे दिन पांचवे सत्र में वेद-विज्ञान सम्मेलन का प्रारम्भ ब्रह्म वर्चस्व संस्थान शांतिकुंज के निदेशक डॉ० प्रणव पाण्ड्या कि अध्यक्षता में प्रारम्भ हूआ। समारोह के मुख्य अतिथि उत्तरांचल सरकार के माननीय ऊर्जा मंत्री श्री भगत सिंह कोश्यारी जी ने अपनी गरिमामय उपस्थिति समारोह को प्रदान की। सम्मेलन का विधिवत् उद्घाटन उत्तरांचल सरकार के ऊर्जा मंत्री भगत सिंह कोश्यारी, तथा शांतिकुंज के प्रधान डॉ० प्रणव पाण्ड्या ने दीप प्रज्जवलित कर किया।

मुख्य अतिथि उत्तरांचल के ऊर्जा मंत्री माननीय श्री भगत सिंह कोश्यारी जी ने सम्मेलन को सम्बोधित करते हुए कहा गुरुकुल की शताब्दी हमकों अनवरत प्रेरणा देती रहेगी कि शिक्षा को ज्योति का प्रकाश गुरुकुल अनवरत रूप से प्रदान करता रहा है। उन्होंने कहा कि गुरुकुल में वे अपनी ज्ञानपिपासा को शांत करने आये हैं। उन्हें यहाँ आकर प्रसन्नता हुई कि उन्हें वैदिक विज्ञान की खोज परक व्याखानों को सुनकर अपनी ज्ञान क्षुधा को शान्ति करने में सहायता मिली। उन्होंने आशा प्रकट की कि गुरुकुल देवभाषा संस्कृत के माध्यम से ज्ञान की धारा को जन-जन तक पहुंचाने में योगदान देगा। उन्होंने ईशोपनिषद् के मंत्र का सन्दर्भ देते हुए कहा कि हम जीवन में केवल अन्नमय कोष, प्राणमय कोष पर ही निर्भर न हों बल्कि हमारा उद्देश्य विज्ञानमय कोष तक पहुंचने का हो, श्री कोश्यारी ने इस अवसर पर कहा कि वे राजनीति में इसलिए आये है कि उत्तरांचल को देवभूमि बना सके। राष्ट्र की मुख्यधारा में उत्तरांचल की प्रभावशाली भूमिका बने, ऐसा प्रयत्न वे सदा करते रहेंगें।

डॉ० प्रणव पॉण्ड्या ने अपने अध्यक्षीय सम्बोधन में कहा कि वेद सभी ज्ञान-विज्ञान की थाती एवं स्रोत है। वैज्ञानिक सिद्धांत तथा आध्यात्मिक ऊर्जा दोनों का प्रवाह वेद में विद्यमान है। वेद के बिना तो जीवन

ही नहीं है। उन्होंने इस अवसर पर यह भी कहा कि शांतिकुंज अगले वर्ष के अंत में जब गुरुकुल शताब्दी वर्ष का समापन हो रहा होगा। उस समय देवभूमि विश्वविद्यालय के नाम से एक शिक्षा संस्थान का प्रारम्भ करने जा रहे है, जो गुरुकुल के छोटे भाई की भूमिका निभायेगी। सत्र का समापन संयोजक प्रो॰ एस.एल. सिंह द्वारा गुरुकुल कांगड़ी में वैदिक गणित में किये जा रहे शोध कार्यों की मीमांसा करते हुए, शांति पाठ के साथ किया गया।

दिनांक 6 मार्च, 2001 को सायंकाल 4.00 बजे योग व्यायाम सम्मेलन का उद्घाटन उत्तरांचल सरकार के माननीय स्वास्थ्य मंत्री, श्री अजय भट्ट के कर कमलों द्वारा सम्पन्न हुआ। कार्यक्रम की अध्यक्षता माननीया श्रीमती प्रभात शोभा पण्डिता द्वारा की गई।

मुख्य अतिथि ने अपने भाषण में स्वास्थ्य निर्माण हेतु विभिन्न व्यायामों का उपयोग करने पर बल दिया। उन्होंने कहा कि उत्तरांचल राज्य में भारतीय व्यायामों के प्रचार-प्रसार को बढ़ावा दिया जाएगा, जिससे हम भारतीय तथा पाश्चात्य शैली के व्यायामों में दक्षता प्राप्त कर सकें। व्यायाम शरीर को सुदृढ़ बनाता है। इसी से व्यक्ति निरोग रह सकता है। गुरुकुल के छात्रों के प्रदर्शन ने मेरे उत्साह को बढ़ा दिया है तथा मुझे अपने छात्र जीवन की स्मृति आने लगी है।

अध्यक्षीय भाषण में श्रीमती प्रभात शोभा पण्डिता ने बालकों का उत्साहवर्धन करते हुए उन्हें सन्मार्ग पर निरन्तर बढ़ते रहने का उपदेश दिया तथा ब्रह्मचर्य बल की महत्ता बताते हुए ऋषि दयानन्द के स्वप्न को साकार करने को उद्बोधित किया।

यह सर्वाविदित है कि गुरुकुल कांगड़ी की स्थापना अत्यधिक संघर्ष के पश्चात् हुई थी। गुरुकुल के अपने सौ वर्ष के इतिहास में सदैव संघर्ष होता रहा है। आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब का त्रिशाखन होने के पश्चात् 1977 ई॰ से लेकर 1980 ई॰ तक जो भयंकर विवाद उत्पन्न हुए थे, उसकी लपट आज भी पूर्ण रूपेण शान्त नहीं हो सकी है। जो हरिद्वार शहर में गुरुकुल की भूमि पर्याप्त रूप में थी, उसका बिकना 1980 के बाद प्रारम्भ हो गया था।

सभा ने लगभग-लगभग हरिद्वार, कनखल और ज्वालापुर में स्थित भूमि को बेच दिया था। गुरुकुल प्रशासन के दो धड़ों में गुरुकुल की भूमि बेचने की, मानों होड़-सी लग गयी हो, इसी होड़ का दुष्परिणाम यह हुआ कि गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय के परिसर की भूमि 4 जून 2001 को 144 बीघा जमीन बड़ी बेरहमी से विद्या सभा ने बेच डाली। जब यह पता चला तो समस्त विश्वविद्यालय हक्का-बक्का रह गया। इससे गुरुकुल का भविष्य क्या होगा ? यह कहना कठिन है। यदि गुरुकुल कांगड़ी का अस्तित्व अगले सौ वर्ष तक बने रहना है तो गुरुकुल परिसर की भूमि को बेचना एकदम बन्द करना आवश्यक है। इसी में गुरुकुल एवं आर्य समाज की भलाई है। यदि यह भूमि बेचने की प्रवृत्ति शीघ्र ही बन्द नहीं की गई तो आर्यसमाज एवं उस की भावी पीढ़ी भूमि बेचने वालो तथा गुरुकुल कांगड़ी का इतिहास क्षमा नहीं करेगा।

गुरुकुल कांगड़ी का सौवाँ वार्षिक उत्सव ग्यारह अप्रैल 2001 से 13 अप्रैल 2001 ईस्वी तक सम्पन्न हुआ। इस अवसर पर सम्मेलनों के अतिरिक्त गुरुकुल शिक्षा शताब्दी शोभा यात्रा का भव्य आयोजन किया गया। हरिद्वार रेलवे स्टेशन पर उसी सौ वर्ष के दृश्य को चित्रित किया गया, उस समय महात्मा मुंशीराम अपने ब्रह्मचारियों के साथ आये थे।

गुरुकुल कांगड़ी फार्मेसी

जैसा कि उल्लेख किया जा चुका है कि गुरुकुल कांगड़ी फार्मेसी की स्थापना इसलिए की गयी थी कि सुदूर भविष्य में गुरुकुल कांगड़ी के लिए यह सम्भव न हो कि केवल दान मांगकर संस्था को चलाया

जा सके। इसलिए उस समय के गुरुकुल कांगड़ी के प्रशासन ने कुछ एक प्रयोगों के पश्चात् अपनी व्यवस्था चलाने का निर्णय लिया। गुरुकुल की समस्त स्थिर निधियों को तोड़कर, लगभग सोलह लाख रुपये की पूंजी से गुरुकुल कांगड़ी फार्मेसी नामक उद्योग प्रारम्भ किया। यह भी निर्णय लिया कि गुरुकुल कांगड़ी फार्मेसी से होने वाली आय से गुरुकुल कांगड़ी तथा सम्बन्धित संस्थाओं का संचालन किया जायेगा। उन दूर द्रष्टा मनीषियों का स्वप्न पूर्ण हुआ। गुरुकुल कांगड़ी फार्मेसी शुद्ध आयुर्वेदीय औषधियों का एक प्रसिद्ध आयुर्वेदीय प्रतिष्ठान बन गया। आज गुरुकुल कांगड़ी फार्मेसी की औषधियों पर आर्य समाज को ही नहीं, अपितु सभी को विश्वास है।

गुरुकुल कांगड़ी फार्मेसी में शुद्ध शास्त्रीय औषधियों का ही निर्माण किया जाता है। इस फार्मेसी के विषय में यह प्रसिद्ध है कि किसी भी औषधि में जितनी वनस्पतियाँ तथा अन्या औषधियाँ जो शास्त्र में लिखी गयी है कि ये-2 वस्तुएं इस औषधि में डाली जानी चाहिए, वे अवश्य ही डाली जाती है। अन्य फार्मेसियों की तरह यहाँ की दवाओं में मिलावट नहीं की जाती है। क्योंकि यह गुरुकुल कांगड़ी की फार्मेसी है। किसी एक व्यक्ति की फार्मेसी नहीं है। व्यवसायाध्यक्ष सहित सभी को योग्यतानुसार वेतनमान निश्चित है। इसलिए लाभ किसी एक व्यक्ति की जेब में नही जाता है। गुरुकुल कांगड़ी फार्मेसी इस समय बड़े उद्योग के रूप में स्थापित हो चुका है। इस समय 2001 ई॰ में लगभग तीन करोड़ रुपये की बिक्री होती है। इसके लाभांश में से एक लाख रुपये प्रति माह गुरुकुल कांगड़ी विद्यालय विभाग को 50,000 और कन्या गुरुकुल महाविद्यालय देहरादून को पचीस हजार रुपये प्रतिमाह अनुदान के रूप में प्रदान किया जाता है।

गुरुकुल कांगड़ी फार्मेसी द्वारा निर्मित औषधियां विदेशों में भी मंगायी जाती हैं। यहाँ की औषधियां अन्य फार्मेसियों की तुलना में मंहगी अशवय हैं क्योंकि उन औषधियों में उत्तर प्रकार की औषधियां डालकर निर्माण किया जाता है। इसलिए सरकारी विभागों में गुरुकुल कांगड़ी फार्मेसी कभी भी टेण्डर नहीं भेजती है। क्योंकि अन्य सरकारी संस्थानों में कम मूल्य की औषधियाँ डालकर निर्माण किया जाता है। इसलिए वे गुरुकुल कांगड़ी फार्मेसी की अपेक्षा कम मूल्य की होती है। गुरुकुल कांगड़ी फार्मेसी से यह आशा की जाती है कि भविष्य में भी अपनी ख्याति को स्थिर रख पायेगी। गुरुकुल फार्मेसी के प्रारम्भ से लेकर आज तक निम्नलिखित व्यवसायाध्यक्ष हुए है।

यहाँ पर उनका विवरण प्रस्तुत किया जा रहा है।

वैद्य सत्यदेव-(1927 सम्वत्) । श्री दीनदयाल शास्त्री-(सन् 1944)
श्री अर्जुन देव आयुर्वेदालंकार (1959) । श्री नवरत्न-(1962)
श्री धर्मपाल विद्यालंकार-(1965) । डॉ॰ सत्यपाल आयुर्वेदालंकार-(1964)
डॉ॰ धर्मपाल लंदन वाले-(1965) । श्री दीनदयाल शास्त्री-(1967)
श्री गणपति विद्यालंकार-(1972) । डॉ॰ हरिप्रकाश आयुर्वेदालंकार-(1974)
श्री बलदेव आयुर्वेदालंकार-(1975) । डॉ॰ आनन्द प्रकाश शर्मा-(1979)
श्री सत्यदेव कोहली-(1989) । वैद्य सोम प्रकाश-(1990)

डॉ॰ राजकुमार रावत- 1991 से निरन्तर व्यवसायाध्यक्ष पद पर सुशोभित है।

गुरुकुल कांगड़ी फार्मेसी की निम्नलिखित प्रमुख औषधियाँ, जो जुलाई 2001 में प्रसिद्ध है। उनकी विवरण इस प्रकार है।

(1) गुरुकुल च्वनप्राश स्पेशल (केसर युक्त) (2) पायोकिल

(3) ब्राह्मी सुधा
(4) शान्ति सुधा
(5) गुरुकुल शिलाजीत
(6) गुरुकुल चाय
(7) भीमसेनी सुरमा
(8) गुलकन्द
(9) नेत्रविन्दु
(10) आंवला प्रवाल युक्त
(11) मधुमेह नाशिनी गुटका
(12) गुरुकुल धूप
(13) शंखपुष्पी सीरप
(14) गुरुकुल मधु
(15) मन्मथ रस
(16) गुरुकुल जन्मघुट्टी
(17) गुरुकुल काजल
(18) कासारी
(19) स्वर्ण भस्म
(20) पंचामृत आसव
(21) चन्द्रप्रभावटी
(22) स्वर्ण प्रभा
(23) कुम कुमादि तैल
(24) अमृत रसायन
(25) भृंगराज तैल
(26) कर्ण बिन्दु
(27) गुरुकुल हवन सामग्री
(28) आमल की रसायन
(29) प्रवाल पिष्टी
(30) स्वादिष्ट चूर्ण

पुरातत्व संग्रहालय

परम्परा प्रेमी होने के कारण मनुष्य ने विविध रूपों में अपने अतीत को संकलित और दर्शनीय बनाने की चेष्टा की है। संग्रहालय उसी चेष्टा के सुन्दर परिणाम है जो अमूर्त इतिहास को मूर्त बनाते हैं। संग्रहालय का अंग्रेजी पर्याय म्यूजियम ग्रीक शब्द डनेपमपवद से व्युत्पन्न है। जो ग्रीक गाथाओं की ज्ञान देवी डनेमे का स्थान (मन्दिर) माना जाता है। इसका अर्थ उस स्थान से है जहाँ हमारी परम्परायें संरक्षित की जाती है, प्रदर्शित की जाती है और ज्ञान की देवी की प्रसाद के रूप में प्रचारित की जाती है।

बहुत कुछ इन्हीं आदर्शों को कार्य रूप में परिणित करता हुआ पुरातत्व संग्रहालय गुरुकुल कांगड़ी परिसर में दयानन्द द्वार से लगभग 100 मीटर पूर्व पीत रंग के तिमंजिले भवन में अवस्थित है। यद्यपि इस भवन में संग्रहालय पिछले दशक के प्रारम्भ में नियोजित किया गया था किन्तु अपने अतीत में यह लगभग 90 वर्षों का इतिहास संजोये हैं।

अंग्रेजियत के समुद्र में विलीन होती जा रही जिस भारतीय संस्कृति के गौरव की पुर्नस्थापना और विदेशी संस्कृति की ओर आकर्षित होते जा रहे युवाओं में भारतीयता जगाने के पावन उद्देश्य के स्वामी श्रद्धानन्द के गुरुकुल की स्थापना की थी उसी संस्कृति के गौरवशाली अतीत को मूर्त रूप में विद्यार्थियों के समक्ष प्रस्तुत करने के उद्देश्य से स्वामी जी ने 1907-08 ई० में पुण्य भूमि में संग्रहालय की स्थापना की थी। लेकिन 1924 की भीषण बाढ़ ने जहां गुरुकुल को स्थान परिवर्तन के लिए बाध्य कर दिया वहीं संग्रहालय के समृद्ध संकलन को भारी क्षति पहुंचाई।

अब तक शिक्षा के साधन के रूप में संग्रहालय की उपयोगिता प्रमाणित हो चुकी थी। अतः इसी परिप्रेक्ष्य में मार्च 1950 में गुरुकुल की स्वर्ण जयन्ती के अवसर पर प्रसिद्ध इतिहासवेत्ता डॉ० वासुदेव शरण अग्रवाल ने अपने कर कमलों से परिसर में स्थित वेदमन्दिर के प्रथम तल का वर्तमान संग्रहालय का उद्घाटन किया।

इस समय संग्रहालय पुरातत्व और वैज्ञानिक शाखाओं में विभक्त हो गया और वैज्ञानिक शाखा आयुर्वेद

महाविद्यालय के प्रथम तल की नियोजित की गयी। इस समय पुरातत्व सग्रहालय मूर्तिविभाग, कलाविभाग, मुद्रा विभाग एवं विविध संकलन विभाग इन चार बीथिकाओं में नियोजित था। संग्रहालय के प्रथम निदेशक पंडित हरिदत्त वेदालंकार के अथक परिश्रम से संग्रहालय अभूतपूर्व ऊंचाई तक पहुंच गया।

1971 में कुलपति श्री रघुवीर सिंह शास्त्री के प्रेरणात्मक उत्साह से संग्रहालय के क्रियाकलापों में एक नवीन चेतना जागृत हुई। वर्ष 1972 में संग्रहालय को विश्वविद्यालय के प्राचीन भारतीय इतिहास संस्कृति एवं पुरातत्व विभाग का अंग बना दिया गया। इस विभाग के अध्यक्ष संग्रहालय के पदेन निदेशक नियुक्त किये गये। सन् 1981 में संग्रहालय अपने वर्तमान भवन में स्थानांतरित कर दिया गया। जिसकी आधार शिला 12 अप्रैल 1960 में उत्तर प्रदेश के तात्कालीन मुख्यमंत्री डॉ॰ सम्पूर्णानन्द ने रखी थी। 1982 में यह गुरुकुल प्रशासन के स्थान पर विश्वविद्यालय के अंग के रूप में विश्वविद्यालय अनुदान आयोग के परिक्षेत्र में शामिल कर लिया गया।

प्रतिवर्ष कुम्भनगरी हरिद्वार में गंगा स्नान हेतु आने वाले यात्रियों और पर्यटकों के लिए यह संग्रहालय स्वस्थ मनोरंजन एवं ज्ञानवर्धन का महत्वपूर्ण साधन बन चुका है। हरिद्वार की विविध शिक्षण संस्थायें अपने छात्रों को क्रियात्मक ज्ञान देने के लिए इस संग्रहालय का उपयोग कर रही है और आस-पास के अनेक प्रदेशों और जिलों से छात्र मण्डलियाँ अपनी सरस्वती यात्राओं में इसे देखने के लिए प्रतिवर्ष आया करती है। संग्रहालय से सम्बद्ध एक उच्च स्तरीय सन्दर्भ पुस्तकालय भी है जिसमें पुरातत्व कला, भारतीय इतिहास संस्कृति एवं प्राच्य विद्या से सम्बद्ध लगभग 1300 पुस्तकें संगृहीत हैं। जिससे शोध छात्र और विद्वान् लाभान्वित हो रहे हैं। संग्रहालय में पाण्डुलिपियों के परिरक्षण हेतु एक प्रयोगशाला भी है।

संग्रहालय में हरिदत्त वेदालंकार डॉ॰ राजगोपाल अय्यर, डॉ॰ गंगाराम गर्ग, डॉ॰ बी.सी. सिन्हा, डॉ॰ जबर सिंह सेंगर, डॉ॰ काशमीर सिंह भिण्डर, डॉ॰ वेदप्रकाश शास्त्री, डॉ॰ श्यामनाराण सिंह जैसे योग्य निदेशकों की एक समृद्ध परम्परा रही है जिनके सम्यक् मार्गदर्शन में संग्रहालय आज भी प्रगतिपथ पर अग्रसर हैं।

आद्य ऐतिहासिक कक्ष

इस कक्ष में भारतीय आद्य ऐतिहासिक संस्कृतियों की मृण्मूर्तियाँ, मृणपात्र, खिलौने एवं धातु उपकरणों का सम्पन्न संग्रह है। जो भारत सरकार के सौजन्य से और पुरातात्विक सर्वेक्षणों के दौरान, राखीगढ़ी, बनवाली, मितायल, मिर्जापुर, पौली, कालीबंगा, नसीरपुर एवं मण्डावर आदि से संगृहीत किये गये हैं।

सिन्धु घाटी की सभ्यता से सम्बन्धित सामग्री में मातृदेव की मूर्ति अपना विशिष्ट स्थान रखती है यद्यपि कला की दृष्टि से यह महत्वपूर्ण नहीं है। इसमें शरीर सौष्ठव का अभाव है, गले में हार है आंख और स्तन अलग से मिट्टी चिपका कर बनाये गये हैं। लेकिन यह उर्वरता की देवी के रूप में महत्वपूर्ण थी। खिलौनों में कुत्तें हाथी, सांड, बन्दर, बैलगाड़ी के नमूने उपासना की दृष्टि से उल्लेखनीय है।

सिन्धु संस्कृति के मृणपात्र दो प्रकार के है एक पर काले रंग में मछली के शल्क सदृश नमूना व पत्तियां चित्रित है। ये पात्र अति मुलायम मिट्टी व नियमित ताप में निर्मित है। इन पर चित्रकारी सावधानी से की गयी है। जार के ऊपरी हिस्से पर दो मोटे घेरे काले रंग में चित्रित है जिनके बीच त्रिकोण बने हुए है। इसके अतिरिक्त बाकी हिस्से पर आड़े तिरछे नमूने चित्रित हैं। दूसरे क़िस्म के पात्र लेपहीन और खुरदरापन लिये हुए है तथा अच्छी तरह पकायें नहीं पाये हैं। इन पात्रों पर गीलेपन में ही सम्भवतः सरकन्डे चाकू या कंघी आदि की सहायता से सादे चित्र अंकित किये गये है। कुछ छिद्रित पात्र भी मिले है ज़िनके आकार का अनुमान लगाना कठिन है। सम्भवतः ये फल आदि को रखने के लिये हवादार पात्र का काम

देते थे। इसके अतिरिक्त बीकर छड़े, ज़ार, पेंदीदार तश्तरी आदि भी देखने को मिलते है। यहाँ संगृहीत TERRACOT-ATACAKES का प्रयोजन अज्ञात है। इसके अतिरिक्त विभिन्न प्रकार के मनके तथा दो प्रकार की चूड़िया देखने को मिलती हैं। जिनमें एक तो चमकदार लेप से बनायी गई है और दूसरी पकी मिट्टी से। सम्भवत: ये क्रमश: उच्च और निम्न वर्ग द्वारा प्रयोग की जाती थी। इस काल की शंख, सीप, हाथी दांत की वस्तुएं और सिन्धु काल के विशिष्ट चार्ट के चाकू भी प्रदर्शित है।

यहाँ सैन्धव युग के मिट्टी के गोले संगृहीत हैं। जिसमें कुछ गोल तथा कुछ अण्डाकार है। आरम्भ में ये गुलेल के गल्ले के रूप में निरुपित किये जाते थे, परन्तु नवीन शोधों के अनुसार उनका प्रयोग पानी के बहाव को नियन्त्रित करने के लिए किया जाता था। इसके अतिरिक्त कुछ सैन्धव ताम्र और कांस्य के अस्त्र-शस्त्र भी उल्लेखनीय है। जिसमें बीच में उभार लिए बहुत लम्बा एवं दुधारी भाले का शीर्ष जो धातु खण्डों को पीट कर बनाया जाता था। यह सीरिया और फिलिस्तीन के भालों से तुलनीय है। एक विशिष्ट ताम्र जो कुछ तिरछा झुका हुआ है सैन्धव विशिष्टता को प्रकट करता है। ऐसा भाला अभी तक ईरान से प्राप्त हुआ है। प्रस्तर कालीन गुहा चित्रों में ऐसे भाले के दर्शन होते है।

इस वीथिका का अगला प्रमुख आकर्षण ताम्र निखात सभ्यता का संग्रह है जो गुरुकुल के एक पूर्व स्नातक द्वारा नसीरपुर से प्राप्त कर संग्रहालय को उपहार स्वरूप प्रदत्त है वैसे तो ताम्र निधियों की सर्वप्रथम खोज 1822 में हुई लेकिन 1905 में इसके सांगोपांग अध्ययन का श्रेय विन्सेन्ट स्मिथ को है। इन अस्त्रों की धातु निर्माण शैली और ओ.सी.पी. के साथ प्राप्त के आधार पर उनकी तिथि 2000 ई॰ पूर्व से 1500 ई॰ पूर्व के बीच निर्धारित की जाती है। इनमें एक बड़ी संख्या आयताकार, वर्गाकार और मुड़े किनारों वाली कुल्हाड़ियों की है जिन्हें लकड़ी या बांस को चीरकर उसमें फंसाया जाता था और तांत या किसी अन्य रस्सी से बांधकर प्रयोग किया जाता था।

दूसरी तरह की कुल्हाड़ियों में एक दो इंच चौड़ी और लगभग डेढ़ फीट लम्बी है जिनका उपयोग क्लीवर की तरह लकड़ी आदि काटने में किया जाता होगा। यह उपकरण 3000 ई॰ पू॰ के आस-पास चन्हूदड़ो और नील पुरास्थलों पर बहुत लोकप्रिय था।

एक अन्य अस्त्र दृष्टव्य है जिसका उपरी भाग भाले के समान और निचले हिस्से में मुडे हुए आरानुमा कांटे लगे है। इसे एस्किमों के भालों की समरूपता के आधार पर हारपून नाम दिया गया है, क्योंकि अधिकांश हारपूनों के निचले भाग में छिद्र है जिससे स्पष्ट है कि इन्हें बांस या धातु के डण्डे में बांधकर भाले के रूप में प्रयोग किया जाता था। ताम्रयुगीन अस्त्रों में सबसे अधिक ख्याति अर्जित करने वाली एण्टिना तलवारें है। जिनमें मध्य में उभार और दोनों तरफ धार है इनकी मूठ कीड़े की श्रृंगिका (एण्टिना) की तरह है जिसके कारण इन्हें यह नाम दिया गया।

उपरोक्त के अतिरिक्त गैरिक मृदृभाण्ड के ठीकरें भी संगृहीत है। इस पात्र परम्परा का प्रसार पंजाब से उत्तर प्रदेश तथा उत्तरी राजस्थान तक मिलता है। हरिद्वार में नसीरपुर एवं बहादराबाद से यह पात्र प्राप्त होते है। इन पात्र खण्डों को रगड़ने से गैरूआ रंग छूटता है और ये कमजोर है। एक अन्य पात्र परम्परा कृष्ण लोहित मृदभाण्डों के ठीकरों का भी संग्रह है। ये मृद्पात्र कटोरे और घड़े रहे होंगे। इस पर सामान्यत: काले घेरे चित्रित है।

एक अन्य पात्र परम्परा चित्रित घूसर मृदभाण्ड के अवशेष भी संगृहीत है। जैसा कि नाम से विदित है ये धूसरे या स्लेटी रंग के पात्र है पर काले रंग के चित्रण है। अहिच्छत्र (1940) के उत्खनन से सर्वप्रथम ज्ञात इन पात्रों और संस्कृति का काल 1500-1000 ई॰पू॰ माना जाता है, इन पर अंकित आकृतियों में

संकेन्द्रित वृत्त, अर्धवृत्त, तिरछी रेखाओं और सामूहिक बिन्दुओं की प्रमुखता है। महाभारत से सम्बद्ध कई स्थानों पर इन पात्रों की प्राप्ति के आधार पर इनके महाभारत कालीन होने की कल्पना की जाती है। इन पात्रों को एक विशेष प्रकार के कम तापमान के भट्‌टे में पकाया जाता था जिससे इनका रंग धूसर हो गया।

प्रस्तर प्रतिमा कक्ष

इस वीथिका में क्रय द्वारा, उपहार स्वरूप और कन्नौज, आमस्त्रोत, लालढांग (बिजनौर) पाण्डुस्त्रोत (गढ़वाल), झीबरहेडी, सुल्तानपुर, मायापुर, कांगड़ी ग्राम (हरिद्वार) से पुरातत्व सर्वेक्षण द्वारा प्राप्त लगभग चार सौ प्रतिमायें संगृहीत हैं। शुंगकाल से मध्यकाल तक का प्रतिनिधित्व करती ये प्रतिमायें हिन्दू, बौद्ध और जैन तीनों धर्मों से सम्बन्ध हैं। शुंगकालीन मथुरा कला का प्रतिनिधित्व करती वेदिका स्तम्भ पर अंकित शाल भंजिका मूर्ति आनुपातिक शरीर सौष्ठव एवं भावभंगिमा की दृष्टि से उल्लेखनीय है।

कुषाण कालीन अधिकतर मूर्तियाँ मथुरा की और लाल चित्तीदार प्रस्तर पर उत्कीर्ण है। इसमें एक मुखी शिवलिंग जिसमें लिंग के साथ जटाधारी शिव अंकित है। विशेष रूप से उल्लेखनीय है। इस तरह के एक मुखी शिवलिंग मुख्य रूप से गुप्तकाल की विशिष्टता है। इसके अतिरिक्त कुषाण कालीन मूर्तियों में अभयमुद्रा में बुद्ध, बुद्ध का महापरिनिर्वाण पद्‌म हस्तालक्ष्मी, महिषासुर मर्दिनी, कुबेर, सप्तमातृकाये और शुक क्रीडारत नारी की प्रतिमायें प्रमुख हैं। जिसमें आध्यात्मिकता की अभिव्यक्ति के साथ-साथ शारीरिक सौष्ठव और सन्तुलन से सौन्दर्यशास्त्र के उच्च आदर्शों की स्थापना की गयी है।

इसके बाद गुप्तकालीन प्रतिमायें आती है। पुनर्जागरण के इस युग में शिल्पियों के बाह्य सौन्दर्य के साथ आन्तरिक भावनाओं के प्रदर्शन पर अधिक बल दिया। इस काल की प्रतिमाओं में बुद्ध और बोधिसत्व के सिर, यक्ष प्रतिमा और कमलासना लक्ष्मी विशेष दर्शनीय है।

यहाँ संगृहीत सातवीं से दसवीं शताब्दी की प्रतिमाओं में बुद्ध प्रतिमा, मंजुश्री प्रतिमा, शेषशायी विष्णु, आलिंगन मुद्रा में शिवपार्वती और दुर्गा प्रतिमा विशेष स्थान रखती है। कन्नौज से प्राप्त धर्मचक्रप्रवर्तन मुद्रा में पद्‌मासन बुद्ध की प्रतिमा जिस पर "ये धर्म हेतु प्रभवा" बौद्ध मंत्र उत्कीर्ण है, विशेष रूप से उल्लेखनीय है। साथ ही शैव और वैष्णव धर्मों की गुप्त काल से प्रारम्भ धर्म समन्वय की धारा को व्यक्त करती "हरिहर" प्रतिमा जिसके अर्धभाग में किरीटधारी विष्णु और अर्धभाग में जटाजूट धारी शिव है विशेष रूप से आकर्षित करती है। इन कला कृतियों मे चेहरे की बनावट, केशविन्यास, होठों की रचनायें और उन पर अधखिली मुस्कान आकर्षक हैं।

इन प्रतिमाओं के अतिरिक्त हरिद्वार के समीपवर्ती क्षेत्रों से संगृहीत प्रतिमाओं से तत्कालीन रीतिरिवाज, धर्म, विश्वास और विचारों का ज्ञान होता है। इनसे यह भी स्पष्ट होता है कि यहाँ समय-समय पर बौद्धों जैनों एवं हिन्दुओं का प्रभाव था।

कांगड़ी ग्राम एवं आमस्त्रोत से पांच जैन प्रतिमायें प्राप्त हुई है। इनमें शीर्षहीन महावीर, जैनतीर्थकरों को प्रदर्शित करता पट्‌ट और शिखर के समान सर्वतोभद्रिका मूर्ति जिसके चारों ओर ताकों में तीर्थंकर विराजमान है और आसन के नीचे उसके वाहन उत्कीर्ण है, संग्रहालय की महत्वपूर्ण उपलब्धि हैं। आस-पास के क्षेत्रों से हिन्दू धर्म से सम्बद्ध प्रतिमायें प्रचुर मात्रा में संगृहीत की गयी है। जिसमें ललितासनस्थ अग्नि देव जिसके सिर के दोनों ओर से अग्नि ज्वालायें निकल रही है, सिंहारूढ़ दुर्गा, ललितासनस्थ ईशान, 10 वीं शताब्दी की सर्पविष्ठित शिव प्रतिमा जिनके गले में सर्वमाला, सर्प केयूर, सर्पभुजबन्द सर्वत्र सर्प का लक्षण अतिभव्य और अलौकिक है। भारतीय शिल्प में शिव का यह अंकन विरल ही मिलता है। कांगड़ी ग्राम से प्राप्त सप्तमातृकाओं की खण्डित प्रतिमा पूर्व मध्ययुगीन शिल्प की बहुत सुन्दर कृति है। यद्यपि

सप्तमातृकाओं की कल्पना वैदिक है परन्तु इसका प्रथम मूर्तिकरण कुषाण काल में होता है। इस प्रतिमा में केवल दो ही मातृकाएँ विद्यमान है तीसरी के हाथ में गदा तो वैष्णवी का सूचक है, इससे पूर्व की मातृका अपने वाहन मोर के आधार पर कौमारी है तो प्रथम देवी की गोद में शिशु की उपस्थिति माहेश्वरी की द्योतक है। यहाँ कुबेर की बहु संख्यक प्रतिमायें है जिसमें कांगड़ी ग्राम से प्राप्त आसनस्थ कुबेर प्रतिमा जिनके दाहिने हाथ में सुरापात्र है और बायें हाथ से बाये, खडी सुराघट लिये रमणी को आकर्षित करना चाहते हैं वह स्पष्टतया वह आभंग मुद्रा में संकोचवश बायजंघा की ओर झुकी है यह भाव भारतीय मूर्ति शिल्प में असाधारण है। इनके अरिरिक्त महिषासुर मर्दिनी की प्रतिमायें विशेष रूप से आकर्षण का केन्द्र है।

लेकिन अपनी कुछ बूंद मात्र से हरिद्वार को कुम्भ नगरी की महत्ता प्रदान कर देने वाले अमृतमय कुम्भ की उत्पत्ति के मिथक को प्रदर्शित करने वाला समुद्रमंथन फलक निःसन्देह इस संग्रहालय की अनुपम धरोहर है। झीबरहेड़ी (हरिद्वार) से प्राप्त और लन्दन के भारत महोत्सव (1982) में प्रदर्शित इस फलक पर चाक्षुस नामक छठे मन्वंतर में घटित घटना का अंकन है। जिसके अनुसार दुर्वासा द्वारा श्रीहीनता के शाप से मुक्त होने के लिए भगवान् विष्णु के सुझाव पर देवताओं के कच्छपावतार विष्णु को मंदराचल पर्वत की मथनी का आधार बनाकर और वासुकि नाग की नेती बनाकर अमृत और 13 अन्य रत्नों को प्राप्त करने के लिए समुद्र का मंथन किया। इस फलक से वासुकि की पूंछ की तरफ देवता और फन की तरफ असुरों का अंकन हुआ है जो काफी सजीव है।

मृणमूर्ति संग्रह

लोक कला के रूप में मृण्मूर्तियों का प्रचलन प्राचीन काल से चला आ रहा है। इसके प्राचीनतम नमूने आज से लगभग 4-5 हजार वर्ष पूर्व के माने जाते हैं। यहाँ लगभग 200 मृण्मूर्तियाँ संगृहीत है जो मौर्य काल से लेकर गुप्तकाल तक का प्रतिनिधित्व करती है। जिनका संग्रह प्रमुख रूप से मथुरा, कौशाम्बी विदिशा, आवला (बरेली), अजमेरीपुर (हरिद्वार) और सरसावा (सहारनपुर) से किया गया है।

मौर्यकालीन मूर्तियाँ काली-भूरी मिट्टी से हाथ द्वारा डौलिया कर बनायी गयी है। इसमें मातृदेवी की मूर्तियाँ विशेष उल्लेखनीय है। गले में पड़ी माला और शरीर के अवयव देखकर स्पष्ट प्रतीत होता है कि ये अलग से बनाकर चिपकाये गये है।

शुंगयुग में मृण्मूर्तिकला का सर्वांगीण विकास हुआ अब हाथ से बनी आकृतियों के स्थान पर साचों द्वारा आकृतियाँ ढ़ाली जाने लगी और विषय वस्तु के निर्देशन में भी विविधता आयी। इस काल की मूर्तियों में मिट्टी की गाड़ियाँ, सुन्दर केश विन्यास से युक्त पुरूष मूर्ति तथा लहरियादार धोती और अठलड़ी माला पहने स्त्री प्रतिमा विशेष रूप से उल्लेखनीय है। मूर्तियों का केश-विन्यास, शारीरिक अनुपात अलंकरण और भाव-भंगिमा दर्शकों को आकर्षित किये बिना नहीं रहती।

कुषाण काल में सम्भवतः प्रस्तर शिल्प कला का विकास होने के कारण मृण्मूर्ति कला का पतन होने लगा और पुनः मृण्मूर्तियाँ हाथ से डौलियाकार बनायी जाने लगी और सिर को अलग से बनाकर जोड़ दिया जाता था। इनमें पंखदार पगड़ी धारण किये पुरुष मस्तक दोनों हाथ जोड़े पूजा भाव में पुरुष, लाल मिट्टी से निर्मित घुंघराले केश और गले में माला युक्त पुरुष मूर्ति, त्रिशूल धारिणी देवी और माता शिशु की मूर्तियाँ दर्शकों को आकर्षित करती हैं।

गुप्त कालीन मृण्मूर्तियाँ सौन्दर्य की दृष्टि से अधिक सुडौल और आकर्षक है। सांचों में ढली इन कृतियों में कला की सजीवता के दर्शन होते है। इस काल की मूर्तियों में दम्पति प्रतिमा विशेष रूप से

उल्लेखनीय है जिसमें पुरुष बायें हाथ से स्त्री का आलिंगन कर रहा है। स्त्री कानों में बड़े कुण्डल, गले में कण्ठाहार, सिर पर जूडा और हाथों में कड़े पहने है। इसमें सौन्दर्य, रूप सज्जा, प्रेमासक्ति और दाम्पत्य भाव स्पष्ट रूप से दिखाई पड़ता है। इसके अतिरिक्त स्त्री के शिरों भाग आवक्ष पुरुष प्रतिमा और झरोखे से झांकती नारी की मूर्तियाँ तथा शिव पर्वती की प्रतिमायें विशेष रूप से उल्लेखनीय है।

मुद्रा कक्ष

विनिमय के सुविधाजनक उपकरण के रूप में उद्भूत सिक्कों का आविष्कार चाहे जब हुआ हो और चाहे जिन लोगों ने किया हो लेकिन वे अनजाने में ही ऐसा उपकरण प्रस्तुत कर गये जिसने अपने समय में उद्देश्यों की पूर्ति तो की ही साथ ही साथ आज भी वे अपने काल के साक्ष्य बनकर हमारे लिये इतिहास निरुपण में ताने-बाने का काम करते है। समय परिवर्तन के साथ ये निष्क, शतमान, दीनार, मोहर और रूपये के नाम से पुकारे गये। वर्तमान समय में यहाँ क्रय, उपहार स्वरूप या पुरातात्विक सर्वेक्षण से प्राप्त लगभग 4000 से अधिक संगृहीत है जो चार उपविभागों में प्राचीन, मध्यकालीन, आधुनिक और विदेशी में विभक्त है।

इस संकलन में सर्वप्रथम वे मुद्रायें उल्लेखनीय है जो भारत की प्राचीनतम मुद्रायें मानी जाती हैं पाणिनि की अष्टाध्यायी और कौटिल्य के अर्थशास्त्र से स्पष्ट है कि इन्हें समुचित तौल का रूप देने के लिए अनियमित आकारों में काट लिया जाता था, और लांक्षण युक्त बिम्ब ठोककरमुद्रा का रूप दे दिया जाता या निर्माण की इस तकनीकी के कारण उन्हें विद्वानों ने आहत मुद्रायें (*) नाम दिया। इनमें पाये लांक्षनों की संख्या बहुत बड़ी है जिनमें पर्वत, वृक्ष, पक्षी, कीड़े, मनुष्य, ज्यामिति एवं धार्मिक आकृतियां सम्मिलित है। इसके अतिरिक्त यहाँ पर पंचाल, शूरसेन, सौराष्ट्र, कौशल, चेदि, यौधेय आदि जनपदों की मुद्रायें भी बड़ी संख्या में संगृहीत हैं।

भारत में इण्डोग्रीक, सीथियन, पार्थियन और कुषाणों के आगमन से मुद्रा निर्माण कला में एक क्रातिकारी परिवर्तन आया। अतः मुद्रायें ढाली जाने लगी जिन पर एक और राजा की आकृति और लेख और दूसरी ओर देवताओं को उत्कीर्ण किया जाने लगा। संग्रहालय में इस तरह के विमकैडफिसेस, कनिष्क और हुविष्क आदि शासकों के सिक्के संगृहीत हैं। इसके अतिरिक्त शक, पहलव, इण्डोग्रीक शासकों के अनेक सिक्के संकलित है। जिन पर ग्रीक और खरोष्ठी लिपि में लेख अंकित हैं। इसके बाद गुप्तकालीन मुद्रायें आती है जिसमें चन्द्रगुप्त विक्रमादित्य की धनुर्धर शैली की स्वर्ण मुद्रा (दीनार) और स्कन्दगुप्त की धनुर्धर शैली की ताम्रमुद्रा भी दर्शनीय है। इसके अतिरिक्त गुप्तों की रजत और ताम्र मुद्राओं का अच्छा संकलन है, जिसमें चन्द्रगुप्त द्वारा पश्चिमी क्षेत्रों को पराजित करने के उपलक्ष्य में जारी किये गये सिक्के विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। पूर्व मध्यकालीन मुद्राओं में सामन्त देव और प्रतिहार भोज की मुद्रायें महत्वपूर्ण है।

मध्यकालीन मुद्राओं के संग्रह में अरबी भाषा में एक ओर राजा का नाम तो दूसरी ओर टकसाल का नाम अंकों और शब्दों में तिथियाँ और कलमा से अंकित मुद्रायें मिलती है। इस वर्ग में अल्तशमश, बंनबन, अलाउद्दीन खिलजी, ग्यासुद्दीन, तुगलक, मुहम्मद बिनतुगलक, फिरोजशाह, मुबारकशाह, बांहलोल लोदी, शेरशाह, अकबर, जहांगीर की मुद्रायें विशेष रूप से उल्लेखनीय है।

उपरोक्त भारतीय मुद्राओं के अतिरिक्त विश्व की मुद्रा कला की विविधता को प्रदर्शित करते लगभग 40 देशों की धात्विक मुद्रायें और नोट यहाँ संकलित है। जिसमें ग्रेट ब्रिटेन आस्ट्रेलिया, नीदरलैण्ड, साइप्रस, ईरान, अफगानिस्तान, हंगरी पुर्तगाल, डेनमार्क आदि प्रमुख हैं।

जब द्वितीय विश्व युद्ध में जापान ने वर्मा और पूर्वी भारत पर अधिकार कर लिया था तो उसने रुपये के नोट जारी किये जो यहाँ संगृहीत है। साथ ही साथ द्वितीय विश्व युद्ध के दौरान रेजगारी की कमी होने पर सरकार द्वारा एक रुपये के कागजी कूपन जारी किये गये, ऐतिहासिक घटना को प्रदर्शित करता यह संकलन अद्वितीय है।

पाण्डुलिपि कक्ष

मनुष्य प्राचीन काल से ही अपने विचारों को अर्थशास्त्र, नक्षत्र विज्ञान, आयुर्वेद, इतिहास, दर्शन, धर्म, विज्ञान और समाज शास्त्रों के रूप में संकलित करता रहा है। लेकिन समय के साथ संकलन के माध्यम परिवर्तित होते गये। कभी यह माध्यम प्रस्तर एवं मिट्टी की पट्टिकायें बनी तो कभी चमड़ा, पैपिरस, ताड़पत्र और भोजपत्र बने। लेकिन कालान्तर में कागज ने अन्य की अपेक्षा अधिक प्रतिरोधक क्षमता होने के कारण उन्हें लुप्त कर दिया। साढ़े तीन सौ से अधिक पाण्डुलिपियों को संकलित करने वाला संग्रहालय का पाण्डुलिपि कक्ष यदि एक तरफ ऊपर वर्णित विभिन्न लेखन माध्यमों से परिचय कराता है तो प्राचीन भाषा और लिपियों के अध्ययन की दृष्टि से भी ज्ञानवर्धक और मनोरंजक है।

जातकों में "पर्ण" या "पण्ण" नाम से वर्णित ताड़पत्र सम्भवतः प्राचीनतम लेखन सामग्री था जो कश्मीर और पंजाब को छोड़कर सारे भारत और मध्य एशिया तक प्रयुक्त होता था जिसका प्राचीनतम लेख द्वितीय शताब्दी ई० का मिलता है। यहाँ गौरांग महाप्रभु के शिष्य द्वारा ताड़पत्र पर उड़ीया भाषा में लिखित "तूलवीणा" नामक ग्रन्थ की हस्तलिखित पाण्डुलिपि सुरक्षित है। इसी प्रकार कर्टियस (चतुर्थ शती. ई०पू०) और अलबरूनी द्वारा वर्णित भूर्ज नामक वृक्ष की भीतरी छाल से निर्मित भोजपत्र जो कश्मीर और पंजाब में प्रयुक्त होता था, के कई नमूने यहाँ संगृहीत है।

यहाँ संगृहीत हिन्दू धर्म के पवित्र ग्रन्थों में रामायण की कई प्रतियां सटीक तथा फारसी में लिखित है। इसमें 9'' × 8'' के आकार की पंडित विश्वनाथ ईसापुर वाले द्वारा लिखित अयोध्या काण्ड विशेष रूप से उल्लेखनीय है। साथ ही महाभारत के कई हस्तलिखित संस्करण संकलित है। अकबर के काल में अबुल फज़ल के निरीक्षण में महाभारत का "रज्जनामा" नाम से फारसी में अनुवाद कराया गया था उसकी एक प्रति भी यहाँ संगृहीत है।

श्रीमद्भगवत् गीता के 19वीं शतीं के अनेक संस्करण यहाँ प्रदर्शित है जिसमें गुरुमुखी लिपि में लिखित गीता, अर्जुन गीता, विष्णु सहस्र नाम, चित्रित गीता जो सम्बन्धित चित्रों में अंकित है तथा पांच संयुक्त पुस्तकों वाली पंचरत्नी गीता महत्वपूर्ण हैं।

संग्रहालय में बंगला लिपि में लिखित पाण्डुलिपियों का अच्छा संग्रह है जिसमें 12'' × 4.5'' वाला देवी स्त्रोत तथा मनुस्मृति विशेष रूप से उल्लेखनीय है। एक महत्वपूर्ण संग्रह शारदा लिपि में लिखित प्रार्थना पुस्तक है।

एक अन्य उल्लेखनीय संकलन अनेक लुभावनें चित्रों से युक्त श्रीमद् भागवत् पुराण है जो वि.सं. 1942 में श्री गंगा प्रसाद द्वारा रचित स्त्रोत रत्नाकर पर आधारित है। साथ ही साथ लगभग 200 वर्ष पुरानी अवधी भाषा और देवनागरी में लिखित "रामचन्द्रिका" बरबस ही आकर्षित कर लेती है। सिक्ख धर्म से सम्बद्ध पाण्डुलिपियों में गुरुग्रन्थ साहिब की 18 वीं शती की हस्तलिखित पाण्डुलिपि और गुरु गोविन्द सिंह द्वारा रचित "दशम ग्रन्थ" की 1845 ई० में लिखी गई हस्तलिखित प्रतिकृति विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं।

मुस्लिम धर्म से सम्बद्ध पुस्तकों में कुरान शरीफ की पाण्डुलिपि जिसमें औरंगजेब के भी हस्तलेख

है मुख्य आकर्षण है इसके अतिरिक्त हजरत उमर द्वारा लिखित मुहम्मद साहब के तबरूक के शीर्षक वाली पाण्डुलिपि और शेखसादी द्वारा रचित गुलिस्ता की फारसी में लिखित प्रतियाँ संकलित है।

इस सबके अतिरिक्त 16 वीं शताब्दी की तिब्बती पाण्डुलिपियाँ विशेष रूप से महत्वपूर्ण है। इनमें उत्तम श्वेत कागज का अंकित तंत्र विद्या का ग्रंथ और 29"× 7" आकार के उत्तम नीले कागज का पीताभ श्वेत स्याही द्वारा अंकित पाण्डुलिपि संग्रहालय का एक प्रमुख आकर्षण केन्द्र है।

इस सबके अतिरिक्त एक अद्वितीय संग्रह स्वामी दयानन्द द्वारा रचित एवं स्वयं संशोधित "सत्यार्थ प्रकाश" के प्रथम संस्करण की पाण्डुलिपिं है जो आज भी आर्यजनों की श्रद्धा का केन्द्र बनी हुई है।

चित्रकला कक्ष

संग्रहालय के केन्द्रीय कक्ष में नियोजित चित्रकला कक्ष दर्शकों को सहज ही आकर्षित करता है। जिसमें विभिन्न भारतीय चित्रकला शैलियों के चित्रों का समृद्ध संकलन है।

हरिद्वार की प्राचीनतम और पौराणिक नगरी कनखल की हवेलियों पर 18-10 वीं शताब्दियों में भगवान राम, कृष्ण, सीता, शेषशायी विष्णु, शिवपार्वती, शुक क्रीड़ा करती स्त्री, होलिकोत्सव, गुरुनानक और अनेक विषयों से सम्बद्ध चित्र बने है जिनमें कांगड़ा मुगल और यूरोपीय शैलियों का प्रभाव स्पष्ट रूप से परिलक्षित होता है। इनको भावी पीढ़ी के लिए परिरक्षित करने हेतु संग्रहालय ने इसकी प्रति कृतियां तैयार करवाई जिनका एक अच्छा संग्रह यहाँ सुरक्षित है।

दूसरी महत्वपूर्ण श्रृंखला कांगड़ा शैली के लघुचित्रों की है। जो राजा संसारचन्द्र (1775-1823) के काल में विशेष रूप से विख्यात हुई। इस शैली के यहाँ संगृहीत चित्रों में चीरहरण लीला, कालियादमन, लक्ष्मी का गजों द्वारा अभिषेक और वासुदेव का कृष्ण सहित गोकुल आगमन प्रमुख है। कांगड़ा शैली के चित्रों में प्राकृतिक दृश्य, काव्यात्मक भावना और आकर्षण से ओत-प्रोत है। प्रकृति का चित्रण काव्यात्मक प्रतीकों द्वारा पात्रों की मनोदशा को पूर्ण रूप से व्यक्त करता है, जैसे खिलते फूल प्रेमियों के प्रेम के प्रस्फुरण के रूप में दिखाई देते हैं तो पेड़ों की सूखी डालियाँ विरह वेदना को प्रदर्शित करती है। रंगो की यह चमक और अद्वितीय स्पष्टता अन्यत्र नहीं दिखाई देती है।

अगला और प्रमुख आकर्षण राजस्थानी चित्रकला के लघुचित्रों का है। राजस्थान भौगोलिक पराकाष्ठाओं और रंगों की विषमताओं की भूमि है क्या कला, क्या स्थापत्य क्या वेशभूषा और क्या रीति रिवाज सभी में रंगों की महत्वपूर्ण भूमिका है। रंग उसकी जीवन शक्ति के प्रतीक है। राजस्थानी चित्रकला में रेखाओं की जो सशक्तता है और चकाचौंध कर देने वाले रगों की जो छटा सर्वत्र बिखरी दिखाई देती है वे मिलकर राजस्थानी जीवन की उर्जास्वता के लिए एक प्रभावशाली व्यतिरेकी परिदृश्य उपस्थित कर देती है। यहाँ इसकी दो शैलियों के लघु चित्र प्रदर्शित है।

पहली शैली नाथ द्वारा की है जो मेवाड़ शैली में एक थी। महाराणा राज सिंह के द्वारा श्रीनाथ की प्रतिमा को स्थापित करने के पश्चात् नाथद्वारा 17-18 वीं शताब्दियों में पुष्टिमार्गी बल्लभ सम्प्रदाय के वैष्णवों की प्रधान गद्दी बना। यहाँ के अधिकांश चित्र श्रीनाथ जी और वैष्णव धर्म से सम्बद्ध है जो वैष्णव यात्रियों और बल्लभाचार्य के अनुयायियों में बांटे जाते थे। यहाँ इस शैली के संग्रह के शेषशायी विष्णु, श्री कृष्ण राधा रामलीला और श्रीनाथ जी आदि के चित्र प्रमुख हैं।

राजस्थानी चित्रकला की दूसरी शैली जिसके चित्र यहाँ संगृहीत है, जयपुर अजमेर शैली कहलाती हें जिसका जन्म राजा मानसिंह (1589-1614) के काल में ही हो गया था। लेकिन इसका स्वर्ण युग सवाई प्रताप सिंह के काल में आया, जिसने 50 से अधिक कलाकांरों वाली विशाल चित्रशाला बनवायी। इसमें

बारहमासा, रागमाला एवं रति लीला और कृष्ण लीला सम्बन्धी चित्रों के बहुतायत रहीं। इन चित्रों की रचना बड़ी परिष्कृत और चटकदार रंग योजना वाली है। जिसमें हरे, पीले, गुलाबी बादामी और लाल के साथ सुनहरे रंगों का प्रयोग प्रचुरता से हुआ है।

यहाँ इस शैली के रागमाला के चित्रों में साहित्य, संगीत और चित्रण का घना सम्बन्ध आता है। इसमें राग और रागनियाँ अपने प्रवाहमान अवयवों में मुखरित हुई है। विभिन्न राग और रागनियाँ कहीं अलग और कहीं ग्रन्थ चित्रण में संयुक्त रूप से अंकित हुई है। राग और रागनियों के लिये यथेष्ट वातावरण का अंकन इन चित्रों की विशेषता है। बहुत से चित्रों पर विषय को ध्यान में रखते हुए रीतिकालीन कवियों से सम्बद्ध पदों का उल्लेख है और कई चित्रों में रागों के लक्षण लिखे है। साथ ही राग रागनियों के अन्य गुण किन्हीं-किन्हीं विविध अवयवों और प्रतीकों द्वारा इन चित्रों में उभरे है।

राजस्थानी शैली के लघुचित्रों की दूसरी महत्वपूर्ण श्रृंखला "बारहमासा" से सम्बद्ध चित्रों की है बारहमासा के वर्णन में षड्ऋतुओं की पृष्ठभूमि में नायिकाओं का भावोद्दीपन अधिक सरल सुलभ और सजीव हो गया है। उसके अनुसार फाल्गुन चैत्रमास की पुष्पित और पल्लवित प्रकृति बसन्त शोभा के केन्द्रित हो जाती है। कचनार, सेमल, टेसू, ढ़ाक, ढ़ाक के पुष्पित वृक्षों, सरसों के खेत और मंजरी से लदे रसाल एक अनुपम सौन्दर्य प्रदर्शित करते है। बसन्त के पश्चात् वैशाख, ज्येष्ठ, आषाढ़ मास के अन्तर्गत ग्रीष्म ऋतु आती है। गुलमुहर में लाल रंग की कलियाँ प्रस्फुटित होती है। इस समय नायिका वस्त्राभूषणों से सुसज्जित होकर अपने प्रेमी से वार्ता करती है।

श्रावण तथा भादों मास के वर्षा ऋतु की अनुपम प्राकृतिक छोटा दृष्टिगोचार होती है। श्यामधनी की घोर गर्जना, चपला की चमक तथा कृष्ण पक्ष की अंधकार पूर्ण रात्रि भयानक बन जाती है। विरहणी नायिकायें अपने प्रीतम के वियोग में तड़फती है तो संयोगावस्था में यही वर्षा आनन्ददायक बन जाती है।

शरद ऋतु में क्वार और कार्तिक मासों में ठण्ड हो जाती है, कार्तिक की चांदनी में नायिकायें अपने प्रीतम को खोजने के लिए बाहर निकलती है। आकाश संध्या के समय स्वर्णिम लालसा से जगमग उठता है। हेमन्त का आगमन मार्ग शीर्ष में होता है। इस समय ठण्ड बढ़ने लगती है। शिशिर ऋतु पौष और माघ में होती है जिसमें शीत उच्चतम सीमा प्राप्त करती है। यहाँ के लघु चित्र संग्रह में बारहमासों का उपरोक्त वर्णन अत्यधिक सजीव रूप से प्रदर्शित होता है।

अष्ट धातु प्रतिमा संग्रह

यहाँ हिन्दू एवं बौद्ध धर्म से सम्बद्ध और प्राकृतिक तथा काल्पनिक पशु-पक्षियों की अष्ट धातु मूर्तियों का छोटा किन्तु आकर्षणक संग्रह है। इस संग्रह की अधिकांश मूर्तियां दिल्ली में मेसर्स शांति विजय कम्पनी द्वारा उपहार स्वरूप प्रदत्त है और दक्षिणी भारतीय कला का प्रतिनिधित्व करती है। बौद्ध धर्म से सम्बन्ध मूर्तियों में बुद्ध की ध्यान मुद्रा, अभय मुद्रा, भूमि स्पर्श मुद्रा और बौद्धों की तान्त्रिक देवी प्रतिमा प्रमुख है।

हिन्दू धर्म से सम्बद्ध प्रतिमाओं में भक्त हनुमान, विष्णु मकरवाहिनी गंगा, नृसिंह अवतार, भू-देवी, श्रीदेवी, पद्मपाणि लक्ष्मी, तथा कृष्ण की बाल लीलाओं से सम्बद्ध कई प्रतिमायें यहाँ संगृहीत है। इसके अतिरिक्त पूजा पात्र, शंख और पीठिका आदि भी दर्शनीय हैं।

पशु-पक्षी आकृतियों में जहां प्राकृतिक पशु-पक्षियों, बारहसिंहा, सिंह जिसकी पुष्ट मांसपेशियाँ स्पष्ट रूप से दिखती है, गाय-बछड़ा, गरूड़, मोर, मयूरी, नन्दी, मुंह में मृग पकड़े श्वान प्रतिमायें आकर्षक हैं। वहीं काल्पनिक पशुओं जैसे सपक्ष सिंह और सपक्ष अश्व आदि भी ध्यान आकर्षित करने में सक्षम हैं।

अस्त्र-शस्त्र संग्रह

प्रकृति के भीषण प्रहारों से आत्मरक्षा हेतु मानव का संघर्ष ही उसकी प्रगति की कहानी है। नेतृत्व की परिभाषा के अनुसार तो जो शस्त्रों का विधिवत् प्रयोग कर सका वहीं वस्तुतः मानव है। प्रारम्भिक मनुष्य प्रकृति प्रदत्त नाखून, मुष्टिका एवं दांत द्वारा ही काम चलाया करता था। इसी क्रम में हड्डी, हाथी दांत, लकड़ी, सींग, बांस आदि का प्रयोग किया गया। और प्रस्तरखण्डों को बांस में लगाकर तीर के रूप में प्रयुक्त किया गया। शिकार की प्रकृति ने धनुष को आविष्कृत किया। यह सम्भवतः मानव निर्मित प्रथम मशीनरी थी। धीरे-धीरे अस्त्र परिष्कृत होते गये और मानव तलवार भाले, बन्दूक, मशीनगन तोप आदि से विकास करता हुआ अब न्यूट्रान बम तक पहुँच गया।

अस्त्र-शस्त्रों के विकास की इसी कहानी को मूर्त रूप देती यह वीथिका है। जिसमें सबसे पहले धनुषों एवं विभिन्न प्रकार के वाणाग्रों को प्रदर्शित किया गया है। धनुषों एवं धातुकीय बाणों का सर्वप्रथम प्रयोग सिंधु सभ्यता के काल में ही मिलता है। इसके अतिरिक्त फर्सा, त्रिशूल कई प्रकार की तलवारें, छुरियाँ, कटारें, खुखरी आदि का भी संग्रह है।

आइने-अकबरी में वर्णित एक विशेष प्रकार की मध्यकालीन कटार जिसे "जमघर" कहा जाता है, दर्शनीय है। इसका फलक दोधारी है और अंग्रेजी के एच आकार की इसकी मूठ प्रयोक्ता के हाथ की हिफाजत करती थी। इसके फलक पर भी चित्र बनाये जाते थे। इसके अतिरिक्त युद्ध के बिगुल, शिरस्त्राण, ढाल और हाथों के कवच भी दर्शनीय है।

ऊटों की पीठ से चलाई जाने वाली 17वीं शताब्दी की एक भारी बन्दूक जिसे "जजैल" कहा जाता है, विशेष रूप से उल्लेखनीय है। इसमें 1 फुट लम्बा लोहे का नुकीला स्टैण्ड लगा है। जिसे जमीन पर टिका कर जजैल को ऊपर नीचे बायें घुमाया जा सकता था। कभी-कभी नाल का मुंह कुछ चौड़ा होता था तो उसे "छोरदहन" कहा जाता था।

19वीं शताब्दी की टोपीदार बन्दूकों से लेकर आधुनिक हल्की मशीनगनों तक बन्दूकों का विकास प्रदर्शित करने वाला संग्रह भी दर्शनीय है। भारत में टोपीदार बन्दूकों का प्रचलन सर्वप्रथम 1825 में महाराजा रणजीत सिंह की सेना में प्रारम्भ हुआ। इसमें और पूर्व प्रचलित तोड़ीदार और चकमक बन्दूकों में मुख्य भेद यह था कि इसमें नाल के पिछले भाग में ऊपर उठे छेद पर बारूद युक्त टोपी रखी जाती थी जिस पर घोड़े द्वारा चोट होने से बन्दूक चल जाती थी। जबकि उनमें क्रमशः अग्नि पलीते और चमक का प्रयोग बन्दूक दागने के लिये किया जाता था। बन्दूकों के विकास की इसी श्रृंखला में कुछ परिष्कृत छोटी आकार की बन्दूकें, स्टेनगन, 18 वीं शताब्दी की बड़ी और 19 वीं शताब्दी की छोटी मशीनगनें तथा 1940 ई० की लाईट मशीनगन तथा लास एजेलन्स में बनी जी-10 हैंडगन प्रदर्शित है।

इस वीथिका में कुछ पिस्तौलें भी प्रदर्शित है जिनका भारत में पहली बार प्रारम्भ 18 वीं शती में हुआ। आरम्भ में अपेक्षाकृत महंगी एवं दुर्लभ होने के कारण इन्हें उच्चाधिकारी ही धारण करते थे।

ऐतिहासिक दृष्टि से एक महत्वपूर्ण संग्रह प्रथम विश्व युद्ध (1914) में मद्रास तट पर जर्मन युद्धपोत एमडन द्वारा गोलाबारी में प्रयुक्त तोपें हैं।

लिपि कक्ष

मानव समाज को नयी दिशा देने वाले अविष्कारों में लेखनकला की उपयोगिता किसी से कम नहीं है। इसी के कारण ही मानव के लिए यह सम्भव हो सका है कि वह ज्ञान का सर्जन संरक्षण एवं सातत्य बनाये रखे। लेकिन कला का आविष्कार, उसमें सुधार एवं विकास की कक्षा यदि अत्यन्त रोचक है तो

उससे कम रोमांचक नहीं है अनेक भूलींबिसरी लिपियों को पहचानने एवं समझने का आधुनिक विद्वानों का प्रयास।

लेखन की दिशा में मनीषियों के दो सबसे महत्वपूर्ण कार्य ब्राह्मी लिपि और वर्तमान शैली के अंकों की कल्पना है। इन्हीं दो विषयों और उसमें समय-समय पर आये रूपांतरों को प्रदर्शित करती यह वीथिका हैं।

यहाँ संगृहीत दो लिपि पत्र छठी शताब्दी ई॰ तक भारत में प्रचलित प्राचीन अंक शैली जिसमें दहाई सैंकड़ा हजार हेतु अलग-अलग चिन्ह थे को, और 595 ई॰ के मूर्जर गुर्जर वंशी लेख से सर्वप्रथम प्रारम्भ शून्य युक्त नवीन शैली के अंकों को प्रदर्शित करते है।

अशोक के अभिलेख प्राचीनतम भारतीय अभिलेख माने जाते है जो ब्राह्मी और खरोष्ठी ग्रीक एवं अरमेश्क लिपियों में लिखे गए। इसके ब्राह्मी और खरोष्ठी लेख तथा उनके बाद ब्राह्मी के विकास को चौथी शताब्दी तक प्रदर्शित करने के लिए सात वाहनों कुषाणों और शकक्षत्रपों के नासिक, मथुरा, पभोसा, भट्टिप्रोलु, अमरावती अग्गयपेट और जूनागढ़ लेखों को प्रदर्शित किया गया हैं।

चौथी शताब्दी के बाद ब्राह्मी लेखन का प्रवाह स्पष्टतः उत्तरी और दक्षिणी दो शैलियों में विभक्त हो जाता है। इन्हीं दो शैलियों से उर्दू को छोड़कर लगभग समस्त आधुनिक भारतीय लिपियाँ विकसित हुई हैं। इस विकास को प्रदर्शित करते कई लिपि पत्र है।

एक लिपि पत्र ब्राह्मी से कश्मीरी शारदा लिपि के विकास को दर्शाता है जो 10 वीं शताब्दी के आस-पास कश्मीर में प्रचलित हुई। कश्मीर को शारदा देवी का क्षेत्र मानने से इसका यह नाम पड़ा। इसी तरह पंजाब में मात्राहीन कामचलाऊ, लंडा लिपि का प्रचलन था, गुरु अंगद देव ने इसे ही गुरु ग्रन्थ साहब लिखने के लिए मात्रायुक्त बनाकर गुरुमुखी के रूप में विकसित किया। गुरुओं से सम्बद्ध होने के कारण यह गुरुमुखी कहलाई इसका एक लिपि पत्र प्रदर्शित है। कुछ लिपि पत्र नागरी से कैथी, बंगला और मैथिली लिपियों का विकास प्रदर्शित करते हैं। जो क्रमशः मगध, बंगाल और मिथिला में प्रचलित थी।

कुछ अन्य लिपि पत्रों में तमिल, मलयालम, कन्नड़ी और ग्रन्थ लिपियों का विकास दर्शाया गया है। संस्कृत से एकदम भिन्न तमिल भाषा के अक्षर ब्राह्मी से ही लिये गये है। केवल 18 व्यंजन होने से इसमें संस्कृत नहीं लिखी जा सकती थी अतः जहां संस्कृत शब्दों का प्रयोग होता वहाँ ग्रन्थ लिपि में लेखन होता था और मलयालम लिपि ग्रन्थ लिपि का घसीट रूप है।

एक लिपि पत्र में पाली वर्णमाला के विभिन्न देशों में प्रचलित स्वरूपों का प्रदर्शन किया गया है। तो एक अन्य लिपि पत्र में ब्राह्मी की विश्व की अन्य लिपियों इथियोपी, नश्की, अरबी, फिनीशियन, ग्रीक, लैटिन आदि में समरूपता प्रदर्शित की गयी है। इसे देखकर मन में यह स्वाभाविक प्रश्न उठता है कि क्या भारत और विश्व की अन्य लिपियों का स्रोत एक ही है। क्या भारत की राष्ट्रभाषा हिन्दी देवनागरी विश्वभारती के पथ पर अग्रसर हो सकती है।

श्रद्धानन्द वीथिका

इस वीथिका में गुरुकुल कांगड़ी के संस्थापक स्वामी श्रद्धानन्द (महात्मा मुंशीराम) के जीवन से सम्बन्धित वस्तुओं एवं चित्रों का प्रभावशाली संग्रह है।

इसका एक मुख्य आकर्षण स्वामी जी द्वारा अन्तिम समय में उपयोग में लाये गये वस्त्र एवं अन्य दैनिक प्रयोग की वस्तुओं का प्रदर्शन आर्य जनों के लिए विशेष रूप से आकर्षण का केन्द्र है। स्वामी जी

अपनी वर्मा (म्यांमार) यात्रा के दौरान लाख एवं काष्ट कला कृतियों का संग्रह अपने साथ लाये थे। स्वामी जी द्वारा संग्रहालय को प्रदत्त यह अनुपम संग्रह विशेष रूप में दर्शनीय है।

इसी वीथिका में पुण्य भूमि नाम से अभिहित कांगड़ी ग्राम, जहाँ सन् 1902 में स्वामी जी ने गुरुकुल की स्थापना की थी, लेकिन 1924 की बाढ़ के कारण यह स्थान छोड़ना पड़ा, की पहली इमारत का चित्र भी सुरक्षित है। साथ ही मुंशी अमन सिंह जिनके द्वारा दान में पुण्य भूमि प्राप्त हुई थी, का भी चित्र श्रद्धा से लोगों को अभिभूत कर देता है।

एक स्थान पर स्वामी जी के पारिवारिक सदस्यों के चित्र है। स्वामी जी ने जिनका मूल नाम मुंशीराम था, अपनी जीविका का प्रारम्भ एक वकील की हैसियत से किया था और नायब तहसीलदार के पद पर पहुँचे। लेकिन 1883 में इस पद से त्यागपत्र देकर पुनः वकालत करने लगे, इन सभी रूपों में स्वामी जी के विविधतापूर्ण चित्र यहाँ प्रदर्शित है। इसी क्रम में एक महत्वपूर्ण चित्र स्वामी जी के ज्येष्ठपुत्र और गुरुकुल के प्रथम स्नातक हरिश्चन्द्र विद्यालंकार का है जिन्होंने राजा महेन्द्र प्रताप के साथ अफगानिस्तान में निर्वाचित भारत सरकार की स्थापना की थी और कालान्तर में सेनफ्रांसिस्को में लाला हरदयाल भाई परमानन्द, करतार सिंह सराबा द्वारा स्थापित "गदर पार्टी" में शामिल हो गये थे।

इसी वीथिका में स्वामी जी के गुरु स्वामी दयानन्द एवं राष्ट्रीय जीवन के अन्य सहयोगियों ठाकुर माधव सिंह जी, भण्डारी शालिग्राम, लाला लाजपतराय, तिलक, महामना मालवीय, मोतीलाल नेहरू, गोखले, डॉ० एम.ए. अन्सारी, हकीम अजमल खां, सी.एफ. एण्ड्रयूज तथा रवीन्द्रनाथ टैगोर के चित्र दर्शकों को आकर्षित करते है।

1912 ई० में स्वामी जी गुरुकुल के आचार्य एवं मुख्य अधिष्ठता बने। इस समय तक राष्ट्रीय आन्दोलन में उग्रवादी विचारधारा उभरने लगी थी और क्रान्तिकारियों से गुरुकुल भी प्रभावित न रह सका। गुरुकुल के प्रति सरकार का भी सन्देह पुष्ट होता जा रहा था। अतः सरकारी दमन से गुरुकुल की रक्षा के लिए संयुक्त प्रान्त के गवर्नर जेम्स मेस्टन, लार्ड एवं लेडी चेम्स फोर्ड (1916) तथा रैम्जेमैक्डोनाल्डन को गुरुकुल में आमन्त्रित कर गुरुकुल को राजभक्त प्रदर्शित करने का "पाखण्ड" किया। इन ऐतिहासिक क्षणों को सफलतापूर्वक प्रदर्शित करते चित्र इस वीथिका में प्रदर्शित है। 6 अप्रैल 1917 को महात्मा मुंशीराम ने संन्यास आश्रम में प्रवेश कर स्वामी श्रद्धानन्द नाम ग्रहण किया। उनके संन्यासी जीवन ग्रहण करने के विविध पहलुओं के चित्र यहाँ संगृहीत है। स्वामी श्रद्धानन्द एवं महात्मा गाँधी का घनिष्ठ सम्बन्ध यहाँ संकलित तस्वीरों एवं पत्रों से पूर्णतः प्रदर्शित होता है। 1919 में स्वामी जी कांग्रेस के अमृतसर अधिवेशन के स्वागत अध्यक्ष चुने गये। इस अवसर पर लिये गये चित्र में उनके साथ अनेक राष्ट्रीय नेता दिखाई पड़ रहे है। यह चित्र संग्रहालय की अनुपम धरोहर है। इसी समय राष्ट्रीय आन्दोलन की मजबूती के लिये हिन्दू मुस्लिम एकता के प्रयासों के तहत मुसलमानों द्वारा स्वामी जी को जामा मस्जिद के मंच पर उपदेश देने के लिए आमन्त्रित किया गया। इस अवसर पर एक तैल चित्र यहाँ संगृहीत है।

स्वामी जी का शुद्धि आन्दोलन में महत्वपूर्ण योगदान रहा इसलिए कुछ कट्टरवादी मुस्लिम उनके शत्रु बन गये। इसकी चरम परिणति अब्दुल रशीद द्वारा उनकी हत्या के रूप में हुई। गोलियों से छलनी स्वामी जी का शरीर चांदनी चौक एवं नया बाजार में उनकी शवयात्रा में उमड़े जनसमूह के चित्र एवं स्वामी जी के दाह-संस्कार के चित्र सारे वातावरण को शान्त मौन एवं अवाक् बनाये हैं। स्वामी जी की हत्या और श्रद्धानन्द स्मारक पर "नवजीवन" में महात्मा गाँधी द्वारा लिखी गयी सम्पादकीय तथा गाँधी जी द्वारा स्वामी जी के कनिष्ठ पुत्र इन्द्र को लिखा गया सांत्वना पत्र भी संग्रहालय की अमूल्य धरोहर है।

हिमालय दर्शन चित्र वीथी

भारतीय मनीषा में नगाधिराज देवात्मा हिमालय अपनी विराटता, धवलता स्थैर्य गाम्भीर्य और पवित्रता में सर्वोपरि है। सत्यं शिवं सुन्दरम् की यह साकार मूर्ति सृष्टि के आदि काल से ही सुर, नर, मुनि, ऋषि, गन्धर्व और अन्य नरपुंगवों की तपोभूमि, साधना भूमि कर्मभूमि रही है।

इसकी गंगा न केवल विविध रंगों के परिधानों से इसके सौन्दर्य में हरीतिमा व रंग-बिरंगे फूलों वाली फूलों की घाटियों को परिदृश्य करती है अपितु अपने अमृतमय जल से समस्त भारत भूमि को शस्य श्यामल भी बनाती है। भू-वैज्ञानिकों के लिए यह केवल "द हिमालय" और "द गंगा" ही है पर भारत की अधिकांश जनता की रागात्मिकता में यह हिमालय "धूर्जटी" है, "शिव" है और गंगा शिवा है।

वेदों (ऋग्वेद) में हिमालय शब्द नहीं है पर हिमवंत है तथा उससे सम्बन्धित अनेक हिमशिखरों व उससे निस्तारित होने वाली गंगा सहित अनेक नदियों के नाम हैं। महाभारत में अर्जुन की जिस मेरु यात्रा का वर्णन है, सुमेरु पर्वत बदरीनाथ के निकट संतोपथ है। जहां भगवान् नारायण और कुबेर का निवास बताया गया है। इसी गंधमादन क्षेत्र में अर्जुन के सुमेरु प्रवेश का वर्णन है और यहीं सरस्वती तट पर व्यास ने श्री मद् भागवत् की रचना की थी। शंकराचार्य ने वेदों पर भाष्य इसी क्षेत्र के ज्योतिर्मठ में बैठकर लिखे और केदारनाथ में अन्तिम सांस छोड़ी। मेरू पर्वत पर ही कुबेर का नन्दन कानन (फूलों की घाटी) विद्यमान है। जहाँ द्रौपदी के आग्रह पर भीम पुष्प चुनने गये थे। समृद्धि और वैभव का प्रतीक यह हिमालय मनु की आदि भूमि रहा, रथवितिवाण के साम्राज्यों का केन्द्र रहा। पुरूरवा-उर्वशी, उषा अनिरुद्ध के प्रणय सम्बन्धों की सौन्दर्य भूमि रहा, यह पाण्डवों की मोक्ष भूमि तो ऋषभदेव की निर्वाण भूमि के रूप में इतिहास, संस्कृति, युग, पुरुष और पौरुष सबका प्रतीक एक साथ रहा।

हिमालय की हर चोटी, हर घाटी, हर हिमानी, भारतीय धर्म, दर्शन एवं काव्य से जुड़ी है। महाकवि कालिदास की ऐसी कोई कृति नहीं है जो हिमालय से अछूती हो।

यद्यपि आवागमन की वर्तमान सुविधायें हिमालय यात्रा को निरापद और सुगम बना चुकी है और आधुनिकता के चमत्कारी प्रभाव से यह क्षेत्र अछूता नहीं है तथापि जन-साधारण के लिए हिमालय की दृश्यात्मक दिव्यता से साक्षात्कार करना कल्पना का विषय और हरिद्वार पर्वतीय क्षेत्र से मैदानों की ओर विशाल से विशालतर रूप में बहने वाली गंगा का पर्वतद्वार और शिवालिक की छोटी पहाड़ियों का यदि अन्तिम पड़ाव है तो दूसरी ओर हिमालय की हिमाच्छादित चोटियों और देव स्थानों के दर्शन के लिए उत्सुक पर्यटकों और तीर्थ यात्रियों के लिए हरिद्वार मैदानी भाग का अन्तिम पड़ाव है। उन्हें हिमालय की प्राथमिक सौन्दर्यानुभूति कराने के लिए हरिद्वार से उचित कौन-सा स्थान हो सकता था।

उसी उद्देश्य को ध्यान में रखकर पुरातत्व संग्रहालय में यह वीथिका स्थापित की गयी। सम्प्रति गंगोत्री के तपोवनम् कुटी में निवास करने वाले स्वामी तपोवनम् के शिष्य स्वामी सुन्दरानन्द सिद्ध योगी होने के साथ-साथ अनुभवी पर्वतारोही और सिद्धहस्त छायाकार भी है। जिन्होंने हिमालय के कण-कण से साक्षात्कार किया है और लगभग सभी प्रमुख हिमशिखरों हिमानियों, हिमनगरों के मनोरम प्राकृतिक दृश्यों के लगभग 55 हजार चित्रों से संकलित किया है।

स्वामी जी के इसी संकलन के कुछ महत्वपूर्ण चित्र यहाँ प्रदर्शित है। जिसमें कालिन्दी पर्वत की अथाह हिमराशि गंधमादन पर्वत, राजपड़ाव, भृगु पर्वत स्ताकुन्ना, त्रिपिस्ट शिखर, कुबेर भण्डार, नरपर्वत विशेष उल्लेखनीय है। वहीं स्वामी जी ने बन्दर पूंछ वासुकी, जोगनपर्वतों और माना ग्लेशियर की अथाह हिमराशि पर, अरुणोदय से साक्षात्कार कराया है तो दूसरी तरफ भगीरथ पर्वत पर सूर्य के अन्तिम स्पर्श को भी कैमरे में कैद करने से पीछे नहीं रहे।

स्वामी जी के एक चित्र में पुराणों में "देवमार्ग" नाम अभिहित 18510 फीट ऊंचा गोरमुख से ब्रदीनाथ का मार्ग दिखाई पड़ता है। एक अन्य चित्र में गंगा का उद्‌गम स्थल गोमुख प्रदर्शित है। यद्यपि पदार्थिक रूप से वहाँ कुछ नहीं है न फल न कीमती पत्थर बस हिमखण्डों एवं गुफाओं के बीच से चली आ रही धारा है लेकिन यह आत्मिक प्यास जगाने वाला चित्र है और आगे बढ़ने पर गंगोत्री के गौरीकुण्ड गहवर से चट्टानों द्वारा प्राकृतिक रूप से निर्मित शेषनाग और शिवलिंग का जलाभिषेक करती गंगा के चित्र विशेष रूप से रोमांचित करते है। आगे चलकर शंकराचार्य और पाण्डवों के अन्तिम आराधना स्थल केदारनाथ से हमारा साक्षात्कार होता है। एक चित्र में 15000 फीट ऊंचाई पर स्वामी जी स्वयं प्राचीन मनीषियों के रूप में नजर आते है तो अगले ही चित्र में हिमशिखरों के बीच मेघनिर्मित "ओ३म्" एक आध्यात्मिक वातावरण का सृजन करता है। गढ़वाली महिला का आकर्षक चित्र "मां" इस आदर्श शब्द को पूर्णत: व्यक्त करता प्रतीत हो रहा है। कुछ चित्र 14-18000 फीट की ऊंचाई पर उगने वाली पौराणिक वनस्पतियों के है, जैसे ब्रह्म कमल, स्थल कमल तथा सौगंधिक पुष्प। इस प्रकार स्वामी सुन्दरानन्द की मौन चित्रावली हिमालय के समस्त पक्षों का मुखर वर्णन करती प्रतीत होती है।

विविध संग्रह

उपरोक्त प्रमुख विभागों के अतिरिक्त कुछ अन्य दिलचस्प एवं ज्ञानवर्धक संग्रह यहाँ प्रदर्शित है। जैसे देहरादून के पास जौनसार बाबर की जनजाति के दैनिक जीवन से सम्बद्ध वस्तुये, देंवी देवताओं की प्रतिमायें, आभूषण यहाँ संगृहीत है। इसके अतिरिक्त श्री रामेश बेदी आयुर्वेदालंकार के सौजन्य से प्राप्त माप-तौल में प्रयुक्त होने वाला "पाथा" जो संवत् 1789 का है और राजकीय मुद्रा से प्रमाणित है विशेष रूप से दर्शनीय है।

देहरादून के आस-पास जंगलों में उत्पन्न होने वाली वनस्पतियां एवं उनके उत्पाद भी संगृहीत है। इसके अतिरिक्त लखनऊ, विश्वविद्यालय के भूगर्भ संग्रहालय से प्राप्त भारत में पाये जाने वाले पाषाण नमूनों के साथ-साथ जुरासिक कालीन पत्ती का जीवाश्य भी दर्शनीय है। तो भारत में निवास करने वाली विभिन्न जातियों की मुखाकृति प्रस्तुत करने वाले प्लास्टर काष्ट के नमूने ज्ञानवर्धक है।

सन् 1958 में प्रधानमंत्री पंडित जवाहरलाल नेहरू गुरुकुल पधारे थे। उन्होंने विभिन्न समयों पर विभिन्न व्यक्तियों एवं संस्थाओं द्वारा स्वयं को उपहार स्वरूप प्राप्त कलाकृतियाँ संग्रहालय को भेंट स्वरूप दी थी। उनका एक छोटा-सा संग्रह संग्रहालय में प्रदर्शित हैं।

आद्य ऐतिहासिक से लेकर ऐतिहासिक काल तक के वस्त्राभूषणों एवं केश सज्जा के विकास को प्रदर्शित करते रेखाचित्रों का संकलन विशेष रूप से रोमांचित करता है तो स्थापत्य कला के क्रमश: विकास एवं कालिदास के ग्रन्थों में वर्णित पक्षियों के रेखाचित्र ज्ञानवर्धक है। इसके अतिरिक्त भारतीय कला की विभिन्न दुर्लभ मूर्तियों के प्लास्टर काष्ट के नमूने भी यहाँ संगृहीत है जो शिक्षा के माध्यम के रूप में उपयोगी है। साथ ही समय-समय पर गुरुकुल पधारे महानुभावों एवं गुरुकुल तथा उसके विद्यार्थियों एवं आचार्यों के विभिन्न छायाचित्र यहाँ संगृहीत है।

पुस्तकालय

समाज के सर्वांगीण विकास में पुस्तकालय की भूमिका को सर्वप्रथम जिस स्वप्न दृष्टा महानुभाव ने समझा, उस सोच के देखने वाले और कोई नहीं आधुनिक भारत के ऋषि स्वामी दयानन्द सरस्वती थे जिन्होंने आर्यसमाज की परिकल्पना के साथ प्रत्येक समाज के साथ जुड़े पुस्तकालय की कल्पना की तथा आर्य समाज के संगठन में आधिकारिक स्तर पर पुस्तकालयाध्यक्ष के पद पर सृजन किया। ऋषि दयानन्द

की पुस्तकालय के बारे में यह गहरी सोच दिखाती है कि स्वाध्याय का जीवन में कितना महत्व वे स्वीकार करते थे। स्वामी दयानन्द के सुयोग्य शिष्य स्वामी श्रद्धानन्द ने आज से सौ वर्ष पूर्व 4 मार्च 1901 को जब गुरुकुल की स्थापना की तभी उन्होंने अपना वैयक्तिक पुस्तकालय गुरुकुल को दान कर इसके निर्माण का इतिहास रचा।

सन् 1907 में पुस्तकालय में 2336 पुस्तकों का संग्रह रहा है। जिसमें पदार्थ विद्या, शिक्षण, इतिहास, जीवन चरित्र तथा संस्कृत एवं वेद से सम्बन्धित प्रामाणिक ग्रन्थों का संग्रह उपलब्ध था। सन् 1911 में गुरुकुल पुस्तकालय में 5500 पुस्तकों का बहुमूल्य संग्रह था। इस संग्रह में एनसाइक्लोपीडिया ब्रिटैनिका के 11 खंड भी शामिल थे। उस समय भी गुरुकुल पुस्तकालय में अन्तर्राष्ट्रीय स्तर की शोध पत्रिकायें मंगवाई जाती थी जिनमें प्रमुख हैं-

1. Pioneer
2. The Review of reviews
3. Punjab educational journal
4. Educational review, Madras
5. The Scientific Americal
6. The Commerce
7. Nature
8. सहृदय संस्कृत पत्रिका
9. संस्कृत रत्नाकर

मैक्समूलर का सम्पूर्ण साहित्य सेकरेट बुक्स ऑफ ईस्ट सन् 1911 में पुस्तकालय में उपलब्ध था। सन् 1913 में गुरुकुल पुस्तकालय में 7912 पुस्तकों का संकलन था तथा 1914 में 887 नई पुस्तकों का समावेश इस पुस्तकालय में हुआ। पुस्तकालय में कर्मचारियों एवं अध्यापकों के द्वारा 2236 पुस्तकें पढ़ने हेतु ली गई। 1914 में इस विशाल गुरुकुल पुस्तकालय का अवलोकन करते हुए सुप्रसिद्ध इतिहासकार राधा कुमुद मुखर्जी ने लिखा है कि ऐसा पुस्तकालय बहुत थोड़े महाविद्यालयों में दिखाई देता है।

सन् 1919 की गुरुकुल रिपोर्ट में छपा है कि पुस्तकालय में इस समय पुस्तकालयाध्यक्ष का कार्य उपाध्याय सेवाराम जी को दिया गया। सन् 1912 में 8 अध्यापकों ने पुस्तकालय की 662 पुस्तकों का अध्ययन किया। उस समय 26 ब्रह्मचारियों ने पुस्तकालय की 543 पुस्तकों को इश्यू कराया। उस समय पुस्तकालय में 6 दैनिक पत्र नियमित आता था, मुख्याधिष्ठाता द्वारा स्वय उसकी जांच पड़ताल की जाती थी, तथा वहीं साहित्य पढ़ने हेतु उपलब्ध कराया जाता था जो ब्रह्मचारियों के लिये हानिकारक नहीं होता था। गुरुकुल से प्रकाशित वैदिक मैगजीन के विनिमय में अनेकों राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय स्तर की पत्रिकायें प्राप्त होती थी। सन् 1919 में पुस्तकालय में उस समय के सभी प्रसिद्ध पत्र-पत्रिकायें आती थी। नमूने के लिये दैनिक पत्रों का विवरण नीचे दिया जा रहा है-

पायोनियर- इलाहाबाद
लीडर- इलाहाबाद
ट्रिब्यून- लाहौर
पंजाबी- लाहौर
अमृतबाजार पत्रिका- कलकत्ता
न्यू इंडिया- मद्रास
हिन्दू- मद्रास

हिन्दी की प्रमुख पत्रिकाओं में वैद्य कल्पतरु, वेदप्रकाश, सरस्वती, नागरी प्रचारिणी पत्रिका, नवजीवन, मर्यादा ब्रह्मचारी, चित्रमय जगत, विज्ञान आदि पत्रिकायें शमाविष्ट हैं।

1924 के गुरुकुल की वार्षिक रिपोर्ट के अनुसार पुस्तकालय में 10638 पुस्तकें विद्यमान थी जिसमें अंग्रेजी की 6753, हिन्दी की 1245, संस्कृत की 1642, उर्दू की 565 इसके अतिरिक्त पुस्तकालय के इस संग्रह में बंगला 116 मराठी 225 गुजराती 92 पुस्तकें थी। इस वर्ष पुस्तकालय का प्रथम बार स्टाक प्रमाणीकरण का कार्य कराया गया। रिटायर्ड पोस्टमास्टर ज्ञानचंद ने इस स्टाक प्रमाणीकरण का कार्य किया गया। रिटायर्ड पोस्टमास्टर ज्ञानचंद ने इस स्टाक प्रमाणीकरण का कार्य किया तथा कुल 362 पुस्तकें गुम पाई गई। पुस्तकालयाध्यक्ष का दायित्व 1924 में प्रो॰ नन्दलाल जी देख रहे थे। सन् 1920 में पुस्तकालय में पुस्तकों की संख्या 11060 थी तथा उस वर्ष 698 नई पुस्तकें पुस्तकालय में समाविष्ट हुई। गुरुकुल में प्रकाशित वैदिक मैगजीन के बदले में इन वर्षों में विदेशों से भी अन्तर्राष्ट्रीय शोध पत्रिकायें प्राप्त होती रही हैं। गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय की एक पुरानी रिपोर्ट के आधार पर यह कहा जा सकता है कि 1927 में पुस्तकालय में 16,000 पुस्तकों का बेजोड़ संकलन था। इस संकलन में वेद, दर्शन, ब्राह्मण ग्रन्थ तथा क्लासिकल संस्कृत साहित्य के अद्भुत ग्रन्थों का समावेश था। उस समय पुस्तकालय में स्टोर ऑफ नेशन्स सीरीज, रुलर ऑफ इन्डिया सीरिज, हिस्टोरियन हिस्ट्री ऑफ वर्ल्ड इनसाइक्लोपेडिया, इनसाइक्लोपेडिया ब्रिटैनिका नवीनतम् संस्करण आदि महत्वपूर्ण संदर्भ ग्रन्थ उपलब्ध थे। 1927 में पुस्तकालय की पुस्तकें डेसीमल वर्गीकरण के आधार पर वर्गीकृत थी। विषय के अनुसार सभी पुस्तकें पृथक्-पृथक् सेक्सनों में विद्यमान थी। छात्रों को अधिकतम रूप से पुस्तकालय का उपयोग करने की सुविधा थी।

सन् 1931 में पुस्तकालय में पुस्तकों की संख्या-13782 थी तथा उस वर्ष इस पुस्तकालय में 287 नई पुस्तकें आई। पुस्तकालय में इस समय देश-विदेश से 77 पत्र-पत्रिकायें नियमित आती थी। सभी पत्र-पत्रिकायें उच्च स्तर की शोध सामग्री में परिपूर्ण होती थी।

गुरुकुल में उपलब्ध सन् 1933 वे आलेख के अनुसार पुस्तकालय में पुस्तकों की संख्या 14069 सही तथा इस वर्ष 291 नई पुस्तकें आई। उपलब्ध विवरण के अनुसार छात्रों ने 2069 पुस्तकें पुस्तकालय में पढ़ने हेतु प्राप्त की तथा अध्यापकों ने 2038 पुस्तकों को इश्यू कराया। इस समय पुस्तकालय में अंग्रेजी के 6 दैनिक पत्र, हिन्दी के दो तथा उर्दू का एक दैनिक समाचार पत्र आता था। अंग्रेजी में 10 साप्ताहिक पत्र नियमित मंगाये जाते थे तथा हिन्दी के 10 साप्ताहिक पत्र आते थे, उर्दू में दो साप्ताहिक पत्र प्रकाश उर्दू एवं आर्य गजट आते थे। अंग्रेजी मासिक शोध पत्रिकाये इस समय 30 नियमित आती थी।

सन् 1935 में गुरुकुल में पुस्तकों की संख्या 1937 थी तथा इस पुस्तकालय से छात्रों ने इस वर्ष 1257 पुस्तकें अध्ययन हेतु ली, इसी प्रकार प्रध्यापकों ने 1773 पुस्तकों का उपयोग किया। इस समय पुस्तकालय में 10 दैनिक समाचार पत्र, 16 साप्ताहिक पत्र, मासिक पत्रिकायें तथा 10 त्रैमासिक पत्रिकायें प्राप्त होती रही है।

सन् 1938 में पुस्तकालय में 18,000 पुस्तकों का संकलन था। सन् से 1938 के मध्य 1150 नई पुस्तकें पुस्तकालय में सामिल हुई। 1938 में पुस्तकालय में अंग्रेजी भाषा की 32 पत्र-पत्रिकायें आती थी, इसी प्रकार हिन्दी एवं उर्दू भाषा में 57 एवं 4 पत्रिकायें नियमित आती थी। सन् 1940 में पुस्तकालय में संदर्भ संग्रह में निम्नांकित महत्वपूर्ण ग्रन्थ उपलब्ध थे।

1. The complete work of H.G. Wells (12 Vol.)
2. Standard History of the world (12 Vol.)
3. The book of knowledge (24 Vol.)

4. वाचस्पत्य कोष 20 खंड
5. महाभारत तथा रामायण 18 भाग
6. चारों वेद संहितायें भाष्य सहित 12 जिल्द में
7. हिन्दी शब्द सागर 8 भाग में

इसके अतिरिक्त उस समय की सुप्रसिद्ध, हिन्दी, संस्कृत; उर्दू तथा अंग्रेजी पत्रिकायें जो आती थी उसमें प्रमुख है:-

1. सूर्योदय- मासिक संस्कृत
2. विश्वामित्र- मासिक हिन्दी
3. विशाल भारत- मासिक हिन्दी
4. कल्याण- मासिक हिन्दी
5. व्यावहारिक वेदान्त- मासिक हिन्दी
6. अर्जुन- साप्ताहिक हिन्दी
7. आर्य मित्र- साप्ताहिक हिन्दी
8. हिन्दू- साप्ताहिक हिन्दी
9. प्रताप- साप्ताहिक हिन्दी
10. प्रकाश- साप्ताहिक हिन्दी
11. तेज- साप्ताहिक उर्दू
12. अर्जुन- दैनिक हिन्दी
13. हिन्दुस्तान- दैनिक हिन्दी
14. हिन्दुस्तान टाइम्स- दैनिक अंग्रेजी
15. हरिजन- साप्ताहिक

पुस्तकालय का वैभव उसके दुर्लभ संग्रह से मूल्यांकित किया जाता है। गुरुकुल पुस्तकालय अपने बेजोड़ एवं अप्राप्य पुस्तकों के संग्रह में विशिष्ट स्थान रखता है क्योंकि इस संग्रह को बनाने में यहाँ के स्नातकों ने तथा अन्य विशिष्ट: व्यक्तियों ने अपने जीवन भर के संग्रह को दान करके पुस्तकालय को अमूल्य सांस्कृतिक संपदा से सजाया है। 1949 में गुरुकुल के पुस्तकालय में 23,000 पुस्तकें थी तथा उस समय पुस्तकालय में हिन्दी, उर्दू, अंग्रेजी, गुजराती, मराठी आदि भाषाओं में विभिन्न विषयों की 100 पत्र-पत्रिकायें नियमित रूप से आती थी।

1962 में जब गुरुकुल विश्वविद्यालय को डीम्ड विश्वविद्यालय का स्तर दिया गया था तब यहाँ के पुस्तकालय में विभिन्न भाषाओं की पुस्तकों की संख्या निम्न थी।

1. अंग्रेजी- 23,100
2. हिन्दी- 14151
3. संस्कृत- 6094
4. उर्दू एवं अन्य भाषायें- 2435
5. रसियन भाषा- 1725
6. पाठ्य पुस्तकें 2700

7. स्मिथ सोनियन पब्लिकेशन 2471
8. पत्रिकायें- 7125

1962 में ही पुस्तकालय को नवीन पुस्तकें तथा फर्नीचर क्रय किये जाने हेतु 40,000 रुपये का सरकार से अनुदान प्राप्त हुआ। प्रसिद्ध थियोसोफिस्ट श्री एफ.टी. बुक्स गुरुकुल के प्राकृतिक चिकित्सक उपाध्याय श्री भवानीप्रसाद जी, स्नातक देवराज जी, स्वामी सत्यदेव परिव्राजक, रायबहादुर लालचंदजी भाटिया, गीताप्रेस गोरखपुर, भंडारकर रिसर्च संस्थान पूना, स्वाध्याय मंडल औध तथा कर्नाटक प्रेस ने अपनी पुस्तकें गुरुकुल पुस्तकालय को प्रदान की। गुरुकुल पुस्तकालय को स्वामी श्रद्धानन्द जी के पुत्र पं॰ इन्द्र जी ने भी पुस्तकों का अपना वृहत् निजी संग्रह दिया। उन्होंने पुस्तकालय को 945 पुस्तकों का अपना संग्रह भेंटस्वरूप प्रदान किया।

पुस्तकालय की विकास यात्रा में आज हमें स्मरण हो रहा है कि गुरुकुल के पूज्य आचार्य पं॰ प्रियव्रत वेदवाचस्पति जिनका अपना निजी 1378 पुस्तकों का संग्रह था जो कि पुस्तकालय को भेंटस्वरूप प्राप्त हुआ। इसके अतिरिक्त गत कुछ वर्षों में निम्नांकित महानुभावों ने भी गुरुकुल पुस्तकालय को अपनी निजी संग्रह की अमूल्य पुस्तकें भेंट करके संग्रह को बहुमूल्य करने में अद्भुत योगदान प्रदान किया।

1. **आचार्य गोवर्धन प्रसाद स्मृति संग्रह**- गुरुकुल के कुलपति रहे श्री बलभद्र कुमार हूजा ने अपने पिता स्व॰ गोवर्धन जी शास्त्री की स्मृति में गुरुकुल पुस्तकालय को 182 पुस्तकें भेंटस्वरूप प्रदान की। श्री गोवर्धन शास्त्री भी गुरुकुल में स्वामी श्रद्धानन्द जी के समय प्राध्यापक रहे हैं।
2. **पं॰ धर्मदत्त वैद्य संग्रह**- गुरुकुल के पुराने स्नातक पं॰ धर्मदत्त जी वैद्य के परिवार ने उनकी स्मृति में उनके निजी संग्रह को पुस्तकालय में भेंटस्वरूप प्रदान किया। इस संग्रह में 241 पुस्तकें है।
3 **विश्वनाथ विद्यालंकार**- गुरुकुल के पुराने स्नातक पं॰ विश्वनाथ जी के अद्भुत स्वाध्याय संग्रह को उनके परिवार ने गुरुकुल पुस्तकालय को 176 पुस्तकें दानस्वरूप प्रदान की।
4 **केसरवानी स्मृति संग्रह**- इस संग्रह में पुस्तकालय को 202 पुस्तकें प्राप्त हुई।
5. **गुरुकुल के वर्तमान कुलपति डॉ॰ धर्मपाल जी**- ने शताब्दी वर्ष में गुरुकुल पुस्तकालय को अपने निजी पुस्तकों के संग्रह में 200 अमूल्य पुस्तकें पुस्तकालय को भेंटस्वरुप प्रदान की। इन पुस्तकों के संग्रह से गुरुकुल पुस्तकालय की साहित्य संपदा में कीर्तिमान् वृद्धि हुई हैं।

पुस्तकालय के कार्य को सुचारु रूप से चलाने हेतु सर्वप्रथम पं॰ इन्द्र जी विद्यावाचस्पति तत्कालीन उपकुलपति के द्वारा दिनांक 15.4.59 को निम्नांकित महानुभावों की एक पुस्तकालय समिति का गठन किया गया।

1. पं॰ प्रियव्रत जी आचार्य
2. पं॰ सुखदेव जी अध्यक्ष वेद महाविद्यालय
3. पं॰ निरंजन देव जी अध्यक्ष आयुर्वेद महाविद्यालय
4. पं॰ हरिदत्त जी वेदालंकार
5. पं॰ धर्मचंद जी शास्त्री
6. पं॰ रामनाथ
7. पं॰ वागीश्वर जी विद्यालंकार, पुस्तकालयाध्यक्ष

इसके पश्चात् पुस्तकालय के भावी विकास की योजनायें तथा परामर्श पुस्तकालय समिति के माध्यम से ही किया जाता रहा है। गुरुकुल पुस्तकालय के पुस्तकालयाध्यक्ष का दायित्व निम्नांकित महानुभावों द्वारा समय-समय पर उठाया गया।

1. प्रो॰ सेवाराम जी
2. प्रो॰ नंदलाल जी एम.ए.
3. डॉ॰ सत्यकेतु
4. पं॰ वागीश्वर विद्यालंकार
5. पं॰ धीरश्वर जी
6. पं॰ धर्मदेव
7. डॉ॰ निगम शर्मा
8. प्रो॰ सुरेश चंद त्यागी
9. डॉ॰ जबरसिंह सेंगर
10. डॉ॰ श्यामनारायण सिंह

शिक्षा मंत्रालय भारत सरकार के द्वारा 1981 में सर्वप्रथम पुस्तकालयाध्यक्ष का पूर्णकालिक पद विश्वविद्यालय को स्वीकृत किया। इस पद की स्वीकृति लिये जाने में तत्कालीन कुलपति श्री बलभद्र कुमार हूजा ने विशेष रुचि ली तथा इस पद पर वर्तमान पुस्तकालयाध्यक्ष डॉ॰ जगदीश विद्यालंकार की नियुक्ति की गई। उन्होंने इस पद का दायित्व 10.12.81 को ग्रहण किया।

गत 20 वर्षों में पुस्तकालय को एक आधुनिक दिशा देने में उन्होंने सार्थक भूमिका का निर्वाह किया। पुस्तकालय के आज के स्वरूप का आलेख शताब्दी वर्ष की उपलब्धियों के सन्दर्भ में पृथक् से दिया गया है।

शताब्दी वर्ष में गुरुकुल पुस्तकालय का परिदृश्य

पुस्तकालय का उपयोग करने वाले सदस्यों की संख्या शताब्दी वर्ष 2000-2001 में 966 रही यह पुस्तकालय देश का एकमात्र ऐसा विश्वविद्यालय पुस्तकालय है जहाँ आर्यसमाज की पुस्तकों का संग्रह एक पृथक् वीथिका के रूप में विद्यमान है। गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय के स्नातकों एवं प्राध्यापकों द्वारा लिखित पुस्तकों का पृथक् प्रकोष्ठ पुस्तकालय में बना हुआ है। पुस्तकालय में शताब्दी वर्ष 2000-2001 में कुल पुस्तकों का संग्रह 1,33,003 है। इस वर्ष 1274 नई पुस्तकों का समावेश किया गया। 336 पुस्तकें गुरुकुल पुस्तकालय को भेंटस्वरूप प्राप्त हुई है। गुरुकुल के छात्रों एवं प्राध्यापकों को शताब्दी वर्ष में 9842 पुस्तकों को इश्यू किया गया। कम्प्यूट्रीकरण कार्य हेतु शताब्दी वर्ष में सभी संदर्भ विभाग की पुस्तकों का कम्प्यूट्रीकरण का कार्य पूरा किया गया जिसके अन्तर्गत 18,000 पुस्तकों का डेटाबेस तैयार किया गया।

पुस्तकालय में विभिन्न संग्रह

पुस्तकालय का विराट् संग्रह अपनी विशिष्टताओं के लिए निम्न रूप से विभाजित हैं:-

संदर्भ संग्रह, पत्रिका संग्रह, आर्य साहित्य संग्रह, आयुर्वेद संग्रह, विभिन्न विषयों का हिन्दी संग्रह, विज्ञान संग्रह, अंग्रेजी साहित्य संग्रह, पं॰ इन्द्र जी संग्रह, दुर्लभ पुस्तक संग्रह, प्रतियोगितात्मक पुरातन संग्रह, शोध प्रबन्ध संग्रह, रूसी साहित्य संग्रह, आरक्षित पाठ्य पुस्तक संग्रह, उर्दू पुस्तक संग्रह, मराठी संग्रह, गुजराती संग्रह, गुरुकुल प्राध्यापक एवं स्नातक संग्रह, मानचित्र, संग्रह, पुस्तकालय वाङ्मय सेवा संग्रह, विश्वविद्यालय प्रकाशन संग्रह, वेदमंत्र कैसेट संग्रह,।

विभागीय पुस्तकालय

विश्वविद्यालय के छात्रों की सुविधा एवं उपयोग हेतु विभिन्न विभागीय पुस्तकालयों की स्थापना की गई है। इसके अन्तर्गत रसायन-विज्ञान, जीव-विज्ञान, पर्यावरण-विज्ञान, कम्प्यूटर-विज्ञान, हिन्दी पत्रकारिता, वेद, अंग्रेजी, गणित, एवं कन्या महाविद्यालय आदि में विभागीय पुस्तकालय हैं। आलोच्य वर्ष 2000-2001 में 408 पुस्तकों को विभागीय पुस्तकालयों में इश्यू किया गया।

पत्रिका विभाग

विश्वविद्यालय पुस्तकालय द्वारा आलोच्य वर्ष 2000-2001 में 344 पत्रिकायें मंगवाई गई। जिनमें से 10 पत्रिकाऐं विश्वविद्यालय द्वारा प्रकाशित पत्रिकाओं के विनियम में प्राप्त हुई हैं। राष्ट्रीय तथा अन्तर्राष्ट्रीय स्तर के विभिन्न विषयों की पत्रिकाऐं मंगाने में लगभग एक लाख अट्ठासी हजार आठ सौ बावन रुपये व्यय किये गये तथा 241 पत्रिक़ाओं की जिल्दबन्दी की गई।

सन्दर्भ विभाग

सन्दर्भ विभाग में केवल शोध छात्र/छात्राओं एवं स्नातकोत्तर छात्र/छात्राओं को ही प्रवेश की अनुमति है। प्रतिदिन लगभग 25 से 30 छात्र सन्दर्भ विभाग का उपयोग करते हैं। इसके अतिरिक्त अन्य विश्वविद्यालयों के शोधछात्र भी सन्दर्भ विभाग का उपयोग करते हैं।

अधिग्रहण विभाग

आलोच्य वर्ष 2000-2001 में 5,27,667.00 रु. की कुल 1274 पुस्तकें क्रय की गई। भारत सरकार तथा उ०प्र० सरकार द्वारा 33382.80 रु. की 477 पुस्तकें भेंटस्वरुप प्राप्त हुई हैं।

तकनीकी विभाग

तकनीकी विभाग द्वारा आलोच्य वर्ष में 3000 पुस्तकों को विषयानुसार वर्गीकृत तथा 2731 पुस्तकों को सूचीकृत किया गया। 2800 पुस्तकों पर टैग आदि का कार्य किया गया।

पुस्तक आवर्तन विभाग

पुस्तक आवर्तन विभाग द्वारा कुल 9842 पुस्तकें इश्यू की गई तथा 9084 पुस्तकें वापस की गई जिसके अन्तर्गत विभागीय खातों में इश्यू पुस्तकें 408 शामिल हैं।

प्रलेखन विभाग

विश्वविद्यालय पुस्तकालय में उपलब्ध पाठ्य सामग्री को पाठकों की सुविधा हेतु पुस्तकालय द्वारा समय समय पर सूचीबद्ध कर प्रकाशित किया जाता रहा है। इसके अन्तर्गत अब तक निम्न प्रकाशन किये जा चुके हैं:-

1. क्लासिकल राइटिंग ऑन वैदिक एण्ड संस्कृत लिट्रेचर इन लाईब्रेरी
2. शोध एवं प्रकाशन सन्दर्भ
3. शोध सारावली
4. कैटलॉग ऑफ बुक्स इन इंगलिश लैंग्वैज ऑन लिट्रेचर इन लाईब्रेरी
5. थिरिरा इन गुरुकुल कॉगड़ी विश्वविद्यालय, हरिद्वार
6. करन्ट लिरट ऑफ पिरियोडिकल्य 1999 और 2001
7. पुस्तकालय में उपलब्ध 17वीं, 18वीं, तथा 19वीं शताब्दी की पुस्तकों का कैटलॉग निर्माण।

पुस्तकालय कम्प्यूटरीकरण सेवा

पुस्तकालय के सम्पूर्ण संग्रह को कम्प्यूटर पर जानकारी दिये जाने हेतु डेटाबेस बनाये जाने का कार्य तीव्र गति से चल रहा है तथा निकट भविष्य में कम्पूटर की स्क्रीन पर सभी उपलब्ध पुस्तकें आ जायेंगी। पुस्तकालय में नेटवर्किंग के द्वारा देश के अन्य पुस्तकालयों में उपलब्ध पुस्तकों के बारे में भी जानकारी प्राप्त हो सकेगी।

पुस्तकालय के डेटाबेस इन्टरनेट सम्बन्धी जानकारी के कार्य में श्री मिथिलेश कुमार संलग्न है। पुस्तकालय में इस वर्ष इन्टरनेट सेवा के द्वारा कुल 6 ईमेल की गई तथा 2 ईमेल भेजी गई। पुस्तकालय कम्प्यूट्रीकरण सेवा के द्वारा अब तक 18000 पुस्तकों का डेटाबेस तैयार कर लिया गया है तथा करन्ट लिस्ट ऑफ पिरियोडिकल 2001 का कार्य प्रगति पर है। डेटाबेस कार्य में दो अंशकालिक व्यक्ति वर्तमान में कार्यरत है। इस वर्ष छात्रों के द्वारा 10 वेबसाइड देखी गई। इस कार्य में दो पुस्तकालय कर्मचारी श्री आनन्दवल्लभ जोशी तथा श्री नवीन कुमार कार्य में संलग्न है।

प्रतियोगितात्मक परीक्षा सेवा

विश्वविद्यालय पुस्तकालय में प्रतियोगिता परीक्षाओं में शामिल होने वाले छात्रों हेतु एक पृथक् संग्रह स्थापित है जिसमें 1500 पुस्तंकें हैं। प्रतियोगिता परीक्षा से सम्बद्ध 15 पत्रिकायें भी मंगवाई जा रही हैं।

फोटोस्टेट सेवा

आलोच्य वर्ष में पुस्तकालय फोटोस्टेट मशीन द्वारा पाठकों एवं विभिन्न विभागों का 65,361.65 रु. का कार्य किया गया तथा फोटोस्टेट विभाग द्वारा कुल 82989 प्रतियाँ फोटोस्टेट की गई। 17 पुस्तकों को फोटोस्टेट द्वारा सुरक्षित किया गया है।

पुस्तकालय के द्वारा वर्ष 2000-2001 में निम्न विशिष्ट कार्य किये गये:-

1. पुस्तकालय कम्प्यूट्रीकरण सेवा के अन्तर्गत कुल 18000 पुस्तकों का डेटाबेस का कार्य पूर्ण किया गया।
2. पुस्तकालय के कर्मचारियों को कम्प्यूटर का प्रशिक्षण दिये जाने हेतु अन्य स्थानों पर भेजा गया। इसके अन्तर्गत पुस्तकालय कर्मचारी श्री मिथिलेश कुमार, श्री आनन्दवल्लभ जोशी, श्री नवीनकुमार, श्री रमेशचन्द, तथा स्वयं पुस्तकालयाध्यक्ष प्रशिक्षण हेतु रुड़की विश्वविद्यालय गये।
3. अन्य पुस्तकालय से सहयोग एवं पाठकों की आवश्यकतानुसार इन्टर लाइब्रेरी लोन पर पुस्तकें उपलब्ध कराया जाना।
4. पुस्तकालय का उपयोग अन्य विश्वविद्यालय के शोध छात्रों ने किया जिनमें प्रमुख रुप से बी.एच.यू. वाराणसी, लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ, श्री अनारदेवी खण्डेलवाल महिला पोलिटैक्निक, मथुरा, रघुनाथ गर्ल्स पी.जी. कॉलेज, मेरठ, आदि के शोध छात्रों ने पुस्तकालय की सामग्री का अवलोकन किया।
5. विश्वविद्यालय में पढ़ने वाले छात्रों को आर्यसमाज से सम्बद्ध साहित्य पुस्तकालय के द्वारा उपलब्ध कराया गया।
6. पुस्तकालय के द्वारा विभिन्न संस्थाओं, कार्यपरिषद्, सीनेट के सदस्य तथा शिक्षा पटल के सदस्यों एवं अन्य गणमान्य व्यक्तियों को भेंटस्वरूप पुस्तकें पुस्तकालय द्वारा उपलब्ध कराई गई।

श्रद्धानन्द अनुसंधान प्रकाशन केन्द्र

विश्वविद्यालय पुस्तकालय के अन्तर्गत श्रद्धानन्द अनुसंधान प्रकाशन केन्द्र का कार्य भी चल रहा है जिसके निदेशक डॉ॰ विष्णुदत्त राकेश संकायाध्यक्ष मानविकी संकाय तथा पुस्तकालयाध्यक्ष इस प्रकाशन केन्द्र के व्यवसाय प्रबंधक का कार्य भी कर रहें है। आलोच्य वर्ष में विश्वविद्यालय प्रकाशनों से 55,012.00 रु. की आमदनी हुई है तथा जिनमें से 8591.00 रु. की 82 पुस्तकें विनिमय में प्राप्त हुई है। अब तक कुल 3,74,073 रु. की बिक्री विश्वविद्यालय को इन प्रकाशनों से हुई है।

श्रद्धानन्द अनुसंधान प्रकाशन केन्द्र के प्रकाशन निम्न हैं-

1. क्लासिकल राइटिंग ऑन वैदिक एण्ड संस्कृत लिट्रेचर
2. वैदिक साहित्य संस्कृति एवं समाज दर्शन
3. वेद का राष्ट्रीय गीत
4. वेद और उसकी वैज्ञानिकता
5. शोध सारावली
6. श्रुतिपूर्णा
7. स्वामी श्रद्धानन्द
8. दीक्षालोक
9. भारतवर्ष का इतिहास भाग प्रथम एवं द्वितीय
10 कुलपुत्र सुनें
11. स्वामी श्रद्धानन्द के सम्पादकीय लेख
12. स्वामी श्रद्धानन्द की सम्पादकीय टिप्पणियां
13. स्वामी श्रद्धानन्द : एक विलक्षण व्यक्तित्व
14. स्वामी श्रद्धानन्द- समग्र मूल्यांकन
15. पं॰ इन्द्र विद्यावाचस्पति कृतित्व के आयाम
16. हिन्दी काव्य को आर्यसमाज की देन
17. प्रगति के बिम्ब

श्रद्धानन्द अनुसंधान प्रकाशन केन्द्र गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय के द्वारा इस वर्ष श्रुति विचार सप्तक नामक ग्रन्थ का प्रकाशन किया गया है। इस ग्रन्थ का विमोचन विश्वविद्यालय के वार्षिकोत्सव के अवसर पर दिनांक 13.4.2001 को परिद्रष्टा प्रो॰ शेरसिंह द्वारा किया गया।

इस समय वर्तमान पुस्तकालयाध्यक्ष डॉ॰ जगदीश प्रसाद विद्यालंकार हैं। आप के कार्यकाल में पुस्तकालय ने पर्याप्त उन्नति की है।

* * *

सन्दर्भ संकेत

1. वार्षिक विवरण 1983-84 पृ.सं. 25-34
2. वार्षिक विवरण 1983-84 पृ.सं. 99

3. वार्षिक विवरण 1983-84 पृ.सं. 101 से 104
4. वार्षिक विवरण 1983-84 पृ.सं. 106-108
5. वार्षिक विवरण 1985
6. वही
7. वार्षिक विवरण 1985
8. वार्षिक विवरण 1985 पृ.सं. 212
9. वार्षिक विवरण 85-86 पृ.सं. ब
10. वार्षिक विवरण 86 पृ.सं. -स
11. वार्षिक विवरण 85-86 पृ.सं. 72-73
12. वार्षिक विवरण 85-86 पृ.सं. 88
13. वार्षिक विवरण 85-86 पृ.सं. 91
14. वार्षिक विवरण 86-87 पृ.सं. 8
15. वार्षिक विवरण 86-87 पृ.सं. 104
16. वार्षिक विवरण 87-88 पृ.सं. 9-10
17. वार्षिक विवरण 87-88 पृ.सं. -
18. वार्षिक विवरण 87-88
19. वार्षिक विवरण 87-88
20. वार्षिक विवरण सत्र 98-90
21. वार्षिक विवरण सत्र 88-89
22. वार्षिक विवरण सत्र 88-89
23. वार्षिक विवरण 1994-95
24. वार्षिक विवरण 1994-95
25. वार्षिक विवरण 1995-96
26. वार्षिक विवरण 1995-96
27. वार्षिक विवरण 1996-97
28. आर्य सामज का इतिहास तृतीय भाग, पृं. 648 लेखक डॉ॰ सत्यकेतु विद्यालंकार

षष्ठ-अध्याय

कन्या गुरुकुल देहरादून

जैसा कि हम लिख चुके है कि कन्या गुरुकुल की स्थापना के लिए महात्मा मुन्शीराम जैसा व्यक्तित्व नहीं था जो धन संग्रह कर सके परन्तु उसी समय ईश्वर की महती अनुकम्पा से आर्य समाज के एक भामाशाह ने धन की समस्या का समाधान इस युक्ति के आधार पर कर दिया कि भगवान् जब देता है तो छप्पर फाड़ कर देता है। वह भामाशाह थे दिल्ली के सेठ रघुमल जी। सेठ रघुमल जी अपने समय के प्रसिद्ध दानी थे। आर्य समाज में उनकी श्रद्धा कैसे उत्पन्न हुई, इसका भी एक मनोरम इतिहास है जो सेठ जी ने पं॰ इन्द्रविद्यावाचस्पति को स्वयं सुनाया था। उस विवरण को पं॰ इन्द्र जी ने इस प्रकार प्रस्तुत किया है" यह तो आपने देखा ही है कि दिल्ली में मेरी दुकान चावड़ी बाजार में है उससे आर्य समाज मन्दिर बहुत समीप है मैं कभी-कभी आर्य समाज के साप्ताहिक अधिवेशन में अपने मित्रों के साथ जाया करता था। एक दिन सुना कि गुरुकुल कांगड़ी के संस्थापक पं॰ मुन्शी राम का प्रवचन होगा। मैं साप्ताहिक प्रवचन में चला गया। पं॰ मुन्शीराम ने सदाचार की व्याख्या करते हुए इस बात पर बहुत खेद प्रकट किया कि जिस बाजार में आर्य समाज का मन्दिर है उसी में वेश्याओं का अड्डा है। शहर भर की प्रसिद्ध वेश्यायें चावड़ी बाजार में ही रहती है। जिस कारण यह बाजार दुराचार का गढ़ बना हुआ है। जिन चौबारों में ये वेश्यायें रहती है वे सब व्यापारियों की जायदाद के हिस्से है यह निश्चय ही पाप की कमाई कभी सफल नहीं होती है जो व्यापारी वेश्याओं को मकान किराये पर देकर धन कमाते है, उनका अपना जीवन तो बिगड़ता ही है, उनकी सन्ताने भी अच्छी चरित्रवान् नहीं रह सकती है, और चरित्रहीन के पास सम्पत्ति कैसे बच सकती हैं मैं देखता हूं कि यहाँ कई ऐसे व्यापारी बैठे है जिनकी जायदाद में वेश्यायें बसी हुई है। मैं उन्हें विश्वास दिलाता हूँ कि वे अपनी जायदाद में से वेश्याओं को निकाल दें तो उनकी आय घटेगी नहीं? बढ़ेगी मेरे कहने से वे यह परीक्षा करके देख लें।

सेठ जी ने कहा कि "मेरे मन पर महात्मा जी के कथन का गहरा असर हुआ मैं समाज से सीघा उठकर दुकान पर गया न केवल अपनी जायदाद में रहने वाली वेश्याओं को एक महीने का नोटिस दिया अपितु दुकान की बही में लिख भी दिया कि इस पीढी की कोई भी जायदाद भविष्य में भी कभी किसी वेश्या को नहीं दी जाये। मेरे इस कार्य का मुझ पर मेरी दुकान पर और सम्पूर्ण व्यापार पर अद्भुत असर पड़ा।"

इसके पश्चात् सेठ जी ने भरे हुए गले से कहा "मुझे मालूम नहीं कि मुझ पर धन की कहाँ से वृष्टि हो गई। हजारों को लाखों, लाखों को करोड़ों में बदलने में देर न लगी। इसके बाद मेरी स्वयं की दान की प्रवृत्ति बढ़ गई। जितना पैसा देता हूँ उससे अधिक आता है। सब स्वामी दयानन्द और पं॰ मुन्शी राम जी की कृपा का फल है।

गुरुकुल कांगड़ी के 21 वें वार्षिक उत्सव पर कन्या गुरुकुल की स्थापना के लिए 2 लाख रुपये के दान की घोषणा की और इसी से कन्या गुरुकुल की स्थापना सम्भव हुई।

कन्या गुरुकुल की स्थापना दीपावली के शुभ अवसर पर सन् 1923 में दिल्ली के दरियागंज मौहल्ले में एक बड़ी कोठी किराये पर लेकर की गई। लगभग चार वर्ष तक कन्या गुरुकुल यहीं दिल्ली में ही रहा।

चार वर्ष के पश्चात् कन्या गुरुकुल का स्थानान्तरण देहरादून में कर दिया गया। आज वर्तमान में राजपुरा रोड़, देहरादून में कन्या गुरुकुल देहरादून गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय के द्वितीय परिसर के रूप में अंगीभूत महाविद्यालय की स्थिति में विकसित हो गया है।

कन्या गुरुकुल के निर्माता

कन्या गुरुकुल देहरादून की स्थापना एवं आरम्भिक विकास में आचार्य रामदेव तथा आचार्या विद्यावती का बड़ा योगदान है। इनके व्यक्तित्व और कार्यों का विश्लेषण कन्या गुरुकुल देहरादून की विकास की उन प्रवृत्तियों पर प्रकाश डालता है जिनके कारण इसे स्थापित किया गया था। आचार्य रामदेव कन्याओं की शिक्षा के लिए सदैव चिन्तित रहा करते थे। उन्हें गृहस्थ जीवन में भी अपनी पुत्रियों से ही अधिक स्नेह था संभवतः इसीलिए उन्होंने 1933 में गुरुकुल कांगड़ी से जाने के पश्चात् कन्या गुरुकुल के विकास तथा उसके विकास की योजनाओं में ही अपने मन को लगाया। इसलिए उन्होंने गुरुकुल कांगड़ी से जाने के पश्चात् रात-दिन कन्या गुरुकुल देहरादून की उन्नति के लिए कार्य किया और इसके लिए उन्होंने कभी अपने स्वास्थ्य की परवाह नहीं की। यह कहना अतिशयोक्ति पूर्ण नहीं होगा कि कन्या गुरुकुल के लिए ही वे शहीद हुए। वास्तव में शहीद दो प्रकार के होते है। प्रथम वे होते है जो किसी उच्च आदर्श के लिए हंसते-हंसते मृत्यु का आलिंगन करते है। इस प्रकार के बलिदानी हमारी श्रद्धा और सम्मान का अधिकारी बनते है। दूसरे प्रकार के वे शहीद होते है जो अपना समस्त जीवन कार्य, शक्ति तन और मन और धन तिल-तिल करके अपने आदर्शों की बलिवेदी पर चढ़ाते है। यह दूसरे प्रकार के शहीद ठंडा (Cold Blood) के नाम से अधिक महत्वपूर्ण माने जा सकते है क्योंकि किसी आदर्श के आवेश में एकाएक बलिदान करना कठिन कार्य नहीं है जितना कि तिल-तिल करके एक संस्था के प्रति सम्पूर्ण जीवन को न्यौच्छावर कर देना कठिन कार्य है। क्योंकि वह व्यक्ति अपनी धुन में अपने जीवन का एक-एक क्षण और अपनी शक्ति का एक-एक अणु उन आदर्शों की सेवा में उत्सर्जित कर देता है। आचार्य रामदेव का उत्सर्ग भी इसी भांति का था। कोई व्यक्ति तो मरकर शहीद होता है परन्तु आचार्य रामदेव तो अपने जीवन काल में ही अपनी सब शक्तियों का आर्य समाज, गुरुकुल कांगड़ी तथा कन्या गुरुकुल देहरादून के लिए अपने आप को होम करके, वे जीवित ही शहीद बन चुके थे। यह कहना उचित ही है कि उन्होंने कन्या गुरुकुल देहरादून को अपने रक्त से सींचा था।

आचार्य रामदेव का शिक्षण अधिकतर लाहौर में हुआ फिर भी डी.ए.वी. स्कूल में शिक्षा ग्रहण करने के लिए वे गए और यही से उन्होंने मैट्रिक पास किया। बी.ए. परीक्षा उन्होंने व्यक्तिगत छात्र के रूप में उत्तीर्ण की थी। 1905 ईसवीं में वे तत्कालीन जीन्द रियासत में इन्सपेक्टर पद पर नियुक्त हो गए। जब वे वहाँ जाने वाले थे तो उनको पं० मुन्शीराम जी का तार मिला तार मिलते ही वे उनसे मिलने के लिए चले गए। पं० मुन्शीराम ने उन्हें अपना जीवन गुरुकुल कांगड़ी को देने के लिए कहा इस तरह आचार्य रामदेव इंस्पेक्टर की नौकरी को लात मारकर गुरुकुल कांगड़ी के लिए उन्होंने अपना जीवन ही समर्पित कर दिया गुरुकुल कांगड़ी में उनके योगदान की चर्चा गुरुकुल कांगड़ी के प्रसंग में यथास्थान कर आये है। यहाँ पर उन्हीं बातों को लिखना अनुचित नहीं होगा। जब उन्होंने 1933 में राष्ट्रीय आन्दोलन में सम्मिलित होने का निर्णय किया उसके बाद से ही वे कन्याओं के लिए गुरुकुल बनाने की योजना तैयार करने में और उसको व्यावहारिक रूप देने में लगे रहे उसका यही कारण प्रतीत होता है कि स्त्री शिक्षा के बारे में उनके क्रान्तिकारी विचार थे। संभवत उन्हीं अपने विचारों के कारण अथवा प्रेरित होकर गुरुकुल कांगड़ी के साथ-साथ कन्या गुरुकुल की स्थापना के लिए भी महान् प्रयास किया। इसलिए स्त्री शिक्षा के

विषय में तथा कन्या गुरुकुल के विषय में उनके कर्त्तव्य को संक्षिप्त रूप से प्रस्तुत करना उचित प्रतीत होता है।

कहते है कि तुलसीदास और हनुमान को सर्वत्र राम के दर्शन होते थे। युवक रामदेव को प्रत्येक स्थान पर ऋषि दयानन्द और वेदों का दर्शन होता था यद्यपि बचपन से वे किसी गुरुकुल में पढ़कर वे वेदों के विद्वान् नहीं हुए थे परन्तु उन्होंने वेदों का अध्ययन गुरुकुल में आकर बड़ी श्रद्धा और निष्ठा से किया था। इसलिए उन्होंने अपने जीवन का महान् लक्ष्य वैदिक आदर्शों की आधारशिला पर ही शिक्षा के क्षेत्र में एक अभ्युदय को निर्मित करते हुए उसका एक भव्य भवन बनाने का संकल्प लिया था। उनका यह महान् लक्ष्य तब तक पूरा नहीं हो सकता था जब तक कि मानव समाज का आधा भाग नारी जाति पीड़ित हो पद दलित हो, और अवनत हो। शिक्षा की दृष्टि से पिछड़ी हुई नारी जाति की गृहिणी अनेक सामाजिक कुरीतियों में ग्रस्त थी। इस युग में उसे शिक्षा पाने का अधिकार नहीं था। जहाँ नारी जाति को 'गृहिणी गृहं उच्यते' के रूप में प्रतिष्ठित किया गया था परन्तु इस समय उसकी स्थिति बद से भी बदतर थी। वह अपने घर में नौकरानी से बढ़कर न थी। हमारे नायक आचार्य रामदेव का भावुक हृदय नारी जाति की दुर्दशा को देखकर तिलमिला उठा। इसलिए उन्होंने दृढ़ निश्चय किया कि स्त्रियों का उद्धार तथा उन्नति शिक्षा द्वारा ही संम्भव है और वे यह स्पष्टरूप से मानते थे कि सामाजिक रूढ़ियों कुरीतियों के बोझ से दबी हुई निश्चेष्ट और मृत प्राण नारी में शिक्षा ही नवजीवन का संचार कर सकती है। जब वह शिक्षित हो जाएगी तो वह आत्म विश्वास आत्म निर्भरता और स्वावलम्बन की भावना से ओत-प्रोत हो जाएगी। इसलिए वास्तव में शिक्षा ही उसके जीवन में संजीवनी का कार्य कर सकती है।

आचार्य रामदेव का यह दृष्टिकोण स्त्री शिक्षा के सम्बन्ध में था कि वर्तमान नारी को वैदिक युग की नारी का अनुसरण करना चाहिए और इस युग की नारी को वैदिक युग की नारी जैसा अपनी उच्च स्थिति प्राप्त करनी चाहिए जहाँ वैदिक युग में यह कहा गया था कि "स्त्री ब्रह्मा वभूविध" अर्थात् स्त्री ब्रह्मा के पद पर प्रतिविष्ठत हो।

इसके मतानुसार प्राचीन युग की भांति उसे आध्यात्मिक मानसिक और शारीरिक सभी प्रकार की शिक्षा का प्रबन्ध एवं व्यवस्था होनी चाहिए। उनका आदर्श इस विषय में विदुषी गृहिणी का था। वे नारी को बौद्धिक और मानसिक दृष्टि से इतना योग्य बनाना चाहते थे की गार्गी और भारती सदृश याज्ञवल्क्य और शंकराचार्य जैसे दिग्गज विद्वानों को शास्त्रार्थ में उन्हें पराजित कर सके। लोपामुद्रा और घोषा की तरह वैदिक मन्त्रों का अर्थ दर्शन करने वाली ऋषिशा के रूप में प्रतिष्ठित हो। धर में साम्राज्ञी का पद प्राप्त करें, गौतम, कणाद, व पतञ्जलि दयानन्द और शिवाजी जैसे महापुरुषों की जननी बनें। 'माता निर्माता भवति' की उक्ति के अनुसार अपने पुत्रों-पुत्रियों का निर्माण करें। उनका कार्य क्षेत्र केवल घर की दीवारी ही न हो, अपितु, वे समाज औद देश के विशाल कार्यक्षेत्र में पदार्पण करें, अपने गृह जीवन और सामाजिक जीवन में पुरुषों के समकक्ष अथवा उनसे आगे बढकर भागीदार बनें। इसलिए ऊंची शिक्षा के द्वारा आप अपने स्वाभाविक वृत्तियों और भावनाओं में विकसित करके गृहस्थ जीवन को सत्य और मधुर बनाते हुए भूमि को स्वर्ग बनाये।

आचार्य रामदेव स्त्री शिक्षा के इस आदर्श को मूल रूप देने के लिए प्रारम्भ से ही उत्सुक थे। वे प्रारम्भ से ही गुरुकुल के संचालको और सभा के अधिकारियों से यह आग्रह करते रहते थे कि एक ऐसे ही उच्च आदर्श की शिक्षा संस्था शीघ्र कन्याओं के लिए भी स्थापित करनी चाहिए परन्तु उन दिनों गुरुकुल कांगड़ी स्वयं एक परीक्षण के रूप में चलाया जा रहा था इसलिए गुरुकुल के अधिकारीगण इस नए परीक्षण के करने में अभी संकोच कर रहे थे, आचार्य रामदेव की इच्छा बहुत ही तीव्र रूप में उनके हृदय में जागृत

हो चुकी थी इसलिए उन्होंने अपने परीक्षण को अपने घर में ही प्रारम्भ करना निश्चय किया। आचार्य रामदेव के यहाँ कई पुत्रियाँ थी इसलिए उन्होंने अपने विचारों को मूर्त रूप देने के लिए घर में ही कन्या पाठशाला प्रारम्भ कर दी वास्तव में उनका घर ही एक परीक्षणशाला बन गया यह परीक्षण कई वर्ष तक चलता रहा। यह कन्या पाठशाला कुमारी विद्यावती सेठ की अध्यक्षता में चलती रही और कन्या गुरुकुल देहरादून की कु० विद्यावती सेठ ही प्रथम आचार्या नियुक्त की गयी।

आचार्या विद्यावती

जब कन्या गुरुकुल की स्थापना हुई, उस समय इसका नाम कन्या गुरुकुल इन्द्रप्रस्थ था परन्तु दिल्ली का वह स्थान कन्या गुरुकुल के लिए उपयुक्त नहीं था, उस समय इस प्रकार के स्वास्थ्यवर्धक मलेरिया उन्मूलन आदि विभाग नहीं थें। अतः कन्या गुरुकुल स्थापित होने के लिए कुछ समय बाद ही वहाँ मलेरिया का प्रकोप तथा मलेरिया के फैलने से ऐसी स्थिति उत्पन्न हो गई कि छात्राएं अध्यापिकाएं और आचार्य भी बीमार पड़ गई। इस प्रकार यह स्थान कन्या गुरुकुल के लिए स्वास्थ्य की दृष्टि से पूर्ण रूपेण अनुपयुक्त माना जाने लगा और उसकी स्वामिनी सभा ने इसका स्थानान्तरण करने का निश्चय किया और इसके स्थान का निश्चय करने के लिये एक उपसमिति का गठन किया।

उपसमिति ने कन्या गुरुकुल के लिये नये स्थान की खोज मं पर्याप्त समय लगाया। उपसमिति ने पर्याप्त खोज-बीन के पश्चात् यह संस्तुति की थी कि हरिद्वार के निकट बहादराबाद, कुरुक्षेत्र और देहरादून इन तीनों स्थानों में से एक स्थान पर कन्या गुरुकुल को स्थानान्तरित किया जायें आचार्य रामदेव इसे गुरुकुल कांगड़ी के समीप बहादराबाद में रखने के पक्ष में थें क्योंकि उस समय गुरुकुल कांगड़ी गंग नहर के समीप वर्तमान समय में जहाँ पर है वहाँ आ चुका था इस विषय में उनका यह तर्क था कि गुरुकुल कांगड़ी में अध्यापन कर रहें प्राध्यापकों की पत्नियाँ कन्या गुरुकुल में अध्यापन का कार्य भी कर सकती है इसके विपक्ष में यह भी तर्क दिया जा सकता है कि बहादराबाद देहाती क्षेत्र है इसलिए वहाँ गुरुकुल को खोलना उचित नहीं होगा। अन्त में यह निर्णय किया गया कि कन्या गुरुकुल को देहरादून में रमणीय स्थान पर, क्योंकि इन दिनों देहरादून एकांन्त शान्त सुरम्य और सुरक्षित स्थान समझा जाता था।

अतः कन्या गुरुकुल को 1-5-1927 को कालिन्दी के कूल से देहरादून में ऋषि पर्णा नदी के पास उस स्थान पर लाया गया जो ऐतिहासिक दृष्टि से महत्वपूर्ण था यह वह स्थान था जहाँ पर सन् 1814 में नेपाल के वीर सेनानी बलभद्र थापा के नेतृत्व में गोरखो ने देहरादून को अंग्रेजों के प्रभुत्व से बचाए रखने के लिए जो महान् संघर्ष किया था अद्‌भुत शौर्य अनुपम पराक्रम का जिन्होंने प्रदर्शन किया था उसकी स्मृति को सुरक्षित रखने के लिए बनाये गये स्मारक के निकट राजपुरा रोड पर गुरुकुल को स्थानान्तरित किया गया। देहरादून में पहले राजपुर रोड पर देहरादून के प्रसिद्ध रईस लाला बलबीर सिंह की दो कोठियाँ एक ही कम्पाउण्ड में किराये पर ली गयी और स्थायी स्थान के लिये खोज प्रारम्भ हो गयी। अतः अन्त में 40 बीघे वाली एक जमीन को अधिक उपयोगी समझा गया। भूमि सहित कोठी का मूल्य 26,000/- तय किया गया। इसलिये 12 फरवरी सन् 1930 को यह स्थान खरीद लिया गया और पंजीकरण की कार्यवाही प्रारम्भ होने पर भवनों का निर्माण कार्य प्रारम्भ हो गया।

उस समय आर्य जनता को कन्या गुरुकुल की कितनी आवयश्कता थी यह इस बात से ज्ञात होता है कि छात्राओं के आरम्भिक प्रवेश के साथ ही 87 बालिकाओं ने प्रवेश लिया और समस्त आर्य जनता में एक हर्ष की लहर दौड़ गई और यही कारण था कि स्थानाभाव के कारण प्रवेश रोक दिया गया परन्तु 5-6 वर्षों में ही कन्याओं की संख्या 246 तक पहुंच गयी कन्या गुरुकुल की छात्राओं में न केवल पंजाब

की ही छात्राएं थी परन्तु अन्य प्रान्त की भी छात्राएं थी इसके साथ ही वर्मा, फिजी और अफ्रीका जैसे सुदूरवर्ती देशों में बसे भारतीयों की कन्या भी अध्ययन के लिये कन्या गुरुकुल देहरादून में समय-समय पर आयी थी। 1930 में कन्या गुरुकुल की 135 छात्राएं अन्य प्रान्तों तथा भारत से बाहर के देशों की थी।

कन्या गुरुकुल देहरादून का विकास

कन्या गुरुकुल देहरादून के विकास की गति बहुत ही तीव्रता से हुई। इस विकास में अन्य कारणों के साथ देहरादून का रमणीय स्थान एवं हिमालय की उपत्यका में स्थापित दून घाटी का पर्यावरण भी प्रमुख कारण रहा है। यहाँ पर न अधिक गर्मी होती है और न ही अधिक शीत का प्रकोप होता है। कन्या गुरुकुल देहरादून रेलवे स्टेशन से राजपुर होकर मंसूरी जाने वाली पक्की सड़क के दायीं ओर रेलवे स्टेशन से लगभग 2 मील दूर पर स्थित है। यह स्थान सुन्दर सघन वन तथा प्राकृतिक दृश्यों से घिरी हुई स्वास्थ्यप्रद समुद्रीय स्तर से लगभग अठारह सौ फीट ऊंची भूमि में स्थित है। यहाँ पर जलवायु ग्रीष्म ऋतु तथा शीत दोनों ऋतुओं में समान रूप से स्वास्थ्यप्रद है। छात्राओं के निवास के लिए 75 बीघा भूमि सुन्दर तथा विस्तृत आश्रम (छात्रावास) भोजनशाला, स्नानागार, सभाभवन, औषद्यालय तथा चिकित्सालय एवं विद्यालय एवं अन्य आवश्यक भवन है। गुरुकुल की भूमि तथा भवनों का वर्तमान मूल्य लगभग 14 करोड, रुपये है। छात्राओं की क्रीड़ा के लिए खुले मैदान उपलब्ध है।

अपनी प्राकृतिक रमणीय छटा के कारण ही देहरादून में भारतीय सरकार के बड़े-बड़े संस्थान एवं केन्द्र है। वहाँ वन्य विभाग तथा सैनिक शिक्षा के उच्चतम कॉलेज है। अंग्रेजी शिक्षण संस्थाओं की तो यहाँ भरमार है। सर्वे ऑफ इण्डिया का सबसे बड़ा कार्यालय भी यहाँ है।

पुराने पाठ्यक्रम के अनुसार 1931 से ही छात्राएं अपना अध्ययन पूर्ण करके स्नातिकाएं बनकर निकलने लगी। 1931 में स्नातिकाओं का पहला ग्रुप विद्यालंकृता की उपाधि धारणं करके निकला इनमें सुश्री सुलभा, सुशीला देवी, शान्ति, चन्द्रप्रभा, दमयन्ती, शन्ता, सुशीला देवी आदि के नाम सम्मिलित हैं।

जिस प्रकार कन्या महाविद्यालय जालन्धर की स्नातिकाओं ने अपने इस संस्था के लिए बहुत अधिक योग दान किया था उसी प्रकार गुरुकुल की स्नातिकाओं ने भी मातृ संस्था की सेवा के व्रत का पालन करते हुए इसकी उन्नति में पूर्ण रूपेण सहयोग प्रदान किया। इनमें आचार्य रामदेव के परिवार के कुछ व्यक्तियों के नाम उल्लेखनीय है। श्रीमती सीता देवी एम॰पी॰ ने आरम्भिक काल में 7 वर्ष तक अपनी अवैतनिक सेवाएं अर्पित करके इस संस्था में रात-दिन कार्य किया। गत 45 वर्षों से श्रीमती दमयन्ती कपूर, जो इस समय भी कन्या गुरुकुल देहरादून की आचार्या हैं। इनके कार्यकाल में कन्या गुरुकुल देहरादून ने चतुमुर्खी विकास किया। आप आचार्य रामदेव की सुपुत्री हैं। आचार्य रामदेव के सुपुत्र श्री यशपाल सिद्धान्तालंकार ने लगभग 8 वर्ष तक मुख्याधिष्ठता के रूप में इस संस्था की सेवा की थी। कन्या गुरुकुल देहरादून के आरम्भ से ही आचार्या विद्यावती सेठ के साथ-साथ उनकी बहिनों ने भी कन्या गुरुकुल के लिए सराहनीय योगदान दिया है। श्रीमती ओमवती ओ॰एल॰ कई वर्ष तक उन्होंने छात्राओं को अवैतनिक रूप में न केवल संस्कृत साहित्य का अध्यापन किया अपितु उन्होंने स्त्रियों को उपयोगी शिल्प कलाओं, बुनाई, क्रोसिया आदि की शिक्षा भी दी थी। इन कलाओं के प्रशिक्षण हेतु भवन निर्माण के लिए एक हजार रूपये का दान भी दिया। कलाकोमुदी नामक पुस्तक लिखकर उसकी समस्त आय गुरुकुल को प्रदान की थी। उनकी अन्य बहिन श्रीमती राधारानी ने कन्याओं के आश्रम व्यवस्था के संचालन में महत्वपूर्ण सहयोग दिया था।

1923 में कन्या गुरुकुल की स्थापना के समय कु॰ विद्यावती सेठ इसकी आचार्या तथा पं॰ विश्वम्भरनाथ पहले मुख्याधिष्ठाता बने। 22 वर्ष, तक संस्था की सेवा करने के बाद आचार्या विद्यावती जी ने अवकाश

ग्रहण किया। इस गुरुकुल के विकास में उनका योगदान स्वर्णाक्षरों में अंकित करने योग्य है। उन्होंने अपना संम्पूर्ण यौवन इसे समर्पित किया। यह उनकी तपस्या तथा कर्मठता का ज्वलन्त प्रतीक है।

उनके बाद 1945 से 1951 तक श्रीमती चन्द्रावती लखनपाल ने आचार्या पद का भार ग्रहण किया। सहायक मुख्याधिष्ठाता पहले पण्डित सोमदत्त विद्यालंकार तथा व्यवस्थापक पण्डित ठाकुरदत्त शर्मा वैद्य अमृतधारा ने मुख्याधिष्ठाता के रूप में गुरुकुल की अविस्मरणीय अवैतनिक सेवा की। सन् 1957 से 31 मई, 1963 तक पण्डित यशपाल विद्धान्तलंकार ने मुख्याधिष्ठाता तथा व्यवस्थापक के पद पर रहकर इस संस्था के विकास में अत्यन्त महत्वपूर्ण योगदान किया। इसी समय 56 हजार रुपये की लागत से आचार्य रामदेव सभा भवन तथा आचार्य विद्यावती सेठ भोजन भवन का निर्माण किया गया। एक जून 1963 ई० को इस संस्था में ही सेवा करते हुए पं० यशपाल का स्वर्गवास हो गया।

1953 में आचार्य पद पर श्रीमती दमयन्ती कपूर ने कार्य भार संभाला। इस समय भी आप कन्या गुरुकुल देहरादून के प्रतिष्ठित पद आचार्या के रूप में गुरुकुल की सेवा कर रही है। आप दिन-रात कन्या गुरुकुल की उन्नति के लिए ही चिन्तित रहती हैं। आप लगभग 45 वर्षों से विभिन्न क्षेत्रों में कन्या गुरुकुल की उन्नति के लिए कार्य कर रही है कि कन्या गुरुकुल देहरादून उन्नति के चरम शिखर पर पहुंच सके। इनके कार्यकाल में शिक्षा के स्तर में पर्याप्त प्रगति हुई हैं। इसके साथ ही महाविद्यालय को छात्राओं द्वारा देहरादून तथा उसके आस-पास क्षेत्र में सांस्कृतिक कार्यक्रम, कला, और संगीत के क्षेत्रों में नए कीर्तिमान् स्थापित किये है। आचार्य दमयन्ती के समय में ही 1957 से अलंकार उपाधि तक अध्ययन-अध्यापन प्रारम्भ हुआ। 12 वर्षों के पाठ्यक्रम की जगह 14 वर्षों के पाठ्य क्रम प्रारम्भ किया गया, अतः यहाँ की स्नातिकाओं को भी विद्यालंकार की उपाधियाँ दी जाने लगी।

कन्या गुरुकुल की स्नातिकाओं का विभिन्न क्षेत्रों में योगदान

इस गुरुकुल की स्नातिकाओं ने अनेक क्षेत्रों में अपना स्थान बनाया है यहाँ की स्नातिकायें एक कुशल गृहिणी के रूप में सफल रही है इसके साथ ही राष्ट्र भक्ति, शिक्षा और सामाजिक कार्यों में इन्होंने महत्वपूर्ण योगदान प्रदान किया है इन्होंने प्रत्येक क्षेत्र में अपनी अमिट छाप छोड़ी है, इसलिए इनका वर्चस्व एवम् यश सभी क्षेत्रों में फैला है।

यहाँ की सुयोग्य स्नातिकाएं श्रीमती सीता देवी स्वतन्त्रता आन्दोलन में अग्रिम पंक्ति की महिलाओं में से थी और कांग्रेस की एक प्रसिद्ध भारतीय स्तर की नेता थी। ये कई वर्ष तक भारतीय लोक सभा की सदस्या भी रही थी। आपने पंजाब के अन्दर बड़े-बड़े सामाजिक कार्य किये। उस युग में समाज का कोई ऐसा क्षेत्र नहीं था जिसमें आर्य समाज ने बढ़-चढ़कर भाग न लिया हो चाहे वह हरिजानोंद्वारा हो, शिक्षा का प्रचार एवम् प्रसार श्रीमती सीता देवी ने सभी क्षेत्रों में नेतृत्व प्रदान किया। इसके साथ ही राजनैतिक क्षेत्रों में उस समय कांग्रेस स्वतन्त्रता आन्दोलन में राष्ट्रीय आन्दोलन को चला रही थी श्रीमती सीता देवी उस समय पंजाब की ही नहीं अपितु भारत की महिलाओं में से थी जिन्होंने महिलाओं का नेतृत्व किया उस समय सामाजिक आन्दोलन एवम् राजनैतिक आन्दोलनों में बहुत ही कम महिलाये आती थी इसके बाद उन्होंने महिला सदन बड़ौदा की मुख्याधिष्ठात्री के रूप में कार्य करते हुए सैकड़ों महिलाओं को शिक्षित किया और सामाजिक और आर्थिक दृष्टि से महिलाओं को ऊंचा उठाने का महत्वपूर्ण कार्य किया।

आर्य समाज के प्रचार एवम् प्रसार में भी कन्या गुरुकुल की अनेक स्नातिकाओं ने बहुत ही महत्वपूर्ण कार्य किया है। अत्यधिक ख्याति प्राप्त विदुषी आर्य उपदेशिका श्रीमती चन्द्रप्रभा विद्यालंकृता ने जीवन भर आर्य समाज का एवम् वैदिक धर्म का प्रचार एवम् प्रसार किया है उन्होंने आर्य समाज सरगोधा पाकिस्तान

और दिल्ली बिड़ला मिल की आर्य समाजों में उल्लेखनीय सेवा की है। श्रीमती अरुन्धती विद्यालंकृता ने क्वेटा, ब्लुचिस्तान में आर्य समाज का मिशनरी भावनाओं से बहुत अत्यधिक कार्य किया है। श्रीमती सुशीला देवी विद्यालंकृता के नाम से आंध्र प्रदेश का कौन कौन आर्य स्त्री-पुरूष परिचित नहीं हैं अर्थात् आप एक ओजस्वी वक्ता के रूप में जानी जाती है। आप वर्षों तक आर्य प्रतिनिधि से बढ़-चढ़कर भाग लेती रही है।

श्रीमती सत्यवती विद्यालंकृता ने अफ्रीका में आर्य समाज के क्षेत्र में बहुत अधिक सेवा की दक्षिण अफ्रीका में आर्य समाज का कार्य करना कोई सामान्य बात नहीं है। श्रीमती सत्यवती विद्यालंकृता इनमें से थी जिन्होंने दक्षिण अफ्रीका के अन्दर आर्य समाज की जड़ों की सींचा है। श्रीमती शान्ता विद्यालंकृता कोचर (नैनीताल) आर्य समाज की बहुत सेवा की है आपने ऐसे दुर्गम स्थानों पर जाकर कार्य किया है जहाँ सामाजिक कार्य करना बड़ा ही दुष्कर कार्य है श्रीमती सुमेधा विद्यालंकृता ने नागपुर में आर्य समाज के क्षेत्र में बहुत अधिक कार्य किया है वहाँ पर अछूतोद्धार कार्यक्रम में आप बढ़-चढ़कर भाग लेती रही। आपने अनेक प्रकार की रूढ़ियों के विरुद्ध संघर्ष किया है श्रीमती ब्रह्मवती विद्यालंकृता (नारंग) देहरादून में अनेक सामाजिक कार्यों में बढ़-चढ़कर भाग लेती रही है आपने यहाँ पर महिलाओं के लिये बहुत अधिक कार्य किया है। श्रीमती चन्द्रकान्ता विद्यालंकृता महाराष्ट्र में नागपुर आर्य समाज की एक प्रसिद्ध कर्मठ नेता मानी जाती है आप हमेशा स्त्री उत्पीडन के विरुद्ध कार्य करती रही है आपने सदैव यह प्रयास किया है कि महिलाओं के अन्दर से निरक्षरता समाप्त की जा सकती है। आपने आर्य समाज के सिद्धान्तों के प्रचार-प्रसार में बहुत ही परिश्रम से कार्य करते हुये आर्य समाज को संगठित करने का प्रयास किया है। श्रीमती दयावती विद्यालंकृता जयपुर में आर्य समाज का प्रचार-प्रसार कर रही है और आर्य समाज की समस्त गतिविधियों में भाग लेती रही है स्त्रियों के अधिकार के लिये सदैव संधर्ष करती रही हैं

श्रीमती वेदवती विद्यालंकृता आर्य समाज की गतिविधियों में बढ़-चढ़कर भाग ले रही है। आर्य सामज के संगठन को सशक्त बनाने में आप सदैव तत्पर रहती है। आप रूढ़ियों से सदा संघर्ष करते हुये स्त्री उद्धार के कार्य में सदैव तन-मन-धन से कार्य करती रही है आपने सीतापुर में स्त्री आर्य समाज की स्थापना भी की है आप सदैव आर्य समाज के सिद्वान्तों के लिये सजग रहती है।

श्रीमती दमयन्ती कपूर जो कन्या गुरुकुल देहरादून की चार दशकों से भी अधिक आचार्या है आपने गुरुकुल देहरादून की उन्नति के शिखर पर पहुंचा दिया है आपने अपना सामाजिक जीवन कस्तूरबा पालिका विद्यालय में प्रधानाचार्य पद से प्रारम्भ किया आप बिड़ला सामाजिक विद्यापीठ पिलानी में प्रवक्ता पद पर भी कार्य कर चुकी है आप देहरादून के आर्य समाज के कार्यक्रमों में सक्रिय भाग लेती है अन्य सामाजिक कार्यों में भी आप सदैव बढ़-चढ़कर भाग लेती है और नेतृत्व प्रदान करती है। आप स्पष्ट वक्ता है जो गुण आचार्य रामदेव जी में थे उनकी पुत्री होने के नाते उनके सभी गुण आप में भी समाहित हो गये है जब से आप कन्या गुरुकुल देहरादून में आयी है तभी से अपनी मातृ संस्था में अहर्निश स्वास्थ्य की चिन्ता न करते हुए कार्यलीन है। आपके आचार्यत्व में कन्या गुरुकुल देहरादून का अनुशासन तथा प्रशासन दोनों ही अनुकरणीय है आपके यहाँ कभी कोई हड़ताल नहीं होती कभी भी कर्मचारी हड़ताल पर नहीं जाते है आपके अनुशासन का उदाहरण हमें शिक्षण संस्थाओं में दिया जाता है आप स्वावलम्बन और स्वाभिमान की साक्षात् देवी है और आपके प्रबन्ध और अनुशासन को देखकर आर्य समाज के क्षेत्र में यह चर्चा होती है कि माता दमयन्ती के पश्चात् कन्या गुरुकुल देहरादून का क्या होगा यह संस्था बिखर तो नहीं जायेगी इत्यादि।

श्रीमती सुधामयी विद्यालंकृता ने आर्य समाज के क्षेत्र में श्लाघनीय कार्य किया है आपने प्रत्येक समाज सेवा के कार्यक्रमों में बढ़-चढ़कर भाग लिया है आपने ग्रामीण अंचल में जाकर, ग्रामीण महिलाओं

के अज्ञान को दूर करने में आर्य समाज के सिद्धान्तों का प्रचार एवं प्रसार किया है। श्रीमती सुधामयी विद्यालंकृता ने युद्ध के समय सैनिकों की सेवा का कार्य बड़ी ही लग्न के साथ किया है गुरुकुल कांगड़ी की स्त्री समाज में उन्होंने नेतृत्व प्रदान करते हुये प्रधान और मन्त्री पदों को अलंकृत किया। बच्चों में आर्य समाज के प्रति आकर्षण एवं अभिरुचि उत्पन्न करने के लिए अनेक मनोरंजक कार्यक्रमों का सफलता पूर्वक आयोजन किया है श्री गोविन्द बल्लभपन्त कृषि विश्वविद्यालय पन्त नगर में महिला मण्डल (लेडीज क्लब) की आप कई वर्षों तक महासचिव रही तथा अन्य पदों पर भी कार्य किया। कृषि विश्वविद्यालय द्वारा प्रतिवर्ष समायोजित किसान मेलों के अवसरों पर इन्होंने महिला मंगल दल के विविध स्टालों पर भी संचालन किया था सन् 1971 में बंगला देश के स्वतंत्रता संघर्ष के अवसर पर भारतीय सेना के जवानों के लिये खाद्य सामग्री एकत्रित करके सैनिक परिवारों और जवानों के लिये ऊनी वस्त्र महिलाओं से बनवाकर और गर्म कपड़े तैयार करके भिजवायें। पन्त नगर में एक कैम्पस स्कूल की स्थापना के लिये धन संग्रह किया एक प्रकार आपने-अपने समस्त जीवन में अनेक सामाजिक कार्य किये।

कन्या गुरुकुल देहरादून की अनेक स्नातिकाओं ने ललित कलाओं के क्षेत्र में भी पर्याप्त ख्याति अर्जित की है कु० अर्चना विद्यालंकृता ने अभिनय के क्षेत्र में सशक्त अभिनय किया तथा अनेक प्रकार की उपलब्धियों को प्राप्त करने में सशक्त अभिनय किया तथा अनेक प्रकार की उपलब्धियों को प्राप्त करके प्रसिद्धि को प्राप्त किया आप दिल्ली नेशनल स्कूल आफ ड्रामा की यशस्विनी कार्यकर्त्ता के रूप में लग्न के साथ कार्य करती रही है श्रीमती वीणा विद्यालंकार लखनऊ आकाशवाणी से एक कलाकार के रूप में स्थापित हो रही है। कु० विमला देवी विद्यालंकृता एक प्रसिद्ध चित्रकार के रूप में विख्यात है। आपने श्री शारदा वकील के संरक्षण में चित्रकला की शिक्षा प्राप्त की है आपने रामायण और अजन्ता की चित्रकारी की विशेष योग्यता प्राप्त की है।

कन्या गुरुकुल की कुछ स्नातिकाओं ने उद्योग के क्षेत्र में भी अपना नाम किया है श्रीमती रुक्मिणी विद्यालंकार (नीलु गुप्ता के नाम से प्रसिद्ध) भारत वर्ष की एक सुप्रसिद्ध उद्योग संस्था की डायरेक्टर है आप कई बार व्यापार के कार्य से विदेश जा चुकी है आप दिल्ली में सोनाली इम्पोरियम की अध्यक्षा है।

कन्या गुरुकुल की अनेक स्नातिकाओं ने शिक्षा के क्षेत्र में महत्वपूर्ण कार्य किया है एक प्रकार से आप शिक्षा के क्षेत्र को अपनाकर भावी पीढ़ी के निर्माण एवम् विकास में बहुत अच्छा योगदान प्रदान कर रही है यह ज्ञातव्य है की यहाँ कि अनेक विदुषी स्नातिकायें विविध विषयों में उच्च शिक्षा के पश्चात् भारत वर्ष के अनेक विश्वविद्यालयों एवम् महाविद्यालयों में अध्यापन का कार्य सुचारू रूप से कर रही है यहाँ की अनेक स्नातिकाओं ने संस्कृत, हिन्दी, दर्शन, इतिहास आदि विषयों में शोध कार्य सम्पूर्ण करके डाक्टरेट की उच्च उपाधि प्राप्त की। डॉ० शान्ता विद्यालंकृता, डॉ० मधु विद्यालंकृता दिल्ली के जानकी देवी महाविद्यालय में हिन्दी साहित्य विभाग में रीडर पद पर कार्य कर रही है। डा० ब्रह्मवती विद्यालंकृता (नारंग) महादेवी स्नातकोतर महाविद्यालय देहरादून श्रीमती वेदवती विद्यालंकृता नेशनल स्माईल डिग्री कॉलेज मेरठ, डॉ० रामा विद्यालंकृता (बुगलिश) मुन्नालाल डिग्री कॉलेज सहारनुपर में संस्कृत विभाग की अध्यक्ष पद पर सुशोभित रही है डॉ० सुमेधा विद्यालंकृता लाल बहादुर शास्त्री विद्यापीठ दिल्ली में रीडर पद पर कार्य करते हुए रिटायर हुई थी। आप बहुत ही मधुर भाषी विदुषी स्नातिका है। इस समय आप आर्य समाज के प्रचार कार्य में, आर्य समाज के अनेक सम्मेलनों में भाषण देती है इसके साथ ही आर्य समाज के अनेक सामाजिक कार्यों में सक्रिय भाग लेकर ख्याति अर्जित कर रही है। आप स्व० पं० सुखदेव दर्शनवाचस्पति की सुयोग्य पुत्री है आपकी माताजी भी जीवन भर आर्य समाज का प्रचार-प्रसार करती रही थी। डा० हेमलता विद्यालंकार सुन्दर बली महिला कॉलेज भागलपुर में उच्च पद पर कार्य कर रही है। डॉ० विमला विद्यालंकार हिन्दू

विश्वविद्यालय वाराणसी में श्रीमती सरोज विद्यालंकार दिल्ली के श्यामा प्रसाद मुखर्जी कॉलेज में रीडर पद पर कार्य करते हुये अनेक सामाजिक संगठनों के पदों पर भी प्रतिष्ठित है। राजनीतिक दृष्टि से भी आपका चिन्तन एक मनस्वीनी के रूप में प्रसिद्ध है। आप अनेक सामाजिक आन्दोलनों से भी जुड़ी रही है, चाहे वह गोरक्षा आन्दोलन हो, पंजाब में हिन्दी आन्दोलन हो आपने सभी आन्दोलनों में नेतृत्व प्रदान किया है। आप एक तेजस्विनी प्रतिभा सम्पन्न व्यक्तित्व की मूर्त देवी रूपा है। श्रीमती मंजु विद्यालंकार राजकीय महिला महाविद्यालय में संस्कृत की प्राध्यापिका है आप वहाँ पर आर्य समाज के समस्त कार्यों में सक्रिय भाग लेकर नारी उत्थान में एक महत्वपूर्ण भूमिका अदा कर रही है। डा० सरला विद्यालंकृता शिकोहाबाद के बी.डी.एम. गर्ल्स डिग्री कॉलेज में उपप्राचार्य पद पर कार्य करती रही है। डा० सुनृता विद्यालंकार कन्या गुरुकुल महाविद्यालय हरिद्वार (गुरुकुल कांगड़ी महाविद्यालय का अंगीभूत महाविद्यालय) में संस्कृत विभागाध्यक्ष एवं महाविद्यालय के प्राचार्या (प्रभारी) पद पर भी कार्य कर रही है. आप एक मधुर स्वभाव सुसभ्य और भद्र महिला के रूप में जानी जाती है। आपका जीवन सादगी से भरपूर है आप समस्त सामाजिक कार्यों में बढ़-चढ़कर भाग लेती है।

श्रीमती कृष्णा विद्यालंकृता शिक्षा के क्षेत्र में इनके क्रान्तिकारी विचार है। इन्होंने लखनऊ स्प्रिंग डेल स्कूल के नाम से एक पब्लिक स्कूल की स्थापना की है। इनकी मान्यता है कि शिक्षा रोजगार परक होनी चाहिए। शिक्षा का स्तर ऊंचे दर्जे का होना चाहिए।

श्रीमती पुष्पावती विद्यालंकृता ने हरिजन बालिकाओं के लिय शिक्षा के क्षेत्र में उल्लेखनीय सेवा की है। आपकी मान्यता है कि शिक्षा के क्षेत्र में इस तरह की व्यवस्था होनी चाहिए की निर्धन से निर्धन और निम्न जाति के बच्चों को भी शिक्षा का समान अवसर प्राप्त होना चाहिए। इनके अनुसार आज शिक्षा का ढोल पीटा जा रहा है। परन्तु कितने ही दूर-दराज के गांवों में आदिवासी और पिछड़ी जातियों के लोगों को शिक्षा के प्रकाश ने प्रकाशित ही नहीं किया। अर्थात् वहाँ पर प्रारम्भिक शिक्षा का भी कोई प्रबन्ध नहीं किया गया। हरिजनों के क्षेत्र में तथा उनकी बालिकाओं के शिक्षा के विषय में जो आपने रात-दिन परिश्रम पूर्वक सेवा की है, इस सेवा के लिये आपको सदा स्मरण किया जायेगा। श्रीमती पुष्पावती ने कस्तूरबा बालिका विद्यालय की प्रधानाचार्य के पद पर सफलतापूर्वक कार्य किया है।

कन्या गुरुकुल महाविद्यालय की अनेक स्नातिकाओं ने विभिन्न विश्वविद्यालय में अनुसंधान के क्षेत्र में नये आयाम स्थापित किये है। इनके द्वारा लिखे एवम् विद्यालयों द्वारा स्वीकृत शोध प्रबन्धों पर वैदिक तथा संस्कृत साहित्य और हिन्दी साहित्य में अनेक ऐसे गहन विषयों पर प्रकाश डाला गया है जो अब तक उच्च अध्ययन के क्षेत्र में अछूते थे। यहाँ पर कन्या गुरुकुल की स्नातिकाओं द्वारा लिखे गये कुछ शोध प्रबन्धों का संक्षिप्त उल्लेख किया जायेगा संस्कृत साहित्य और हिन्दी साहित्य का विशेष अध्ययन करने और वेदाङ्गों के स्वाध्याय के कारण अधिकांश शोध प्रबन्ध के विषय इन्हीं क्षेत्रों से सम्बंध रखते हैं। वैदिक विषयों में भागलपुर विश्वविद्यालय में श्रीमती हेमलता विद्यालंकार ने ऋगवेद में अग्नि सूक्तों की उपमाओ का अध्ययन विषय पर पी-एच.डी. प्राप्त ही है। आप भागलपुर विश्वविद्यालय में संस्कृत विभाग की अध्यक्षा है। इसी प्रकार जयपुर विश्वविद्यालय सं मैत्रयि संहिता का अध्ययन पर भी पी.एच.डी. करके कुमारी वेदवती विद्यालंकृता अलवर के गवर्नमेन्ट कॉलेज में संस्कृत की प्रवक्ता है। संस्कृत साहित्य में दर्शन तथा लौकिक साहित्य में स्नातिकाओं को अधिक शोध करने के लिए प्रेरित किया है। हिन्दू विश्वविद्यालय बनारस से कुमारी विमला विद्यालंकार ने व्याख्याकारों की दृष्टि से प्रान्जल योग सूत्र का समीक्षात्मक अध्ययन विषय पर पी-एच.डी. की उपाधि प्राप्त की है। इन शोध-पत्र की सर्वोत्कृष्टता पर इनको स्वर्ण पदक भी प्राप्त हुआ है। केन्द्रीय सरकार द्वारा इसे प्रकाशित भी किया गया है। इनके अन्य अनेक शोधात्मक लेख अनुसंधानात्मक पत्रिकाओं में प्रकाशित हो चुक है। श्रीमती सुनृता विद्यालंकार ने हिन्दू बनारस विश्वविद्यालय

से योग भाष्य का परिशीतन विषय पर पी-एच.डी. की उपाधि प्राप्त की हे। इसी प्रकार श्रीमती बृह्मवती नारंग ने मेरठ विश्वविद्यालय से कालिदास के नारी पात्र विषय पर पी-एच.डी. की उपाधि प्राप्त ही है। इसी प्रकार श्रीमती सुमेधा विद्यांलकृता ने महाभारत में शन्ति पर्व का आलोचनात्मक अध्ययन विषय पर पी-एच. डी. उपाधि हेतु ग्रन्थ लिखकर स्नातिकाओं के कीर्तिमान् को स्थापित किया है। हिन्दी साहित्य में भी श्रीमती शान्ता और श्रीमती मधु विद्यांलकार ने डॉक्ट्रेट की सम्मानित उपाधि प्राप्त की है।

कन्या गुरुकुल महाविद्यालय देहरादून को द्वितीय परिसर के रूप में मान्यता

गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय 1962 को भारत सरकार शिक्षा मन्त्रालय ने डीम्ड, टु.बी. विश्वविद्यालय के रूप में मान्यता प्रदान कर दी थी। उस समय कन्या गुरुकुल महाविद्यालय देहरादून को विश्वविद्यालय में महाविद्यालय के रूप में मान्यता प्रदान नहीं की गई थी। यद्यपि कन्या गुरुकुल महाविद्यालय देहरादून को गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय की आर्य विद्या सभा ही संचालन कर रही थी। परन्तु कन्या गुरुकुल महाविद्यालय के बजट में सम्मिलित नहीं था। इसलिए कन्या गुरुकुल महाविद्यालय देहरादून को डीम्ड. टु. बी. विश्वविद्यालय के रूप में मान्यता प्रदान कर दी थी, अर्थात् आय़ व्यय का बजट विश्वविद्यालय के बजट में सम्मिलित नहीं हुआ था।

इन उपयुक्त कारणों से कन्या गुरुकुल महाविद्यालय देहरादून में वेतनमान विश्वविद्यालय के वेतनमान से बहुत न्यून रह गये थे। देहरादून में जो अध्यापिकाएं महाविद्यालय विभाग में सेवा कर रही थी उनके अन्दर गहन असंतोष होने लगा, क्योंकि यह संस्था भी गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय को सरकारी मान्यता मिलने के कारण कन्या गुरुकुल देहरादून के वेतनमान बहुत कम हो गए थे। और उसके साथ-साथ वहाँ सरकारी अनुदान न मिलने के कारण कन्या गुरुकुल देहरादून आर्थिक दृष्टि से महाविद्यालय विभाग को चलाने में असमर्थ सा हो रहा था इसलिए वहाँ की प्राध्यापिकाओं ने गुरुकुल कांगड़ी, विश्वविद्यालय के कुलपति महोदय को अनेक ज्ञापन दिये, उन ज्ञापनों में यह प्रार्थना की गई थी कि कन्या गुरुकुल देहरादून को भी विश्वविद्यालय अनुदान आयोग मान्यता प्रदान करें। हमारी सेवा भी गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय की सेवा मानी जाये। इस उपर्युक्त मांग को सहानुभूति पूर्वक विचार करने के पश्चात् गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय ने अपनी प्रबन्ध समिति कार्यपरिषद् और शिष्ट परिषद् आदि सभी प्रबन्ध समितियों में स्वीकार किया और विश्वविद्यालय आयोग दिल्ली से प्रार्थना की गई कि कन्या गुरुकुल महाविद्यालय को भी गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय के अंगीभूत महाविद्यालय के रूप में मान्यता प्रदान की जाय। गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय के कुल सचिव द्वारा जब यह प्रार्थना पत्र भेजा गया तो उसके उत्तर में विश्वविद्यालय अनुदान आयोग द्वारा यह कहकर इस मांग को अस्वीकार कर दिया गया की यह मान्यता प्रदान करना सम्भव नहीं है। क्योंकि गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय पहले अपने संविधान में अन्य महाविद्यालयों के समान मान्यता प्रदान करे, इसलिए गुरुकुल. कांगड़ी विश्वविद्यालय ने 1981 की शिष्ट परिषद् द्वारा अपने संशोधित संविधान में पृष्ठ संख्या 3 पर अंगीभूत महाविद्यालयों में क्रम संख्या 3 पर कन्या गुरुकुल महाविद्यालय देहरादून को अंगीभूत महाविद्यालय के रूप में मान्यता प्रदान की विश्वविद्यालय के कुलपति श्री बलभद्र कुमार हूजा ने शिक्षा मन्त्रालय भारत सरकार और द्विश्वविद्यालय अनुदान आयोग भारत सरकार से कि कन्या गुरुकुल महाविश्वविद्यालय देहरादून को विश्वविद्यालय ने अपने संविधान में समकक्ष महाविद्यालयों में सम्मिलित कर लया गया हैं। इसलिए इस महाविद्यालय को मान्यता प्रदान करनी चाहिए।

संविधान में संशोधन करने के पश्चात् संविधान को भारत सरकार ने अप्रैल 1984 में अपने आदेश एवं अधिसूचना जो सीनेट ने 13-4-1984 को संविधान स्वीकार किया था उस संविधान को 1-9-1984 को अपने पत्र संख्या एफ 11-18/84 यू॰ 3 के आदेश में मान्यता प्रदान कर दी थी।

9 मार्च 1984 को गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय द्वारा प्रेषित की गई। छटी पंचवर्षीय योजना के सम्बन्ध में निरीक्षण करने तथा विश्वविद्यालय की प्रगति की अन्य सम्भावनाओ को पता लगाने के लिए विश्वविद्यालय अनुदान आयोग की विजिटिंग कमेटी का गुरुकुल में आगमन हुआ।[1] इस कमेटी ने कन्या गुरुकुल महाविद्यालय देहरादून का भी निरीक्षण किया। यहाँ का निरीक्षण करने के पश्चात् विजिटिंग कमेटी ने यह संस्तुति की थी कि गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय को डीम्ड टु.बी. विश्वविद्यालय होने के कारण अपने परिसर से बाहर दूसरे शहर में महाविद्यालय खोलने का अधिकार नहीं है। इसलिए यह समिति यह संस्तुति करती है कि कन्या गुरुकुल महाविद्यालय को द्वितीय परिसर के रूप में मान्यता देने के लिए विचार करने हेतु अन्य समिति गठित की जाय यह अनुशंसा करती है इसलिए 17-18 दिसम्बर 1984 को विश्वविद्यालय अनुदान आयोग के द्वारा प्रेषित विजिटिंग कमेटी ने कन्या गुरुकुल देहरादून का निरीक्षण किया इस कमेटी में श्री गुरूदत्त सिंह उपसचिव शिक्षा मंत्रालय भारत सरकार श्री बी.आर. क्वाटरा उपसचिव विश्वविद्यालय अनुदान आयोग तथा निर्देशक एस.सी. गुप्ता निर्देशक उच्च शिक्षा उत्तर प्रदेश थे इस समिति ने कन्या गुरुकुल देहरादून का गहन निरीक्षण किया, अपनी रिपोर्ट में समिति ने कन्या गुरुकुल महाविद्यालय देहरादून की प्रशंसा करते हुए यह अनुशंसा की थी कि कन्या गुरुकुल महाविद्यालय देहरादून को द्वितीय परिसर के रूप में मान्यता प्रदान की संस्तुति करती है।[2] इस समिति की अनुशंसा पर शिक्षा मंत्रालय भारत सरकार ने कन्या गुरुकुल महाविद्यालय देहरादून को गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय के अन्तर्गत मान्यता प्रदान की थी। यह मान्यता सन् 1986 से मानी गयी। इस प्रकार कन्या गुरुकुल देहरादून में एक प्रसन्नता की लहर दौड़ गई और महाविद्यालय विभाग की समस्त प्राध्यापिकाओं को विश्वविद्यालय के वेतनमान मिलने प्रारम्भ हो गये।

जिस समय किस-किस प्राध्यापिकाओं को विश्वविद्यालय वेतनमान दिये जाए यह प्रश्न उपस्थित हुआ तो कन्या गुरुकुल महाविद्यालय देहरादून की प्राचार्या श्री दमयन्ती कपूर को प्राचार्य का वेतनमान नहीं दिया जा सकता था क्योंकि उनकी आयु 60 वर्ष से अधिक है। विश्वविद्यालय अनुदान आयोग ने उन्हें छोड़कर सबको वेतनमान देना स्वीकार कर लिया। अब यह समस्या उत्पन्न हो गयी कि क्या कन्या गुरुकुल महाविद्यालय देहरादून में कोई नयी प्राचार्या बना दी जाए, इसलिए कन्या गुरुकुल महाविद्यालय देहरादून की प्राध्यापिकाओं की मांग पर कुलपति आ.सी. शर्मा ने कन्या गुरुकुल महाविद्यालय देहरादून की सीनियर प्राध्यापिका को प्राचार्या के रूप में नियुक्त कर दिया। इस प्रकार कन्या गुरुकुल देहरादून के भी दो विभाग हो गये एक कनया गुरुकुल विद्यालय विभाग एक कन्या गुरुकुल महाविद्यालय विभाग।

गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय की शिष्ट परिषद् ने प्राचार्या श्रीमती दमयन्ती कपूर की बहुत अधिक प्रशंसा का प्रस्ताव स्वीकार किया परन्तु तकनीकी दृष्टि से प्राचार्या पद का वेतनमान नहीं दिया जा सकता है यह प्रस्ताव भी स्वीकार किया गया। यहाँ यह ज्ञातव्य है कि आचार्या दम्यन्ती कपूर ने ही आर्य विद्या सभा से यह प्रस्ताव पारित कराया था कन्या गुरुकुल महाविद्यालय देहरादून को सरकारी वेतनमान मिलने चाहियें। जब यह मांग विश्वविद्यालय अनुदान आयोग को भेजी गयी तो विश्वविद्यालय अनुदान आयोग ने लिखा था कि कन्या गुरुकुल महाविद्यालय की संचालन समिति एक प्रस्ताव स्वीकार करें कि कन्या गुरुकुल महाविद्यालय देहरादून को गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय में द्वितीय परिसर के रूप में लेने को तैयार है। महाविद्यालय देहरादून की सम्मत्ति, भवन आदि का सम्पूर्ण विवरण उस प्रस्ताव में होना चाहिये। तभी जाकर कन्या गुरुकुल देहरादून को विश्वविद्यालय के द्वितीय परिसर के रूप में मान्यता प्रदान की जा सकती है। इस समस्त प्रस्तावों को स्वीकार कराने में आचार्या श्रीमती दमयन्ती कपूर का बहुत ही महत्वपूर्ण योगदान था। इस प्रकार 1986 में विश्वविद्यालय अनुदान आयोग द्वारा यह मान लिया गया कि कन्या गुरुकुल

महाविद्यालय देहरादून को गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय के अंगीभूत महाविद्यालय एवम् द्वितीय परिसर के रूप में जो मान्यता प्रदान की गयी है उसके परिणाम स्वरूप महाविद्यालय की प्राध्यापिकाओं को नवीन वेतनमान प्रदान होने के पश्चात् यहाँ पर द्वितीय परिसर के रूप में केवल वेदालंकार, विद्यालंकार की छात्राएं, ही महाविद्यालय की छात्राओं के रूप में मानी गयी थी। इसलिए छात्राओं की संख्या बहुत कम रह गयी थी। इसलिए स्वाभाविक रूप में चिन्ता व्याप्त होने लगी कि महाविद्यालय की छात्राओं की इतनी कम संख्या को लेकर कितने समय तक यह महाविद्यालय चल सकेगा। सन् 1983 में गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय को एम.सी.ए. अर्थात् मास्टर ऑफ कम्पयूटर एप्लीकेशन प्रदान करने की स्वीकृति विश्वविद्यालय अनुदान अयोग द्वारा प्राप्त हो गयी थी गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय में शिक्षा मंत्रालय भारत सरकार के निदेशक श्री दुर्गा दास गुप्त कार्य परिषद् में भाग लेने के लिये हरिद्वार में आये हुए थे। कन्या गुरुकुल महाविद्यालय देहरादून की प्रचार्या श्रीमती प्रतिभा शर्मा के आग्रह पर श्री दुर्गा दास गुप्त से डा॰ धर्मपाल कुलपति विश्वविद्यालय ने उनसे प्रार्थना की कि आप एक बार कन्या गुरुकुल महाविद्यालय देहरादून के परिसर का निरीक्षण करने का कष्ट करें। डॉ॰ दुर्गा दास, गुप्त, डा॰ जयदेव वेदालंकार के साथ कन्या गुरुकुल देहरादून के निरीक्षणार्थ वहाँ पहुंचे। वहाँ पर स्वागत आदि की औपचारिकता के पश्चात् डा॰ जयदेव वेदालंकार कुलसचिव ने कन्या गुरुकुल महाविद्यालय देहरादून का इतिहास बतलाते हुए यह कहां कि यद्यपि विश्वविद्यालय अनुदान आयोग ने कन्या गुरुकुल को द्वितीय परिसर के रूप में मान्यता तो प्रदान कर दी है परन्तु यहाँ केवल विद्यालंकार होने के कारण छात्राओं की संख्या बहुत अधिक नहीं है इसलिये कुछ समय पश्चात् छात्राओं के अभाव में यह संस्था नहीं चल पायेगी और इसकी मान्यता भी समाप्त हो सकती है इसीलिये कृपया आप यहाँ पर नये विषय, स्नातकोत्तर अध्ययन के लिए स्टॉफ आदि की स्वीकृति तथा उनके वेतनादि की स्वीकृति भारत सरकार को करवाने का कष्ट करें। यह जानने के पश्चात् डा॰ डी.डी. गुप्त ने यह सुझाव दिया कि आप यहाँ जो पाठ्यक्रम एम.सी.ए. का प्राप्त हुआ है उसकी यहाँ आधी सीटें छात्राओं के लिये कन्या गुरुकुल महाविद्यालय देहरादून में प्रारम्भ कर सकते है। मान्य कुलपति ने कार्य परिषद् आदि की स्वीकृति की औपचारिकता के पश्चात् यहाँ पर कन्याओं के लिये एम.सी.ए. के पाठ्यक्रम की विश्वविद्यालय की स्वीकृति प्राप्त हुई तो उसकी स्वीकृत छात्रों की आधी संख्या कन्या गुरुकुल महाविद्यालय देहरादून में प्रारम्भ की दी गयी इसके पश्चात् कुछ विषयों में स्नातकोत्तर कक्षायें भी प्रारम्भ की गयी इस प्रकार कन्या गुरुकुल महाविद्यालय देहरादून स्नातकोतर महाविद्यालय के रूप में प्रारम्भ हो गया। यद्यपि अष्ट पंचवर्षीय योजना के अन्तर्गत रीडर ग्रेड में प्राचार्या का पद प्राप्त हो गया था परन्तु प्राचार्या की स्थायी रूप में नियुक्ति अभी तक नहीं हो पाई है अस्थायी रूप में वरिष्ठतम क्रम से श्रीमती प्रभा शर्मा प्राध्यापिका संगीत विभाग की प्राचार्या पद नियुक्त किया गया कुछ समय पश्चात् उन्होंने अपने स्वास्थ्य आदि के कारण से इस पद से त्याग-पत्र दे दिया। इसके पश्चात् श्रीमती भगवती गुपता को प्राचार्या पद पर अस्थायी रूप से नियुक्त किया गया श्रीमती भगवती गुप्ता के सेवा निवृत्त होने के पश्चात् श्रीमती नीरादास गुप्ता को प्राध्यापिका संगीत विभाग को प्राचार्या पद पर अस्थायी रूप से नियुक्त किया गया था। इसके बाद श्रीमती सुनृता विद्यालंकार को अस्थायी रूप से प्राचार्या पद पर नियुक्त किया गया है यह ज्ञातव्य यह है कि श्रीमती डा॰ सुनृता विद्यालंकार इस समय कन्या गुरुकुल महाविद्यालय ज्वालापुर में प्रभारी के रूप में भी कार्य कर रही है इसलिये कन्या गुरुकुल महाविद्यालय देहरादून में प्रभारी श्रीमती प्रतिभा शर्मा कन्या महाविद्यालय का प्रशासन संभाले हुए है।

कन्या गुरुकुल महाविद्यालय जो कि टूटने के कगार पर हो गया था उस समय नयी स्फूर्ति का संचार हुआ जो लगभग छः बीघा भूमि कन्या महाविद्यालय देहरादून के लिये प्रदान की गयी थी उसमें नयं भवनों

का निर्माण हुआ। इन भवनों में आधुनिक सुसज्जाओं से युक्त दो मंजिला छात्राओं के लिये होस्टल (आश्रम) का निर्माण हुआ है। देहरादून में जितने भी मॉर्डन शिक्षण संस्थाये है उनके होस्टलों की अपेक्षा यह आधुनिकतम विशेषताओं से युक्त है यह होस्टल माना जाता है। जिसके साथ ही एम.सी.ए. के लिये प्रयोगशाला का निर्माण भी तीन मंजिल बिल्डिंग के रूप में हुआ है इसी प्रकार एम.बी.ए. के लिये भी भवनों का निर्माण किया गया है। यह ज्ञातव्य है कि यह विकास डा॰ धर्मपाल के कुलपतित्व काल में और डा॰ जयदेव वेदालंकार के कुलसचिव कार्यकाल में सम्पन्न हो सका है। यहाँ यह भी ज्ञातव्य है कि यह निर्माण विश्व विद्यालय अनुदान आयोग द्वारा प्रदत्त अनुदान से नहीं हुआ है अपितु यह उपर्युक्त भवनों का निर्माण तकनीकी विषयों के प्रारम्भ होने से जो घन शुल्क के माध्यम से अर्जित हुआ उसी का सदुपयोग करते हुए यह उपर्युक्त निर्माण हुआ है। यहाँ विश्वविद्यालय अनुदान आयोग ने कुछ एम.सी.ए. और एम.बी.ए. पाठ्यक्रमों के लिये प्राध्यापिकाओं के पदों का भी सृजन किया है।

कन्या गुरुकुल महाविद्यालय देहरादून की स्थापना स्व॰ आचार्य रामदेव ने कन्याओं की शिक्षा, उत्थान और नारी जाति का जो उत्पीड़न शताब्दियों से चला आ रहा था। उसे दृष्टि में रखकर की थी। महर्षि दयानन्द ने अपने ग्रन्थों में नारी जाति के उत्थान के लिए जो मंत्र फूंका, था उससे प्रेरणा लेकर आचार्य रामदेव ने कन्या गुरुकुल देहरादून को एक पौधे के रूप में बोया था और उसको कई वर्षों तक अपने रक्त से सींचा था, वह पौधा धीरे-धीरे पूर्ण वृक्ष के रूप में विकसित हो गया है। कन्या गुरुकुल महाविद्यालय देहरादून में जहाँ वेदशास्त्र, प्राचीन इतिहास आदि विषय पढ़ाये जाते है, वहीं आधुनिकतम कम्प्यूटर आदि की भी शिक्षा प्रदान की जाती हैं इस समय यह अवश्य अपेक्षित है कि जिन विषयों में वहाँ पर स्नातकोत्तर कक्षाएं प्रारम्भ नहीं की जा सकी है। उन सब विषयों में स्नातकोत्तर कक्षाएं प्रारम्भ की जानी चाहिए।

यहाँ यह अवश्य संतुलन रखने की आवश्यकता है कि प्राच्य विद्याओं के विषयों को आधुनिक विषयों के साथ समन्वित, सन्तुलित और नए विषयों के साथ समन्वित, सन्तुलित और नए विषयों के बोझ से प्राच्य विद्याओं के विषय समाप्त न हों जाए इसका ध्यान प्रशासन को अवश्य ही रखना चाहिए।

* * *

सन्दर्भ संकेत

1. गुरुकुल पत्रिका अंक मार्च 1984, पृष्ठ 68
2. गुरुकुल पत्रिका अंक जनवरी 1985, पृष्ठ 46

सप्तम-अध्याय

विभिन्न आन्दोलन और गुरुकुल कांगडी : स्वतंत्रता आन्दोलन में गुरुकुल कांगड़ी का योगदान

महात्मा मुन्शीराम ने गुरुकुल कांगड़ी की स्थापना 19वीं शताब्दी में की थी। 1902 में गुरुकुल को उचित भूमि के प्राप्त हो जाने पर कांगड़ी ग्राम में गुरुकुल को स्थानान्तरित किया गया। यहाँ वह युग था जिसमें देश की स्वतन्त्रता के लिए जो आन्दोलन किया जा रहा था वह जोर पकड़ने लगा था।

गुरुकुल कांगड़ी की स्थापना का मूल कारण यह था कि आर्य समाज के संस्थापक महर्षि दयानन्द ने सत्यार्थ प्रकाश के तृतीय सम्मुलास में आर्य शिक्षा पद्धति का विस्तारपूर्वक वर्णन किया था। उसी सत्यार्थ प्रकाश में महर्षि दयानन्द ने स्वराज अथवा अपना स्वदेशी राजा होने की बात को बड़े ही प्रभावशाली ढंग से उल्लिखित किया था। इसलिए तत्कालीन ब्रह्म समाज आदि समाज सुधार आन्दोलनों की आलोचना करते हुए उन्होंने लिखा था कि "इन लोगों में स्वदेश भक्ति बहुत न्यून है। ईसाईयों के आचरण बहुत से लिये है खानपान आदि विवाह आदि के नियम भी बदल दिये हैं। भला जब आर्यावर्त में उत्पन्न हुये और इसी देश का अन्न जल खाया पिया है, अब भी खाते-पीते हैं। अपने माता-पिता पितामह आदि के मार्ग को छोड़कर दूसरे विदेश मतों पर झुक जाना ब्रह्म समाजी और प्रार्थना समाजियों का एतद्देश एवम् संस्कृत विद्या गे रहित अपने को विद्वान् प्रकाशित करते हैं।" इसी प्रकार उन्होंने आगे लिखा है कि "हम और आपको उचित है कि जिस देश के पदार्थों से अपना शरीर बना, अब भी पालन होता है और आगे भी होगा उसकी उन्नति तन-मन-धन से मिलकर प्रीति से करें। इसका अर्थ यह था कि हमें विदेशी वस्तुओं को छोड़कर स्वदेशी वस्तुओं का उपयोग करना चाहिये। इसी प्रकार महर्षि दयानन्द ने अपने जीवन में राजस्थान के राजाओं के साथ निकट का सम्बन्ध बनाकर यह प्रेरणा दी कि स्वदेशी राजा विदेशी राजा से सदा अच्छा होता है चाहे वह विदेशी राजा से बुरा क्यों न हो।

गुरुकुल कांगड़ी की शिक्षा प्रणाली के मूल प्रेरक महर्षि दयानन्द ही थे। महर्षि दयानन्द के सत्यार्थ प्रकाशादि ग्रन्थ प्रारम्भ से ही गुरुकुल कांगड़ी के पाठ्यक्रम में सम्मिलित रहें। इसीलिये गुरुकुल कांगड़ी की शिक्षा का मुख्य आधार वेद-वेदाङ्ग समस्त आर्य साहित्य ऋषि दयानन्द के समस्त आर्य ग्रन्थ थे। यहाँ के छात्रों को एक प्रकार से घुट्टी में भी यह पढ़ाया जाता था कि भारत वह देश है जो सभी देशों का गुरु रहा है प्रत्येक अन्य देश से लोग आकर अपने चरित्र की शिक्षा ग्रहण करते रहे हैं जैसा कि मनु ने कहा था कि "एतद्देश प्रसूतस्य सकाशादग्रजन्मन:। स्वं स्वं चरित्रं शिक्षेरन् पृथिव्यां सर्व मानवा :" उपयुक्त प्रकार की शिक्षा मिलने के कारण गुरुकुल कांगड़ी के समस्त वातावरण में स्वदेश प्रेम, राष्ट्रभक्ति और देश को परतन्त्रता की बेड़ी से छुड़ा कर स्वतंत्र कराने के संस्कार ब्रह्मचारियों को प्रारम्भ से दिये जाने के कारण गुरुकुल के छात्र शिक्षक और कर्मचारीगण, सभी के हृदयों में देश को स्वतंत्र कराने का जोश एवं भावना परिपूरित रहती थी। सरकार का ध्यान गुरुकुल की स्थापना काल से ही इस ओर था कि गुरुकुल कांगड़ी को शहरों से दूर हिमालय की रमणीय उपत्यका में तथा गंगा के तट पर स्थापित करने का क्या कारण हो सकता है, क्योंकि उस समय गुरुकुल तक पहुँचने का मार्ग भी अत्यधिक दुर्गम था। अतः यह संस्था निर्जन, एकान्त और दुनिया से अलग-अलग स्थान पर क्यों प्रारम्भ की गई, इस प्रकार की विभिन्न आशंकाएँ उत्पन्न होना सर्वथा स्वाभाविक ही था। समस्त भारत की आर्य समाजों के सदस्य सक्रियरूप में स्वतंत्रता

आन्दोलन में बढ़-चढ़कर भाग ले रहे थे। उस समय आर्य समाज पर ब्रिटिश प्रशासकों द्वारा राजद्रोह का संदेह किया जाने लगा तो आर्यसमाज की प्रमुख संस्था शिक्षा का केन्द्र शहरों से दूर आदि के कारण गुरुकुल कांगड़ी पर संदेह क्यों न किया जाता। जब सरकार के गुप्तचर विभाग का ध्यान गुरुकुल कांगड़ी की ओर गया तो गुरुकुल को देखने के लिए प्रतिदिन अनेक लोग आते थे, उनमें दो ही प्रकार के व्यक्ति होते थे। एक तो वे थे जो गुरुकुल की शिक्षा पद्धति से ब्रह्मचारियों के तपोमय जीवन से प्रभावित होकर गुरुकुल के दर्शन करने के लिए आते थे, दूसरे वे लोग होते थे जो गवर्नमेंट के जासूस कहे जा सकते हैं। सरकारी जासूस, संन्यासी, साधु, बाबा, बाबू आदि नाना प्रकार के विभिन्न वेशों में गुरुकुल का भेद जानने के लिए आया करते थे। जब वापस जाकर अपनी रिपोर्ट प्रस्तुत करते थे तो उन रिपोर्टों में अतिशयोक्तिपूर्ण भयानक विवरण प्रस्तुत किया जाता था, उनकी दृष्टि में यज्ञशाला के नीचे एक सुरंग अथवा तहखाना बना हुआ था। जिसमें उनके अनुसार ब्रह्मचारियों को गोला बारूदादि बनाने की शिक्षा दी जाती थी। उस समय की गुप्तचर विभाग की रिपोर्ट केवल संदेह पर ही आधारित थी। उनके संदेह करने का आधार यह भी था कि गुरुकुल कांगड़ी सरकार से किसी प्रकार से अनुदान नहीं लेता था और एक स्वतंत्र संस्था थी। सरकार के शिक्षा विभाग से भी इसका कोई सम्बन्ध नहीं था। सरकार से अनुदान लेने का प्रयास भी नहीं किया जाता था। पं० इन्द्र विद्यावाचस्पति ने इस विषय में उस समय की स्थिति का विश्लेषण करते हुए लिखा है कि "गंगा के उस पार, दुनिया से अलग-थलग सर्वथा स्वतंत्र उपनिवेश के रूप में गुरुकुल सिर उठाये खड़ा था। गुरुकुल विश्वविद्यालय भारतवर्ष में उस समय एकमात्र ऐसा शिक्षणालय था जो किसी प्रकार भी सरकार के नियन्त्रण में नहीं था। गुरुकुल के अधिकारी सरकारी अफसरों की खुशामद नहीं करते थे और गुरुकुल के छात्र अंग्रेजों को सलाम करना नहीं जानते थे। नौकरशाही शासन में जो झुकना या सलाम नहीं करना जानता है वह संदेह की दृष्टि से देखा जाता है गुरुकुल के ब्रह्मचारियों तथा अधिकारियों का सबसे बड़ा दोष था कि सरकार से कुछ नहीं मांगते थे और न ही अफसरों की दहलीज पर सिर झुकाना आवश्यक समझते थे।[1]

गुरुकुल कांगड़ी सरकारी गुप्तचरों की दृष्टि में एक पहेली बना हुआ था क्योंकि गुरुकुल के पाठ्यक्रम में वेद-वेदाङ्ग और इसके साथ-साथ आधुनिक विषयों के विद्वान् तैयार करना था, इसलिए ही गुप्तचर विभाग की रिपोर्ट में कई प्रकार की सम्भावित कल्पनाओं का सहारा लिया गया था क्योंकि रिपोर्ट में यह चिन्ता प्रकट की गई थी कि यहाँ से शिक्षा प्राप्त करके निकलने वाले स्नातक एक विचित्र व्यक्तित्व वाले होंगे। उनका सामान्य जनता में बहुत अधिक सम्मान होगा। इसलिए ही यह चिन्ता भी व्यक्त की गई कि गुरुकुल के प्रति क्या रुख होगा ये किस प्रकार के सांचे में ढले हुए होंगे। जिस धर्म का वे प्रचार करेंगे उसका आधार व्यक्तिगत विचार और श्रद्धा होगी ज़िसका जनता पर सहज में प्रभाव पड़ेगा। अपनी इस अवधारणा को पुष्ट करने के लिए रिपोर्ट में यह भी सम्मिलित किया गया था कि जिस समय महात्मा मुन्शीराम गुरुकुल की स्थापना के लए 30 हजार रुपये एकत्रित करने के लिए देश के विभिन्न प्रदेशों का दौरा कर रहे थे। उस समय उन्होंने सरकार की निन्दा की थी, और राजद्रोह कराने के लिए सिपाहियों को यह कहकर प्रेरित किया जाता था कि ये सिपाही कितने मूर्ख है जो 17-18 रुपयों में भर्ती होकर अपना सिर कटवाने को तैयार रहते हैं। गुरुकुल में शिक्षित होने के पश्चात् ऐसा क़रने वाले सरकार को नही मिलेंगे।[2] इस रिपोर्ट में यह भी कहा गया था कि गुरुकुल में प्रत्येक वर्ष जो वार्षिक उत्सव किये जाते है उनका सारा प्रबन्ध गुरुकुल के अधिकारियों और छात्रों द्वारा ही किया जाता है इसका वर्णन करते हुए उन्होंने लिखा था कि गुरुकुल कांगड़ी के वार्षिक उत्सव पर लगभग 60-70 हजार व्यक्ति उपस्थित होते हैं और यह उत्सव कई दिन तक चलता है इतने बड़े जन-समुदाय के प्रबन्ध के लिये सरकार से न ही पुलिस

का प्रबन्ध करने को कहा जाता है और न ही स्वास्थ्य रक्षा आदि के प्रबन्ध की गुरुकुल के अधिकारियों को चिन्ता होती है। गुरुकुल के ब्रह्मचारी ही स्वयं सेवक के रूप में कार्य करते हैं। संगठन की दृष्टि से सब व्यवस्था दोष रहित और उत्तम होती है। जो लोग उत्सव पर आते हैं उनका उत्साह भी चमत्कृत करने वाला होता है आने वाले लोग बड़ी-बड़ी धनराशि दान में देते हैं। कभी-कभी स्त्रियाँ भी अपने आभूषण दान में दे डालती है। रिपोर्ट में यह भी तुलना की जाती थी कि गुरुकुल के ब्रह्मचारियों का यह कार्य बंगाल के स्वयं सेवकों से न्यून किसी भी रूप में नहीं होता है इस तुलना का यही अभिप्राय होता था कि बंगाल के क्रांतिकारियों की भांति यह ब्रह्मचारी व्यवस्था करने में दक्ष है। इससे यह सिद्ध होता है कि जब ये भी देश भक्ति के जोश में जन आन्दोलनों का नेतृत्व करेंगे तो क्रांतिकारियों से किसी भी प्रकार कम हानिकारक नहीं होगे।

जैसा कि गुरुकुल शिक्षा पद्धति में दिनचर्या के विषय में हम उल्लेख कर आये है कि प्राचीन परम्पराओं के अनुसार जीवन कठोर तप से तपाया हुआ, ब्रह्मचारियों का जीवन होना चाहिए। इसलिए ही गुप्तचर विभाग ने अपनी रिपोर्ट में यह शंका अभिव्यक्त की थी कि ऐसा कठोर जीवन बिताने वाले देशभक्त ब्रह्मचारी जब देश भक्ति के रंग में रंगे जायेंगे तो ये सरकार के लिये अति विकट सिद्ध होंगे। रिपोर्ट का अंश इस प्रकार है "विचारणीय विषय यह है कि गुरुकुल से निकले हुए इन संन्यासियों का राजनीति के साथ क्या सम्बन्ध होगा ? इस सम्बन्ध में गुरुकुल के महाशय रामदेव की लिखी हुई भूमिका बड़ी रोचक है उसके अन्त में लिखा है कि गुरुकुल में दिये जाने वाली शिक्षा सर्वांग में राष्ट्रीय है। आर्य समाजियों की बाईबिल सत्यार्थ प्रकाश है जो देश भक्ति के भावों से ओत-प्रोत है। गुरुकुल में इतिहास इस प्रकार पढ़ाया जाता है कि जिससे ब्रह्मचारियों में देश भक्ति की भावना उद्दीप्त हो। उनमें उपदेश और उदाहरण दोनों के माध्यम से देश के लिए उत्कट़ प्रेम उत्पन्न किया जाता है। उसमें तनिक भी संदेह नहीं की गुरुकुल में प्रयत्न पूर्वक ऐसे राजनैतिक संन्यासियों का दल तैयार किया जा रहा है जिसका मिशन सरकार के लिए भयंकर हो सकता है।"[3]

सरकारी गुप्तचर विभाग ने गुरुकुल कांगड़ी के विषय में यह भी रिपोर्ट की थी कि गुरुकुल में छात्रों के मन में ब्रिटिश सरकार के प्रति घृणा और विद्वेष की भावना ओत-प्रोत करने के लिए गुरुकुल की दीवारों पर ऐसे चित्र लगाए जाते है जिनमें यह प्रकट किया जाता है कि अंग्रेजों के अन्यायपूर्ण कुशासन से भारत देश का अधोपतन हो गया है और वह अत्यधिक दुरावस्था तक पहुँच गया है। अंग्रेजों के राज्य से पूर्व भारत में सभी व्यक्ति सम्पन्न एवं सुखी थे परन्तु ब्रिटिश राज्य ने भारत का अत्यधिक आर्थिक शोषण किया है कि यहाँ चारों ओर निर्धनता व्याप्त हो गई है। ब्रिटिश शासनकाल में भारत की आर्थिक दुर्दशा को गुरुकुल में प्रभावशाली चित्रों द्वारा छात्रों को यह दिखाया जाता है कि अंग्रेजों के शासन के विरुद्ध विद्रोह करने वाले 1857 के प्रथम स्वतंत्रता आन्दोलन में भाग लेने वाले नेताओं तथा सेनानियों के चित्र भव्य रूप में प्रदर्शित किये जाते हैं। फ्रान्स में ब्रिटिश सत्ता को चुनौती देने वाली और अपने देश को अंग्रेजी शासन से मुक्त कराने वाली फ्रांसीसी वीरबाला जॉन ऑफ आर्क का चित्र भी छात्रों को प्रेरणा देने के लिए बड़े ही आकर्षक ढंग से सजाया गया है ताकि ब्रह्मचारियों के मन में अपने देश को स्वाधीन बनाने की भावना उत्पन्न हो। गुरुकुल में ऐस चित्रों के विषय में सरकारी जासूस ने अपनी डायरी में लिखा था कि "गुरुकुल की दीवारों पर ऐसे चित्र लगे हैं जिनमें अंग्रेजी राज्य से पहले की भारत की अवस्था और अंग्रेजों के कलकत्ता (कोलकाता) आने की अवस्था दिखलाई गई है। लखनऊ के सन् 1857 के राजविद्रोह के चित्र भी लगाए गए है। बिजनौर के डिस्ट्रिक मजिस्ट्रेट मिस्टर फोर्ड ने जॉन ऑफ आर्क का भी वह बड़ा चित्र गुरुकुल में लगा हुआ देखा था जिसमें वह अंग्रेजों के विरुद्ध सेना का संचालन कर रही है।

सरकारी अधिकारियों ने जब ऐसे चित्रों पर आपत्ति प्रकट की तथा ग्रेट ब्रिटेन के सम्राट् और साम्राज्ञी के चित्र गुरुकुल के अधिकारियों के प्रदर्शन करने के लिए भेंट किए तो गुरुकुल के तत्कालीन अधिकारियों ने उन चित्रों को पुस्तकालय में प्रदर्शित किया ताकि अंग्रेजी सरकार को किसी प्रकार का संदेह न हो यहाँ यह ज्ञातव्य है कि गुरुकुल कांगड़ी के अस्तित्व में आने के पश्चात् के कुछ वर्षों के बाद भी यह सब कुछ घोषित हो रहा था गुरुकुल कांगड़ी एक विकसित संस्था के रूप में बड़ा रूप धारण नहीं कर पाया था इसलिए उस समय की परिस्थिति के अनुसार तत्कालीन अधिकारियों ने जो उस समय निर्णय लिया वह नीति कुशलता का ही द्योतक था। गुरुकुल में इस समय के छात्रों में असंतोष फैलने लगा तो यह उपाय सोचा गया कि अपने धार्मिक और राजनैतिक नेताओं के बडे भव्य और सुन्दर चित्र बनाकर पुस्तकालय में टांगे जाएं। ताकि दर्शकों और छात्रों का ध्यान उन चित्रों की ओर जाय। महारानी के चित्रों की ओर ध्यान न जाय।

इस कार्य को उस समय गुरुकुल में चित्रकला के विषय पढ़ाने वाले वेदों के सुप्रसिद्ध विद्वान् श्रीपाद दामोदर सातवलेकर को सौंपा गया उन्होंने बड़े ही उत्साह से महर्षि दयानन्द, स्वामी विरजानन्द महात्मा मुन्शीराम, लोकमान्य तिलक के बड़े-बड़े तेल चित्र बनाए। चित्र बहुत ही भव्य और सुन्दर थे कि दर्शकों का ध्यान पुस्तकालय में प्रवेश करते ही उन चित्रों की ओर जाता था। वे चित्र इतने अच्छे बनाए गए थे कि गुरुकुल के 100 वर्ष बीत जाने पर भी आज भी गुरुकुल कांगड़ी के पुस्तकालय में शोभायमान है।

यद्यपि गुरुकुल कांगड़ी के विषय में कई गुप्तचरों की रिपोर्ट संदेह अभिव्यक्त कर रही थी कि गुरुकुल राज द्रोही संस्था है परन्तु अभी तक अंग्रेज अधिकारियों के पास ठोस सबूत नही थे। क्योंकि ब्रिटिश अधिकारियों के सामने गुरुकुल की प्रशंसा उदारता पूर्वक किया करते थे।

बिलियम वेडेर वर्न तथा सी.एफ. एण्ड्रूज की भूमिका

गुरुकुल कांगड़ी उस समय एक ऐसी सामान्य शिक्षण संस्था थी जिसके विकास के लिए यह आवश्यक था कि अंग्रेजों की क्रूर दृष्टि इस संस्था पर न पड़े, इसलिए महात्मा मुन्शीराम अंग्रेजों के संदेह को दूर करने के लिए अपना प्रयास करते रहते थे। एक बार जब कुछ ब्रह्मचारियों ने एक घुड़सवार अंग्रेज को सड़क से जाते देखा तो उसे रोक लिया और उसका घोड़ा पकड़ लिया कुछ देर पश्चात् उसे छांड़ दिया। वह घोड़ा बिजनौर के कलैक्टर का था, यद्यपि यह कार्य ब्रह्मचारियों ने बचपन की अल्हड हरकतों के अंतर्गत किया था, किन्तु उसे राजद्रोहपूर्ण कार्य समझा गया। महात्मा मुन्शीराम इस घटना के तुरन्त बाद बिजनौर के कलैक्टर से मिले और अपना पक्ष प्रस्तुत किया इसके बाद वे देहरादून में तत्कालीन गर्वनर जनरल हि बेट से मिले यह भेंट बहुत ही सौहार्दपूर्ण वातावरण में हुई। फिर भी महात्मा मुन्शीराम इस सरकारी प्रकोप से चिन्तित रहते थे कि कहीं ब्रिटिश सरकार कुपित होकर गुरुकुल कांगड़ी को विध्वंश न कर दे, इसलिए वे गुरुकुल कांगड़ी के राजद्रोही संस्था होने सरकारी संदेहों का निराकरण करने में महात्मा जी को दो भारत भक्त अंग्रेजों से बहुत अधिक सहायता प्राप्त हुई। इनमें पहले श्री विलियम वेडर वर्न थे जो इने गिने आई.सी.एस. अंग्रेजों में थे, इनके बारे में यह माना जाता था कि उनका तन ब्रिटिश और मन भारतीय था क्योंकि उन्होंने अपने परिवार की परम्परा में भारतीयों के निकट रहकर भारतीयों की स्थिति को भली-भांति देखा था जब 1910 में इलाहाबाद में कांग्रेस का अधिवेशन हुआ और उसके अध्यक्ष यह भारतभक्त वयोवृद्ध अंग्रेज सर विलियन वेडर वर्न चुने गए तो श्री गोखले, जो श्री मुन्शीराम की चिन्ता से परिचित थे, इन्होंने महात्मा मुन्शी राम के कांग्रेस के अधिवेशन के अवसर पर तुरन्त इलाहाबाद पहुँचने पर श्री गोखले ने उनकी वेडर वर्न से तुरन्त भेंट कराई। महात्मा मुन्शी राम ने उनके सामने अपनी समस्या विस्तार पूर्वक प्रस्तुत की सब बातें सुनकर वेडर वर्न ने कहा "बस आप मेरे साथ कलकत्ता चलिए।

वायसराय लार्ड हार्डिग को आर्य समाज के डेपुटेशन से मिलना ही पडेगा।" इस पर श्री गोखले ने सुझाव दिया कि "यह अधिक अच्छा होगा कि आप पहले वायसराय से मिलकर उनसे सारी स्थिति स्पष्ट कर दे और उन्हें इस बात से तैयार कर ले कि वे आर्य समाज के शिष्ट मण्डल से मिलें। वेडर वर्न ने उसके अनुसार कलकत्ता लौटकर वायसराय से काफी बात की और आर्यसमाज के बारे में उनकी भ्रान्तियाँ दूर करने में पहला सफल प्रयास किया। श्री गोखले ने इस विषय में महात्मा मुन्शी राम को 24 मार्च 1911 का जो संदेह है उनपर सर विलियम वेडर वर्न के नए वायसराय लार्ड हार्डिग के साथ बहुत सी बात हुई है। मैं आपसे मिलने पर उनका सारांश आपको बताना चाहता हूँ कि सर विलियम ने वायसराय पर बहुत जोर डाला है कि संदेह के कारण समस्त आर्य समाज को जो शिकायतें हैं उसको दूर करना अवश्य चाहिए वायसराय ने बड़े ध्यान से उन बातों को सुना इसलिए मेरा विचार है कि आर्य समाज के शिष्ट मण्डल की ओर से वायसराय के सामने सब बात रखी जाये तो अच्छा होगा।[4] इस विषय में दूसरे अंग्रेज दीन बन्धु चाल्र्स पीयर्ज एण्ड्रूज शीघ्र ही बहुत अच्छे मित्र बन गए थे। वे गुरुकुल में कई बार आए और उन्होंने अपने ही बहुत अच्छे मित्र बन पत्रों में गुरुकुल की बहुत प्रसंशा की थी, इसकी चर्चा हम कर आये हैं।

पं. सातवलेकर की गुरुकुल में गिरफ्तारी

1908 ई॰ में विदेशी सरकार ने वेदों के प्रसिद्ध विद्वान् श्री पाद दामोदर सातवलेकर को गुरुकुल कांगड़ी से राजद्रोह के अपराध में गिरफ्तार किया। यद्यपि इस घटना का वर्णन पीछे किया जा चुका है परन्तु यहाँ पर इसका वर्णन करना इसलिए आवश्यक है कि गुरुकुल कांगड़ी के राजद्रोही संस्था होने का यह बहुत बड़ा प्रमाण था कि उसने अपने यहाँ, उनके अनुसार एक ऐसे अपराधी को शरण दी हुई थी। इससे सरकार को यह संदेह होना स्वाभाविक ही था कि गुरुकुल कांगड़ी में ऐसे अध्यापक रखे जाते थे जो क्रांतिकारी होते हैं और ब्रिटिश सरकार का तख्ता पलटना चाहते हैं।

अत: पं. सातवलेकर का गुरुकुल कांगड़ी से सम्बन्ध और उनका संक्षिप्त परिचय देना आवश्यक प्रतीत होता है। श्री सातवलेकर महाराष्ट्र के रहने वाले थे। इन्होंने 1890 ई॰ के जे.जे. स्कूल ऑफ आर्ट्स से चित्र बनाने की शिक्षा प्राप्त की थी। उसके बाद वे आजीविका के लिए हैदराबाद में चित्रकला का कार्य करने लगे। यहाँ पर उनकी भेंट श्री विनायक राय विद्यालंकार से हुई थी। इससे उनका सम्बंध आर्य समाज से हो गया था। वे महर्षि दयानन्द के ग्रन्थों तथा लोकमान्य के विचारों से बड़े प्रभावी थे। हैदराबाद के क्रान्तिकारियों के सम्पर्क में भी आए। और उन्होंने बम आदि बनाने की कला भी सिखी थी। श्री सातवलेकर चित्रकला में निष्णात होने के साथ-साथ संस्कृत के प्रकाण्ड पंण्डित और वेदों के उद्भट् विद्वान् थे उन्होंने वैदिक राष्ट्रीय गीत नामक लेख मराठी में "विश्ववृत" नामक पत्रिका में प्रकाशित किया। इसके बाद अर्थवेद के (पृथ्वी सूक्त) इस लेख को ग्रन्थ के रूप में प्रकाशित किया गया। इस पुस्तक में देश के प्रति भक्ति और स्वतंत्रता का वर्णन होने के कारण सरकार ने इस पुस्तक को जब्त कर लिया। इस सम्बंध में उन्होंने कई अन्य लेख भी लिखे। जिन पत्रिकाओं और सम्पादकों ने उनके लेख छापे थे उनको गिरफ्तार कर लिया गया। जब श्री सातवलेकर को यह ज्ञात हुआ कि उनके लेख के कारण तीन व्यक्तियों को जेल में डाल दिया गया है तो उनकी आत्मा बड़ी ही कुपित हुई। उन्होंने सोचा कि मुझे स्वयं कोर्ट में उपस्थित हो जाना चाहिए। परन्तु उस समय सातवलेकर के मित्रों ने यह परामर्श दिया कि तुम बाहर रहकर ही बहुत अधिक कार्य कर सकते हो। इसलिए तथी सातवलेकर फरार होकर मद्रास और कलकत्ता होते हुए गुरुकुल कांगड़ी में पहुँचे और वहाँ ब्रह्मचारियों और महात्मा मुन्शीराम ने उनका हार्दिक स्वागत किया। श्री सातवलेकर ने यहाँ गुरुकुल में देखा कि छल-कपट से रहित दुनिया के झगड़ों से दूर यहाँ का आश्रम का सुसंस्कृत जीवन यहाँ के छात्रों की साहसी मनोवृत्ति और स्वाधीनता का प्रेम उन्हें बहुत अच्छा लगा था। इसलिए

उन्होंने अपने पुत्र नारायण को भी गुरुकुल में प्रवेश करा दिया। उसका नाम हरदेव रखा गया। इन्हीं दिनों बम बनाने वाले क्रांतिकारियों के दल देश के कई प्रान्तों में फैले हुए थे। इसमें अधिकांशतः बंगाली नवयुवक होते थे। इनका एक अड्डा हरिद्वार में भी था। इन क्रांतिकारियों का साहित्य गुरुकुल में ब्रह्मचारियों के पास पहुँच गया। महाविद्यालय के कुछ विद्यार्थी शामिल हुए। इस प्रकार की गति विधि बढ़ी तो पुलिस को उसका सुराग मिल गया। गुरुकुल पर छापा मारने का निश्चय किया गया, परन्तु गुरुकुल के किसी हितेशी ने अथवा गुप्तचर विभाग के किसी पुलिस कर्मचारी ने छापे की सूचना ब्रह्मचारियों को दे दी। ब्रह्मचारियों ने उस कमरे की सफाई करके समस्त आपत्तिजनक साहित्य एवं बमों को जमीन में गाड़ दिया और पुलिस के कुछ हाथ नही लगा, परन्तु श्री सातवलेकर पर संदेह किया जाने लगा और कुछ समय बाद वे गुरुकुल छोड़कर चले गए। कुछ समय बाद एक अन्य मुकद्दमे से बचने के लिए दूसरी बार श्री सातवलेकर गुरुकुल में आए, उन दिनों गुरुकुल कांगड़ी पर सरकार की निगाहें टेढ़ी चल रही थी इसलिए सरकारी गुप्तचर गुरुकुल में किसी न किसी बहाने आते-जाते रहते थे, एक दिन अचानक 300 सिपाही 10 घुड़सवार और 50 बन्दूकधारी पुलिस के व्यक्ति गुरुकुल में पहुँच गए और गुरुकुल को चारों तरफ से घेर लिया। लगभग दोपहर के 1 बजे तक नाकाबंदी करके पुलिस कप्तान घोड़े पर सवार होकर गुरुकुल में आया, उसने गुरुकुल के कर्मचारियों को पं. सातवलेकर को सुपूर्द करने को कहा। गुरुकुल के अधिकारीगण, शिक्षक, कर्मचारी हक्के-बक्के रह गए। ब्रह्मचारियों ने कहा हम श्री सावतलेकर को पुलिस को नहीं सौपेंगे और मुकाबला करने को आगे खड़े हो गये। जब श्री सातवलेकर को यह ज्ञात हुआ कि पुलिस उनको पकड़ने आयी है और ब्रह्मचारी उनका मुकाबला करने के लिए उद्यत है तो श्री सातवलेकर जी तुरन्त ऊपर से नीचे आये और उन्होंने पुलिस को अपने आप को सौंप दिया और ब्रह्मचारियों को कहा तुम्हारा कार्य अध्ययन का है तुम लोग जाओ और अपने कक्ष में बैठकर अध्ययन करो। पुलिस ने उनके हाथ में हथकड़ी और कमर में बेड़ी डाल दी और उन्हें बिजनौर के कलैक्टर के दफ्तर में ले गए उन पर छल और राजद्रोह का आरोप लगाया गया। कोल्हापुर में उनको ले जाकर उन पर मुकद्दमा चलाने की योजना बनायी गयी। यह बात की गुरुकुल का एक अध्यापक क्रांतिकारी होने के संदेह में पकड़ा गया है, हवा की तरह चारों ओर फैल गयी। प्रत्येक स्टेशन पर कितने ही देश भक्त फूल मालाएं लेकर उनका स्वागत करने आए। उन पर राजद्रोह और हत्या का अभियोग चलाया गया, परन्तु उन पर दोनों आरोप प्रमाणित नहीं हो सके और सेशन जज टाव ने उनको निर्दोष करार दिया। इस अवसर पर पं. सातवलेकर ने जो वेदों की आज्ञा है कि यदि देश को स्वतंत्र करना है तो क्षत्रियों को जागृत करो देश को परतन्त्रता से मुक्त कराना ही सच्चे ब्राह्मण का कर्तव्य है मैं ब्राह्मण हूँ आप् जो कहते हैं वह सब मैंने लिखा है परन्तु मैंने ऐसा क्षत्रियों को जागृत करने के लिए किया है अतः उसे लिखने के बारे में मुझे न पश्चाताप हुआ और न होगा। अतः अब आप मेंरे बारे में जो उचित निर्णय हो खुशी से दें।[5]

पं. सातवलेकर की गिरफ्तारी के पश्चात् गुरुकुल कांगड़ी पर राजद्रोही संस्था होने के प्रमाणों को एकत्रित करने के लिए साधारण गुप्तचर ही नहीं अपितु बड़े-बड़े सरकारी अधिकारी भी वेश बदलकर गुरुकुल में भेंद लेने की दृष्टि से आया करते थे। इस विषय में एक रोचक घटना इस प्रकार है। एक डिप्टी कलैक्टर अपने को वकील बताकर गुरुकुल में जासूसी करने के उद्देश्य से आये। देव योग से महात्मा मुन्शीराम को उनके आने का पता महले ही लग चुका था उनके पीछे गुरुकुल के गुप्तचर छोड़ दिए गए। आधी रात को वे छद्म वेशी वकील व्यायामशाला में जा पहुंचे ब्रह्मचारियों को गदका, फेटी आदि के खेल सिखाए जाते थे। सूचना मिलने पर महात्मा मुन्शीराम उनके पीछे वहाँ पहुँच गए और उससे पूछने लगे कि "क्या आपने हमारे सब गुप्त भेदों का पता लगया लिया है ?" वे डिप्टी कलक्टर पानी-पानी हो गए। उन्होंने स्वीकार किया कि गुरुकुल में राजद्रोह का कोई संदेह नहीं है।[6]

गुरुकुल में रेड

उस युग में उत्तर भारत में देश की स्वतंत्रता का आन्दोलन जोर पकड़ रहा था। पंजाब में देश भक्त देश की स्वतंत्रता के लिए संघर्षरत थे। उस समय लाला लाजपतराय तथा सरदार अजित सिंह की गिरफ्तारी तथा देश निर्वासन की घटना हो चुकी थी। गुरुकुल में भी पंजाब के ही व्यक्ति अधिकतर आया करते थे, इसलिए सरकारी गुप्तचरों की रिपोर्ट गुरुकुल के विषय में और अधिक विस्फोटक होती चली गई। इसी समय सरकार को यह सूचना भेजी गई कि गुरुकुल में हथियारों का एक बहुत बड़ा जखीरा है।

रिपोर्ट में यहाँ तक कहा गया था कि गुरुकुल में बम बनाने का कारखाना भी है। कुछ समय पश्चात् यह सूचना मिली कि गुरुकुल के निकट चण्डी पहाड़ की तलहटी में बिजनौर के कलैक्टर का शिविर लगा हुआ है और वे जल्दी ही गुरुकुल की तलाशी लेने के लिए दलबल सहित आ रहे हैं ताकि हथियारों के गुप्त भण्डार का पता लगाया जा सके। यूं सूचना मिलते ही महात्मा मुन्शीराम स्वयं ही कलैक्टर से मिलने चले गए उन्होंने इस विषय में सारी टिप्पणी स्पष्ट की और उन्होंने उनको गुरुकुल में आकर ब्रह्मचारियों के कुर्ते उतारकर छाती और भुजाओं के पुट्ठों की परीक्षा ली। इसके बाद सहज स्वभाव से उन्होंने कहा कि "मुझको बताया गया था कि आपके ब्रह्मचारी धनुर्विद्या में प्रवीण है और आपका मुख्य उद्देश्य उनको पहलवान बनाना है अब मुझको पता लग गया है कि यह सब झूठ है वास्तव में तो खुली वायु में रहने के कारण इनका डील-डौल बाहर के स्कूलों की अपेक्षा अच्छा है। मुझे यह भी बताया गया था कि वे बहुत कुशल घुड़सवार है और आकाश में उड़ते पक्षी को अचूक निशाना मारकर नीचे गिरा देते हैं।[7]

महात्मा मुन्शीराम ने बच्छों वाली आर्य समाज के 1909 के वार्षिक उत्सव के अवसर पर दिए गए अपने भाषण में कहा था कि उन्होंने कलैक्टर महोदय से यह पूछा था कि गुरुकुल के विषय में मन घडन्त बातों पर आप लोग क्यों विश्वास कर लेते है। इसके उत्तर में कलैक्टर महोदय ने बतलाया था कि हमारे सामने लगभग प्रतिदिन नाना प्रकार के अपराधियों के मामले आते रहते हैं अत: हम स्वाभाविक रूप से संशायालु हो जाते है इसके अतिरिक्त कितनी ही बार मैंने धोखा खाया है। अब मेरे लिए किसी एक पर विश्वास करना असंभव सा हो गया है। उन्होंने इस प्रसंग में अपने जीवन की कई घटनाओं को सुनाया।[8]

बिजनौर के कलैक्टर फोर्ड की गुरुकुल की यात्रा और महात्मा मुंशीराम से उनका वार्तालाप से गुप्तचरों की झूठी रिपोर्टों का पर्दाफाश करने तथा भ्रांतियाँ दूर करने की दिशा में यह पहला महत्वपूर्ण क़दम था। वस्तुत: उस दिन की बातचीत से ही जो बीजारोपण हुआ, वह कुछ वर्षों में भारत के वायसराय चेंम्स फोर्ड द्वारा गुरुकुल की तीर्थयात्रा के रूप में फलीभूत हुआ।

गुरुकुल पर संदेह के अन्य कारण

गुरुकुल को इस समय राजद्रोही संस्था समझे जाने के कुछ अन्य कारण भी थे। पहला कारण धनुर्वेद की शिक्षा था। गुरुकुल का उद्देश्य वेद-वेदाङ्ग की शिक्षा प्रदान करना था। इसमें जहाँ एक ओर ब्रह्मचारियों को वैदिक साहित्य की बौद्धिक शिक्षा दी जाती थी। वहीं दूसरी ओर इसके व्यावहारिक पक्ष की भी अपेक्षा की जाती थी। वेद का एक महत्वपूर्ण उपवेद धनुर्वेद है। इसकी पुरानी परम्परा के अनुसार ब्रह्मचारी को धनुषबाण चलाने तथा शारीरिक परीक्षण के लिए कुश्ती, गदका, फेटी आदि के खेल खिलाये जाते थे। एक गुरुकुल प्रेमी जमींदार ने गुरुकुल को कुछ घोड़े दान में दिए थे। इन पर ब्रह्मचारियों को घुड़सवारी की शिक्षा दी जाती थी। गुप्तचर विभाग को इस विषय में अन्य कल्पना करना कोई कठिन कार्य नहीं था। भारत सरकार के गृह मंत्रालय के पास ऐसी रिपोर्ट पहुँची थी कि जिनमें कहा गया था कि गुरुकुल में सैनिक प्रशिक्षण भी दिया जाता है।[9]

दूसरा कारण यहाँ गुप्त क्रान्तिकारी संगठनों जी सत्ता को मानकर किया जाता है। सुप्रसिद्ध भारतीय क्रान्तिकारी पाण्डुरंग सदाशिव खान खोजे के कथन के अनुसार बान्धव समाज क्रान्तिकारी नामक गुप्त संगठन इस शताब्दी के शुरू में काम कर रहा था। उन्होंने गदर की गूंज नामक पुस्तक की भूमिका में लिखा है कि" बांधव समाज की स्थापना किसी गुप्त संस्था के द्वारा, युद्ध करके भारत की स्वाधीनता प्राप्त करने के लिए हुई थी। उसकी शाखाएं महाराष्ट्र बंगाल और पंजाब में फैली हुई थी। वर्धा की तरफ से हनुमन्त नायडू, लक्ष्मण शर्मा आदि बान्धव लाहौर गए थे। लाहौर में प्राध्यापक पूर्ण सिंह से उन्होंने बम बनाना सिखा था। लाहौर में तथा गुरुकुल कांगड़ी में भी गुप्त बान्धव समाज स्थापित हुए थे।[10]

तीसरा कारण क्रान्तिकारियों का शरण स्थल बनाना था। सुदूर एकान्त में सर्वथा पृथक् होने के कारण गुरुकुल कांगड़ी क्रांतिकारियों के लिए सर्वथा सुरक्षित होने का एक आदर्श शरण स्थल था। इन दिनों शिक्षा के आमूल चूल परिवर्तन करने के कारण गुरुकुल कांगड़ी देशभक्त शिक्षा शास्त्रियों तथा स्वतन्त्रता का संघर्ष करने वालों के लिए आकर्षण का केन्द्र बना हुआ था। अत: यहाँ कई बार ऐसे व्यक्ति आ जाते थे जिन पर सरकार की वक्र दृष्टि होती थी। इनमें उल्लेखनीय नाम लाला हरदयाल, पं. सातवलेकर आदि है। पं० इन्द्र के शब्दों में बहुत से ऐसे राष्ट्र भक्त जो सर्वतो मुखी क्रान्ति के समर्थक थे, गुरुकुल में आकर विश्राम करते थे। क्योंकि वहाँ भी अपने आप को सरकार की दृष्टि से ओझल समझते थे। प्रसिद्ध देशभक्त लाला हरदयाल कई सप्ताह गुरुकुल में रहें। ईसाईमत और सहकारी शिक्षा के विरुद्ध जो उन्होंने लेख रूपी बाण छोड़े थे उनमें से कई गुरुकुल में ही तैयार किए गए थे। (आर्य समाज का इतिहास भाग-2 पृ०सं० 27)

उपर्युक्त विषय से यह स्पष्ट है कि वायसराय लार्ड चेम्स फोर्ड तथा उनकी पत्नी लेगी चेम्स फोर्ड 21 अक्टूबर सन् 1916 ई० के गुरुकुल में आए और गुरुकुल के सभी अन्तेवासियों ने उनका स्वागत किया। इससे यह सिद्ध होता है कि गुरुकुल कांगड़ी पर जो सरकार द्वारा संदेह अभिव्यक्त किए जा रहे थे उनकी इस यात्रा से यह बात सिद्ध हो जाती है कि भारत सरकार गुरुकुल तथा आर्यसमाज की संदेह की दृष्टि से नहीं देखती है। इसलिए पं० इन्द्र विद्यावाचस्पति ने मेरे पिता में यह लिखा था कि एक ऐसी संस्था में जिसकी राजद्रोहियों में गिनती थी वायसराय का आना और उस संस्था की प्रशंसा करना एक बहुत बड़ी राजनैतिक छलांग थी जिसने लोगों को आश्चर्य में डाल दिया। आर्य समाज के भक्तों तथा गुरुकुल प्रेमियों का आश्चर्य संतोष मिश्रित था उन्होंने इस घटना का स्वागत किया क्योंकि इससे एक विकट गुत्थी सुलझ गई और संस्था पर जो बादल छा रहे थे वे कम से कम रह गये।"[11]

गुरुकुल में वायसराय के आगमन से क्रांतिकारियों में कुछ भ्रान्तियाँ भी पैदा हो गई इसलिए ही उस समय के प्रसिद्ध क्रान्तिकारी नेता लाला हरदयाल ने लिखा था कि दिल्ली के कबूतर (सी.एफ.एण्डूज) के बार-बार गुरुकुल जाने का समाचार मिला था तो तभी हम समझ गये थे कि गुरुकुल पर मुसीबत आने वाली है हमारी यह आशंका सत्य सिद्ध हुई। वायसराय के गुरुकुल से विदा होने के पश्चात् देश भक्तों एवं क्रांतिकारियों में जो विद्रोह एवम् संदेह उत्पन्न हो गये थे उनका निराकरण करते हुए महात्मा मुन्शीराम ने सद्धर्म प्रचारक में लिखा था "गुरुकुल अपने जन्म से अब तक नौकर शाही के जाल से बचकर अपना काम करता आया है। इसके संचालकों को क्या-क्या प्रलोभन नहीं दिए गए। जिन सुनहरी जंजीरों का जातीयता का अपमान करने वाले शिक्षणालयों में बड़ी खुशी से बहन किया, मन लुभाने वाली वह जंजीरे न जाने कितनी बार उनके सामने पेश की गई। परमेश्वर ने उनको ऐसी दासता से बचने की बुद्धि दी। उनके सदधर्म प्रचारक में यह स्पष्ट लिखने के पश्चात् जिन लोगों को गुरुकुल के प्रति संदेह हो गया था उन लोगों का संदेह दूर हो गया। गुरुकुल की नीति में यह परिवर्तन की सरकारी अफसरों को बुलाकर उनकी आवभगत की जाय और उनसे अच्छे सम्बंध बनाने का प्रमाण किया जाए उसमें मुख्य कारण महात्मा

मुन्शीराम का विलक्षण मानसिक परिवर्तन था। वे अन्दर से अंग्रेजों की किसी भी प्रकार की खुशामद करना पसंद नहीं करते थे। उन्होंने गुरुकुल को सरकार तन्त्र से स्वतंत्र संस्था के रूप में बनाया था। अंग्रेजी सरकार से उसका कुछ लेना-देना नहीं था। इन कारणों से लगभग 10 वर्ष पर्यन्त गुरुकुल के सम्बन्ध में महात्मा मुन्शीराम ने सरकार के प्रति सर्वथा उदासीन भाव रखा। न की गुरुकुल में सरकार की खुशामद सिखाई जाती थी और न ही राजद्रोह का प्रचार होता था। विशाल हाथी की तरह गुरुकुल अपने निर्दिष्ट मार्ग पर चल रहा था न दायें देखता था न बांए। इसी बीच देश का वातावरण राजैनतिक दृष्टि से विक्षिप्त हो गया। संसार भर के विदेशी शासकों की यह विशेषता होती है कि उनका मनचोर की तरह संदेहशील हो जाता है उन दिनों भी संदेहशील हो गई थी पेड़ से पत्ता गिरता था तो सरकार को बम की आहट मालूम होती थी। ऐसे समय में गुरुकुल का उपेक्षा भाव सरकार को गुप्त राजद्रोह के रूप में दिखाई दिया हो तो कोई आश्चर्य की बात नहीं है।[12] देश की इस विषम परिस्थिति में पं. मुन्शीराम ने यह दूर दृष्टि से देखा कि सरकार झूठी रिपोर्टों के आधार पर गुरुकुल को क्षति पहुँचा सकती है उस स्थिति में गुरुकुल की रक्षा के लिए अधिकारियों के मन से निराधार संदेह की भावना को निकाल फेंकने के लिए बिजनौर के कलैक्टर तक कलैक्टर से कमिश्नर तक कमीशनर से गवर्नर तक और गवर्नर से वायसराय तक पहुँचने में देर नही लगी थी, इसका परिणाम यह हुआ कि जिस गुरुकुल को ताले लगाने के लिए वारंटों पर हस्ताक्षर हो चुके थे उसे देखकर गुरुकुल में पधारकर सरकारी अधिकारियों ने गुरुकुल की मुक्त कंठ से प्रशंसा की।[13]

महात्मा मुन्शीराम द्वारा एक प्रकार से सरकारी अधिकारियों को गुरुकुल में बुलाना उनका स्वागत आदि करना महात्मा जी के सहयोगी और साथियों की समझ में नहीं आया उनको आचार्य जी का निर्णय बड़ा अटपटा सा लगा। इसका विश्लेषण करते हुए उनके पुत्र इन्द्र ने लिखा है कि "कुछ लोग मस्तिष्क से सोचते हुए निष्कर्ष करते हैं उन्हें बुद्धिवादी कहा जाता है कुछ लोग हृदय से अनुभव करते हैं और अनुभूति के आधार पर ही इतिकर्तव्यता का निश्चय करते हैं, वे भावुकता प्रधान समझे जाते हैं पिताजी उन व्यक्तियों में से थे जो निश्चय का अवसर आने से पूर्व और निश्चय हो जाने के पश्चात् मस्तिष्क का पूरा उपयोग करते हैं, परन्तु निश्चय मस्तिष्क से नहीं करते, हृदय से करते हैं जिसका दूसरा नाम अन्तरात्मा है। ऐसे महानुभाव विवेचन के लिए तर्क का प्रयोग करते हैं, परन्तु निश्चय के लिए केवल श्रद्धा को पथ प्रदर्शक मानते हैं। सरकार को इसमें सफलता नहीं हुई इसका कारण यह था कि जिसे उन्होंने केवल बर्फ की तह समझा था उसके नीचे कठोर चट्टान थी। पिताजी की सामाजिकता और सरलता के पीछे जो दृढ़ विश्वास की जो दीवार थी उसे ऊंचे अधिकारी तब-तक नहीं समझ सके, जब तक पिताजी ने सरकार द्वारा पेश किए हुए दोनों उपहारों को ग्रहण करने से एकदम इन्कार नहीं कर दिया। बुद्धि और श्रद्धा दोनों के सहारे पर चलने वाले व्यक्तियों के स्वभाव की यह विशेषता होती है कि वह गौण बातों से समझौता के लिए जिस शीघ्रता से तैयार हो जाते हैं। मुख्य सिद्धान्त के विषय में उससे भी सरलता से समझौता से इन्कार कर देते हैं। जो लोग गम्भीर दृष्टि से इसमें मनोवैज्ञानिक कारणों पर विचार नहीं करते थे प्रायः उन व्यक्तियों को अस्थिर, परिवर्तनशील दुर्बोध आदि शब्दों से कहने लग जाते हैं। वस्तुतः बात यह होती है कि सिद्धान्तवादी मनुष्य गौण और मुख्य में भेद करना जानते हैं। गौण में समझौता करना सदा उद्यत रहते हैं और मनुष्य मुख्य सिद्धान्त पर आँच नहीं आने देते हैं पिताजी ने सरकार के हाथ में हाथ तब तक रहने दिया जब तक उन्होंने यह अनुभव नही किया कि गुरुकुल की अन्तरात्मा पर आघात नहीं पहुँच सकता है। ज्योंही उन्होंने ऐसी संभावना का अनुभव किया त्यों ही उन्होंने अपना हाथ खींच लिया उपहार लेने से इन्कार कर दिया और इस आशंका से की निरन्तर सम्पर्क से कभी परिस्थिति अधिक उलझ न जाय। निमन्त्रणों के क्रम को भी वही समाप्त कर दिया। लार्ड चेम्स फोर्ड के गुरुकुल आगमन के साथ अधिकारियों के आगमन का तांता समाप्त हो गया।[14]

गुरुकुल के अधिकारी चाहे कितने ही सरकारी अधिकारियों के उत्तर प्रदेश के गवर्नर तक आमन्त्रित करते रहे चाहे भव्य स्वागत एवं मानपत्र दिए जाते रहे हो परन्तु गुरुकुल के छात्रों में एक अनुपम राष्ट्रीय भावना थी जिसे जानकर गुरुकुल के अधिकारियों द्वारा किये जाने वाले स्वागतों के पीछे क्या था यह स्पष्ट हो जाता है।

इसका एक सुन्दर उदाहरण गुरुकुल कांगड़ी में उन दिनों (1911 से 17 तक) शिक्षा प्राप्त करने वाले सुप्रसिद्ध क्रांतिकारी यशपाल ने अपने आत्म कथा सिंहावलोकन में बड़े ही रोमांचक शब्दों में प्रस्तुत किया है। "बचपन में स्वयं लगभग सात वर्ष गुरुकुल में रहा हूँ। मुझे याद है कि गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय के संस्थापक महात्मा मुंशीराम जी जो बाद में संन्यास ग्रहण करने पर स्वामी श्रद्धानन्द कहलाने लगे थे गवर्नरों और वायसरों को गुरुकुल में आमन्त्रित करके उनका प्रेम पूर्वक सत्कार करने का पाखंड करते रहते थे। जब दिल्ली में लार्ड हार्डिंग पर बम फेंका गया और वायसराय बाल-बाल बच गए तो गुरुकुल में ईश्वर की इस कृपा पर धन्यवाद देने के लिए एक सभा की गई थी। साधारण व्यक्ति ऐसे लोगों को पूरी तरह समझने में अपने आपको सर्वथा असमर्थ पाते हैं। साधारण व्यक्ति यह सोचता है कि इस भले मानुष को चिरकाल की विचार परम्परा के अनुसार ही तो किसी निश्चय पर पहुँचना था परन्तु कहीं पहुँच गया है। पिताजी ने संन्यास लेने के समय यही घोषणा की थी कि मैंने अपने जीवन के सभी निर्णय केवल श्रद्धा के आधार पर किए है इसलिए मैं अपना नाम श्रद्धानन्द रखता हूँ।[15]

गुरुकुल कांगड़ी की तत्कालीन स्थिति ऐसी नहीं थी कि वह किसी सरकार का मुकाबला कर सकें। स्वामी श्रद्धानन्द की इस दूरदर्शिता के कारण ही गुरुकुल कांगड़ी तोपों से उड़ने से बच गया। वास्तव में गुरुकुल रूपी झोपड़ी में जब तक राष्ट्रवादी सोच के निर्माण की फैक्ट्री का कार्य सम्पन्न नहीं हो जाता, तब तक जो उस समय निर्णय गुरुकुल कांगड़ी के संस्थापक ने लिया वह कृष्ण जैसी नीति कुशलता का सूचक था इसी कारण बिजनौर के कलैक्टर फोर्ड से मिलने के बाद वे कमिश्नर और लैफ्टिनेंट गवर्नर सर जेम्स मिस्टन से मिले जैसा कि सर्व विदित है कि स्वामी श्रद्धानन्द का व्यक्तित्व बड़ा प्रभावशाली था उच्च अधिकारियों पर उनकी बातचीत और व्यक्तित्व का अनुकूल प्रभाव पड़ा उनकी विशाल मूर्ति खुली तबीयत और आदर्श प्रेम के साथ-साथ क्रोध या कड़वेपन के सर्वथा अभाव को अनुभव करके अधिकारियों ने यह मानने में देर न लगाई कि गुरुकुल पर और उनके अधिष्ठाता पर संदेह करना व्यर्थ है। इसका विस्तार पूर्वक विश्लेषण करते हुए इन्द्रविद्यावाचस्पति ने इस प्रकार अभिव्यक्त किया है "मेरी कल्पना है कि उन लोगों (सरकारी अधिकारी) ने और आगे बढ़कर गुरुकुल को अपने असर में लेने का संकल्प लिया। उन्होंने सोचा होगा कि जो व्यक्ति हमसे इतनी अच्छी तरह मिलता है और उसके हृदय में अंग्रेज जाति के प्रति अणु मात्र भी कटुता नहीं है, उसे यह समझ लेना क्या कठिन है कि सरकार का सहयोग प्राप्त करने से गुरुकुल को लाभ ही होगा संभव है अत्यंत सद्भावना से प्रेरित होकर ही अधिकारियों ने ऐसा विचार किया हो। परन्तु यह संदिग्ध है कि एक समय ऐसा आ गया था कि जब सरकार गुरुकुल को बहुत सी आर्थिक सहायता देने के अतिरिक्त गुरुकुल विश्वविद्यालय को सरकारी विश्वविद्यालय मानने को तैयार हो गयी थी इस सम्बन्ध में एक उच्च अधिकारी ने पिताजी को इशारा भी किया था। जिस उत्सुकता से सरकार ने गुरुकुल की ओर हाथ बढ़ाया उसका एक मुख्य कारण सरकार की यह भावना अवश्य प्रतीत होती है कि गुरुकुल और सरकार का गठजोड़ हो जाय।[16] लार्ड और लेडी हार्डिंग के चित्र विद्यार्थियों में बांटे गए थे उनके दीर्घ जीवन के लिए ईश्वर से प्रार्थना की गई थी। पाखण्ड शब्द का मैंने उपयोग इसलिए किया था कि वास्तव में गुरुकुल कांगडी के वातावरण में अंग्रेज और अंग्रेजी शासन के प्रति उत्कट घृणा थी। विदेशी शासन के प्रति वहाँ प्रसन्नता का भाव था प्रेम का नहीं।[17]

उस समय गुरुकुल में ब्रिटिश विरोधी भावना इतनी अधिक प्रबल थी कि ब्रह्मचारियों को यह विश्वास था कि वे अंग्रेजों को अपने देश से जल्दी ही मार भगाने में और स्वतंत्र हो जाने में समर्थ होंगे। वे न केवल भारत को स्वाधीन बनाऐंगे अपितु इंग्लैण्ड पर अपना शासन स्थापित करोगे और उन्हें अपना वैदिक धर्म का सिद्धान्त भारतीय विधि विधान के अनुसार उपासना करने में समर्थ होंगे। इस विषय में गुरुकुल के तत्कालीन छात्र के कुछ रोचक प्रसंग इस प्रकार है। "गुझे सबसे उग्र स्मृति है कि गुरुकुल के वातावरण में अंग्रेज तथा विदेशी शासन से विरोधी भावना की थी कि उस उम्र में ही न जाने किस प्रेरणा से हम (गुरुकुल के छात्र गण) को यह दृढ़ विश्वास था कि हम अंग्रेजों को अपने देश से मार भगायेंगे।" "अंग्रेजों को मार भगाने की कोई रूपरेखा हमारे दिमाग में नहीं थी हमारी कल्पना में यह बात जीवन का वैसा ही निश्चय क्रम भी जैसे हमारे शरीर का बढ़कर युवा होना। इतना ही नहीं यह भी कल्पना थी कि भारतवासी एक दिन इंग्लैंड में जाकर शासन करेंगे अल्हड़पन की ऐसी कल्पनाओं का यह आधार गुरुकुल में दी जाने वाली शिक्षा का यह तत्व था कि सम्पूर्ण ज्ञान का मूल वेद है। वेदों का शासन करने वाले भारत के आर्यों से श्रेष्ठ संसार में किसी देश की कोई जाति नहीं हो सकती। अतीतकाल में सम्पूर्ण संसार में आर्यों का राज्य था। वैदिक धर्म में शिथिलता आ जाने के कारण आर्यों का पतन हो गया इसी कारण इस देश में मुसलमानों का और फिर अंग्रेजों का राज्य हो गया परन्तु आर्य लोग ही उन्नति करके संसार पर साम्राज्य कायम कर लेंगे। हमारी दृष्टि में वेदों के उद्धार का उद्देश्य आध्यात्मिक उन्नति के साथ-साथ अपनी सूझ-बूझ के अनुसार राजनैतिक भी था। उस आयु में आध्यात्मिक लक्ष्य क्या समझ में आता ? अपने शत्रु अंग्रेजों से लड़ने की बात जरूर आती थी और आध्यात्मिक भावना जीवन की परिस्थितियों से स्वतंत्र भी नहीं हो सकती है।"

"इस भावना की और बचकानी दिमाग की एक अत्यंत अल्हड और निरर्थक कल्पना की स्मृति अब तक विद्यमान है। हम लोगों को प्रात: सायं नियम से संध्या और हवन कराने के लिए पंक्तियों में या वृत्ताकार में बैठा दिया जाता था। संध्या पालथी मारे आंखें मूंदे ऊंचे स्वर से मन्त्रोच्चारण द्वारा होती थी। उस समय वैदिक मन्त्रों का अर्थ तो जानते नहीं थे केवल तोते की तरह रटने का ही पुण्य होता था आंख मूंदे-मूंदे कल्पना में देखा करता था कि इंग्लैंड में आर्यों का राज्य हो गया है। उस समय की कल्पना में इंग्लैण्ड में आर्यों का राज्य हो गया है। उस समय की कल्पना में इंग्लैण्ड कुछ-कुछ गुरुकुल के वातावरण जैसा ही दिखाई पड़ता था। उस कल्पना में देखता था कि अंग्रेजों को धोती कुर्त्ता पहनना पड़ रहा है अंग्रेज ब्रह्मचारी चोटी में गांठ लगाये जनेऊ और खड़ाऊँ पहने धूम रहे है और मैं उनका अधिष्ठाता बन गया हूँ। इस कल्पना में विशेष असंगत बात यह थी कि अंग्रेजों को कुर्त्ता-धोती में देखना और स्वयं को कोट पतलून में। इस अद्भुत कल्पना को विशलेषण यही हो सकता है कि प्रभुता और शक्ति सम्पन्न पोशाक होने से आदर होने से उसे अपनाने की इच्छा और साथ ही दासता की प्रति हिंसा में उसे अपनाने की इच्छा।

"इस कम उम्र में हम विदेशी शासन के विरुद्ध किस तरह की राजनैतिक बातें किया करते थे इसका भी एक उदाहरण याद है प्रथम महायुद्ध के दिन थे सन्ध्या भोजन के बाद कुछ दूर टहलने जाने का नियम था गर्मियों या बरसात में रात के समय में पठन-पाठन नहीं हो सकता। इस मौसम में सन्ध्या के भोजन के बाद सैर काफी लम्बी हो जाती थी। एक दिन इसी प्रकार की सैर के समय अपने किसी सहपाठी से बात करता हुआ मैं युद्ध में जर्मनी से अंग्रेजों की पराजय की कामना कर रहा था। महात्मा मुन्शीराम जी के संन्यास ले लेने के बाद रामदेव जी ही गुरुकुल महाविद्यालय के आचार्य बने थे। आर्य समाज की गुरुकुल पार्टी के क्षेत्र में वे बहुत ही बड़े नेता रहे है उनकी लिखी हुई पुस्तक व आर्य सभ्यता का इतिहास हमें गुरुकुल में पढ़ायी जाती थी पांचवीं कक्षा में पुस्तक को समझ पाना कठिन था परन्तु इतना समझ में

आता था कि हमारे पूर्वज विजयी थे। उनके पास हवाई जहाज आदि सभी वैज्ञानिक साधन थे। वेदों के अधिकारी समाज का दिग्विजयी होना अनिवार्य है। आचार्य जी का हाथ अपने कंधे पर देखकर सकपका गया परन्तु उन्होंने मेरा उत्साह बढ़ाते हुए प्रश्न किया क्या तुम चाहते हो कि जर्मनी जीत जाय ? अंग्रेजों के हार जाने पर हमारा देश स्वतन्त्र हो जायेगा। अंग्रेजों के हार जाने से ही हिन्दुस्तान स्वतन्त्र हो जायेगा आवश्यक नहीं। यहाँ जर्मनी का राज हो जायेंगा जर्मन लोग अंग्रेजों की अपेक्षा यहाँ कड़ा और अनुदार शासन करेंगे। यदि जर्मन लोग अधिक दमन करेंगे तो हमारा देश उनसे लड़ने के लिए तैयार हो जायेगा। अधिक दमन होने से क्रान्ति हो जायेगी। मैंने उस समय के ज्ञान के अनुसार कहा नहीं यह आवश्यक नहीं है कि दमन से क्रान्ति हो जाय नादिरशाह और औरंगजेब ने कितना दमन और अन्याय किया था उस समय तो क्रान्ति नहीं हुई बिना समझे बूझे ऐसी बात नहीं करनी चाहिए। तुम्हें अभी पढ़ना-लिखना और समझना चाहिए। आचार्य जी ने समझाया परन्तु अंग्रेजी विरोधी के लिए मुझे धमकाया नहीं। उस काल में इस प्रकार की बातचीत यदि सरकार के किसी स्कूल या सरकारी यूनिवर्सिटियों से सम्बद्ध किसी संस्था का विद्यार्थी करता तो परिणाम काफी सख्त हो सकता था।[18] इस उपर्युक्त संदर्भ से यह स्पष्ट हो जाता है कि उस समय गुरुकुल के अधिकारी संस्था के हित में भले ही ब्रिटिश अधिकारियों को अपनी संस्था में बुलाकर सम्मानित करते हों किन्तु छात्रों में ब्रिटिश शासन का विरोध करने की और उसे समाप्त करने की इस युद्ध में पराजित हो, ताकि भारत को स्वतन्त्र होने का अवसर मिलें। उस समय गुरुकुल से निकलने वाले स्नातकों अधिकांशतः महात्मा गांधी द्वारा छेड़े गए सत्याग्रह औरि सविनय अवज्ञा के आन्दोलनों में राष्ट्रीय जागृति के कार्यों में बड़ा भाग लिया था। इन दिनों में गुरुकुल के अध्ययन करने वाले श्री यशपाल ने लिखा है कि गुरुकुल में कोई व्यक्ति कलकत्ते की ब्लैक हॉल की घटना पर विश्वास नहीं करता था। और बताया जाता था कि वह प्रपञ्च भारत में रहने वाले अंग्रेजों ने अपनी अपनी सरकार को ब्रिटेन से अपनी सेना भेजने के लिए गढ़ा था। इसी प्रकार में वंगात के जगत सेठ उत्तमचन्द्र के साथ धोखा, नंद कुमार को फांसी, चेत सिंह के साथ अन्याय और वारेन हेस्टिगन्स के अत्याचारों को सही-सही बताने का भी साहस गुरुकुल में ही किया जाता था। यह भावना गुरुकुल के वातावरण में सदा छायी रहती थी कि गुरुकुल विदेशी सरकार से स्वतंत्र शिक्षा देता है। और अंग्रेज सदा गुरुकुल को संदेह की दृष्टि से देखते है। कभी-कभी ऐसी सनसनी सी फैल जाती थी कि कोई जासूस भेद लेने के लिए वेश बदलकर आया था और अमुक जिम्मेदार व्यक्ति ने उसे मार-मारकर भगा दिया।

इन उपर्युक्त तथ्यों से यह सिद्ध होता है कि गुरुकुल में बचपन से ही छात्रों को राष्ट्रभक्ति और देश भक्ति की शिक्षा दी जाती थी। यहाँ के छात्रों और स्नातकों ने अपनी मातृ-भूमि के लिए अपने प्राणों की आहुति दे दी थी। महात्मा गांधी के नेतृत्व में सत्याग्रह आन्दोलन प्रारम्भ किया तो गुरुकुल के छात्र ही आगे-आगे रहें।

1930 के सत्याग्रह में जब त्याग तपस्या और बलिदान के लिए युवकों को पुकारा गया तो भी सर्वमित्र और सत्य भूषण ने देश के लिए हंसते-हंसते अपने प्राण न्यौच्छावर कर दिये थे। 1930 में नमक सत्याग्रह 1900-32 के अवज्ञा आन्दोलनों तथा 1942 के राष्ट्रीय आन्दोलनों में भी गुरुकुल के ब्रह्मचारी और स्नातक बढ़ चढ़कर भाग लेते रहे। सन् 1942 में जो गुरुकुल की कक्षायें 9वीं और 10 वीं दोनों कक्षाओं ने दिल्ली में चार-चार और पांच-पांच के समूह में धरना दिया' गिरफ्तार हुये और आन्दोलन में भाग लिया और वे सहारनपुर जेल में रखे गये। इनके नाम इस प्रकार है सर्व श्री देव शर्मा विद्यालंकार, चंद्रमणि विद्यालंकार, भीमसेन, कृष्णस्वरुप दीनदयालु, धर्मवीर, भूदेव, सत्यव्रत, ईश्वरदत्त, जयचन्द्र, केशवदेव, गौतमदेव, सुरेन्द्र नाथ, पूर्णचन्द्र, वासुदेव, रामेश्वर, सुभाष, अमरनाथ, हरिप्रकाश, सत्यदेव, सोमप्रकाश अवनीमोहन,

धर्मेन्द्र, वेदभूषण, राजेश्वर, हरिदत्त, वेदप्रकाश, मेधाव्रत्त, चन्द्रगुप्त गुरुदत्त, ब्रह्मदत्त, विद्यासागर और जयकृष्ण आदि ने इन आन्दोलनों में सक्रिय भाग लिया और जेल में भी गये यदि संख्या की दृष्टि से देखा जाये तो इस समय भारत की जितनी भी शिक्षण संस्थायें थी उनमें गुरुकुल कांगड़ी के छात्रों एवम् स्नातकों ने सबसे अधिक आन्दोलनों में भाग लिया था।

गुरुकुल के प्रथम स्नातक हरिश्चन्द्र विद्यालंकार प्रारम्भ से ही क्रान्ति की विचारधारा के थे। हरिश्चन्द्र श्रद्धानन्द जी के सुपुत्र थे। जब ये स्नातक बनकर दिल्ली गए तब वहाँ के कमिश्नर से सीधे जा भिड़े किवन्दती तो यह भी है कि उन्होंने अंग्रेज कमीश्नर को जूतों की ठोकर भी मारी। श्री हरिश्चन्द्र 1914 में राजा महेन्द्र प्रताप के साथ विदेश में चले गये थे। उनका विचार था कि विदेश में रहकर क्रान्तिकारी आन्दोलन को चलाया जाय। वे यूरोप के कई देशों में गए। अंग्रेजों को उनसे इतना भय हो गया था कि वही किसी देश में अंग्रेजों ने गुप्त रूप से शहीद कर दिया था।

पं० इन्द्रविद्यावाचस्पति को तो राष्ट्रभक्ति बचपन से ही मिली थी। ये, हरिश्चन्द्र के छोटे भाई थे। उन्होंने स्नातक बनने के पश्चात् श्री लोकमान्यतिलक को अपना राजनैतिक गुरू मान लिया था। उनके जीवन का ध्येय था समाज में राष्ट्र की सेवा। उन्होंने विजय और अर्जुन के माध्यम से अपनी ओजस्विनी लेखनी द्वारा सत्याग्रह और राष्ट्र का संदेश घर-घर तक पहुँचाने का सफल प्रयास किया। इसलिये उनको अंग्रेज सरकार ने राजद्रोही माना था वे 1927, 1930 और 1932 में जेल में रहे थे जीवन भर उन्होंने राष्ट्र सेवक और विद्वान् के रूप में राज्य सभा का सदस्य मनोनीत करके सम्मानित किया था।

श्री देवशर्मा विद्यालंकार (आचार्य अभयदेव) महात्मा गांधी के रचनात्मक कार्यों के लिए सतत् प्रयत्लशीन रहते थे। उन्होंने अपने पैतृक गांव चरथावल (सहारनपुर) में असहयोग आन्दोलन का संचालन किया था और अपने समस्त क्षेत्र में आन्दोलन जन-जागृति भी की थी श्री पं० कृष्णचन्द्र स्वरुप विद्यालंकार बदायूँ जिले में राष्ट्रीय आन्दोलन के लिये कार्य करते रहे। स्वतन्त्रता आन्दोलन में कई बार जेल गए। ये इस्लाम नगर में कांग्रेस के महामंत्री तथा टाउन एरिया कमेटी के अध्यक्ष रहे श्री केशव चन्द्र सिंह आयुर्वेदालंकार शांहजहाँपुर जिले के प्रभावशाली एवं लोकप्रिय राष्टनेता थे उन्होंने अपना जीवन कांग्रेस के कार्यों के लिए समर्पित कर दिया गया। वे कई बार विधानसभा के सदस्य भी रहें।

सहारनपुर जिले में राष्ट्रीय जागृति का श्रेय गुरुकुल को ही जाता है। गुरुकुल के छात्र और स्नातक एक-एक गांव में जाकर जन-जागृति करते थे। 1930 में हुए रुड़की में नमक सत्याग्रह आन्दोलन में गुरुकुल के छात्रों और स्नातकों ने बहुत बड़ी संख्या में भाग लिया था। श्री पूर्णचन्द्र विद्यालंकार सहारनपुर जिले के गांधीवादी त्यागी और तपस्वी नेता माने जाते थे आपने ग्रामोद्धार और महात्मा गांधी के रचनात्मक कार्यों में विशेष योगदान किया। कुछ वर्ष आप जिला कांग्रेस कमेटी के प्रधान तथा उत्तर प्रदेश विधान परिषद् के सदस्य भी रहें उत्तर प्रदेश की जन-जागृति में इनका बहुत बड़ा योगदान था। इसी प्रकार इस जिले के विकास और प्रतिष्ठा को बढ़ाने में भी दीनदयालु शास्त्री विद्यालंकार का उल्लेखनीय योगदान रहा वे लगातार कई वर्षों तक उत्तर प्रदेश की विधान सभा तथा विधान परिषद् के सदस्य रहे और चन्द्रभानुगुप्त मन्त्रिमण्डल में उप शिक्षा मंत्री भी बनाये गए। राज्य की राजनीति में उनका प्रमुख स्थान माना जाता था।

श्री दीनानाथ सिद्धान्तालंकार ने दिल्ली में गुप्त रूप से शहीद शिरोमणि भगत सिंह के साथ क्रान्तिकारी आन्दोलन में भाग लिया। 1930 में कलकत्ता के सत्याग्रह आन्दोलन के सिलसिले में तथा 1930 के कानपुर में नमक कानून का उल्लंधन करते हुए श्री गणेशंकर विद्यार्थी के साथ जेल में रहे श्री सत्यदेव विद्यालंकार गांधीजी और जमुनालाल के सानिध्य में वर्द्धा आश्रम में रहे। वे 1823 में राजध्वज आन्दोलन में भाग लेकर स्वतन्त्रता संघर्ष में कूद पड़े। इनको कई बार जेल भी जाना पड़ा। श्री सत्यपाल सिद्धान्तालंकार ने महान्

क्रान्तिकारी भगत सिंह तथा शहीद चन्द्रशेखर के साथ मिलकर क्रान्तिकारी कार्यों में उनका हाथ बंटाया लाहौर में सान्ड्रर्स हत्याकाण्ड तथा दिल्ली एसेम्बली में हुए बम विस्फोट के सिलसिले में उनका नाम था, इसलिए इनके उस समय गिरफ्तारी के वारन्ट जारी हुए थे। परन्तु ये पकड़े नहीं जा सके, भूमिगत हो गए। यहाँ से छिपकर समुद्री जहाज द्वारा दक्षिण अफ्रीका चले गए। वहाँ पर लगभग 30 वर्ष तक देश के लिए कार्य किया। वहाँ पर भी जब क्रान्तिकारी गतिविधियों में इनके वारन्ट जारी हो गए तो छिपकर भारत में पुनः आ गए थे।

“पं० सत्यव्रत सिद्धान्तालंकार जो बाद में विश्वविद्यालय के उपाध्याय से लेकर कुलपति और परिद्रष्टा जैसे उच्चे पदों तक रहे। वे अपनी जीवन यात्रा में लिखते है कि” ज़िन दिनों मैं महाविद्यालय विभाग में पढ़ रहा था उन दिनों मेरे जीवन में एक घटना घटी हमारे विज्ञान के अध्यापक श्री लहरी थे एक दिन लहरी महोदय मुझे पास के जंगल में उस स्थान पर ले गये जिसे हम लोग आनन्द वाटिका कहते है मुझे सामने बैठाकर लेक्चर देने लगे। उन्होंने कहना प्रारम्भ किया भारत माता परतन्त्रता की बेडी में बंधी हैं ऐसे युवक तैयार होने चाहिये जो भारत माता को स्वतंत्र करें और परतंत्रता की बेडियों को काटो तुम होनहार युवक हो तुम्हें इस काम के लिए उद्यत होना चाहिये। तुम्हारे पढ़ने-लिखने और खाने काम इंजताम हिन्दू यूनिवर्सिटी में हो जायेगा। तुम्हारे विद्या अध्ययन में कोई बाधा नहीं होगी आधा घंटा तक उन्होंने उस जंगल में मुझे भारत माता की परतन्त्रता तथा उसकी स्वतन्त्रता पर व्याख्यान दिया वहाँ उनके विचार से अत्यंन्त प्रभावित हुआ। अगले दिन मैं महात्मा मुंशीराम जी से जिन्हें हम आदर वश पिताजी कहते थे, से मिला और मैं भारत माता की स्वतंत्रता के लिये अपने को तैयार करना चाहता हूँ और गुरुकुल छोड़कर बाहर जाना चाहता हूँ। महात्मा जी ने पूछा की तुम्हें यह विचार किसने दिये मैंने कहा लहरी जी ने लहरी जी रिवोलोशनरी दल के व्यक्ति थे इस दल के लोंग समझते थे कि गुरुकुल में काम करने के लिए गुरुकुल एकान्त में है, जंगल में है उत्तम स्थल है। लहरी जी ने मेरे विद्रोही विचारों को देखकर अपने अभिप्राय से मुझे चुना होगा। अगर में लहरी जी के मार्ग पर चलता तो शायद अंग्रेजों के जमाने में फांसी पर लटक गया होता क्योंकि पीछे पता चला की लहरी जी पकड़े गये थे और फांसी पर लटका दिये गये।”[19]

इस उपर्युक्त संदर्भ से यह सिद्ध होता है कि उस समय गुरुकुल कांगड़ी के शिक्षक एवं कर्मचारियों में एक कोई गुप्त संगठन के एवं क्रान्तिकारी दल के व्यक्ति यहाँ मौदूर थे उनमें केवल पं० सातवलेकर ही अकेले नहीं प्रभावित करते होंगे जो छात्र उनके प्रभाव में आ जाते होंगे उनको शस्त्र एवम् बम चलाना सिखाने का प्रशिक्षण भी देते होंगे इसीलिये सम्भवतः गदर की गूंज नामक पुस्तक के पृ०सं०-6 पर लिखा मिलता है कि गुरुकुल कांगड़ी में लोकमान्य बालगंगाधर तिलक द्वारा क्रान्तिकारी कार्य करने वाली एक गुप्त संस्था बांधव समाज की स्थापना का उल्लेख किया है” लाल, बाल, पाल ने भारत के स्वातन्त्र्य युद्ध की कल्पना भारतीयों को सिखलाई, सभी तरीकों से भारत की स्वाधीनता प्राप्त करना यह गुरुवर तिलक महाराज का गदरी जवानों के लिए महान् कार्य था। रैंड के ऊपर आक्रमण करने वाले वीर चापेकर के समर्थन करने के कारण लोकमान्य को बड़ी कैद भुगतनी पड़ी। चापेकर जी के पराक्रम को भारतीय स्वतन्त्रता संपादन करने वाली गुप्त संस्था का प्रथम कार्य माना जाना चाहिये। बांधव समाज की कल्पना किसी गुप्त संस्था के द्वारा युद्ध करके भारत की स्वाधीनता संपादन करने के लिए ही हुई थी। उनकी शाखायें महाराष्ट्र, बंगाल और पंजाब में फैली हुई थी वर्द्धा की तरफ से हनुमंत नायडू लक्ष्मण शर्मा आदि बांधव लाहौर गये थे। लाहौर में प्राध्यापक पूर्णसिंह से उन्होंने बम बनाना सीखा था लाहौर में तथा गुरुकुल कांगड़ी में गुप्त बांधव समाज स्थापित हुये थे।[20] यह उपयुक्त उद्‌गार सुप्रसद्धि क्रान्तिकारी पाण्डुरंग सदाशिव खानखोजे ने अभिव्यक्त किये -

थे यह भी सम्भव है कि बांधव समाज एवम् क्रान्तिकारी संगठन कुछ समय तक ही यहाँ रह पाये थे क्योंकि इसके पश्चात् गुरुकुल कांगड़ी के अधिकारी एवम् यहाँ स्नातक छात्र महात्मा गांधी के अहिंसात्मक और यहाँ के कई अन्य अधिकारीगण और उपाध्यायगण कांग्रेस में सम्मिलित हो गये थे और महात्मा गांधी के अहसयोग आन्दोलन में सक्रिय भाग लेते थे। इससे क्रान्तिकारी विचारों से प्रभावित तथा बांधव समाज के सदस्य धीरे-धीरे यहाँ से चले गये हो क्योंकि प्रोफेसर लहरी की विचारधारा से यह स्पष्ट हो जाता है कि वे किसी ऐसे दल के सदस्य थे जिससे बांधव समाज के दल के भी वे सदस्य हो सकते है। जो छात्रों को बम का प्रशिक्षण एवम् हिंसात्मक आन्दोलन के उनको सिपाही बनाना चाहते हो। यह तो सिद्ध ही है कि गुरुकुल क्रांतिकारियों के लिये आकर्षण का केन्द्र था यहाँ की भौगोलिक स्थिति एकान्त शान्त निर्जन स्थान चौमासे गंगा की बाढ़ से चारों ओर बाह्य जगत् के सम्पर्क से विच्छिन्न होना घने जंगल और पहाड़ क्रान्तिकारियों की गुप्त मंत्रणा के लिये आदर्श स्थान थे। यहाँ वे अपने कार्य को निर्बाध रूप से कर सकते थे उस दल के दो प्रमुख व्यक्तियों का यहाँ पर उपस्थित होना यह सिद्ध करता है कि उस संगठन के अन्य भी कुछ कर्मचारी एवं छात्र होंगे, यह पं० इन्द्र ने लाला हरदयाल के विषय में लिखा है कि "लालाजी गुरुकुल कांगड़ी में कई सप्ताह रहें ईसाईयत और सरकारी शिक्षा के विरुद्ध जो लेख रूपी बाण छोड़े थे उनमें से बहुत से गुरुकुल कांगड़ी में ही तैयार किये गये थे बहुत से ऐसे राष्ट्रभक्त जो सर्वतोमुखी क्रान्ति के समर्थक थे गुरुकुल में आकर विश्राम करते थे क्योंकि वे यहाँ गुरुकुल में आकर अपने को सरकार की आंखों से ओझल समझते थे अतः सरकार का गुरुकुल पर संदेह होना स्वाभाविक था।[21]

पं० सत्यव्रत सिद्धान्तालंकार का 1926 में विवाह सम्पन्न हुआ। उनकी पत्नी का नाम श्रीमती चन्द्रावती लखनपाल था। विवाह के पश्चात् वे दोनों गुरुकुल कांगड़ी में रहने लगे। इन दोनों के परिवार आर्यसमाजी एवं कांग्रेसी थे दोनों ही गुरुकुल कांगड़ी में कार्य करने के साथ-साथ कांग्रेस के आन्दोलन में कूद पड़े। पं० सत्यव्रत जी एवं उनकी पत्नी दोनों ही लाहौर में कांग्रेस के अधिवेश में गए थे। लाहौर से लौटने पर शराब की दुकानों पर धरना विदेशी पकड़ों का जलाना, हरिद्वारा में विदेशी कपड़ों की गांठ में बंधवाकर रखना इस समय इन दोनों का मुख्य कार्य था सायं की बड़ी बैगन में चढ़कर गुरुकुल की स्त्रियां श्रीमती चन्द्रवती के नेतृत्व में हरिद्वार जाती थी। अंधेर तक आन्दोलन कर रात को घर लौट आती थी। यह आन्दोलन दिन प्रतिदिन जोर पकड़ता गया। इन दिनों इस आन्दोलन का केन्द्र रूड़की था। रूड़की के गांव-गांव में जाकर गुरुकुल के छात्र एवं स्नातक बालन्टीयर के रूप में जाते थे कांग्रेस का संदेश सुनाते थे। डॉ० सत्यव्रत जी लिखते है कि "एक दिन रुड़की में बड़ी कॉन्फ्रेन्स रखी गई जिसमें दस हजार किसान इकट्ठे हो गए। वे बड़े उग्र स्वभाव के थे, वहाँ लाठी चल गयी। गोली भी चली। हमारा एक अड्डा नारसन में भी था जहाँ नारसन का एक कॉलेज भी खुला हुआ है। रुड़की की उस कान्फ्रेन्स में जो गोली काण्ड हुआ उसमें मेरे नाम वारन्ट श्री जी.सी.डी. जवाल ने निकाला था। यह विधि का विधान था कि वर्षो बाद उनकी पुत्री ऊषा ज्वाल का विवाह मेरे पुत्र विजय कृष्ण लखनपाल से हुआ। मैं 1931 को गांधी दूरबीन पैकेट में छोड़ दिया गया। उस समय मेरे साथ जेल में थे। कानपुर के दो ज्वाहरलाल रस्तौगी अलगुराय शास्त्री और श्री जौहरी तथा एक दो और जिनका नाम भूल गया हूँ।[22]

उस समय के यहाँ पर स्नातक एवं छात्र एक विचित्र ही स्वप्न देखा करते थे। उनको अपनी वक्तृत्व कला का इतना विश्वास था कि वे इतना प्रभावशाली भाषण दे सकते है कि उनके भाषण में मजिस्ट्रेट भी हृदय परिवर्तन करके देश भक्त बन जायेंगे। पं० सत्यव्रत जी ने अपनी इस जीवनी में लिखा है कि "कांग्रेस के लोग अपने सम्बंध में कोई स्टेटमेन्ट नहीं देते थे परन्तु मैंने मजिस्ट्रेट को कहा कि मैं यह स्पीच सुनाना

चाहता हूँ जिसके आधार पर मेरी गिरफ्तारी हुई है चुनाचे वह स्पीच सुनाई गई अपनी स्पीच सुनकर मैं स्वयं हैरान हो गया मजिस्ट्रेट को लक्ष्य करके कहा कि आप ऐसी जोरदार स्पीच सुनकर आप कुर्सी पर बैठे है उठिये और इस शैतान सरकार को हटाने के लिये हमारे साथ हो जाइये मजिस्ट्रेट ने मेरी बात क्या सुननी थी मुझे एक साल का कारावास का दण्ड सुना दिया।"[23]

उस समय गुरुकुल कांगड़ी के स्नातक एवं छात्रगण एक दूसरे से बढ़-चढ़कर प्रतिस्पर्धा के रूप में स्वतन्त्रता आन्दोंलन में भाग लेते थे कई बार तो आधा गुरुकुल खाली हो जाता था, सभी जेलों के अन्दर चले जाते थे। यहाँ हम इतिहासकार विद्यालंकार विद्यामार्तण्ड श्री जयचन्द जी का स्मरण अवश्य करना चाहेगें। आपने भगतसिंह व चन्द्रशेखर को क्रान्ति के पथ पर आरूढ़ किया। वे लाहौर कॉलेज में प्रध्यापक भी रहे।

धर्मवीर वेदालंकार भी स्वतन्त्रता सेनानियों के अग्रणी रहे। वे पूज्य बापू की प्रेरणा पाकर आजादी की लड़ाई में कुद पड़े। कई सत्याग्रहो में भाग लेकर कारावास जीवन के अनुभव प्राप्त किये इनकी कार्य पद्धति इतनी प्रभावशाली थी कि सन् 1937 में इन्हें रांची नगर पालिका का आयुक्त मनोनीत किया गया था। बिहार के स्वतन्त्रता आन्दोलन में गुरुकुल के स्नातकों का बहुत अधिक महत्वपूर्ण योगदान था श्री अवनीन्द्र कुमार विद्यालंकार ने बिहार की कांग्रेस कमेटी और दानापुर कांग्रेस कमेटी के प्रमुख नेताओं में थे। स्वतंत्रता आन्दोलन में जेल से लेकर जन-जागृति आदि सभी प्रकार के श्रम साध्य कार्य सम्पादन किये। श्री विद्याकिशोर विद्यालंकर ने भी बिहार में अनेक प्रकार के सामाजिक और राजनैतिक कार्यों में सक्रिय भाग लिया था। ये स्वतन्त्रता के पश्चात् बिहार विधान सभा के सदस्य भी निर्वाचित हुए। पटना निवासी श्री सुरेन्द्रनाथ विद्यालंकार एक क्रान्तिकारी राष्ट्रभक्त थे। अमर शहीद भगत सिंह के साथ उनका घनिष्ठ सम्बन्ध था। क्रान्तिकारियों के मुकदमें के लिये धन एकत्रित करके भेजा करते थे असहयोग आन्दोलन में सपत्नीक कारावास में रहे। सभी प्रकार के जनान्दोलनों में अपने क्षेत्र में सक्रिय भाग लेते रहें पंजाब और हरियाणा की राजनीति में तो गुरुकुल के स्नातकों का बहुत ही अधिक वर्चस्व रहा है। जहाँ सक्रिय जन-आन्दोलन में भाग लेते रहे है वहाँ हिन्दी समाचार पत्रों में पत्रकारों के रूप में भी जनमानस को जागृत करते रहें। इनमें श्री रामेश्वर सिद्धान्तालंकार डॉ० हरिप्रकाश आयुर्वेदालंकार और अमरनाथ वेदालंकारादि अनेक स्नातक महात्मा गांधी के असहयोग आन्दोलन गांधी सेवा संघ आदि में भी नींव के पत्थर के रूप में और कांग्रेस के कार्यकत्ताओं के रूप में देश की आजादी के लिए जूझते रहे है। श्री अमरनाथ वेदालंकार अपने समय के राष्ट्रनेता माने जाते थे वे 1941 के किसान आन्दोलन और 1942 में भारत छोड़ों आन्दोलन के सिलसिले में कई वर्षों तक जेल में बंद रहे ये स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् पंजाब विधान सभा के सदस्य निर्वाचित हुए। नया संविधान बनने के पश्चात् 1952 में लोक सभा के सदस्य निर्वाचित हुए 1957 में विधान सभा के सदस्य रहें 1962 में लोक सभा के सांसद निर्वाचित हुए श्री अमरनाथ जी 1960 में श्रम और स्वास्थ्य मंत्री बनाये गये थे और 1957 में शिक्षा विभाग मंत्री रहें। 1975 में भी लोक सभा के सदस्य थे श्री समर सिंह वेदालंकार और श्री जगदीश विद्यालंकार भी पंजाब विधान सभा के सदस्य रहे है और वे पंजाब में प्रमुख कांग्रेसी नेताओं में माने जाते थे।

आन्ध्र प्रदेश में भी श्री विनायक विद्यालंकार भी स्नातक हो जाने के पश्चात् भारत के स्वतंत्रता आन्दोलन मे सम्मिलित हुए इन्होंने देश को कानूनी सहायता प्रदान करने के लिये "बार ऐट लॉव" की उपाधि इंग्लैण्ड से प्राप्त की थी ये आन्ध्र प्रदेश कांग्रेस के प्राण समझे जाते थे अनेक बार कारावास एवं जेल में रहे। विशिष्ट राष्ट्रीय सेवाओं के कारण 1951 में विधान सभा के सदस्य और प्रदेश के वित्तीय मंत्री बनाये गये एक प्रकार लोक सभा के सदस्य भी रहें श्री शंकरदेव वेदालंकार भी आंध्र प्रदेश के ऐसे

ही स्वतंत्रता आन्दोलन ने नेता माने जाते थे जो कई बार अर्थात् कई आन्दोलन में जेल में बंद रहें अनेक कष्टों को सहन करते हुए भी सतत् जन-जागृति करते रहें इसलिये ही अपनी विशिष्ट सेवाओं के कारण हैदराबाद राज्यों के आप सेवा मंत्री (1952-1956) बनाये गये उसके पश्चात् दो बार लोक सभा के सदस्य बनाये गये।

गुरुकुल कांगड़ी की स्थापना ऐसे काल में हुई थी जिस समय देश का स्वतन्त्रता आन्दोलन बाल अवस्था में कहा जा सकता है जैसे किशोर अवस्था और उसके बाद युवावस्था होती है उसी प्रकार स्वतन्त्रता आन्दोलन की भी किशोर अवस्था सम्पन्न हुई। गुरुकुल कांगड़ी की स्थापना एक प्रकार से स्वतन्त्रता आन्दोलन के साथ-साथ ही हुई। तत्कालीन गुरुकुल के अधिकारी यदि नीति कुशल न होते तो गुरुकुल अपनी बाल्यावस्था में ही बन्द हो गया होता। गुरुकुल के परिवेश में छात्रों को राष्ट्रभक्ति के अमृत का पान कराया जाता था। ऊपर से कई बार अंग्रेजों को बुलाकर उनका स्वागत भी किया जाता था। परन्तु जिस समय गुरुकुल ने 1930 के बाद युवावस्था में प्रवेश किया तो गुरुकुल के प्राध्यापक गण, छात्रगण और स्नातक सभी स्वतन्त्रता आन्दोलन में बिना किसी हिचकिचाहट के सम्मिलित हो गए।

स्वामी श्रद्धानन्द के शुद्धि आन्दोलन को कांग्रेस यदि देश के स्वतन्त्रता आन्दोलन में सम्मिलित कर लेती तो आज देश का नक्शा ही कुछ ओर प्रकार का होता क्योंकि इस समय उस श्रद्धानन्द संन्यासी ने अपनी दूर दृष्टि से यह देख लिया था कि जिस समय अंग्रेज देश को स्वतन्त्र करेगे उस समय कोई नई राजनीति एवम् कूटनीति भारतीयों के साथ खेल सकते है। इसलिए उन्होंने शुद्धि आन्दोलन को प्रारम्भ किया था। लेखक को भारत साधु समाज के कलकत्ता के अध्यक्ष ने 1965 में एक रीलीफ कैम्प, जो बंगाल में भारत के अन्तिम रेलवे स्टेशन गेदे में लगा हुआ था उस समय बतलाया था कि "यदि स्वामी श्रद्धानन्द के शुद्धि आन्दोलन को गांधी स्वीकार कर लेता तो स्वतन्त्रता के समय देश के टुकड़े न हुए होते। मैंने (स्वामी जी ने) स्वामी श्रद्धानन्द के साथ कन्धे से कन्धा मिलाकर शुद्धि आन्दोलन में कार्य किया था उस समय उत्तरी भारत एवं पश्चिमी उत्तरी प्रदेश में शुद्ध होने के लिए गांव के गांव में मुसलमान भाई उमड़ पड़े थे सैंकड़ों व्यक्ति हमारे पहुँचने से पहले ही शुद्ध होने के लिए सिर मुंडवाकर के शुद्धि के लिए बैठे हुए थे।"

यहाँ यह ज्ञातव्य है कि उस समय सनातन धर्मियों में भारत साधु सेवक समाज ही शुद्धि आन्दोलन में स्वामी जी के साथ था। स्वामी जी का दर्शन था कि जिन मुसलमानों के गौत्र एवं जाति हिन्दू है उनको समझाकर उसकी इच्छानुसार अपने धर्म में सम्मिलित कर लिया जाय उससे मुसलमानों की संख्या नगण्य रह जायेगी। देश में कोई धार्मिक संकट नहीं रह जायेगा।

हैदराबाद आन्दोलन

पृष्ठ भूमि

हैदराबाद मुसलमानों की रियासत मानी जाती थी। निजाम वहाँ के शासक थे। यह रियासत दक्षिण भारत के सब प्रान्तों के मध्य में स्थित है। उत्तर में मध्य प्रान्त पश्चिम में बम्बई प्रेसिडेन्सी पूर्व और दक्षिण में मद्रास की सीमा आती है। हैदराबाद प्रान्त में अजन्ता की गुफाएं जो कि कुछ विद्वान्तों के अनुसार रामायण कालीन गुफाओं की प्रतिनिधि गुफाएं है। प्राचीन किष्किकन्धा वर्तमान काल के विजयनगर और अनेगुण्डी का प्रदेश है।

निजाम उल्मुल्क आशबजहां औरंगज़ेब के सेनापति गाजउद्दीन खां, फिरोज उद्दीन के पुत्र थें निजाम रिसायत की यह आधारशिला इन्हीं आशब जहाँ ने रखी थी। यह अपने वंश को शेख आलम और शेख

शहाबुद्दीन सोहराबर्दी के द्वारा प्रथम खलीफा आबू बकर से लेते है जो हजरत मुहम्मद साहब, के श्वसुर थे। हैदाराबाद राज्य के संस्थापक निजाम मुल्मुल्क आशब जहाँ मुगल सम्राट् मुहम्मद साहब के प्रधान सरदार रहें थे। आपका पूरा नाम नवाब मीर कमरूद्दीन अली खां निजामुल्मुल्क आशबजहां है। औरंगजेग ने निजाम उल्मुल्क का पद प्रदान किया था। इस परम्परा में निजाम मेहबूब अली साहब हैदराबाद रिसायत के निजाम हुए। इनके सिंहासनारूढ़ होने के आरम्भिक दिनों में दोनों सम्प्रदायों के एक दूसरे के योग्य विद्वान् पुरुषों को आदर की दृष्टि से देखा। परन्तु कुछ समय बाद उत्तर भारत के मुसलमान प्रचारको के प्रचार अथवा अन्य कुछ कारणों से हिन्दुओं को धार्मिक कर्म करना भी असम्भव सा हो गया। इस प्रकार हिन्दू और मुसलमानों में दूरी बढ़ती चली गई। यद्यपि हैदराबाद रिसायत में हिन्दुओं की जनसंख्या 85 प्रतिशत है, परन्तु सामान्य रूप से यह माना जाता है कि यह मुसलमानों की रियासत है इसलिए मुसलमान सरकारी नौकरियों में हिन्दुओं से अधिक संख्या में थे।

धार्मिक कृत्यों और त्यौहारों पर प्रतिबन्ध लगाए गए उसके लिए कानून बनाया गया जिसमें 10 धारायें थी। किसी भी धार्मिक कार्य एवं जुलूसों के लिए 15 दिन पूर्व तहसीलदार से आज्ञा लेनी पड़ती थी। यदि 15 दिन तक की आज्ञा ने मिले तो उस धार्मिक पूजा को रोके रखना पड़ता था। यदि कोई धार्मिक संगठन नहीं मानता था तो तहसीलदार ढींढोरा पिटवा कर उसे रुकवा देता था। हिन्दुओं के लिए कानून बनाया गया कि हिन्दू अपनी पूजा बिना बाजे-गाजे के करें। बरकम्मा देवी का जुलूस न निकाले। हिन्दू घरों में भी बाजा न बजावें। सादे बाजे के साथ वे बड़े मन्दिर में पूजा कर सकते है। दशहरा और झण्डा बली आदि सब 15 मुहर्रम को ही कर लें। आर्य समाज के साप्ताहिक सत्संग तो प्राईवेट समाज के तो घिरे स्थान पर तो होते है। यज्ञ करना आर्य सामाजियों का मुख्य पूजा विधि है। हैदराबाद सरकार ने उन पर भी पाबन्दिया लगाई। हवन कुण्ड के सम्बन्ध में निजाम सरकार का आदेश जारी हुआ कि हवन कुण्ड धर्म स्थान की भाषा में सम्मिलित है इसी प्रकार धार्मिक झण्डों पर प्रतिबन्ध लगा दिया गया था। हिन्दू और आर्य समाजियों के जुलूसों और सभाओं पर भी प्रतिबिन्ध लगाया गया जो व्यक्ति बाहर से आएंगे और कथा भाषणादि करने वाले होंगे उनको आश्रय देने वाले पूजा के व्यक्तियों को भी दण्डित किया जायेगा।

इन उपर्युक्त कारणों से हैदराबाद के हिन्दू और आर्यसमाजी व्यक्तियों पर अनेक प्रकार के प्रतिबन्ध लगाए गए। इस सम्बन्ध में आर्य समाज व हिन्दू धार्मिक विद्वानों को दण्डित किया गया। आर्य समाजियों ओर हिन्दू संगठन के लोग समाचार पत्र भी नहीं निकाल सकते थे। इनके दण्ड इतने सख्त थे कि उन व्यक्तियों को रियासत से बाहर निकाल दिया जाता था। मुसलमानों को धार्मिक छूट दी गई थी जो मुसलमान रक्तपात करते थे उनको जिहाद का नाम दे दिया गया था। अप्रैल 1938 में हैदराबाद में बड़ा भारी दंगा हुआ। कई हजार मुसलमानों ने श्री विनायक राव जी बैरिस्टर के मकान पर धावा किया, किसी प्रकार यह बड़ी दुर्घटना होने से बच गयी।[24]

निजाम राज्य आर्य प्रतिनिधि सभा ने यह संघर्ष करना प्रारम्भ कर दिया गया निजाम राज्य की और से वैदिक धर्म के प्रचार में आने वाली रुकावटें को सरल करें। परन्तु निजाम ने उनकी किसी भी मांग को नहीं माना। इसलिए आर्य प्रतिनिधि सभा ने सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा दिल्ली को अपनी रक्षा के लिए शिकायत भेज दी। सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि संभा ने इस विषय पर कार्यवाही करने के लिए आर्य रक्षा समिति का गठन किया, जिसके निम्नलिखित सदस्य थे- 1. महात्मा नारायण स्वामी 2. श्री धनश्याम सिंह गुप्त 3. स्वामी स्वतंत्रता नन्द जी 4. महाशय कृष्ण 5. चांद करण शारदा 6. श्रीराम जी 7. पूर्णचन्द्र एडवोकेट 8. लाला नारायण दत्त 9. श्री लाला ज्ञानचन्द 10. प्रो॰ सुधाकर 11. लाला देश बन्धु गुप्ता 12. इस समिति ने उचित कार्यवाही करना प्रारम्भ कर दिया। यद्यपि आश्वासन भी दिये गए, परन्तु कोई विशेष

प्रभाव नहीं पड़ा, पक्षपातपूर्ण कानून और सख्त हो गए। सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा की ओर से एक मांग पत्र प्रस्तुत किया गया, जो इस प्रकार था-

1. आर्य प्रचारको के प्रदेश पर पाबंदी न लगे 2. जुलूसों को समान रूप से आज्ञा हो 3. धार्मिक साहित्य बिना जांच के जदा न हो। 4. सार्वजनिक सभाओं और शास्त्रार्थों की आज्ञा पर विषम व्यवहार न हो। आर्य समाज मन्दिर मस्जिद के समान पवित्र समझे जायें 6. अभी तक निकली निर्वासन आज्ञाओं पर न्यायालय विचार करें। यह आवेदन पत्र निजाम सरकार को भेजा गया फिर पुनः आश्वासन दिये गये। कई बार डेपुटेशन भी मिला परन्तु निजाम सरकार के अत्याचार बढ़ते ही चले गए। अन्ततः 30 अप्रैल 1938 को सार्वदेशिक सभा के अन्तरंग सभा बुलाई। इस अन्तंरग सभा में पं० इन्द्र विद्यावाचस्पति ने निम्नलिखित प्रस्ताव प्रस्तुत किया जो सर्व सम्मति से पारित हुआ। यह सभा हैदराबाद रियासत में आर्य रियासत और आर्य प्रतिनिधियों के साथ हार्दिक सहानुभूति प्रकट करती है इस अंतरंग सभा में इस सम्बन्ध में 14 प्रस्ताव पारित किये गए।[25] इस सम्बन्ध में हैदराबाद में जो आर्य रक्षा समिति के सदस्य कार्य कर रहें थे। सरकार की अनदेखी के कारण मुसलमानों ने उनकी हत्या करना प्रारम्भ कर दिया उनमें पं० धर्मप्रकाश नागप्पा की हत्या 27 जून 1929 को कर दी गई। हत्या के बाद केवल आर्य समाज में ही नहीं अपितु हिन्दू जनता में बगावत दंगे प्रारम्भ हो गये। शोलापुर के आर्य महासम्मेलन के पश्चात् सत्याग्रह का बिगुल बज गया। समस्त भारत में आर्य समाज ही नहीं अपितु हिन्दू संगठनों ने भी सत्याग्रह की तैयारी प्रारम्भ कर दी।

गुरुकुल कांगड़ी में तार

28 जनवरी 1939 को पूज्य महात्मा नारायण स्वामी का गुरुकुल के मुख्याधिष्ठाता को तार प्राप्त हुआ जिसमें यह कहा गया था कि गुरुकुल के ब्रह्मचारियों को सत्याग्रही सैनिकों के रूप में तुरन्त भेजो। महात्मा नारायण स्वामी के नेतृत्व में हैदाबाद में 15 ब्रह्मचारी सत्याग्रह करेंगे बस क्या था एक इशारे पर ही सब तैयार हो गए और गुरुकुल को प्रणाम करके गाड़ी पर बैठ गए। क्षितीश कुमार वेदालंकारने इसका सारा वर्णन इस प्रकार किया है "दिल्ली पहुँचे संरक्षक अपने बाल गोपालों को इस अद्‌भुत रण सज्जा के लिए कटिबद्ध देखकर विस्मित हो गए, यह क्या अभी तो समाचार पत्रों में कोई खबर भी नहीं कि सत्याग्रह शुरू हो गया है, सबसे पहले तुमको क्यों भेज दें, जान बूझकर आग की भट्‌टी में कैसे झोक दें। उस नृशंस अत्याचारियों के क्षेत्र में जहाँ कोई उत्तरदायी शासन नहीं है, जहाँ कोई धार्मिक सहिष्णुता का नाम लेने वाला नहीं है, जहाँ हरेक हिन्दुओं को काफिर समझा जाता है और दिन-दहाड़े क़त्ल होते रहते हैं वहाँ यदि किसी ने चलते-फिरते पेट में छुरा घोंप दिया तो क्या होगा ?

"क्या होगा, यह तो हम नहीं जानते, हम तो केवल इतना ही जानते है कि हमारे सेनानी ने हमको बुलाया है और इस समय एक सच्चे सैनिक का कर्त्तव्य यही है कि वह बिना नोनुनच किए चुपचाप अपने सेनापति के आदेश का पालन करें। इस प्रकार गुरुकुल के ब्रह्मचारी और अनके माता-पिता के बीच वाद-विवाद होता रहा।[26] जब सत्याग्रह का इस प्रकार मालूम पड़ा तो महात्मा गांधी को तार, सभा प्रधान को, हैदराबाद में अनेक आर्य नेताओं को आदि अनेक स्थानों पर तार भेजे गए। इससे आगे क्षितीश जी लिखते है कि "जब सबकी सुनी अनसुनी करके सब के सब शाम को 5 बजे स्टेशन पहुँच ही गए तो माताएं रो पड़ी बहिनें पछाड़ खा गई अन्य सभी किकर्त्तव्य विमूढ़ हो गए।"

कोई स्वागत सत्कार नहीं, कोई जुलूस प्रदर्शन नहीं, एक भी फूल की माला नहीं और सब चुपचाप क्योंकि वह ऐसा ही अवसर था और ऐसा ही सेनापति का आदेश था। दिल्ली से जिन 15 विद्यार्थियों का जत्था चला उनमें मेरे साथ जो अन्य 14 विद्यार्थी थे उनके नाम निम्न है:-

(1) धीरेन्द्र चतुर्थ वर्ष, (2) विद्यासागर तृतीय वर्ष (3) देवराज तृतीय वर्ष (4) सत्येन्द्र तृतीय वर्ष

(5) ओमप्रकाश तृतीय वर्ष (6) इन्द्रसेन तृतीय वर्ष 7. विजय कुमार दूसरा वर्ष (8) सतीश कुमार दूसरा वर्ष (9) उदयवीर दूसरा वर्ष (10) मनोहर दूसरा वर्ष (11) रामनाथ दूसरा वर्ष (12) विद्यारत्न दूसरा वर्ष (13) चन्द्रगुप्त 15 वर्ष और (14) विश्वामित्र 15 वर्ष।

लगभग 24 घंटे गाड़ी चलने के पश्चात् 30 जनवरी 39 को वर्धा स्टेशन पर सभी ब्रह्मचारी उतर गए। सभी इन सत्याग्रही ब्रह्मचारियों को समझाया गया था कि अपनी यात्रा का उद्देश्य कहाँ से आए है किस उद्देश्य के लिए जा रहे है ये बातें छिपा करके रखनी होगी। वर्धा में उतरकर स्टेशन के पास की जमुना लाल बाजार धर्मशाला में रुके। जब चौकीदार ने गेट पर पूछा कहाँ से आए हो तो उसको बतलाया गया कि नागपुर से। रात्रि को धर्मशाला की छत पर बैठकर यह निर्णय हुआ कि आगे वेश बदलकर जाना है अपने-अपने वेश को चुनने में सभी स्वतन्त्र है बस किसी भी प्रकार हैदराबाद तक पकड़ में नहीं आना है। किसी प्रकार कोई पुलिस को संदेह नहीं होना चाहिए। श्री क्षितीश जी ने जो-जो वेश बदले गए उसका विवरण इस प्रकार प्रस्तुत किया है।" लेखक अचकन और तुर्की टोपी पहनकर मुसलमान बन गया, एक साथी हैट और पतलून पहनकर अंग्रेज बन गया। एक साथी जटा-जूट लटकाए हाथ में कड़ा पहनकर सरदार बन गया। एक महाशय रामनामी ओढ़े गले में माला पहने और माथे पर तिलक लगाये पंडित जी बन गए, एक बड़ी तोंद को कुछ और बड़ा बनाकर धोती पहनकर सेठ जी बन गए। एक अत्यंत मैले, कुचैले कपड़े पहनकर सेठ जी के नौकर बन गए, जवाहर कट कोटी पहनकर सोशिलिष्ट बना और कोई गलकट कुर्ता पहनकर अंग्रेज बना इस प्रकार यह बहुरूपियों की सेना 31 जनवरी की शाम को वर्धा से आगे के लिए सवार हो गई। और सवेरे से लेकर शाम तक यह दिन बड़ी व्यस्तता से बिता सवेरे-सवेरे वर्धा से 4 मील दूर गांव से सवार हो आए। फिर भागने वाडी नाभवाडी भी छूकर आ गए। लेखक दोपहर की धूप में श्री काका कालेकर और दादा धर्माधिकारी के पास जाकर यज्ञ की इस प्रथम आहुति के लिए आशीर्वाद भी ले आया। लगभग 10 बजे का समय बलेहादसा स्टेशन से हैदराबाद रिसायत की हद शुरू हो गयी। हरेक स्टेशन सुनसान कालीरात काली वर्दी काली शक्ल शिवाय इन यम दूतों के स्टेशन पर कोई नज़र नहीं आता और यह यमदूत हर डिब्बे में झांकते कहीं कोई संदिग्ध व्यक्ति..... । मैं अपने दो तीन साथियों के साथ अन्त के डिब्बे में चिन्ता के मारे नींद नहीं आयी। इन यमदूतों के हाव भाव से बेहद घबराहट सब डायरी या नोट बुके जिन पर गुरुकुल कांगड़ी लिखा था फाडकर फेंक दिया कि कोई जाँच न कर लें। इतनें में एक यमदूत ने पूछा कहाँ जाना है मैंने कहा सिकन्दराबाद और चुपचाप हो गया।

यद्यपि ट्रेन में सीधा हैदराबाद का भी डिब्बा लगता था उसमें ये छात्र इसलिए नहीं बैठे कि यदि उसमें बैठ जाते तो पुलिस को संदेह हो सकता था और कहीं पर भी पकंड़े जा सकते थे। इन छात्रों की यात्रा एक अंधेरे की ओर बढ़ रही थी। ऐसे स्थान पर ये जा रहे थे जहाँ कोई जानने वाला नहीं जहाँ कोई संगी साथी नहीं कोई सहायक नहीं। यह भी था कि किसी भी प्रकार पकड़े नहीं जाना चाहिए। इसलिए यह कहा जा सकता है कि इनकी यात्रा उस नौका की तरह थी जिसका कोई मल्लाह नहीं और पतवार नहीं। खुली दिशा में स्वतन्त्र रूप से बह रही है। इनको काजी-पेठ से गाड़ी बदलनी थी। रात को 3 बजे काजी पेठ गाड़ी पहुँची। अचनाक सभी को उठाया गया गाड़ी से नीचे उतरकर ये लोग आगे बढ़े और जिनके सामने हैदराबाद लिखा था इतने में पीछे से आवाज आयी यही डिब्बा है चढ़ जाओं जब इन्होंने पीछे मुडकर देखा तो काली वर्दी पहने पुलिस का सिपाही था। और सभी डर गये कि कहीं इसने भाँप न लिया हो। इसलिए ये चुपचाप डिब्बे में चढ़ गए। और निश्चिन्तता से बैठ गए। हैदराबाद की उस गाड़ी में थोड़ी देर में ही दो-दो तीन-तीन साथी खड़े हो गए या बैठ गए। गाड़ी में भीड़ बहुत थी इसलिए प्रायः पैर करके खड़े रहने के लिए भी जगह न थी। इतनी देर से एक साथी धबराकर अचानक क्षितीश के पास पहुँचा और वहाँ आकर

उसने कहा जल्दी चलो बुला रहे है पुलिस आ गई है। वास्तव में जिस पुलिस के सिपाही ने देख लिया था वह वापिस जाकर पुलिस इन्सपेक्टर को बुला लाया। पुलिस इन्सेक्टर ने इन सभी 15 साथियों को एकत्रित करके कहा अपने नाम पते लिखवायें इन छात्रों में से एक ने कहा क्या आप हर एक यात्री का नाम पता लिखते है इस डिब्बे में बहुत से यात्री है आप उनसे नाम पता नहीं पूछ रहें है यदि आप जानना ही चाहते है तो हम सब स्टूडेन्ट है और हिस्टोरिकल टूर पर जा रहे है। इस पर उसने कहा आपको अपने नाम पते लिखवाने ही पडेंगे जब तक नाम पते नहीं लिखवाओगे तब तक गाड़ी आगे नहीं जायेंगी और उसने सिपाही से इंजन ड्राईवर को बुलाकर कहा गाड़ी आगे नहीं जायेगी "फिर उसने थोड़ी देर रुककर कहा यदि आप अपना नाम पता नहीं लिखवायेंगे तो में पुलिस इंस्पेटकर की हैसियत से आप सब को गिरफ्तार कर सकता हूँ। इस पर गुरुकुल के इन ब्रह्मचारियों ने विचार किया कि इस पर तो सभी सत्याग्रह से पहले ही गिरफ्तार हो जायेंगे। अतः सभी लाचार होकर नाम पते लिखाए गए जो इस प्रकार थे क्षितीश जी ने अपना नाम खतीन चन्द तथा पिता का नाम लालचन्द लिखवाया पूछा कहाँ से आ रहे हो, कहा वर्द्धा से तथा पूछा क्या करते हो। कहा नालवाड़ी में पढ़ता हूँ। फिर उस विद्यारत्न ने जो सिख बना हुआ था। अपना नाम लिखवाया रत्न सिंह अपने बाप का नाम जोराबर सिंह, इन्द्रसेन ने लिखवाया तेज सिंह और हुकम सिंह सत्येन्द्र ने जो अंग्रेज बना हुआ था सेन्ट पाल और सेन्ट पिटर और कोई भिक्षु और कोई अखिलानन्द इत्यादि। रहने का स्थान सबका अलग-अलग कोई वर्द्धा में नागपुर कोई उ०प्र० कोई दिल्ली और कोई पेशावर फिर उसी हिसाब से पढ़ते भी अलग-अलग ही है कोई शिक्षा मन्दिर वर्द्धा में कोई तिबिया कॉलेज दिल्ली कोई हिन्दू यूनिवर्सिटी कोई लखनऊ, कोई बनारस में, बनावटी नाम समझकर हमें हंसी भी आ रही थी। उनका ख्याल था कि उस्मानिया यूनिवर्सिटी से जो विद्यार्थी बंदे मातरम् गीत गाने से निकाले गए थे और नागपुर यूनिवर्सिटी में प्रवेश लिए वे ही अब पढ़ाई छोडकर सत्याग्रह में आए है। उनका संदेह था कि नागपुर वर्द्धा वाली लाईन से आ रहें है। हम हरिद्वार से चलकर आ रहे है यह तो उन्होंने कल्पना भी नहीं की थी। इस तरह जब कीं का ईंट कहीं का रोडा भानमती जब अपना कुनबा जोड़ लिया तो उसके बाद गाड़ी आगे चल पड़ी। सभी छात्रों के टिकट इन्सेपक्टर ने अपने पास रख लिये छात्रों ने हस्ताक्षर लेकर टिकट दे दिये। प्रातः 6 बजे सिकन्दराबाद स्टेशन पर ये छात्र उतरे जब प्लेट फार्म से बाहर निकले तो पुलिस इनके दोनों और थी सिकन्दराबाद पहुँचने पर वहाँ कोई जान पहचान तो थी नहीं इसलिए ठहरने के लिए ये धर्मशाला का पता लगाने एक धर्मशाला में पहुँचे तो वहाँ से पता लगा कि यहाँ कहीं जगह खाली नहीं है। धर्मशाला के मालिक को शक हो गया था कि कहीं ये सत्याग्रही तो नहीं है। क्योंकि उस समय ग्रीष्मावकाश तो था नहीं जोकि एक साथ छात्र भ्रमण करने आए हो। इसलिए ये कई स्थानों पर गये और कहीं पर भी धर्मशाला में नहीं ठहराया गया। कोई भी जोर से बात नहीं करता धीरे से बोलता था कभी उनके पीछे पुलिस न लग जाये। हिन्दू डरे-डरे रहते थे, यदि किसी से बात भी करो तो कहता था कि धीरे से बोलो।

जो धर्मशाला हमने देखी थी और जहाँ हमारा सामान रखा था उसके खाली बरामदे में ठहरने की स्वीकृति मिल गयी। इस पर इन छात्रों ने कोई आपत्ति नहीं की और जो अपना कम्बल था लाकर रख लिये इनकी रात की समस्या ठहरने की हल ही हुई थी कि सी.आई.डी. के दो आदमी धर्मशाला के मुख्य द्वार पर बैठ गये और दो अन्दर आ गये। इस प्रकार इनकी प्रत्येक गतिविधि की जानकारी रखनें के लिए यह प्रबन्ध किया हो। लगभग 10 बजे दिन में इन्हें थाने में बुलाया गया, वहाँ पर एक घण्टे के बाद थानेदार आये और नाम पते पूछने लगे। जो नाम पते इन्होंने पीछे लिखवाए थे वहीं दुबारा लिखवा दिये थानेदार ने पूछा किसलिये यहाँ आये हो तो इन्होंने उत्तर दिया सैर करने आये है थानेदार ने पूछा कितने दिन में वापिस जाओगे तो उत्तर दिया तीन-चार दिन में वापिस चले जायेंगे। इन छात्रों के सामने अचानक यह समस्या आयी

की जो रूपये दिल्ली में दिए थे वह समाप्त हो गये। इन छात्रों को ध्यान आया कि यहाँ हैदराबाद में गुरुकुल कांगड़ी के प्रसिद्ध स्नातक बैरिस्टर विनायक राव विद्यालंकार के पास किसी प्रकार खबर भिजवायी जायें उनके सम्बन्ध में बातचीत करने पर ज्ञात हुआ कि उनको यहाँ सभी जानते है यह विचार किया की उनको कैसे बुलाया जाये पान खाने के बहाने से पनवाड़ी को अन्दर बुलाया गया क्योंकि गुप्तचर विभाग का पहरा होने के कारण ये बाहर नहीं जा सकते थे पनवाडी हिन्दू था वह पत्र ले जाने को तैयार हो गया वह युवक था उसने दो घंटे के बाद उन्हें उत्तर के रूप में पत्र लाकर दिया जिसमें लिखा था कि घबराने की कोई बात नहीं अभी दो आदमी तुमसे मिलने के लिए आयेंगें, ये सब प्रबन्ध कर देगें। थोड़े समय के बाद ही वे दोनों व्यक्ति पनवाड़ी के पास आए पनवाडी के माध्यम से संदेश भिजवाया कि वे पास वाले होटल में बैठे है। श्री क्षितीश कुमार घूमने के बहाने से धर्मशाला से बाहर निकले और वहाँ होटल में उनसे बात करने के लिए गये। चाय पीने के बहाने तीनों वहाँ बैठे और धीरे-धीरे बातचीत करना प्रारम्भ किया उन दोनों व्यक्तियों को यहाँ, तक पहुंचने की कैसे-कैसे चालाकी से साथ पहुँचे है और उन्होंने कहा कि क्या किया जाय समझ में नहीं आता। वे दोनों स्थिति समझकर चले गये और कहा कि रात को पुनः मिलेगें। रात के ग्यारह बजे प्रकाश से दूर अंधेरे में घुमावदार गलियों मे मुडते हुए उन दोनों से क्षितीश जी पुनः मिले समस्त बातचीत होने के पश्चात् वे अलगे दिन मिलने के लिए कहकर लौट गए। अगले दिन से इन सभी छात्रों ने स्वतन्त्र रूप से घूमना प्रारम्भ कर दिया। कभी एक जाये, कभी दो जाये कभी सभी धर्मशाला से बाहर चले जायें, कभी सभी वापिस चलें आएं यह क्रम दिनभर जारी रहा इस घूमने घामने के बहाने क्षितीश कुमार वेश बदल कर बैरिस्टर बिनायक राव से मिलने गया, जहाँ पर आर्य समाज के मुख्य स्थान आर्य समाज सुल्तान बाजार का भी इन्होंने निरीक्षण किया, आर्य समाज में ताला लगा हुआ था हरेक मोड पर संगीनों वाली पुलिस की चौकियां पड़ी थी किसी संदिग्ध व्यक्ति आना का जाना खतरे से खाली नहीं था परन्तु ये दोनों सहज भाव से ही वहाँ से आ गए थे जब ये शाम को वापिस लौटे तो इनके साथी चितिन्त थे कि कभी ये गिरफ्तार न हो जाए रात को बैठ कर छात्रों ने गुरुकुल के अधिकारी महात्मा गांधी और अन्य कई जगह कई पत्र डाले। गांधी जी को तो लिखा गया कि यहाँ दक्षिण भारत में हिन्दुओं पर बहुत अत्याचार हो रहे है। यहाँ का निजाम हिन्दुओं पर बहुत अत्याचार कर रहा है आदि आदि। यहाँ श्री क्षितीश जी ने लिखा है कि "सिकन्दराबाद में दो रातें ऐसी बीती जैसी इतिहास को घटनाऐं हो।"[22]

तीसरे दिन प्रातःकाल ही भाग्य नगर के घर-घर में छोटी-छोटी चिटों पर साईक्लोस्टाईल से छपी हुई गुप्त विज्ञप्तियाँ पहुँचा दी गई कि आज शाम को पांच बजे गुरुकुल कांगड़ी के 15 विद्यार्थियों का एक जत्था सुल्तान बाजार में सत्याग्रह करेगा। सभी लोग हैरान थे कि यह कैसे हो सकता है गुरुकुल के ब्रह्मचारी यहाँ स्टेट में आये ही नहीं है। इनके आने की यहाँ कोई सूचना ही नही है। भारत वर्ष के उत्तर से चलकर दक्षिण में कैसे आ सकेंगे इस तरह बड़ी-बड़ी बातें आपस में होने लगी। गुरुकुल के सभी छात्रों ने जो योजना समझायी गई थी उसके अनुसार समग्र तैयारी कर ली थी 3 बजे के लगभग एक मोटर मन्दिर के पीछे आकर खड़ी हो गई ना जाने कैसे आई उसने कितनी गलियों को पार किया होगा मन्दिर के पीछे सामान्य जनता का ध्यान नहीं जाता धीरे-धीरे करके पांच छात्र गाड़ी में जाकर बैठ गए क्योंकि यह निर्णय किया गया था कि आज केवल पांच छात्र रण बांकुरे होकर गुरु गोविन्द सिंह के पंच प्यारों के समान सत्याग्रह करेंगे, परन्तु इनके माथे पर कोई तिलक नहीं है कोई विशेष वेश भी नहीं था 2 फरवरी को इन्द्रसेन विद्यारत्न, मनोहर, उदयवीर और विश्वामित्र जो सत्याग्रह करने के लिए गये थे उसी भीड़ में अलग-अलग खड़े हुये थे चारों तरफ इतनी भीड़ थी कि चारों ओर छतों पर मनुष्य ही मनुष्य दिखाई देते थे सुल्तान बाजार के चौक पर पुलिस ही पुलिस थी सभी यह सोच रहे थे कि यहाँ कोई भी सत्याग्रही नहीं है कभी धोखा ही न किया गया हो इसलिए सभी जनता सांस रोके मूक की भांति खड़ी हुई थी। जो पांच रण बांकुरे उसी

भीड़ में खड़े हुए थे अपने नेता का आँखों से संकेत मिलते ही भीड़ से बाहर गगनभेदी नारे लगाते हुये जिनमें ये नारे थे कि जो बोले सो अभय-वैदिक धर्म की जय, आर्य समाज जिन्दाबाद बिजली की तरह यह नारे इतने बड़े उद्घोष के साथ लगाये गये और जो जेबों में सभी ने हजारों परचे भरे हुए थे उनको देखते ही देखते जनता ने हवा की तरह फेंक दिया गया। समस्त पुलिस तन्त्र असफल होने के कारण विक्षुब्ध हो गया। पुलिस के घोड़े सरपट दौड़ने लगे, साधारण जनता से पर्चे छीने जाने लगे। परन्तु वहाँ पर इतना जन समूह था कि पुलिस के लिए नियन्त्रण करना कठिन हो गया था, इस प्रकार ये पांचों रणबांकुरे सुल्तान बाजार में चौक मे पहले जत्थे के रूप में गिरफ्तार हो गए। दो फरवरी की रात को जो यह ग्यारह साथी रह गए थे इसकी आपस में तू-तू मैं-मैं होने लगी। विवाद ही इस बात पर हो रहा था कि उनकों ही इस जत्थे के रूप में पहले क्यों भेजा गया हमें क्यों नहीं भेजा गया इसी प्रकार 3 फरवरी को भी पांच-पांच का दल बनाया गया। इसी प्रकार नाटकीय ढंग से सुल्तान बाजार पहुँच गया जहाँ पुलिस और हजारों आदमी मौजूद थे फिर उसी प्रकार भीड़ में से जयकारों की गूंज होने लगी और पुलिस बौखलायी और सभी सत्याग्रहियों को तुरन्त बन्दी बनाकर थाने की ओर पुलिस चलने लगी तो हजारों व्यक्ति साथ-साथ चलने लगे।

"थाने में ले जाकर पुलिस ने पूछा अच्छा आप सब तालिबेइल्म विद्यार्थी है, कहाँ पढ़ते हैं ? गुरुकुल कांगड़ी हरिद्वार।"[28] थानेदार ने कहा कि तुम सब तो पढ़े-लिखें हो समझदार हो तुम बहकावे में क्यों आ गए, इन फालतू कामों के लिए यहाँ इतनी दूर क्यों आए हो, छात्रों ने जवाब दिया कि आपने जो उपदेश दिया उसके लिए धन्यवाद आपने ठीक ही कहा है कि कॉलेज के छात्र बहकावे में नहीं आते है, हम जो कुछ कर रहे वह जानबूझकर व समझकर कर रहे है, विद्यार्थियों ने कहा, हमने अपना काम किया आप अपना काम कीजियें यह देखकर छात्र चकितथे कि एक पुलिस ऑफिसर इतनी सभ्यता से बात कर रहा है, परन्तु अचानक ही आमीन वहाँ आ गया वे गायब हो गये और एक 7½ फीट लम्बा-चौड़ा भयंकर व्यक्ति छात्रों के सामने आकर खड़ा हो गया और लगातार गालियों की बौछार करने लगा यदि कोई आदेश का पालन न करें तो हंटर मारता हुआ वह आगे बढ़ रहा था, सत्याग्रह होने के कारण गुरुकुल के ब्रह्मचारियों ने सब कुछ सहन किया। इन गुरुकुल के सभी छात्रों को रात को 8 बजे लारी में बन्द किया, हरेक के साथ एक-एक संगीन राइफल से लैस सिपाही बैठा दिया गया। लारी को पूरा बन्द कर दिया गया, हवालात में पहुँचने पर वहाँ सबको पंक्ति में खड़ा किया गया, केवल एक कपड़ा पहने रहने दिया बाकी सभी कपड़े छोटे-बड़े उतरवा लिये गये। कागज, पैंसिल, रुपया, पैसा कुछ भी नहीं रहने दिया, सभी अंगों की भी तलाशी ली गयी उसके पश्चात् एक-एक को धक्का देकर जेल की कोठरी में अन्दर किया गया।

धक्का देते समय क्षितीश का यज्ञोपवीत झटके से तोड़ दिया गया। उस सभी छात्रों का खून खौल गया सभी छात्र खड़े होकर बोले तलाशी नहीं देंगे। अन्त में यह फैसला हुआ कि किसी का यज्ञोपवीत नहीं तोड़ा जायेगा सबको कोठरी में बन्द कर दिया गया। कोठरी में केवल तीन कम्बल जिन्हें ओढ़ लिया जाय या बिछा लिया जाय इसके सिवाय कोई वस्त्र नहीं था किसी तरह रात को सोये। हाँ यहाँ पर यह चिन्ता नहीं थी कि किस तरह पुलिस को धोखा देना होगा कैसा वेश बदलना होगा क्योंकि इसका उद्देश्य पूरा हो चुका था। सत्याग्रह कर चुके थे। थोड़ी सी यह अवश्य चिन्ता थी कि एक साथी चन्द्रगुप्त जो कि किसी कारणवश गिरफ्तार नहीं हुआ था उसका क्या होगा, यह अवश्य चिन्ता थी।

(चार जनवरी उन्नीस सौ उनतालीस) 4.01.1939 को दोपहर 12 बजे कोठरी में से बाहर निकाला और 2-2 पूरी खाने के लिये दे दी गई जिनका यह पता नहीं लगा कि वह पेट के किस कोने में चली गई, इसके बाद फिर एक लारी में संगीन एवम् राइफलों के साथ लारी को बन्द करके रवाना किया गया।

उस समय नाज़िम साहब सो रहे थे इसलिए एक घंटे से अधिक प्रतिक्षा करनी पड़ी वहीं पर बैठकर वारन्ट तैयार किये गये और फिर लम्बे-चौड़े बयान लिये गये। इस तरह रात बीत जाने पर प्रातःकाल एक व्यक्ति आये प्रत्येक सत्याग्रही के प्रमुख शरीर के निशानों को नोट किया उन्होंने उर्दू व्याकरण के अनुसार शब्दों के बहुवचनों को उनसे सवाल करते हुए प्रयोग किया तो ब्रह्मचारियों के लिये यह एक आश्चर्यचकित प्रयोग थे इसलिए ब्रह्मचारी हंसने लगे उसके बाद नाज़िम साहब ने छात्रों के हंसी को बन्द करने के लिये आदेश दिया परन्तु उनकी हंसी बन्द नहीं हुई ओर खिलखिलाकर हंसने लगे। बातचीत करते-करते जब नाज़िम साहब को ज्ञात हुआ कि वे विद्यार्थी अमर शहीद स्वामी श्रद्धानन्द जी की संस्था से आये है तो उनके कान खड़े हो गये उन्होंने अचानक ही सभी छात्रों से पूछा जमानत दोगे छात्रों ने कहा नहीं फिर कहा माफीनाम लिखोगे, छात्रों ने कहा हरगिज नहीं उसके पश्चात् वारन्टों पर लिख दिया गया इनको उचित दण्ड दिया जाय और अदालत के अन्दर पेशगी लगा दी गई।

हैदराबाद की सैन्ट्रल जेल चंचल गुडा है। मुगल काल के किलों जैसा भारी भरकम द्वार उसमें छोटी-छोटी खिड़की एक-एक करके प्रवेश किया। एक लम्बा चौड़ा डील-डौल लम्बी-काली दाढ़ी विचित्र हबसियों जैसा काला रंग, ऐसी भयंकर आकृति वाले पहरेदार ने अपनी कर्कश आवाज से गिनना शुरू किया, वाकटी, रेण्डु, मुढ, नालगु, अर्थात् एक, दो, तीन, चार।

इन छात्रों ने पहले कभी जेल के अन्दर का संसार नहीं देखा था इसलिये जेल के अन्दर के दृश्य को देंखकर उनको बड़ा विचित्र सा लग रहा था। श्री क्षितीश वेदालंकार ने जेल के अन्दर के संसार का वर्णन करते हुए लिखा है कि "और जेल में प्रवेश संस्कार प्रारम्भ हो गया सामने कमरे में जो शायद जेलर का नाम था हथकड़ियों और डण्डा बेड़ियों की प्रदर्शनी सी लगी हुई थी ऊपर सबसे हल्की-हल्की फिर क्रमशः भारी-भारी और उससे भी और भारी। हरेक को विचित्र भय से देखते-देखते जब सबसे भारी डण्डा बेडी की ओर नज़र गई तो सहज विश्वासी मन भी यह विश्वास नहीं कर सकता था कि ये इतनी भारी डण्डा बेड़ियां मनुष्य के पैर में पहनाई जाती होगी। मनुष्य क्या ये तो शायद पशुओं को भी भारी पड़े पर नहीं हम गलती कर रहें है। हमें याद रखना चाहिए कि अब हम एक ऐसी दुनियां में है जिसे सभ्य संसार "जेल" कहकर पुकारता है और जहाँ दोपाये प्राणी की उतनी भी कीमत नहीं जितनी की परमात्मा की रची सृष्टि में चौपाये प्राणियों की समझी जाती है।"

"पास ही रखी हुई थी टिकटिकी ऊपर हाथ बांधने के लिये उसमें दोनों और एक-एक लोहे का कड़ा और नीचे पैर बांधने के लिये दोनों और एक-एक लोहे का कड़ा और बीच में शरीर के मध्यभाग को टिकाने के लिये चमड़े की छोटी सी गद्दी स्थान-स्थान पर खून से धब्बे पास ही रखी हुई कई दर्जन बेतें कुछ तेल में भीगती हुई। .... सुना तो बहुत बार था परन्तु कभी देखा नहीं था। इस सब को देखते ही आंखों के सामने वह दृश्य नाचने लगा जबकि जेल के अधिकारियों के अन्यायों का अपनी मृदुल वाणी से विरोध करता हुआ कोई सत्याग्रही उसको बांध दिया जायेगा, फिर उसको नंगा कर दिया जायेगा, और कोई जल्लाद संसार की सारी निर्दयता को अपने हाथ की कलाई में भरकर जोर से बैंत को हवा में लहराता हुआ उसके कोमल गुप्त अंग पर ....

अब्रह्मण्यम्ः अब्रह्मण्यम् स्मरण करते-करते ही शरीर में सिर से पैर तक कंपकंपी छा गई।[29] इस सब के पश्चात्, एक क्लर्क ने प्रत्येक से नाम बाप आदि का नाम पूछते हुए सब कपड़े निकलवाए उनको अलग-अलग लिखा किसी के पास कोई भी कागज का टुकड़ा व पेन्सिल तक भी नहीं छोड़ी गयी जो ऐनक पहनने वाले थे उनकी ऐनक छीन ली गयी। जेल के कर्मचारियों ने जेल का कानून बताकर सब कुछ छीन लिया।

गुरुकुल कांगड़ी के इन सत्याग्रही छात्रों ने जेल का अनुभव करते हुए यह भी अनुभव किया कि जौ कैदी पुराने हो जाते है उनमें से बहुत से जेल अधिकारियों के विश्वास पात्र बन जाते है, उनमें से कोई नम्बरदार और कोई पहरेदार के रूप में काम करने लग जाते है, वास्तव में वे जेल रूपी मशीनरी के पुर्जे बन जाते उन कैदियों में जो पढ़े-लिखे होते है उनको क्लर्क आदि बना दिया जाता है यह पद जेल में अति सम्मानस्पद समझा जाता था जेल अधिकारियों को आवश्यकता पड़ने पर इन्हीं विश्वासपात्र कैदियों से अन्य कैदियों पर अत्याचार कराये जाते है।

परिचय आदि पूछने के पश्चात् जेल की दूसरी प्रक्रिया प्रारम्भ हुई। इस प्रक्रिया के अन्तर्गत सबको उनके पेरों में लोहे का कड़ा डाला गया। इन छात्रों को लगा तो बहुत बुरा परन्तु वह कड़ा ताक सबके ही पैरों में था, इसलिए कुछ दिनों के पश्चात् वहीं कडा आभूषण सा प्रतीत होने लगा। रात्रि को सोते समय एक पतला सा काला कम्बल दिया गया जो लगभग फटा हुआ सा था। उस कम्बल के साथ एक छोटा सा टाट दिया गया जिसकी चौड़ाई दो बालिस्त से ज्यादा नहीं थी सबको यह बिस्तर उठाने को कहा और काल कोठरी में बन्द कर दिया गया, जहाँ अन्य भी कैदी रखे हुए थे। खाने की थाली के स्थान पर तसला दिया गया उस तसलें में दो-दो कडछियाँ, साग और बड़े-बड़े टिक्कड डालकर कहा गया कि खाना खा लो, सत्याग्रही छात्रों की होड लगी कि कौन अधिक खायेगा और सभी खाने लगे परन्तु पहले दिन होड लगाने पर भी आधी रोटी से ज्यादा कोई नहीं खा पाया। खाना खाने के बाद रात को दूसरी जगह ले जाया गया जहाँ पर नर्क जैसी काल-कोठरी थी परन्तु जैसे-जैसे सोने की कोशिश की गयी पता नहीं कब शायद थोड़ी देर के लिये नींद आयी होगी। रात बीत जाने के पश्चात् सभी सत्याग्रहियों को अदालत में पेश करने के लिये जाने की तैयारी होने लगी। एक लारी में सबको ठूंस-ठूंस कर बैठाया गया, लारी में चारों ओर पर्दे लगा दिये गये थे इस प्रकार अदालत में इन सबको प्रस्तुत किया गया। उस दिन अदालत में पुनः मजिस्ट्रेट के सामने पेश किया गया मजिस्ट्रेट साहब ने उदारता पूर्वक पूछा कि परस्पर लड़ने से क्या लाभ है लड़ना ही है तो जो ऐरा गैरा नत्थु खैरा तीसरा आदमी हमारे बीच में आया उससे लड़ना चाहिये, आपस में लड़ने से क्या फ़ायदा। न्यायाधीश की इन बातों को सुनकर क्षितीश कुमार ने उत्तर दिया कि मजिस्ट्रेट साहब आपने बात बड़े पते की कही है किन्तु यदि आपने थोड़ा सा ध्यान दिया होता तो शायद आप ऐसा न कहते। इस समय हम उन अधिकारों के लिए लड़ने आयें है जो किसी भी जाति और किसी भी राष्ट्र के लियें जन्म सिद्ध समझे जाते है यदि वे जन्मसिद्ध अधिकार हमें ब्रिटिश भारत से प्राप्त न होते तो हम वहाँ लड़ते किन्तु जो चीज वहाँ हमें प्राप्त है, वह यहाँ नहीं है। क्या आप नहीं जानते कि हिमालय से कन्याकुमारी तक सारा भारतवर्ष एक देश है, एकराष्ट्र है। उसके किसी एक भाग पर अन्याय और अनीति का तांडव होता है तो न केवल हम विद्यार्थियों का किन्तु आपका और प्रत्येक भारतवासी का कर्त्तव्य है किं वह उसको दूर करें। हैदराबाद की जनता को नागरिक स्वतन्त्रता प्राप्त नहीं है। यदि आप नागरिक स्वतंत्रता का परिभाषा जानना चाहते हैं तो मैं अमुक (.....) प्रोफेसर के शब्दों में कहूँगा कि "प्रेस और वाणी की स्वतंत्रता को नाम ही नागरिक स्वतंत्रता है।" आज हैदराबाद के निवासियों को न तो प्रेस की स्वतन्त्रता है और न ही वाणी की। किसी भी नागरिक के ये आदिम अधिकार है इनके बिना वह सभ्य नहीं कहला सकता। .... मत समझिये कि यह साम्प्रदायिक प्रश्न है यह तो मानवता का प्रश्न है ... इसमें पक्षपात की गुंजाईश ही नहीं हो सकती यह और बात है कि हैदराबाद की जनता 80 प्रतिशत हिन्दू है इसलिये ये सारे अत्याचार हिन्दुओं के ऊपर जाकर पड़ते है। किन्तु मैं आपको विश्वास दिलाता हूँ कि यदि कश्मीर में या ऐसे ही किसी अन्य रियासत में जिसमें, अधिकतम आबादी मुसलमानों की होती और वहाँ अत्याचार होते, यदि वहाँ इस प्रकार मानवता का अपहरण होता तो, जिस प्रकार हैदराबाद में सबसे पहले सत्याग्रह करने

वाला गुरुकुल कांगड़ी का जत्था है उसी प्रकार वहाँ भी सब से पहला सत्याग्रही जत्था गुरुकुल कांगड़ी का ही होता। .... इसलिए हम उस लाल रंग को छोड़कर इस पीले रंग से लड़ने आये है।[30]

“सारी आदलत में स्तब्धता छा गई। बाहर बहुत भीड़ इकट्ठी हो गयी थी और उत्सुकता से प्रतीक्षा कर रही थी कि इस बात का क्या फैसला होता है उधर आंख उठा कर देखा कोई हिन्दू नजर नहीं आया क्योंकि सिपाही इतना स्वेच्छाचार से काम लेते थे कि हिन्दुओं को पहले से ही द्वार में नहीं घुसने देते थे।”[31]

इस बयान के पश्चात् सभी सत्याग्रही छात्रों के वारन्ट मजिस्ट्रेट के सामने प्रस्तुत किये गये उसमें 126, 122, 15 और 28 धाराओं के तहत मुकद्दमा अंकित किया गया था जब मजिस्ट्रेट ने गवाह प्रस्तुत करने के लिये कहा तो ऐसे गवाह प्रस्तुत किये गये जो सड़क पर चलते हुए थे जब उनसे ज़ीरह की गई तो ये गवाह इधर-उधर ताकने लगे। इस समय एक से अधिक गवाह उपस्थित नहीं हो पाये थे। मजिस्ट्रेट ने छात्रों में से प्रत्येक से जलसा किया जुलूस निकाला और जनता को भड़काया तथा विद्रोहात्मक पर्चे बांटे थे तुम पर आरोप है जो कुछ कहना हो कहो। सभी ने अपने, अपने तर्को के अनुसार लगाये गये आरोपों का खण्डन किया। हाँ हमने केवल सत्याग्रह किया है। इस स्टेट के कानून पर कोई विश्वास नहीं किया जा सकता है। मजिस्ट्रेट ने पूछा आप लोग कोई वकील करना चाहते है उत्तर नहीं। कोई गवाह पेश करना चाहते हो। उत्तर दिया गवाह नहीं। छात्रों ने कहा कि इस रियासत में हम अजनबी अनजान है किसी भी आदमी को हम नहीं जानते हम केवल एक व्यक्ति को जानते है ? वे है हमारे अमीन साहब जिन्होंने गिरफ्तार किया है। परन्तु दुख यही है कि वे अमीन साहब भी हमारे उलटे पड़ गये है हम यहाँ झूठ बोलने के लिए नहीं आए, हम कॉलेज के विद्यार्थी है, इसलिए आप यह कल्पना भी कैसे कर सकते है कि हम किसी को यहाँ इतनी दूर बहकाने पर आये हैं।

चार घण्टे की बहस के बाद दोपहर का समय हो गया। दोपहर के पश्चात् फैसला सुनाया गया। 28 धारा हटा दी गई, क्योंकि वह टिकटों पर अंकित नहीं थी। बाकि 3 धाराओं के लिए 6-6 महीनें का सख्त कारावास सुना दिया गया। परन्तु तीनों सजायें इकट्ठी चलेंगी। इसलिए 6 महीने में कारावास समाप्त हो जायेगा। इन छात्रों ने मजिस्ट्रेट से शिकायत की थी कि क्या कोई जेल का कानून है कि 20 सवारियों की लारी में 50 कैदी बैठाऐ जाएं। तब मजिस्ट्रेट ने पुलिस इंस्पेक्टर से जवाब तलब किया और आदेश दिया गया कि एक लारी में 20 व्यक्ति ही बिठायें जायें।

एक दिन दोपहर में बुलाकर नई पौशाके दी गई जिसमें एक कुर्त्ता एक पाजामा और एक टोपी। ये पोशाक जबरदस्ती पहननी पड़ी। किसी को पाजामा बड़ा तथा कि किसी का छोटा था इसी प्रकार कुर्ते की अवस्था थी जेल में रहते हुए धीरे-धीरे वहाँ के अत्याचारों को सहन करने की आदत सी पड़ गई थी एक दिन जब जेलर ने बुलाया तो वहाँ सामने अचानक समाचार पत्र दिखलाई दिया उसमें लिखा था गायकवाड पायर्ड एक्स कई दिनों के बाद अखवार देखने के कारण बड़ा विचित्र सा अनुभव हो रहा था।

एक दिन जेल में मिस्टर हारेन्स सुपरिटेन्डेन्ट अपने दल-बल के साथ निरीक्षण करने के लिए आए। उस दिन ब्रह्मचारी विश्वमित्र को बुखार आया हुआ था, जब यह सूचना दी गई कि वह बीमार है तो डांट दिया गया। हाँ यह आवश्यक है कि गुरुकुल की तरह जेल का जीवन नियमित अवश्य था। जिसका वर्णन भी क्षितीश कुमार ने इस प्रकार किया है।

“हाँ, तो सवेरे 6 बजते ही ताला खुलता था केवल एक घण्टे के लिये। उस एक घण्टे में ही सारे नित्यकर्म करना और पेट की ज्वाला बुझाने के लिए दो-दो टिक्कड-जिनमें कभी रेत, कभी सीमेन्ट कभी कंकर और कभी-कभी कीड़े मकौड़े उदर दरी में डाल देना, और ऊपर से चम्बू भर पानी उड़ेल देना पानी जिसमें प्रायः मिट्टी के तेल की बू आती थी और फिर “नित्यकर्म से आप क्या समझे उस वार्ड में एक

सौ पचास कैदी थे, केवल दो शौचालय जिनमें आड़ की कोई आवश्यकता समझी ही नहीं गई थी, बारी-बारी से जाते। शौचालय और फिर इसकी यदि किसी को जरा-सी देर लग जाती थी तो सिपाही पीछे से डांटता "जल्दी निकलो"।

"इस प्रकार नित्य कर्म के रूप में केवल शौच की ही आज्ञा थी। हाथ धोते ही सीधे भोजन के लिये बैठना पड़ता था। ज्योंही घण्टा समाप्त हुआ त्योंही फिर ताले के अन्दर। यदि हम खुली हवा में थोड़ी देर और सांस ले लेते या यदि धूप थोड़ी देर और हमारे अंगों को स्पर्श कर लेती तो डर था कि कहीं वह हवा और वह धूप भी हमारे सहवास से राजद्रोही न बन जायें शायद।[32]

"फिर इसी प्रकार सायंकाल भी था। तीन बजे ताला खुलता और गगन मण्डल देखने को मिलता इसी प्रकार इस विचित्र स्थिति में एक रस वातावरण ने चेतना शून्य वहाँ के कैदियों को पागल सा बना दिया था। कभी हमारा भी ऐसा ही भविष्य न हो इसलिए छात्रों ने काम के लिए लड़ना प्रारम्भ किया पत्र दिया हमें काम दीजिए। यही सब होते-होते शिवरात्रि आ गई सबने मिलकर प्रार्थना-पत्र दिया कि आज हमारा त्यौहार है इसलिए हमें स्नान करने की आज्ञा तथा संध्या हवन करने की, उपवास तथा शाम को फलाहर की व्यवस्था होनी चाहिये। इसका परिणाम यह हुआ कि पांच-पांच चम्बू नापकर पानी दिया गया उस पानी से नहा लो या कपड़े धो लो। इसी प्रकर एक दिन कमर में दस्ती (उपरना) बंधवाकर पंक्ति में खड़ा कर दिया गया। मि० हारेन्स ने आते ही पूछा हरिद्वार के लड़के कहाँ है। उनके समाने सभी को खड़ा कर दिया गया। और सभी छात्रों को समझाने में हर की पौड़ी का ऐसा साहित्यिक वर्णन किया कि सभी छात्र देखते रह गए। और हरिद्वार का वर्णन कर के वे चले गए। मिस्टर हॉरलेन्स का आने का कोई प्रभाव हुआ हो या न हुआ हो परन्तु इतना अवश्य हुआ कि दूसरे दिन ही हरिद्वार के लड़के एक-एक करके चंचल गुडा जेल के सिगनी गेसन वार्ड से निकाले जाकर, जाने किस-किस जेल में भेजे जाने लगे।"[33]

बदरखा की तैयारी

सायं काल होते-होते कोठरियों के ताले बन्द होने प्रारम्भ हो गए। उसी सयम सिपाही क्षितीश कुमार का नाम पुकारते पुकारते वहाँ आ गया। उसने कहा अपना चम्बु, टाट सभी सामान लेकर चलों इससे थोड़े समय पहले ही अन्य दो छात्रों को बुलाया गया था। भयानक काल कौठरी की गैलरियों से होते हुए जिसे सरकल गंजी कहते थे वहाँ पर इन छात्रों को ले गये। लोहे की मोटी सलाखों की दीवार में छोटी-सी खिड़की खुली। चिड़ियां घर के पिंजरों की सीं उसमें धक्का देकर इनको घुसेड दिया गया उस कोठरी में गंदगी और बदबू के कारण असंख्य मच्छर और डांस तथा बीच फर्श में जोड़ी हुई लोहे की मोटी जंजीर जो बैडी पैरों में बांधी जाती थी ये तीनों साथी सोचने लगे कि हमने ऐसा कौन सा जुर्म किया है जो इस भयानक कोठरी में डाल दिया गया है। ज्योंही इन्होंने सोने की कोशिश की तो मच्छर और डांसों ने अपना राग अलापना शुरू कर दिया इसलिये वहाँ नींद आने का सवाल ही नहीं था। कुछ समय बाद अचनाक सरसराहट हुई तीनों हड़बड़ाकर उठे। कम्बल में हाथ दिया तो पता लगा कि बिच्छू है फिर कहाँ नींद आनी थी। "सा निशा सर्वभूतानाम्" को चरितार्थ करने वाली योगी की तरह एक आसन पर बैठे रहे। इसी प्रकार सारी रात बीत गई और सवेरा हो गया सवेरा होते ही कहाँ तुमको बंदरखा भेजा जाएगा छात्रों ने सोचा शायद किसी स्थान का नाम होगा। परन्तु बाद में पता चला कि तेलगु भाषा में बंदरखा जेल परिवर्तन को कहते है अर्थात् दूसरी जेल में भेजने का नाम बंदरखा है कई बेरकों के कैदियों को भी बुलाया। वहाँ पर गुरुकुल के छात्रों ने परस्पर एक दूसरे को देख लिया। एक दूसरे को देखने से संतोष की अनुभूति हुई यहाँ 25-25 की दो टुकड़ियाँ बनाई गयी पहले 25 को लारी में भरकर निजामाबाद भेज दिया गया गुरुकुल के छात्रों में से तीन को वारांगल भेजा जा चुका था। दूसरे 25 में

क्षितीश कुमार सहित सात गुरुकुल के विद्यार्थी थे इनको गुलबरगा भेजा गया। 6 घंटे लगातार लारी के चलने के पश्चात् गुलबर्गा जेल में पहुँच गए।

गुलबर्गा जेल में महात्मा नारायण स्वामी जी थे। वहाँ गुरुकुल के ब्रह्मचारी उनसे मिले। इस जेल में कुछ स्वतंत्रता थी। यहाँ स्नानादि के लिए भी कोई रुकावट नहीं थी। यहाँ एक दूसरे से बातचीत भी की जा सकती थी। दूसरे दिन प्रातःकाल काम पर जाने के लिये कहा गया वहाँ पर काम पर जाते हुए देखा कि एक लम्बी बैरक 150 के करीब मल्ल लगोंटा बांधें दनादन चक्की चला रहें है। उनके लिए यह शर्त थी कि उनको सुबह से लेकर सायंकाल तक (20 कि.ग्रा.) 20 सेर आटा पीसना जरूरी है नहीं पीसेगा तो रोटी नहीं मिलेगी। यहाँ जेल में गुरुकुल के छात्रों को अन्य जो सत्याग्रहियों के दल आ रहे थे अनके बारे में भली-भांति ज्ञात होते रहता था।

हैदारबाद सत्याग्रह सारे भारत में फैला

धीरे-धीरे हैदराबाद सत्याग्रह का नाद सारे देश में गूंज गया। रोजाना यह पता लग जाता था कि आज श्री खुशहालचन्द (आनन्द स्वामी) 150 सत्याग्रहियों सहित सत्याग्रह करने आये है। फिर ज्ञात हुआ कि राजगुरू श्री धुरेन्द्र नाथ शास्त्री 500 सत्याग्रहियों सहित गुलबर्गा जेल में आ रहें है। इसी प्रकार आर्य समाज के अन्य नेताओं के जत्थे भी। अन्य जेल में भेजे जा चुके है। अकेली बदरखा जेल में 1000 सत्याग्रही थे। जेल में कोई भी आन्दोलन होता तो उसमें यही समझा जाता था कि इसमें कहीं ना कहीं गुरुकुल कांगड़ी के ब्रह्मचारियों का हाथ है इसलिए गुरुकुल के छात्रों को इधर-उधर भेजा जाता रहा। धीरे-धीरे सभी साथी जेल परिवर्तन को सामान्य रूप से लेने लगे। इस तरह रामनाथ के सारे साथी कोई औरंगाबाद कोई निजामाबाद कोई हैदराबाद कोई नारांगल कोई करीमनगर में भेंज दिये गयें परन्तु क्षितीश कुमार को गुलबर्गा में ही रहने दिया गया। वहाँ जेल में एक बार बालीबाल का मैच पुलिस टीम और सत्याग्रहियों के बीच करने का आयोजन हुआ। ग्राउन्ड में रंग-बिरंगी झंडिया लगाई गई कि इस मैच को देखने सभी ऑफीसर आये थे। सभी कैदियों को मैच देखने की इजाजत दे दी गयी थी। एक तरफ पुलिस के लम्बे चौड़े जवान थे। दूसरी ओर गुरुकुल के 6 ब्रह्मचारी थे। इन छात्रों को घबराहट यहाँ हो रही थी कि यदि हार गये तो गुरुकुल माता का सत्याग्रह का और तीसरा आर्य समाज का सिर नीचा हो जायेगा। खेल के मैदान में उतरने से पहले महात्मा नारायण स्वामी जी का आशीर्वाद लिया गया। पुलिस की टीम वहाँ की प्रसिद्ध टीम मानी जाती थी। ईश्वर की कृपा से गुरुकुल के ब्रह्मचारी सत्याग्रही विजयी हुये। सभी सत्याग्रही नाचने लगे एवम् कूदने लगे। इस विजय का समाचार चारों ओर फैल गया। बाहर के टीमों के चैलेंज आने लगे। यह समाचार भी चारों और फैल गया कि हरिद्वार से आये गुरुकुल के ब्रह्मचारियों का बालीबाल में हैदराबाद रियासत में कोई भी उन्हें पराजित नहीं कर सकता है। इस प्रकार जेल में भी गुरुकुल के छात्रों की धूम मच गयी। जेल में कई बार झगंड़े हुये पुलिस और सत्याग्रहियों के बीच कभी-कभी मारपीट भी होती रहती थी। सत्याग्रहियों का मुख्य हथियार अहिंसा को ही माना जाता है।

नागपुर में सार्वदेशिक सभा की मीटिंग हुई। उसमें यह निर्णय लिया गया कि भाग्य नगर का आर्य सत्याग्रह स्थगित किया जाता है। यह निर्णय 8 अगस्त 1939 को लिया गया था।

आर्य सत्याग्रह का प्रारम्भ गुरुकुल कांगड़ी के ब्रह्मचारियों से हुआ

यह सौभाग्य गुरुकुल कांगड़ी का ही था कि इस सत्याग्रह का प्रथम सत्याग्रही जत्था गुरुकुल कांगड़ी के ब्रह्मचारियों का ही था। इस सत्याग्रह का अन्तिम जत्था गुरुकुल कांगड़ी के प्रसिद्ध स्नातक बैरिस्टर विनायक राव विद्यालंकार कें नेतृत्व में मानों इस यज्ञ में अन्तिम आहुति डाली हो। 18 अगस्त को यह सत्याग्रह जो बंद किया गया था उसी दिन गुरुकुल के छात्रों का रिहायी का दिन था।

जेल में संघर्ष

हैराबाद की सभी प्रसिद्ध जेलों में गुरुकुल का कोई न कोई छात्र उस समय रहा था। वहाँ अन्य कैदियों पर जब अत्याचार होते देखते तो गुरुकुल के छात्र संघर्ष प्रारम्भ कर देते थे। इस काले कानूनों को बदलों, कैदियों के साथ मनुष्यता का व्यवहार करो आदि बातों को लेकर झगड़ा सब जगह कुछ न कुछ हो ही जाता था कई जेलों में कुछ सख्त कूननों को बदलवाया भी था। जेल के इस संघर्ष का वर्णन श्री क्षितीश कुमर वेदालंकार ने इस प्रकार किया है। "कहीं विद्यासागर को डंडो से मार-मारकर हाथ-पांव से बेकार कर दिया जाता है कहीं उदयवीर को बाल पकड़कर घसीटा जाता है, कहीं धीरेन्द्र को भूखों मारा जाता है कही विद्यारत्न को कत्ल करने की धमकी दी जाती है कहीं इन्द्रसेन को टिकटिकी पर चढ़ाया जाता है। ... और इस तरह लम्बी लिस्ट लगातार बढ़ती ही चली जाती है किन्तु नहीं भूला जा सकता वह दृश्य जबकि सुपरिटैंन्डेन्ट साहब भाई रामनाथ को एक दिन डांटते हुए कहते है- तुम हैदराबाद रियासत के कानूनों को क्या बदलोगे तुम तो अंगुली काटकर शहीद बनने चले हो। तुम्हारे इस सत्याग्रह से कुछ नहीं हो सकता।"

तब भाई रामनाथ ने उत्तर दिया था- "यदि सच्चे शहीद बनने का मौका आयेगा तो वह भी बनके देखा देगें किन्तु अंगुली काटकर शहीद बनने वालों में यदि आप भी शामिल होना चाहते है तो यह लीजिये, मेरी अंगुली काटकर उसका खून आप अपनी अंगुली पर लगा लीजिये।"

और तब इस गुस्ताखी के फलस्वरूप उसे तीन-चार मुसलमान वाडरों के सुपूर्द करके। "लक्कड वार्ड" में भेज दिया गया। वहाँ उन क्रूर वार्डरों ने डण्डों से और जूतों से उसे इतना पीटा था कि लहूलुहान होकर बेहोश हो गया था।

फिर उससे माफी मंगाने के लिये बड़े-बड़े प्रयत्न किये गये थे जबर्दस्ती मुख में मांस डाला गया, महीनों उससे पेशाब और ट्टटी उठवाई गई और उसकी पीठ पर कितनों डन्डों के निशान थे। किन्तु वहाँ भी तूने सब कुछ हंसते हुए सहा पर तेरी वाणी से क्षमा शब्द न निकलवा सकें।

कोई संगारेहड्डी से छूट कर आया, कोई नलगुण्डा से कोई करीम नगर से, कोई बारांगल से कोई उस्मानाबाद से कोई निजामाबाद से कोई औरंगाबाद से कोई गुलबर्गा से और कोई चंचलगुडा से। जब हम सब के सब मुम्बई में पहली बार मिले-आह! कितना भव्य दृश्य था! पता नहीं कितनी त्रिवेणियों के संगम की भव्यता उस एक छोटी-सी टुकड़ी में अनुस्यूत हो उठी थी।

किन्तु पाठक, मुझे क्षमा करना। मुझसे थोड़ी-सी गलती हो गई है मैंने लिखा है- "पूर्णमेवावशिष्यते।" भला यह भी कहीं सम्भव है कि अग्नि में पड़ी आहुति भस्म-निश्शेष बनकर भी पूर्णावशिष्ट रहें। किन्तु सचमुच हम पूरे पंद्रह के पंद्रह ही मुक्त होकर आयें थे 5 पूर्वावशिष्ट पर दुर्भाग्य का उपहास तो देखो की फिर भी पूर्णावशिष्ट "नहीं रहने पाये"! हम केवल 14 ही वापिस लौट पाये।

उस रामनाथ ने एक दिन सुप्रीटेन्डेट साहब को जो कहा था उसे सत्य कर दिखाया। अंगुली काटकर शहीद होना उसने नहीं जाना था। उस जेल के साथ वह इस शरीर की जेल से भी मुक्त हो गया। काश की मृत्यु के मुख से छीनकर उसे गुरुकुल माता की गोद में बैठा सकता।[34]

इस प्रकार ब्रह्मचारी रामनाथ का हैदराबाद में अमर बलिदान हो गया था। उसकी स्मृति में टेकचन्द नागया होस्टल में एक कमरा अब भी शहादत की याद दिला रहा है।

हैदराबाद सत्याग्रह में जो अब तक वर्णन किया गया है वह केवल उन छात्रों का है जो उस समय गुरुकुल कांगड़ी में शिक्षा प्राप्त कर रहें थे। गुरुकुल कांगड़ी के अन्य स्नातक जो कार्य क्षेत्र में उतरकर

अनेक सामाजिक कार्यों में लगे हुये थे उनके द्वारा हैदराबाद सत्याग्रह में जो योगदान प्रदान किया गया, उसका उल्लेख भी करना आवश्यक है। इनमें सर्वप्रथम हैदराबाद के ही रहने वाले श्री विनायक राव विद्यालंकार बार एक्ट लॉ हैदराबाद निवासी है आप हैदराबाद सत्याग्रह में अष्टम सर्वाधिकारी बनाये गये थे। आपने उत्तर भारत में हैदराबाद सत्याग्रह के लिये प्रचार किया जिसमें 16,500 रूपये एकत्रित किये और 2,250 मील का भ्रमण किया। आप मेरठ, सहारनपुर, देहरादून, फतेहपुर, मुज़फ्फर नगर आदि जिलों में गये और तूफानी भ्रमण किया आप उस समय 1600 सत्याग्रहियों के साथ अहमद नगर में डेरा डाले हुये थे।

पं० बुद्धदेव विद्यालंकार ने 2 जुलाई 1939 को 282 सत्याग्रहियों के साथ सत्याग्रह किया। आपको औरंगाबाद जेल में रखा गया था। पं० चन्द्रमणि विद्यालंकार ने 19 मार्च 1939 को हैदराबाद में सत्याग्रह किया।

पं० सत्यानन्द विद्यालंकार ने भी हैदराबाद में सत्याग्रह किया इनको नानदेड जेल में रखा गया था।

श्री केशवदेव वेदालंकार ने भटिण्डा के सत्याग्रही दल का नेतृत्व किया जिनको औरंगाबाद जेल में भेजा गया।

डॉ० अनन्तानन्द आयुर्वेदालंकार ने भी बुद्धदेव विद्यालंकार के साथ सत्याग्रह किया।

मदन मोहन विद्यासागर विद्यालंकार ने बेजवाडा शिविर की व्यवस्था को सम्भाला और वहीं सत्याग्रह किया।

इस प्रकार विदेश से पं० सत्यपाल सिद्धान्तालंकार ने नैरोबी से 12,000 रुपये एकत्रित करके हैदराबाद सत्याग्रह के लिए भेजें।

उस समय हैदराबाद सत्याग्रह के लिये जन जागृति करना परमावश्यक था इसके लिए अर्जुन, नौराष्ट्र, हिन्दुस्तान पत्रों में गुरुकुल के स्नातकों ने जन जागृति अभियान प्रारम्भ किया। इनमें रामगोपाल विद्यालंकार, प्रो० इन्द्रविद्यावाचस्पति श्री सत्यदेव विद्यालंकार प्रमुख थे जिन्होंने इन पत्रों में हैदराबाद सत्याग्रह के लिए अनेकों लेख लिखकर जन-जागृति का प्रशंसनीय कार्य किया था।

इसी प्रकार विद्यानिधि विद्यालंकार, जगन्नाथ, वेदालंकार, धर्मपाल विद्यालंकार, पं० निरंजनदेव आयुर्वेदालंकार, प्रियव्रत वेद वाचस्पति, यशपाल सिद्धान्तालंकार श्री धनदेव विद्यालंकार, श्री हरिश्चन्द्र विद्यालंकार, कृष्णचन्द्र विद्यालंकार, भीमसैन विद्यालंकार, सुधन्वा विद्यालंकार ने भारत के अनेक जिलों में जन जागरण का कार्य किया और सैकड़ों सत्याग्रहियों को हैदराबाद सत्याग्रह में सत्याग्रह करने के लिये भेजा।

अत: हैदराबाद सत्याग्रह में गुरुकुल की आहुति को कभी भी विस्मरण नहीं किया जा सकेगा।

हिन्दी आन्दोलन

पंजाब में अकालियों का जोर बढ़ जाने के कारण हिन्दी भाषा के साथ अन्याय करना प्रारम्भ कर दिया।

भाषा समस्या के प्रति आर्य समाज का रुख

स्वतंत्रता की प्राप्ति के पश्चात्, जब भारत में विभिन्न राज्यों का पुनर्गठन हो रहा था, और भाषाओं के आधार पर राज्यों के निर्माण का कार्य जोर पकड़ने लगा था। पंजाब के आर्य नेताओं का ध्यान इस बात की ओर गया कि पंजाब के राज्यों की नई व्यवस्था में पंजाब का क्या स्वरूप होगा और उसमें हिन्दी की कैसी स्थिति होगी।

उस समय महाशय कृष्ण पंजाब आर्य प्र० सभा के प्रधान थे। 3 अगस्त 1949 ई० को उन्होंने एक वक्तव्य जारी किया "देश के विभाजन ने आर्य समाज के कार्य का क्षेत्र विस्तृत कर दिया है परन्तु दुर्भाग्य से प० पंजाब जहाँ आर्य समाज का बहुत बड़ा गढ़ था उजड़ गया है। यद्यपि पूर्वी पंजाब का आर्य समाज तो जीवित व ठीक दशा में है।"[35]

1. उस समय के आर्य समाज के नेताओं की यह चिन्ता थी कि यदि पूर्वी पंजाब की 70 प्रतिशत जनता पर कोई अन्य भाषायें लिपि थोपी गई तो आर्य जनता उसका विरोध करेंगी। विरोध करने वाले नेताओं में अधिकतम गुरुकुल कांगड़ी के स्नातक ही थे। इस प्रकार के प्रस्ताव आर्य समाजों द्वारा स्वीकार किये गये। प्रस्तावों पर ही सन्तोष नहीं किया गया अपितु आर्य प्रतिनिधि सभा द्वारा गुरुकुल कांगड़ी के स्नातक पं० भीमसेन विद्यालंकार और यशपाल सिद्धान्तालंकार के नेतृत्व में पंजाब हिन्दी मण्डल की स्थापना की गई। पंजाब की समस्त आर्य समाजों को यह निर्देश दिया गया कि 18 सितम्बर 1949 ई० को सर्वत्र हिन्दी दिवस का आयोजन किया जाये। यह हिन्दी दिवस अम्बाला, पानीपत, कालका, रोहतक और भिवानी शहरों में बड़ी धूमधाम से मनाया गया। इस परिषद् का पहला अधिवेशन जालंधर में हुआ। इसमें केवल आर्य समाजी ही नहीं थे अपितु सभी पंजाबी हिन्दू थे। और इसमें यह प्रस्ताव स्वीकृत हुआ कि इस परिषद् का विचार है कि पूर्वी पंजाब के संस्कृति व साहित्य की भाषा प्राचीन काल में लिखी जाने वाली देवनागरी लिपि हिन्दी भाषा चली आ रही है। इस राज्य के विभिन्न क्षेत्रों में बोलचाल की भाषा चलने वाली पंजाबी डोगरू या बांगरू आदि बोलियां भी है।
2. पूर्वी पंजाब की सामूहिक दृढ़ता और उन्नति के लिए आवश्यक है कि देवनागरी में लिखी जाने वाली हिन्दी को ही राज्य की सरकारी भाषा और शिक्षा का माध्यम बनाया जाय।
3. यह सम्मेलन पूर्वी पंजाब की सरकार के सदस्यों से बल पूर्वक अनुरोध करता है कि वे राज्य की जनता द्वारा स्पष्ट की गई स्थिति को स्वीकार कर लें और भाषा सम्बन्धी साम्प्रदायिक मामलों की ओर न झुके।[36]

इस प्रकार पंजाब में आर्य समाज की मांगों पर विचार किया गया तो सरकार ने उनकी कई मांगों को स्वीकृत नहीं किया। स्वामी आत्मानन्द सरस्वती की अध्यक्षता में 5 मई 1957 ई० को हिन्दी रक्षा समिति की एक आवश्यक बैठक जालन्धर में बुलाई गई जिसमें राय बहादुर बद्रीदास, श्री जगदेव सिंह सिद्धान्ती, आचार्य रामदेव, ला० जगतनारायण, आचार्य भगवानदेव, पं० लक्ष्मीचन्द आदि 100 से अधिक प्रमुख नेताओं ने इस बैठक में भाग लिया। आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब ने आर्य समाज के सर्वोच्च संगठन सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा को प्रस्ताव भेजा कि आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब और समस्त देशवासियों को यह प्रेरणा दी जाये कि हिन्दी भाषा की रक्षा के लिये समस्त आर्य समाज संगठित होकर पंजाब में आरम्भ होने वाले हिन्दी सत्याग्रह में सक्रिय भाग लेकर उसको सफल करें। सत्याग्रह का विगुल बजाने से पूर्व स्वामी आत्मानन्द जी के नेतृत्व में सद्भावना यात्रा 22 मई 1957 से प्रारम्भ की गयी। इस सद्भावना यात्रा में भी गुरुकुल कांगड़ी के अनेक स्नातक उपस्थित थे पंजाब के मुख्यमंत्री श्री प्रताप सिंह कैरों से समिति के सदस्यों ने भेंट करके अपना पक्ष प्रस्तुत किया। इसमें श्री अमरनाथ विद्यालंकार तो शिक्षा मंत्री ही थे। उन्होंने मुख्य मंत्री को आर्य समाजियों का पक्ष स्पष्ट किया स्वामी आत्मानन्द सरस्वती ने भारतीय सरकार को भी अनेक पत्र लिखें इन पत्रों को लिखने के पश्चात् 8 जून 1957 को स्वामी आत्मानन्द ने घोषणा की थी कि 9 जून को सारे पंजाब में सत्याग्रह का प्रथम दिवस मनाया जायेगा। 10 जून को सत्याग्रह प्रारम्भ कर दिया गया। समस्त भारत से हजारों सत्याग्रही पंजाब में सत्याग्रह करने के लिये आने प्रारम्भ हो गये। इस सत्याग्रह

में सरकार ने अनेक अत्याचार भी किये। हिन्दी भाषी क्षेत्र हरियाणा में यह सत्याग्रह अधिक उत्साह के साथ किया जा रहा था। 30 जुलाई को रोहतक में सत्याग्रह का जब प्रारम्भ हुआ तो वहाँ की जनता में अधिक जोश था सत्याग्रहियों के पहले जत्थे ने जब जिलाधीश की कोठी की ओर प्रस्थान किया तो 20 हजार नर-नारी उसके साथ थे पुलिस का कड़ा प्रबन्ध था परन्तु सत्याग्रहियों ने पुलिस की परवाह न करके आगे बढ़ना प्रारम्भ कर दिया इस पर पुलिस ने लाठी चार्ज किया और अश्रु गैस के गोले छोड़ने प्रारम्भ कर दिये कितने ही सत्याग्रही पुलिस की लाठियों से घायल हो गयें, पर उन्होंने पीछे हटने का नाम न लिया। उसी दिन सत्याग्रह के अनेक नेताओं को गिरफ्तार कर लिया गया जिसमें महाशय भगत सिंह, श्री बदलुराम, प्रो० शेरसिंह डॉ० मंगल सैन, और चौ० रामभज आदि नेता थे। इस हिन्दी आन्दोलन में गुरुकुल कांगड़ी की ओर से छः ब्रह्मचारी सत्याग्रह में गये थे जिनको छः माह का कारावास हुआ था इनमें ब्रह्मचारी नवल किशोर, श्री सुभाष चन्द, श्री श्यामनाथ, श्री वेदप्रकाश, श्री हेम सिंह, और श्री प्रेमनाथ ने जेल की यातनायें सहन की थी। इनको अम्बाला और फिरोजपुर जेल में रखा गया था। चार माह तक जेल में रहकर कष्ट सहन किया था। जब ये गुरुकुल आए तब ब्रह्मचारियों ने उनका उत्साह पूर्वक स्वागत किया।

इस आन्दोलन में गुरुकुल के जो स्नातक भारतवर्ष के अनेक प्रान्तों में फैले हुए थे उन्होंने इस हिन्दी आन्दोलन में बढ़चढ़कर भाग लिया था। उन स्नातकों में से अग्रणी नेता डॉ० हरिप्रकाश आयुर्वेदालंकार, बुद्धदेव विद्यालंकार, क्षितीश कुमार वेदालंकार, पं० हरिश्चन्द्र आयुर्वेदालंकार आदि स्नातक थे। इस समय सरकार के साथ जो भी बातचीत की जाती थी उस बातचीत के मध्य में गुरुकुल के स्नातक अवश्य होते थे। अम्बाला में डॉ० हरिप्रकाश आयुर्वेदालंकार का घर सत्याग्रहियों का एक शिविर सा बना हुआ था अनेक स्नातक उपनगरों में जाकर जन-जागृति का कार्य कर रहें थे।

यह सत्याग्रह पंजाब का सत्याग्रह न रहकर समस्त भारत के आर्यसमाजियों का सत्याग्रह हो गया था। इसमें बिहार आर्य प्रतिनिधि सभा की ओर से बांकीपुर मुजफ्फरपुर भागलपुर, बेतिया, जगदीशपुर, लहेरिया, सराय आरा आदि। आर्य समाजों ने सत्याग्रह में भाग लेने के लिए सत्याग्रहियों को भेजा। इसी प्रकार उत्तर प्रदेश जो कि पंजाब का पड़ौसी राज्य है यहाँ के आर्य समाज़ियों ने भी हिन्दी सत्याग्रह में भाग लिया था। आर्य समाज के प्रसिद्ध नेता श्री प्रकाशवीर शास्त्री ने उत्तर प्रदेश में ही नहीं अपितु समस्त भारत में अपने ओजस्वी भाषाणों के द्वारा हिन्दी सत्याग्रह का प्रचार एवम् प्रसार किया। उत्तर प्रदेश से 5000 से भी अधिक सत्याग्रही पंजाब में भेजे गये।

हिन्दी सत्याग्रह के लिये बलिदान

हिन्दी की समस्या केवल पंजाब की समस्या थी, परन्तु आर्य समाज के हिन्दी सत्याग्रह के कारण हिन्दी की समस्या केवल पंजाब की समस्या न रहकर पूरे भारत की समस्या हो गयी थी। इस सत्याग्रह में जिस वीर का बलिदान हुआ था उसका नाम सुमेर सिंह था। वे वीर सुमेर सिंह आर्य समाज नया बांस (हरियाणा) के पहले जत्थे में सम्मिलित थे। सुमेर सिंह ने चण्डीगढ़ में आकर सत्याग्रह किया इनको फिरोजपुर जेल में भेज दिया गया। इसी जेल में गुरुकुल कांगड़ी के 6 ब्रह्मचारी भी जेल में बन्द थे। 24 अगस्त 1957 ई० को सायं काल 4 बजे पुलिस ने जेल के अन्दर लाठी चार्ज किया। श्री सुमेर सिंह उस समय सत्यार्थ प्रकाश पढ़ रहे थे। गुरुकुल कांगड़ी के सत्याग्रहियों की भी पुलिस ने जमकर पिटाई की परन्तु उन ब्रह्मचारियों में प्रायः सभी व्यायाम करने वाले ब्रह्मचारी थे इसलिए पुलिस की मार को सहन कर गये। श्री सुमेर सिंह पर पुलिस ने इतनी लाठियां बरसाई कि वे वहीं पर ढेर हो गये। हिन्दी सत्याग्रह के लिये उन्होंने जेल में ही अपना अमर बलिदान किया इस लाठीचार्ज में कई अन्य सत्याग्रहियों की हड्डियाँ टूट

गई थी और वे जीवनभर के लिये अपाहिज हो गये थे। इसी प्रकार अन्य शहीदों में प्रो॰ किशोरी लाल का नाम विशेष उल्लेखनीय है। श्री किशोरी लाल बनारस में इंजिनियरिंग कॉलेज में प्राध्यापक थे। उन्होंने प्राध्यापक पद से त्याग पत्र देकर 15 जुलाई 1957 ई॰ को सत्याग्रह किया था। अम्बाला जेल में वे शहीद हुए। इसी प्रकार बटाला (पंजाब) के श्री धर्मवर और कानपुर के श्री प्रियदर्शन ने भी सत्याग्रही के रूप में वीरगति प्राप्त की थी।

गुरुकुल कांगड़ी अपने स्थापना के प्रारम्भ काल से ही आर्य समाज तथा देश के स्वतंत्रता आन्दोलन की गति-विधियों में बढ़-चढ़कर भाग लेता रहा है। उसी परम्परा के अन्तर्गत हिन्दी सत्याग्रह में भी गुरुकुल कांगड़ी के छात्रों ने बढ़-चढ़कर भाग लिया था। गुरुकुल कांगड़ी के अन्य स्नातकों ने इस सत्याग्रह को नेतृत्व प्रदान किया था। इनमें लगभग दो दर्जन स्नातक ऐसे थे जो भारत के अनेकों स्थानों से सत्याग्रहियों को तैयार करके पंजाब में भेज रहे थे। जिनमें पं॰ बुद्धदेव विद्यालंकार, आचार्य प्रियव्रत वेदवाचस्पति, श्री समर सिंह वेदालंकार, पं॰ हरिश्चन्द्र सिद्धान्तालंकार पं॰ सुखदेव दर्शन वाचस्पति आदि के नाम उल्लेखनीय है।

गोरक्षा आन्दोलन

भारत में गोरक्षा की बात सदा बहुचर्चित रही है स्वामी दयानन्द सरस्वती ने भी दो करोड़ व्यक्तियों के हस्ताक्षर कराके अंग्रेजी सरकार को विज्ञापन के रूप में प्रस्तुत किये थे। गौमाता की रक्षा की जायें इसके लिये समस्त हिन्दू नेता एक होते रहें है। गौरक्षा विषय पुनः 1955 ई॰ से स्वामी स्वतंत्रतानन्द जी की अध्यक्षता में प्रारम्भ हुआ। उनके स्वर्गवास के पश्चात् स्वामी ध्रुवानन्द जी की अध्यक्षता में एक गोरक्षा समिति का गठन किया गया। 25 जून 1966 ई॰ को सार्वदेशिक 'आर्य प्रतिनिधि सभा ने अपनी अंतरंग सभा में यह प्रस्ताव सर्वसम्मति से पारित किया था कि गौमाता की रक्षा के लिये अखिल भारतीय स्तर पर आन्दोलन किये जाये। एक सर्वदलीय गौ-रक्षा महा अभियान समिति का भी गठन किया गया जिसमें समस्त हिन्दू सम्प्रदायों के महात्मा एवं नेतागण सम्मिलित थे। 7 नवम्बर 1967 को विशाल प्रदर्शन हुआ। यह प्रदर्शन देश की राजधानी दिल्ली में हुआ और इसमें दस लाख नर-नारियों ने भाग लिया था। आर्य समाज ने सर्वप्रथम सत्याग्रह का प्रारम्भ किया। आर्य समाज के दो उच्च कोटि के नेता जिसमें श्री रामगोपाल शालवाले महामंत्री सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा और हरियाणा के प्रसिद्ध आर्य समाजी नेता आचार्य भगवान देव के नेतृत्व में अलग-अलग आर्य समाज के प्रथम जत्थे सत्याग्रह के लिये गये। आचार्य भगवान देव (स्वामी ओमानन्द) ने अपने 500 सत्याग्रहियों के साथ तत्कालीन गृहमंत्री श्री नन्दा जी की कोठी पर सत्याग्रह का शुभारम्भ किया था दूसरे दल का नेतृत्व ला॰ रामगोपाल शालवाले ने किया। इस सत्याग्रही दल में गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय के 15 ब्रह्मचारियों ने आर्य समाज की ओर से सत्याग्रह का प्रथम जत्थे के रूप में था सत्याग्रह में भाग लिया। इस जत्थे में ला॰ रामगोपाल सहित लगभग 500 सत्याग्रही थे उन सभी सत्याग्रहियों को गुडगाँवा (हरियाणा) जेल में भेंज दिया गया। वहाँ पर गुरुकुल कांगड़ी के समस्त ब्रह्मचारियों ने सामवेद परायण यज्ञ शुरू किया उस यज्ञ में मुख्य यजमान लाला रामगोपाल शालवाले थे। उन ब्रह्मचारियों में श्री विश्ववर्द्धन वेदालंकार, देवदत्त वेदालंकार, सत्यपाल वेदालंकार, श्री वेदसुमन विद्यालंकार रघुवीर वेदालंकार, श्री सुमेधा वेदालंकार, श्री जहान सिंह वेदालंकार, मनमोहन सिंह विद्यालंकार, श्री वीरपाल विद्यालंकार, श्री देवराज विद्यालंकार, आदि विद्यालंकार एवं वेदालंकार 13 वी और 14 वी के छात्र थे।

गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय के कुछ ब्रह्मचारी जो वेदालंकार करके एम.ए. में पढ़ रहे थे, जिनमें सर्व श्री जयदेव वेदालंकार (स्वयं लेखक) और श्री दयानन्द शास्त्री जो वेद से एम॰ए॰ कर रहें थे।

गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय का यह दल आर्य वानप्रस्थ आश्रम के प्रधान महात्मा हरप्रकाश के नेतृत्व में 23 दिसम्बर 1967 को चांदनी चौकी दिल्ली में सत्याग्रह करने के लिए गया। इस दल में लगभग 100 वानप्रस्थी भी थे। उस दिन लगभग दस हजार सत्याग्रहियों ने दिल्ली के विभिन्न क्षेत्रों से सत्याग्रह किया था। आर्य समाज के इन सत्याग्रहियों को तिहाड़ जेल के बी. ब्लाक में एक मास के कारावास के रूप में भेंजा गया उस समय तिहाड़ जेल में लगभग दो हजार सत्याग्रही थे जेल मे दूसरे दिन महात्मा हर प्रकाश जी ने जयदेव वेदालंकार को बुलाकर पूछा कि एक महीना क्या प्रोग्राम किया जाय विचार करके मुझे बतलाओ। डॉ० जयदेव वेदालंकार ने महात्मा हरप्रकाश जी से कहा कि प्रतिदिन एक घण्टा यजुर्वेद पारायण यज्ञ और एक घण्टा भजन और उपदेश का कार्यक्रम रख लेते है। उसी दिन सायंकाल जब दिल्ली के आर्य समाजी लोग मिलने के लिये आये तो महात्मा हरप्रकाश जी ने एक क्विन्टल सामग्री दो कनस्तर देशी घी पांच क्विन्टल समिधा तथा यज्ञ के अन्य सभी समान लिखकर उन लोगों को दे दिया उसी रात्रि में यज्ञ का सभी सामान जेल में भेज दिया गया उस यज्ञ का संयोजक, जयदेव वेदालंकर को बनाया गया। यज्ञ का ब्रह्मा ब्रह्मचारी सतीश को मनोनीत किया गया। इस प्रकार 25.12.1967 को यजुर्वेद पारायण यज्ञ प्रारम्भ हो गया यज्ञ के पश्चात् प्रतिदिन एक घण्टे तक वेद प्रवचन भी होता था। इस यज्ञ में सनातन धर्म प्रमुख विद्वान् जो उस समय जेल में ही थे उनके प्रवचन भी इस यज्ञ में होते रहें उनमें सर्व श्री माध्वाचार्य, श्री करपात्री जी और स्वामी प्रकाशानन्द जी का नाम उल्लेखनीय है। 25 दिसम्बर 1967 को सायंकाल स्वामी श्रद्धानन्द दिवस के रूप में जो दिल्ली में 25 दिसम्बर को ही मनाया जाता है। एक शोभा यात्रा का आयोजन किया गया। यह शोभायात्रा जयदेव वेदालंकार के संयोजकत्व में प्रारम्भ हुई तिहाड़ जेल के सभी वार्डो में होती हुई जा रही थी कि जेल के अधिकारियों ने कुछ कैदियों को उकसाकर सत्याग्रहियों पर पथराव कराया कुछ एक सत्याग्रहियों को चोटें आयी। स्वामी प्रकाशानन्द, महात्मा हर प्रकाश तथा अन्य आर्य एवम् हिन्दू नेताओं ने समझा बुझाकर सत्याग्रहियों को शांत किया।

धीरे-धीरे यज्ञ में भीड़ एकत्रित होने लगी। लगभग यज्ञ में दो हजार सत्याग्रही एकत्रित हो जाते थे सम्भवतः इससे जेल अधिकारी घबरा गए। इसी कारण जयदेव वेदालंकार के साथ गुप्तचर लगा दिया गया। वह एक युवक ही था, अत्याधिक वाकपटु था, उसने जल्दी ही जयदेव वेदालंकार से मित्रता एवं सेवाभाव दिखलाकर उनका मन जीत लिया। उसने लगभग अपना नाम रमेश वर्मा बतलाया था संभवतः यह उसका नाम कल्पित ही रहा होगा। उसने सेवक के रूप में अपने आपको प्रस्तुत किया वह जयदेव वेदालंकार के प्रतिदिन कपड़े धोने लगा। अन्य सेवा में भी तत्पर रहता था।

लगभग एक सप्ताह के पश्चात् ही तिहाड जेल के जेलर महोदय का यह प्रस्ताव आया कि आप एम.ए. के विद्यार्थी है, आपके ठहरने का प्रबन्ध अलग से आधुनिक सुविधा से युक्त इसी ब्लाक में अन्यत्र किया जाता है आप यह हमारी सेवा स्वीकार करें। जयदेव वेदालंकार के मन में अलग से रहने का विचार इस दृष्टि से आया भी कि लगभग 20 जनवरी को सजा समाप्त होगी। और 8 मार्च से उस समय गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय में एम.ए. की कक्षायें प्रारम्भ हो जाती थी। इसलिए अध्ययन की सुविधा देखकर उन्होंने जेलर महोदय की स्वीकृति भी दे दी थी। परन्तु उन्होंने यह भी सोचा कि हमने महात्मा हरप्रकाश के नेतृत्व में सत्याग्रह किया है इसलिए उनकी स्वीकृति अवश्य लेनी चाहिए। इस विचार से जब जयदेव वेदालंकार ने महात्मा हरप्रकाश से स्वीकृति लेने की बात की तो महात्मा हरप्रकाश ने जेलर की इस सुविधा के पीछे क्या चाल हो सकती है वह विस्तारपूर्वक समझायी उन्होंने कहा कि तुम क्योंकि यज्ञ के संयोजक हो और यहाँ पर एक अच्छी भीड़ को आकर्षित कर लेते हो इसलिए यहाँ जेल के अधिकारी अन्दर से जयदेव वेदालंकार तुमसे घबराने लग गये है। यह उनकी फूट डालने की पहली चाल है। जयदेव वेदालंकार

यह बात सुनकर आश्चर्यचकित रह गये, क्योंकि गुरुकुल के ब्रह्मचारी सीधे और सरल होते है व्यावहारिक ज्ञान उनको बहुत कम होता है। इन्होंने महात्मा हर प्रकाश जी का धन्यवाद किया और कहा कि मैं ऐसा कोई कार्य नहीं करूंगा जो हममे फूट का कारण बन जायें। दूसरे दिन जब जयदेव वेदालंकार से मिलने आये तो उन्होंने यह कहकर मना कर दिया कि मुझे आप क्षमा करेंगे मैं आपकी विशेष सुविधाओं का उपयोग नहीं कर पाऊंगा। जेलर चुपचाप सनुकर चला गया। दूसरे दिन ही जो रमेश शर्मा बनकर वेदालंकार की सेवा में तत्पर रहता था वह अचानक गायब हो गया।

जेलर महोदय ने अपना रुख बदलकर दूसरे दिन आदेश जारी किया कि जयदेव वेदालंकार सहित आर्यवानप्रस्थाश्रम के सभी सत्याग्रहियों का स्थानान्तरण अम्बाला जेल में हो गया है। डॉ॰ जयदेव वेदालंकार ने जेलर से कहा आप ऐसा नहीं कर सकते है, क्योंकि इस यजुर्वेद पारायण यज्ञ का प्रारम्भ हमने आप से पूछकर किया था आप कर्मकाण्ड के विद्वानों से यह पूछ सकते है कि किसी भी वेद का जब पारायण यज्ञ होता है तो उसकी पूर्णाहुति भी उसी जगह हुआ करती है अन्यत्र वह यज्ञ नहीं ले जाया जा सकता है इसलिए उन्होंने जेलर महोदय से कहा कि यदि आप ऐसा करेंगे तो यह हमारे धर्मानुष्ठान में हस्तक्षेप होगा। इसका परिणाम होगा कि यहाँ जेल में दो हजार व्यक्ति आमरण अनशन करना प्रारम्भ कर देगें। जेलर ने इस संवाद के पश्चात् स्थानान्तरण का अपना आदेश वापिस ले लिया। डॉ॰ जयदेव वेदालंकार ने कहा कि मैं आपको यह आश्वासन देता हूँ कि आप जिस बात से डर रहें है कि यहाँ जेल में कोई उपद्रव नहीं हो जाय उसकी जिम्मेदारी में लेता हूँ। यज्ञ तो शान्ति प्रदान करता है उपद्रव नहीं करवाता।

यहाँ यह ज्ञातव्य है कि सायं काल के समय एक अलग से सभा होती थी उसमें भी आर्य समाज के भजनोपदेशक सनातन जगत के विद्वान् एवं प्रवक्ता भाग लेते थे। उस सभा में कई बार आर्य समाज और सनातन धर्मी बन्धुओं में आपस में कई बार टकराव हो जाता था। इस सभा का संचालन गुरुकुल झज्जर के स्नातक डॉ॰ योगानन्द शास्त्री, जो इस समय दिल्ली सरकार में मंत्री पद को अलंकृत किये हुए हैं करते थे।

गौ-रक्षा आन्दोलन जब अपने शिखर पर पहुँच गया था उस समय गौ-समिति के सदस्य सरकार के बहकानें में आ गए। सरकार जब झुकने ही वाली थी उस समय गौ-रक्षा समिति के सदस्यों ने सरकार की यह बात मान ली कि गौ रक्षा के सम्बन्ध में समस्त पहलुओं पर विचार करने के लिए भारत सरकार एक अखिल भारतीय गौ-रक्षा समिति का गठन करेंगी। इस प्रकार भारत सरकार के प्रतिनिधि और गौ-रक्षा समिति के सदस्य परस्पर वार्तालाप के द्वारा इस समस्या पर समाधान निकाल लेंगे।

यहाँ यह ज्ञातव्य है कि उस समिति में गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय के पूर्व कुलपति डॉ॰ रधुवीर सिंह शास्त्री भी थे। उन्होंने गुरुकुल के तत्कालीन कुलपति आचार्य प्रियव्रत वेद वाचस्पति से निवेदन किया था कि किसी विद्वान् से इस सम्बन्ध में एक निबन्ध तैयार कराया जायें जिसमें गौ-रक्षा के महत्व को वेदों के प्रमाणों तथा अन्य भारतीय वाङ्मय मे जो वर्णन प्राप्त होता है, इसका विस्तापूर्वक वर्णन किया गया हो। इसी प्रकार गौ-रक्षा के अन्य पहलुओं, गौ के दूध, गोबर और गौ के कृषि की दृष्टि से उपयोगी आदि विषयों को लेकर विचार मन्थन उस निबन्ध में किया हुआ होना चाहिए।

यह विस्तृत निबन्ध डॉ॰ जयदेव वेदालंकार ने ही उस समय तैयार किया था। इसके कुछ वर्षों पश्चात् वैदिक वांगमय में गौ हत्या या गौरक्षा के नमा से वह लधु ग्रन्थ के रूप में प्रकाशित भी किया गया था।

गुरुकुल कांगड़ी की स्थापना के मूल कारणों में त्याग तपस्या, देश प्रेम और राष्ट्र भक्ति थी। इसीलिए ऐंसे किसी भी आन्दोलन में जिसमें इस उपर्युक्त भावनाओं का दर्शन होता हो उनमें गुरुकुल कांगड़ी के छात्र कभी भी संस्था से पीछे नहीं रहें है अपितु उन्होंने बढ़-चढ़कर ऐसे आन्दोलनों में भाग लिया है।

सन्दर्भ संकेत

1. पं॰ इन्द्र विद्यावाचस्पति- मेरे पिता पृ. 130,133
2. सी.ई.डब्ल्यू सैण्ड्स- आर्य समाज इन दी यूनाईटेड प्रविन्सेस-1912
3. आर्य समाज का इतिहास भाग- 4 पृ.सं. 207
4. स्वामी श्रद्धानन्द- श्री सत्यदेव विद्यालंकार पृ.सं. 403
5. सातवलेकर अभिनन्दन ग्रन्थ पृ.सं. 31
6. आर्य समाज एण्ड इट्स डिक्टेटर्स पृ.सं. 2/111
7. आर्य समाज एण्ड इट्स डिक्टेटर्स भाग-2 पृ.सं. 110-(मुंशीराम जिज्ञासु तथा रामदेव)
8. वहीं पृं. सं. 110
9. होम डिपार्टमेन्ट पोसिडिंग अप्रैल 1912 सं. 8
10. गदर की गूंज और कामागटामारू करोमांच, दिल्ली 1977 पृ.सं. 7 - प्रीतम सिंह पंछी
11. मेरे पिता- इन्द्र विद्यावाचस्पति
12. आर्य समाज का इतिहास भाग-4 मेरे पिता।
13. मेरे पिता- पृ.सं.- 150-51
14. मेरे पिता पृ.सं. 153-54
15. मेरे पिता पृ.सं. 149
16. मेरे पिता पृ.सं. 152-53
17. सिंहावलोकन भाग-1, 1978 पृ.सं. 30
18. सिंहावलोकन भाग-1 पृ.सं. 44-45 यशपाल
19. डॉ॰ सत्यव्रत सिद्धान्तालंकार व्यक्तित्व एवं कृतित्व पृ.सं. 147
20. गदर की गूंज दिल्ली 1977 पृ.सं. 6 लेखक-प्रीतम सिंह पंछी
21. आर्य समाज का इतिहास द्वितीय भाग-इन्द्र विद्यावाचस्पति
22. मेरी जीवन यात्रा सत्यव्रत सिद्धान्तालंकार पृ.सं. 161
23. मेरी जीवन यात्रा सत्यव्रत सिद्धान्तालंकार पृ.सं. 161
24. हैदराबाद सत्याग्रह का इतिहास- लेखक जयदेव शर्मा विद्यालंकार प्रथम द्वितीय अध्याय
25. हैदराबाद सत्याग्रह का इतिहास- पृ.सं. 100
26. गुरुकुल की आहुति पृ.सं. 4 ले. क्षितीश वेदालंकार
27. गुरुकुल की आहुति पृ.सं. 22
28. गुरुकुल की आहुति पृ.सं. 29
29. गुरुकुल की आहुति पृ.सं. 36,37
30. गुरुकुल की आहुति पृ.सं. 47-48
31. गुरुकुल की आहुति पृ.सं. 48
32. गुरुकुल की आहुति पृ.सं. 58,59
33. गुरुकुल की आहुति पृ.सं. 63
34. गुरुकुल की आहुति पृ.सं. 82-84
35. आर्य समाज का इतिहास भाग-5 पृ.सं. 186
36. वही पृ.सं. 1888

अष्टम-अध्याय

विभिन्न क्षेत्रों में स्नातकों का योगदान

जिस समय भारत पराधीनता की बेड़ियों में जकड़ा हुआ था सर्वत्र लार्ड मैकाले की शिक्षा प्रणाली का बोलबाला था, सभी महाविद्यालयों और विश्वविद्यालयों में अंग्रेजी माध्यम से शिक्षा दी जा रही थी, यूरोपीय संस्कृति और जीवन पद्धति को प्रतिष्ठा का पद प्रदान किया जा रहा था और इन विश्वविद्यालयों से दीक्षित स्नातकों में अपने देश, जाति, राष्ट्र, समाज व धर्म के प्रति अनादर की भावना उत्पन्न की जा रही थी, ऐसे समय में जगद्वन्दनीय महर्षि दयानन्द सरस्वती द्वारा प्रतिपादित प्राचीन गुरुकुल शिक्षा प्रणाली को मूर्त रूप देने के लिए कुलपिता अमर शहीद स्वामी श्रद्धानन्द जी महाराज ने सन् 1900 ई० में गुरुकुल की स्थापना गुजरां वाला में तथा 1902 में कांगड़ी में की उनके सम्मुख इस संस्था की स्थापना का प्रधान उद्देश्य जहाँ एक ओर अंग्रेजों द्वारा प्रचलित शिक्षा प्रणाली के विरोध में मातृभाषा द्वारा शिक्षा देने वाली एक नयी प्रणाली का सूत्रपात करना था, वहाँ दूसरी ओर गुरुकुलीय शिक्षा के माध्यम से ऐसे नागरिक तैयार करना था जो स्वतंत्रता, मानसिक स्वाधीनता एवं राष्ट्रीयता की भावना से ओत-प्रोत, चरित्रवान् तथा वैदिक धर्म, आर्य संस्कृति एवं भारतीय सभ्यता के रंग में रंगे हुए हो और जिनमें भारतीय संस्कृति के पुनरुद्धार एवं लोक सेवा की तड़प हो। इन्हीं आदर्शों को लक्ष्य में रखकर गुरुकुल का संचालन किया गया और इस कार्य में काफी सफलता मिली।

गुरुकुल की स्थापना हुए 100 वर्ष पूरे हो गये हैं। स्वामी श्रद्धानन्द जी द्वारा रोपे गये नन्हें से पौधे ने विशालकाय वृक्ष का रूप धारण कर लिया है। इस अवधि में गुरुकुल ने देश, जाति व समाज को अपने रचनात्मक कार्यों द्वारा राष्ट्रीय नव-निर्माण, सामाजिक, धार्मिक व साहित्यिक क्षेत्रों में महत्त्वपूर्ण योगदान किया है और कुलमाता के गौरव को उत्तरोत्तर बढ़ाया है। गुरुकुल के उन स्नातकों द्वारा विभिन्न क्षेत्रों में की गई सेवाओं का योगदान प्रस्तुत है:-

आर्य समाज के क्षेत्र में

जिन आदर्शों को लेकर गुरुकुल की स्थापना की गई थी, उनमें से एक आर्य समाज तथा वैदिक धर्म के प्रचार-प्रसार के लिए उच्चकोटि के प्रचारक उपदेशक एवं कार्यकर्त्ता तैयार करना भी था। इस दिशा में गुरुकुल के स्नातकों ने महत्वपूर्ण योगदान दिया है। गुरुकुल की स्थापना आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब की ओर से की गई थी, इसलिए पंजाब प्रान्त में सामाजिक व धार्मिक जागृति उत्पन्न करने के लिए गुरुकुल के विभिन्न स्नातकों ने प्रतिनिधि सभा के कार्यों में विशेष भाग लिया तथा अपने-अपने ढंग से समूचे देश में आर्य समाज का कार्य किया।

श्री इन्द्र विद्यावाचस्पति आर्य समाज के सक्रिय कार्यकर्त्ता थे जो वर्षों तक आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब और सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा दिल्ली के मंत्री व प्रधान आदि पदों पर बड़ी योग्यता से कार्य करते रहे। उन्होंने समय-समय पर आर्य जगत् का सही नेतृत्व व मार्गदर्शन किया। वर्षों तक गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय के कुलपति एवं मुख्याधिष्ठाता के रूप में कार्य करते हुए संस्था को प्रगति पथ पर अग्रसर करके आर्य समाज की अभूतपूर्व सेवा की। उन्होंने आर्य रक्षा समिति, सत्यार्थ-प्रकाश रक्षा-समिति आदि का संचालन बड़ी सफलता के साथ किया।

श्री युधिष्ठर विद्यालंकार (व्रतानन्द सरस्वती) ने आजन्म ब्रह्मचारी रहते हुए आर्यसमाज की सेवा का व्रत लिया। प्रारम्भ में कुछ समय आर्य-प्रतिनिधि सभा पंजाब के उपदेशक रहे, फिर बाद में वे चित्तौड़ में गुरुकुल की स्थापना कर महर्षि दयानन्द के स्वप्न को साकार किये जाने हेतु आर्ष-पद्धति से शिक्षा-दीक्षा देते रहे।

श्री बुद्धदेव विद्यालंकार 'विद्यामार्तण्ड' प्रतिनिधि सभा में उपदेशक थे और फिर कई वर्षों तक सभा के प्रधान के रूप में भी प्रशसनीय कार्य किया। उत्तर व दक्षिण भारत में सर्वत्र वे शास्त्रार्थ महारथी के रूप में विख्यात हुए। कुछ वर्ष तक गुरुकुल कांगड़ी के आचार्य भी रहें। उन्होंने मेरठ के पास गुरुकुल प्रभात आश्रम की स्थापना की। वे अपने अन्तिम दिनों में स्वामी समर्पणानन्द जी के नाम से जाने जाते थे। पं० यशपाल जी सिद्धान्तालंकार ने पंजाब प्रतिनिधि सभा के वेद प्रचार विभाग के अधिष्ठाता और महोपदेशक के रूप में प्रशंसनीय कार्य किया है उन्होंने धर्म प्रचार के लिये आसाम व वर्मा में भी कार्य किया। इसके साथ ही साथ कन्या गुरुकुल देहरादून के प्रबन्ध में भी उनका पूर्ण सहयोग रहता था।

विद्यामार्तण्ड श्री धर्मदेव सिद्धान्तालंकार (स्वामी धर्मानन्द सरस्वती) ने ग्यारह वर्षो तक सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा के सहायक मंत्री धर्मार्थ सभा के मंत्री तथा प्रधान के रूप में उल्लेखनीय कार्य किया उन्होंने दक्षिण भारत में 14 आर्य समाजों की स्थापना की तथा हिन्दी व वैदिक धर्म के प्रचार व प्रसार का कार्य बड़ी सफलता के साथ सम्पन्न किया। कई ऐसे अवसर भी आए जब उन्हें दक्षिण के संस्कृत पण्डितों से शास्त्रार्थ करना पड़ा, ऐसे समय में उनका संस्कृत व दक्षिणी भाषाओं का पाण्डित्य बहुत ही सहायक सिद्ध हुआ। विश्व वेद परिषद् के प्रधान के रूप में आर्य समाज व वैदिक धर्म की अभिवृद्धि के लिए उनकी सेवाएं उल्लेखनीय है।

श्री प्रियव्रत वेद वाचस्पति ने पंजाब आर्य प्रतिनिधि सभा के ओजस्वी महोपदेशक के रूप में ही नही, बल्कि गुरुकुल विश्वविद्यालय के आचार्य एवं कुलपति तथा दयानन्द उपदेशक विद्यालय के आचार्य के रूप में भी अच्छी ख्याति प्राप्त की। वैदिक सिद्धान्तों पर सुलझे हुए भाषण, मधुरभाषी एवं प्रभावशाली वक्ता होने के कारण उनके भाषण आर्य-जगत् में बहुत ही प्रसिद्ध है।

श्री भीमसैन विद्यालंकार ने अनेक वर्षों तक पंजाब आर्य प्रतिनिधि सभा के मंत्री के रूप में अभिनन्दनीय कार्य किया। स्नातक होने के बाद उन्होंने एक वर्ष मैसूर में भी वैदिक धर्म के प्रचार और दलितोद्धार आदि का कार्य किया तथा वर्षों तक कोल्हापुर में वैदिक धर्म का प्रचार बड़ी योग्यता से किया।

श्री धर्मवीर वेदालंकार ने 5 वर्ष तक आर्य समाज शिमला के पुरोहित के रूप में और उसके बाद कई वर्षों तक भारतीय श्रद्धानन्द ट्रस्ट के संयोजक मंत्री के रूप में दिल्ली व बिहार के रांची आदि स्थानों में दलित वर्ग तथा भीलों के उद्धार का अत्यन्त प्रशंसनीय कार्य किया।

श्री समरसिंह वेदालंकार लगभग 17 वर्ष तक आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के महोपदेशक रहें और काफी समय तक हरियाणा वेद प्रचार मण्डल के अध्यक्ष पद पर कार्य करते रहें। दो वर्ष तक सभा के पत्र "बलिदान" का भी संपादन कार्य किया। पंजाब में प्रसिद्ध एवं कुशल उपदेशक के रूप में कार्य किया।

श्री नारायणदत्त विद्यालंकार पानीपत के कुशल वैद्य एवं आर्य समाज के प्रभावशाली कार्यकर्त्ता प्रसिद्ध है।

पं० हरिशरण सिद्धान्तालंकार आर्य संस्कृति के त्यागी तपस्वी एवं सुप्रसिद्ध विद्वान्, प्रचारक के रूप में प्रसिद्ध है। व्याख्यानों और वेद कथाओं के लिये वे दिल्ली की आर्य जनता में अधिक प्रसिद्ध रहें।

श्री गुरुदत्त सिद्धान्तालंकार वर्षो तक आर्य प्रतिनधि सभा पंजाब और आर्य प्रादेशिक सभा के अधीन प्रचार कार्य करते रहें।

श्री चन्द्रगुप्त वेदालंकार कुछ समय आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के उपदेशक रहें और अपने ओजस्वी भाषण से जनता को प्रभावित किया।

श्री दीनानाथ सिद्धान्तालंकार एक सुयोग्य एवं ख्याति प्राप्त आर्योपदेशक के रूप में सामाजिक, धार्मिक व समाज सुधार सम्बधी प्रवृत्तियों में पूर्ण सहयोग देते रहें। शुद्धि एवं विधवा विवाह पर सार्वजनिक भाषण देने के कारण अपने विरोधियो का लाठी-प्रहार भी सहा।

श्री पं० सुखदेव दर्शनावाचस्पति आर्य जगत् के जाने माने वक्ता एवं प्रचारक के रूप में प्रसिद्ध है। आप पंजाब, उत्तर प्रदेश, बंगाल, महाराष्ट्र, वर्मा आदि में वैदिक धर्म का प्रचार करते रहें। आपने गुरुकुल कांगड़ी में वर्षों तक शिक्षाध्यक्ष उपाचार्य आदि महत्वपूर्ण पदों पर सफलतापूर्वक कार्य किया है।

डॉ० रामनाथ वेदालंकार आर्य जगत् में अपने वेद विषयक गवेषाणापूर्ण एवं ज्ञानवर्द्धक भाषणों के लिए प्रख्यात है। आपने धनोपार्जन की चिन्ता न करके छात्रकाल से सेवाकाल की समाप्ति तक का सारा जीवन गुरुकुल की सेवा में ही व्यतीत कर दिया। आप गुरुकुल में वेदोपाध्याय संस्कृत विभागाध्यक्ष आचार्य आदि के पदों पर कुशलतापूर्वक कार्य करते रहें पंजाब विश्वविद्यालय की महर्षि दयानन्द वैदिक अनुसंधान पीठ के अध्यक्ष के रूप में बड़े अनुसंधान का कार्य किया। संप्रति आर्य समाज वैदिक साहित्य की सेवा में लगे हुये है। क्षितीश वेदालंकार ने 1942 में सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा के तत्वाधान में मध्यप्रान्त बरार में तथा 1947 में आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के अधीन प्रचारक के रूप में कार्य करते हुए वेद का सन्देश जन-जन तक पहुंचाने में महत्वपूर्ण योगदान किया। आपके भाषणों में आकर्षण शक्ति रहने से उसका समाचार पाते ही दूर-दूर से लोग आकर उनका रसास्वादन करते रहें। आपने हैदराबाद आर्य सत्याग्रही जत्थे का नेतृत्व करके छः माह जेल यात्रा भी की। गुरुकुल कांगड़ी के उत्सव पर आपके भाषण सुनने योग्य होते थे। उनमें से 'हिमालय जल रहा है' भाषण तो आज भी आपकी ओजस्वी वाणी की याद दिलाता है।

डॉ० हरिप्रकाश आयुर्वेदालंकार, श्री मनोहर विद्यालंकार, श्री सत्यदेव विद्यालंकार, आदि स्नातकों ने आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब में विभिन्न पदों पर कार्य करते हुए आर्य समाज व गुरुकुल की उन्नति में अपना अमूल्य योगदान किया। डॉ० हरिप्रकाश कई वर्षों तक सभा के मंत्री तथा श्री मनोहर विद्यालंकार उप-प्रधान रहें श्री सत्यभूषण वेदालंकार श्री रामप्रसाद वेदालंकार श्री विश्ववर्धन वेदालंकार, श्री प्रकाशचन्द्र वेदालंकार आदि स्नातकों ने आर्य समाज के कार्यों में सक्रिय योगदान दिया।

डॉ० अनन्तानन्द आयुर्वेदालंकार श्री चन्द्रगुप्त वेदालंकार, श्री धीरेन्द्र विद्यालंकार, श्री उदयवीर (विराज) वेदालंकार, श्री सतीश विद्यालंकार आदि स्नातकों ने हैदराबाद के आर्य सत्याग्रह में सक्रिय भाग लेकर जेल यात्रा की।

उत्तर प्रदेश आर्य प्रतिनिधि सभा को सुगठित और प्रबल बनाने में श्री पं० धर्मपाल विद्यालंकार का योगदान अविस्मरणीय है। आप कई वर्षों तक सभा के प्रधान कार्यालय में संचालक व सहायक मंत्री के रूप में कार्य करते रहें। आपने "आर्यमित्र" के अवैतनिक संपादक के पद पर भी कार्य किया। आर्य प्रतिनिधि सभा की ओर से आपने हरिद्वार में आर्य समाज मन्दिर का निर्माण कराया आर्य प्रतिनिधि सभा उत्तर प्रदेश की गतिविधियों में डॉ० निरूपण विद्यालंकार (मेरठ) तथा श्री सुरेश चन्द्र वेदालंकार (गोरखपुर) ने सक्रिय रूप से भाग लिया।

दक्षिण भारत में गुरुकुल के अनेक सुयोग्य स्नातकों ने वैदिक धर्म प्रचार, समाज सुधार और राष्ट्रभाषा प्रसार का प्रशंसनीय कार्य किया है। इनमें श्री सत्यव्रत सिद्धान्तालंकार, पं० केशवदेव सिद्धान्तालंकार, पं० मदनमोहन विद्यासागर और पं० भीमसेन विद्यालंकार इत्यादि का नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय है।

श्री सत्यव्रत जी और पं॰ देवेश्वर जी ने बंगलौर (मैसूर) राज्य में लगभग पांच वर्ष रहकर वैदिक धर्म के प्रचार और राष्ट्रभाषा के प्रसार के अतिरिक्त बंगलौर में दयानन्द ब्रह्मचर्य आश्रम की स्थापना की थी। पं॰ केशवदेव सिद्धान्तालंकार ने आन्ध्र प्रदेश और मद्रास में जो धार्मिक व सामाजिक कार्य किया है वह उल्लेखनीय है। आपने आर्य समाज व वैदिक धर्म के प्रचार का कार्य बड़ी लगन के साथ किया। आपके सद् प्रयत्नों से तमिल भाषा प्रदेश और आन्ध्र में 15 आर्य समाजों की स्थापना हुई।

दक्षिण केशरी श्री विनायक राव विद्यालंकार विद्यामार्तण्ड ने हैदराबाद आर्य प्रतिनिधि सभा के सर्वमान्य नेता और प्रधान के रूप में दक्षिण भारत में धार्मिक जागृति लाने का जो अद्भुत कार्य किया है। वह सदा स्मरणीय रहेगा। हैदराबाद आर्य सत्याग्रह की सफलता का श्रेय अधिकतर उन्हीं को है।

पं॰ मदन मोहन विद्यासागर अपनी विद्वता और समाज सेवा के कारण हैदराबाद में अधिक लोकप्रिय है। आप दक्षिण में सार्वदेशिक सभा की ओर से आर्य समाज के प्रमुख प्रचारक, ऋषि के भक्त और ओजस्वी प्रवक्ता के रूप में प्रसिद्ध है। डॉ॰ महेश विद्यालंकार, डॉ॰ जयदेव वेदालंकार, रामप्रसाद वेदालंकार, रधुवीर वेदालंकार और वीरपाल वेदालंकार आदि ने भी आर्य समाज का प्रसार किया।

डॉ॰ विजयवीर विद्यालंकार हैदराबाद में आर्य समाज के प्रमुख कार्यकर्त्ता के रूप में स्वामी सोमानन्द जी पूर्व नाम नरेन्द्र जी के पथ प्रदर्शन में आर्य समाज व वैदिक धर्म के लिये सदा प्रसिद्ध रहें हैं।

गुरुकुल के स्नातकों का विदेशों में वैदिक प्रचार

गुरुकुल के स्नाताकों ने विदेशों में आर्य समाज के प्रचार कार्य में अच्छा योगदान किया है। ये स्नातक कई देशों में जाकर बस गये और वहीं वैदिक धर्म के प्रचार, पुरोहित तथा हिन्दी अध्यापक के रूप में अपनी बहुमूल्य सेवाएं दी है।

आर्य प्रतिनिधि सभा फिजी के निमंत्रण पर 22 दिसम्बर 1927 को फिजी की राजधानी सूवा में गुरुकुल के सुयोग्य स्नातक श्री पं॰ अमीचन्द विद्यालंकार ने पदार्पण किया और स्थायी रूप से वहाँ जाकर बस गये। आपने अपने कार्यों से सारे द्वीप को प्रभावित किया। आपने वहाँ वैदिक धर्म और शिक्षा का प्रचार इतनी योग्यता से किया कि वहाँ की प्रतिनिधि सभा, जनता व सरकार को भारी सन्तोष हुआ। आपकी योग्यता से प्रभावित होकर लोग अपने बच्चों को भारत भेजने के लिये अत्यधिक उत्सुक हो गये। तथा बहुत से बालक-बालिकाएं गुरुकुल लौहोका में प्रवेश करने लगें। आप फिजी में शिक्षा प्रसार के जनक माने जाते है। उनसे पहिले वहाँ अंग्रेजी तो क्या हिन्दी पाठशालाओं की भी बड़ी कमी थी। पंड़ित जी ने स्थान स्थान पर डी.ए.वी. स्कूल, हिन्दी पाठशालाएं और आर्य कन्या पाठशालाएं स्थापित की। आज भी फिजी में अधिकतर पाठशालाएं आर्य समाज द्वारा संचालित होती है। इसका श्रेय पंड़ित जी को ही है। पंड़ित जी वहाँ की पार्लियामेन्ट के सदस्य भी रहें तथा आजीवन वहाँ के यूरोपियनों और फिजीयनों के बीच आदर पात्र बने रहे।

पूर्व अफ्रीका में आर्य समाज की प्रवृत्ति को चलाने वालों में पं॰ सत्यपाल सिद्धान्तालंकार का नाम सदा श्रद्धा से स्मरण किया जायेगा। पं॰ सत्यपाल जी सन् 1921 में स्नातक हुए और सन् 22 से 24 तक वर्मा में वैदिक प्रचार का कार्य करते रहें। संन् 1927 में वे पूर्व अफ्रीका गये और वहाँ नैरोबी को केन्द्र बनाकर 30-35 वर्षों तक कार्य करते रहें। पूर्व अफ्रीका के परिवारों में निःस्वार्थ भाव से उन्होंने आर्य समाज का संदेश पहुंचाया। वहाँ हिन्दी तथा संस्कृत के वर्ग चलाये अमीर व गरीब के भेदभाव के बिना पंडित जी प्रत्येक घर में सेवा करने पहुंच जाते थे स्थानीय मांसाहारी अफ्रीका प्रजा के बीच उबले हुए कन्दमूल खाकर वे महीनों कार्य करते रहे। किसी भी स्थान में पहुंचने में अपमान की परवाह न करके इस विद्वान्

ने प्रजा की निःस्वार्थ सेवा में अपना जीवन खपा दिया। बौद्ध और ईसाई मिशनरियों की सेवा भावना से पंडित जी कि सेवा कार्य किसी भी दृष्टि से कम नहीं आँका जा सकता। सारे पूर्व अफ्रीका की जनता में उन्होंने पिता का सम्मान पाया और गुरुकुल के नाम को उज्ज्वल किया।

पं० ईश्वरदत्त विद्यालंकार ने यूरोप और अफ्रीका के देशों में गुरुकुल की प्रतिष्ठा को बढ़ाया। आप विदेशों में अधिक दिन नहीं ठहरे परन्तु आपके योग और धुनर्विद्या के अद्भुत प्रदर्शनों की स्मृति आज भी वहाँ की जनता के मन में अंकित है।

अफ्रीका, कीनिया, युगांडा और टांगानीका के प्रदेशों में जाकर स्थायी रूप से कार्य करने वाले कई स्नातक बंधुओं जो वहाँ पर आर्य समाज की पाठशालाओं में कार्य करते हुए वैदिक सिद्धान्तों और हिन्दी भाषा का अध्यापन कर रहें है और साथ ही आर्य समाज के साप्ताहिक सत्संगों में व्याख्यान देने तथा धार्मिक यज्ञ संस्कार आदि करवाने का कार्य करते रहे हैं। इनमें श्री सत्येदव वेदालंकार, श्री धर्मेन्द्रनाथ वेदालंकार, श्री देवनाथ वेदालंकार, अमृतपाल वेदालंकार आदि के नाम विशेष उल्लेखनीय है। दारेस्लाम को केन्द्र बनाकर श्री देवनाथ जी वेदालंकार ने पांच से 7 वर्षों तक अच्छा प्रचार किया है। तथा इंग्लैण्ड में भी धर्मेन्द्रनाथ वेदालंकार एवं श्री देवनाथ जी वेदालंकार वैदिक धर्म के प्रचार-प्रसार में संलग्न रहें। पं० श्याम सुन्दर स्नातक भजनोपदेशक के रूप में सिंगापुर-मलाया में प्रचार कार्य के पश्चात् अपनी सेवायें पूर्व अफ्रीका में देते रहें।

मोजाम्बिक के लारेन्स माक्विर्स (मोपुटु) शहर में भारत सेवक समाज के आश्रम में पं० रविशंकर सिद्धान्तालंकार और पं० सुमन्तराय विद्यालंकार ने कई वर्षों तक सुन्दर कार्य किया है वहाँ के वैरागनर में पं० मतिमान वेदालंकार और रोडेशिया के बुलावार्यो नगर में पं० हरिदेव वेदालंकार ने वर्षों तक अध्यापन कार्य किया है।

दक्षिणी अफ्रीका में भारतीयों की बड़ी बस्ती है। वहाँ भारतीय सात लाख है। 1947 में पं० नरदेव वेदालंकार का आगमन दक्षिणी अफ्रीका में हुआ आपने दक्षिणी अफ्रीका में आर्य समाज और हिन्दी शिक्षा संघ (दक्षिण अफ्रीका) की स्थापना की जिसके सभापति रहे। आप आर्य प्रतिनिधि सभा के अन्तर्गत वेद निकेतन और वेद पुरोहित मण्डल के प्रधान भी रहें है। वहाँ पर आपने 25 वैदिक पुरोहितों को प्रशिक्षित किया है। पंड़ित जी ने वहाँ प्रचार साहित्य का निर्माण भी किया है।

दक्षिण अफ्रीका में 1935 से 1945 तक श्री सुधीर कुमार विद्यालंकार ने और उसके बाद अरुण कुमार विद्यालंकार ने भी शिक्षा क्षेत्र में अच्छा कार्य किया इसके अतिरिक्त जिन अन्य स्नातकों ने कुछ समय के लिये विदेशों में जाकर प्रचार कार्य किया है, उनमें श्री सत्यव्रत सिद्धान्तालंकार, श्री बुद्धदेव विद्यालंकार, पं० मदनमोहन विद्यासागर वेदालंकार, श्री दिलीप वेदालंकार आदि प्रमुख है।

श्री सत्यव्रत जी सिद्धान्तालंकार ने आचार्य रामदेव जी के साथ जाकर एक वर्ष के लगभग अफ्रीका में वैदिक धर्म प्रचार का कार्य किया। श्री बुद्धदेव विद्यालंकार ने भी अफ्रीका में एक वर्ष तक वैदिक धर्म का प्रचार बड़े उत्साह के साथ किया। पं० मदनमोहन जी विद्यासागर वेदालंकार ने वर्मा और अफ्रीका में धर्म प्रचार तथा समाज सुधार का कार्य किया। श्री दिलीप वेदालंकार ने भी कुछ पूर्वी अफ्रीका आदि में वैदिक धर्म का प्रचार बड़ी सफलतापूर्वक किया है। ब्रिटिश गयना में श्री श्रुतिकान्त विद्यालंकार आर्य समाज और हिन्दी प्रचार के कार्य में सराहनीय योगदान दे रहे हैं।

साहित्य के क्षेत्र में

स्वामी दयानन्द द्वारा प्रदर्शित पद्धति से वैदिक साहित्य का अनुशीलन कराना एवं वैदिक धर्म के

प्रचार-प्रसार के लिए उच्च कोटि के लेखक व प्रचारक तैयार करना गुरुकुल कांगड़ी का प्रमुख उद्देश्य था। जिस समय भारत वर्ष में गुरुकुल शिक्षा प्रणाली का पुनर्जीवन हुआ था उस समय वेदों के अध्यापनार्थ पंडितों का अत्यन्त अभाव प्रतीत होता था किन्तु अब गुरुकुलों के प्रयत्न से वेद-वेदाङ्ग के पंड़ितों की कमी नहीं है। गुरुकुल के अनेक स्नातकों ने अत्यंत परिश्रम निष्ठा तथा विद्वता के साथ वेदों पर कार्य किया है और कर रहें है तथा वे आधुनिक ज्ञान-विज्ञान एवं नवीन विवेचनात्मक शैली से परिचित होने के कारण वैदिक अनुसंधान कार्य और साहित्य के क्षेत्र में पर्याप्त सफल हुए है।

वैदिक साहित्य

गुरुकुल विश्वविद्यालय के प्रथम स्नातक, प्रसिद्ध साहित्यकार तथा राजनैतिक कार्यकर्त्ता एवं भूतपूर्व कुलपति (स्व०) प्रो० इन्द्रविद्यावाचस्पति ने जहाँ उच्च कोटि की साहित्यिक एवम् ऐतिहासिक कृतियों की रचना की है, वहाँ कुछ वैदिक ग्रंन्थों का प्रणयन भी किया है। स्नातक होने के कुछ समय पश्चात् लिखी "उपनिषदों" की भूमिका और जीवन के अंतिम काल में लिखी "ईशोपनिषद् भाष्य" नामक उनकी रचनाएं अपना विशिष्ट स्थान रखती है।

गुरुकुल विश्वविद्यालय के भूतपूर्व वेदोपाध्याय आर्य समाज के गम्भीर वैदिक विद्वान् प्रो० विश्वनाथ विद्यालंकार ने वेदों का गहन अध्ययन करके "वैदिक पशुयज्ञ मीमांसा" "वैदिक जीवन", "सन्ध्या रहस्य", तथा वैदिक गृहस्थाश्रम नामक ग्रन्थों की रचना की है। इसके अतिरिक्त वैदिक विषयों पर पत्र पत्रिकाओं में आपके लेख प्रसिद्ध है।

पं० चन्द्रमणि विद्यालंकार "पालिरत्न" ने यास्ककृत निरूक्तम की दो खण्डों में अपूर्व व्याख्या प्रस्तुत की है। वह व्याख्या आज भी जबकिं निरूक्त की अनेक हिन्दी तथा संस्कृत टीकाएँ प्रकाशित हो चुकी है, अपना विशिष्ट स्थान रखती है इसके अतिरिक्त "वेदार्थ करने की विधि" तथा "वैदिक स्वराज्य" नामक लघु ग्रन्थ भी आपने लिखे हैं।

सुप्रसिद्ध भाष्यकार पं० जयदेव शर्मा विद्यालंकार विद्या मार्तण्ड भीमांसातीर्थ ने स्वामी दयानन्द का दृष्टिकोण अपनाते हुए चारों वेदों का हिन्दी भाष्य करके आर्य समाज की अपूर्व सेवा की है। "क्या वेदों में इतिहास है" नामक पुस्तक में सुयोग्य विद्वान् ने प्रमाण निर्देश पूर्वक यह दर्शानेका प्रयास किया है कि वेदों में इतिहास नही है। आपने "ऋग्वेद की माधवानुक्रमणी" आदि ग्रन्थों का हिन्दी अनुवाद किया है।

तपोमूर्ति पं० देवराज विद्यावाचस्पति वेदों के धुरन्धर विद्वान् तथा गम्भीर विचारक प्रसिद्ध है। आपका सम्पूर्ण जीवन वेद सेवा में लगा हुआ था। आपकी अग्निहोत्र नामक पुस्तक गुरुकुल से प्रकाशित हुयी है। आपने सन्ध्या की व्याख्या भी लिखी है आप ज्योतिष के भी प्रकाण्ड विद्वान् हैं तथा वैदिक ज्योतिष के सम्बंध में प्रमाणिक लेखक भी हैं। लोकमान्य गंगाधर तिलक की अंग्रेजी रचना "आरोपन" का आपने हिन्दी अनुवाद किया है वेदों में सब समस्याओं का समाधान विद्यमान है। इस विषय पर भी आप लिख चुके हैं।

वेदों के मूर्धन्य विद्वान् स्वामी समर्पणानन्द सरस्वती (पं० बुद्धदेव विद्यालंकार) को कौन नहीं जानता, आपने वेद सम्बन्धी ग्रन्थों का प्रणयन किया है। तथा पंचयज्ञप्रकाश, अध मरुतसूक्तम्, सोम, स्वर्ग, शतपथ में एक पथ। वेद में अधिराष्ट्र दृष्टि से मरुत वीर सैनिक है, इसका नाम गुँजाने वाले सर्वप्रथम आप ही है। आपने "सोम का अर्थ ब्रह्मचारी किया है तथा वेद के तीन नाक या स्वर्ग," ब्रह्मचर्य एवं गृहस्थ एवं वानप्रस्थ आश्रम सिद्ध किया है। उक्त पुस्तकों के अतिरिक्त मान्य विद्वान् ने शतपथ ब्राह्मण भाष्य तथा अथर्ववेद का भाष्य, यद्यपि ये दोनों अपूर्ण है, प्रस्तुत करके प्रशंसनीय कार्य किया है।

गुरुकुल के भूतपूर्व आचार्य अभयदेव जी विद्यालंकार (पं॰ देवशर्मा) ने चारों वेदों में से मंत्र चयन कर भक्ति रस से ओत-पोत्र "वैदिक विनय" तीन खण्डों में लिखी है। इसमें 365 मंत्रों की भावभीनी मधुर व्याख्या है। जिसमें वर्ष में प्रत्येक दिन के लिए एक-एक मंत्र है। ब्राह्मण की गौ तथा वैदिक ब्रह्मचर्य गीत आपकी वैद विषयक अन्य कृतियाँ हैं आपने श्री अरविंद की सीक्रेट ऑफ द वेद नामक अंग्रेजी लेखमाला का जो "आन द् वेद" नाम से भी अरविन्दाश्रम द्वारा प्रकाशित भी हो चुकी है हिन्दी अनुवाद तीन खण्डों में 'वेद रहस्य' नाम से किया है जिसमें हिन्दी के पाठकों के लिये श्री अरविन्द के वेद सम्बंधी विचार सुलभ हो गये हैं।

गुरुकुल के भूतपूर्व कुलपति प्रो॰ सत्यव्रत सिद्धान्तालंकार ने जहाँ समाज शास्त्र, शिक्षा शास्त्र, संस्कृति से संबंध ग्रन्थों का प्रणयन किया है और उन पर मंगला प्रसाद आदि पुरस्कार प्राप्त किये है वहाँ वैदिक साहित्य संबंधी साहित्य की रचना करने का गौरव प्राप्त किया है आप कुछ समय में गुरुकुल में वेदाध्ययन भी कराते रहें है आप द्वारा लिखी "एकादशोपनिषद्" एक अमूल्य कृति है इसमें आपने 11 उपनिषदों का धारावाहिक अनुवाद आवश्यक टिप्पणियों सहित प्रस्तुत किया जिसमें नीचे मूल पाठ भी दिया गया है। इस ग्रंथ की भूमिका भूतपूर्व राष्ट्रपति डॉ॰ सर्वपल्ली राधाकृष्णन् ने लिखी है। आपके द्वारा अंग्रेजी में लिखी "हेरिटेज ऑफ वैदिक कलचर" की विदेशों में बहुत प्रशंसा हो रही है।

वेदों के उद्भट विद्वान् प्रख्यात व्याखाता तथा उच्च कोटि के लेखक श्री पं॰ धर्मदेव विद्यामार्तण्ड को आर्य जगत् सम्मान की दृष्टि से देखता है पंडित जी संस्कृत हिन्दी अंग्रेजी कन्नड जर्मन आदि अनेक भाषाओं के ज्ञाता विद्वान् के रूप में प्रसिद्ध थे। आपकी रचनाये विभिन्न भाषाओं में सुलभ है वेद संबंधी आपकी प्रसिद्ध पुस्तके है। 'वेदों का यथार्थ स्वरूप' इस पुस्तक पर आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब ने 1000 रू का पुरस्कार देकर आपको सम्मानित किया है आप द्वारा प्रणीत भारतीय समाज का वैदिक कर्त्तव्य शास्त्र "स्त्रियों को वेदाध्ययन और वैदिक कर्मकाण्ड में अधिकार, बौद्ध मत और वैदिक धर्म, ग्लोरी आफ द वेदाज् आदि पुस्तके अपना विशिष्ट स्थान रखती है इसके अतिरिक्त आपके सामूहिक केन्द्र मन्त्रों का अंग्रेजी में पद्यानुवाद भी किया हैं। आपने सम्पूर्ण ऋग्वेद और सामवेद के मन्त्रों का अंग्रेजी में भाष्य किया है आपने एक वृहद् ग्रन्थ" सब समस्याओं का समाधान वेदों में है' इस विषय पर भी लिखा है।

आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के प्रचार विभाग के अधिष्ठाता और महोपदेशक पं॰ यशपाल सिद्धान्तालंकार का सम्पूर्ण जीवन वेद सेवा में व्यतीत हुआ। आप प्रचारक के साथ-साथ उच्च कोटि के लेखक भी थे आप द्वारा प्रणीत शक्तिं रहस्य, वेदिक आर्षकोष, वैदिक सिद्धान्त नामक रचनायें उपयोगी एवम् संग्रहणीय है। इन समस्त रचनाओं का प्रकाशन आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब द्वारा किया गया है।

वेद के उच्च कोटि के व्याख्याता पं॰ हरिश्चन्द्र सिद्धान्तालंकार ने दो खण्डों में सामवेद की सुन्दर तथा सरल व्याख्या की है इसके अतिरिक्त आपने वैदिक परिवार व्यवस्था, जीवेम शरदः शतम्, सन्ध्या व्याख्या, ऋग्वेद के ऋषि नामक ग्रन्थों का भी निर्माण किया है।

वेदों के प्रख्यात् विद्वान् आचार्य पंडित प्रियव्रत वेदवाचस्पति ने वेद विषयक अनेक पुस्तकों के लेखक के रूप में अच्छी ख्याति प्राप्त की है। वेद का राष्ट्रीय गीत, वेदोध्यान के चुने हुये फूल, "मेरा धर्म", "वरुण की नौका", "वेदों का राजनीतिक स्वरूप आपकी प्रसिद्ध रचनायें है। वेद का राष्ट्रीय गीत" में अथर्ववेद के भूमि सूक्त की उत्कृष्ट व्याख्या है।

"वेदोद्यान के चुने हुए फूल में विभिन्न विषयों से सम्बद्ध मंत्रों के अर्थ तथा व्याख्या है "मेरा धर्म" में राष्ट्र के उत्थान में कैसे वैदिक सिद्धान्तो का उपयोग हो सकता है, वैज्ञानिक सामाजिक तथा सामूहिक रूप से देश की उन्नति कैसे सम्पन्न की जा सकती है, आदि विषयों पर विद्वता, सरलता और विस्तार से

प्रकाश डाला गया है। उक्त पुस्तकों पर आपको उत्तर प्रदेश सरकार तथा सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा द्वारा पुरस्कार से सम्मानित किया गया है। वेद के वरुण संबंधी सूक्तो के आधार पर आपने 'वरुण की नौका' नामक पुस्तक की दो खण्डों में रचना की है आपकी ये समस्त रचनायें गुरुकुल द्वारा प्रकाशित हुई।

वैदिक साहित्य के अन्वेषक विद्वान् वेदोपाध्याय पं० धर्मदेव वेदवाचस्पति के लेख समय-समय पर विभिन्न पत्र पत्रिकाओं में प्रकाशित होते रहें। "आपकी त्याग की भावना" नामक पुस्तक गुरुकुल से प्रकाशित हुई है जिसमें ऋग्वेक के दशम मण्डल के दान स्तुति के दो सूक्तों की व्याख्या है।

पं० भगवद्दत्त वेदालंकार ने वेदों पर गहन अनुसंधान कार्य किया है। आपकी ऋभुदेवता, वैदिक स्वप्न विज्ञान, वैदिक अध्यात्म विद्या, आत्मसर्म्पण, विष्णु देवता ऋषि रहस्य, वेद विमर्श, ऋषिदेव विवेचन नाम पुस्तके लोकप्रिय रही है और आपको विष्णुदेवता तथा ऋषि रहस्य पर उत्तर प्रदेश सरकार द्वारा पुरस्कृत भी किया गया।

गुरुकुल विश्वविद्यालय के भूतपूर्व आचार्य एवं संस्कृत विभागाध्यक्ष तथा पंजाब विश्वविद्यालय चण्डीगढ में दयानन्द वैदिक अनुसंधान पीठ के अध्यक्ष, वेदों के गंभीर विचारक डॉ. रामनाथ वेदालंकार का वेद विषयक अनुशीलन तथा विशिष्ट लेखनशैली प्रख्यात है। समय-समय पर आपके विद्वात्तापूर्ण लेख "धर्मयुग" वेदवाणी गुरुकुल पत्रिका, आर्योदय, नवनीत आदि में प्रकाशित हुए। आपकी वैदिक वीर गर्जना तथा वैदिक सूक्तियां नाम रचनाएं प्रकाशित हुई है। आपका वेदों की वर्णन शैलियाँ विषयक शोधपूर्ण प्रबन्ध गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय से प्रकाशित हुआ है। 'आर्योदय' में आपकी यजुर्वेद के 35 वें अध्याय की व्याख्या सम्पूर्ण धारावाहिक रूप में प्रकाशित हो चुकी है आपके पत्र-पत्रिकाओं में फुटकर लेख इतने प्रकाशित हो चुके है कि वे एक पुस्तक का रूप धारण कर सकते है।

दक्षिण भारत के उच्चकोटि के उपदेशक हैदराबाद निवासी पंड़ित मदन मोहन विद्यासागर वेदालंकार ने तेलगु तथा हिन्दी में वेद विषयक कई पुस्तकों की रचना की है आप द्वारा प्रणीत तेलगु में "वैदिक संन्ध्या", शुद्धि संस्कार-विधि, अन्त्येष्टि विधि, वैदिक सिद्धान्त प्रदीप आदि रचनाएं आर्य जनता के द्वारा समादृत है। वेदवाणी में आपकी संस्कार और यज्ञ में यजमान पत्नी आदि के आसन विषयक लेखमाला धारावाहिक रूप से प्रकाशित हुई है।

गढ़वाल विश्वविद्यालय में संस्कृत विभाग के अध्यक्ष डॉ० कृष्ण कुमार आयुर्वेदालंकार ने एम०ए० में वेद का अध्ययन करने वाले छात्रों की सुविधा के लिए ऋक्सूक्त संग्रह और वैदिक साहित्य का इतिहास नामक पुस्तकों की रचना की है जो बहुत ही उपयोगी सिद्ध हुई है।

दिल्ली विश्वविद्यालय के संस्कृत विभाग में रीडर रहे डॉ० सत्यकाम वर्मा आयुर्वेदालंकार ने भी वैदिक साहित्य विषयक कई पुस्तकें लिखी है जिनमें वेद वाटिका, वेद सुमन, ईश-केन-कठ उपनिषदो का भाष्य, डिक्शनरीज ऑफ वैदिक ग्रामर वैदिक संग्रह उल्लेखनीय है।

इसके अतिरिक्त पं० हरिश्चन्द्र विद्यालंकार का सामवेद भाष्य पं० नित्यानन्द वेदालंकार रचित संध्या विनय आदि पं० धर्मवीर वेदालंकार, प्रणीत वैदिक विवाह संस्कार, श्री नन्द किशोर विद्यालंकार का वैदिक विवाह का आदर्श, प्रो० सत्यभूषण योगी वेदालंकार का लक्ष्मण स्वरूप के अंग्रेजी निरूक्त का हिन्दी भाषान्तर, डॉ० प्रशान्त कुमार वेदालंकार का वेदिक साहित्य में नारी, प्रो० सुखदेव दर्शन वाचस्पति प्रणीत वेद तत्व प्रकाश (स्वामी दयानन्द की ऋग्वेद आदि भाष्य भूमिका का परिष्कृत हिन्दी टीका सहित सम्पादन) पंड़ित सत्यकाम विद्यालंकार रचित वैदिक वन्दना गीत (वेद मन्त्रों पर रचित गीत) आदि स्नातको की वेद विषयक पुस्तकें भी आर्य जनता के सम्मुख आ चुकी है जिनकी सर्वत्र मुक्तकंठ से प्रशंसा हुई है।

वेदों का पाण्डित्य रखने वाले कुछ इतर स्नातक भी गुरुकुल ने उत्पन्न किये है। गुरुकुल के भूतपूर्व प्रस्तोता तथा संस्कृत विभागाध्यक्ष साहित्याचार्य बागीश्वर विद्यालंकार एम॰एम॰ वैदिक साहित्य के मर्मज्ञ विद्वान् थे। आपने वैदिक अलंकार शास्त्र पर एक लेखमाला तैयार की थी जो गुरुकुल पत्रिका में प्रकाशित हो चुकी है। बल्कि पं॰ सत्यपाल सिद्धान्तालंकार वर्षों तक अफ्रीका मे वेद प्रचार कार्य करते रहे जो वेद उपनिषद् आदि के पाण्डित्य के लिए प्रसिद्ध है। गुरुकुल सोनगढ तथा गुरुकुल सूपा के भूतपूर्व आचार्य पं॰ चन्द्रकान्त वेदचाचस्पति, वेदो के पंडित कुशल व्याख्याता तथा उतम लेखक रहे है। पं॰ तड़ितकान्त वेदालंकार श्री सातवलेकर जी के स्वाध्याय मण्डल में वेदानुसंधान का कार्य करते रहें। आपकी वेदों में यम व पितर, वेदों में महिला ऋषि, स्वर विज्ञान और गायत्री मंत्र का महत्व नामक कृतियां उल्लेखनीय है। श्री वेदव्रत विद्यालंकार ने वेद मंत्रों पर गीत लिखे है जो गुरुकुल से प्रकाशित वेद गीतांजलि में संकलित हैं पं॰ जगन्नाथ वेदालंकार (श्री अरविन्द आश्रम पाण्डिचेरी) वैदिक विषय के सुलझे हुये लेखक थे जिनका श्री अरविन्द के वेद विषयक लेखों का संस्कृतानुवाद गुरुकुल पत्रिका में क्रमशः प्रकाशित होता रहा है। प्रो॰ हरिदत्त वेदालंकार का वेद सम्बंधी ज्ञान उनकी लिखी हिन्दू परिवार मीमांसा आदि पुस्तकों से सहज ही होता है, जहाँ उन्होंने प्रत्येक विषय की मीमांसा के लिये वैदिक परम्परा का भी उल्लेख किया है तथा आधुनिक विद्वानों में प्रचलित कई वेद सम्बंधी भ्रांत धारणाओं का भी सप्रमाण प्रत्याख्यान किया है। पं॰ मनोहर विद्यालंकार के वेदवाणी एवम् गुरुकुल पत्रिका में प्रकाशित होने वाले लेख उनकी वेद विषयक प्रतिभा को सहज ही मुखरित करते है डॉ॰ जयदेव वेदालंकार के ग्रन्थों में वैदिक दर्शन, उपनिषदो का तत्व ज्ञान भारतीय दर्शन समस्याएं और वैदिक साहित्य इतिहास एवम् भारतीय दर्शन प्रमाण आदि ग्रंथ भी बहुत प्रसिद्ध है।

संस्कृत साहित्य

गुरुकुंल विश्वविद्यालय के स्नांतको ने संस्कृत के विकास में महत्वपूर्ण योगदान किया है। उन्होंने संस्कृत भाषा के अनेक मौलिक ग्रन्थों की रचना की है।

गुरुकुल के प्रथम स्नातक पंडित हरिश्चन्द्र विद्यालंकार की संस्कृत प्रवेशिका छोटी कक्षाओं में पढ़ाने के लिए इतनी अधिक लोकप्रिय हुई की इसके तेईस संस्करण प्रकाशित हो चुके हे। पं॰ इन्द्रविद्यावाचस्पति को संस्कृत के प्रति अत्यधिक अनुराग था और उन्हें संस्कृत में कविता करने का शौक था। वे जीवन के अन्तिम दिनों में महाभारत के ढंग पर संस्कृत में भारत ऐतिह्यम् नाम से भारत का सम्पूर्ण इतिहास महाकाव्य के रूप में लिखना चाहते थे परन्तु उनकी यह इच्छा पूरी नहीं हो पायी। केवल 31 अध्याय लिख पाये जो पहले गुरुकुल पत्रिका में क्रमशः छपे और बाद में पाठको की मांग पर पुस्तक के रूप में प्रकाशित हुये।

संस्कृत के सुप्रसिद्ध विद्वान् धर्मदेव विद्या मार्तण्ड (स्वामी धर्मानन्द सरस्वती) ने महापुरुष संकीर्तनम् और महिलामणिकीर्तनम् नामक काव्यों का प्रणयन किया है इन दोनों रचनाओं पर उत्तर प्रदेश सरकार ने आपको पुरस्कार देकर सम्मनित किया है गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय के भूतपूर्व संस्कृत विभागाध्यक्ष स्व॰ वागीश्वर विद्यालंकार कृत साहित्य सुधा संग्रह, छात्र कौतुकम्, विदूषक परिषद्, वैदिक साहित्य सौदामिनी संस्कृत साहित्य की अमूल्य निधि है। श्री हरिवंश वेदालंकार कोचर की वेताल पंच विंशति उत्तर प्रदेश सरकार द्वारा पुरस्कृत हो चुकी है श्री जनमेजय विद्यालंकार ने अभिनवकाव्यम् नामक काव्य की रचना की जिस पर उन्हें उत्तर प्रदेश सरकार द्वारा पांच सौ रुपये का पुरस्कार प्राप्त हुआ। श्री भगवतृदत्त वेदालंकार कृत वैदिक स्वप्न विज्ञानम् भी उत्तर प्रदेश शासन से पुरस्कृत हो चुकी है। श्री मदन गोपाल विद्यालंकार की चारु चरितावलि, श्री जगन्नाथ वेदालंकार रचित संस्कृत कथा मंजरी और मातृसूक्ति मुक्तावलि, श्री आनन्दवर्धन

विद्यालंकार की कुसुम लक्ष्मी उ॰प्र॰ सरकार से 1000 रुपये के गंगानाथ झा पुरस्कार से पुरस्कृत भी हुई है। श्री वासुदेव चैतन्य आयुर्वेदालंकार ने चैतन्य नीतिशतकम् नाम से 700 संस्कृत श्लोकों की रचना की है जो गुरुकुल पत्रिका में क्रमशः प्रकाशित हुये है।

देशबन्धु कॉलेज दिल्ली में संस्कृत विभाग के अध्यक्ष डॉ॰ मनोहर लाल विद्यालंकार ने संस्कृत में कई छात्रोपयोगी पुस्तकें लिखी है जिनमें संस्कृत मंजरी, संस्कृत गौरवम्, संस्कृत गद्य मंजरी, संस्कृत सुषमा प्रमुख है। डी.ए.वी. कॉलेज अ़म्बाला शहर के संस्कृत विभागाध्यक्ष प्रो॰ वेद प्रकाश वेदालंकार ने आदि कवि बाल्मीकि एवम् अलंकार संस्कृत निबन्ध माला की रचना की है जिनमें से प्रथम हरियाणा सरकार के भाषा विभाग द्वारा पुरस्कृत हो चुकी है। राजस्थान के डॉ॰ सुभाषचन्द्र वेदालंकार ने भी अनेक संस्कृत ग्रन्थ रचे है।

संस्कृत भाषा में पुस्तक निर्माण के अलावा अनेक स्नातक संस्कृत की पत्र-पत्रिकाओं के लिये विभिन्न विषयों पर शोधपूर्ण सुन्दर लेख एवम् श्लोक आदि भी लिखते रहे हैं जिनकी सर्वत्र सराहना होती रही। संस्कृत को जनसामान्य में लोकप्रिय बनाने के लिये तथा छात्रों के लिये संस्कृत के अध्ययन को सरल बनाने की दृष्टि से अनेक छात्रों ने संस्कृत के सुप्रसिद्ध कवियों के दुरूह ग्रन्थों के भावानुवाद, अनुवाद एवं टीकाएं भी तैयार की है। इसका परिणाम यह रहा कि अब संस्कृत को न जानने वाले भी इनका रसास्वादन सरलता से कर सकते है।

श्री इन्द्र विद्यावाचस्पति द्वारा "रघुवंश" व "किरातार्जुनीयम्" का हिन्दी अनुवाद इस दिशा में प्रथम चरण था। "भारतीय-ऐतिह्यम्" महाभारत पर लिखा ग्रन्थ है। इसके बाद श्री बागीश्वर विद्यालंकार ने भी. कुंदमाला एवं अभिज्ञानशकुन्तलम् के हिन्दी रूपान्तर प्रस्तुत किए। श्री सत्यकाम विद्यालंकार ने पंचतंत्र व मेधदूत का श्री निरंजनदेव आयुर्वेदालंकार ने हिन्दी वेणी संहार हिन्दी दशकुमारचरित् का श्री चन्द्रमणि विद्यालंकार ने बाल्मीकिरामायण का श्री इन्द्रसेन विद्यालंकार ने उत्तरराम चरित का श्री उदयवीर विराज वेदालंकार ने अभिज्ञानशाकुन्तलम्, कुमार संभव, विक्रमोर्वशीयम्, मालविकागिनमित्र का तथा श्री प्रताप विद्यालंकार ने मेघदूत व ऋतुसंहार का हिन्दी रूपांतर इतनी सुबोध एवं प्रांजल भाषा में किया है कि पाठको का मन अनायास ही उनकी ओर आकृष्ट हो जाता है और उन्हें पढ़ने के बाद उसमें एक विशेष आनन्द की अनुभूति होती है।

स्नातकों द्वारा तैयार की गयी संस्कृत ग्रन्थों की छात्रोपयोगी टींकाए बाजार में बिकने वाली अन्य सामान्य टींकाओं और फुंजियों की तरह नहीं है बल्कि वे इतने अच्छे ढंग से लिखी गयी है कि उनमें टीकाकार एवमृ अनुवादक की योग्यता स्पष्ट रूप से परिलक्षित होती है।

मेरठ विश्वविद्यालय से सम्बद्ध मेरठ कॉलेज के संस्कृत विभागाध्यक्ष डॉ॰ निरूपण विद्यालंकार ने संस्कृत साहित्य के सभी ग्रन्थों की टीकाएं की है जिनमें अभिज्ञान शाकुन्तलम्, मुद्राराक्षस, साहित्य दर्पण और काव्य दीपिका प्रमुख है। इन टीकाओं में कवि परिचय, कला-परिचय नाटक की विशेषताओं का विस्तृत विवरण तथा मूल पाठ का अर्थ व भाव तो दिया ही गया है। साथ ही गद्य या पद्य में आए विशेषणों का सार्थक्य निरूपण भी किया गया है। जो अन्य टीकाओ में देखने को कम मिलता है यही कारण है कि इनकी टींकाए विद्वद्मण्डली एवं छात्रों में बहुत अधिक पसन्द की जाती है।

गढ़वाल विश्वविद्यालय के अंगीभूत राजकीय डिग्री कॉलेज श्रीनगर के संस्कृत विभागाध्यक्ष डॉ॰ कृष्णकुमार आयुर्वेदालंकार रचित ध्वन्यालोक, रधुवंश, हर्षचरित, किरातार्जुनीयम् अभिज्ञानशाकुन्तलम् की टींकाएं भी इसी कोटि की है।

दिल्ली विश्वविद्यालय के संस्कृत विभाग के रीडर डॉ॰ सत्यकाम वर्मा आयुर्वेदालंकार ने वाक्य पदीय: ब्रह्माण्ड की त्रिभाषी टीका प्रस्तुत करके इस ग्रन्थ को हिन्दी भाषा भाषी दोनों ही तरह के लोगों के लिए सुगम बना दिया है।

श्री धर्मदेव वेद वाचस्पति और प्रो॰ वेदप्रकाश वेदालंकार ने सम्मिलित रूप से चारुदत्तम्, हितोपदेश अपरीक्षित कारक, रघुवंश और अभिज्ञान शाकुन्तलम् के पंजाब विश्वविद्यालय के लिए पाठ्यक्रमोपयोगी अंशो की सुबोध टीकाएं प्रस्तुत की है।

इसके अतिरिक्त प्रो॰ सत्यव्रत सिद्धान्तालंकार का गीताभाष्य, श्री जयचन्द्र विद्यालंकार की कालिदास काव्यकला, श्री विद्यासागर वेदालंकार कृत सांख्य दर्शन एक परिचय वेदांत: एक परिचय "चार्वाक दर्शन" (हरजीमल पुरस्कार प्राप्त)पं॰ कृष्ण स्वरूप विद्यालंकार का गीता मर्म एवं गीताविज्ञान विवेचन (पुरस्कृत) श्री सुखदेव दर्शनवाचस्पति का पुराणालोचन, प्रो॰ हरिदत्त वेदालंकार की "कालिदास के पक्षी" (उ॰प्र॰ सरकार द्वारा पुरस्कृत) डॉ॰ कृष्णकुार आयुर्वेदालंकार का अलंकारशास्त्र का इतिहास एवं अम्बिकादत्त व्यास : एक अध्ययन : डॉ॰ निरूपण विद्यालंकार का प्राचीन भारतीय धर्मशास्त्र साहित्य में शूद्रों की स्थिति (उ॰प्र॰ शासन द्वारा पुरस्कृत) डॉ॰ सत्यकमा वर्मा आयुर्वेदालंकार के भाषा तत्व और वाक्य पदीप व्याकरण की दार्शनिक भूमिका, संस्कृत व्याकरण का उद्‌भव एवम् विकास और भर्तृहरि: शब्द और अर्थ, डॉ॰ देवेन्द्र कुमार विद्यालंकारकृत संस्कृत नाटको के हिन्दी अनुवाद, डॉ॰ विनोद चन्द्र विद्यालंकार रचित आचार्य जयदेव और नाटककार के रूप में आलोचनात्मक अध्ययन आदि ग्रन्थ इसी श्रेणी में आते है। डॉ॰ अवनीन्द्र कुमार विद्यालंकार, डॉ॰ रघुवीर वेदालंकार आदि स्नाताको ने भी संस्कृत साहित्य में महत्वपूर्ण योगदान किया है।

इस प्रकार स्पष्ट है कि गुरुकुल के स्नातकों ने संस्कृत साहित्य को समृद्ध बनाने में अपना महत्वपूर्ण योगदान दिया है और आने वाली पीढी इसे और भी अधिक समृद्ध बनाने के लिये प्रयत्नशील है।

हिन्दी में साहित्य-सृजन

मातृभाषा हिन्दी के माध्यम से शिक्षा देने का सर्वप्रथम सफल प्रयास गुरुकुल कांगड़ी द्वारा किया गया था। परिणामत: गुरुकुल ने हिन्दी को अनेक प्रतिष्ठित लेखक प्रदान किये जिन्होंने नि:सन्देह राष्ट्रभाषा हिन्दी में विविध विषयों पर मौलिक एवम् शोधपूर्ण एवम् उत्तम साहित्य निर्माण द्वारा समाज व राष्ट्र की उल्लेखनीय सेवा की है। शायद ही ऐसी कोई विद्या बची होगी जिस पर स्नातको ने कलम न चलाई हो स्नातकों द्वारा रचित साहित्य की जहाँ जनता ने सराहना की है वही इनमें से बहुत सी पुस्तकों को केन्द्रीय व प्रान्तीय सरकारों, अखिल भारतीय हिन्दी साहित्य सम्मेलन, बंगाली हिन्दी अकादमी आदि संस्थाओं द्वारा पुरस्कृत भी किया गया है। यहाँ हम पाठकों को स्नातकों की हिन्दी सेवा का दिग्दर्शन कराने का प्रयत्न करेंगे।

प्रो॰ इन्द्र विद्या वाचस्पति ने धार्मिक, सामाजिक, सांस्कृतिक, राजनैतिक एवम् ऐतिहासिक विषयों पर लगभग 25 पुस्तकें लिखी है जो बहुत ही लोकप्रिय सिद्ध हुई है। अपराधी कौन, सरला की भाभी, सरला, जमींदार, आदि उपन्यास महर्षि दयानन्द, नेपोलियन बोनापार्ट, प्रिन्स बिस्मार्क, गैरी बाल्डी एवम् मेरे पिता आदि जीवन चरित्र, जीवन संग्राम, भारतीय संस्कृति का प्रवाह, आर्य समाज का इतिहास, स्वतंत्र भारत की रूपरेखा, मुगल साम्राज्य का क्षय और उसके कारण आधुनिक भारत में वक्तृत्वकला की प्रगति आदि ऐतिहासिक ग्रन्थों ने काफी ख्याति प्राप्त की है। मेरे पिता पर आपको उ॰प्र॰ सरकार द्वारा पुरस्कृत किया गया।

पं॰ जयचन्द्र विद्यालंकार ख्याति प्राप्त इतिहासकार है। ब्रिटिश इतिहास लेखकों की पक्षपातपूर्ण धारणाओं को चुनौती देकर भारतीय इतिहास को स्वतंत्र ऐतिहासिक मनोवृत्ति से लिखने की प्रेरणा देने वाले आप ही है। आपकी एक दर्जन से अधिक पुस्तके प्रकाशित हो चुकी है। जिनमें भारतीय इतिहास का भौगोलिक

आधार एवम्, भारत भूमि एवम् उसके निवासी, इतिहास की मीमांसा, राष्ट्रीय इतिहास का अनुशीलन प्रमुख है। आपको भारतीय इतिहास की रूपरेखा पर अखिल भारतीय हिन्दी साहित्य सम्मेलन का मंगलाप्रसाद पुरस्कार प्राप्त हुआ। है। आपकी साहित्य सेवा के प्रति आदर प्रकट करने के लिए पंजाब सरकार ने एक सार्वजनिक आयोजन में आपको 1200 रुपये औद दुशाला भेंट करके सम्मानित किया।

स्व॰ श्री प्राणनाथ विद्यालंकार राजनीति और अर्थशास्त्र पर हिन्दी में प्रामाणिक पुस्तकें लिखने वाले जाने-माने पुराने लेखक है। आपके राजनीतिशास्त्र, मुद्राशास्त्र, शासन पद्धति, अर्थशास्त्र नामक ग्रन्थों ने हिन्दी जगत् में काफी ख्याति प्राप्त की।

श्री अमरनाथ विद्यालंकार न केवल सुप्रसिद्ध राजनीतिज्ञ है बल्कि आपने लेखक के रूप में भी काफी यश अर्जित किया है। आपकी आज की दुनिया, आज का मानव सेनोर, मानव संघर्ष, भारत क़ा इतिहास, नामक इतिहास पर आधारित पुस्तकें उल्लेखनीय है।

पं॰ बुद्धदेव जी विद्यालंकार वैदिक साहित्य के ख्याति प्राप्त लेखक होने के साथ-साथ एक अच्छे कवि भी थे इनके बिखरे फूल और उसकी राह पर सुन्दरतम काव्य संग्रह है।

श्री विनायक राव विद्यालंकार ने अमेरिका के राष्ट्रपति अब्राहम लिंकन का जीवन चरित्र तथा चाबुक नामक एक कथा संग्रह लिखा है, श्री भूदेव विद्यालंकार की स्वाधीनता के पुजारी, श्री चन्द्रमणि विद्यालंकार की ऋषि दयानन्द के. सत्य अहिंसा के प्रयोग, वैद्य धर्मदत विद्यालंकार की प्राचीन भारत में स्वराज्य, संगीत संध्या एवम् हिन्दी गीता, श्री कृष्ण स्वरूप विद्यालंकार कृत बाल विवाह, अछूतोद्धार और आनन्द यही है, श्री ईश्वरदत्त विद्यालंकार की ज़िन ढूंढा तिन पाय्या, श्री महामुनि विद्यालंकार रचित महर्षि दयानन्द के जीवन का मनन, श्री बागीश्वर विद्यालंकार रचित निराजना नामक काव्य संग्रह बहुत ही रोचक एवम् ज्ञानवर्द्धक रचनायें है। श्री ओमप्रकाश विद्यालंकार कृत होमयोपैथी के सिद्धान्त, होमयोपैथी चिकित्सा प्रारम्भिक अध्ययन करने वालों के लिये उपयोगी है।

प्रो॰ सत्यव्रत सिद्धान्तालंकार ने शिक्षा समाजशास्त्र, मानवशास्त्र, मनोविज्ञान तथा संस्कृत पर अनेक विशालकाय पुस्तकें लिखी है। जो विभिन्न विश्वविद्यालयों में बी.ए., एम.ए. के छात्रों के लिए तो उपयोगी ही है और जन-सामान्य भी उनसे लाभान्वित होता है। आपको समाजशास्त्र के मूलतत्व नामक पुस्तक पर हिन्दी साहित्य सम्मेलन का मंगलाप्रसाद पुरस्कार तथा आर्य संस्कृति के मूल तत्व पर 2000 रुपये का अन्य पुरस्कार प्राप्त करने का गौरव प्राप्त हुआ है। आपकी अन्य रचनाओं में ब्रह्मचर्य संदेश शिक्षा सिद्धान्त, सामाजिक मानवशास्त्र, सामाजिक विचारों का इतिहास शिक्षा शास्त्र भारत की जनजातियों और संस्थाएं का प्रमुख स्थान है आपकी इन साहित्यिक रचनाओं के प्रति आभार प्रकट करने के लिये पंजाब सरकार के भाषा विभाग ने सन् 1962 में एक विशेष दरबार आयोजित करके आपको 1200 रूपये तथा दुशाला भेंट किया था। इसके साथ आपने होमयोपैथी का गहन अध्ययन करके तथा अपने 36 वर्ष के अनुभवों के आधार पर होमयोपैथी के तीन वृहत् ग्रन्थों की रचना की है। ये ग्रन्थ हैं रोग तथा इनकी होमयोपैथी चिकित्सा, हौमयोपैथी औषधियों का सजीव चित्रण और बुढ़ापें से जवानी की ओर। हिन्दी में होमयोपैथी की इन सर्वश्रेष्ठ पुस्तकों को लिखने पर आपको फूलवती खूटेरा पुरस्कार से सम्मानित किया गया था।

श्री दीनानाथ सिद्धान्तालंकार ने अनेक धार्मिक समाज सुधार की प्रेरणा देने वाली तथा ज्ञानवर्धक पुस्तकों की रचना की है। आपकी अमृतपथ श्री रामचरित प्रेरक जीवन कहानियां, डॉ॰ श्यामा प्रसाद मुखर्जी का जीवन, आर्य समाज की उपलब्धियाँ, भारत की प्राचीन नीतियाँ, नामक पुस्तक काफी लोकप्रिय हुई है। श्री पं॰ बंशीधार विद्यालंकार ने कवि एवं लेखक के रूप में अच्छी प्रतिष्ठा प्राप्त की थी। आप की "मेरे फूल" बालापद अच्छे काव्य संग्रह है। आपने साहित्य फल वन की भी रचना की है।

स्व० श्री सत्यदेव विद्यालंकार हिन्दी साहित्य के जाने माने लेखक है आपने 40. पुस्तकें लिखी है जिनमें अधिकांश विभिन्न नेताओं के जीवन-चरित्र है। आप द्वारा रचित गांधीजी का मुकद्दमा, दयानन्द दर्शन, जनरल अबारी, स्वामी श्रद्धानन्द धुन की धनी, जीवन संधर्ष, हमारे राष्ट्रपति, लाल देवराज राष्ट्रवादी दयानन्द परदा, राष्ट्र धर्म, जयहिन्द, लाल किले में, आज का मध्य भारत, आर्य सत्याग्रह, आर्य समाज किस ओर, आदि पुस्तकें जन सामान्य में अत्याधिक लोकप्रिय हुई है। धुन की धनी में आपने श्री जयनारायण व्यास का तथा जीवन संधर्ष में श्री महाशय कृष्ण जी का प्रामाणिक जीवन परिचय लिखा है आपकी परदा और राष्ट्रधर्म शीर्षक पुस्तकों को अखिल भारतीय हिन्दी साहित्य सम्मेलन की ओर से राधामोहन गोकुल जी पुरस्कार से सम्मानित किया गया आपकी साहित्य सेवा का आदर करने के लिए पंजाब सरकार ने 1965 में आपको 'जय साहित्य' नामक अभिनन्दन ग्रन्थ भेंट किया था।

स्व० श्री भीमसैन विद्यालंकार ने वीर मराठे, वीर शिवाजी, वीर पंजाबी, दयानन्दोपनिषद्, लाला लाजपतराय की आत्म कथा, बाल महाभारत नामक बालोपयोगी एवं ज्ञानवर्द्धक पुस्तकें लिखी है। आपने वर्तमान भारत नामक पुस्तक का सम्पादन भी किया।

श्री निधि सिद्धान्तालंकार ने हिन्दी में मुख्य रूप से वन तथा वन्यपशु सम्बन्धी साहित्य की रचना की है। आपने शिवालिक की घाटियों में, मालिनी के वनों में, मचान पर उन्नचास दिन, सूखे सूनसान नालों में, नामक पुस्तकों में अपनी वन यात्राओं के अनुभवों का सजीव एवं रोचक वर्णन किया है। आपकी प्रथम दो पुस्तके उ०प्र० शासन द्वारा पुरस्कृत हो चुकी है। आपने द्वापर की एक दोपहर और पौलस्त्य नामक दो उपन्यास भी लिखे पुस्तकों के अतिरिक्त आपने अपनी रोमांचकारी एवं साहसपूर्ण वन यात्राओं को आधार बनाकर लगभग 75 लघु रचनाएं भी लिखी है जो धर्मयुग, साप्ताहिक हिन्दुस्तान आदि पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित हुई।

स्व० श्री रामगोपाल विद्यालंकार ने स्वामी श्रद्धानन्द, आचार्य रामदेव और संस्कार प्रकाश नामक पुस्तकें लिखी है।

हिन्दी साहित्य कें सुप्रसिद्ध लेखक डॉ० सत्यकेतु विद्यालंकार को कौन नहीं जानता। आपने प्राचीन भारतीय संस्कृति एवम् इतिहास पर अनेक शोधपूर्ण एवम् प्रामाणिक ग्रन्थों की रचना की है। "मौर्य साम्राज्य का इतिहास", मध्य एशिया तथा चीन में भारतीय संस्कृति, दक्षिणपूर्वी एशिया में भारतीय संस्कृति, भारतवर्ष का इतिहास, पाटलीपुत्र की कथा, भारत का राष्ट्रीय आन्दोलन और नया संविधान, प्राचीन भारतीय शासन व्यवस्था और राजशास्त्र आदि प्रमुख है। आपके ये सभी ग्रन्थ अन्य विश्वविद्यालयों के पाठयक्रमों में निर्धारित है और शोधार्थी इनका संदर्भ ग्रन्थ के रूप में उपयोग करते है। आप न केवल इतिहासकार के रूप में ही प्रख्यात है बल्कि आपने अनेक ऐतिहासिक चरित्रों को आधार बनाकर कतिपय उपन्यास भी लिखे है जो काफी लोकप्रिय हुए है। आचार्य विष्णुगुप्त चाणक्य सेनानी पुष्यमित्र, अन्तर्दाह, होटल माडर्न आपके उल्लेखनीय उपन्यास है। आपको मौर्य साम्राज्य का इतिहास पर अखिल भारतीय साहित्य सम्मेलन द्वारा मंगला प्रसाद पुरस्कार तथा प्राचीन भारतीय शासन व्यवस्था और राजशास्त्र पर उत्तर प्रदेश शासन द्वारा 5000 रूपये के मोतीलाल नेहरू पुरस्कार से सम्मानित किया जा चुका है इनके अतिरिक्त आपकी अन्य कृतियां भी नागरी प्रचारिणी सभा मध्य प्रदेश शासन, उ०प्र० बंगाली हिन्दी मंडल, आदि संस्थाओं के भिन्न-भिन्न पुरस्कारों से समादृत हो चुकी है।

श्री धनराज विद्यालंकार ने अनके अंग्रेजी व अन्य भाषाओं को पुस्तकों की हिन्दी अनुवाद किया है। आपकी रामकृष्ण परमहंस, महापुरूषों के साथ, सांस्कृतिक मानवशास्त्र, आदि प्रमुख अनुदित रचनाएं है।

श्री नारायणदत्त सिद्धान्तालंकार ने शंकराचार्य जीवन और दर्शन महर्षि दयानन्द, जीवन और दर्शन, गुरूनानक: जीवन और दर्शन नामक पुस्तकों में उक्त महापुरुषों का जीवन परिचय प्रस्तुत किया है।

श्री सत्यकाम विद्यालंकार ने 10 से अधिक पुस्तकें लिखी है। आपने सोमा, मुक्ता, चेयरमैन, देवता का दान, नामक उपन्यास लिखे है जिनमें से सोमा पंजाब सरकार द्वारा पुरस्कृत हो चुका है। आपका आठ श्रेष्ठ कहानियाँ नाम से एक कहानी संग्रह प्रकाशित हुआ है। चरित्र निर्माण, मानसिक शक्ति के चमत्कार, सफल जीवन सफलता के सूत्र एवं जीवन साथी में आपने जीवन को सफल बनाने के लिए मार्ग दर्शन करने वाली पुस्तकें है। महापुरुषों का जीवन परिचय देना भी आप नहीं भूले है। इस कार्य के लिये आपने महात्मा गांधी, जीवन रश्मि, हमारे राष्ट्र निर्माता, शिवाजी, सरदार पटेल, नामक पुस्तकों की रचना की है। यहीं नहीं विभिन्न देशों का परिचय आपने देश-देशांतर और ईरान के माध्यम से दिया है।

श्री हरिश्चन्द्र विद्यालंकार ने बाल रामायण, माता का संदेश, शिष्टाचार आर्यसमाज का इतिहास, महर्षि दयानन्द सरस्वती एवम् मिलजुलकर काम करों नामक पुस्तकों की रचना की है।

श्री कृष्णचन्द्र विद्यालंकार ने इतिहास राजनीति तथा अन्य विषयों पर लगभग 15 पुस्तकें लिखी है। चीन का स्वाधीनता का युद्ध, कांग्रेस का इतिहास, वर्तमान जगत्, आधुनिक संसार, किसानों का सवाल एवं भारतीय संस्कृति, आपकी राजनीति एवम् संस्कृति परक कृतियां है। आपने हिन्दी व्याकरण, सरल रचना विधि नामक पुस्तकें रची है। आविष्कार और आविष्कारक, भ्रमण और साहस की कहानियाँ, साहसी मानव आपकी बालोपयोगी रचनाएं उपयोगी एवं प्रसिद्ध है।

1974 में सोवियत भूमि के नेहरू पुरस्कार से सम्मानित विद्यामार्तण्ड श्री चन्द्रगुप्त विद्यालंकार हिन्दी साहित्य के सुप्रसिद्ध कहानीकार, नाटककार एवम् उच्चकोटि के लेखक के रूप में जाने जाते है। आपकी लगभग 28 पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी है जिनमें आठ कहानी संग्रह छः नाटक सात अन्य विषयों की पुस्तकें तथा सात अनुदित एवं संपादित कृतियाँ है। आपके प्रायः सभी कहानी संग्रह एवं नाटक पुरस्कृत हो चुके है। 1973 में दिल्ली राज्य द्वारा आप को सर्वश्रेष्ठ लेखक के रूप में पुरस्कृत एवम् सम्मानित किया गया था। यही नहीं पंजाब, सरकार का भाषा विभाग भी आपका सम्मान करने से पीछे नहीं रहा। उसने 1975-76 के सर्वश्रेष्ठ हिन्दी लेखक के रूप में आपको एक सार्वजनिक समारोह में 1200 रुपये और एक दुशाला भेंट कर सम्मानित किया। आपकी कुछ रचनाएं रूसी, अंग्रेजी, जर्मनी एवम् चैकोस्लोवाक भाषाओं में भी अनुदित हो चुकी है। आपके चन्द्रकला, भय का राज्य, अमावस, तीन दिन, वापसी, पहला नास्तिक, गहरे अंधेरे में मेरी प्रिय कहानियाँ नामक कहानी संग्रह, अशोक, रेवा न्याय की राह, हिन्दुस्तान जाकर कहना, शिवसती, गौरीशंकर, नाटक तथा आजकल, आज का मानव समाज, बचपन, उत्कीर्ण पथचिन्ह। स्वीडन, चौथी दुनिया और उसके आस-पास शीर्ष रचनाएं उल्लेखनीय है। आपने चेखव, हार्डी तथा रूसी लेखकों के कहानी संग्रहों का हिन्दी में अनुवाद भी किया है।

श्री निरंजनदेव आयुर्वेदालंकार हिन्दी के अच्छे कवि है। आपकी कविताएं प्रियहंस और सव्यसाची उपनाम से भिन्न-भिन्न पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित होती रही। आपकी 'प्रमुख हिन्दी कवि' हिन्दी वेणीसंहार, हिन्दी दशकुमारचरित्र नामक पुस्तकें हिन्दी साहित्य की अमूल्य निधि है।

डॉ॰ हरिवंश वेदालंकार (कोचर) ने अपभ्रंश साहित्य नामक शोधपूर्ण ग्रन्थ लिखा है इस पर आपको दिल्ली विश्वविद्यालय से पी-एच.डी. उपाधि प्राप्त हुई है।

श्री अवनीन्द्र कुमार विद्यालंकार हिन्दी साहित्य के प्रतिष्ठित लेखक है। अर्थशास्त्र, राजनीति, भूगोल और इतिहास के अच्छे ज्ञाता हैं। आपकी सरल अर्थशास्त्र, पंचवर्षीय सिंचाई बिजली योजना, सामुदायिक

योजना, अर्थशास्त्र विषयक तथा हमारे राष्ट्रपति राधाकृष्णन्, मालवीय जी, आदि जीवन परिचय संबंधी पुस्तकें काफी ज्ञानवर्धक व लोकप्रिय है। आप प्रतिवर्ष भारत ज्ञान कोश, विश्व ज्ञान कोश तथा हिन्दुस्तान वार्षिकी का भी सम्पादन करते रहें।

डॉ॰ इन्द्रसेन आयुर्वेदालंकार कुशल चिकित्सक तो है ही, साथ ही उच्च कोटि के कवि भी है। आप पिछले चार वर्षों से हिन्दी की सेवा कर रहें है। अब तक आप ने काव्य प्रेमियों को रसधारा, सूक्तिधारा, हृदयहरधारा, करुणधारा, रंजनधारा, राजधारा, उद्गार धारा, मनोहर धारा, अभिराम धारा, मनोरम धारा, नाम से 10 काव्य धाराएं दी है। ग्यारहवी धारा ललाम धारा लिखी जा रही है। इनके अतिरिक्त आपने हिन्दी राष्ट्रभाषा कैसे बने, हिन्दी से जापानी शिक्षक नामक पुस्तकें भी लिखी है।

श्री शंकरदेव विद्यालंकार ने श्री रवीन्द्रनाथ टैगोर की अनेक रचनाओं का हिन्दी भाषान्तर प्रस्तुत करके हिन्दी साहित्य की अपूर्व सेवा की है। रवीन्द्र कथा, नैवेद्य, चित्रागंदा फूलों की डाली, भूले पंछी, आपकी सरल एवं सुबोध भाषा में अनुदित रचनाऐं है। अन्तिम पाठ (कथा संग्रह) और प्राचीन भारत के विद्यापीठ, आपकी मौलिक हिन्दी कृतियाँ है। विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में आपके रोचक लेख प्रकाशित होते रहे है। आपकी हिन्दी सेवा के प्रति आभार प्रकट करने के लिए नागपुर में हुए विश्व हिन्दी सम्मेलन में आपको सर्वश्रेष्ठ अहिन्दी भाषी हिन्दी लेखक के रूप में सम्मानित किया गया था।

पटना विश्वविद्यालय में यू.जी.सी. प्रोफेसर श्री वीरेन्द्र विद्या वाचस्पति ने हिन्दी साहित्य का अध्ययन-अध्यापन करने वाले छात्रों एवं विद्वानों को बहुमूल्य रचनाएं दी है। आप द्वारा प्रणीत शोधपूर्ण ग्रन्थ अपभ्रंश भाषा का अध्ययन, बिहार राष्ट्रभाषा परिषद् द्वारा पुरस्कृत हो चुका है। पद्माभरण और पद्माकर हिन्दी साहित्य परम्परा और परख तथा विद्यापति अनुशीलन एवं मूल्यांकन आपकी विद्वता और गहन अध्ययन के प्रतीक है।

नित्यानन्द वेदालंकार हिन्दी साहित्य के सुलझे हुये विद्वान् तथा हिन्दी में ग्रन्थ रचना करने में सिद्धस्त, अनेक मौलिक पुस्तकों के रचयिता है। आपकी प्रमुख पुस्तकों में छायावाद-नया मूल्यांकन, पूर्व और पश्चिम, जीवन की राहें, सुराज्य की रूपरेखा, प्रभावशाली व्यक्तित्व, मार्गदर्शन आदि उल्लेखनीय है। आपकी पुस्तकें इतनी लोकप्रिय हुई है कि अनेक पुस्तकों के चार-चार, पांच-पांच संस्करण प्रकाशित हो चुके है।

उन्मुख नाम से काव्य रचना करने वाले श्री सत्यपाल विद्यालंकार के लगभग एक दर्जन उपन्यास और काव्य संग्रह प्रकाशित हुए है। आपका दीपदान काव्य संग्रह और कामायनी का सरल अध्ययन आपके गहन अध्ययन का परिणाम है।

श्री वीरसैन (पृथ्वीसिंह मेहता) विद्यालंकार ने बिहार का ऐतिहासिक दिग्दर्शन और राजस्थान का इतिहास नाम से इतिहास सम्बन्धी दो पुस्तकें लिखी है।

डॉ॰ ऋषिदेव वेदालंकार ने समाजशास्त्र, नृतत्व शास्त्र, धर्मशास्त्र, साहित्य आदि विषयों पर अनेक ग्रन्थ लिखे है जिन पर आपको विभिन्न संस्थाओं से पुरस्कार भी प्राप्त हुए है। आपकी समाजशास्त्र के सिद्धान्त प्रागऐतिहासिक संस्कृतियाँ, समाजशास्त्र विषयक, मानव विज्ञान व नृतत्व शास्त्र और मानव विज्ञान पर आपको बिहार राष्ट्रभाषा परिषद् द्वारा सम्मानित किया गया है।

श्री चन्द्रगुप्त वेदालंकार का वृहत्तर भारत अपने विषय का अमूल्य एवं प्रामाणिक ग्रन्थ है। अनेक शोधकर्त्ता एवं विद्वान् सन्दर्भ ग्रन्थ के रूप में इसका उपयोग करते है। आपने राष्ट्रभाषा हिन्दी नाम से भी एक पुस्तक लिखी है।

श्री हरिदत्त वेदालंकार ने इतिहास, राजनीति शास्त्र, समाजशास्त्र एवं भारतीय संस्कृति आदि विषयों पर 16 पुस्तकें लिखी है। इनमें अधिकांश पुस्तकें विभिन्न विश्वविद्यालयों के पाठ्यक्रमों में निर्धारित है और इतनी अधिक लोकप्रिय हुई है कि उनके कई-कई संस्करण प्रकाशित हो चुके है। भारत का सांस्कृतिक इतिहास, हिन्दू विवाह का संक्षिप्त इतिहास, प्राचीन भारत का राजनीतिक तथा सांस्कृति इतिहास, भारत की सांस्कृतिक दिग्विजय आदि आपकी इतिहास विषयक पुस्तकें है। राजनीति शास्त्र में आपकी अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्ध आधुनिक राजनीतिक चिन्तन का इतिहास, प्रमुख राजनीतिक विचारक नामक पुस्तकें उल्लेखनीय है। आपकी हिन्दू परिवार मीमांसा, भारतीय जनता तथा संस्थाए समाजशास्त्र की प्रमुख रचनाएं है। आपने रेम्जेम्यूर की शार्ट हिस्ट्री आफ ब्रिटिश कामनवेल्थ का हिन्दी अनुवाद ब्रिटिश राष्ट्रमण्डल का संक्षित इतिहास के नाम से किया है। आपकी प्राय: सभी रचनाएं विभिन्न सरकारी एवं गैर सरकारी संस्थाओं से पुरस्कृत हो चुकी है। भारत सरकार के विधि मंत्रालय ने अन्तर्राष्ट्रीय कानून को हिन्दी की सर्वश्रेष्ठ पुस्तक होने के कारण दस हजार रुपये के प्रथम पुरस्कार से सम्मानित किया है। आप म.प्र. शासन साहित्य परिषद् के कौटिल्य एवं मोतीलाल नेहरू पुरस्कार से भी सम्मानित हो चुके है इसके अतिरिक्त आपके निर्देशन में पंतनगर विश्वविद्यालय में वैज्ञानिक पुस्तकों के अनुवाद व मौलिक लेखन का कार्य भी हुआ है।

श्री रामेश वेदी आयुर्वेदालंकार ने वन्य प्राणियों के सम्बन्ध में अनेक सचित्र पुस्तकें लिखी है, जिनमें अजगर, सापों की दुनिया, सिंह, गैंडा, गजराज, तेन्दुआ, और चीता तथा शेर प्रमुख है। इसके अतिरिक्त आपने औषधीय वनस्पतियों पर भी अनेक पुस्तकें लिखी है। जिनमें- सोंठ, नीम, बकायन, लहसुन, प्याज, शहद आदि प्रमुख है।

श्री सत्यभूषण योगी वेदालंकार की कवि समाज में अच्छी प्रतिष्ठा रही है। योगी का वीरकाव्य, योगी की मधुशाला, योगी का सोऽहं काव्य आदि आपकी प्रमुख रचनाएं है। कामायनी का सश्रद्ध नमन आपकी शोधपूर्ण कृति है।

डॉ॰ अरविन्द कुमार देसाई वेदालंकार ने हिन्दी में अनेक मौलिक पुस्तकें लिखी है। भारतेन्दु और नर्मद का तुलनात्मक अध्ययन आपका शोधपूर्ण ग्रन्थ है। आपका एक कहानी संग्रह अभिनव कहानी कुंज नाम से है। आपने छात्रों के उपयोग के लिए "अभिनव गद्य भारती, हिन्दी भाषा प्रवेश, जनता की बोली की रचना की है।

श्री वेदराज वेदालंकार ने कतिपय सुप्रसिद्ध लेखकों की अंग्रेजी पुस्तकों के हिन्दी अनुवाद प्रस्तुत किये है। ये है- गांधी और गांधीवाद (पट्टाभिसीतारामैय्या कृत) सत्य की खोज में (राधाकृष्णन् कृत) कस्तूरबा (सुशीला नैयर कृत) रवीन्द्र प्रतिभा (कृष्णकृपलानी कृत) रमण महर्षि (आर्थर आसवौर्न कृत) आदि।

श्री क्षितीश वेदालंकार हिन्दी के एक सफल एवं ख्याति प्राप्त लेखक रहे है। आपकी आर्य सत्याग्रह में गुरुकुल की आहुति, जातिभेद का अभिशाप, मधुर आकांक्षा, गांधीजी के हास्यविनोद, जलबिन्दु आदि पुस्तकें प्रसिद्ध है। आप द्वारा संचालित सातवलेकर अभिनन्दन ग्रन्थ, मारीशस स्मारिका, श्री कृष्ण सन्देश बहुत अच्छे बन पड़े है। आपने स्वेतलाना नामक एक उपन्यास भी लिखा है।

श्री विद्यासागर विद्यालंकार की हिन्दी में छ: मौलिक तथा एक दर्जन अनुदित पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी है। उसके साथ ही भिन्न-भिन्न पत्र-पत्रिकाओं में आपके 300 से अधिक लेख सामयिक विषयों पर तथा 50 लेख वैज्ञानिक विषयों पर प्रकाशित हुए है।

श्री नवरत्न विद्यालंकार के "प्रार्थना" एवं "गांधी बानी" नामक दो संग्रह प्रकाशित हुए है। श्री नरेन्द्र विद्या वाचस्पति ने भूमध्य सागर का रण क्षेत्र, की रचना की है।

हिन्दी में जंगल व जंगली प्राणियों से सम्बद्ध साहित्य काव्य उपन्यास आदि लिखने वालों में श्री उदयवीर 'विराज' वेदालंकार ने अच्छी ख्याति प्राप्त की है। आपने लगभग 30 पुस्तकों की रचना की है। नेपालेश्वर सम्राट् विक्रमादित्य, फ़बरी, मीडिया, असिधारा, बसन्त के फूल, वनराज के राज में, हाथियों का खेदा, हाथियों की खोज में, जंगल के रहस्य, हम हिन्दू है, प्रेमदूती, तिरंगा झण्डा, नया आलोक नयीं छाया, रति विलाप आदि आपकी कृतियाँ है। हाथियों का खेदा पर उ.प्र. सरकार द्वारा 1000 रुपये तथा बसन्त के फूल पर 400 रुंपये के पुरस्कार से आपको सम्मानित किया गया है।

डॉ॰ योगेश्वर आयुर्वेदालंकार ने जागरण और ज्योत्सना की रचना की है। आपकी ज्योत्सना हरियाणा सरकार द्वारा 1969 में पुरस्कृत हो चुकी है।

श्री आनन्द वर्धन विद्यालंकार ने हिन्दी में अच्छी कविताएं लिखी है विहया, रश्मिहास, और सान्ध्यरव नाम से आपके तीन काव्य संग्रह प्रकाशित हुए है।

श्री श्यामसुन्दर आयुर्वेदालंकार ने जीवन निर्माण और स्वर्ग आश्रम नामक जीवनोपयोगी पुस्तकों की रचना की है।

श्री सत्यभूषण वेदालंकार ने लाला लाजपतराय, झांसी की रानी, महाराणा प्रताप, लोकमान्य तिलक आदि महापुरुषों की जीवनियाँ निबन्ध चंद्रिका, व्यापारिक पत्र एवं अनुमानिक पत्र आदि छात्रोपयोगी पाठ्य पुस्तकें लिखी है।

डॉ॰ जयकृष्ण विद्यालंकार ने हिन्दी में दस से भी अधिक आलोचनात्मक एवं शोध पूर्ण लेख-लिखे है जो केन्द्रीय हिन्दी संस्थान की त्रैमासिक शोध-पत्रिका गणेषणा में प्रकाशित हुए है।

श्री हरिवंश वेदालंकार ने 'आज का हिन्दी व्याकरण' और 'हिन्दी निबन्ध रचना' का प्रणयन किया है।

डॉ॰ सत्यकाम विद्यालंकार वर्मा आयुर्वेदालंकार ने हिन्दी में उच्चस्तरीय छात्रोपयोगी आलोचनात्मक साहित्य का सृजन किया है। आपकी सबसे पहली पुस्तक आचार्य कृपलानी है जो आपकी छात्रावस्था (1946) में ही प्रकाशित हो गई थी। आपकी संन्यासी एक अध्ययन, गोदान एक अध्ययन, हिन्दी साहित्यानुशीलन, हिन्दी का आधुनिक साहित्य, महाकवि प्रसाद, महाकवि पंत, जनकवि दिनकर, युगकवि तुलसी उल्लेखनीय प्रसिद्ध कृतियाँ है।

श्री शंकरदेव वेदालंकार राजनीतिज्ञ होने के साथ-साथ उच्चकोटि के लेखक भी रहे हैं। आप द्वारा प्रणीत, उल्टी खोपड़ी माणिक्यम्मायोगिनी, अधिकार याद रख लिये गये, कर्त्तव्य भूल गये, इंदिरा गांधी समग्र रूप में, आदि रचनाएं प्रसिद्ध है।

श्री भारत भूषण विद्यालंकार ने सुयोग्य अनुवादक एवं संपादक के रूप में कई पुस्तकें प्रकाशित की है। आप द्वारा अनुदित जापान का इतिहास व चीन पुनर्जागरण तथा संपादित विदेशियों के लिए प्राइमर (800 पृष्ठ) देवनागरी लिपि अभ्यास पुस्तक व्यावहारिक हिन्दी-अंग्रेजी कोष, चैम्बर्स अंग्रेजी-हिन्दी कोष, समेकित पारिभाषिक शब्दावली, प्रशासन पदनाम शब्दावली नामक पुस्तकों का प्रमुख स्थान है।

श्री चन्द्रभानु वेदालंकार, डॉ॰ भगत सिंह विद्यालंकार, श्री वेद कुमार वेदालंकार डॉ॰ विजयवीर विद्यालंकार तथा श्री ओमप्रकाश विद्यालंकार ने मराठी भाषी होते हुए भी गुरुकुल विश्वविद्यालय की शिक्षा दीक्षा के प्रभाव से हिन्दी साहित्य की जो सेवा की है, वह अविस्मरणीय रहेगी।

श्री चन्द्रभानु वेदालंकार ने हिन्दी साहित्य विपात्र मुक्ति की उपनिषद् और भारतेन्दु के विचार एक पुनर्विचार नाम से तीन पुस्तकें लिखी हैं।

डॉ॰ भगत सिंह विद्यालंकार ने चिन्तन अनुचिंतन, कवित्रय, रामकथा के पात्रों के चरित्रों का तुलनात्मक अध्ययन, रामकथा और तुलसीदास और कवितावली संदर्भ और सम्पर्क, बाल्मीकि रामायण के शस्त्रास्त्र आदि शोधपूर्ण आलोचनात्मक कृतियाँ हिन्दी साहित्य को दी है। साथ ही आपने 22 शालोपयोगी हिन्दी पुस्तकों का संपादन किया है आपके अनेक आलोचनात्मक लेख भी विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित हुए हैं।

श्री वेद कुमार वेदालंकार ने छात्रों की सुविधा को ध्यान में रखकर दो प्रमुख काव्यों की टींकाए प्रस्तुत की है। डॉ॰ विजयवीर विद्यालंकार ने रस सिद्धान्त विवेचन, दक्षिण में रामकथा, संत साहित्य में नाम स्मरण नामक तीन शोधपूर्ण ग्रन्थ तथा 'विपंचिका' नामक काव्य की रचना की है। श्री ओमप्रकाश विद्यालंकार ने प्रेमचन्द से मुक्तिबोध-औपन्यासिक यात्रा लिखकर अपनी शोधवृत्ति का परिचय दिया है।

डॉ॰ ओम प्रकाश वेदालंकार का शोध प्रबन्ध संत कबीर की योग साधना और उसकी दार्शनिक पृष्ठभूमि हिन्दी साहित्य की बहुमूल्य कृति है। आपने 'निबन्ध मंजूषा' नाम से एक निबन्ध संग्रह का भी सृजन किया है।

डॉ॰ सुरेश कुमार विद्यालंकार ने शैली विज्ञान का गहन अध्ययन करके 'शैली और शैली विज्ञान', तथा शैली विज्ञान और प्रेमचन्द की भाषा नामक तीन गवेषणापूर्ण ग्रन्थ लिखे हे। इसी विषय पर आपके बहुत से लेख भी पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित हुए है।

श्री विजय कुमार विद्यालंकार महापुरूषों का जीवन परिचय लिखने में प्रवीण है। आपने इन्दिरा गांधी, वीर साबरकर, लाल बहादुर शास्त्री, राजा राममोहन राय के जीवन चरित्र बहुत सुन्दर एवं रोचक ढंग से प्रस्तुत किये है। आपकी राजा राममोहन राय पुस्तक को उ.प्र. सरकार से पुरस्कार भी प्राप्त हो चुका है। आप द्वारा अनुदित हमारी विरासत घर परिवार काफी लोकप्रिय हुई है।

इसके अतिरिक्त श्री राजकुमार विद्यालंकार की 'धारा' काव्य संग्रह श्री शंकर सिंह वेदालंकार की वाग्दान एक महर्षि और एक समाज श्री सत्यवीर विद्यालंकार की ब्रह्मचर्य आदि कृतियाँ भी उल्लेखनीय है।

गुरुकुल विद्यालय-विभाग में कार्यरत मुख्याध्यापक महावीर 'नीर' विद्यालंकार ने भी अनेक रचनाओं का सृजन किया है जिनमें-महर्षि दयानन्द गाथा श्रृद्धानन्द गाथा, ब्रह्महालाय उद्‌बोधन, बुह्मगवी, वेदना के स्वर, मातृभूबन्दना में आदि प्रमुख है। साथ ही अनेक पत्रिकाओं में इनके लेख व कविताएं प्रकाशित होती रहती है।

हिन्दी में वैज्ञानिक साहित्य सुलभ करने के क्षेत्र में भी गुरुकुल के स्नातकों ने महत्वपूर्ण योगदान किया है। कुछ स्नातकों ने विज्ञान की मौलिक पुस्तकों का सृजन किया है और कुछ ने अनुवाद के माध्यम से विज्ञान के छात्रों व अध्यापकों को अच्छी वैज्ञानिक पुस्तकें उपलब्ध करायी है।

श्री महामुनि विद्यालंकार कृत भौतिकी विज्ञान की अनुपम तथा हिन्दी में मौलिक वैज्ञानिक पुस्तक है। श्री यज्ञदत विद्यालंकार ने दो खण्डों में विज्ञान प्रवेशिका की रचना की है। श्री सत्येन्द्र कुमार वेदालंकार ने बी.एस.सी. के छात्रों के लिए कार्बनिक रसायन (दो भाग) नामक पुस्तक प्रकाशित की है।

श्री राजेन्द्र कुमार वेदालंकार और डॉ॰ विनोद चन्द्र विद्यालंकार पंतनगर विश्वविद्यालय ने कृषि विषयक अंग्रेजी पाठ्य पुस्तकों को हिन्दी में सुलभ कराने के लिए उनके अनुवाद तथा मौलिक पुस्तकों के संपादन में सहयोग किया है। श्री राजेन्द्र कुमार वेदालंकार द्वारा अनुदित पादप-रोग-विज्ञान, पशु प्रजनन, भारत में मृदा सर्वेक्षण तथा संपादित फूलों के रोग, फसलों के रोग, सब्जियों के रोग, आदि पुस्तकें उल्लेखनीय है।

डॉ॰ विनोद चन्द्र विद्यालंकार ने लगभग 10 पुस्तकों का अनुवाद किया है जिसमें कवकनाशी और पादप रोग नियंत्रण भैंस की भारतीय नस्ल के अभिलक्षण भारत में मृदा संरक्षण फल जैविकी, प्रसार शिक्षा

आदि प्रकाशित हो चुकी है। आपने उ.प्र. कृषि मानचित्रावली आनुवंशिकी के प्रारंभिक सिद्धान्त आदि पुस्तकों के संपादन में भी सहयोग दिया है।

हिन्दी में साहित्य सृजन के अतरिक्त गुरुकुल के स्नातक विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं के लिये रोचक ज्ञानवर्धक गवेष्णात्मक लेख मनोरम कविताएं, कहानियां यात्रावृत्त आदि लिखकर हिन्दी साहित्य की विभिन्न विधाओं पर अनुसंधान करके तथा विश्वविद्यालयों एवं महाविद्यालयों में हिन्दी साहित्य का अध्यापन करके सेवा का कार्य कर रहें है।

पत्रकारिता के क्षेत्र में

गुरुकुल कांगड़ी के स्नातकों को पत्रकारिता के क्षेत्र में अच्छी ख्याति प्राप्त हुई है। हिंन्दी का शायद ही कोई ऐसा पत्र होगा जिसके संपादकीय विभाग में गुरुकुल के स्नातकों ने कार्य न किया हो।

पं॰ इन्द्र विद्यावाचस्पति को दिल्ली में हिन्दी पत्रकारिता का जनक माना जाता है। बाल्यावस्था से ही पत्रकारिता को और आपका झुकाव था जब आप लगभग 7-8 वर्ष के थे तभी सत्यप्रकाशक नाम से एक हस्तलिखित पत्रिका निकालते थे। स्नातक बनने से पूर्व आपने अपने पिता स्वामी श्रद्धानन्द जी द्वारा निकाले जाने वाले सद्धर्म प्रचारक के दैनिक संस्करण के संपादन का दायित्व संभाला और काफी समय तक सफलतापूर्वक निभाया। 1913 में साप्ताहिक सद्धर्म प्रचारक आपके सम्पादकत्व में निकलने लगा और कालांतर में दैनिक पत्र विजय निकालने लगे। इस पत्र के माध्यम से आप दिल्ली के यशस्वी पत्रकार एवम् साहित्यकार के रूप में प्रख्यात हुए। इसके बाद आपने जनवरी 1923 में दिल्ली से "साप्ताहिक सत्यवादी" "दैनिक वैभव" व "भविष्य" का सम्पादन किया परन्तु किन्हीं अपरिहार्य परिस्थितियों के कारण "वैभव" का सम्पादन छोड़ दिया। 12 अप्रैल 1923 को आपने 'अर्जुनस्य प्रतिज्ञे द्वे न दैन्यं न पलायनम्' इस ध्येय वाक्य को लेकर दैनिक अर्जुन का प्रथम अंक निकाला और सत्यवादी अर्जुन के साप्ताहिक के रूप में निकलता रहा। अर्जुन ने अपने जीवन काल में आर्य समाज और सारे देश की जो सेवा की है वह सर्वविदित है। बाद में राजनैतिक कारणों से अर्जुन के नाम को बदलना पड़ा और वह वीर अर्जुन के नाम से प्रकाशित होने लगा। भारत का विभाजन होने के बाद आर्थिक स्थिति बिगड़ जाने के कारण भी अर्जुन के प्रकाशन के 25 वर्ष पूरे हो जाने के बाद आपको इसे बन्द करना पड़ा। आपने कुछ समय बम्बई के नवराष्ट्र और दिल्ली के जनसत्ता का भी संपादन सफलतापूर्वक किया। इस सभी पत्रों के माध्यम से आपकी स्वतंत्र विचारधारा और राष्ट्रीय भावना खुलकर सामने आई। आपकी सम्पादकीय टिप्पणियां और अग्रलेख जहाँ एक ओर भारतीयों के मन में राष्ट्रीय प्रेम व देश पर मर मिटने की भावना उत्पन्न करते थे, वहीं विरोधी के हृदय पर विष बुझे बाण की तरह प्रहार करते थे। यही कारण रहा कि तत्कालीन शासक तथा उसके पिट्ठू आपको अपना प्रबल शत्रु समझते थे। आपके प्रयत्नों से हिन्दी पत्रकार-सम्मेलन का शुभारंभ हुआ और आपको दो बार उसका प्रधान भी चुना गया।

श्री सत्यदेव विद्यालंकार का पत्रकारिता के क्षेत्र में पं॰ इन्द्र जी के बाद प्रमुख स्थान है। आपको अध्ययन काल से ही पत्रकारिता का शौक था।

गुरुकुल में पढ़ते समय आप राजहंस, अद्भुत, विजयदशमी तथा समालोचक नामक हस्तलिखित पत्र निकाला करते थे। आपने पत्रकारिता की दीक्षा सद्धर्म प्रचारक, श्रद्धा से ली। स्नातक होने के बाद आपने अपने पत्रकारिता जीवन की शुरूआत पं॰ इन्द्र जी के मार्ग दर्शन से ही की थी और उन्हीं के साथ विजय में कार्य करना प्रारम्भ किया था। आजकल हिन्दी के जितने भी प्रमुख समाचार पत्र निकलते है उनमें से अधिकांश की आधारशीला रखने वालों में आपका प्रमुख स्थान है। आप दैनिक हिन्दुस्तान के आदि सम्पादक

थे और नवभारत टाइम्स की शुरूआत भी आपने ही की। आपने राजस्थान केसरी मारवाडी, विश्वामित्र, अमर भारत नवयुग, प्रणवीर, नवप्रभात आदि पत्रों के संपादन का कार्य बड़ी सफलता के साथ किया और सभी पत्रों को प्रगति पथ पर अग्रसर किया।

पं० भीमसेन विद्यालंकार ने 1924 में सर्वप्रथम वीर अर्जुन में प्रधान सम्पादक के रूप में कार्य करना प्रारम्भ किया और लगभग एक वर्ष तक इसमें सफलता के साथ कार्य करते रहे। कानूनी तौर पर अर्जुन के पहले सम्पादक आप ही थे 1925 से लाहौर से आपने साप्ताहिक सत्यवादी का प्रकाशन किया। 1929 में आप लोक सेवक मण्डल के साप्ताहिक पत्र, पंजाब केसरी के सम्पादक बने। 1933 में आपने अलंकार मासिक निकाला जिसका नाम बाद में हिन्दी सन्देश रखा गया। आपने राजपाल एण्ड सन्स लाहौर की ओर से राजपाल मासिक का सम्पादन भी किया। आपको देश भक्ति विषयक लेख लिखने पर 1947 से पूर्व दो बार जेल-यात्रा भी करनी पड़ी। आप साप्ताहिक पत्र आर्य के भी संपदाक रहे।

श्री रामगोपाल विद्यालंकार अपने समय के जाने माने पत्रकार थे। आपने अपने सम्पादकीय जीवन की शुरूआत नागपुर से प्रणवीर निकाल कर की। आप कुछ समय कलकत्ता के विश्वमित्र का भी सम्पादन करते रहे। आपने लगभग 20 वर्ष तक अर्जुन का संपादन किया और उसे सफलता के चरम पर पहुंचा दिया। अर्जुन के सम्पादन और प्रबन्धक के साथ आपका इतना घनिष्ठ सम्बन्ध था कि हिन्दी पत्रकार जगत् में आपको तथा अर्जुन को एक साथ स्मरण किया जाता था। बाद में कुछ समय आपने दैनिक हिन्दुस्तान और नवभारत टाइम्स में भी कार्य किया।

श्री सत्यकाम विद्यालंकार की गणना भारत के प्रमुख पत्रकारों में की जाती है। आपने पहले कुछ काल तक अर्जुन के सम्पादक के रूप में काम किया और उसमें सरकार की दृष्टि में आपत्तिजनक किसी समाचार के छप जाने से आपको पं० इन्द्र जी के साथ जेल यात्रा करनी पड़ी थी। 1931 में आप नवयुग के सम्पादक बनाये गये। आपने श्री देशबन्धु गुप्ता के तेज की ओर से प्रकाशित विजय साप्ताहिक तथा आपबीती को योग्यता पूर्वक सम्पादन किया। 1950 में आपने धर्मयुग-परिवार में उसके मुखिया के रूप में कदम रखा। आपके संपादकत्व में धर्मयुग ने एक सर्वश्रेष्ठ साप्ताहिक एवं सांस्कृतिक पत्र के रूप में पर्याप्त ख्याति अर्जित की। 1961 में नवनीत हिन्दी डाइजेस्ट तथा इसके गुजराती व मराठी संस्करणों का कार्य भार संभाला और निरन्तर 10 वर्ष तक उसका सम्पादन करते रहे। आपके कार्यकाल में नवनीत ने काफी लोकप्रियता प्राप्त की।

श्री अवनीन्द्र कुमार विद्यालंकार गुरुकुल के स्नातक होने के बाद आर्य प्रतिनिधि पंजाब (लाहौर) के साप्ताहिक आर्य के प्रथम संपादक नियुक्त हुए और छः वर्ष तक लगातार इसका सम्पादन करते रहें। 1934 में आप नवयुग दैनिक के प्रधान सम्पादक बने। आपने दैनिक हिन्दुस्तान के संयुक्त सम्पादक नवयुग साप्ताहिक के सम्पादक दैनिक नवप्रभात के संयुक्त सम्पादक तथा जन सन्धि के सम्पादन के रूप में कई वर्षों तक कार्य किया और इन सभी पत्रों को लोकप्रिय बनाने में महत्वपूर्ण योगदान किया।

निर्भीक एवं सत्यनिष्ठ श्री कृष्ण चन्द्र विद्यालंकार साप्ताहिक "वीर अर्जुन" के आदि सम्पादक के रूप में जाने जाते है। इससे पूर्व 1932 में आपने पं० इन्द्र जी के साथ 'वीर अर्जुन दैनिक' के सम्पादकीय विभाग में कार्य किया। आप कुछ समय त्यागभूमि के सम्पादक बने और उसी में कार्य करते रहे।

श्री चन्द्रगुप्त विद्यालंकार ने एक ख्याति प्राप्त लेखक के साथ-साथ सुयोग्य पत्रकार के रूप में भी पर्याप्त प्रसिद्धि पाई है। गुरुकुल से स्नातक बनने के बाद आप सर्वप्रथम देहरादून की ज्योति के सहसम्पादक बने। 1931 में आपने लाहौर में दैनिक जन्मभूमि का सम्पादन एवं प्रकाशन किया। विभाजन के बाद आपने

भारत सरकार के विदेशी मामलों के मासिक पत्र विश्वदर्शन का सम्पादन किया। यह अपने ढंग का हिन्दी में प्रथम और अन्तिम पत्र था। लगभग 6 वर्ष तक इसमें कार्य करने के बाद आप भारत सरकार की सांस्कृतिक मासिक पत्रिका आजकल के सम्पादक नियुक्त हुए। आपके सुझाव पर ही सरकार ने आजकल को भारतीय साहित्य का प्रतिनिधि पत्र बनाया था। मई 1963 में आपने बम्बई में टाइम्स ऑफ इंडिया की भारतीय कहानियों की मासिक प्रतिनिधि पत्रिका सारिका का सम्पादन कार्य संभाला और उसे दक्षतापूर्वक निभाया।

पं॰ बंशीधर हिन्दी प्रचार मण्डल हैदराबाद की साप्ताहिक पत्रिका अजन्ता के सम्पादक रहें जो हिन्दी जगत् में अमर हो गये।

श्री अमरनाथ विद्यालंकार ने लगभग तीन वर्ष तक सर्वेन्टस् आफ पीपुल सोसायटी के प्रमुख पत्र पंजाब केशरी का सम्पादन किया। श्री विश्वनाथ विद्यालंकार और श्री चन्द्रमणि विद्यालंकार ने 1921 में वैदिक संदेश नामक मासिक पत्र का श्री पं॰ धर्मदेव विद्यामार्तण्ड ने गुरुकुल पत्रिका का डॉ॰ हरिप्रकाश आयुर्वेदालंकार ने आर्योदय साप्ताहिक का, श्री ऋषिदेव वेदालंकार ने आर्य प्रतिनिधि सभा उ॰प्र॰ के साप्ताहिक 'आर्य-मिश्र' का कुशलतापूर्वक सम्पादन किया।

श्री भगवद् दत्त वेदालंकार कई वर्षों तक गुरुकुल पत्रिका के सम्पादक के रूप में कार्य करते रहें।

डॉ॰ रामनाथ वेदालंकार गुरुकुल विश्वविद्यालय की शोध पत्रिका शोध भारती के प्रधान सम्पादक रहें।

श्री दीनानाथ सिद्धान्तालंकार ने पत्रकारिता के क्षेत्र में योगदान दिया है गुरुकुल से स्नातक होते ही आप गुरुकुल कांगड़ी के साप्ताहिक पत्र 'श्रद्धा' में उपसंपादक बने। 1923 में आपने पं॰ इन्द्र जी के साथ अर्जुन में भी सह संपादक के रूप में कार्य करके पं॰ इन्द्र जी को अपना पूरा सहयोग दिया। आप लाहौर के विधवा बन्धु दिल्ली के जीवन पथ, 'ग्राम सहयोगी' एवं भारत सेवक नामक मासिक पत्रों के संपादक रहें। इसके अतिरिक्त विश्वमित्र दैनिक, आर्य साप्ताहिक, आयुर्वेद महासम्मेलन पत्रिका, जनसत्ता तथा आर्य जगत् भी आपकी लेखनी से अछूते नहीं रहें।

श्री वैद्य निरंजन देव आयुर्वेदालंकार ने अर्जुन (दिल्ली) लोकमत (जबलपुर) जन्मभूमि (लाहौर) नामक दैनिक पत्रों के सह सम्पादक के पद पर कार्य किया और उन्हें अपनी संपादन-कला से बहुत लोकप्रिय बनाया।

श्री परम वेदालंकार ने दिल्ली के कई दैनिक समाचार पत्रों के सम्पादकीय विभाग में कार्य किया। बाद में आपने दिल्ली से ही 'दैनिक समाचार' नामक स्वतंत्र पत्र निकाला।

श्री शिवकुमार वेदालंकार ने कुछ महीने अर्जुन में उपसंपादक के रूप में कार्य करने के बाद नवम्बर 1936 से हिन्दुस्तान दैनिक के संपादकीय विभाग में कार्य करना आरम्भ किया। आप इसमें कुछ वर्ष उपसंपादक रहें और फिर मुख्य उपसंपादक के पद पर कुशलातापूर्वक कार्य करते रहे।

निष्ठावान् पत्रकार श्री आनन्द विद्यालंकार के पत्रकार जीवन का शुभारम्भ 1939 में नवराष्ट्र से हुआ जिसमें आपने उपसंपादक के रूप में कार्य किया। इसके बाद आप विश्वमित्र और अर्जुन में भी कार्य करते रहें। 1947 में आपने नवभारत टाइम्स में प्रवेश किया और वरिष्ठ सहसंपादक और अग्रलेख-लेखक का कार्य करते रहें।

श्री अमृतपाल वेदालंकार ने 1947 में जालन्धर के साप्ताहिक पत्र आकाशवाणी के सम्पादक के रूप में कार्य किया। केनिया (अफ्रीका) में आप 17 वर्ष तक अमर भारती का संपादन करते रहे और लीड्स (ग्रेट ब्रिटेन) में विश्व हिन्दू परिषद् के 'हिन्दू विश्व' का संपादन करते रहें।

श्री कृष्णचन्द्र वेदालंकार प्रतिभाशाली कुशल पत्रकार के रूप में कुछ समय तक बम्बई के माहेश्वरी के सम्पादक रहें। 1938-49 में आपने दैनिक वीर अर्जुन में सह-संपादक और अग्रलेख लेखक के रूप में उल्लेखनीय कार्य किया और हिन्दुस्तान दैनिक में सहसम्पादक रहें।

श्री धीरेन्द्र कुमार विद्यालंकार ने भारतीय एवं विदशी दूतावासों से निकलने वाले पत्रों का सम्पादन किया है। आपने 1939-51 तक वीर अर्जुन दैनिक के सम्पादकीय विभाग में विभिन्न पदों पर कार्य करने के बाद 12 वर्ष अमेरिकी दूतावास के साप्ताहिक पत्र अमेरिकन रिपोर्टर में कार्य किया और उसी में हिन्दी सम्पादक के पद पर कार्य क़रते रहे।

श्री क्षितीश कुमार वेदालंकार ख्याति प्राप्त विद्वान् एवं सफल पत्रकार रहे हैं। आपने 1947 में अर्जुन के संपादकीय विभाग में कार्य करना शुरू किया और पांच वर्ष तक उसी में कार्य करते रहें। 1952 से आप दैनिक हिन्दुस्तान में सह संपादक एवं अग्रलेख लेखक के रूप में कार्य करते रहें। आपके अग्रलेख काफी रोचक और प्रभावशाली रहे। आपके द्वारा आर्य जगत् का संपादन कार्य बड़ा ही प्रभावशाली एवं महत्वपूर्ण रहा है।

श्री नेरन्द्र विद्यावाचस्पति ने पत्रकारिता की दीक्षा अर्जुन से प्राप्त की थी आपने कई वर्षों तक नागपुर के दैनिक व साप्ताहिक लोकमत बम्बई के दैनिक हिन्दुस्तान (बाद में लोकमान्य) साप्ताहिक छाया तथा नागपुर की प्रतिमा मासिक में सम्पादक के रूप में कार्य किया। साप्ताहिक हिन्दुस्तान में सहसंपादक के रूप में सराहनीय कार्य किया है।

श्री विद्यासागर विद्यालंकार ने सर्वप्रथम अर्जुन में संपादक एवं प्रबन्धक के रूप में कार्य किया। उसके बाद हिन्दुस्तान टाइम्स के .संपादकीय विभाग में कार्यरत रहें। फिर नवभारती सहकार प्रकाशन प्रतिष्ठान की मासिक पत्रिका 'प्रकर' के संपादक रहें।

श्री सूर्यदेव वेदालंकार कुशल एवं ख्याति प्राप्त पत्रकार रहें है। पहले आप वाराणसी के दैनिक आज के संपादकीय विभाग में थे फिर लखनऊ से प्रकाशित होने वाले नवजीवन दैनिक के उपसंपादक के रूप में कार्य किया।

श्री सुभाषचन्द्र विद्यालंकार ने अपने पत्रकारिता जीवन का आरम्भ 'शिक्षा सुधा' नामक पत्रिका के सम्पादक के रूप में किया था। पुनः दिल्ली में प्रकाशन विभाग की 'योजना' पत्रिका का सम्पादन किया।

श्री उदयवीर विराज वेदालंकार ने वीर अर्जुन, हिन्दी मिलाप और धर्मयुग के संपादकीय विभागों में कार्य करने के अतिरिक्त युद्ध यात्रा और शिकार पर हेम गंगा नाम से एक मासिक पत्रिका भी प्रकाशित की।

श्री सतीश (दत्तात्रेय) विद्यालंकार ने 1941 में आर्य भानु (हैदराबाद) के संपादन के साथ ही पत्रकार जीवन में प्रवेश किया और उसके बाद निरन्तर प्रभात (जयपुर) लोकवाणी (जयपुर) अमर भारत (दिल्ली) तथा वीर अर्जुन (दिल्ली) आदि पत्रों में संपादन कार्य करते रहें। पुनः दैनिक हिन्दुस्तान (दिल्ली) के मुख्य उप-संपादक रहें।

श्री ब्रह्मदत्त विद्यालंकार जागृति, लोकमत आदि पत्रों में कुशलातापूर्वक संपादन कार्य करते रहें। पुनः नवभारत टाइम्स में उप-संपादक तथा अग्रलेख लेखक के रूप में एवं विभिन्न योजना परियोजनाओं आदि के बारे में लिखी गई रिपोर्टों के लिए आप प्रसिद्ध रहें है।

श्री नारायणदत्त विद्यालंकार 'हिन्दी स्क्रीन' के माध्यम से पत्रकारिता में प्रविष्ट हुए। उसके बाद आप खादी ग्रामोद्योग कमीशन (बम्बई) के प्रकाशन विभाग में सम्पादक रहें। आपने .भारतीय विद्या-भवन की

पत्रिका “भारती” का संपादन भी किया। नवनीत हिन्दी डाइजेस्ट में सहायक सम्पादक बने फिर इसी के संपादक रहें। नवनीत में विषयों की विविधता आपकी सूझबूझ और परिश्रम का ही परिणाम रहा है।

डॉ॰ अशोक कुमार आयुर्वेदालंकार मध्य प्रदेश आर्य प्रतिनिधि सभा के प्रमुख मासिक पत्र आर्यावर्त के प्रधान संपादक तथा नेशनल मेडिकल एसोसियेशन के प्रमुख पत्र नेशनल मेडिकल गजट के प्रमुख संपादक रहे। डॉ॰ देवेन्द्र कुमार विद्यालंकार ने काफी समय तक वीर अर्जुन तथा जनसत्ता में सह संपादक का कार्य किया। श्री हरिवंश वेदालंकार कई वर्षों तक ‘गुरुकुल’ तथा ‘आर्य’ के कुशल संपादक रहें। श्री वेदराज वेदालंकार 1945-47 में बनारस व कलक़त्ता से प्रकाशित होने वाले सात्विक जीवन के सम्पादक रहें। श्री वीरेन्द्र वेदालंकार ने कुछ समय तक दैनिक हिन्दुस्तान के संपादकीय विभाग में कार्य किया है। डॉ॰ जयकृष्ण विद्यालंकार ने केन्द्रीय हिन्दी संस्थान आगरा की त्रैमासिक पत्रिका गवेषणा का सम्पादन किया। श्री सच्चिदानन्द विद्यालंकार पटना के प्रदीप दैनिक के उपसम्पादक रहे है। कविराज पुरुषोत्तमदेव आयुर्वेदालंकार आयुर्वेद महासम्मेलन पत्रिका (दिल्ली) के सम्पादक रहे। श्री जगदीश आयुर्वेदालंकार आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब (लाहौर) के साप्ताहिक पत्र आर्य के उपसंपादक रहें और अंग्रेजी दैनिक ट्रिब्यून में मुख्य उप सम्पादक का कार्य किया। श्री रवीन्द्र आयुर्वेदालंकार अरविन्दाश्रम के दो प्रमुख मासिक पत्र पुरोधा और अग्निशिखा के संपादक रहें। श्री विद्यारत्न वेदालंकार कुछ वर्ष दिल्ली के नेताजी पत्र के सहसंपादक रहें और उसके बाद नवभारत टाइम्स के संपादकीय विभाग में उपसंपादक के रूप में कार्य किया। श्री गुरुदत्त वेदालंकार ने केन्द्रीय सूचना सेवा में विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं का सम्पादन कार्य किया। तथा कुछ समय तक आप योजना के भी सम्पादक रहें। श्री यशपाल वेदालंकार ने सर्वप्रथम कानपुर के नागरिक का सम्पादन किया और उसके बाद जीवन पर्यन्त हिन्दुस्तान दैनिक के संपादकीय विभाग में कार्य करते रहें। श्री सत्यभूषण योगी वेदालंकार ने शिमला से प्रकाशित होने वाले प्रदीप के सहायक सम्पादक के रूप में कई वर्ष तक कार्य किया। श्री सुरेशचन्द्र वेदालंकार गोरखपुर से प्रकाशित होने वाले ‘आरोग्य’ के सम्पादक रहें।

* * *

नवम-अध्याय

(गुरुकुल कांगड़ी के प्रशासक : व्यक्तित्व एवं कृतित्व)

संस्थापक : स्वामी श्रद्धानन्द : मुख्याधिष्ठाता एवं आचार्य

स्वामी श्रद्धानन्द का बचपन का नाम मुंशीराम था, इनका जन्म जालन्धर जिले के तलवन ग्राम (पंजाब) में सन् 1865 में हुआ था। इनके पिता का नाम श्री नानक चन्द था, जो उत्तर प्रदेश में पुलिस इन्सपेक्टर तथा कोतवाल के पदों पर रहे थे। लाला नानक चन्द एक धार्मिक व्यक्ति थे। तुलसीकृत रामायण के भक्त थे। पूजा-पाठ में पर्याप्त समय लगाया करते थे। मुंशीराम की शिक्षा वाराणसी के सरकारी स्कूल और इलाहाबाद के म्योर सेन्ट्रल कॉलेज में हुई। इनका परिवार सम्पन्न था। जिन शिक्षण संस्थाओं में मुंशीराम की शिक्षा हुई उनका वातावरण बहुत ही भौतिकवाद और पाश्चात्य संस्कृति का था। युवावस्था में मुंशीराम उस वातावरण से प्रभावित हुये बिना नहीं रह पाये। इसलिए इनके जीवन में भी कई दोष उत्पन्न हो गये थे। पाश्चात्य शिक्षा के प्रभाव के कारण मुंशीराम हिन्दू धर्म के प्रति अनास्थावान हो गये थे। यहाँ तक कि ईश्वर की सत्ता पर भी विश्वास नहीं रह गया था। सन् 1879 में महर्षि दयानन्द सरस्वती के साथ उनका सम्पर्क हुआ, जब महर्षि दयानन्द बरेली में वैदिक धर्म का प्रचार करने आये तो इनके पिता लाला नानकचन्द वहाँ कोतवाल थे, वे भी महर्षि के व्याख्यान सुनने जाया करते थे और उनसे प्रभावित भी होते थे। एक दिन लाला नानक चन्द ने अपने पुत्र से कहा- "एक दण्डी स्वामी आये हैं बड़े विद्वान् और योगी हैं, उनकी बातें सुनकर तुम्हारे मन के संशय दूर हो जायेगें। कल मेरे साथ चलकर व्याख्यान सुनना।" महर्षि के व्याख्यान सुनकर मुंशीराम के मन में जो प्रभाव पड़ा उन्होंने इन शब्दों में व्यक्त किया- "मैंने बड़े-बड़े वक्ताओं के व्याख्यान सुने हैं, परन्तु जो ओज महर्षि की वाणी में था वह अन्य कहीं नहीं पाया। उनके भाषण में जो प्रकाश श्रोताओं को मिला वैसा प्रकाश अन्य किसी वक्ता की वाणी में नहीं मिला।"

महर्षि दयानन्द के दर्शन से पूर्व सन् 1877 में मुंशीराम का विवाह जालन्धर के राय श्री शालिग्राम की पुत्री शिवदेवी के साथ हो गया था। उनकी पत्नी अभी तक पितृगृह में ही रह रही थी। मुंशीराम अपने पिता के आदेशानुसार अपनी पत्नी को बरेली में ले आये। श्रीमती शिवदेवी एक पतिव्रता एवं धर्मपरायणा देवी थी। मुंशीराम का जीवन जहाँ महर्षि दयानन्द के भाषणों को सुनकर परिवतर्तित हुआ था वहाँ उनके जीवन में बहुत अधिक परिवर्तन का कारण उनकी पत्नी शिवदेवी की निष्ठापूर्ण सेवा एवं पतिभक्ति ने भी मुंशीराम के जीवन को अत्यधिक प्रभावित किया था। शिवदेवी जी का नियम था कि दोपहर का भोजन तो पति के पीछे ही कर लेती थी क्योंकि दोपहर में मुंशीराम का आना संभव नहीं हो पाता था। परन्तु रात्रि का भोजन पति के आने एवं भोजन करने पर ही करती थी। यदि कभी रात्रि को पति के आने में बहुत विलम्ब हो जाता था तो वे अपना और अपने पति का भोजन लाकर अपने कमरे में रख लेती थी, और उनके आने पर भोजन को गर्म करके भोजन कराती थी। फिर उनके पीछे स्वयं भोजन करती थी। एक बार की बात है कि श्री मुंशीराम रात्रि को अपने घर आ रहे थे, मार्ग में उनके एक मित्र मिल गये वे उनको आग्रहपूर्वक अपने घर ले गये, घर में मुंशीराम को शराब का जाम पेश किया, मुंशीराम उन दिनों शराब तो पीते थे, मना करते-करते चार-पांच पैग पी गये। शराब का नशा होने लगा, और शराब के नशे में ही मित्रों के साथ वेश्या के घर जा पहुँचे। कोतवाल साहब के पुत्र को आया देख

सभी वेश्यायें सम्मानपूर्वक हाथ जोड़कर खड़ी हो गयी, और मुजरा सजाया गया, इसी समय अचानक मुंशीराम के मन में इस सब के प्रति घृणा उत्पन्न हो गयी और वे नापाक-नापाक कहकर नीचे उतर आये और अपने घर लौट आये। बैठक में जाकर तकिये पर जा गिरे और नौकर ने जूते उतार दिये। और उठकर ऊपर जाना चाहा पर खड़े होने की हिम्मत नहीं हुई। एक पहाड़ी नौकर ने ऊपर पहुँचाया। छत पर पहुँचते ही मुंशीराम ने नित्य की भांति दरवाजा बन्द कर लिया दरवाजे के पास पहुँचे ही थे कि वमन होने लगा। इससे आगे की घटना को मुंशीराम ने खुद इस प्रकार अभिव्यक्त किया- "उसी समय एक नाजुक अंगुलियों वाला हाथ सिर पर पहुँच गया और मैंने खुलकर वमन किया। अब शिवदेवी के हाथों में मैं बालकवत् था। कुल्ला करा, मेरा मुँह पोंछकर ऊपर का अंगरखा जो खराब हो गया था बैठे-बैठे ही फेंक दिया था और मुझे आश्रय देकर अन्दर ले गयी। वहाँ पलंग पर लिटाकर मुझ पर चादर डाल दी और साथ बैठकर माथा और सिर दबाने लगी। मुझे उस समय का करुणा और शुद्ध प्रेम से भरा उनका मुख कभी नहीं भूलेगा। मैंने अनुभव किया कि मैं मातृशक्ति की छत्र-छाया के नीचे निश्चित लेट गया हूँ। पथराई हुई आँखें बन्द हो गयी और मैं गहरी नींद में सो गया। रात का शायद एक बजा था जब मेरी आँखें खुली, वह 14-15 वर्ष की बालिका पैर दबा रही थी। मैंने पानी माँगा आश्रय देकर उठाने लगी परन्तु मैं उठ खड़ा हुआ। गरम दूध अंगीठी पर से उतार और उसमें मिश्री डालकर मेरे मुँह से लगा दिया। दूध पीने पर होश आया। मैंने और पास बैठ कर कहा- "देवी तुम बराबर जागती रही और भोजन तक नहीं किया अब भोजन कर लो।" उत्तर ने मुझे व्याकुल कर दिया, परन्तु उस व्याकुलता में भी आशा की झलक थी। शिवदेवी ने कहा- "आपके भोजन किये बिना मैं कैसे खाती। अब भोजन करने में क्या रूचि है?" उस उसम की दशा का वर्णन लेखनी द्वारा नहीं हो सकता। मैंने अपनी गिरावट की दोनों कहानियाँ सुनाकर देवी से क्षमा की प्रार्थना की, परन्तु वहाँ उनकी माता का उपदेश काम कर रहा था। "आप मेरे स्वामी हो, यह सब कुछ सुनाकर मुझ पर पाप क्यों चढ़ाते हो?" मुझे तो यह शिक्षा मिली है कि आपकी नित्य सेवा करूं। उस रात बिना भोजन किये दोनों सो गये और दूसरे दिन से मेरे लिये जीवन ही बदल गया। वैदिक आदर्श से गिरकर भी जो सतीत्व धर्म का पालन पौराणिक समय में आर्य महिलाओं ने किया उसी के प्रताप से भारत भूमि रसातल तक नहीं पहुँची और उसमें पुनरुत्थान की शक्ति अब तक विद्यमान है, यह मेरा निज का अनुभव है।

भारतीय आदर्श नारी के स्नेहपूर्ण पातिव्रत्य और औदार्य का एक अन्य दृष्टांत उस समय उपस्थित हुआ जब बरेली छावनी के पारसी मद्यविक्रेता का लगभग 300/- रु. का बिल आ पहुँचा। कुछ दिन तो मुंशीराम इसे टालते रहे परन्तु बिल के भुगतान की चिन्ता उन्हें मन ही मन परेशान कर रही थी। श्रीमती शिवदेवी ने उनकी इस चिन्ता को भांप लिया और चिन्ता का कारण पूछा, मुंशीराम ने सब कुछ स्पष्ट रूप से कह दिया। उनकी पत्नी ने सुनते ही बिना कुछ कहे तत्काल अपने हाथों से सोने के कड़े उतार कर पति को दे दिये, मुंशीराम यह देखकर हक्के-बक्के रह गयें और कहा "देवी यह कैसे हो सकता है, तुम्हें आभूषित करने के स्थान पर तुम्हें आभूषणों से रहित करने का पाप कैसे करूं?" उस पर श्रीमती शिवदेवी ने कहा कि एक जोड़ी पिता ने, एक जोड़ी श्वसुर महोदय ने दी थी, इनमें से एक जोड़ी तो व्यर्थ ही पड़ी है। यह मेरा माल है। जब तन भी आपका है तो इसको लेने में आपको क्या संकोच है। आपकी चिन्ता दूर करने का यह मंहगा सौदा नहीं है। इस घटना ने मुंशीराम के जीवन को एक नया मोड़ दिया, उन्होंने यह अनुभव किया कि पतिव्रता देवी पति की स्वास्थ्य रक्षा के समय माता, विपत्ति के समय भगिनी और उसे सन्तान सुख पहुँचाने के लिए धर्म पत्नी का रूप धारण करती है।

मुंशीराम के पिता लाला नानक चन्द ने यह सोचा कि उनका पुत्र पढ़ने लायक तो नहीं रहा, अब उसे किसी काम पर आजीविका कमाने के लिए लगा देना चाहिए। इसलिए उन्होंने पिता के पूछने पर

तहसीलदारी की परीक्षा देकर उस महकमें में काम करने के बारे में अपनी सहमति दे दी। उनके पिता उन्हें बरेली के कमिश्नर एडवर्ड के पास ले गये जिसने मुंशीराम को रोल तहसीलदारी के लिए भेज दिया। इस प्रकार मुंशीराम को बरेली में तीन महीने के लिए नायब तहसीलदार की नौकरी मिल गयी। परन्तु वे इतने स्वाभिमानी थे कि इस नौकरी को शीघ्र ही छोड़कर लाहौर चले गये। वहाँ उन्होंने एल.एल.बी. की परीक्षा उत्तीर्ण कर ली। जालन्धर में उन्होंने वकालत प्रारम्भ की। वहाँ मुंशीराम को पर्याप्त सफलता मिली। शीघ्र ही उनकी गिनती जालन्धर के सफल वकीलों में की जाने लगी।

जब मुंशीराम लाहौर में वकालत कर रहे थे आर्य समाज के साप्ताहिक सत्संग में भी जाने लगे थे। उन दिनों लाहौर आर्य समाज का गढ़ माना जाता था। मुंशीराम आर्य समाज के सदस्य बन गये और आर्य समाज के कार्यकलापों में उत्साहपूर्वक भाग लेने लगे। जब उन्होंने वकालत का कार्य जालन्धर में प्रारम्भ किया, उस समय जालन्धर में भी आर्य समाज की स्थापना हो चुकी थी। उन्हें आर्य समाज का प्रधान चुन लिया गया, उस समय पंजाब में आर्य समाज का नेतृत्व युवकों के ही हाथ में था। लाहौर के लाला साईदास, लाला हंसराज, पं० गुरुदत्त और लाला लाजपत राय आदि सब आर्य नेता युवक ही थे। जो स्थिति इन युवकों की लाहौर में थी, वही स्थिति लाला मुंशीराम की जालन्धर में थी। जालन्धर में उनके मुख्य सहयोगी लाला देवराज थे। इन दोनों के परस्पर सहयोग एवं कर्त्तव्य के कारण जालन्धर भी लाहौर के समान आर्य समाज का महत्वपूर्ण केन्द्र बन गया। वकालत करते हुये मुंशीराम आर्य समाज के लिए पर्याप्त समय निकाल लेते थे। प्रात:काल प्रभात फ़ेरी निकालते, रात को नगर के विविध मुहल्लों में सत्यार्थ प्रकाश की कथा करते और रविवार को देहातों में प्रचार करने जाते थे। कन्याओं की शिक्षा के लिए उन्होंने लाला देवराज से मिलकर एक कन्या पाठशाला की स्थापना की जो आगे चलकर एक शिक्षण संस्था के रूप में विकसित हो गयी। मुंशीराम ने शुद्धि के लिए भी कार्य किया जिससे पौराणिक लोग उनके बहुत विरुद्ध हो गये। पौराणिकों के विरोध की परवाह न करके वे शुद्धि का कार्य उत्साहपूर्वक करते रहे। अब उनके अपने व्यक्तिगत जीवन में कोई भी त्रुटि नहीं रह गयी थी, उनका जीवन आर्य मान्यताओं के अनुरूप था। माँस सेवन, धूम्रपान, तास, मद्यपान आदि सभी का उन्होंने पूर्णरूपेण परित्याग कर दिया था। वे प्रतिदिन सन्ध्या हवन करते और प्रतिदिन वेदों का स्वाध्याय भी करते थे।

अगस्त 1891 में मुंशीराम की पत्नी शिवदेवी का स्वर्गवास हो गया था। उस समय उनके बच्चों की आयु 2 वर्ष से दस वर्ष तक की थी। लोगों ने उन्हें पुनर्विवाह के लिए बहुत जोर दिया। उस समय उनकी आयु भी 35 वर्ष की थी। वे पुनर्विवाह के लिए तैयार नहीं हुये। उन्होंने अपने बच्चों के पालन-पोषण के लिए कहा, "मैं अब इन बच्चों का पिता था अब माता की कमी भी मैं पूरी करुँगा।"

19वीं शताब्दी के अन्त में डी.ए.वी. स्कूल एवं कॉलेजों की स्थापना हो चुकी थी, उनकी शिक्षण व्यवस्था में पाश्चात्य प्रभाव अधिक होने के कारण, कट्टरवादी आर्य समाजी नेताओं के मन में असन्तोष व्यापक था जिसकी चर्चा हम गुरुकुल की स्थापना के मूल कारण नामक विषय में कर चुके हैं। इस प्रकार गुरुकुल की स्थापना एवं ऐसी शिक्षण संस्था की स्थापना की जाय जिसमें पढ़कर, वहाँ से निकनले वाले स्नातक आर्य समाज की उद्देश्य पूर्ति में सहायक हो और वे सच्चे राष्ट्रभक्त भी बनें। आर्य समाज के इन नेताओं ने लाला मुंशीराम को अपना नेता मानकर उनको यह कार्य सौंपा कि आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब से बातचीत करके गुरुकुल स्थापित करने का प्रस्ताव आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब में स्वीकृत कराया जाये।

इस विषय में लाला मुंशीराम ने अपने प्रयास तेज कर दिये। एक बार जब मुंशीराम अपने पिता की सेवा से निवृत्त होकर जालन्धर पहुँचे तो उन्हें सूचित किया गया कि श्यामदास नामक सनातनी पण्डित आर्य समाज के शास्त्रार्थ के लिए ललकार रहा है।

प्रथम शास्त्रार्थ

कुछ व्यक्ति मुंशीराम के पास आये और उन्होंने मुंशीराम को यह सूचना दी थी कि वह पण्डित आर्य समाज की झूठा सिद्ध करने के लिए तुला हुआ है। मुंशीराम ने उस पण्डित की चुनौती को स्वीकार कर लिया। शास्त्रार्थ का विषय मूर्तिपूजा तथा अवतारवाद-मण्डन निश्चित हो गया। उस समय जालन्धर आर्य समाज के पास अपना संस्कृत का कोई पण्डित नहीं था। इसलिए लाहौर आर्य समाज से प्रार्थना की गयी। यह वह समय था कि जिस समय आर्य समाज में संस्कृत एवं वैदिक विद्वानों की न्यूनता ही थी, लाहौर से उनको निराशाजनक उत्तर मिला। ऐसी स्थिति में अमृतसर से लाजपत नामक पण्डित को तैयार किया गया। शास्त्रार्थ की एक शर्त थी कि शास्त्रार्थ संस्कृत भाषा में ही होगा। आर्य समाज की तरफ से पण्डित लाजपत संस्कृत में ही बोलते रहे, सनातनी पण्डित श्यामदास ने आम जनता को प्रभावित करने के लिए हिन्दी में बोलना प्रारम्भ कर दिया। जब मुंशीराम ने देखा कि इस पण्डित ने प्रतिज्ञा भंग कर दी है, और हिन्दी भाषा में सनातनी पण्डित के प्रश्नों का तर्कपूर्ण एवं युक्तियुक्त उत्तर दिया कि सनातनी पण्डित आयें-बायें देखने लगे। और सनातनी पण्डित आगा पीछा छुड़ाकर भाग खड़े हुये। इस शास्त्रार्थ ने आर्य समाज को शास्त्रार्थ के नये गुग में लाकर खड़ा कर दिया। उस समय आर्य समाज और सनातनियों के मध्य जितने भी पंजाब में शास्त्रार्थ होते थे वे सभी संस्कृत भाषा में ही होते। परन्तु शास्त्रार्थ के पश्चात् संस्कृत भाषा की अनिवार्यता समाप्त हो गयी। इससे एक बात और उजागर हुई कि संस्कृत भाषा में जो शास्त्रार्थ होते थे उनमें दोनों ओर के पण्डित ब्राह्मण होते थे। हिन्दी भाषा में शास्त्रार्थ होने पर गैर ब्राह्मण विद्वान् भी शास्त्रार्थ करने लगे। इससे शास्त्रार्थ की पकड़ पर जो ब्राह्मणों का एकाधिकार था वह समाप्त हो गया।[1]

जाति बहिष्कार की धमकी

शास्त्रार्थ में पराजित होने के पश्चात् जालन्धर के सनातनी लोगों ने यह धमकी देना प्रारम्भ कर दी कि एक पंचायत बुलायी जायेगी और जो लोग आर्य समाज में प्रविष्ट हुये हैं उनको जाति से बहिष्कृत किया जायेगा। इस घोषणा से आर्य समाजी बने विभिन्न जातियों के सदस्यों में हड़कंप मच गया। परन्तु लाला देवराज और मुंशीराम की बुद्धिमत्ता ने जाति से बहिष्कृत करने की धमकी के विरुद्ध यह कहना एवं प्रचार करना प्रारम्भ कर दिया कि पण्डित लोग जुआँ और मद्यपान करते हैं। पंचायत में इसका रहस्य उद्घाटन किया जायेगा और पंचायत में इस प्रकार के प्रमाण भी प्रस्तुत किये जायेगें। इससे पण्डित लोगों ने डरकर पंचायत बुलाने की धमकी को वापस ले लिया। परन्तु पंजाब में आर्य समाज और सनातनियों के मध्य समय-समय पर टकराव और शास्त्रार्थ होते रहे।

पिता की मृत्यु

26 जून 1886 ई॰ को मुंशीराम के पिता लाला नानक चन्द्र अपने जीवन के अन्तिम श्वासों को गिन रहे थे। पिता ने पुत्र से कहा- "वैदिक हवन कराओ, उस समय रात्रि के प्रथम प्रहर के आठ बजे थे मुंशीराम के हाथ में नाड़ी थी और वेद मंत्रों का पाठ कर रहे थे। उस स्थिति में पिता को किसी भी तरह छोड़ना संभव नहीं था। रात के नौ बजे वैदिक मंत्रों के उच्चारण के बीच में ही पिता ने अपनी अन्तिम विदा ली, और इस तरह उनकी मृत्यु हो गयी। जीवन के अन्तिम समय में आर्य समाजी बनना स्वीकार कर लिया था। इससे यह ज्ञात होता है कि लाला नानक चन्द आर्य समाजी नहीं बन पाये थे। जिस समय मृत्यु हो गयी तो भाई ने धार्मिक रीति रिवाज पूर्ण किये, श्मशान भूमि में अन्तिम संस्कार मुंशीराम की इच्छानुसार हुआ।

सितम्बर 1889 में तलवन में मुंशीराम कुछ अवधि के लिए चले गये। वहाँ पर एक कन्या पाठशाला भी खुलवाई। परन्तु योग्य अध्यापक न मिलने के कारण उसको बन्द करना पड़ा, मुंशीराम के मन में कन्याओं की पढ़ाई का प्रश्न बार-बार आता रहा। जालन्धर में एक पहाड़ी लाडोमाई थी जो हिन्दू महिलाओं को देवनागरी की टूटी-फूटी शिक्षा देती थी। मुंशीराम की धर्मपत्नी तक ने भी यहाँ पर पढ़ा था। लाडोमाई को ईसाईयों ने विशेष प्रलोभन देकर अपनी पुत्री-पाठशाला में रख लिया था। यह माई अपने सम्बन्धों के कारण हिन्दू लड़कियों को धीरे-धीरे ईसाई पाठशाला में ले जाने लगी। इस पाठशाला में मुंशीराम की लड़की भी पढ़ने लगी। यह एक संयोग ही था कि जब मुंशीराम एक दिन कचहरी से लौटे तो उनकी पुत्री ने पाठशाला में गाया जाने वाला यह भजन सुनाया।

"इक बार ईसा-ईसा बोल, तेरा क्या लगेगा मोल।
ईसा तेरा राम रमैया, ईसा तेरा कृष्ण-कन्हैया।।"

इस भजन को सुनकर मुंशीराम सन्न रह गये, इस प्रकार मुंशीराम के मन में कन्या पाठशाला प्रारम्भ करने का विचार उग्र रूप में पनपने लगा। उन्होंने रातों-रात एक अपील लिखी और चन्दा एकत्र करना प्रारम्भ कर दिया। 3 नवम्बर 1888 को अपनी कोठी पर स्वामी दयानन्द निर्वाण दिवस के दिन एक वृहद् यज्ञ करवाया और कन्या पाठशाला के लिए अपील की, और कन्या पाठशाला प्रारम्भ कर दी गयी। इस पाठशाला का यह पौधा कन्या महाविद्यालय जालन्धर के नाम से उत्तर भारत में लड़कियों की शिक्षा का एकमात्र केन्द्र माना जाने लगा। भारत में उच्च घरानों की कन्यायें उच्च शिक्षा प्राप्त करने के लिए इस महाविद्यालय में आने लगी।

श्री मुंशीराम में महाविद्यालय जीवन से ही लिखने की प्रतिभा थी। परन्तु वकालत और आर्य समाज के प्रचार के कारण लेखनी की अपेक्षा वाणी की विदग्धता ही जोरदार हो गयी थी। उनके मन में उर्दू में एक साप्ताहिक पत्रिका निकालने का विचार आया। उन्होंने 'सद् धर्म प्रचारक' के नाम से एक साप्ताहिक पत्र शुरू किया। इसके लिए 25-25 रूपये के सोलह भागीदार भी बना लिये। सत् धर्म प्रचारक का पहला अंक (एक बैशाख 1947 विक्रमी सम्वत्) को प्रकाशित किया। इस प्रकार 1988, 89 की अल्प अवधि में दोनों कार्य प्रारम्भ करके अपने कार्यक्षेत्र को विकसित कर लिया। एक दिन पण्डित गुरुदत्त ने मुंशीराम से पूछा "क्या वकालत करते हुये मनुष्य ईमानदार रह सकता है ?" मुंशीराम ने स्पष्ट उत्तर दिया कि- "ऐसा होना सम्भव नहीं" इस व्यवसाय के अपनाने के कारण एक बार गुरूदत्त ने लाला लाजपत राय का अवमूल्यन भी किया था। इसीलिए वे अपने अनुयायियों भजदत्त से कह उठे- 'वकील मत बनना' यह बात कही तो गयी थी राम भजदत्त को। लेकिन वह मुंशीराम को प्रभावित किये बिना नहीं रह सकी। मुंशीराम अपनी लगन और परिश्रम के कारण शीघ्र ही आर्य समाज में एक शक्ति के रूप में आये। उनके आर्य समाज में बढ़ते प्रभाव के समय में ही पंजाब आर्य समाज में विचार भिन्नता के कारण ऐसा वातावरण बना कि 1893 ई० में आर्य समाज विभाजन के लिए माना जा सकता है।

आगे आने वाले कुछ वर्ष मुंशीराम के लिए कष्टदायक सिद्ध हुये। इन वर्षों में भगवान् ने उनके हाथों में उनके पथ प्रदर्शक एवं प्रियजनों को सदा के लिए छीन लिया। गुरुदत्त को क्षय रोग ने आ घेरा, उसकी सेवा सुश्रुषा से सम्वत् 1946 बीत गया। उपदेशक कक्षा के विवाद के समय में ही मुंशीराम के साले बालकराम बीमार हो गये इन्हीं के सहयोग से मुंशीराम ने जालंधर में कांग्रेस कमेटी की स्थापना करवायी थी। कुछ दिन बीमार रहने के पश्चात् उनकी मृत्यु हो गयी। दूसरे भाई भक्तराम इंगलैण्ड में बैरिस्टर की तैयारी कर रहे थे। बालकराम की मृत्यु ने मुंशीराम की पत्नी को बहुत उदास कर दिया, पत्नी के उदास मन को प्रसन्न करने की इच्छा से हरिद्वार की यात्रा का विचार मन में आया। सितम्बर

1889 ई० में वे हरिद्वार आ पहुँचें। यहाँ हरिद्वार में उनको पण्डों ने घेर लिया जबकि उनको स्पष्ट कहा था कि वे आर्य समाजी हैं। वह पण्डा नित्य बाँस का अचार और दही लाकर देने लगा। मुंशीराम ने पाँच दिन की सेवा का पाँच रूपये का नोट पण्डे को दे दिया। मुंशीराम के मन में आया कि पण्डा नुकसान में रहा होगा। परन्तु पण्डा उनकी पत्नी से भी पांच रूपये ले गया। जब मुंशीराम को इस बात का पता लगा तो उन्होंने अपनी पत्नी से बातचीत करते हुये कहा कि –"यदि हरिद्वार में बन्दर और पण्डे न हों तो स्थान बड़ा रमणीक और रहने के योग्य है।"

मुंशीराम पर आक्रमण

पंजाब में उस समय धार्मिक वातावरण गरमाया हुआ था। एक तरफ आर्य समाज का घरेलू विवाद आरम्भ हो चुका था, दूसरी और सनातन धर्म के साथ धार्मिक प्रतियोगिता के खंडन-मंडन का नाद गूंज रहा था सनातन धर्म अपने अस्तित्व के लिए चितिंत था तो आर्य समाज अपनी सदस्य संख्या बढ़ाने के लिए आतुर था। इस प्रकार एक शास्त्रार्थ के रूप में वाग् युद्ध चल रहा था। सर्वप्रथम सनातनियों ने कपूरथला में हिंसा द्वारा धर्म प्रचार को भयभीत करने का प्रयास किया। हिंसा का प्रयोग सामान्य आर्य समाजी प्रचारक पर न करके मुंशीराम पर ही किया गया। एक से तीन नवम्बर 1889 में स्वामी पूर्णानन्द ने पौराणिक मत के खंडन में भाषण दिये और प्रचार के लिए मुंशीराम को शीघ्र पहुँचने को लिखा। मुंशीराम शीघ्र कपूरथला पहुँचे। वहाँ पहुँचने का एक कारण सनातनियों की धमकी भी थी कि मुंशीराम के यहाँ आने पर उन्हें गिरफ्तार करवा दिया जायेगा। मुंशीराम के व्याख्यान के समय कुछ दंगायी प्रकार के व्यक्ति समीप की एक छत पर बैठ गये। उनमें एक ने पक्की ईंट उनके सिर को निशाना बनाकर मारी, परन्तु देवयोग से अचानक मुंशीराम ने अपना मुँह मोड़ा और दूसरी और मुँह करके बोलने लगे। इस प्रकार बाल-बाल बच गये।

स्वामी पूर्णानन्द जालंधर आ गये यहाँ पर स्वामी जी के मुंशीराम, देवराज, आदि उनके शिष्य बन गये। पढ़ने वालों में सुकेत के राजकुमार थे। मुंशीराम ने संस्कृत में पर्याप्त योग्यता प्राप्त कर ली थी। एक भाषण में जब मुंशीराम संस्कृत उद्धरणों को बहुत अधिक मात्रा में कह रहे थे तो लाला लाजपत राय ने आश्चर्य में पड़कर पूछा था कि "इतनी संस्कृत कब सीख गये?" 19 मार्च 1890 ई० को पण्डित गुरुदत्त का देहावसान हो गया। पण्डित गुरुदत्त मुंशीराम के लिए एक प्रेरणा थे। और उनके दिव्य आत्मिक ज्ञान के चक्षु थे। मुंशीराम गुरुदत्त की मृत्यु के शोक से उभर नहीं पाये थे कि 13 जून 1890 ई० को पंजाब आर्य समाज के देदीप्यमान नक्षत्र साईदास इस संसार से विदा हो गये। गुरुदत्त और साईदास की मृत्यु से मुंशीराम का लाहौर के साथ इतना लगाव नहीं रहा जितना की पूर्व में था।

महर्षि दयानन्द की मृत्यु के पश्चात् समस्त आर्य समाजियों ने देश के प्रायः सभी प्रान्तों में शोक सभायें की। इसी प्रकार की शोक सभा लाहौर में हुई। जिसमें ऋषि के आदर्शों के अनुकूल एक स्मारक बनाने का विचार उत्पन्न हुआ। 6 नवम्बर 1983 को लाहौर आर्य समाज ने अपनी सभा में स्वामी दयानन्द की स्मृति में डी.ए.वी. स्कूल स्थापित करने का प्रस्ताव पारित कर दिया। इसके परिणाम स्वरूप 27 अगस्त 1886 को दयानन्द एंग्लो वैदिक संस्था की रजिस्ट्री करवा दी गयी। इसके साथ ही कई डी.ए.वी. स्कूल एवं कॉलेज खोल दिये गये। इसे हम आर्य समाज में एक नये युग का सूत्रपात भी कह सकते हैं। इन स्कूलों और कॉलेजों के लिए जो धन एकत्रित करने की अपील की जाती थी उनमें आर्य समाज के सिद्धान्त वेद आदि के प्रचार की बात कही जाती थी। परन्तु आगे चलकर डी.ए.वी. ट्रस्ट ने वेद, संस्कृत एवं आर्य ग्रन्थों को अध्ययन की बात को ठुकरा दिया। इससे कट्टरवादी आर्य समाजी वेद और आर्य ग्रन्थों में श्रद्धा रखने

वाले व्यक्तियों में निराशा व्याप्त हो गयी और उन्होंने यह विचार प्रारम्भ कर दिया कि डी.ए.वी. का विकल्प हमें ढूँढना होगा।

पत्नी की मृत्यु

मुंशीराम की पत्नी श्रीमती शिवदेवी जो उनकी सहभागिनी बनकर प्रत्येक कार्य में उनकी प्रेरणा का स्रोत थी, अचानक सांघातिक रोग से बीमार हो गयी। लड़की का जन्म होते ही देहान्त हो गया। अन्तिम समय में इनकी पत्नी ने अपनी पुत्री वेदकुमारी से कलमदान मंगवाया एक परचे पर कुछ लिखा और कलमदान के नीचे के खाने में रख दिया। मुंशीराम जी ने जब अन्तिम बार दवा पिलायी तो शिवदेवी ने अपनी माँ से धीमे स्वर में कहा "जिनकी मुझे सेवा करनी थी वे मेरी सेवा करते हैं।" उनकी स्थिति को देखकर देवराज ने कहा "बीबी जी भजन सुनोगी और देवराज ने- प्रभु जी भेंट धरूं क्या मैं तेरे... पद गाया।" और इस पद के सुनते ही उनके प्राण-पखेरू उड़ गये। शिवदेवी अपने पीछे वेदकुमारी 10 वर्ष, हेमन्त कुमारी (छः वर्ष), हरिश्चन्द्र (चार वर्ष) और इन्द्र (दो वर्ष) के चार पुत्र-पुत्रियों को छोड़ गयी थी। उनकी पत्नी की मृत्यु के पश्चात् उनका ध्यान उस कागज के टुकड़े की ओर गया जिस पर लिखा था "बाबू जी, अब मैं चली। मेरे अपराध क्षमा करना। आपको तो मुझसे अत्यधिक रूपमती और बुद्धिमती सेविका मिल जायेगी, परन्तु आप इन बच्चों को मत भूलना। मेरा अन्तिम प्रणाम स्वीकार करो।" मुंशीराम पर रिश्तेदारों के अनेक दबाव आये कि पुनर्विवाह किया जाय क्योंकि इन बच्चों का पालन-पोषण कैसे होगा ? परन्तु मुंशीराम ने उनकी एक न सुनी और मुंशीराम अपने बच्चों को पिता और माता का स्नेह देने लगे।

पंजाब आर्य समाज के दो दल एवं आर्य प्रतिनिधि सभा का प्रधान बनना

जब मुंशीराम पहाड़ पर से वापिस जालन्धर आये तो उन्होंने देखा कि आर्य समाजी को माँस खाना चाहिए या नहीं खाना चाहिए यह विषय बहुत जोर पकड़ गया है। यह विषय आर्य समाज के मञ्चों पर भी खुले रूप से वाद-विवाद के रूप में उभरकर आ गया था। महात्मा हंसराज लाहौर आर्यसमाज डी.ए.वी. कमेटी और आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब तीनों ही के प्रधान थे। अक्टूबर 1892 ई० में पण्डित लेखराज जालन्धर आये, दोनों ने परस्पर परामर्श करके अक्टूबर में ही होने वाले आर्य प्रतिनिधि सभा के चुनाव में सक्रिय भाग लेने का निश्चय किया। माँस भक्षण का प्रकरण चुनाव में भी छाया रहा। अन्त में आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब का चुनाव सम्पन्न हुआ। उसमें आर्य समाजियों, संन्यासियों और प्रचारकों के कारण श्री मुंशीराम प्रधान चुने गये। मंत्री भी श्री मुंशीराम के ही दल के श्री दुर्गाप्रसाद निर्वाचित हुये। कॉलेज पार्टी को यह बड़ा धक्का लगा। सभा प्रधान बनते ही मुंशीराम ने यह संकल्प किया कि- "अपना सम्पूर्ण जीवन आर्य समाज की गतिविधियों के लिए समर्पित कर दूंगा।" उन्होंने यह भी कहा था कि- "अब मेरा जीवन निजी नहीं रहा, सार्वजनिक हो गया है।" श्री मुंशीराम ने सभा में यह प्रस्ताव पारित करवाया कि माँसाहारी व्यक्तियों को सभा का सदस्य नहीं बनाना चाहिए। और वह प्रस्ताव आज भी आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब में लागू माना जाता है।

पंजाब आर्य समाज के अन्तर्विरोधों के समय में ही भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस का नवाँ वार्षिक अधिवेशन पंजाब में आमन्त्रित किया गया। इस सम्बन्ध में श्री मुंशीराम से ही निवेदन किया गया कि- "इस सम्बन्ध में वे कांग्रेस के अधिवेशन के लिए विभिन्न स्थानों पर भाषण देने का आयोजन करें।" इसके अनुसार मुंशीराम ने कई स्थानों पर कांग्रेस के सम्बन्ध में भाषण दिये। और उन्होंने कांग्रेस के इस अधिवेशन में भाग लिया। भाग लेने से यह लाभ हुआ कि महादेव गोविन्द रानाडे और गोखले से परिचय इसी अधिवेशन में हुआ।

गुरुकुल की स्थापना का विचार

श्री मुंशीराम ने महर्षि दयानन्द द्वारा रचित "सत्यार्थ प्रकाश" दस बार पढ़ा, जब उन्होंने दसवीं बार सत्यार्थ प्रकाश पढ़ा, तो महर्षि दयानन्द की निम्नलिखित पक्तियों का अभिप्राय समझते हुये उन्होंने उन पंक्तियों पर चिन्तन एवं मनन किया। वे पंक्तियाँ हैं-

"दुर्दिन जब आता है तब देशवासियों को अनेक प्रकार से दुख भोगना पड़ता है, कोई कितना ही करें परन्तु जो स्वदेशी राज्य होता है वह सर्वोपरि उत्तम होता है। अथवा मत-मतान्तर के आग्रह रहित अपने और पराये का पक्षपात शून्य, प्रजा पर माता-पिता के समान कृपा, न्याय और दया के साथ विदेशियों का राज्य भी सुखदायक नहीं हैं। परन्तु भिन्न-भिन्न भाषा, पृथक्-पृथक् शिक्षा, अलग व्यवहार का छूटना अति दुष्कर है। बिना इसके छूटे परस्पर का उपकार और अभिप्राय सिद्ध होना कठिन है। इसलिए जो वेद आदि शास्त्रों में व्यवस्था का इतिहास लिखा है उसी को मान्य करना भद्र पुरुषों का काम है।"

इन पंक्तियों पर श्री मुंशीराम ने मनन करना प्रारम्भ किया और इसके साथ वेद का स्वाध्याय करते हुये- "उपह्वरे गिरीणां संगमे च नदीनाम्। धिया विप्रोऽजायत।" अर्थात् मेघावी प्रतिभा विकसित करने के लिए शिक्षा के केन्द्र नदियों के संगम और पर्वतों की उपत्यकाओं के समीप होने चाहिए। इसके साथ ही सत्यार्थ प्रकाश के तीसरे समुल्लास में प्रतिपादित 25 वर्षीय पाठ विधि का विस्तृत वर्णन महर्षि दयानन्द ने किया है।

डी.ए.वी. कमेटी द्वारा संस्कृत, वेद और वेदांङ्ग के अध्ययन-अध्यापन की बात को स्वीकार नहीं किया गया। इसलिए उनके मन में गुरुकुल शिक्षा प्रणाली को प्रारम्भ करने का संकल्प उत्पन्न हुआ जिसकी विस्तृत चर्चा द्वितीय अध्याय में हम कर चुके हैं। समस्त संघर्षों का मुकाबला करते हुय गुरुकुल की स्थापना 1900 में पंजाब में की गयी। कांगड़ी ग्राम में भूमि निश्चित करने के पश्चात् 22 अक्टूबर 1901 ई॰ को सभा में भूमि दान के लिए मुंशी अमन सिंह (बिजनौर) को धन्यवाद किया। परन्तु चार मार्च 1902 को गुजरांवाला से 32 ब्रह्मचारियों के साथ कांगड़ी ग्राम में महात्मा आये। गुरुकुल के विषय में तथा महात्मा मुंशीराम के साथ आर्य प्रतिनिधि सभा का संघर्ष आदि का विस्तृत वर्णन किया जा चुका है।

सार्वदेशिक सभा के जन्मदाता

महात्मा मुंशीराम के मन में यह विचार आया कि प्रतिनिधि सभाओं को नियन्त्रित करने के लिए आर्यो का एक सर्वोचच संगठन भी होना चाहिए जिसका निर्णय सभी सभाओं को मान्य हो। इसलिए 24 जनवरी 1897 ई॰ पंजाब आर्य प्रतिनिधि सभा से इस आशय का प्रस्ताव श्री मुंशीराम ने पारित करवाया। इसी प्रकार के प्रस्ताव उत्तर प्रदेश आर्य प्रतिनिधि सभा, राजस्थान आर्य प्रतिनिधि सभा आदि प्रतिनिधियों ने भी उपर्युक्त आशय का प्रस्ताव पारित किया। 1900 ई॰ में समस्त आर्य समाजियों, जिनमें उत्तर भारत के आर्य समाजी थे उनकी एक बैठक दिल्ली में हुई इन सबकी यह सहमति हो गयी कि आर्य समाज का सार्वदेशिक स्तर पर एक संगठन होना चाहिए। सार्वदेशिक सभा के गठन के विषय में नियम एवं उपनियम बनाने के लिए एक उपसमिति गठित की गयी। जिसका संयोजक महात्मा मुंशीराम को बनाया गया। उन्होंने परिश्रम करके नियम एवं उपनियम बनाकर प्रतिनिधि सभाओं को भेजें। परन्तु तत्काल कोई उचित कार्यवाही नहीं हो पायी। 27 सितम्बर 1908 को प्रान्तीय सभाओं के पदाधिकारियों की बैठक थी, इस सभा में महात्मा मुंशीराम को भी बुलाया गया। आगरा की इस बैठक में सर्वसम्मति से प्रस्ताव पारित करके सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा का गठन कर दिया गया। सार्वदेशिक सभा के प्रथम प्रधान श्री बंशीधर शर्मा बनाये गये। अगले वर्ष के चुनाव में महात्मा मुंशीराम को सभा का अध्यक्ष निर्वाचित किया गया, वे इस पद पर 7 वर्ष तक रहे।

महात्मा गाँधी से सम्पर्क

महात्मा गाँधी के नेतृत्व में अफ्रीका में गिरमिटियों के अधिकारों के लिए सन् 1913-14 में सत्याग्रह आन्दोलन आरम्भ हुआ गिरमिट शब्द का प्रयोग उन भारतीयों के लिए होता था जो एक निश्चित इकरार-नामे (स्वीकृति-पत्र) के अधीन पांच वर्ष के लिए मजदूरी करने की इच्छा से अफ्रीका जाते थे। इकरार-नामे के लिए आंग्लभाषा में एग्रीमेन्ट शब्द का प्रयोग किया जाता है। यही शब्द बिगड़ कर गिरमिट शब्द बन गया। इन गिरमिट भारतीयों को अंग्रेज लोग कुली भी कहा करते थे। इन गिरमिटियों पर मेटाल में तीन पोंड का कर लगता था।

महात्मा गाँधी ने प्रवासी भारतीयों के अधिकारों की प्राप्ति के लिए किये गये सत्याग्रह के लिए भारतवासियों से आर्थिक सहायता की अपील की। इस अपील पर गोखले चन्दा एकत्रित करने में लग गये। गाँधी जी की अपील का प्रभाव गुरुकुल पर भी पड़ा, उन्होंने अर्थात् ब्रह्मचारी और अध्यापकों ने अपने भोजन में कुछ न्यूनता करके तथा हरिद्वार के समीप बनने वाले दूधिया बाँध पर पत्थर तोड़ने और मिट्टी डालने की मजदूरी करके 1500 रूपये श्री गोखले के पास भेज दिये। महात्मा गाँधी के एक अनन्य अंग्रेज भक्त एण्डूज ने महात्मा गाँधी को ब्रह्मचारियों द्वारा सत्याग्रह के लिए धन एकत्रित करने के नूतन एवं प्रभावोत्पादक प्रयोग का वर्णन किया एवं बतलाया। इस प्रकार महात्मा गाँधी गुरुकुल के और महात्मा मुंशी राम के प्रशंसक बन गये। इसके पश्चात् महात्मा गाँधी और महात्मा मुंशीराम के पत्रों का आदान-प्रदान होने लगा।[2]

संन्यास आश्रम में प्रवेश

महात्मा मुंशीराम ने अपना समस्त जीवन गुरुकुल और आर्य समाज के लिए समर्पित कर दिया था। यद्यपि उस सच्चे कर्मयोगी ने आर्य समाज के उत्थान एवं गुरुकुल को एक विराट् कल्पतरू की भाँति निर्माण करने का जो संकल्प लिया था उस संकल्प में यह कर्मयोगी दिन और रात संलग्न रहा, परन्तु इसके जीवन की एक विचित्र कर्मों की गति थी कि विरोधियों ने कभी इनको नहीं छोड़ा। सदैव आलोचना की सुर्खियों में बने रहे। संभवतः इसलिए ही सम्पूर्ण विरक्ति उत्पन्न हो गयी। इसलिए उन्होंने संन्यास लेने का निर्णय ले लिया। गुरुकुल छोड़कर सन्यास लेने की बात जब उनके छोटे सुपुत्र इन्द्र को पता लगी तो इन्द्र ने साहस करके अनेक युक्तियों द्वारा यह कहा कि- "संन्यास की प्रथा देश और जाति के लिए बहुत हानिकारक है आप तो पहले से ही संन्यासी हैं। भेष बदलने से क्या लाभ ?"[3] संन्यास लेने पर भी आपको सार्वजनिक कार्यों से मुक्ति नहीं मिलेगी। इन्द्र की बातों को सुनकर महात्मा जी संन्यास की अवमानना से क्रोधित नहीं हुये अपितु सहज मुद्रा में बोले- "इन्द्र तुम्हें तो मालूम ही है कि युक्ति के आधार पर कोई कदम नहीं उठाता, केवल श्रद्धा से प्रेरित होकर ही उठाता हूँ। यह निश्चय भी मैंने श्रद्धा से ही किया है मेरा यह निश्चय अटल है।" ऐसी स्थिति में इन्द्र के पास नतमस्तक होने के सिवा कोई मार्ग नहीं था।

इस प्रकार उन्होंने 12 अप्रैल 1917 को संन्यास की दीक्षा ग्रहण की जिसकी चर्चा पीछे कर चुके हैं।

राजनीति में प्रवेश

1904 से 1918 तक प्रथम विश्वयुद्ध लड़ा गया है। इस विश्वयुद्ध के समय अंग्रेजी शासकों ने भारतीयों को स्वराज्य देने की आशा बंधाई थी। जब 1918 में विश्व युद्ध समाप्त हुआ तो जो भारतीयों को आश्वासन दिया गया था कि अंग्रेज सरकार भारत को स्वतन्त्र कर देगी, परन्तु युद्ध के पश्चात् अंग्रेजी

शासकों ने इसके विपरीत किया। और रॉलेट एक्ट के रूप में एक ऐसी चीज प्रस्तुत की गयी कि जैसा किसी को रोटी की आशा दिलाकर पत्थर भेंटकर दिये जाये। इस विश्वास घात के कारण समस्त देश में असंतोष व्याप्त हो गया। ऐसे संकट के समय महात्मा गाँधी मैदान में आये। उन्होंने अहिंसात्मक सत्याग्रह द्वारा रॉलेट का विरोध करने का प्रस्ताव किया। 7 मार्च 1919 को दिल्ली में एक सार्वजनिक सभा बुलाई गयी इस सभा में स्वामी श्रद्धानन्द ने अपने जीवन में प्रथम बार राजनैतिक विषय पर अपने विचार खुलकर विस्तारपूर्वक प्रकट किये। स्वामी जी ने उस समय कहा- “असहयोग आन्दोलन राजनैतिक से कहीं धार्मिक है।” यद्यपि उनके इन विचारों को सुनकर आर्य समाज के क्षेत्र में आश्चर्य अभिव्यक्त किया गया। स्वामी जी के पुत्र इन्द्र वाचस्पति जो बचपन से ही राजनीति में रुचि रखते थे, मानो भगवान् ने इन्द्र की मनोकामना पूरी कर दी हो। अन्य अनेक आर्य समाजी नेता ज़ो राजनीति में जाना चाहते थे। उनको भी राजनीति में प्रेवश करने की अनुमति मिल गयी। इस प्रकार उस समय के जो आर्य समाजी सदस्य थे वे सब के सब कांग्रेस के कार्यकर्त्ता के रूप में उपलब्ध हो गये। इस प्रकार से कर्मठ चरित्रवान् और देशभक्त आर्य समाजी व्यक्तियों के एक दल ने सक्रिय राजनीति में प्रवेश किया। तो जो सत्याग्रह धीमी गति से चल रहा था उस आन्दोलन में तीव्र गति उत्पन्न हो गयी। स्वामी श्रद्धानन्द ने महात्मा गाँधी के प्रतिनिधि के रूप में अनेकों स्थान पर सत्याग्रह को तीव्र गति देने के लिए राजनैतिक भाषण दिये। महात्मा गाँधी स्वामी श्रद्धानन्द के परस्पर सहयोग के कारण अंग्रेजी शासक चिंतित हो गये। तत्कालीन वायसराय लार्ड चैम्स फोर्ड ने एक पारिभाषिक तार भेजा। जिसका भाव इस प्रकार था- “आन्दोलन (सत्याग्रह) तीव्र गति से चल रहा है, महात्मा मुंशीराम ने जिसने अब श्रद्धानन्द नाम रख लिया है, गाँधी के साथ हाथ मिला लिया है। बहुत काल से एक सुप्रसिद्ध धार्मिक मुखिया रहा है, और सामाजिक सुधार के कारण पर्याप्त प्रतिष्ठा प्राप्त की है। ऐसा मामूल होता है कि वह राजनैतिक आन्दोलन के रूप में प्रसिद्धि प्राप्त करना चाहता है। अब केवल यह देखना है कि कष्ट का समय आने पर उसकी सहनशक्ति कितनी है ? उसका बड़ा लड़का कुछ काल तक सुप्रसिद्ध विप्लवकारी ब्यूनिश एरिश में अतिथि रहा है। उसका छोटा लड़का दिल्ली से सरकार के विरुद्ध देशी भाषा का एक उग्र दैनिक निकालता है। हमें प्रतीक्षा करनी है कि आगे क्या होता है।”

दूसरी और आर्य समाजियों में यह भ्रम फैल गया कि आर्य समाज सामूहिक रूप में सत्याग्रह में शामिल हो गया है। स्वामी जी ने इस भ्रान्ति को दूर करने के लिए इन्द्र को एक पत्र लिखा- “मेरे प्यारे इन्द्र।”

आज प्रात:काल शरीर ठीक है हमारा कार्य भी बड़ी उत्तमता से चल रहा है, यहाँ गाँधी जी मिले मैंने कल भाषण भी दिया। “विजय” बाम्बे कानिकरन के नाम से भेज दिया करो। मिस्टर हनीमन कल सभा में मिले थे। आज उन्हें कहूँगा कि एक्टेशन कर लें।

असहयोग सत्याग्रह के आन्दोलन में मेरे प्रवेश से कुछ आर्य समाजी घबरा गये हैं, तुम मेरी ओर से ठीक समझकर सत् धर्म प्रचारक में लिख दो कि स्वामी श्रद्धानन्द संन्यासी हैं, उनका किसी आर्य संस्था से विशेष सम्बन्ध नहीं है। उनके सत्याग्रह में शामिल होने का अर्थ यह नहीं है कि आर्य समाज संस्था के रूप में इसमें शामिल है। अत: जो आर्य समाजी इसमें भाग न लेना चाहे न लें। आर्य समाज में इस आन्दोलन में एक संस्था के रूप में भाग नहीं लिया है। कुछ भीरू लोग तथा ईष्यालू कुछ का कुछ प्रकट करेंगे। इसलिए तुम जो उचित समझो नोट लिख छोड़ो।

तुम्हारा मंगलाभिलाषी
श्रद्धानन्द

स्वामी जी जब दिल्ली वापिस लौटे तो उनकी अनुपस्थिति में सत्याग्रह अभियान निर्जीव सा हो गया था, स्वामी जी ने 24, 27 और 29 मार्च 1919 को सभाओं का आयोजन किया। 29 मार्च की सभा में लोगों को यह बताया गया कि 30 मार्च की हड़ताल में क्या क्या करना है। महात्मा गाँधी द्वारा प्रसारित पत्र में स्वामी जी ने एक चीज अपनी ओर से जोड़ते हुये कहा है- "इस दिन प्रत्येक मनुष्य आधे घण्टे के लिए ध्यान करें और परमात्मा से प्रार्थना करें कि वे हमारे विरोधियों का हृदय परिवर्तन कर दें।"

30 मार्च 1919 को समस्त जाति और धर्मों के लोगों ने हड़ताल रखी थी, चारों ओर व्यावसायिक प्रतिष्ठानों में सन्नाटा था। शहर में तांगे और ट्रामें तक बन्द थी। हलवाइयों के पास बंधा हुआ दूध आया, वह उन्होंने गरीबों और बच्चों में मुफ्त बांट दिया। स्वामी जी ने 12 बजे तक पूरे शहर में गस्त लगाई, वे आये ही थे कि स्टेशन की ओर से गोली चलने की आवाज सुनाई दी। स्वामी जी तुरन्त पैदल ही स्टेशन की ओर चल पड़े। उन्होंने मशीनगन से अंधाधुंध गोलियाँ चलाये जाने की अवाज सुनी। मृत और घायलों को खींच-खींच कर स्टेशन यार्ड में ले जाया गया। स्वामी जी ने मौके पर उपस्थित सिटी मजिस्ट्रेट मिस्टर करी से सही तथ्यों को जानना चाहा, परन्तु मजिस्ट्रेट ने स्वामी जी को कोई जवाब नहीं दिया। स्वामी जी ने इस उपेक्षा का कोई जवाब न देकर इतना ही कहा कि वे लोगों को सभा स्थल की ओर ले जा रहे हैं। अत: प्रशासन को फौज या मशीनगनों का प्रयोग करके जनता को उतेजित नहीं करना चाहिए। जब स्वामी जी ने चलना प्रारम्भ किया तो 3, 4, हजार व्यक्ति थे, परन्तु आगे चलकर के एक विशाल जन समूह ने सभा का रूप ले लिया जिसमें लगभग 25 हजार व्यक्ति थे। उसी समय स्वामी जी ने सभा को सम्बोधित किया, स्वामी जी को उसी समय समाचार मिला कि चांदनी चौक के निकट भी गोलियाँ चली हैं और लगभग 12 व्यक्ति मारे गये हैं। इस समाचार को सुनकर लोगों में हलचल मच गयी, स्वामी जी ने सबको समझाया कि हमें धैर्य नहीं छोड़ना चाहिए। उसी समय एक घुडसवार पुलिस का दंस्ता इस भीड़ की ओर आ रहा था। स्वामी जी ने अपना भाषण जारी रखा, वह दस्ता सन्तुष्ट होकर चला गया। 5 बजे सायंकाल पुलिस ने सभा को चारों ओर से घेर लिया। दिल्ली के चीफ कमिश्नर वैरन ने स्वामी जी को सभा से बुलाकर कहा कि यदि वे इस बात का आश्वासन दें कि सभा में कोई भड़काऊ बात नहीं कही जायेगी तो मैं इस सभा को जारी रहने देता हूँ। स्वामी जी का स्पष्ट और सपाट उत्तर था कि वे इस उत्तरदायित्व को लेने को तैयार हैं। भाषण के बाद जब स्वामी जी चले तो भीड़ भी उनके साथ चल पड़ी, उस भीड़ के साथ घुडसवार सिपाही मशीनगनों के साथ चल रहे थे। स्वामी जी के नेतृत्व में भीड़ घण्टाघर के निकट आई तो देखा कि गोरखा सिपाही दोहरी पंक्ति में खड़े हैं। जब भीड़ आगे बढ़ रही थी तो सिपाहियों की ओर से एक गोली चलायी गयी, स्वामी जी ने भीड़ को रुकने के लिए कहा, स्वामी जी ने भीड़ को रोकर स्वयं सिपाहियों के पास जाकर कहा कि तुमने निहत्थे लोगों पर गोली क्यों चलायी ? उन सिपाहियों ने स्वामी जी की ओर मशीनगन बढ़ाई और कहा "पीछे हट जाओ, नहीं तो छाती छेद देगें।" ऐसी स्थिति में भीड़ को संयम से रखना कठिन हो गया, परन्तु स्वामी जी ने अपनी गंभीर आवाज में कहा- "कि हम सत्याग्रही हैं हमें अहिंसा का सदा पालन करना चाहिए। सिपाहियों से स्वामी जी ने कहा कि- "मैं सामने खड़ा हूँ, गोली मार दो" और स्वामी जी आगे बढ़ने लगे। इस विषम परिस्थिति में सेनाधिकारियों ने अपने सिपाहियों को पीछे हटने का आदेश दिया, जो संगीनें स्वामी जी की छाती पर जमी थी वह नीचे झुक गयी। और स्वामी जी के नेतृत्व में जुलूस आगे निकल गया। इस घटना ने दिल्ली के समस्त हिन्दू और मुसलमानों को एकत्रित कर दिया। स्वामी जी के निर्भीक व्यक्तित्व ने दिल्ली नगरी में संजीवनी औषधि का कार्य किया। और दिल्ली वासियों ने धर्म और जाति के भेद भाव के बिना उन्हें अपना मसीहा मान लिया।

जामा मस्जिद में भाषण

एक प्रसिद्ध उक्ति है कि "शहिदों का खून सदा रंग दिखाता है, वह रंग इतना सात्विक और पवित्र होता है कि इसमें जाति धर्म, वर्ण और वर्ग के सकुंचित विचार नष्ट हो जाते हैं। 4 अप्रैल 1919 को जामा मस्जिद में मुसलमानों का जलसा हो रहा था। भीड़ में से मौलाना अब्दुल्ला चूड़ी वाले ने अचानक आवाज देकर कहा स्वामी श्रद्धानन्द की तकरीर भी होनी चाहिए। दो तीन मुसलमान युवक उठे और स्वामी जी को नये बाजार के निवास से लिवा लाये, जब स्वामी सभा स्थल पर पहुँचे तो अल्ला हो अकबर के नारों से आकाश गूंज उठा, स्वामी जी मस्जिद के मिम्बर (वेदी) पर विराजमान हुये। स्वामी जी ने एक वेद-मन्त्र की विस्तृत व्याख्या अपने भाषण में की। मंत्र है-

त्वं हि न पिता वसो त्वं माता शत क्रतो बभूविथ।
अथातो सुम्निमहे।।"

जिसका भाव है- वह ईश्वर ही माता और पिता दोनों है हमें उसी की स्तुति करनी चाहिए। अपने भाषण के अन्त में स्वामी जी ने ओ३म् शान्तिः शान्तिः शान्तिः तीन बार कहा।

जामा मस्जिद में स्वामी जी के इस भाषण से एक विश्व कीर्तिमान स्थापित हुआ कि- स्वामी जी विश्व के एक प्रथम व्यक्ति हो गये जिन्होंने मस्जिद में भाषण दिया है, क्योंकि कभी भी किसी भी मस्जिद में गैर मुसलमान नेताओं को भाषण देने की इजाजत नहीं है। यह सौभाग्य महात्मा गाँधी को भी प्राप्त नहीं हो पाया। इस प्रकार स्वामी श्रद्धानन्द महामानव और अजातशत्रु बन गये। निहत्थे लोगों पर अंग्रेजों द्वारा गोली चलाये जाने पर सारे देश में विक्षोभ की स्थिति उत्पन्न हो गयी। इस कारण ही महात्मा गाँधी और श्रद्धानन्द ने लोगों से अपील की थी कि शान्ति बनाये रखें और अपना-अपना कार्य करते रहे।

महात्मा गाँधी से मतभेद और त्यागपत्र

सत्याग्रह में नव चेतना फूंकने वाले स्वामी श्रद्धानन्द का सत्याग्रह की नीति को लेकर महात्मा गाँधी से मतभेद हो गया। गाँधी जी ने सत्याग्रह को वापिस लेते समय जो घोषण-पत्र प्रसारित किया था, उसमें यह मान लिया गया था कि सत्याग्रहियों की गलती के कारण ही पुलिस और फौज ने गोलियाँ चलायी। इसका उत्तरदायित्व अप्रत्यक्ष रूप से सीधा स्वामी श्रद्धानन्द पर आता था। प्रतिदिन डाक से महात्मा गाँधी द्वारा ऐसे पोस्टर आते थे जिसमें यह निर्देश होता था कि यदि कोई सत्याग्रही पुलिस द्वारा वांछित है तो वह अपने आपको गिरफ्तार करा दे। स्वामी जी ने इस प्रकार के पोस्टरों को जलाने का आदेश दे दिया और स्वामी जी ने सत्याग्रही समिति से त्यागपत्र भी दे दिया। स्वामी जी ने अपने त्यागपत्र में महात्मा गाँधी को विस्तार पूर्वक लिखा कि- "मैं सत्याग्रह समिति को क्यों छोड़ रहा हूँ, सरकार द्वारा उठाये गये रोलेट बिल जैसे असाधारण कदम से सम्बन्ध में आप द्वारा प्रस्तावित सत्याग्रह का व्रत लेने से पूर्व ही मैंने न केवल अहिंसा और सत्य दृढ़ता के साथ व्यवहार में ले आने का उपदेश देता था, मैंने सदा ब्रह्मचर्य पर विशेष बल दिया है। और सोचता हूँ कि यह सब सद्गुणों का मोल है। आपको यह भली-भांति मालूम है कि मैंने वर्तमान राजनीति में भाग लेने की कभी चाह नहीं की है। मेरा विचार यह है कि हजारों वर्ष से संसार की कूटनीति के सिरमौर होने के कारण शासकों (अंग्रेजों) के सामाने गोलमेज कांफ्रेन्सों में भारतीय डटे नहीं रह सकते। मेरे विचार से राजनीतिक अधिकारों की प्राप्ति का एकमात्र मार्ग यह है कि हम अपने शासकों को स्वयं उनके द्वारा सुधार की गुंजाइश दें।

यह ठीक है कि अनेक स्थानों पर हमारे भ्रमित कुछ व्यक्तियों ने कुछ ज्यादतियाँ और अत्याचार भी किये हैं, मैं उनकी निन्दा करने में आपके साथ हूँ परन्तु उसके उत्तर में सरकारी अधिकारयों द्वारा दिल्ली

तथा अन्य स्थानों पर जान बूझकर उत्तेजित करने के लिए कानून के नाम पर पंजाब आदि स्थानों पर किये गये विभत्स कार्यों के प्रति आपकी चुप्पी का साथ नहीं दे सकता। यह पत्र लिखते समय मेरे मन में आपके व्यक्तित्व एवं आपके महात्मा एवं सन्तवादी चरित्र के प्रति सर्वोच्च सम्मान है। अतः इन्हीं महत्वपूर्ण विषयों पर आपसे मतभेद होने पर दुख होता है। यदि मैं आपसे कर्तव्यनिष्ठता के कारण मतभेद रखता हूँ तो उनको न कूननों की अवज्ञा करने के आन्दोलनों को यह कहकर कि देश में संकट उत्पन्न हो गया है और यह परिस्थिति के अनुकूल नहीं रहा, इसे अस्थायी रूप से स्थगित कर दिया है। आप आशा रखते हैं कि जब देश में शान्ति स्थापित हो जायेगी और लोग सामान्य रूप से सत्याग्रह के सत्य सिद्धान्तों को पूर्ण रूप से हृदयंगम कर लेगें तो इसे पुनः आरम्भ कर लिया जायेगा। परन्तु इस प्रकार की शान्तिपूर्ण स्थिति कायम होना वर्तमान परिस्थितियों में असंभव है। मैं इस समय ऐसा मानता हूँ कि अवज्ञा आन्दोलन को किसी भी कीमत पर बन्द नहीं होना चाहिए। अतः मैं आप द्वारा गठित सत्याग्रह समिति से अपना नाम वापिस लेने की प्रार्थना करता हूँ।"[4]

महात्मा गाँधी ने स्वामी जी के त्यागपत्र का उत्तर 6 मई 1919 को देते हुये लिखा-

"भाई साहब" !

आपका खत मुझे मिला, पढ़कर मैं बहुत दुखी हूँ, मैं कैसा भी करूं, मेरी भूल हो जाये तो भी आप अपना प्रण क्यों छोड़ सकते हैं यदि लोग सत्य, अहिंसा का पालन करने के लिए तैयार न हो जाये तो हम सार्वजनिक सत्याग्रह छोड़ सकते है। किन्तु हम सब क्यों छोड़ सकते हैं ? मैं जानता हूँ कि आपको सब पत्रिका मिल चुकी है या नहीं, एक पत्रिका जिसमें लड़ते (आन्दोलन) किस तरह शुरू हो सकते हैं, उनके बारे में लिखा गया है। जब तक रोलेट एक्ट रद्द नहीं हुये हैं तब तक हम शान्ति नहीं रख सकते हैं ऐसा मेरा दृढ़ मन्तव्य है। दिल्ली में मिलिट्री ने भूल की ऐसा मैंने आपके खत से जान लिया, और आपको मालूम है कि मेरे व्याख्यानों में इस विषय पर मैंने सख्त टीका की थी। पंजाब के बारे में मुझे अब तक मालूम नहीं है मुख्य दोष किसका है ? पंजाब के बारे में मैंने कुछ भी नहीं कहा। अहमदाबाद और वीरमगांव में पुलिस का कोई दोष नहीं था। केवल स्वच्छन्दता से ही लोगों ने बड़ा भारी अत्याचार किया था। प्रजा के साथ-साथ काम करते हुये प्रजा को सीधा रास्ता बताना आपका और मेरा धर्म है। ऐसी मेरी अल्पमति है। मेरी उम्मीद है कि आप प्रतिज्ञा का ठीक-ठाक पालन करेंगे।

आपका,
मोहन दास, गाँधी

इस सम्बन्ध में महात्मा गाँधी और स्वामी श्रद्धानन्द के कई पत्रों का परस्पर आदान-प्रदान हुआ। जिनका उल्लेख स्वामी श्रद्धानन्द के कई जीवन चरित्रों में किया गया है।

अमृतसर कांग्रेस अधिवेशन में स्वागताध्यक्ष

पण्डित मोती लाल नेहरू जब पंजाब में मार्शल लॉ की गैर सरकारी समिति के अध्यक्ष बनकर लाहौर आये थे तो उन्होंने कांग्रेस के अधिवेशन के लिए स्वामी जी से यह राय माँगी थी कि इस अधिवेशन को किस स्थान पर किया जाय। स्वामी जी ने कांग्रेस का अगला अधिवेशन अमृतसर में करने का आग्रह किया स्वामी जी का यह मत था कि अमृतसर में अधिवेशन करने से पंजाब के लोगों की हिम्मत और इच्छाशक्ति के प्रबल बनाये रखा जा सकता था। इसीलिए विधिवत् कांग्रेस अध्यक्ष को निमन्त्रण-पत्र भेज दिया गया। 8 जून 1919 को इलाहाबाद में कांग्रेस कार्यकारिणी में इस विषय पर विचार होना था। यद्यपि तत्कालीन प्रधान मदन मोहन मालवीय किसी अन्य प्रान्त में कांग्रेस का अधिवेशन करने के पक्ष में थे। परन्तु स्वामी

श्रद्धानन्द ने अपनी दलीलों से समस्त कार्यकारिणी को मना लिया कि कांग्रेस का अधिवेशन अमृतसर में ही हो सकता है। परन्तु मालवीय जी पहले मानने को तैयार नहीं हुये थे। वे अन्य नेताओं के मनाने पर इस शर्त पर तैयार हो गये कि यह अधिवेशन अमृतसर में तभी किया जा सकता है जबकि इस अधिवेशन में जो धन खर्च होगा उसे पंजाब के लोग ही वहन करेंगे। स्वामी जी बड़े उत्साह से अमृतसर आये और अधिवेशन की तैयारी के लिए एक स्वागत समिति का गठन किया। इस समिति के मन्त्रियों और उपाध्यक्षों का भी चयन हो गया। अन्य कोई व्यक्ति स्वागत समिति का प्रधान (अध्यक्ष) बनने को तैयार नहीं हुआ। अन्त में स्वामी श्रद्धानन्द को मनाया गया कि वे ही स्वागत समिति अध्यक्ष बनें और अन्ततः उन्होंने स्वागत समिति का अध्यक्ष बनाना स्वीकार कर लिया। यद्यपि स्वामी श्रद्धानन्द को इस कांग्रेस के अधिवेशन को सम्पन्न कराने से बाहर और अन्दर से कई व्यवधान आये परन्तु उन्होंने सब व्यवधानों को पार करते हुये अधिवेशन की तैयारियाँ पूर्ण कर ली थी। एक विशाल पंडाल और प्रतिनिधियों के ठहरने की जब व्यवस्था पूर्ण हो गयी तो 24 दिसम्बर को अत्यधिक भयंकर वर्षा हुई और सभी व्यवस्था चौपट हो गयी। परन्तु स्वामी श्रद्धानन्द ने तो पराजित होना सीखा ही नहीं था। स्वामी जी ने रेलवे अधिकारियों से पंडाल के लिए सहयोग माँगा और उनको सहयोग प्राप्त हो गया। 26 दिसम्बर को अधिवेशन प्रारम्भ हुआ। अधिवेशन का प्रारम्भ स्वामी जी के स्वागत भाषण से ही प्रारम्भ हआ। स्वागत भाषण में स्वामी श्रद्धानन्द ने अंग्रेजी प्रशासन की भर्त्सना की उन्होंने अपने स्वागत भाषण में कहा "नियम के नाम पर विप्लव और शान्ति के नाम पर अत्याचार का राज्य फैल गया। मार्शल लॉ ने नर-नारी और युवा सबको बे-जान कर दिया। बैशाख की पवित्र संक्रान्ति के दिन जो रक्त से भूमि लाल हुई उसके सुनने मात्र से सबके छक्के छूट गये। उस दिन मार्शल लॉ की विजय हुई और स्तब्धता फैल गयी। यह ऐसी शान्ति थी जो श्मशान भूमि और कब्रिस्तान की शान्ति और मौत की शान्ति थी। मैंने 29 जून 1919 को माननीय मालवीय जी को और श्री पण्डित मोती लाल नेहरू जी को जलियाँ वाला बाग में इन वीरों ने धैर्य और निर्भयता का मंत्र फूंक कर यहाँ पर भ्रमण किया। कांग्रेस के इस अधिवेशन से समस्त भारत और पंजाब में एक बिगुल बजेगा और भारत की स्वतन्त्रता प्राप्ति का मार्ग प्रशस्त हो सकेगा। स्वामी श्रद्धानन्द ने अपने इस लम्बे स्वागत भाषण में नरम दल और गरम दल को एकत्रित होकर, मिलकर संघर्ष करने का आह्वान किया था।"

कांग्रेस के इस वार्षिक अधिवेशन की सफलता के पश्चात् स्वामी श्रद्धानन्द कांग्रेस से दूर होते चले गये। क्योंकि कांग्रेस के आन्तरिक झगड़ों से स्वामी जी बहुत परेशान हो गये थे। इस अमृतसर अधिवेशन की सबसे महत्वपूर्ण सफलता यह थी कि पूर्ण स्वतन्त्रता का प्रस्ताव इसी अधिवेशन में पारित हुआ था।

कांग्रेस के अधिवेशन के पश्चात् स्वामी श्रद्धानन्द लगभग एक महीने तक पंजाब में ही सेवा करते रहे। इधर गुरुकुल कांगड़ी की स्थिति 1920 में विकट हो गयी थी। और स्वामी जी को पुनः गुरुकुल को संभालने के लिए गुरुकुल में आना पड़ा। जिसकी विस्तृत चर्चा हम पिछले अध्यायों में करते आये हैं। गुरुकुल से आने के पश्चात् स्वामी, श्रद्धानन्द असहयोग आन्दोलन में कूद पड़े। उन्होंने लाला राम कृष्ण प्रधान आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब को 25 सितम्बर 1920 को पत्र लिखा कि मैं "देश और जाति की सेवा, जिसका सम्बन्ध देश की स्वतन्त्रता से जुड़ा है में समस्त जीवन लगाना चाहता हूँ। इसलिए मेरे लिए गुरुकुल में रहना संभव नहीं है।"

कांग्रेस के कलकत्ता अधिवेशन के पश्चात् महात्मा गाँधी और श्रद्धानन्द एक साथ नगापुर में एक खिलाफत सम्मेलन में गये थे। मौलाना लोग इस अवसर पर कुरान की जो आयतें पढ़ रहे थे उनमें काफिरों को कत्ल करने तथा जिहाद के अनेक सन्दर्भ आये थे, स्वामी जी ने महात्मा गाँधी का ध्यान इस ओर खींचा और कहा- "इससे हिंसा की प्रवृत्ति पैदा होगी।" नागपुर में स्वामी श्रद्धानन्द का स्वास्थ्य खराब हो गया और

वे गुरुकुल कुरूक्षेत्र में स्वास्थ्य लाभ के लिए सीधे चले आये, वहाँ पर उनका स्वास्थ्य नहीं सुधरा तो उन्हें गुरुकुल कांगड़ी में आना पड़ा। कुछ दिन स्वास्थ्य लाभ करने के पश्चात् मोती लाल नेहरू की पुत्री विजय लक्ष्मी के विवाह में सम्मिलित होने के लिए इलाहाबाद में पहुँच गये। इलाहाबाद में स्वामी श्रद्धानन्द ने यह पाया कि अस्पृश्यता आन्दोलन में कांग्रेसी मुसलमान बाधक बन रहे है, इस समस्या पर उन्होंने महात्मा गाँधी से पत्र व्यवहार किया। महात्मा गाँधी के उत्तरों से महात्मा गाँधी और श्रद्धानन्द के विचारों में और अधिक मतभेद हो गया था। 1921 के अन्त में होने वाले अहमदाबाद कांग्रेस अधिवेशन में हिन्दू मुसलमान एकता का बाह्य प्रदर्शन चरम बिन्दू पर पहुँचा हुआ था परन्तु इस अधिवेशन में स्वामी जी ने यह अनुभव किया कि कांग्रेस की हिन्दू मुस्लिम एकता बिलकुल खोखला है, मुसलमान लोग कहीं पर भी सामना करके खड़े हो जाते है और मुसलमानों की जिद के आगे कांग्रेसी नेताओं को झुकना पड़ता है। अस्पृश्यता निवारण की दृष्टि से ही स्वामी जी ने जून 1922 के प्रथम सप्ताह में लखनऊ में होने वाली भारतीय कांग्रेस कमेटी की बैठक में भाग लेने पर निश्चय किया। लखनऊ जाते समय स्वामी जी हरिद्वार में साधु महामण्डल का गठन करने के लिए ठहरे। उस समय स्वामी जी का ध्यान इस ओर दिलाया गया जो चमार ईसाई बन गये थे वे पुन: हिन्दू बनना चाहते हैं इसके पश्चात् स्वामी श्रद्धानन्द ने जो हिन्दू कभी मुसलमान या इसाई बन गये थे उनको शुद्ध करके हिन्दू धर्म में पुन: दीक्षित करने लगे। स्वामी जी को अंग्रेजी सरकार द्वारा विभिन्न मामलों में फंसाकर 8 बार जेल भेजा गया।

शुद्धि आन्दोलन

स्वामी श्रद्धानन्द की दूरदृष्टि ने यह पहचान लिया था कि यदि देश को स्वतन्त्रता प्राप्त भी हुई तो अंग्रेजी सरकार हिन्दू और मुसलमानों को परस्पर लड़ाकर अपना स्वार्थ पूरा करने में नहीं हिचकिचायेगी इसलिए स्वामी जी की चिन्ता का विषय प्रमुख दो समस्यायें थी। प्रथम हिन्दुओं में छुआछूत एवं अस्पृश्यता की भावना का होना। इससे अछूत लोगों का अन्य धर्मों में जाना एक भयंकर समस्या बनकर समाने आ गयी थी। स्वामी श्रद्धानन्द और समस्त आर्य समाज का बीड़ा उठाया था। दूसरी समस्या यह थी कि जो हिन्दू मुसलमान या अन्य धर्मों में चले गये हैं उनको पुन: हिन्दू धर्म में लाना। कांग्रेस अछूतोद्धार से तो सहमत थी, परन्तु शुद्धि आन्दोलन के पक्ष में नहीं थी। इसलिए स्वामी श्रद्धानन्द ने अपना स्वतन्त्र मार्ग अपनाया। इस विषय में उनका विचार कि जो मुसलमान बाहर से आये थे वे इस समय मुट्ठी भर ही रह गये हैं। मुसलमानी बादशाहों से डरकर कितने, ही उच्च वर्ग के लोग हिन्दू से मुसलमान हो गये हैं। छोटी जातियों के लोग हिन्दुओं के अत्याचारों से पीड़ित होकर तथा अन्य प्रलोभनों से मुसलमान आदि बन गये हैं। इसलिए उन्होंने विचार किया कि समस्त ऐसे मुसलमानों को शुद्ध किया जाए और उन्हें समझाया जाय कि तुम्हारी जाति व गोत्र आदि सब हिन्दुओं के हैं, तुम्हारा मूल हिन्दू संस्कृति में ही अन्तर्निहित है।

भारतीय हिन्दू शुद्धि सभा का गठन

सन् 1922 के दिसम्बर मास में शाहपुराधीश की अध्यक्षता में राजपूतों के संगठन क्षत्रिय उपकारिणी सभा ने प्रस्ताव पारित करते हुये कहा कि मलकाना राजपूत शुद्धि संस्कार के द्वारा पुन: हिन्दू बन सकते हैं। और राजपूतों में सम्मिलित हो सकते हैं। इस प्रस्ताव के पश्चात् 13 फरवरी 1923 को आगरा में बाबू शलिग्राम के घर एक बैठक हुई। इसमें आर्यसमाजी, सनातनी, जैन और सिख समुदाय के विशिष्ट व्यक्तियों के अतिरिक्त स्वामी श्रद्धानन्द को भी आमन्त्रित किया गया था। वे इस बैठक में भाग लेने के लिए आगरा पहुँच गये। वहाँ उन्होंने भारतीय हिन्दू शुद्धि सभा नाम से एक संगठन का निर्माण किया। उपस्थित लोगों ने सर्वसम्मति से स्वामी जी को इसका प्रधान बना दिया। इसी दिन स्वामी जी ने रात्रि को शुद्धि के सम्बन्ध

में ओजस्वी व्याख्यान प्रदान किया। अगले दिन स्वामी जी को शुद्धि के लिए सांधन नामक ग्राम में जाना था। स्वामी जी ने गुरुकुल के स्नातक ब्रह्मानन्द दीक्षित को कहा कि तुम मेरे साथ चलोगे। यह एक देवयोग था कि जो तांगा किराये पर किया गया था उसका कोचवान मुसलमान था। स्वामी जी ने जो आगरा में शुद्धि आन्दोलन के विषय में भाषण दिया था उसे उस भाषण की जानकारी थी। इसीलिए वह तांगे को ऊबड़-खाबड़ कच्चे रास्ते पर दौड़ाने लगा। ब्रह्मानन्द दीक्षित उसकी इस भावना को ताड़ गये उन्होंने तांगे वाले की पिटाई भी की। सांधन गाँव में पहुँचकर स्वामी जी ने शुद्धि संस्कार किया। वापिस आते हुए भी ब्रह्मानन्द दीक्षित ने तांगे को सहारा देकर चलाया और वह तांगे के साथ पैदल ही दौड़ता रहा।

इस प्रकार स्वामी जी ने शुद्धि आन्दोलन को एक आन्दोलन के रूप में बड़े उत्साह के साथ चलाया। और उसमें नई जान फूंक दी। शुद्धि आन्दोलन के प्रथम मास में पांच हजार मलकानों को शुद्ध किया गया। वर्ष के अन्त तक यह संख्या तीस हजार तक पहुँच गयी। कई हिन्दू संगठनों से प्रारम्भ में इसका विरोध किया परन्तु बाद में धीरे-धीरे उन संगठनों ने विरोध करना बन्द कर दिया। शुद्धि आन्दोलन से मुसलमानों का नाराज होना स्वाभाविक ही था। इसीलिए सबसे पहले जमायत उल उल्माह के तत्वाधीन में स्वामी जी के विरोध में अनेक स्थानों पर सभायें की गयी। इस आन्दोलन से एक बात उभर कर आयी कि मुसलमानों ने कांग्रेस में यह प्रचार करना प्रारम्भ कर दिया कि स्वामी श्रद्धानन्द मुसलमानों का धर्म परिवर्तन कर रहे हैं। इस विषय में स्वामी श्रद्धानन्द का यह कहना था कि मैं धर्म परिवर्तन नहीं कर रहा हूँ बल्कि जो लोग हिन्दू धर्म को छोड़कर चले गये थे वे पुनः हिन्दू धर्म में आना चाहते हैं। मैंने तो केवल उनके लिए हिन्दू धर्म में पुनः वापिस लौटने के दरवाजे खोले हैं। स्वामी जी के शुद्धि आन्दोलन ने उत्तर भारत में एक तूफान सा खड़ा कर दिया। जिसका परिणाम यह था कि शुद्धि के लिए मुसलमानों के गाँव के गाँव स्वामी जी की प्रतीक्षा में रहते थे। स्वामी जी शुद्धि आन्दोलन के साथ-साथ अछूतोद्धार का कार्य बड़ी तेजी से कर रहे थे। उससे हिन्दू महा सभा और स्वामी जी में मतभेद पैदा हो गये! अन्त में महात्मा गाँधी ने 19 मई 1929 में "यंग इण्डिया" में "हिन्दू मुस्लिम तनाव इसका कारण और इलाज" शीर्षक से एक लम्बा लेख लिखा। इसमें महात्मा गाँधी जी ने स्वामी श्रद्धानन्द और आर्य समाज के सम्बन्ध में विपरीत टिप्पणियाँ देते हुये लिखा- "स्वामी श्रद्धानन्द भी अविश्वनीय हैं, मैं जानता हूँ कि प्रायः उनके भाषण उत्तेजनात्मक होते हैं लेकिन इतना होने पर भी वे हिन्दू मुस्लिम एकता चाहते है। दुर्भाग्यवश वे प्रत्येक मुसलमान को आर्य बनाने की संभावना पर विश्वास करते हैं। जैसा कि अधिक संख्या के मुसलमान सोचते हैं प्रत्येक गैर मुसलमान किसी दिन धर्मांतरण द्वारा मुसलमान बनेगा। श्रद्धानन्द निर्भीक और वीर है। उन्होंने अकेले ही गंगा के पवित्र स्थान पर बीहड़ता को आश्रम व्यवस्था वाले महाविद्यालय में परिवर्तित कर दिया। उन्हें अपने तथा अपने उद्देश्य पर विश्वास है। उनमें आर्यसमाज की विरासत है।.... दयानन्द ने संसार के सबसे अधिक सहनशील और उदार धर्म को संकुचित बनाने के प्रयास किया है, जहाँ आप आर्य समाजी देखेगें वहीं आपको जीवन ऊर्जा दिखायी देगी। लेकिन संकुचित दृष्टिकोण और झगड़ालू आदत के कारण वे दूसरे सम्प्रदाय से लड़ते हैं या उनके अभाव में परस्पर लड़ने लगते हैं। श्रद्धानन्द में यह प्रवृत्ति काफी हद तक है।"

आर्य समाजियों ने गाँधी जी के विचार को पसन्द नहीं किया, अनेक मंचों से आर्य समाज के नेताओं ने यह माँग कि कि खेद प्रकट करें, परन्तु गाँधी जी ने खेद प्रकट नहीं किया। स्वामी जी दक्षिण भारत में उस समय दलितोद्धार और शुद्धि आन्दोलन के कार्यों में लगे थे। उनके दिल्ली आगमन पर आर्य समाजियों ने महात्मा गाँधी के विरोध में लिखने को कहा, परन्तु उस समय उन्होंने कहा कि- "मैं इस विषय में कुछ नहीं कहूँगा।" हमें आर्य समाज का कार्य करते रहना चाहिए, कौन क्या कहता है, इसकी परवाह नहीं करनी चाहिए।

सितम्बर 1924 में गुरुकुल में बाढ़ आ गयी थी जिसका विस्तृत वर्णन इसी ग्रन्थ में पीछे किया जा चुका है। इसके पश्चात् स्वामी श्रद्धानन्द ने मथुरा शताब्दी के बाद दूसरी बार दक्षिण भारत में धर्म यात्रा प्रारम्भ की। और वहाँ उन्होंने जाकर पालाघाट में रथ उत्सव के दिन वहाँ के डिविजनल मजिस्ट्रेट ने वैदिक धर्म में आये हुये अछूतों को सवर्ण हिन्दुओं की गलियों में जाने के विषय में प्रतिबन्ध लगा दिया। जब स्वामी जी को यह ज्ञात हुआ कि तो स्वामी जी ने इस अन्याय के प्रति अपनी आजाज बुलन्द की और इसका डटकर विरोध किया। इस घटना ने स्वामी जी को वहाँ के समाचार पत्रों में सुर्खियों में ला दिया। परन्तु स्वामी जी ने वहाँ यह अनुभव किया कि दक्षिण भारत में हिन्दी के माध्यम से प्रचार में सफलता प्राप्त नहीं होती इसीलिए उन्होंने दिल्ली आकर अंग्रेजी भाषा में लिवरेटर नामक समाचार पत्र प्रकाशित करना प्रारम्भ कर दिया।

शुद्धि के लिए बलिदान

23 दिसम्बर 1926 ई० सायंकाल के पौने चार बजे का समय था वे अपने दिल्ली निवास में ठहरे हुये थे। स्वामी जी से मिलने वालों का तांता लगा हुआ था। स्वामी जी के मिलने से बाद एक-एक करके सभी व्यक्ति कमरे से चले गये। स्वामी जी नित्य कर्मो से निवृत्त होकर मसनद के सहारे बैठे हुये थे, इतने में दरवाजे पर खटखटाने की आवाज आई; सेवक धर्म सिंह के कान चौकन्ने हुये। दरवाजे के पास देखा कि एक व्यक्ति जो वेशभूषा से मुसलमान प्रतीत होता है द्वार पर खड़ा है। सेवक के आने का कारण पूछा उसने उत्तर दिया कि स्वामी जी से शंका समाधान के लिए आया हूँ, सेवक ने विश्राम कर रहें का बहाना लेकर टालना चाहा। परन्तु आगन्तुक वहीं खड़ा रहा जब यह वाद-विवाद हो रहा था तो स्वामी जी ने कहा- आने दो। स्वामी जी के कमरे में आकर उसने पैनी आँखों से स्वामी जी के बैठने की स्थिति को देखा। स्वामी ज़ी से उसने पानी पीने के इच्छा प्रकट की, और बाहर जाकर पानी पिया, पुनः कमरे में आकर मसनद के सहारे बैठे हुये स्वामी श्रद्धानन्द पर दो गोलियाँ दाग दी। उसी समय स्वामी जी के निजी सचिव धर्मपाल विद्यालंकार ने हत्यारे को दबोच लिया। सेवक धर्मसिंह भी उसकी गोली से घायल हो गया था। आर्य समाज के इस दीपक को बुझाने वाले अत्याचारी एवं हत्यारे का नाम अब्दुल रसीद था। इस प्रकार स्वामी श्रद्धानन्द जो आर्य समाज की सर्वोच्च स्थिति को प्राप्त किये हुये थे, आर्य समाज की बलि वेदी पर शहीद हो गये।

स्वामी श्रद्धानन्द की जीवन झांकी को काल क्रमानुसार इस प्रकार प्रस्तुत किया जा सकता है:-

सन् 1856	फरवरी (फाल्गुन कृष्ण त्रयोदशी सम्वत् 1913) को तलवन ग्राम (जालन्धर) में श्री नानक चन्द जी क्षत्रिय के घर जन्म। पण्डित द्वारा दिया गया जन्म का नाम बृहस्पति तथा प्रचलित नाम मुंशीराम।
सन् 1859	बरेली में प्रारंभिक शिक्षा प्रारम्भ।
सन् 1866	काशी में (सम्वत् 1923 के आरम्भ में) यज्ञोपवीत संस्कार सम्पन्न।
सन् 1873	दिसम्बर में क्वींस कॉलेज बनारस में उच्च शिक्षा के लिए प्रवेश।
सन् 1875	दिसम्बर को बनारस में अन्धविश्वास के जीवन की समाप्ति।
सन् 1877	जालन्धर के प्रसिद्ध साहूकार ओर तहसीलदार श्री राय शालिग्राम की पुत्री शिवदेवी से विवाह।
सन् 1879	अगस्त में बरेली के टाउन हॉल में महर्षि दयानन्द सरस्वती के प्रथम दर्शन।
सन् 1880	दिसम्बर (पौष) में कानून की तैयारी के लिए लाहौर प्रस्थान तथा कानून की कक्षाओं में प्रवेश।

सन् 1881	पुत्री वेदकुमारी का जन्म।
सन् 1884	माघ सम्वत् 1941 रविवार के दिन "सत्यार्थ प्रकाश" से प्रभावित होकर आर्य समाज का सभासद बनने का निर्णय।
सन् 1886	1. मार्च में जालन्धर में सनातन धर्मी पण्डित श्यामदास के साथ शास्त्रार्थ। 2. 26 जून (12 आषाढ संवत् 1943) को तलवन ग्राम में पिता श्री नानक चन्द जी का स्वर्गवास। 3. आर्य समाज के सक्रिय सदस्य तथा जालन्धर की आर्य समाज के प्रधान निर्वाचित।
सन् 1887	1. जून, जुलाई में पण्डित दीन दयाल जी से मुठभेड़। 2. अगस्त में बम्बई की प्रथम यात्रा (सपत्नीक) 3. 27 नवम्बर रविवार को प्रातः 10 बजे प्रथम पुत्र हरिश्चन्द्र का जन्म।
सन् 1888	1. फरवरी में वकालत की परीक्षा उत्तीर्ण की। तत्पश्चात् 18 फरवरी को जालन्धर आकर वकालत आरम्भ। 2. मई में नेशनल पॉलिटिकल कांग्रेस के साथ सम्बन्ध स्थापित।
सन् 1889	1. 19 फरवरी को "सद्धर्म प्रचारक" (उर्दू) का प्रकाशन आरम्भ। 2. 9 नवम्बर को द्वितीय पुत्र इन्द्र का जन्म।
सन् 1890	जालन्धर में लाला देवराज जी के साथ मिलकर कन्या विद्यालय की स्थापना।
सन् 1891	1. जनवरी में मियां शिवसिंह की ओर से मुकद्दमें की पैरवी के लिए सुकेत यात्रा। 2. 31 अगस्त को पत्नी का स्वर्गवास।
सन् 1892	आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के प्रधान निर्वाचित।
सन् 1898	1. अगस्त में गुरुकुल खोलने तथा उसके लिए तीस हजार रुपया एकत्र करने का संकल्प। 2. अक्टूबर से "आर्य मुसाफिर" नाम से उर्दू पत्र का संचालन एवं सम्पादन। 3. 25 से 30 नवम्बर तक वच्छोवाली आर्य समाज में श्री गोपीनाथ के साथ "वद किन ग्रन्थों का नाम है" विषय पर शास्त्रार्थ।
सन् 1900	8 अप्रैल को गुरुकुल के लिए 30 हजार रुपये एकत्र करने की भीष्म प्रतिज्ञा 40 हजार रुपये एकत्र करके पूर्ण की।
सन् 1901	नवम्बर में पुत्री अमृतकला का डॉ॰ सुखदेव जी के साथ जाति बन्धन तोड़कर विवाह कराया।
सन् 1902	1. 2 मार्च को कांगड़ी ग्राम में गुरुकुल कांगड़ी की स्थापना। 2. 19 दिसम्बर को प्रेस ओर सद्धर्म प्रचारक हरिद्वार ले आया गया।
सन् 1903	10 से 13 मार्च तक गुरुकुल का प्रथम वार्षिकोत्सव सम्पन्न।
सन् 1907	1 मार्च को "सद्धर्म प्रचारक" को हिन्दी में निकालना शुरू किया।
सन् 1909	1. 13 फरवरी को मुलतान में गुरुकुल की स्थापना। 2. अप्रैल में सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा के प्रथम प्रधान निर्वाचित।
सन् 1911	फरवरी में श्री सी.एफ ऐण्ड्रूज से प्रथम परिचय।
सन् 1912	अप्रैल (बैशाख सम्वत् 1968) में गुरुकुल कुरुक्षेत्र की स्थापना।

सन् 1913 1. 22-23 आश्विन सम्वत् 1970 को दिल्ली में अखिल भारतवर्षीय आर्य कुमार सम्मेलन के चौथे अधिवेशन के सभापति।

2. 6 दिसम्बर को भागलपुर में आयोजित हिन्दी साहित्य सम्मेलन के चौथे अधिवेशन का सभापतित्व।

3. गुरुकुल इन्द्रप्रस्थ की स्थापना।

4. लेफ्टिनेंट गर्वनर सर जेम्स मेस्टन से गुरुकुल आगमन पर भेंट।

सन् 1915 1. 8 अप्रैल को गुरुकुल में महात्मा गाँधी से प्रथम भेंट तथा अभिनंदन समारोह में उन्हें "मिस्टर गाँधी" के बजाय "महात्मा गाँधी" कहकर सम्बोधित किया।

2. रोहतक जिले में मटिण्डू गांव में गुरुकुल की स्थापना।

सन् 1916 21 अक्टूबर को वायसराय लार्ड चेम्सफोर्ड का गुरुकुल में आगमन तथा महात्मा जी द्वारा स्वागत।

सन् 1917 1. 11 अप्रैल को गुरुकुल से विदाई।

2. 12 अप्रैल को मायापुर वाटिका (कनखल) में संन्यास आश्रम में प्रवेश तथा स्वामी श्रद्धानन्द नाम ग्रहण।

सन् 1918 1. धौलपुर (राजस्थान) में आर्य समाज मन्दिर का कुछ भाग गिराने के विरोध में सत्याग्रह।

2. तीन मई को गढ़वाल के दुर्भिक्ष पीड़ितों के लिए सहायता कार्य हेतु प्रस्थान।

सन् 1919 1. 7 मार्च को दिल्ली में सत्याग्रह की तैयारी के लिए आयोजित प्रथम सार्वजनिक सभा में पहला राजनैतिक भाषण।

2. 20 मार्च को "रॉलेट एक्ट" के विरोध में दिल्ली में निकले जुलूस का नेतृत्व तथा घंटाघर के सामने गोरों की संगीनों का सामना।

3. 4 अप्रैल को जामा मस्जिद के मिम्बर से ऐतिहासिक भाषण।

4. आश्विन वदी द्वादशी संवत् 1976 को लुधियाना जिले में गुरुकुल रायकोट की स्थापना।

5. 26 दिसम्बर को अमृतसर कांग्रेस के स्वागताध्यक्ष के रूप में भाषण।

6. दो मई को महात्मा गाँधी से मतभेद के कारण सत्याग्रह कमेटी से त्यागपत्र।

सन् 1920 1. 11 फरवरी को दो वर्ष के लिए पुनः गुरुकुल में पदार्पण।

2. गुरुकुल से "श्रद्धा" साप्ताहिक का प्रकाशन।

3. 22 अक्टूबर को गुरुकुल के स्थिर कोष हेतु चन्दा एकत्र करने के लिए बर्मा की यात्रा।

4. नागपुर कांग्रेस में अछूतोद्धार का कार्यक्रम प्रस्तुत।

सन् 1921 1. अप्रैल में पण्डित मोती लाल नेहरू की सुपुत्री के विवाह में सम्मिलित होने के लिए इलाहाबाद गमन।

2. अक्टूबर में गुरुकुल से पुनः प्रस्थान।

3. 3 से 5 नवम्बर को दिल्ली में अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी के अधिवेशन में सम्मिलित।

सन् 1922 10 सितम्बर को गुरु का बाग सत्याग्रह में शामिल होने के लिए अमृतसर आगमन तथा 26 अक्टूबर को इसी कारण "मियां वाली" जेल की यात्रा।

सन् 1923
1. कांग्रेस के कार्य से अलग।
2. 13 फरवरी को आगरा में भारतीय हिन्दू शुद्धि सभा की स्थापना।
3. 13 अप्रैल को दिल्ली से प्रो॰ इन्द्र के संपादकत्व में "दैनिक अर्जुन का प्रकाशन।"
4. जुलाई में "हिन्दू महासभा" में प्रवेश।
5. 18 से 26 अगस्त तक काशी में हिन्दू महासभा के अधिवेशन में सम्मिलित तथा हिन्दू संगठन का कार्य प्रारम्भ।
6. 8 नवम्बर को दिल्ली में कन्या गुरुकुल की स्थापना (इसी को बाद में देहरादून लाया गया)।

सन् 1924
1. महात्मा गांधी के व्यक्तिगत निमन्त्रण पर बेलगांव कांग्रेस में दर्शक के रूप में सम्मिलित।
2. 18 फरवरी को गुरुकूल सूपा की स्थापना।
3. 25 अप्रैल को मद्रास की प्रथम धर्म यात्रा के लिए प्रस्थान।
4. 2-3 मई को पूना में व्याख्यान और महाराष्ट्र प्रान्तीय राष्ट्रीय शिक्षण परिषद् का सभापतित्व।
5. 9 मई को कालीकट-वायकोम में दलित जातियों द्वारा अपने लिए मन्दिरों के आस-पास की सार्वजनिक सड़कों पर आवागमन की रोक कें विरोध में किये जाने वाले सत्याग्रह में सहयोग।
6. 20 मई को मद्रास के गोखले हॉल में व्याख्यान।

सन् 1925
1. मार्च में मथुरा में श्री मद् दयानन्द-जन्म-शताब्दी का नेतृत्व।
2. 20 जून को हिन्दू महा सभा से त्यागपत्र।
3. 8 जुलाई से 14 अगस्त तक आर्य समाज के संगठन को सुदृढ़ करने के उद्देश्य से पंजाब का विस्तृत दौरा।
4. 30 अक्टूबर से 30 नवम्बर तक दक्षिण भारत की दूसरी धर्मयात्रा।
5. 30 अक्टूबर से 1 नवम्बर तक नवसारी (गुजरात) में स्थानीय दयानन्द जन्म शताब्दी में सम्मिलित।

सन् 1926
1. मार्च के दूसरे सप्ताह में दिल्ली में आयोजित हिन्दू सभा कांफ्रेस में सम्मिलित तथा विषय-नियामक-समिति में प्रस्तुत "महासभा" के टिकट पर कौंसिलों के लिए उम्मीदवार खड़े करने विषयक प्रस्ताव का स्पष्ट विरोध किया।
2. 25 मार्च को असगरी बेगम (शान्ति देवी) की बच्चों सहित शुद्धि।
3. 1 अप्रैल से साप्ताहिक "लिवरेटर" (अंग्रेजी) का प्रकाशन प्रारम्भ।
4. 23 दिसम्बर को सांयकाल 4 बजे दिल्ली में अब्दुल रसीद की गोलियों से बलिदान।

स्वामी श्रद्धानन्द के व्यक्तित्व के विषय में इस बात से ही सहज रूप से ज्ञात होता है कि उनके शहीद होने के पश्चात् तत्कालीन राष्ट्रीय महापुरूषों ने उनके प्रति जो भावाजंलि अर्पित की थी उसी से

उनके समग्र व्यक्तित्व का भली-भांति परिचय हो जाता है। पं० मोती लाल नेहरू ने उनके विषय में उद्‌गार प्रकट किये थे।

"मैं और मुंशीराम एक सहपाठी थे। हमारे सम्बन्ध बहुत ही ममतापूर्ण थे। वे जब बोलते या लिखते थे तब शब्द बहुत तोल-मोल कर इस्तेमाल करते थे। वे किसी से डरते नहीं थे। उन्होंने देश की सेवा की थी। वे गम्भीर जोखिमें उठाते थे। वे विधवा विवाह के पक्ष में थे। उनकी मृत्यु और हत्या से मुझे सख्त आघात लगा है। ऐसे मामलों में बदला लेने का कोई अर्थ नहीं। अलबत्ता खूनी को उचित दण्ड मिलेगा। परन्तु हम इतने से सन्तोष न करें। उनकी मृत्यु से झगडालू मानस वाले पाटले अपनी-अपनी दुश्मनी भूल जायें और एक हो जायें।"

इसी प्रकार मौलाना मुहम्मद अली ने उद्‌गार प्रकट किये थे :-

"उनका मुख्य कार्य उनके धर्म संगठन के सम्बन्ध में था। और इस बारे में शंका नहीं की जा सकती, फिर भी इतना तो सही है कि वे जिसे अपना धर्म मानते थे उसके लिए काम करने में उन्होंने उल्लेखनीय लगन दिखायी थी। उनकी हिम्मत के बारे में शंका ही नहीं थी। साहस और शौर्य के वे मिश्रण थे। गोरखों की संगीनों के सामाने अपनी छाती खोल देने वाले देश प्रेमी का चित्र अपनी नजर के सामने मुझे बहुत अच्छा लगता है। ऐसी उम्दा मौत के मिलने से उन्हें तो कुछ नहीं लगता, मगर हमारे लिए एक अत्यन्त दुखदायक घटना है।"

महात्मा गाँधी ने संवेदना प्रकट करते हुये कहा था :-

"स्वामी जी वीरों में अग्रणी थे, स्वामी जी ने अपनी वीरता से भारत को आश्चर्य चंकित किया था। उन्होंने अपनी देह को भारंत के लिए कुर्बान करने की प्रतिज्ञा ली थी। इसका मैं साक्षी हूँ। स्वामी अनाथ बन्धु थे, अनाथों के सहायक थे। स्वामी जी ने अछूतों के लिए जो कुछ किया, उससे अधिक किसी और पुरुष ने भारत में नहीं किया। उनका अस्पृश्यों के प्रति इतना अधिक प्रेम था कि एक बार उन्होंने मुझसे कहा था कि- कांग्रेस अछूतों के लिए कितना ही काम करें, परन्तु जब तक महासमिति का प्रत्येक सदस्य कम से कम एक अस्पृश्य नौकर को अपने घर में रखने की प्रतिज्ञा न ले, तब तक कांग्रेस की सेवा कोई बड़ी नहीं कही जायेगी।" भले ही कोई व्यवहार कुशल मनुष्य आज स्वामी जी के इस सुझाव को अव्यावहारिक कहे, परन्तु यह सुझाव उनका अस्पृश्यों के प्रति असाधारण प्रेम बताता है। किन्तु स्वामी जी जैसे वीर, देशभक्त और सच्चे सेवक की हत्या देश के लिए कैसे फायदेमन्द है, वैसे ही उससे दुख होना भी स्वाभाविक है।

आज श्रद्धानन्द जी की मौत के लिए आँसू बहाने का समय नहीं है, आज तो क्षत्रियता बताने का अवसर है। क्षत्रियता क्षत्रिय के विशेष गुण है, भले ही हो, परन्तु ब्राह्मण वैश्य, शूद्र सब क्षत्रियता बता सकते है। खास तौर पर आज का स्वराज युग हम सब के लिए क्षत्रियता का युग है। इसलिए रोने की बात छोड़ दें। और श्रद्धानन्द जी के बलिदान से रसीद द्वारा की हत्या से जो पाठ मिलता है उसे हृदय में धारण करें।

पं० जवाहर लाल नेहरू ने उनके प्रति श्रद्धांजलि अर्पित करते हुए कहा था "विशुद्ध शारीरिक साहस का अथवा किसी भी शुभ कार्य के लिए शारीरिक कष्ट सहन करने एवं उस कार्य के लिए मृत्यु तक की परवाह न करने वाले गुणों का मैं सदा से प्रशंसक रहा हूँ। मैं समझता हूँ कि हम सभी व्यक्ति एंसे अद्‌भुत साहस की प्रशंसा करते ही हैं। स्वामी श्रद्धानन्द में इस प्रकार की निर्भीकता पूर्ण साहस आश्चर्य जनक मात्रा मे विद्यमान था। वृद्धावस्था में भी उनकी उन्नत सीधी आकृति तथा संन्यासी वेश से उच्च भव्य मूर्ति, लम्बाकद, साहाना शक्ल, चमकती हुई अन्तः भेदनी आँखे और कभी-कभी दूसरों की निर्बलताओं पर

मुख पर आ जाने वाली झुंझलाहट की झलक इस सजीव मूर्ति को में कैसे भूल सकता हूँ। प्राय: यह तस्वीर मेरे आँखों के सामने आ जाती है।"

श्रीमती सरोजनी नायडू ने अपने श्रद्धा सुमन अर्पित करते हुए लिखा था- "मेरी स्मृति और अनुराग में आराध्य देवता स्वामी श्रद्धानन्द वर्तमान संतति के सम्मुख एक ऐतिहासिक मूर्ति के रूप में विराजमान है। मैं सदैव अनुभव करती हूँ कि स्वामी श्रद्धानन्द भारत के वीर काल की एक दिव्य विभूति थे। अपनी भव्य मूर्ति ऊंचे व्यक्तित्व के द्वारा वह अपने साथियों में देवता के नाइ ही रहा करते थे। वह अपने जीवन की शहादत की अन्तिम घड़ियों तक साहस और कार्य योग की अनुपम मूर्ति रहे। और भारतीय जीवन के धार्मिक व आध्यात्मिक क्षेत्र में, और राष्ट्र सुधार के कार्यों में इन गुणों का सुन्दर परिचय देते रहे। मानव समाज की सेवा के सम्बन्ध में उनके उच्च भावों का मैं बहुत आदर करती हूँ।" भारत के प्रथम राष्ट्रपति राजेन्द्र प्रसाद जी ने उनके विषय में लिखा था कि-

"स्वामी श्रद्धानन्द जी से प्रथम परिचय का सौभाग्य मुझे भागलपुर में हिन्दी साहित्य सम्मेलन के समय प्राप्त हुआ था। उस समय तक स्वामीजी ने संन्यास नहीं लिया था और महात्मा मुंशीराम जी के नाम से ही प्रसिद्ध थे। गुरुकुल की स्थापना करके राष्ट्रीय पद्धति से शिक्षा देना उन्होंने बहुत पहले ही आरम्भ कर दिया था। और गुरुकुल का काम शान से चल रहा था। आपके हिन्दी प्रेम और हिन्दी सेवा को देखकर ही सम्मेलन ने सभापति के पद पर आपका निर्वाचन किया था।" सम्मेलन की जिस उत्तमता के साथ आपने निभाया, वह हमें आज़ भी अच्छी तरह याद है। पर स्वामी जी के गुणों को भारत वर्ष ईसवीं सन् 1919 और उसके बाद ही पूरी तरह से जान सका। स्पष्टवादिता के गुणों को अंग्रेजी सरकार अच्छी प्रकार जानती थी। परन्तु इन गुणों को उनके स्वदेशवासी सहयोगी कार्यकर्ता भी तीव्रता से अनुभव करते थे। जो लोग काले कानून के विरोधी आन्दोलन के समय दिल्ली के चांदनी चौक में मौजूद न भी थे, उनके हृदय पटल पर भी स्वामी जी की वह निर्भीक मूर्ति अमिट रूप से चित्रित है। उस समय स्वामी जी ने अंग्रेजों की गोलियों और संगीनों के सामने अपना सीना खोलकर हृदय की निर्भीकता तथा उच्चता का प्रत्यक्ष उदाहरण उपस्थित किया। उनकी उस शुद्ध तथा उच्च भावना ने जामा मस्जिद के मिम्बर पर से उनसे उपदेश करवाया और हिन्दू मुस्लिम ऐक्य का मनोहर दृश्य दिखाया और उसी दृढ़ता सत्यनिष्ठा स्पष्टवादिता और निर्भीकता के कारण आततायी के हाथों शहादत को प्राप्त किया भारत के आधुनिक इतिहास में स्वामी जी का स्थान प्रथम सांस्कृतिक पथ प्रदर्शक का है। जिसको स्वामी जी के साक्षात् दर्शन का सौभाग्य प्राप्त नहीं हुआ उनके लिए स्वामी के जीवन वृतान्त को पढ़ना ही मनुष्य को उन्नति के मार्ग पर अग्रसर करने वाला है। स्वामी जी ने गुरुकुल की स्थापना करके ब्रह्मचारियों के शिक्षण का ही प्रबन्ध नहीं किया प्रत्युत् उनका सारा जीवन ही देश के लिए एक महान् गुरुकुल का काम कर रहा है और करता रहेगा।

विश्व कवि रवीन्द्रनाथ टैगोर ने स्वामी जी के प्रति अपने हृदय के उद्‌गार प्रकट करते हुए कहा था- "हमारे देश में जो सत्य-व्रत को ग्रहण करने के अधिकारी है ऐसे इस व्रत के लिए प्राण देकर जो पालन करने की शक्ति रखते है, उनकी संख्या बहुत ही कम होने के कारण हमारे देश की इतनी दुर्गति है। ऐसी अवस्था जहाँ है, वहाँ स्वामी श्रद्धानन्द जैसे इतने बड़े वीर की इस प्रकार मृत्यु से कितनी हानि हुई होगी, इसका वर्णन करने की आवश्यकता नहीं है। परन्तु इसके मध्य एक बात अवश्य है कि उनकी मृत्यु कितना ही शोचनीय हुई हो, किन्तु इस मृत्यु ने उनके प्राण एवं चरित्र को उतना ही महान् बना दिया है।"

आचार्य रामदेव

(मुख्याधिष्ठाता एवं आचार्य)

आचार्य रामदेव का ज़न्म 31 जुलाई 1881 को होशियारपुर जिले के वजवाला कस्बे में लाला चन्दूलाल के यहाँ हुआ। इनके पिता अध्यापक थे। इसलिए उन्होंने अपने पुत्र की शिक्षा का समुचित प्रबन्ध किया। 15 वर्ष की आयु में रामदेव ने मैट्रिक उतीर्ण की। इसके पश्चात् उच्च शिक्षा के लिए डी.ए.वी. कॉलेज लाहौर में प्रवेश लिया। यहाँ उनकी शिक्षा एफ.ए. तक हुई उन्हीं दिनों आर्य समाज में कॉलेज दल तथा गुरुकुल दल के मतभेद पराकाष्ठा तक पहुँच गये थे। रामदेव गुरुकुल दल के थे। कॉलेज दल के नेताओं का खण्डन करते थे इसलिए उनको कॉलेज से निकाल दिया गया। जब महात्मा मुंशीराम को इस बात का ज्ञान हुआ तो उन्होंने रामदेव को बुलाया और सहायता देने का आश्वासन दिया। उन्हें आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब की साहित्यिक पत्रिका आर्य पत्रिका का उप सम्पादक बना दिया। इसके बाद वे विक्टर हाईस्कूल जालन्धर छावनी में मुख्याध्यापक बन गये, यहाँ रह कर उन्होंने 1904 में बी.ए. की परीक्षा उत्तीर्ण की तथा 1905 में सैन्टर कॉलेज लाहौर से बी.टी. किया। जीन्द राज्य में जबकि आप को विद्यालय निरीक्षक पद पर नियुक्त किया जा रहा था तब उन्हें मुंशीराम का पत्र गुरुकुल में पहुँचने के लिए मिला। श्री रामदेव निरीक्षक पद पर न जाकर गुरुकुल में आ पहुँचे।

महात्मा मुंशीराम ने रामदेव को गुरुकुल का संचालन करने में अपना प्रमुख सहायक के रूप में विश्वास पात्र बनाया। इस समय तक गुरुकुल कांगड़ी में अध्यापन की शैली केवल संस्कृत पाठशालाओं जैसी थी। कुछ समय के पश्चात् आचार्य रामदेव को गुरुकुल का मुख्याध्यापक नियुक्त किया गया। रामदेव की शिक्षा क्योंकि आधुनिक पद्धति से महाविद्यालय तक हुई थी इसलिए उन्होंने मुख्याध्यापक बनते ही गुरुकुल कांगड़ी की पाठ्य पद्धति गुरुकुल की व्यवस्था में अनेक नवीन सुधार किये। समस्त विषयों के अध्ययन अध्यापन हेतु अब तक निश्चित समय विभाग परिचक्र के रूप में पढ़ाई की व्यवस्था होने लगी। इससे संस्कृत परम्परा में पढ़े विद्वान् रुष्ट अवश्य हुए तथा उसमें से कुछ चले भी गये। क्योंकि पाठशाला पद्धति में निश्चित समय पर ध्यान नहीं दिया जाता था, जो आचार्य जितनी देर चाहे उतनी देर पढ़ाता था, जिस से अनेक अन्य विषयों के अध्ययन अधूरे रह जाते थे। इसलिए नवीन व्यवस्था में घंटी बजने लगी और सभी विषयों की समान पढ़ाई होने लगी। आप ने पाठ विधि में भी संस्कृत वेद, एवं आर्य ग्रन्थों के साथ-साथ अर्थशास्त्र, इतिहास, राजनीतिविज्ञान, आंग्लभाषा, और विज्ञान के पाठ्यक्रम भी प्रारम्भ किये। इस प्रकार महात्मा मुंशीराम का वरदहस्त पाकर आचार्य रामदेव सम्पूर्ण आत्मविश्वास के साथ गुरुकुल का संचालन करने लगे। महात्मा मुंशीराम के संन्यास के पश्चात् श्री रामदेव पर ही गुरुकुल की प्रबन्ध व्यवस्था का सम्पूर्ण दायित्व आ पड़ा। वे गुरुकुल के आचार्य और मुख्याधिष्ठाता बनकर प्रशासक के रूप में गुरुकुल का प्रबंध करने लगे। 1924 में अतिवृष्टि के कारण गुरुकुल के नये भवनों के निर्माण के लिए धन संग्रह हेतु दक्षिण अफ्रीका गये। और वहाँ से 10 लाख रुपये एकत्रित करके लाये। 1926 में कन्या गुरुकुल देहरादून का मुख्याधिष्ठाता पद भी उन्होंने सम्भाला। वास्तव में गुरुकुल कांगड़ी जहाँ वर्तमान स्थान पर है इसके निर्माता के रूप में आचार्य रामदेव को माना जा सकता है। इसमें कोई अतिशयोक्ति नहीं होगी। इस प्रकार आचार्य रामदेव ने गुरुकुल का संचालन 1932 ई० तक किया।

जब 1932 में महात्मा गाँधी का असहयोग आन्दोलन प्रारम्भ हुआ तो उस स्वाधीनता आन्दोलन में आचार्य रामदेव कूद पड़े। आप पंजाब में कांग्रेस आन्दोलन के सर्वाधिकारी रहे। तथा कई बार जेल भी गये। कारावास से आकर 1935-36 में आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के प्रधान निर्वाचित हुए। 1936 में लंदन में होने वाले लिविगं रिलीजन्स सम्मेलन में आपको निमन्त्रण प्राप्त हुआ उसमें जाने के लिए आप अपना शोध-पत्र तैयार करने लगे परन्तु विधाता को यह नहीं मंजूर था। और अचानक उनको पक्षाघात हो गया। और वह विधि का विचित्र ही संयोग था कि तीन वर्ष रुग्ण अवस्था से संघर्ष के पश्चात् 9 दिसम्बर 1939 को आर्य समाज की इस महान् विभूति का शरीर पंचतत्व में विलीन हो गया।

आचार्य रामदेव का अध्ययन अत्यधिक विशाल था। वे उच्च कोटि के विचारक तथा वक्ता थे। उनकी स्मरण शक्ति अद्‌भुत थी। उनके व्याख्यानों में अनेक ग्रन्थों के प्रमाणों एवं उद्देश्यों की इतनी भरमार रहती थी कि श्रोता उनके इस अद्‌भुत ज्ञान तथा प्रस्तुति करण के कौशल को देखकर आश्चर्य चकित हो जाते थे। लगातार कई घन्टों तक धारावाही व्याख्यान देना उनके लिए एक सामान्य बात थी, वे इतिहास, राजनीति, धर्म अन्तर्राष्ट्रीय परिस्थितियों आदि विषयों के प्रामाणिक वक्ता एवं अध्येता माने जाते थे।

लेखक के रूप में आचार्य रामदेव का योगदान बहुत ही महत्वपूर्ण है। वे गुरुकुल कांगड़ी के मुख्य पत्र वैदिक मैग्जीन के वर्षों तक सम्पादक रहे। वैदिक मैग्जीन उनके समय में एक अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति की आंग्ल भाषा में मैग्जीन मानी जाती थी। उसमें आचार्य रामदेव के विद्वता पूर्ण नई दृष्टि को लिए हुए तथा वेदों के विषय में ऋषि दयानन्द की दृष्टि से किये हुए मंत्र और सूक्तों के अर्थ उस समय के बुद्धि जीवियों को अत्यधिक प्रभावित करते थे। उनके साथ में ही रूस के प्रसिद्ध साहित्यकार टालस्टाय का उनके साथ पत्र-व्यवहार इतिहास की एक अमर घटना का भाग बन गया। टालस्टाय के पुस्तकालय में वैदिक मैग्जीन की प्रतियाँ उपस्थित रहती थी। भारत वर्ष का वृहद् इतिहास जो तीन भागों में प्रकाशित हुआ। प्रथम भाग आर्ष पर्व नाम से 1910 में प्रकाशित हुआ था। इसका द्वितीय संस्करण 1911 और तृतीय संस्करण 1923 ई० में प्रकाशित हुआ। भारत के इतिहास में आचार्य रामदेव ने अंग्रेजी के भ्रमित इतिहास का खण्डन करते हुए अपनी मौलिक धारणाएं स्थापित की हैं। आर्य लोग बाहर से आये" इस अंग्रेंजी की अवधारणा का पूर्ण रूपेण खण्डन किया है। अर्थात् यों कहा जा सकता है कि उन्होंने भारतीय इतिहास को अपनी मौलिकता प्रदान की है। उस समय यह ग्रन्थ कितना प्रसिद्ध रहा होगा। यह सहज में ही अनुमान लगाया जा सकता है कि इसके अनेक संस्करण प्रकाशित हुए थे।

जिस समय पटियाला राज्य में अंग्रेजी शासन के संकेत पर आर्य समाजियों पर अभियोग चलाया गया तो महात्मा मुंशीराम का तो उस ग्रन्थ में दिशा निर्देशन था। आचार्य रामदेव ने ही आर्य समाज के पक्ष को दृढ़ता पूर्वक प्रस्तुत किया। जितने भी आर्य समाजी नेताओं पर आरोप लगाये गये थे उनका दृढ़ता पूर्वक खण्ड़न किया। इसी प्रकार उन्होंने आर्य और दस्यु पर एक निबन्ध लिखा था जिसका प्रकाशन 1918 में हुआ था। इसी प्रकार उनका दिग्विजय दयानन्द नामक ग्रन्थ भी प्रकाशित हुआ।

आचार्य रामदेव शिक्षा के लिए बहुत ही चिन्तित रहते थे। वे स्वभावतः अपनी पुत्रियों से बहुत अधिक प्रेम करते थे। इसलिए उन्होंने जब 1932 के पश्चात् कन्या गुरुकुल देहरादून में ही अपना शेष जीवन तथा वहाँ के मुख्याधिष्ठाता के रूप में बिताया। सम्भवतः नारी शिक्षा के प्रति उनका झुकाव इसलिए रहा होगा कि स्त्रियों के साथ अमानवीय व्यवहार तथा उनको पैरों की जूती समझना उस समय के युग में एक सामान्य बात थी। नारी जाति उस समय अनेक सामाजिक कुरीतियों का शिकार थी। गृह स्वामिनी होते हुए भी उनकी स्थिति नौकरानी से भी बदतर थी। जिस समय वे गुरुकुल कांगड़ी में थे। उस समय भी स्त्री शिक्षा को मूर्त

रूप देने के लिए उत्सुक रहते थे। और गुरुकुल कांगड़ी के संचालको और प्रबन्धकों को नारी शिक्षा प्रदान करने के लिए कहते रहते थे। परन्तु गुरुकुल के अधिकारी इस परीक्षण में असफल न हो जाये इस भय से नया परीक्षण नहीं करना चाहते थे। परन्तु आचार्य रामदेव ने इस परीक्षण को स्वयं अपने घर में करने का निश्चय किया। इसलिए उन्होंने स्त्री शिक्षा सम्बन्धी विचारों को मूर्त रूप देने के लिए अपने घर में ही एक कन्या पाठशाला प्रारम्भ कर दी क्योंकि आचार्य जी की अपनी भी कई कन्याएं थी। आचार्य रामदेव जी ने गुरुकुल कांगड़ी में समन्वित एवं सन्तुलित शिक्षा की प्रणाली को विकसित किया। इसे दूसरे शब्दों में हम कह सकते हैं कि प्राचीन विधाएं और अर्वाचीन विषयों का संगम यदि किसी आचार्य ने बनाया तो वह आचार्य रामदेव ने ही बनाया इसलिए ही जब गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय को सरकार द्वारा डीम्ड विश्वविद्यालय की मान्यता प्राप्त हुई तो संस्था के सामने किसी प्रकार की व्यवस्था सम्बन्धी कोई गैप नहीं हुआ। अपितु एक प्रकार से यह संस्था विश्वविद्यालय का रूप 1930 से ही प्राप्त कर चुकी थी। क्योंकि उस समय विद्यालंकार में आधुनिक अन्य आदर्श विषयों के साथ-साथ विज्ञान एवं आयुर्वेद के विषय भी पढ़ाए जाने प्रारम्भ हो गये थे। इसलिए आचार्य रामदेव को स्वामी श्रद्धानन्द के साथ-साथ गुरुकुल के निर्माताओं में गिना जा सकता है।

पं॰ विश्वम्भरनाथ जी

(मुख्याधिष्ठाता)

गुरुकुल के प्रारम्भिक दिनों में इसकी व्यवस्थाओं को सुधारने व सुदृढ़ करने में जिन महानुभावों ने अपना अप्रतिव्म योगदान किया, उनमें श्री पं॰ विश्वम्भर नाथ जी का नाम सदा श्रद्धा और गौरव से लिया जाता रहेगा। यदि हम गुरुकुल के इतिहास का सिंहावलोकन करें तो वर्तमान परिसर का गुरुकुल पं॰ विश्वम्भर नाथ जी और आचार्य रामदेव जी के अथक परिश्रम का फल है।

1921 में स्वामी श्रद्धानन्द जी के चले जाने पर पं॰ विश्वम्भर नाथ जी गुरुकुल के मुख्याधिष्ठाता नियुक्त हुए। पण्डित जी आर्यसमाज के पुराने कार्यकर्त्ता थे। गुरुकुल की स्थापना के समय से ही वे गुरुकुल की स्वामिनी सभा के सदस्य थे। और अनेक बार कोषाध्यक्ष और उपप्रधान के पद पर नियुक्त हो चुके थे। महात्मा मुंशीराम जी के संन्यास लेने से दो वर्ष पूर्व वे सभा के प्रधान भी रहे। पं॰ जी सभा के ठोस कार्यकर्त्ता थे और महात्मा मुंशीराम जी का इन पर दृढ़ विश्वास था। जिस समय महात्मा जी संन्यास लेने लगे तो पं॰ जी को गुरुकुल में आकर कार्य सम्भालने के लिए प्रेरणा करते हुए उन्होंने लिखा था कि उस उद्देश्य की पूर्ति, के लिए, जो मेरे और तुम्हारे लिए इतना प्रिय रहा, तुम्हें साहस पूर्वक बाहर निकल आना चाहिए। जब 1921 में पं॰ विश्वम्भरनाथ जी ने गुरुकुल का कार्य भार सम्भाला। तब आर्य समाज के वीतराग संन्यासी स्वामी सत्यानन्द जी आचार्य नियुक्त हुए और शिक्षा सम्बन्धी कार्य उपाचार्य के रुप में प्रो॰ रामदेव जी के हाथ में रहा। 1928 में स्वामी सत्यानन्द जी के त्याग-पत्र दे देने पर प्रो॰ रामदेव जी आचार्य बने और उपाचार्य का कार्य पं॰ विश्वनाथ जी विद्यालंकार के हाथ में रहा।

श्री पं॰ विश्वम्भर नाथ जी 1921 से 1927 तक गुरुकुल के मुख्याधिष्ठाता रहे। यह काल गुरुकल के इतिहास में बड़ा घटना पूर्ण रहा है। आन्तरिक प्रबन्ध और व्यवस्था की दृष्टि से इस समय में गुरुकुल की बहुत उन्नति हुई। पं॰ विश्वम्भर नाथ जी आर्थिक प्रबन्ध में बहुत दक्ष थे। उन्होंने गुरुकुल के बजट को नये ढंग से व्यवस्थित किया और गुरुकुल के व्यय को ब्रह्मचारियों के भरण-पोषण और शिक्षा- इन दो विभागों में नियमित रुप से विभक्त कर यह नियम बनवा दिया कि एक का धन दूसरे विभाग में व्यय न हो। इस प्रकार गुरुकुल की आय तथा व्यय को बराबर करने के लिए बहुत उद्योग किया गया।

गुरुकुल को बाकायदा विश्वविद्यालय के रुप में परिवर्तित कर देने का प्रस्ताव सन् 1921 में पास किया जा चुका था। इस काल में गुरुकुल की अनेक नई शाखायें खुली। इस प्रकार सन् 1924 में जहाँ गुरुकुल का बहुत सी शाखायें खुलकर इतना विस्तार हुआ वहाँ 1924 में असाधारण वर्षा के कारण गंगा में बाढ़ आ गयी। इससे गुरुकुल की बहुत-सी इमारते नष्ट हो गयी। इस भयंकर बाढ़ के कारण गुरुकुल के स्थान परिवर्तन का प्रश्न बहुत महत्वपूर्ण हो गया। प्रतिनिधि सभा में इस पक्ष में अनेक मत थे। पं॰ विश्वम्भरनाथ जी का पक्ष गंगा के पश्चिमीय तट पर सुरक्षित स्थान पर गुरुकुल रखने का था। उनका मत बहुमत से पास हो गया और गंगा की नहर के साथ गुरुकुल के लिए नई भूमि खरीदी गयी। और नई इमारतों का निर्माण हुआ।

1927 में गुरुकुल को स्थापित हुए पूरे 25 वर्ष हो गए थे। अतः इस वर्ष का वार्षिकोत्सव रजतजयन्ती (सिल्वर जुबली) के रूप में बड़ी धूमधाम से मनाया गया। रजत जयन्ती को सफलता पूर्वक पूर्ण कराकर श्री पं॰ विश्वम्भर नाथ जी गुरुकुल से विदा हो गए। पं॰ जी का यह सिद्धान्त था कि किसी व्यक्ति को एक संस्था में 5 वर्ष से अधिक संचालक के रुप में नहीं रहना चाहिए। इसके अनुसार उन्होंने त्याग-पत्र दे दिया था। श्री आचार्य रामदेव जी उनके स्थान पर मुख्याधिष्ठाता नियुक्त हुए।

पं॰ इन्द्र विद्यावाचस्पति

(मुख्याधिष्ठाता)

इन्द्र विद्यावाचस्पति का जन्म 9 नवम्बर 1889 को जालन्धर में हुआ। इनके पिता का नाम महात्मा मुंशीराम (स्वामी श्रद्धानन्द) था। जब इनके पिता के मन में यह संकल्प आया कि गुरुकुल शिक्षा प्रणाली का पुनरुद्धार करना है तो उनको यह सुनने को मिला कि अपने आप तो धनी है ओरों के बच्चों को जंगल में, निर्जन स्थान में ले जाकर गुरुकुल में पढ़ायेगें। उसी समय महात्मा मुंशीराम ने निश्चित किया कि मैं अपने दोनों पुत्रों से गुरुकुल प्रारम्भ करूंगा। अतः इन्द्र और इनके बड़े भाई हरिश्चन्द्र गुरुकुल के प्रथम छात्रों में से थे और प्रथम ही स्नातक बनें। स्नातक बनने के पश्चात् 1914 में संस्कृत साहित्य तुलनात्मक आर्य सिद्धान्त एवं इतिहास के उपाध्याय नियुक्त हुये। 1917 में गुरुकुल इन्द्रप्रस्थ के मुख्याधिष्ठाता नियुक्त किये गये। 1920 में गुरुकुल कांगड़ी के सहायक मुख्याधिष्ठाता पद पर प्रतिष्ठित हुये। उसके पश्चात् गुरुकुल छोड़कर दिल्ली में अपना सामाजिक एवं राजनैतिक जीवन प्रारम्भ किया। दैनिक सत्धर्म प्रचारक, "विजय" साप्ताहिक, सत्यवादी साप्ताहिक, नवराष्ट्र और जनसत्ता आदि समाचार पत्रों के संपादक एवं व्यवस्थापक रहे।

1934 से लेकर 1960 तक गुरुकुल कांगड़ी के मुख्याधिष्ठाता एवं कुलपति पद पर कार्य करते रहे। आर्य सम्मेलन की स्वागत समिति के प्रधान के रूप में आर्य सम्मेलन को सफलतापूर्वक संचालित किया। दिल्ली में 1932 में स्वदेशी संघ के प्रधान, अस्पृश्यता निवारक लींग के महामंत्री, दलितोद्धार सभा के मंत्री निर्वाचित हुये, जिला व प्रान्तीय कांग्रेस कमेटी दिल्ली के 1937 के अध्यक्ष निर्वाचित हुये। सन् 1935 के कांग्रेस कन्वेंशन के स्वागताध्यक्ष बनाये गये। इन्द्र विद्यावाचस्पति को सन् 1943 में सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा दिल्ली जो कि आर्य समाज का सर्वोच्च संगठन है, उसका महामंत्री बनाया गया। आपने उन दिनों सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा के महामंत्री के रूप में बहुत अधिक कार्य किया। आर्य समाज के आन्दोलन को जनसामान्य तक पहुँचाने का सफल प्रयास किया।

पं॰ इन्द्र विद्यावाचस्पति लोक सेवा आयोग के परामर्श दाता भी नियुक्त किये गये थे। इसके साथ ही अखिल भारतीय हिन्दी पत्रकार संघ के प्रधान भी निर्वाचित हुये थे। भारत के शिक्षा मंत्रालय की विश्वकोष परामर्शदात्री समिति का सदस्य भी आपको मनोनीत किया गया। राष्ट्रपति द्वारा सन् 1952 से 1958 तक राज्य परिषद् का सदस्य मनोनीत किया गया।

पं॰ इन्द्र विद्यावाचस्पति यद्यपि बाल्यपन से एक फेफडे वाले व्यक्ति थे। अनेक क्षेत्रों में रात दिन व्यस्त रहते हुये भी अनेक ग्रन्थों के रचनाकार एंव लेखक भी थे। उनके निम्नलिखित ग्रन्थ उस समय में बहुत ही आदर के साथ पढ़े जाते थे।

ऐतिहासिक मुगल साम्राज्य का क्षय और उसके कारण (दो खण्ड), भारत में ब्रिटिश साम्राज्य का उदय और अस्त, भारत के स्वाधीनता संग्राम का इतिहास, आर्य समाज का इतिहास (तीन भाग में), संस्कृत साहित्य का अनुशीलन। इन्होंने इतना ही नहीं उपन्यास भी लिखे थे, जो निम्न हैं- अपराधी कौन, शाह आलम की आँखें, जमींदार, सरला की भाभी, सरला, आत्म-बलिदान, गुलाम कादिर।

नाटक:- स्वर्णदेश का उद्धार, जीवन-चरित्र- नैपोलियन बोनापार्ट, प्रिन्स विस्मार्क, गैरी वाल्डी, महर्षि जीवन की झांकिया (तृतीय भाग में), पं॰ जवाहर लाल नेहरू, सम्राट् रघु, हमारे कर्मयोगी राष्ट्रपति,

मेरे पिता, "मैं इनका ऋणी हूँ: लोकमान्य तिलक।" मेरे पत्रकारिता सम्बन्धित अनुभव, भारतीय संस्कृत व राजनीति उपनिषदों की भूमिका, भारतीय संस्कृति का प्रवाह, ईशोपनिषद् भाष्य, राष्टों की उन्नति, राष्ट्रीयता का मूलमंत्र, स्वतन्त्र भारत की रूप रेखा, जीवन संग्राम, राजधर्म, गाँधी हत्याकाण्ड, स्वराज्य और चरित्र निर्माण आदि अनेक ग्रन्थों के लेखक थे।

संस्कृत में भी भारतौतिह्यिम् संस्कृत काव्य के रूप में रचना की थी। पं॰ इन्द्र विद्यावाचस्पति अध्ययन करते हुये ही नवंम श्रेणी में हस्तलिखित पत्रिकाएं निकालते थे। अध्ययन काल से ही संस्कृत व हिन्दी में काव्य रचना करने में रूचि थी। स्वतन्त्रता आन्दोलन में बढ़-चढ़ करके भाग लिया। 1927, 1930, और 32 ई॰ में तीन बार कारावास में रहे। अनेक बार ब्रिटिश सरकार के कोपभाजन बने। उसी कारण कई बार अपने समाचार पत्र बन्द करने पड़े। पं॰ इन्द्र विद्या वाचस्पति उद्भट विद्वान् प्रभावशाली लेखक, उच्चकोटि, के पत्रकार, अभूतपूर्व वक्ता, विद्या व्यवसनी, लोकप्रिय एवं राष्ट्रीय तथा आर्य समाज के नेता के रूप में प्रसिद्ध थे।

आप ने 1934 में पुन: गुरुकुल कांगड़ी के मुख्य अधिष्ठाता एवं कुलपति पद के रूप में गुरुकुल को सम्भाला, तो उस समय तो गुरुकुल की स्थिति डावाडोल सी चल रही थी। गुरुकुल के प्रशासन तन्त्र को सम्भालते ही गुरुकुल की व्यवस्था में स्थायित्व आने लगा। जिसका परिणाम हुआ कि गुरुकुल कांगड़ी को भारत सरकार द्वारा स्वतन्त्रता के पश्चात् अनुदान प्रदान किया जाने लगा।

सन् 1962 में गुरुकुल कांगड़ी को विश्वविद्यालय के रूप में मान्यता प्राप्त हो गयी थी।

स्नातक होने के पश्चात् इन्द्र का विवाह एक पंजाबी परिवार में हुआ था। इनकी पत्नी का स्वास्थ्य शीघ्र ही खराब होने लगा था। इनका एक पुत्र हुआ, जिसका नाम जयन्त रखा गया था तथा दो पुत्रियाँ थी जिनका नाम पुष्पा और ऊषा रखा गया था। पं॰ इन्द्र जी की पत्नी का स्वर्गवास बहुत ही अल्प समय में हो गया था, तीनों बच्चे अभी बहुत छोटे-छोटे थे। जैसा कि लिखा जा चुका है कि इन्द्र जी को जन्म से एक ही फेफड़ा था। जिसके सहारे वे लगभग 71 वर्ष जीवित रहे। पहली पत्नी के स्वर्गवास के पश्चात् सभी सगे सम्बन्धियों ने इन पर दवाब डालना प्रारम्भ कर दिया कि अपने बच्चों के लिए अपने स्वास्थ्य की रक्षा के लिए तुम्हें पुन: विवाह करना चाहिए। अन्त में एक कट्टर आर्य समाजी की पुत्री चन्द्रावती से इनका पुन: विवाह सम्पन्न हुआ। श्रीमती चन्द्रावती का विवाह होते ही उनको विमाता के रूप में बनना पड़ा। चन्द्रावती की ही दूसरी बहन महावीर त्यागी जी के साथ ब्याही गयी थी। स्वतन्त्रता आन्दोलन में उनका बहुत बड़ा योगदान था। परन्तु कार्याधिक्य के कारण उसकी शीघ्र ही मृत्यु हो गयी थी। इसलिए यह भाग्य की ही विडम्बना थी कि एक ऐसी माँ जिसकी अपनी कोख से कोई सन्तान उत्पन्न नहीं हुई थी, परन्तु अन्य दो माताओं के बच्चों का पालन-पोषण किया, उनको पढ़ा-लिखा कर योग्य बनाया। उन सभी पुत्रियों की सम्पन्न परिवार में शादी की गयी। माता चन्द्रावती ने मूक एवं मौन रहकर पण्डित इन्द्र विद्या वाचस्पति की छाया बनकर उनकी मृत्यु तक अहर्निश सेवा की।

पं॰ इन्द्र विद्या वाचस्पति की मृत्यु 23 अगस्त 1960 को दिल्ली में हुई। लगभग दो मास पूर्व ही गुरुकुल कांगड़ी के वेद मन्दिर में उनकी विदाई समारोहपूर्वक की गयी थी। दिल्ली में रहने के पश्चात् शीघ्र ही उनका स्वर्गवास हो गया था। किन्तु अपने जीवन काल में वे गुरुकुल की 'हीरक जयन्ती' बड़ी धूम-धाम से मना गए। तथा पं॰ जवाहर लाल नेहरु (भारत के प्रधानमंत्री) द्वारा विज्ञान भवन का शिलान्यास भी करवा गए। अपने जीवन काल में पं॰ जी ने सदा गुरुकुल की उन्नति का ही स्वप्न संजोया। विदाई के समय उनके शब्द थे 'गुरुकुल से विदाई की कल्पना तो मैंने कभी न की थी। गुरुकुल में ही निवास के लिए उन्होंने 'इन्द्र निकुञ्ज' बनाया था।

पं० बुद्धदेव विद्यालंकार (स्वामी समर्पणानन्द)

(आचार्य)

अद्भुत् वाग्मी, विचित्र ऊहा के धनी, उद्भट विद्वान् तथा शास्त्रों के तलस्पर्शी अध्येता पं० बुद्धदेव विद्यालंकार का जन्म 1 अगस्त 1815 को देहरादून के निकट कौलागढ़ (जिला-सहारनपुर) ग्राम में पं० रामचन्द्र के यहाँ हुआ। ये मुद्गल गोत्रोत्पन्न ब्राह्मण थे। पण्डित जी की माता का नाम यशवन्ती देवी था जो देहरादून के पण्डित कृपाराम की पुत्री थी। ये वही पं० कृपाराम थे जिन्होंने स्वामी दयानन्द को देहरादून आने के लिए आमन्त्रित किया था तथा स्वामी जी के व्याख्यानों की सुचारु व्यवस्था की थी। इनका बचपन का नाम नवीन चन्द्र था। 7 वर्ष की अवस्था में इन्हें गुरुकुल कांगड़ी में प्रवेश कराया गया जहाँ अध्ययन कर आपने 1972 विक्रमी (सन् 1916) में विद्यालंकार की उपाधि प्राप्त की।

पं० बुद्धदेव ने आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब में वर्षों तक उपदेशक का कार्य किया। तत्पश्चात् आप स्वतन्त्र रूप से धर्म प्रचार में आजीवन लगे रहे। कुछ समय तक आपने गुरुकुल कांगड़ी में अध्यापन कार्य भी किया। आपकी पत्नी का नाम श्रीमती सुशीला देवी था। आपने अपनी दो पुत्रियों अपराजिता एवं प्रभातशोभा का विवाह जात-पात तोड़कर किया। कालांतर में आपने संन्यास ग्रहण कर लिया। अब वे स्वामी समर्पणानन्द के नाम से प्रसिद्ध हुये। पण्डित बुद्धदेव आर्य समाज के माननीय विद्वान् और प्रतिष्ठित नेता थे। हैदराबाद आर्य सत्याग्रह में भाग लेकर आपने कारावास का दण्ड स्वीकार किया। वे एक उच्च कोटि के शास्त्रार्थ कर्त्ता, प्रगल्भ लेखक तथा कुशल वक्ता थे। अफ्रीका जाकर वैदिक धर्म प्रचार करने का अवसर भी उन्हें मिला था। 1939 में उन्होंने मेरठ के निकट प्रभात आश्रम गुरुकुल की स्थापना की। वे आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के प्रधान भी रहे थे। 14 जनवरी 1969 को दिल्ली में उनका निधन हो गया। गुरुकुल कांगड़ी के उत्सवों पर उनके भाषण सुनने वालों की अपार भीड़ होती थी। संगीत शास्त्र का उन्हें अच्छा ज्ञान था। उनके भाषण जहाँ शोध-पूरक होते थे वहीं उनकी लेखनी से निकले अनेक ग्रन्थ उनके गहन अध्ययन और प्रज्ञा के अप्रतिम उदाहरण हैं।

1. अथर्व वेद भाष्य- (आंशिक) आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के मासिक मुख पत्र आर्य में धारावाही छपता रहा।
2. शतपथ ब्राह्मण प्रथम काण्ड का भाष्य।
3. शतपथ में एक पथ (शतपथ) ब्राह्मण के अध्ययन में सहायक ग्रन्थ)।
4. अथ मरुत्सूक्त।
5. सप्त सिन्धुसूक्त (अर्थवेद के चतुर्दश काण्ड का भाष्य)
6. प्रातः सूक्त
7. ऋग्वेद का मणिसूत्र
8. ऋग्वेद मंडल मणि सूत्र (ऋग्वेद के मण्डलों में प्रस्तुत विचारधारा का पारस्परिक सम्बन्ध स्थापित करने वाला ग्रन्थ।
9. पशु बलि वेद शास्त्र विरुद्ध हैं।

10. किसकी सेना में भर्ती होंगे ? कृष्ण की या कंस की ? (सरिता में प्रकाशित रतनलाल बंसल के "आज का सबसे बड़ा देशद्रोह: गो पूजा" शीर्षक लेख का खण्डन)।
11. वेदों के सम्बन्ध में क्या जानो और क्या भूलो ?
12. गोपावर्त (गाय का महत्ता का निरुपण)
13. वर्ण व्यवस्था और उस पर आक्षेप,
14. वर्ण व्यवस्था के चार सूत्र
15. काया कल्प (वर्ण व्यवस्था की सारगर्भित व्याख्या प्रस्तुत करने वाला ग्रन्थ) इसके अनेक संस्करण।
16. मनु और माँस,
17. श्रीमद् भगवद् गीता समर्पण भाष्य।
18. वैदिक अग्निप्रकाश (कारावास के दिनों में दिये गये प्रवचनों का संग्रह) संकलनकर्त्ता श्री इन्द्र राज,
19. सुर और असुर,
20. पाणिनि प्रवेशिका (संस्कृत भाषा शिक्षण)
21. अथ ब्रह्म यज्ञ,
22. अथ देव यज्ञ,
23. पंच यज्ञ प्रकाश,
24. उसकी राह पर (काव्य संग्रह),
25. प्रार्थनावलि,
26. तीन देवता
27. बिखरे हुये फूल,
28. भारतीय लोक संघ की स्थापना क्यों ?
29. संसार का पुनर्निर्माण,
30. सोम,
31. स्वर्ग,
32. हिन्दू समाज मत चूक।

श्री देव शर्मा विद्यालंकार

(अभय देव विद्यालंकार)

(आचार्य)

आचार्य अभय देव विद्यालंकार का जन्म 2 जुलाई 1896 को चरथावल (मुजफ्फरनगर) में हुआ था। आपके पिता का नाम पं० रामप्रसाद था। सात वर्ष की आयु में ही आपको गुरुकुल कांगड़ी में प्रविष्ट कराया गया। 1919 में आपने विद्यालंकार की उपाधि प्राप्त की। स्वामी श्रद्धानन्द के आग्रह से आपने गुरुकुल कांगड़ी में वेद का उपाध्याय बनना स्वीकार किया। 6 मास के पश्चात् आपको गुरुकुल कांगड़ी का उप-आचार्य बना दिया गया। गुरुकुल में बाढ़ आने के बाद आपकी आचार्य पद पर नियुक्ति की गयी।

महात्मा गाँधी के असहयोग आन्दोलन से प्रेरणा लेकर आपने देश के स्वाधीनता संग्राम में भाग लिया। इसमें आपने खादी प्रयोग, विदेशी वस्त्रों का निषेध, मद्य निषेध आदि कार्यक्रमों में महत्त्वपूर्ण योगदान दिया। 1930 में असहयोग आन्दोलन में आपको कारावास की सजा भी हुई।

गुरुकुल कांगड़ी की व्यवस्था ठीक हो जाने के पश्चात् आपने आचार्य पद से त्यागपत्र दे दिया और उसके पश्चात् आप उत्तराखण्ड में अज्ञातवास अथवा साधना हेतु चले गये। जब आप अज्ञातवास से लौटे तो आपने देश का भ्रमण किया। महात्मा गाँधी के साबरमती आश्रम में भी आप गये। वहाँ पर महात्मा गाँधी जी को प्रेरणा दी कि जो आश्रम में प्रार्थना की जाती है वह गुजराती में न होकर हिन्दी में ही होनी चाहिए। देशाटन के पश्चात् आप पुनः गुरुकुल में लौटे। आपको पुनः आचार्य पद पर नियुक्त किया गया।

इसके पश्चात् श्री अरविन्द की साधना पद्धति से प्रभावित हुये और वर्ष में 4 मास अरविन्द आश्रम पांडिचेरी में रहकर योग साधना करने लगे। 3 अप्रैल 1938 को आपने गंगा पार की पुरानी गुरुकुल भूमि में जाकर स्वामी सत्यानन्द से संन्यास की दीक्षा ली। इस प्रकार आप स्वामी अभयदेव के रूप में विख्यात हुये। 1942 में आपने अपने ग्राम में अरविन्द निकेतन की स्थापना की। तथा जीवन पर्यन्त वेद तथा योग के प्रचार में लगे रहे।

आप ने अनेक ग्रन्थों की रचना की है- वैदिक विनय (तीन भाग), स्वाध्याय मंजरी, ब्राह्मण की गौ, वैदिक ब्रह्मचर्य गीत, वैदिक उपदेश माला आदि अनेक ग्रन्थों की रचना की। 9 जनवरी 1970 को आपका स्वर्गवास हो गया।

पं॰ देशबन्धु विद्यालंकार

(सहायक मुख्यधिष्ठाता)

श्री पं॰ देशबन्धु विद्यालंकार का जन्म कानपुर में 1896 में हुआ। स्नातक बनने के पश्चात् दिल्ली-क्लाथ मिल में कार्य किया उसके पश्चात् श्रम कल्याण विभाग में अधिकारी रहे। गुरुकुल कांगड़ी के सहायक मुख्याधिष्ठाता पद पर 1941 से 1944 तक रहे। आप एक बहुत ही कठोर कुशल प्रशासक माने जाते थे किसी भी स्थिति में गुरुकुल के नियमों में शिथिलता सहन नहीं करते थे। आप कुछ वर्ष तक गुरुकुल कांगड़ी फार्मेसी के भी प्रशासक रहे। आप ईमानदारी की एक साक्षात् मूर्ति माने जाते थे। आपने अपने कार्य काल में पुण्य भूमि (कांगड़ी पार) और वर्तमान गुरुकुल की व्यवस्था को उत्तम ढंग से चलाकर एक मिसाल कायम की।

श्री देशबन्धु विद्यालंकार बचपन से ही योग आसन एवं नाना प्रकार के व्यायामों में निष्णात थे। समस्त भारत में आपने व्यायाम के प्रदर्शन किये। आप व्यायाम के प्रदर्शन के लिए अमेरिका भी गये। जब आप व्यायाम का प्रदर्शन करते थे तो साधारण जनता मन्त्रमुग्ध हो जाती थी। आप धनुर्विधा के ऐसे प्रदर्शन करते थे कि देखने वाले अवाक् रह जाते थे। धनुर्धर के रूप में आप प्रख्यात थे।

आपने दिल्ली में स्वंतंत्र व्यवसाय भी किया, परन्तु अत्यधिक ईमानदार और सत्यवादी होने के कारण यह व्यवसाय सफल नहीं हो पाया। सेवा निवृत्त होने के पश्चात् आप कुछ वर्ष तक हैदराबाद में रहे। तत्पश्चात् आप आर्य वानप्रस्थ आश्रम ज्वालापुर में जाकर रहने लगे। आप एक उपनिषदों के विद्वान् वक्ता थे। 1997 में आपका यहाँ आर्य वानप्रस्थ आश्रम में शतायु होकर स्वर्गवास हो गया।

डॉ॰ सत्यव्रत सिद्धान्तालंकार

(मुख्याधिष्ठाता एवं कुलपति)

पं॰ सत्यव्रत सिद्धान्तालंकार का जन्म 5 मार्च 1898 में लुधियानान्तर्गत सवद्दी नामक ग्राम में हुआ। उनके पिता का नाम पं॰ बालकराम था माता का नाम ईश्वरी देवी था। कुल पांच भाई और तीन बहिनें थी। जिस समय सत्यव्रत जी का जन्म हुआ। उस समय पंजाब में आर्य समाज की विचार धारा का शिखर युग था। जिस समय उनका गुरुकुल में प्रवेश हुआ। प्रथम कक्षा से दशम कक्षा तक उनकी सत्रह वर्ष की आयु हो गई थी। जब वे सातवीं आठवीं कक्षा में पढ़ते थे उस समय अचानक घर से समाचार आया कि तुम्हारे पिता बीमार हैं चले आओ। तुम्हारे पिता जी सख्त बीमार है पथरी का आपरेशन होना है। उनके पिता जी का आपरेशन हुआ किन्तु वह आपरेशन सफल नहीं हो पाया। इस प्रकार इनके पिता का अचानक स्वर्गवास हो गया। इनके समस्त परिवार पर एक प्रकार से वज्राघात हुआ था। पं॰ सत्यव्रत सिद्धान्तालंकार ने इस सम्बन्ध में अपने संस्मरण में लिखा है कि पिता जी की मृत्यु के बाद मेरे सामने प्रश्न उपस्थित हुआ कि मैं क्या करूं ? मेरे फूफा पं॰ ब्रह्मानन्द लुधियाना के प्रसिद्ध वकील थे, उन्होंने मुझे कहा कि तुम्हें उर्दू सिखा देंगें। और अदालत में अर्जी नवीस का कार्य करना। मैं तो बच्चा था कि क्या जानता कि अर्जी नवीस क्या होता है ? मैंने महात्मा मुंशीराम को सारी स्थिति लिख भेजी, उन दिनों गुरुकुल की फीस दस रुपयां मासिक थी। मेरा उतना भी इन्तजाम नहीं हो सकता था। मैंने लिख भेजा कि मैं गुरुकुल में नहीं लौट सकूंगा। क्योंकि मेरी फीस देने वाला कोई नहीं रहा। मेरे पत्र के उत्तर में महात्मा जी का उत्तर आया "पुत्र तुम लौट आओ तुमसे कोई फीस नहीं ली जायेगी।" महात्मा जी के उस स्नेह-स्निग्ध पत्र ने मेरे जीवन का नक्शा ही बदल दिया, वह पत्र सदा मेरे जीवन के ऋण रूप ही बना रहा। जिसे उतारने के लिए मुझे जीवन भर गुरुकुल की सेवा करने का अवसर मिलता रहा। महात्मा जी को हम लोग पिता जी कहा करते थे। उनका पत्र पाकर मैं गुरुकुल लौट आया और उसके बाद मेरे भाई-बहन मुझे भूल गये और मैं उन्हें भूल गया।[5]

पं॰ सत्यव्रत सिद्धान्तालंकार बचपन में पढ़ने-लिखने में प्रतिभाशाली थे। परन्तु इनका गणित कमजोर था। जब वे विद्यालय विभाग का अध्ययन समाप्त कर महाविद्यालय विभाग में आये तो इन्होंने अपना मुख्य विषय आर्य सिद्धान्त को बनाया। उस समय आर्य सिद्धान्त में अंग्रेजी के कई ग्रन्थ पढ़ाये जाते थे। इन्होंने उन ग्रन्थों को पर्याप्त रूप में रट डाला था। इससे इनकी अंग्रेजी बहुत अच्छी हो गयी थी। जिस समय वे महाविद्यालय में पढ़ रहे थे उस समय की एक घटना उन्होंने इस प्रकार लिखी है- "हमारे विज्ञान के अध्यापक श्री लहरी थे। एक दिन लहरी महोदय मुझे पास के जंगल में ले गये, जिसे हम लोग आनन्द वाटिका कहते थे। मुझे बैठाकर वे लेक्चर देने लगे। उन्होंने कहना शुरू किया कि भारत माता परतन्त्रता की बेड़ी में बंधी हैं। ऐसे युवक तैयार होने चाहिए जो भारत माता को स्वतन्त्र करें और उसके बन्धनों को काटे। तुम होनहार युवक हो तुम्हें इस काम के लिए उद्यत होना चाहिए। तुम्हारे लिखने, पढ़ने का इंतजाम हिन्दू यूनिवर्सिटी में हो जायेगा। तुम्हारे विद्याध्ययन में काई बाधा नहीं होगी। आधा घंटा तक उन्होंने भारत माता की स्वतन्त्रता के लिए तैयारी का व्याख्यान दिया। मैं उनके व्याख्यान से अत्यधिक प्रभावित हुआ। अगले दिन मैं महात्मा मुंशीराम से मिला और मैंने कहा- "भारत माता की स्वतन्त्रता के लिए मैं अपने आपको

तैयार करना चाहता हूँ इसलिए मैं गुरुकुल कांगड़ी छोड़कर जाना चाहता हूँ।" महात्मा जी ने तुरन्त पूछा- "तुम्हें यह विचार किसने दिये ?" मैंने कहा- "लहरी जी ने" महात्मा जी ने मुझे समझाया और लहरी जी को अगले ही दिन सेवा से मुक्त कर दिया। बाद में पता चला कि लहरी जी पकड़े गये और उन्हें फांसी की सजा हो गयी थी।

पं॰ सत्यव्रत सिद्धान्तालंकार ने महाविद्यालय में पढ़ते हुये एक शब्दकोश तैयार किया था। जिसमें अनेक शब्दों के सामने तत्सम शब्दों का निर्माण किया था अंग्रेजी के अनेक शब्दों के साथ उनकी जन्मदात धातुओं को लिख था। जब ये गुरुकुल के स्नातक बने तो उसके पश्चात् गुरुकुल में ही उपाध्याय के रूप में नियुक्त हो गये। इन्होंने सर्वप्रथम सर्वधर्म सम्मेलन में गुजरांवाला में "वेद ईश्वरीय ज्ञान है" इस विषय पर प्रथम शास्त्रार्थ किया।

स्नातक हो जाने के पश्चात् सर्वप्रथम बाहर पूना में गये। वहाँ पर उपदेशक के रूप में 25 रुपये प्रति माह कार्य करने लगे। उन्होंने लिखा है कि- "मैंने तो उस समय तक 25 रुपये देखें भी नहीं थे।" जिस समय वह पूना गये उस समय उन्होंने पाँव में खडाऊँ, लेन की धोती बांधी हुई थी। मेरे इस वेश को देखकर एक युवक भागा-भागा आया और पूछा- "क्या आप सत्यव्रत हैं ? और वे मुझे निश्चित स्थान पर ले गये।" पूना के वार्षिक उत्सव पर उनके कई व्याख्यान हुये। इस प्रकार सत्यव्रत सिद्धान्तालंकार कोल्हापुर में और बंगलौर आदि स्थान पर आर्य समाज के उत्सवों पर गये और अनेक भाषण दिये।

सन् 1923 में गुरुकुल में आर्य सिद्धान्त के उपाध्याय पद पर नियुक्त हो गये। उन दिनों जो गुरुकुल में उपाध्याय होते थे उनको बाहर आर्य समाज के उत्सवों पर बोलने जाना पड़ता था। यहाँ गुरुकुल में प्रोफेसर, आश्रमाध्यक्ष, उपदेशक के अतिरिक्त वे रजिस्ट्रार का कार्य भी करते थे। उन दिनों ये धन संग्रह के लिए बाहर भी जाया करते थे। आचार्य रामदेव जी के साथ धन संग्रह के लिए आप दक्षिण अफ्रीका भी गये थे। 1924 में जब वापिस लौटे तो गुरुकुल में बाढ़ आ गयी थी। 28 वर्ष की आयु में 15 जून 1926 को चन्द्रावती जी से इनका विवाह सम्पन्न हुआ। यद्यपि इनके विवाह के पूर्व कान्यकुब्ज और सारस्वत का विवाद उत्पन्न हुआ, परन्तु दोनों ही परिवार आर्य समाजी और कांग्रेसी थे इसलिए विवाह हो गया। विवाह के समय श्रीमती चन्द्रावती बी.ए. पास थी, उनकी इच्छा पर उन्हें इलाहाबाद में एम.ए. कराया गया। उनके वापिस लौटने पर दोनों ही स्वतन्त्रता आन्दोलन में कांग्रेस के कार्यों में बढ़-चढ़ कर भाग लेने लगे।

आन्दोलन कार्य करते हुये उनके वारंट जारी हो गये और इन्हें जेल भेज दिया गया। दोनों पति-पत्नी जेल में जब जाने लगे तो इन्होंने गाड़ी में बैठने से इन्कार कर दिया। पुलिस वालों से कहा- "मेरी पत्नी भी मेरे साथ ही इसी क्लॉस वाले डिब्बे में चलेगीं। इनको 25 दिन तक हवालात में रखा गया। जिस दिन मजिस्ट्रेट के सामने इनको पेश किया गया इन्होंने मजिस्ट्रेट के सामने स्पीच देनी प्रारम्भ कर दी। स्पीच देने के बाद इन्होंने कहा- "मेरी जोरदार स्पीच सुनकर अभी तक आप कुर्सी पर बैठे है, उठिये और इस शैतान सरकार को हटाने के लिए हमारे साथ हो जाइये।" मजिस्ट्रेट ने मेरी बात क्या सुननी थी, प्रत्युत् मुझे एक साल के कारावास का दण्ड सुना दिया।"[6]

उस समय गुरुकुल स्वामिनी सभा का यह मत था कि गुरुकुल के किसी कार्यकर्त्ता को राजनीति में भाग नहीं लेने देना चाहिए। इसीलिए गुरुकुल से आपकी सेवायें समाप्त कर दी गयी थी। आपकी पत्नी को कन्या गुरुकुल देहरादून में भेज दिया गया था। आप देहरादून में अपनी पत्नी के पास ही चले गये।

16 फरवरी 1935 को इनके एक मात्र पुत्र विजय लखनपाल का जन्म बम्बई में हुआ। 23 जून 1935 को इन्हें गुरुकुल कांगड़ी के अधिष्ठाता पद पर नियुक्त किया गया। 1935 में इनकी पत्नी चन्द्रावती लखनपाल को मंगलाप्रसाद पुरस्कार से पुरस्कृत किया गया। सत्यव्रत सिद्धान्तालंकार मुख्याधिष्ठाता बनकर गुरुकुल आ गये। यहाँ उन्होंने गुरुकुल की आर्थिक स्थिति को सुधारा। फार्मेसी की स्थापना की और फार्मेसी का कार्य धीरे-धीरे बढ़ने लगा। इनकी पत्नी देहरादून में महादेवी कन्या पाठशाला में प्रिंसिपल हो गयी थी इनकी पत्नी श्रीमती चन्द्रावती लखनपाल राज्यसभा 10(दस) वर्ष तक सदस्य के रूप में रही। पं० सत्यव्रत सिद्धान्तालंकार ने 15 नवम्बर 1939 को मुख्याधिष्ठाता पद छोड़ा था। परन्तु 4 जून 1960 को पुनः मुख्याधिष्ठाता पद पर नियुक्त हो गये। जब ये दोबारा मुख्याधिष्ठाता बनाये गये तो इन्होंने यह निश्चय किया कि- "मैं गुरुकुल से वेतन के रूप में कुछ नहीं लूंगा और गुरुकुल की व्यवस्था को ठीक करने के लिए उन्होंने पर्याप्त परिश्रम किया। 1962 में गुरुकुल कांगड़ी को विश्वविद्यालय के रूप में जो मान्यता प्राप्त हुई। उसमें मुख्य रूप से पण्डित सत्यव्रत सिद्धान्तालंकार का ही हाथ था।"

सत्यव्रत सिद्धान्तालंकार द्वारा विरचित ग्रन्थ

सत्य की खोज, वैदिक संस्कृति के मूल तत्व, वैदिक संस्कृति का संदेश, संस्कार चन्द्रिका, उपनिषद् प्रकाश, गीता भाष्य, एकादशोपनिषद् एकपोजिशन ऑफ वैदिक थॉट, हैरिटेज ऑफ वैदिक कल्चर, ग्लिक्सेज ऑफ दी वेदाज, होमोपैथिक औषधियों का सजीव चित्रण, रोग तथा उनकी होम्योपैथिक चिकित्सा आदि अनेक ग्रन्थों के रचयिता थे।

पं० सत्यव्रत सिद्धान्तालंकार को अनेक पुरस्कारों से पुरस्कृत किया गया।

1. पंजाब सरकार द्वारा हिन्दी में मूर्धन्य लेखक के रूप में पुरस्कृत किया गया। यह पुरस्कार इनको तीन मार्च 1982 को चण्डीगढ़ में प्रदान किया गया। इस पुरस्कार में 1200 रुपये तथा एक दोशाला भेंट किया गया।
2. उत्तर प्रदेश सरकार द्वारा 1977 में लखनऊ में आयोजित "साहित्यकार" पुरस्कार प्रदान किया गया जिसमें 2500 रुपये प्रदान किये गये।
3. केन्द्र सरकार द्वारा 15 अगस्त 1881 को राष्ट्रपति भवन की एक विज्ञप्ति द्वारा यह सूचित किया गया कि प्रोफेसर सत्यव्रत सिद्धान्तालंकार को भारत के प्रमुख संस्कृत विद्वान् के तौर पर उन्हें सम्मानित किया जाता है, उन्हें आजीवन प्रतिवर्ष 5000 रुपये प्रदान किये जायेगें।

इसके अतिरिक्त हजारीमल डालमिया पुरस्कार, गंगा प्रसाद उपाध्याय पुरस्कार दिये गये। भारतीय भवन में राजा अवार्ड दश हजार रुपये का प्रदान किया। इसी प्रकार अन्य सस्थाओं द्वारा भी उनको सम्मानित किया गया था नैरोबी में आर्य महा सम्मेलन में अध्यक्ष 1978 मे; लोक सेवक मण्डल द्वारा अभिनन्दन 1989, भारतीय विद्या भवन द्वारा सम्मानित अप्रैल 1982 ।

गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय के परिदृष्टा के रूप में डॉ० सत्यव्रत सिद्धान्तालंकार की नियुक्ति 13 जुलाई 1980 को गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय की शिष्ट परिषद् ने की। गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय का परिदृष्ट्रा पद सर्वोच्च पद होता है। परिदृष्ट्रा पद पर नियुक्ति का विधान विश्वविद्यालय के संविधान में कोई हाईकोर्ट का जस्टि्स अथवा किसी भी विश्वविद्यालय का पूर्व कुलपति ही नियुक्त किया जा सकता है। पं० सत्यव्रत सिद्धान्तालंकार गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय के प्रथम कुलपति भी थे। इन्हीं के सतत प्रयास का परिणाम था कि गुरुकुल कांगड़ी को डीम्ड टू बी विश्वविद्यालय का दर्जा प्राप्त हुआ। जिसका विस्तृत वर्णन विश्वविद्यालय के सामान्य इतिहास में किया जा चुका है। डॉ० सत्यव्रत सिद्धान्तालंकार गुरुकुल

कांगड़ी विश्वविद्यालय के किसी भी पद पर रहे, वहाँ इन्होंने अपनी विशेष पहचान अंकित की थी। जिस समय पहली बार मुख्याधिष्ठाता बनकर आये थे तो उस समय बाहर से दान आना बहुत कम हो चुका था। इन्होंने आकर के यह विचार किया कि गुरुकुल को स्वावलम्बी संस्था बनाया जाये। दान आदि का मामला बहुत अधिक दिन तक चलने वाला नहीं है। इसलिए गुरुकुल कांगड़ी को स्वावलम्बी बनाने के लिए गुरुकुल कांगड़ी फार्मेसी को एक उद्योग के रूप में स्थापित किया। आज उस उद्योग की करोड़ों रुपयों की बिक्री होती है। आमों के पेड़ लगवायें। इसलिए आज भी गुरुकुल कांगड़ी विद्यालय विभाग में अनुदान उत्तर-प्रदेश सरकार अथवा भारत सरकार से नहीं लिया जाता है। बल्कि एक लाख रुपया प्रतिमाह गुरुकुल कांगड़ी विद्यालय विभाग और कन्या गुरुकुल महाविद्यालय देहरादून को गुरुकुल फार्मेसी से ही प्रतिमाह प्रदान किया जाता है।

परिदृष्टा के रूप में भी सन् 1980 से सन् 1986 तक अर्थात् 6 वर्ष तक आप ने परिदृष्टा के रूप में कार्य किया। डॉ॰ सत्यकाम विद्यालंकार को कुलपति पद पर अपने अन्तिम परिदृष्टा के कार्यकाल में नियुक्त किया। उनको जब इन्होंने यह पाया कि वे गुरुकुल की मर्यादाओं के अनुसार कुलपति पद पर ठीक कार्य नहीं कर रहे हैं तो उनको एक वर्ष के भीतर ही कुलपति पद से मुक्त कर दिया। यह भी एक उनका साहसिक कार्य था।

डॉ॰ सत्यव्रत सिद्धान्तालंकार का हालैण्ड में अभिनन्दन किया गया। हालैण्ड निवासी भारतीयों ने 22 मई 1982 को हालैण्ड के एमस्टर्डम में उनका अभिनन्दन किया था।

आचार्य प्रियव्रत वेद वाचस्पति

(कुलपति एवं परिदृष्टा)

आचार्य प्रियव्रत का जन्म एक आश्विन 1963 विक्रमी सम्वत् (1906) को पानीपत तहसील के अन्तर्गत भाऊपुर ग्राम जिला-करनाल हरियाणा में हुआ। 1925 में आप स्नातक बने। आचार्य प्रियव्रत का बचपन का नाम निहाल सिंह था, आप एक क्षत्रिय किसान परिवार में पैदा हुये थे। पिता चौधरी विजय सिंह जी कट्टर आर्य थे। परन्तु घर की आर्थिक स्थिति ऐसी नहीं थी कि वे गुरुकुल कांगड़ी में पढ़ा पाते। परन्तु उनकी यह तीव्र अभिलाषा थी कि उनका पुत्र निहाल वेदों का विद्वान् बनें। इसलिए वे गुरुकुल कांगड़ी के वार्षिकोत्सव पर आये तो अपने पुत्र निहाल सिंह को साथ लाये। महात्मा मुंशीराम के चरणों में निहाल सिहं को छोड़कर चले गये। इनका वेदारम्भ संस्कार किया गया और प्रियव्रत नाम रखा गया। प्रियव्रत अपनी श्रेणी में सदा सर्वप्रथम ही आते थे। 1925 में स्नातक बनने के पश्चात् वेद वाचस्पति सर्वोच्च उपाधि से विभूषित होकर पंजाब को अपना कार्यक्षेत्र बनाया। आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के (आर्य) मासिक का सम्पादन किया। पंजाब और भारत के अनेक प्रान्तों में आर्य समाज का प्रचार एवं प्रसार किया। 1935 से 1943 तक आर्य उपदेशक विद्यालय लाहौर के आचार्य पद पर कार्य किया। 1942 में आचार्य रामदेव उन दिनों इस चिन्ता में थे कि उनके पश्चात् गुरुकुल कांगड़ी ऐसे सुदृढ़ हाथों में सौंपा जाये जो निष्ठापूर्वक आर्य समाज एवं वेदों के प्रति अगाध श्रद्धा रखते हों। इसलिए आचार्य रामदेव ने प्रियव्रत को कहा- "तुम पंजाब छोड़कर गुरुकुल कांगड़ी आ जाओ।" इस प्रकार आपकी नियुक्ति 1943 में वेद विभाग में हुई। उसके कुछ वर्ष बाद ही आप आचार्य पद पर प्रतिष्ठित हुयें आचार्य पद पर रहते हुये भी आप वेद विभाग में अध्यापन कराते रहें। ग्रीष्म अवकाश के दिनों में गुरुकुल के लिए धन संग्रह करने जाते थे। गुरुकुल कांगड़ी 1943 से पूर्व आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब और यहाँ के गुरुकुल के अधिकारियों के मध्य संघर्ष के रूप में ही चलता रहा। 1943 से लेकर 1962 तक गुरुकुल का संचालन ऐसे अधिकारियों के हाथ में रहा जो अपने को गुरुकुल कांगड़ी के अधिकारी एवं ऑफिसर के रूप में ही सीमित रखते थे। आर्य प्रतिनिधि सभा की राजनीति से उनका कोई विशेष लेना-देना नहीं होता था। जो भी सभा का अधिकारी प्रधान एवं मंत्री के रूप में चुनकर आ जाता था उनके आदेश का पालन भली-भांति किया जाता था। लगभग इन बीस वर्षो में गुरुकुल कांगड़ी की स्थायी रूप से प्रगति हुई। उस प्रगति में आचार्य प्रियव्रत वेद वाचस्पति का बहुत बड़ा हाथ है। आप एक सुदृढ़ प्रशासक, निश्च्छल हृदय और भावुक पुरुष थे। जब आप वेदों की व्याख्या करते थे तो घण्टों बोलते रहते थे। जिस समय आचार्य प्रियव्रत स्नातक बनकर पंजाब में ब्रह्मचारी के रूप में गये तो इनका व्यक्तित्व बहुत ही आकर्षक एवं सुन्दर था कि ये पं० प्रियव्रत के नाम से प्रसिद्ध हो गये। किसी आर्य समाज के उत्सव पर कार्यक्रम में आपका नाम छपता था तो कितने ही व्यक्ति इसलिए उत्सव में आते थे कि ब्र० प्रियव्रत उत्सव में आ रहे है, अतः उनको देखने चलना है। आपका भाषण बहुत ही ओजस्वी होता था। आप एक ऐसे कुशल प्रशासक थे कि कई बार आपने गुरुकुल कांगड़ी को डावांडोल स्थिति से बचाया। कोई कितना भी प्रभावशाली एवं धनी, सभा का अधिकारी और उनका व्यक्ति होता था उनसे गुरुकुल के नियमों के विरुद्ध कार्य नहीं करा पाता था। इसलिए इनके अडिंग और दृढ़ स्वभाव के कारण इनके काल में कई बार महाविद्यालय के छात्रों ने हड़ताल भी की थी, परतु उन हड़तालों का आपने दृढ़ता

से मुकाबला किया। ये कभी नहीं झुके। हाँ कई बार सभा के अधिकारियों ने यदि कोई समझौता किया तो उसे सचमुच मान भी लिया। इनका सदा यह प्रयास रहा कि गुरुकुल कांगड़ी एक आदर्श संस्था के रूप में बनी रहे। इसलिए आचार्य प्रियव्रत अपने समस्त जीवन में गुरुकुल के आदर्शों के लिए संघर्ष करते रहे।

आप वास्तव में गुरुकुल कांगड़ी को सरकारी विश्वविद्यालय बनाने के पक्षधार नहीं थे। आर्य विद्या सभा में जब यह प्रस्ताव कई बार आया तो आपने कई बार इसका विरोध किया और अपना विरोध अंकित भी कराया। क्यौंकि आपका यह विचार था कि यदि गुरुकुल कांगड़ी को विश्वविद्यालय बनाया गया तो यह आदर्शमय संस्था न होकर एक सामान्य शिक्षण संस्था एवं सरकारी संस्था के रूप में हो जायेगी। जिस समय विद्या सभा में यह प्रस्ताव अन्तिम बार पारित हुआ उस समय भी आपने अपना विरोध अंकित कराया। परन्तु प्रस्ताव पारित हो जाने के पश्चात् आपने इन्द्र विद्या वाचस्पति और डॉ॰ सत्यव्रत सिद्धान्तालंकार के साथ मिलकर गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय बनाने के लिए रात-दिन अथक परिश्रम किया। आप गुरुकुल कांगड़ी के एक ऐसे स्वाभिमानी प्रशासक थे, जिसका दूसरा उदाहरण होना सम्भवत: कठिन ही होगा।

एक बार डॉ॰ राजेन्द्र प्रसाद, भारत के प्रथम राष्ट्रपति जब गुरुकुल में आये तो उन्होंने आपसे भारत का प्रथम नागरिक होने के नाते प्रार्थना की थी कि- "एक छात्र जो मेरा परिचित है पैरों से अपाहिज है, मैं चाहता हूँ कि वह आपके गुरुकुल में शिक्षा ग्रहण करें।" किसी देश के राष्ट्रपति का ऐसा कहना अगर कोई अन्य अधिकारी होता तो आदेश के समान मानकर चापलूसी के समान मान लिया होता। परन्तु आचार्य प्रियव्रत जैसा ही दृढ़ व्यक्तित्व था जिसने कहा- "गुरुकुल कांगड़ी में किसी भी छात्र को डॉ॰ के प्रमाण-पत्र पर ही प्रवेश दिया जाता है। जब वह बच्चा पैरों से कमजोर है तो डॉ॰ के द्वारा स्वास्थ्य प्रमाण-पत्र देना संभव नहीं होगा इसलिए मैं आपकी प्रार्थना स्वीकार करने में असमर्थ हूँ। हाँ, मैं आपको यह आश्वासन अवश्य दे सकता हूँ कि मैं आपके पत्र और छात्र के प्रार्थना पत्र को आर्य विद्या सभा के समक्ष विचारार्थ अवश्य रखूंगा। और वहाँ मैं इसकी पैरवी भी करूंगा।" जब विद्या सभा ने अपने विशेष अधिकार का प्रयोग करते हुये स्वीकृति प्रदान की तो जगन्नाथ का प्रवेश संभव हो पाया। जगन्नाथ ने 1965 में विद्यालंकार की उपाधि प्राप्ति की थी। खेद कि वह अब इस संसार में नहीं है।

यह एक सामान्य सिद्धान्त माना जाता है कि कोई प्रशासक उस संस्था के विकास में कितना सफल रहा है। यह यदि अवलोकित करना हो तो इस बात से ज्ञात जो सकता है कि उसके समय में उस संस्था ने कितनी उन्नति की है। आचार्य प्रियव्रत जी के समय में गुरुकुल कांगड़ी के मुख्याधिष्ठता पं॰ इन्द्र विद्या वाचस्पति रहे। वे प्राय: दिल्ली में ही रहते थे। उस समय के आचार्य की स्थिति गुरुकुल कांगड़ी में आजकल के कुलपति के समकक्ष सी ही होती थी। यद्यपि सर्वोच्च अधिकारी उस समय मुख्याधिष्ठाता ही माने जाते थे परन्तु उस समय के मुख्याधिष्ठाता प्राय: बाहर ही रहते थे। यह स्थिति उस समय लगभग 15 वर्ष तक रही, जब देश स्वतन्त्र होने वाला था और गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय होने का जोरदार आन्दोलन-सा सभाधिकारी और गुरुकुल के अधिकारी चला रहे थे। उस समय ऐसी स्थिति बनाये रखना जिससे गुरुकुल का यश ही बढ़ता रहे और शैक्षणिक दृष्टि से संस्था में विश्वसनीयता बनी रहे। यह एक बड़ा ही तप साध्य कार्य था। इसका श्रेय आचार्य प्रियव्रत को ही जाता है। उस समय जब देश स्वतन्त्र हो चुका था गुरुकुल कांगड़ी को विश्वविद्यालय की मान्यता प्राप्त नहीं हुई थी। यह समय लगभग 15 वर्ष तक रहा। इससे पूर्व की "विश्वविद्यालय की मान्यता हो" उससे पहले अनेक प्रान्तीय सरकारों द्वारा गुरुकुल की उपाधियों को मान्यता प्राप्त करवाना बड़ा ही दु:साध्य कार्य था। जो आचार्य प्रियव्रत ने सम्पन्न किया। इतना ही नहीं अपितु लगभग एक दर्जन विश्वविद्यालयों द्वारा ही गुरुकुल कांगड़ी की उपाधियों को इसी काल में मान्यता प्राप्त हुई थी। जिस समय 1962 में गुरुकुल कांगड़ी को विश्वविद्यालय की स्थिति प्राप्त हुई उस समय आप गुरुकुल के आचार्य पद पर ही प्रतिष्ठित थे।

डॉ॰ सत्यव्रत सिद्धान्तालंकार के कुलपति पद से अवकाश प्राप्त हो जाने के बाद यद्यपि श्री महेन्द्र प्रताप शास्त्री जी कुलपति बनकर आये। परन्तु वे विवादित स्थिति में ही रहे। उनके विवाद को समाप्त, आचार्य प्रियव्रत को अस्थायी रूप से कुलपति बनाकर ही किया था। आचार्य प्रियव्रत दो वर्ष अस्थायी रूप में तथा तीन वर्ष स्थायी रूप से कुलपति पद पर रहे।

जिस समय विश्वविद्यालय बना-बना था और आचार्य प्रियव्रत प्रो॰ वाइसचान्सलर पद पर ही थे। उसी समय की एक घटना इस प्रकार है। एक बाल कृष्ण नाम का व्यक्ति, जो श्री अम्बेडकर के पी.ए. भी रहे थे। जिसका शार्टहैण्ड और टाइपिस्ट के रूप में बड़ा अधिकार था। वे आंग्ल भाषा भी धारा प्रवाह बोल लेते थे। वे तत्कालीन कुलपति सत्यव्रत सिद्धान्तालंकार को प्रभावित करने में सफल हो गये थे। प्रो॰ सत्यव्रत ने उनको अपना पी.ए. के रूप में नियुक्त कर लिया था। उस समय उनकी संस्कृत सीखने कीं तीव्र जिज्ञासा थी इसीलिए कुलपति पं॰ सत्यव्रत जी ने आचार्य प्रियव्रत से कहा- "श्री बालकृष्ण को वेदालंकार में प्रवेश दे दिया जाय।" उस समय बाल कृष्ण की आयु लगभग 42 वर्ष की रही होगी। आचार्य प्रियव्रत ने अलंकार में प्रवेश देने से मना कर दिया। उन्होंने कहा- "गुरुकुल कांगड़ी में ब्रह्मचर्य एवं आश्रम पद्धति लागू है। इसलिए इतनी बड़ी आयु के व्यक्ति को अलंकार में प्रवेश नहीं दिया जा सकता है।" उसके बाद कुलपति के रूप में विशेष अधिकार के अन्तर्गत मान्य कुलपति ने आदेश दिया कि इसका प्रवेश कर लिया जाये। आचार्य प्रियव्रत ने फिर भी उसका प्रवेश नहीं किया। यह उनके व्यक्तित्व की दृढ़ता का परिचायक है। इनकी यह मान्यता थी कि किसी भी रूप में गुरुकुल के नियमों को भंग न किया जाये।

आचार्य प्रियव्रत जुलाई 1971 तक कुलपति रहे। कुलपति पद से सेवा निवृत्त होकर आचार्य जी अपने एक विशालकाय ग्रन्थ वेदों में राजनीतिक तत्व को पूरा करने में लग गये। और सतत् साहित्य साधना में लगे रहे।. श्री सोमनाथ मरवाह के परिदृष्टा पद से मुक्त होने पर 1989 के अन्त में आचार्य प्रियव्रत को विश्वविद्यालय के उच्चतम पद परिदृष्टा पद पर नियुक्त किया गया। आचार्य प्रियव्रत ने गुरुकुल के ही स्नातक श्री सुभाष विद्यालंकार को कुलपति पद पर नियुक्त किया। श्री सुभाष विद्यालंकार के तीन वर्ष होने के पश्चात् उनकी इच्छा थी कि पुनः उन्हें ही बिना किसी प्रक्रिया के द्वारा कुलपति पद पर आचार्य प्रियव्रत जी नियुक्त कर दें। यद्यपि उस समय आचार्य प्रियव्रत की आयु लगभग 92 वर्ष की हो चुकी थी। श्री सुभाष विद्यालंकार ने उनकी सेवा भी बहुत कुछ की थी। वे लगभग अशक्त से भी थे। इस वृद्ध अवस्था में भी उनका दृढ़ व्यक्तित्व पुनः निखरकार आया। उन्होंने कहा- "सुभाष जी मैं! बिना प्रक्रिया के आपको पुनः कुलपति पद पर नियुक्त नहीं कर सकता हूँ।" और न ही किया।

1976 में गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय में अपनी सर्वोच्च उपाधि "वेद मार्तण्ड" से विभूषित किया। उनका 96 वर्ष की आयु में स्वर्गवास हो गया। पर आचार्य के रुप में वे आज भी याद किये जाते है।

लेखन कार्य

जिस समय आचार्य प्रियव्रत स्नातक बनकर पंजाब सभा में एवं उपदेशक विद्यालय में आचार्य पद पर रहे, उस समय उन्होंने अनेक ग्रन्थों का प्रणयन् किया। आर्य समाजी क्षेत्र में ही नहीं अपितु उन्होंने अनेक ग्रन्थों का सृजन किया जो कि वैदिक वाङ्मय को बढ़ाने में प्रमुख रहे हैं। उनके ग्रन्थ निम्नलिखित हैं:-

वरुण की नौका (भाग-2); वेदोद्यान के चुने हुये फूल; वेद का राष्ट्रीय गीत; मेरा धर्म; समाज का कायाकल्प; वेदों के राजनैतिक सिद्धान्त (तीन भागों में); वेदों की वैज्ञानिकता, आदि प्रसिद्ध ग्रन्थ माने जाते हैं।

आचार्य प्रियव्रत को अनेक संस्थाओं ने सम्मानित किया :-

1. "वेद वेदांग" पुरस्कार जनवरी 1988 को आर्य समाज शान्ताक्रुज बम्बई ने आर्य समाज के

सर्वोच्च पुरस्कार "वेद वेदांग" से सम्मानित किया। इस अवसर पर उनको 21 हजार रुपये, और रजत ट्राफी और प्रशस्ति पत्र एवं शाल भेंट किया गया।

2. सीसामऊ कानपुर आर्य समाज में। नवम्बर 1987 को अपको ग्यारह सौ रुपये पुरस्कार के रूप में प्रदान किये।
3. अक्टूबर 1979 को सत्यार्थ प्रकाश शताब्दी समारोह में आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा पानीपत, 10 फरवरी 1981 को कन्या गुरुकुल महाविद्यालय हाथरस, नवम्बर 1983 में महर्षि दयानन्द निर्वाण शताब्दी समारोह आयोजक समिति अजमेर और मई 1976 में आर्य समाज स्थापना शताब्दी समारोह रोहतक में आर्य प्रतिनिधि सभा हरियाणा ने आचार्य श्री को सम्मानित किया।
4. 22 फरवरी 1986 को गंगा प्रसाद उपाध्याय पुरस्कार समिति में "वेदों के राजनैतिक सिद्धान्त" ग्रन्थ लिखने के उपलक्ष्य में गंगा प्रसाद उपाध्याय पुरस्कार से सम्मानित किया।
5. मई 1984 में माननीया प्रधानमंत्री श्रीमती इन्दिरा गाँधी ने अपने आवास पर "वेदों के राजनैतिक सिद्धान्त" का विमोचनकिया तथा उत्तरीय प्रदान कर सम्मानित किया।
6. 1982 और 1984 में आर्य समाज पानीपत ने प्रतिष्ठित वैदिक विद्वान् के रूप में सम्मानित किया।

आचार्य प्रियव्रत आर्य साहित्य के प्रथम कोटि के विद्वानों में गिने जाते थे। महर्षि दयानन्द के द्वारा प्रतिपादित वेदार्थ प्रणाली के अनुसार आपने अपने समस्त गन्थों की संरचना की थी। आचार्य प्रियव्रत ने अपने "वैदिक राजनैतिक सिद्धान्त" जो की तीन भागों में वृहद् ग्रन्थ की रचना की है। वेदों में राजनीति के समस्त आयामों का इतना विशद् वर्णन किया है कि जिसमें एक भृत्य से लेकर राजा एवं राष्ट्रपति के पदों का सृजन मूल वैदिक मन्त्र एवं मूल वैदिक शब्दों से की है। आज इस युग में विश्व की राजनीति का विकासतम राजनीति का विस्तृत एवं विशाल प्रबन्ध तन्त्र का स्वरूप वेदों की मूल संहिताओं में विद्यमान है। राजतन्त्र के समस्त विभागों एवं मंत्रालयों की संकल्पना वेदों में ही प्राप्त होती है। आचार्य प्रियव्रत ने इन सब का इतना रोचक एवं विद्वतापूर्ण वर्णन किया है कि वैदिक साहित्य के इतिहास में उनका यह ग्रन्थ सदा अमर रहेगा।

इसी प्रकार उनका प्रसिद्ध ग्रन्थ 'वेदों का राष्ट्रीय गीत' उनका ऐसा अद्भुत एवं सुन्दर ग्रन्थ है कि राष्ट्रवासियों को नवचेतना एवं प्रेरणा देता रहेगा। इस ग्रन्थ में अथर्ववेद के भूमि सूक्त की ऐसी अद्भुत व्याख्या की गयी है। जिसमें किसी भी देश के भौगोलिक परिवेश, वहाँ की मानव संस्कृति, वहाँ के नागरिकों का आचरण एवं वहाँ के समस्त पर्यावरण का रमणीक वर्ण और राष्ट्र को धारण करने वाली सात धारक शक्तियाँ जिनमें वृहत सत्य, ऋत्, क्षत्र, शक्ति, दीक्षा-तप, ब्रह्म शक्ति और यज्ञ ये ऐसे सात मूल तत्व हैं तो किसी भी राष्ट्र को उन्नति के शिखर पर पहुँचाते हैं।

आचार्य प्रियव्रत के समस्त साहित्य में ओजस्विता एवं प्रवाहमयी भाषा का दिग्दर्शन होता है।

आचार्य प्रियव्रत जी ने गुरुकुल के आचार्यत्व काल में गुरुकुल की सभी परम्पराओं का निर्वाह करते हुए यहाँ के कर्मचारियों के ब्रह्मचारियों के हृदय में अपना स्थान बना लिया था। वार्षिकोत्सव पर जनता से जब वे गुरुकुल के लिए दान की अपील करते थे तो उनकी बाणी में समस्त रसों का समावेश होता था।

इसी प्रकार जब दीक्षान्त समारोह पर नवस्नातकों को आचार्य जी अपना अन्तिम उपदेश दिया करते थे तो स्वयं तो उनकी आँखों से आँसू झर-झर बहने लगते थे किन्तु नवस्नातक भी अपने आँसू नहीं रोक पाते थे साथ ही जनता की आँखें भी नम हो जाती थी। ऐसे थे आचार्य प्रियव्रत जी।

पं० धर्मपाल विद्यालंकार

(सहायक मुख्याधिष्ठाता एवं प्रस्तोता)

पं० धर्मपाल विद्यालंकार का जन्म 1898 ई० में बदायूं में हुआ। आप के पिता श्री कृष्ण स्वरूप एक आर्य सज्जन थे। आप भी प्रथम श्रेणी में छोटी-सी आयु में ही गुरुकुल आ गये थे। गुरुकुल में अध्ययन करते हुये गुरुकुल की व्यवस्था में बढ़-चढ़ कर भाग लेते थे। इसलिए ही स्वामी श्रद्धानन्द के विशेष कृपा पात्र बन गये थे। स्नातक बनने के पश्चात् श्रद्धानन्द जी ने आपको अपना निजी मंत्री बना दिया था। स्वामी जी के साथ आप छाया की तरह रहते थे। स्वामी जी के कार्यालय का सारा कार्य तत्परता से करते थे। कार्यालय के एवं फाइल के कार्यों में आप निपुण थे। इसके साथ ही पं० इन्द्र जी के पत्र "दैनिक अर्जुन" के कई वर्ष तक प्रबन्धक एवं सदस्य डायरेक्टर भी रहेगा। जिस समय स्वामी श्रद्धानन्द जी का बलिदान हुआ अर्थात् स्वामी जी को अब्दुल रसीद नामक हत्यारे ने गोली मारी थी। तब उसको पिस्तौल सहित आपने दबोचा। उस समय उस हत्यारे ने तीसरा फायर भी किया। एक हाथ से रिवाल्वर तथा दूसरे हाथ से उसे पकड़कर आपने उसे आधे घण्टे तक दबोचे रखा।

इस प्रकार हम कह सकते हैं कि स्नातक बनने से लेकर पं० धर्मपाल विद्याअलंकार ने स्वामी जी के अन्तिम श्वांस तक उनका साथ दिया। स्वांमी श्रद्धानन्द के बलिदान हो जाने के पश्चात् आप आर्य प्रतिनिधि सभा उत्तर प्रदेश के कार्यालय संचालक उप मंत्री और मंत्री पद पर रहे। कई वर्ष तक गुरुकुल वृन्दावन के कुलपति भीं रहे। आर्य प्रतिनिधि सभा उत्तर-प्रदेश के मुख्य पत्र "आर्यमित्र" के अवैतनिक संपादक कई वर्ष तक रहे।

1953 में सभा ने पण्डित धर्मपाल विद्यालंकार को गुरुकुल कांगड़ी में सहायक मुख्याधिष्ठाता पद पर नियुक्त किया। यद्यपि उस समय मुख्याधिष्ठाता पं० इन्द्र विद्या वाचस्पति थे परन्तु आपने बड़े ही परिश्रम से गुरुकुल की लड़खड़ाती हुई स्थिति को सम्भाला। एक कुशल प्रशासक के रूप में आपने गुरुकुल का सफलता पूर्वक संचालन किया। बीस वर्ष तक आपने गुरुकुल के प्रबन्धकर्त्ता और व्यवस्थापक के रूप में प्रशंसनीय कार्य किया। किसी भी संस्था में व्यवस्था के लिए एक कार्यालय होता है, पं० धर्मपाल विद्यालंकार ने गुरुकुल की व्यवस्था में कार्यालय के काम-काज को महत्व प्रदान किया। और उसे व्यवस्थित रूप में व्यवस्थित किया। पं० धर्मपाल विद्यालंकार गुरुकुल फार्मेसी के व्यवसायाध्यक्ष भी रहे। फार्मेसी के विकास में आपका बहुत ही महत्वपूर्ण योगदान है। इनके समय की एक घटना है कि एक बार एक व्यक्ति ने आकर ब्राह्मी शर्बत में एक दोष निकालते हुए उनकी शीशी में वह दोष प्रत्यक्ष रूप से इनको दिखलाया। आपने उसी समय 250 शर्बत (ब्राह्मी) की शीशियों को स्टोर से निकलवाया और अपने सामने ही तुड़वा दिया। जो व्यक्ति शिकायत करने वाला था वह स्तब्ध रह गया। ऐसे ही व्यक्तियों के कारण गुरुकुल कांगड़ी की शाख आज भी कायम है।

गुरुकुल कांगड़ी जिस समय विश्वविद्यालय बना उस समय आपने प्रबन्धक प्रस्तोता के रूप में एवं प्रशासक के रूप में कार्य किया। उस समय गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय की नयी नियमावली का निर्माण भी आपने किया। वास्तव में आप गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय के संविधान निर्माताओं में से एक थे। आपने आचार्य प्रियव्रत जी के आचर्यत्व काल में गुरुकुल विश्वविद्यालय प्रबन्ध तन्त्र को सुचारु रुप से चलाने में अभूतपूर्व सहयोग दिया।

हरिद्वार में अनेक वर्षों से यह प्रयास चल रहा था कि गंगा के रमणीय तट पर एक भव्य आर्य समाज मन्दिर का निर्माण किया जाये। पं० धर्मपाल विद्यालंकार ने इस विषय में आर्य प्रतिनिधि सभा उत्तर प्रदेश

को सहयोग प्रदान किया। और पं॰ प्रकाशवीर शास्त्री के निर्देशन में आर्य समाज मन्दिर का निर्माण कराया। आर्य वानप्रस्थ आश्रम ज्वालापुर के भी आप आर्य प्रतिनिधि सभा उत्तर प्रदेश के प्रतिनिधि के रूप में आश्रम के अध्यक्ष रहे।

गुरुकुल कांगड़ी से स॰ मुख्याधिष्ठाता पद से सेवा निवृत्त होने के पश्चात् आप पुनः बदायूं में गये और वहाँ आर्य समाज के कई वर्ष तक प्रधान रहे। मैं जयदेव वेदालंकार "इस ग्रन्थ का लेखक" स्वयं आर्य समाज बदायूं में वेद प्रचार सप्ताह के अवसर पर गया तो वहाँ जाकर देखा कि पं॰ धर्मपाल विद्यालंकार के पूर्वजों की बनाई हुई दो पुरानी हवेलियां बदायूं में थी। उनमें से एक हवेली के तीन कमरों में सीमेन्ट का पलस्तर करांकर मरम्मत के रूप में इन तीन कमरों को ही ठीक करा पाये थे। उनकी आर्थिक स्थिति ऐसी नहीं थी कि वे सभी कमरों की मरम्मत करा पाते। उनकी यह स्थिति देखकर मेरी आँखों में आँसू आ गये, कि गुरुकुल में लोग इन पर क्या-क्या शक करते थे। मुझे उन्होंने बतलाया कि मुझे आज भी गुरुकुल के ही स्वप्न आते हैं। मैं पांच-छः वर्ष से प्रयास कर रहा हूँ कि प्रतिमाह 250 रुपये अपने और अपनी पत्नी के लिए प्रबन्ध कर पाऊँ तो मैं आर्य वानप्रस्थ आश्रम में आकर रहना चाहता हूँ। परन्तु दुर्भाग्य से वह जीवन भर यह प्रबन्ध नहीं कर पाये। इससे प्रतीत होता है कि उस समय के लोगों का कितना महान् एवं उच्च चरित्र होता था।

पं॰ धर्मपाल विद्यालंकार एक भव्य व्यक्तित्व वाले व्यक्ति थे। उस समय कांग्रेस में एवं देश के स्वतन्त्रता आन्दोलन में उन्होंने इतना कार्य किया था कि उस समय के मुख्यमंत्री और राज्यपाल जब हरिद्वार में आते थे तो पं॰ धर्मपाल विद्यालंकार को फोन करते थे कि हम गुरुकुल में गुरुकुल को देखने आना चाहते हैं। और वे गुरुकुल में आम आदमी की तरह पं॰ धर्मपाल जी से मिलने आया करते थे। एक बार की बात है कि राज्यपाल महोदय ने हरिद्वार में आकर पं॰ धर्मपाल जी को फोन किया कि मैं गुरुकुल में आना चाहता हूँ। पं॰ धर्मपाल ने कहा- "अभी आप एकदम मत आइये, मैं आपको बुलाने की उचित व्यवस्था करता हूँ। उसी समय उन्होंने वेद महाविद्यालय के नये भवन के निर्माण के लिए शिलान्यास कराया, जिसका कि पं॰ रघुवीर शास्त्री के कुलपति काल में उस भवन का पूर्ण निर्माण हो पाया। इन सब घटनाओं से पं॰ धर्मपाल विद्यालंकार का उच्च व्यक्तित्व सामाजिक सौमनस्यता एवं मधुर व्यवहार कितना अच्छा था यह प्रतीत होता है। उनके समय में अनेक समस्यायें उत्पन्न हुई। वे भयंकार से भयंकर समस्याओं में कभी भी उद्वेलित नहीं होते थे। प्रत्येक समस्या धैर्यपूर्वक सुनते थे। एक मितव्ययी प्रशासक के रूप में प्रसिद्ध थे। गुरुकुल के समस्त इतिहास से अनेक उतार-चढ़ाव का पता चलता है। एक बार की घटना है कि- "मेरी पत्नी को बच्चा होने वाला था, दो कुलपतियों के विवाद के कारण वेतन नहीं मिल रहा था। 25 फरवरी 1970 को डॉ॰ ने कहा- आज रात्रि तक बच्चा हो जायेगा, हॉस्पिटल के खर्चे के लिए 200 रूपये का प्रबन्ध होना आवश्यक था। मैं एडवांस का फार्म लेकर उनके पास गया। उन्होंने अपनी परिस्थिति के कारण मुझसे कहा- "सौ रुपये ले लो, मुझे गुस्सा आ गया मैंने अनुशासनहीनता करते हुए वह एडवांस का फॉर्म उनके सामने ही फाड़ दिया और क्रोध में ही उनके क्वार्टर से बाहर निकल गया। परन्तु वे क्रोधित नहीं हुये। और मेरे पीछे-पीछे उन्होंने श्री रामेश्वर अधीक्षक को दौड़ाया और उनसे कहा उसको वापिस बुला लाओ। जब बहू के बच्चा होने वाला है तो वह कहाँ से प्रबन्ध करेगा। उसी समय मुझसे अगाऊ फॉर्म दोबारा भरवाया और दो सौ रुपये मुझे दे दिये। उस समय मेरे मन की स्थिति देखकर वे कुछ नहीं बोले। उस समय वे उच्च अधिकारी थे उनको मुझे कुछ भी कहने का अधिकार था। परन्तु वास्तव में वे समुद्र के समान गम्भीर एवं गहराई लिये हुये थे। ऐसी एक नहीं अनेकों घटनाएं उनके कार्यकाल से जुड़ी हुई हैं। जिन्हें विस्तार से देना यहाँ सम्भव नहीं है।"

पं॰ धर्मपाल विद्यालंकार का 91 वर्ष की आयु में बदायूं में ही स्वर्गवास हो गया था। 1992 में उनके सुपुत्र श्री मेहन्द्र कुमार उर्फ लल्लन को आर्य विद्या सभा ने गुरुकुल कांगड़ी का सहायक मुख्याधिष्ठाता नियुक्त किया किन्तु 1997 में वे भी किन्हीं कारणों से त्याग-पत्र देकर चले गए।

डॉ॰ सत्यकेतु विद्यालंकार

(कुलपति एवं कुलाधिपति)

सत्यकेतु विद्यालंकार का जन्म सन् 1903 में आलमपुर (सहारनपुर) में हुआ। इनके पिता का नाम श्री आशाराम था। सत्यकेतु जी विद्यालंकार करने के पश्चात् गुरुकुल के ऐसे प्रथम स्नातक थे जिन्होंने विद्यालंकार की उपाधि के आधार पर पेरिस (फ्रंास) के विश्वविद्यालय में डाक्ट्रे डी-लिट् की उपाधि अपनी योग्यता के आधार पर प्राप्त की। इन्होंने अपना कार्यक्षेत्र लेखन एवं संपादन से प्रारम्भ किया। सबसे प्रथम दैनिक "अर्जुन" के सहायक संपादक के रूप में कार्य प्रारम्भ किया। इसके पश्चात् गुरुकुल कांगड़ी में इतिहास विभाग में उपाध्याय पद पर कार्य करते रहे। डॉ॰ सत्यकेतु ने यही गुरुकुल में इतिहास विभाग में उपाध्याय पद पर रहते हुये लेखन कार्य प्रारम्भ कर दिया था। आप ने साहित्य रचना के साथ सरस्वती सदन नामक प्रकाशन भी स्थापित किया। आप 1962 से 1968 तक स्नातक निर्वाचन क्षेत्र रूहेलखण्ड से विधान परिषद् के लिए निर्वाचित हुये। 1974 और 1975 में गुरुकुल कांगड़ी विश्व विद्यालय में कुलपति नियुक्त हुये।

डॉ॰ सत्यकेतु को अनेक राष्ट्रीय एवं राजकीय पुरस्कारों से सम्मानित किया गया। "मौर्य साम्राज्य का इतिहास" पर आपको मंगलाप्रसाद पुरस्कार से पुरस्कृत किया गया। जोद्धा सिंह पुरस्कार एवं राधा-कृष्ण पदक भी आपको प्राप्त हुये। इसी प्रकार आपको प्राचीन भारत की "शासन संस्थाएं और राजशास्त्र" ग्रन्थ पर उत्तर प्रदेश सरकार द्वारा गोविन्द वल्लभ पन्त पुरस्कार (5000 रुपये नकद) प्रदान किया गया। मध्य प्रदेश सरकार द्वारा भी मोती लाल नेहरू पुरस्कार से सम्मानित किया गया। इस पुरस्कार में 1500 रुपये नकद और प्रशस्ति पत्र प्रदान किया गया।

इसी प्रकार आचार्य विष्णु गुप्त चाणक्य (उपन्यास) ग्रन्थ पर बंगाल हिन्दी मण्डल एवं उत्तर प्रदेश सरकार द्वारा पुरस्कृत किया गया। "यूरोप का आधुनिक इतिहास" पर उत्तर प्रदेश सरकार द्वारा "एशिया का आधुनिक इतिहास", ग्रन्थ पर उत्तर प्रदेश सरकार द्वारा सम्मानित किया गया। भारतीय संस्कृति और उसका इतिहास, "मध्य एशिया और चीन में भारतीय संस्कृति", दक्षिण पूर्वी और दक्षिण एशिया में भारतीय संस्कृति प्राचीन भारत का धार्मिक सामाजिक और आर्थिक जीवन, आदि ग्रन्थों पर भी आपको सम्मानित किया गया। इसके अतिरिक्त आपके ग्रन्थ हैं- "स्वतन्त्र भारत का संविधान, भारत का प्राचीन इतिहास, पाटलिपुत्र की कथा, भारत का सांस्कृतिक इतिहास, समाजशास्त्र, विश्व इतिहास प्रवेशिका, संसार का सरल इतिहास, भारत का इतिहास, फ्रेंच स्वयं शिक्षक, नागरिक शास्त्र के सिद्धान्त, भारत की शासन व्यवस्था और नागरिक जीवन, प्राचीन भारतीय इतिहास का वैदिक युग, अपने देश की कथा, बौद्ध काल का राजनैतिक इतिहास, अग्रवाल जाति की उत्पत्ति और उसका प्राचीन इतिहास, अन्तरदाह (उपन्यास) हॉटल मार्डन (उपन्यास) वसीयतनामा (मोपाशा की कहानियों का अनुवाद), नागरिक शास्त्र, विश्व की राजनीति और अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्ध, अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्ध, भारत का सरल इतिहास, डेमोक्रेटिक एलिमेंन्स इन एशियेन्ट इन्डियन पोयेट्री।"

भारत सरकार के शिष्ट मण्डल के सदस्य के रूप में डॉ॰ सत्यकेतु को चीन भेजा गया। डॉ॰ सत्यकेतु हिन्दी नागरी प्रचारिणी सभा वाराणसी के भी आजीवन सदस्य रहे। अखिल भारतीय हिन्दी साहित्य

सम्मेलन के भी सदस्य रहे। राष्ट्रीय श्रम संस्थान के भारत सरकार द्वारा मनोनीति सदस्य के रूप में भी आपने कार्य किया।

डॉ॰ सत्यकेतु विद्यालंकार एक बार अत्यधिक रुग्ण हो गये थे। यह उनकी रुग्णावस्था कई महीने तक बनी रही थी। उस समय उनके मन में यह विचार आया कि यदि मैं स्वस्थ हो गया तो जीवन के अन्तिम वर्षों में आर्य समाज की कोई विशिष्ट सेवा करके ही संसार से विदा लूँ। ईश्वर की कृपा से कुछ समय पश्चात् आप स्वस्थ हो गये। उन्होंने विशाल प्रोजेक्ट के रूप में आर्य समाज का इतिहास लिखने की एक योजना बनायी। इस प्रोजेक्ट में आर्य समाज के कई प्रामाणिक लेखक शामिल किये गये। इस वृहत् योजना के अन्तर्गत आर्य समाज का इतिहास सात खण्डों में प्रकाशित किया गया। जो लगभग 5100 पृष्ठों में प्रकाशित हुआ है। यद्यपि डॉ॰ सत्यकेतु का विचार आर्य समाज के इतिहास को नौ खण्डों में प्रकाशित करने का था जो अन्तिम नवाँ खण्ड वेद और दर्शन के रूप में प्रकाशित होना था। इस खण्ड में वेद का उपखण्ड आर्य समाज के प्रसिद्ध विद्वान् आचार्य प्रियव्रत वेद वाचस्पति को, दर्शन उपखण्ड डॉ॰ जयदेव वेदालंकार को आवंटित किया गया था। इस खण्ड को प्रकाशित करने से पूर्व ही उनका स्वर्गवास हो गया था।

आर्य समाज के इतिहास के प्रथम खण्ड में आर्य समाज स्थापना की पृष्ठभूमि तथा 1883 तक की गतिविधियाँ। द्वितीय खण्ड में आर्य समाज का प्रसार एवं प्रचार 1883 से 1947 तक। तृतीय खण्ड आर्य समाज का शिक्षा कार्य, चतुर्थ खण्ड आर्य समाज और राजनीति 1875 से 1926, पंचम खण्ड आर्य समाज का साहित्य, षष्ठ खण्ड स्वतन्त्रता संघर्ष और आर्य समाज, सप्तम खण्ड स्वतन्त्र्य उत्तर युग में आर्य समाज। डॉ॰ सत्यकेतु ने आर्य समाज लिखकर आर्य समाज के इतिहास को अमर कर दिया। इस वृहत् कार्य एवं श्रम साध्य कार्य को डॉ॰ सत्यकेतु विद्यालंकार जैसा व्यक्ति ही कर सकता था। जो उन्होंने किया।

डॉ॰ सत्यकेतु का सम्बन्ध गुरुकुल कांगड़ी से बार-बार जुड़ता रहा। गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय की स्वामिनी सभाओं ने 1985 में कुलाधिपति पद पर डॉ॰ सत्यकेतु को निर्वाचित किया। 1988 तक वे इस पद पर प्रतिष्ठित रहे। अपने इस कार्यकाल में उन्होंने गुरुकुल कांगड़ी की मर्यादाओं का परिरक्षण करते हुये तत्कालीन कुलपति डॉ॰ सत्यकाम को कुलपति पद पर बर्खास्त भी किया। जिस समय डॉ॰ सत्यकेतु विद्यालंकार कुलाधिपति के रूप में कार्य कर रहे थे, उस समय भी कई बार गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय दलगत राजनीति का शिकार होता रहा। ऐसे ही किसी विवाद को सुलझाने के लिए डॉ॰ सत्यकेतु विद्यालंकार, प्रो॰ शेरसिंह अध्यक्ष आर्य प्रतिनिधि सभा हरियाणा, श्री सुभाष विद्यालंकार (जो बाद में कुलपति बने) और डॉ॰ धर्मपाल (वर्तमान कुलपति) प्रधान आर्य प्रतिनिधि सभा दिल्ली 16 मार्च 1989 को दिल्ली से हरिद्वार के लिए आ रहे थे; बहादराबाद (उपनगर) जो गुरुकुल कांगड़ी से 5 किलोमीटर की दूरी पर ही स्थित है, इनकी कार एवं रोडवेज की बस की भयंकर दुर्घटना में डॉ॰ सत्यकेतु विद्यालंकार का निधन हो गया। शेष अन्य महानुभावों को चोट आयी और वे ईश्वर की कृपा से बच गये। सत्यकेतु जी की इस भयंकर मृत्यु से गुरुकुल कांगड़ी में शोक की लहर दौड़ गयी। समस्त गुरुकुल के कर्मचारी किंकर्तव्य विमूढ़ से हो गये, उस समय प्रतीत हो रहा था मानों सारा गुरुकुल शोक सागर में डूब गया हो।

महेन्द्र प्रताप शास्त्री

(कुलपति)

श्री महेंद्र प्रताप शास्त्री का जन्म आर्य समाज के सुप्रसिद्ध आर्य नेता और कर्मठ कार्यकर्त्ता श्री माधव सिंह के यहाँ आगरा में सन् 1900 ई० में हुआ। आपकी प्रारम्भिक शिक्षा गुरुकुल वृन्दावन में हुई। तत्पश्चात् आपने पंजाब विश्वविद्यालय से शास्त्री तथा एम.ए. की परीक्षाएं उत्तीर्ण की। आपका विवांह जातिबन्धन तोड़कर कन्या गुरुकुल शासनी (हाथरस) की संस्थापिका श्रीमती लक्ष्मी देवी की पुत्री श्रीमती अक्षय कुमारी के साथ हुआ। अध्ययन समाप्त करने के पश्चात् आप राजा राम कॉलेज कोल्हापुर तथा डी.ए.वी. कॉलेज देहरादून में संस्कृत के प्राध्यापक नियुक्त हुये। कुछ वर्षों के बाद आप डी.ए.वी. कॉलेज लखनऊ में प्राचार्य पद पर नियुक्त हुये। उसके पश्चात् आप जनता वैदिक कॉलेज बडौत के प्राचार्य पद पर अधिष्ठित हुये।

पं० महेंद्र प्रताप शास्त्री आर्य समाज के एक प्रसिद्ध शिक्षाविद् माने जाते थे। आप जिस भी कॉलेज में प्राचार्य रहे वहाँ पर उस महाविद्यालय का प्रारम्भ यज्ञ से होता था। बडौत महाविद्यालय में 5,000 (पांच हजार) छात्र अध्ययन करते थे। प्रात:काल यज्ञ में समस्त अध्यापक गण एवं 5000 हजार छात्र उपस्थित होते थे। आप बहुत ही सख्त प्रशासक थे। जिस भी कॉलेज में आप रहे आपने वहाँ अनुशासनहीनता को कभी भी सहन नहीं किया।

आप 1966 में गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय के उच्च पद कुलपति पद पर सुशोभित हुये। आपने यहाँ पर आते ही गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय में सर्वप्रथम अनुशासन स्थापित किया। कई नये-नये विषय भी आपने प्रारम्भ किये। यद्यपि मान्य शास्त्री गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय में बहुत अधिक समय तक नहीं रहे तथापि गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय के प्राध्यापक आज भी उनके अनुशासन को याद करते हैं। मान्य शास्त्री जी एक दृढ़ संकल्प के व्यक्ति थे। आप एक दूरदृष्टि रखने वाले प्रशासक थे।

गुरुकुल कांगड़ी से जाने के पश्चात् आपने जीवन पर्यन्त कन्या गुरुकुल हाथरस का संचालन किया। यह कन्या गुरुकुल भारतवर्ष में एकमात्र कन्या महाविद्यालय है जिसमें साढ़े छः सौ (650) कन्यायें वहाँ हॉस्टल में रहकर अध्ययन करती हैं। आपने महात्मा नारायण स्वामी अभिनन्दन, ग्रन्थ, श्रीमती लक्ष्मी देवी अभिनन्दन ग्रन्थ, पण्डित गंगा प्रसाद अभिनन्दन ग्रन्थ, श्रीमती लक्ष्मी देवी अभिनन्दन ग्रन्थ, पण्डित गंगा प्रसाद अभिनन्दन ग्रन्थ आदि का सम्पादन किया। आपने "आर्य समाज का परिचय" नामक ग्रन्थ भी लिखा था। हृदयगति रुकने के कारण आपका वर्ष 1995 में स्वर्गवास हुआ।

पं० रघुवीर सिंह शास्त्री

(कुलपति)

पं० रघुबीर सिंह शास्त्री का जन्म 1915 में गाँव (ककोर) जिला मेरठ में हुआ। शास्त्री जी का अध्ययन गुरुकुल कृठल (मेरठ) में हुआ। आप स्व० पं० जगदेव सिंह सिद्धान्ती जी के प्रिय शिष्यों में से थे। कुछ वर्षों के पश्चात् आप गुरुकुल कृठल के आचार्य पद पर नियुक्त हुये। इसके पश्चात् आपने दिल्ली में एक प्रेस खोला जिसका नाम सम्राट् प्रेस रखा। जिसमें अनेक भारतीय साहित्य एवं वैदिक साहित्य पर ग्रन्थ प्रकाशित किये। दिल्ली में आने से आप आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब से जुड़ गये। आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के मंत्री भी निर्वाचित हुये। 1957 में हिन्दी सत्याग्रह के मुख्य संचालकों में से एक आप थे। हिन्दी सत्याग्रह का संचालन आपने बड़ी ही नीति निपुणता के साथ किया। आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब में मंत्री पद पर आप कई वर्ष तक रहे। आप के मंत्रीत्व काल में आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब में आर्य समाज के कार्य कलापों में गति आयी। आप भाषा स्वातन्त्र्य समिति के मन्त्री पद पर निर्वाचित हुये। सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा आर्य समाज का सर्वोच्च संगठन है। उसका मंत्री बनना कोई सामान्य बात नहीं है, इस प्रकार आप आर्य समाज के सर्वोच्च नेताओं में से एक हो गये। आपके मंत्रीत्व काल में ही सप्तम आर्य महा सम्मेलन सम्पन्न हुआ था, जिसमें लाखों व्यक्तियों ने भाग लिया। आप एक बहुत ओजस्वी वक्ता थे। आप आर्य समाज में एक मात्र ऐसे संस्कृत के विद्वान् पण्डित थे जो राजनैतिक एवं समकालीन समस्याओं पर धाराप्रवाह घण्टों तक संस्कृत भाषा में भाषण प्रदान करते थे। आपकी संस्कृत भाषा मधुर एवं लालित्यपूर्ण होती थी। जिसमें विकट शब्दों की अटवी नहीं होती थी। आपका भाषण सुनते हुये ऐसा प्रतीत होता था जैसे कोई धाराप्रवाह हिन्दी भाषा में भाषण कर रहा हो।

लगभग 1966 में लोकसभा के सांसद निर्वाचित हुये। लोकसभा में भी जब आप अपना पक्ष प्रस्तुत किया करते थे उस समय सभी सदस्य आपकी वक्तृत्व कला से बड़े प्रभावित होते थे। गौ रक्षा आन्दोलन में भी आपने आर्य समाज का आन्दोलन किया था। जिस समय गौ रक्षा आन्दोलन और भारत सरकार के मध्य समझौता हुआ, तो उस समय भारत सरकार की ओर से भारत में गौ रक्षा सम्बन्धी समस्या को दूर करने के लिए सुझाव देने हेतु, अखिल भारतीय स्तर पर गौ रक्षा समिति का सदस्य भी आपको मनोनीत किया गया। उस समिति ने आपको अपना पक्ष प्रस्तुत करने के लिए अर्थात् भारत सरकार ने यह सुनिश्चित करने के लिए कि भारत जैसे कृषि प्रधान देश में भारत के सभी धार्मिक सम्प्रदायों में गौ माता का बहुत ही पूजनीय स्थान है। आदि विषयों को समिति की ओर से प्रस्तुत करने के लिए समिति ने आपको अपना संयोजक मनोनीत किया। पं० रघुबीर शास्त्री ने भारत सरकार के सम्मुख अपना पक्ष सफलतापूर्वक प्रस्तुत किया। यद्यपि भारत सरकार ने बाद में विश्वासघात किया। क्योंकि भारत सरकार अपने वायदों से मुकर गयी थी।

संसद सदस्य के रूप में कार्यकाल पूर्ण होने के उपरान्त जुलाई 1971 में गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्याल के कुलपति पद पर रघुबीर सिंह शास्त्री को नियुक्त किया गया। आप 1974 तक विश्वविद्यालय के कुलपति पद पर आसीन रहे। आपने कुलपति बनते ही गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय का कायाकल्प करना चाहा आपने यह भी प्रयास किया कि विश्वविद्यालय बनने के पश्चात् भी गुरुकुल कांगड़ी एक

संस्था के रूप में कुछ विशेष नहीं कर पाया है। इसलिए आपने विश्वविद्यालय अनुदान आयोग से सहयोग प्राप्त करके वेद एवं कला महाविद्यालय के बीस कक्षों का निर्माण कराया। इस निर्माण के लिए विश्वविद्यालय अनुदान आयोग से सहयोग प्राप्त करके वेद एवं कला महाविद्यालय के बीस कक्षों का निर्माण कराया। इस निर्माण के लिए विश्वविद्यालय बनने के पश्चात् सरकारी अनुदान से ये प्रथम ही भवन थे जिनका निर्माण रघुबीर सिंह शास्त्री ने करवाया था। परन्तु जैसा कि गुरुकुल कांगड़ी के प्रारम्भिक काल से ही विभिन्न विवाद एवं झगड़ों का सूत्रपात होता रहा है, उसी प्रकार आपके कार्यकाल में भी वे विवाद एवं झगड़े विकट रूप धारण करके आपके सम्मुख आ खड़े हुये। परन्तु आप समस्त झगड़ों का सामना करते हुये उनको सुलझाने का प्रयास करते रहे। आपने कुलपति पद का कार्यकाल जो तीन वर्ष का होता है पूर्ण किया।

1977 से लेकर 1980 तक के गुरुकुल के झगड़े समाप्त हो जाने के पश्चात् आप पुनः गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय के आचार्य एवं उप कुलपति पद पर नियुक्त किये गये। परन्तु कुछ समय बाद ही आप विश्वविद्यालय से वापिस दिल्ली चले गये। पण्डित रघुबीर सिंह शास्त्री वेद शास्त्रों के प्रकाण्ड पण्डित थे। जहाँ आप एक अदम्य उत्साह से परिपूर्ण, साहसिक वीर पुरुष थे, वहाँ आप एक नीति कुशल राजनेता भी थे। आप एक सौम्य मूर्ति थे। यदि गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय में आपको कम से कम एक और कार्य अवधि तक कुलपति पद प्राप्त होता तो आप विश्वविद्यालय की बहुत उन्नति करने में सफल हो पाते।

यहाँ से जाने के पश्चात् आप आर्य समाज की गतिविधियों में नेतृत्व प्रदान करने लगे। आप एक बार जब फरीदाबाद में भाषण देने गये तो आपका अचानक बोलते-बोलते गला अवरुद्ध हो गया। आवाज ही निकलनी बन्द हो गयी। कुछ दिन रुग्ण रहने के पश्चात् 29 सितम्बर 1982 को 67 वर्ष की आयु में आपका स्वर्गवास हो गया।

पं० रघुबीर सिंह शास्त्री ने अविभाजित पंजाब के किसान नेता चौधरी छोटूराम का जीवन चरित्र एक ग्रन्थ के रूप में लिखकर प्रकाशित किया। आपने सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा का इतिहास भी प्रकाशित किया। इसी प्रकार इन्होंने सार्वदेशिक सभा के लिए हुए समस्त निर्णयों को भी एक ग्रन्थ के रूप में प्रकाशित किया।

स्वामी इन्द्रवेश

(कुलाधिपति)

ब्रह्मचारी इन्द्र देव का जन्म हरियाणा प्रान्त के सुडाना ग्राम में सन्-1937 ई० में हुआ। आठवीं श्रेणी उत्तीर्ण करने के पश्चात् आजन्म ब्रह्मचारी रहने का संकल्प किया। घर से विरक्त होकर गुरुकुल झज्जर में स्वामी ओमानन्द सरस्वती (पूर्व आचार्य भगवानदेव) के पास अध्ययन के लिए गये। कुछ वर्ष पश्चात् आप के मन में यह विचार आया कि केवल व्याकरण जिसमें काशिका महाभाष्य और न्यास आदि ग्रन्थों का गम्भीर अध्ययन किया जाय। आप ने यह भी संकल्प लिया था कि मैं जीवन में ऐसे पाठ्यक्रम का अध्ययन नहीं करुँगा, जिसके लिए कोई परीक्षा उत्तीर्ण करनी आवश्यक है। इस लिए आप गुरुकुल झज्जर को छोड़कर मैनपुरी में व्याकरण के प्रकाण्ड विद्वान् आचार्य के पास चले गये। कुछ वर्ष तक केवल व्याकरण का अध्ययन करते रहे। उसके पश्चात् स्वामी आत्मानन्द सरस्वती के द्वारा संस्थापित श्री मद्दयानन्द उपदेशक महाविद्यालय, यमुनानगर (हरियाणा) में महाभाष्य अध्ययनार्थ रहें।

इस प्रकार अपना अध्ययन समाप्त करने के पश्चात् आचार्य भगवानदेव के आग्रह पर गुरुकुल झज्जर में अध्यापनार्थ आये। कुछ समय पश्चात् आचार्य भगवानदेव से मतभेद होने पर गुरुकुल झज्जर को छोड़कर सामाजिक कार्य क्षेत्र में उतर पड़े। इसके पश्चात् संन्यास ग्रहण करके स्वामी इन्द्रवेश बन गये। शीघ्र ही स्वामी अग्निवेश के मित्रं के रुप में विख्यात हो गये। आप ने सन् 1973 में आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के प्रधान पद पर चुनाव लड़े और विजयी हुये। इस प्रकार स्वामी इन्द्रवेश गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय के पदेन कुलाधिपति पद पर भी आसीन हुये। स्वामी इन्द्रवेश आर्य समाज में उस समय आमूल-चूल परिवर्तन करना चाहते थे। इसलिए आप युवा शक्ति के नेता के रुप में विख्यात हो गये। इसी समय हरियाणा और पंजाब का विभाजन का आन्दोलन जोरों पर था। आप अपने आप को नहीं बचा सके, आप को कारावास में भेज दिया गया, जब आप कारावास में थे, उसी समय आर्य प्रतिनधि सभा, पंजाब का त्रिशाखन हो गया। इस प्रकार आर्य समाज में एक नया विवाद प्रारम्भ हुआ। जिसका वर्णन चतुर्थ अध्याय में किया जा चुका है।

स्वामी इन्द्रवेश ने हिन्दी आन्दोलन, गो-रक्षा आन्दोलन और मद्यनिषेध आदि अनेक आन्दोलनों में आर्य समाज का नेतृत्व करते हुए, अनेक बार कारावास में रहे हैं। मद्यनिषेध आन्दोलन में स्वामी ओमानन्द सरस्वती से पुनः समझौता हुआ।

इस समय आप हरियाणा आर्य प्रतिनिधि सभा के कार्यकर्त्ता प्रधान है। गुरुकुल कांगड़ी विद्यालय विभाग की आर्य विद्या सभा के आप प्रधान निर्वाचित हुए है। इस समय इनसे यह आशा की जाती है कि गुरुकुल कांगड़ी की सम्पत्ति की आप रक्षा करेंगे।

डॉ॰ रामनाथ वेदालंकार

(आचार्य एवं उपकुलपति तथा प्रस्तौता)

वेदों के उद्भट् विद्वान् डॉ॰ रामनाथ वेदालंकार का जन्म 7 जुलाई 1914 को बरेली जिले के फरीदपुर ग्राम में श्री गोपालराम के यहाँ हुआ था। आपने 1992 विक्रमी सन् 1936 में गुरुकुल कांगड़ी से वेदालंकार की उपाधि प्राप्त की प्रारम्भ में एक वर्ष आप गुरुकुल कांगड़ी के विद्यालय विभाग में अध्यापक रहे। तत्पश्चात् 1939 से 1958 तक गुरुकुल के वेद महाविद्यालय में वेदोपाध्याय के रूप में कार्य किया। 1958 से 1976 तक गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय के संस्कृत विभाग के उपाध्याय तथा अध्यक्ष पद पर रहे।

आपने इसके साथ ही 1958 से 1963 तक प्रस्तोता (कुलसचिव) का कार्य भी किया। उस समय परीक्षकों को प्रश्नपत्र बनाने तथा उत्तरपत्र जांचने का कोई परिश्रमिक नहीं दिया जाता था, सब परीक्षक गुरुकुल के प्रति प्रेम एवं आस्था रखने के कारण सेवाभाव से ही कार्य करते थे। प्रश्न-पत्रों में यथोचित विकल्प आदि का पालन वे नहीं कर पाते थे। आपने प्रश्न-पत्रों को तथा परीक्षा के व्यवस्थित करने में बहुत श्रम किया। आप विद्याधिकारी, विद्याविनोद तथा अलंकार को प्रत्येक प्रश्नपत्र छपने भेजने से पूर्व स्वयं देखते थे तथा उसमें आवश्यक विकल्प आदि करने के पश्चात् ही छपने भेजते थे। इस प्रकार शनैः शनैः परीक्षक व्यवस्थित प्रश्न-पत्र भेजने लगे।

1974 से 1976 तक आप विश्वविद्यालय के आचार्य एवं उपकुलपति भी रहे। इन दिनों कुलपति श्री बलभद्र कुमार हूजा तथा डॉ॰ सत्यकेतु विद्यालंकार के अधिकतर बाहर रहने के कारण आप कुलपति का कार्यभार भी संभालते रहे। आपने विद्यालय विभाग के आचार्यत्व का भी निर्वाह किया। पहले विद्यालय में आयु में दस वर्ष से ऊपर तथा श्रेणी में चतुर्थ श्रेणी के ऊपर छात्र नहीं लिये जाते थे। किन्तु इनसे पूर्व अधिकारियों ने परीक्षणार्थ अधिक आयु के भी बालकों को अष्टम कक्षा तक भी लेना आरम्भ कर दिया था। यह परीक्षण आचरण की दृष्टि से सफल नहीं हुआ। अतः आपने आचार्य बनते ही तत्कालीन मुख्याध्यापक डॉ॰ श्यामनाथ को आदेश करके अधिक आयु में बालकों को प्रवेश देने पर तत्काल रोक लगा दी। इससे विद्यालय के छात्रावास के चारित्रिक वातावरण में पर्याप्त सुधार हुआ। आपने विद्यालय के पाठ्यक्रम तथा अध्यापन में भी कुछ सुधार करवाया। 1976 से 1979 तक पंजाब विश्वविद्यालय के दयानन्द अनुसंधान पीठ के प्रो॰ तथा अध्यक्ष पद पर कार्य किया। यहाँ से अवकाश ग्रहण कर जब आप स्वतन्त्र लेखन तथा वैदिक शोध का कार्य कर रहे हैं। डॉ॰ वेदालंकार ने आगरा विश्वविद्यालय से संस्कृत में एम.ए. तथा पी-एच.डी. की उपाधियां प्राप्त की थी। 1989 में आर्य समाज शांताक्रुज बम्बई में आपको वेद वेदांग पुरस्कार से सम्मानित किया गया।

डॉ॰ रामनाथ वेदालंकार अच्छे लेखक भी हैं। उन्होंने विभिन्न वैदिक क्षेत्रों में निम्नलिखित ग्रन्थ लिखे- वैदिक वीर गर्जना, वैदिक सूक्तियां, वेदों की वर्णन शैलियां (पी-एच.डी. का शोध प्रबन्ध), वेद भाष्यकारों की वेदार्थ प्रक्रियाएं, यज्ञ मीमाँसा, दयानन्द विचार कोशः (महर्षि दयानन्द के शिक्षा, राजनीति और कलम कौशल सम्बन्धी विचार), वैदिक शब्दार्थ विचार, वेद मंजरी, वैदिक नारी, आर्ष ज्योति ऋग्वेद ज्योति सामवेद भाष्य (सामवेद का संस्कृत तथा हिन्दी में भाष्ण निर्दिष्ट वेदार्थ प्रक्रिया) का अनुसरण करते हुये लिखा गया है। उत्तर प्रदेश संस्कृत अकादमी से आपको विशिष्ट पुरस्कारर जो 51 हजार रुपये नकद एवं रजत ट्राफी तथा प्रशस्ति पत्र प्रदान किया गया। 1997 में आप राष्ट्रपति द्वारा भी सम्मानित हुए।

डॉ॰ गंगाराम गर्ग

(कुलसचिव)

डॉ॰ गंगाराम गर्ग का जन्म 12 अप्रैल 1924 को करनाल जिले के अन्तर्गत कोहन्ड ग्राम में लाला मुंशीराम के यहाँ हुआ। पंजाब विश्वविद्यालय से इन्होंने आंग्ल साहित्य में एम.ए. और पी-एच.डी. की उपाधि प्राप्त की थी। 1957 में इंगलिश विभाग में प्राध्यापक पद पर गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय में नियुक्त हुये थे। आप एक परिश्रमी अध्यापक माने जाते थे। छात्रों के निर्माण में आप एक विशेष रुचि रखते थे। अनेक अवसरों पर इंग्लिश विभाग में ड्रामा तथा इंग्लिश माध्यमों से अनेक कार्यक्रमों का आयोजन करवाते थे।

गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय बनने के पश्चात् 1967 में डॉ॰ गंगाराम गर्ग विश्वविद्यालय के कुलसचिव पद पर नियुक्त किये गये। आपने कुलसचिव पद पर रहते हुये विश्वविद्यालय की उन्नति एवं प्रगति के लिए रात-दिन परिश्रम किया। विश्वविद्यालय की व्यवस्था को सुधारने का भी यत्न किया। स्वामी दयानन्द की निर्वाण शताब्दी पर आपने "वर्ल्ड पर्सपेक्टिवस ऑन स्वामी दयानन्द सरस्वती" शीर्षक ग्रन्थ का संपादन किया। इस ग्रन्थ में आपने भारत के विशिष्ट विद्वानों तथा कुछ विदेशी विद्वानों के महर्षि दयानन्द के विभिन्न आयामों को लेकर विद्वतापूर्ण लेखों के संग्रह को ग्रन्थ रूप में प्रकाशित किया। इन्होंने "इनसाइक्लोपीडिया ऑफ इण्डियन लिट्रेचर" नामक ग्रन्थ कई भागों में प्रकाशित किया। डॉ॰ गंगाराम के कई ग्रन्थ आक्सफोर्ड प्रेस बम्बई से प्रकाशित हुये थे।

गुरुकुल के विवाद के समय भी आप कुलसचिव थे उस समय राजनैतिक दृष्टि से अपने आपको दलगत राजनीति से नहीं बचा पाये। उसी प्रकरण में आपको 1980 से 52 वर्ष की आयु में ही त्यागपत्र देना पड़ा। सेवा निवृत्त होने के पश्चात् आप ने अपने आप को साहित्य सेवा में समर्पित कर दिया। महर्षि दयानन्द एवं भारतीय वाङ्मय के प्रामाणिक ग्रन्थों की रचना की। 1996 में आपका स्वर्गवास हो गया।

पं॰ धर्मवीर विद्यालंकार

(सहायक मुख्याधिष्ठता)

श्री धर्मवीर विद्यालंकार का जन्म 15 अगस्त 1920 ई॰ में मुल्तान (वर्तमान पाकिस्तान) में हुआ। आपके पिता का नाम श्री बन्नाराम था। आपने विद्यालंकार के पश्चात् प्रभाकर एवं बी.ए. पंजाब विश्वविद्यालय से किया। सर्वप्रथम आप कुरुक्षेत्र में विज्ञान के शिक्षक नियुक्त हुये। इसके पश्चात् आप पंजाब नेशनल बैंक में कार्यरत रहे। जिस समय स्वतन्त्रता आन्दोलन चल रहा था उस समय सेवा ग्राम वर्द्धा में कांग्रेस के कार्यालय में कार्यकर्त्ता के रूप में कार्य करते रहे। आप कांग्रेस के सक्रिय सदस्य भी रहे हैं। आप सदैव आर्य समाज की गतिविधियों में महत्वपूर्ण योगदान देते रहे हैं। आर्य समाज अशोक नगर पीलीभीत की आपने स्थापना की थी। आप जिला उप. प्रतिनिधि सभा पीलीभीत के कई वर्ष तक प्रधान रहे हैं। 1975 में आप गुरुकुल कांगड़ी के सहायक मुख्याधिष्ठाता पद पर प्रतिष्ठित हुये। कई वर्ष तक इस पद पर तन-मन से गुरुकुल की सेवा करते रहे। गुरुकुल कांगड़ी के विवाद के समय आप एक वीर पुरुष की तरह गुरुकुल कांगड़ी का संचालन करते रहे। आपकी पत्नी पण्डित इन्द्र विद्या वाचस्पति की सुपुत्री श्रीमती पुष्पा विद्यालंकृता हैं।

आप अन्य अनेक संस्थाओं के संस्थापक एवं संचालक रहे हैं। जिसमें कनखल की हीरादेवी कन्या पाठशाला के संचालकों में से हैं। इसी प्रकार गन्ना सहकारी समिति एवं सहकारी चीनी मिल के भी संचालकों में से हैं।

इस समय आप आर्य वानप्रस्थ आश्रम में वानप्रस्थ लेकर यती का जीवन व्यतीत कर रहे हैं। आप वानप्रस्थ आश्रम ज्वालापुर के शिक्षा के कार्य संचालन करते हैं तथा यहाँ की मासिक पत्रिका (स्वस्ति पन्थाः) के सम्पादक भी हैं।

डॉ॰ भारत भूषण विद्यालंकार

(सहायक मुख्याधिष्ठता)

डॉ॰ भारत भूषण विद्यालंकार का जन्म 6 जनवरी 1943 को बरेली जेल में हुआ। इनके पिता का नाम श्री तुंगल सिंह है। इनकी शिक्षा प्रथम श्रेणी से विद्यालंकार तक तथा उसके पश्चात् एम.ए. की उपाधि भी इसी विश्वविद्यालय से प्राप्त की। आपने "आथर्वण राजनीति" विषय पर पी-एच.डी की उपाधि गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय से ही प्राप्त की है।

आपकी वेद विभाग में प्रवक्ता पद पर नियुक्ति 1976 में हुई। आप एक सुयोग्य वेद के विद्वान् एवं प्रवक्ता हैं। गुरुकुल के विवाद के समय में आपको गुरुकुल की विद्या सभा ने सहायक मुख्याधिष्ठाता पद पर नियुक्त किया उस समय गुरुकुल में एक ऐसा अशांत वातावरण था, जिसमें लाठी पत्थर और गोलियाँ तक भी चल जाती थी। ऐसे विकट समय में डॉ॰ भारत भूषण विद्यालंकार ने गुरुकुल के प्रशासन को सम्भाला। एक वीर बहादुर की तरह उस समय की विकट परिस्थिति में कार्य करते रहे।

इस समय डॉ॰ भारतभूषण विद्यालंकार वेद विभाग में प्राफेसर एवं अध्यक्ष पद पर कार्यरत हैं। इससे पहले श्रद्धानन्द शोध संस्थान के निदेशक पद पर भी आपने कार्य किया है। आपने अथर्व वेद में राजनीति ग्रन्थ प्रकाशित किया है। इस समय आप प्राच्यविद्या संकायाध्यक्ष पद पर कार्य कर रहे हैं।

श्री वीरेन्द्र

(कुलाधिपति)

श्री वीरेन्द्र का जन्म 15 फरवरी 1911 को लाहौर में आर्य समाज के प्रसिद्ध नेता और पत्रकार महाशय कृष्ण के यहाँ हुआ। आपकी शिक्षा एम.ए. तक हुई। आपने देश के स्वाधीनता संग्राम में भाग लिया और कारावास भी सहन किया। 1933 में आपने दैनिक प्रताप के सम्पादकीय विभाग में कार्य आरम्भ किया और देश विभाजन के पश्चात् जालन्धर के दैनिक प्रताप का प्रकाशन आरम्भ किया। कई वर्षो तक आप आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के प्रधान पद पर आसीन रहे। आप गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय के कुलाधिपति भी रहे। आप के समय में गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय ने चतुर्मखी उन्नति की। सभा के मुखपत्र "आर्य मर्यादा" का सम्पादन अनेक वर्षों तक किया। आर्य समाज के अतीत वर्तमान और भविष्य तथा एतद् विषयक समस्याओं पर आपने अनेक लेख प्रकाशित किये। जो अत्यन्त मार्मिक रहे। श्री वीरेन्द्र जी के विषय में यह किवंदन्ति है कि स्वतन्त्रता आन्दोलन में जब आप को कारावास दिया गया था उस समय कारावास से पहले फाँसी का आदेश हुआ था। आप एवं आनन्द स्वामी जी के सुपुत्र श्री यश के मुकद्दमें की पैरवी करने के लिए स्वयं पं० जवाहर लाल नेहरू आये थे। उन्होंने अपनी वकालत में जिरह करतं हुये जो धाराएं फाँसी पर चढ़ाने वाली थी उनको रद्द करवाया, उसके बाद इनको कारावास की सजा दी गयी। हिन्दी सत्याग्रह में आप ने पंजाब का नेतृत्व किया। और श्री प्रताप सिंह कैरों से हिन्दी के लिए संघर्ष किया।

श्री वीरेन्द्र जी जिस समय गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय के कुलाधिपति थे। उस समय गुरुकुल कांगड़ी में जो विवाद उत्पन्न हो गया था। उसका निराकरण करने के लिए गुरुकुल में अनेक बार आये और यहाँ संघर्ष किया। गुरुकुल के प्राध्यापक गण और कर्मचारियों के साथ आपने सत्याग्रह किया। सहारनपुर जेल में भी गये वहाँ जेल में सभी कर्मचारियों के साथ बड़े ही स्नेहपूर्वक मिलते थे। और प्रतिदिन सभी कार्यक्रमों में भाग लेते थे। गुरुकुल के विवाद समाप्त हो जाने के पश्चात् आपने 1980 के पश्चात् गुरुकुल को व्यवस्थित करने के लिए भरसक प्रयत्न किया। 1993 में आपका स्वर्गवास हो गया।

श्री बलभद्र कुमार हूजा

(कुलपति)

श्री बलभद्र कुमार हूजा का जन्म ग्राम पंजाब में हुआ था। आपके पिता श्री गोवर्धन शास्त्री जो कांगड़ी में मुख्याध्यापक रहे थे, जिन्होंने हिन्दी भाषा के माध्यम से विज्ञान के विषयों के पठन-पाठन के लिए विज्ञान के ग्रन्थों को हिन्दी भाषा में लिखा एवं अनुवाद किया था। श्री बलभद्र कुमार हूजा के बचपन के कुछ वर्ष गुरुकुल में ही पालन-पोषण के रूप में बीते थे। आपने 1936 में पंजाब विश्वविद्यालय से अर्थशास्त्र में एम.ए. किया। एक वर्ष तक आप डी.ए.वी. कॉलेज रावलपिंडी में अर्थशास्त्र के प्राध्यापक रहे। आपने पंजाब की प्राशासनिक परीक्षा उत्तीर्ण की और पंजाब प्रान्त की प्राशासनिक सेवा में नियुक्त हो गये।

देश विभाजन के पश्चात् श्री हूजा जो भारतीय प्रशासन सेवा में आ गये आप राजस्थान, जम्मू काश्मीर और मध्य प्रदेश में प्रशासन के डी.एम. आदि अनेक उच्च पदों पर कार्य करते रहे। राजस्थान सरकार के सचिव पद पर भी कार्य किया। आप मणिपुर में वहाँ के लोक सेवा आयोग के चैयरमैन भी रहे। श्री बलभद्र कुमार हूजा सरकारी विभागों में ज़मीन सम्बन्धी विभागों को पसन्द करते थे। आप चकबन्दी आदि कार्यों के खेतों में चले जाते थे। वहाँ पर हॉफ पैंट पहन कर बिना कपड़ा बिछाये ही जमीन पर बैठ जाते थे। इनके जमीन पर बैठ जाने के कारण अन्य उच्च अधिकारियों को भी जमीन पर ही बैठना पड़ता था। जो कि सामान्यतया बैठना पसन्द नहीं करते थे। सरकार की सेवा से निवृत्त होकर आप सामाजिक कार्यों में एवं शिक्षा के कार्यों में अपने आप को व्यस्त रखते रहे।

डॉ॰ सत्यकेतु विद्यालंकार के कुलपति पद से त्यागपत्र देने के पश्चात् विश्वविद्यालय के प्रशासन को एक योग्य कुलपति की आवश्यकता थी, क्योंकि जैसा कि लिखा जा चुका है कि गुरुकुल की, व्यवस्था ठीक प्रकार से नहीं चल रही थी। विश्वविद्यालय अनुदान आयोग के द्वारा गठित कमेटी या रिपोर्ट प्रस्तुत कर चुकी थी कि इस विश्वविद्यालय को किसी अन्य विश्वविद्यालय का महाविद्यालय बना दिया जाये। इसलिए एक ऐसे कुलपति, जिसकों प्रशासन का अच्छा अनुभव हो, उसे ही कुलपति पद पर नियुक्त किया जाये। इसलिए विश्वविद्यालय की शिष्ट परिषद् ने एवं वीरेन्द्र कुलाधिपति विश्वविद्यालय ने 1974 में श्री बलभद्र कुमार हूजा की कुलपति पद पर नियुक्ति की थी। श्री हूजा की नियुक्ति के पश्चात् कांगड़ी में एक नये विवाद का जन्म हुआ जिसका वर्णन विस्तारपूर्वक किया जा चुका है। 1977 में श्री हूजा बाहर गये हुयें थें। उस समय एक दूसरी पार्टी ने विश्वविद्यालय पर बलात् कब्जा कर लिया। हूजा जी ने दिल्ली में कैम्प ऑफिस बनाकर के विवाद को सुलझाने का प्रयास किया। 2 जुलाई 1980 को श्री हूजा को जिला जज सहारनुपर ने कांगड़ी विश्वविद्यालय का वैध कुलपति घोषित किया।

विवाद समाप्त हो जाने के पश्चात् श्री हूजा ने विश्वविद्यालय अनुदान आयाग नई दिल्ली और शिक्षा मंत्रालय भारत सरकार के सहयोग से विश्वविद्यालय की उन्नति के लिए मार्ग प्रशस्त किया। 1981 में श्री हूजा जी ने सबसे प्रमुख कार्य यह किया कि विश्वविद्यालय के संविधान को संशोधित कराया उसमें यह व्यवस्था की कि, दो कुलपति एक साथ नियुक्त न हो सकें।

विश्वविद्यालय की शैक्षणिक स्थिति को सुधारने के लिए विश्वविद्यालय के अनेक विभागों में राष्ट्रीय संगोष्ठियों का आयोजन किया जाने लगा। आप के सयम में ही प्रो० पद की सरकार द्वारा स्वीकृति प्राप्त हुई। आप के समय ही कई नये विभाग आरम्भ किये गये। श्री हूजा जी के समय दीक्षांत के अवसरों पर राष्ट्रपति तक उच्च राष्ट्रनायक आते रहे। आपके समय में ही अनेक कर्मचारियों के पदों की सृजना हुई। यह कहना अतिशयोक्ति नहीं होगा कि श्री बलभद्र कुमार हूजा के समय में ही कांगड़ी विश्वविद्यालय ने दिन दूनी रात चौगुनी उन्नति की थी।

श्री बलभद्र कुमार हूजा 1984 तक गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय के कुलपति पद पर सुशोभित रहे। यहाँ से सेवा निवृत्त होने के पश्चात् आप पुनः एक वानप्रस्थ का जीवन व्यतीत करते हुये सामाजिक कार्यों में व्यस्त रहते हैं।

आपने सर्वोदय की ओर, फांसी की रात, आरती, आहुति, शीश पुष्प, आदि अनेक लघु ग्रन्थों की रचना की है। इस समय आप विजयपथ जयपुर में निवास करते हैं।

सत्यकाम विद्यालंकार

(आचार्य)

पं॰ सत्यकाम विद्यालंकार का जन्म लाहौर में सन् 1905 में हुआ। आपके पिता का नाम श्री धनीराम था। आपने 1925 में विद्यालंकार की उपाधि प्राप्त की तत्पश्चात् आपने "वीर अर्जुन" दैनिक "नवयुग" ओर "आपबीती" पत्रिकाओं में अनेक पदों पर कार्य किया। 1950 से 1960 तक आप हिन्दी के प्रसिद्ध पत्र "धर्मयुग" और "नवनीत" हिन्दी डायजेस्ट के संपादक रहे। "नवनीत" आदि पत्रों के कार्यावकाश ग्रहण करने के पश्चात् आप 1982 ई॰ में कांगड़ी विश्वविद्यालय में विद्यालय विभाग के आचार्य पद पर नियुक्त किये गये। आप के समय में विद्यालय विभाग ने अत्यधिक उन्नति की।

आप ने अनेक ग्रन्थों का अनुवाद किया तथा वेद मंत्रों की तर्ज पर अनेक गीत भी लिखे हैं। इस क्रम में वैदिक वंदना, वेद गीतांजलि, वेद पुष्पांजलि आदि ग्रन्थों की रचना की है। वैदिक संस्थान दिल्ली के तत्वाधान में प्रकाशित होने वाले वेदों के अंग्रेजी अनुवाद भी आपने ही सम्पन्न किये। इस योजना के अन्तर्गत चार वेदों का धारावाही अंग्रेजी अनुवाद प्रकाशित हो चुका है। अमर हुतात्मा स्वामी श्रद्धानन्द, पंडित इन्द्र विद्या वाचस्पति का जीवन चरित्र आदि का लेखन भी आपने डॉ॰ अवनीन्द्र कुमार विद्यालंकार के सहयोग से किया है।

आपको पंजाब सरकार ने पुरस्कृत किया। 8 सर्वश्रेष्ठ कहानियां सफलता के सूत्र, जीवन रश्मि, शिवाजी, सरदार पटेल, देश-देशान्तर, ईरान, सरल महाभारत आदि की रचना भी आप ने की है। आप अखिल भारतीय स्नातक मण्डल के अध्यक्ष रह चुके हैं। "अर्जुन" में क्रान्तिकारी लेख लिखने के आरोप में आपने जेल की यात्रा भी की थी। आप स्वामी श्रद्धानन्द जी के दौहित्र थे।

आचार्य सत्यकाम का व्यक्तित्व अत्यन्त सरल, मधुरभाषी और अति अध्यव्यसायी रहा है। सौम्यता और सरलता उनके चरित्र का विशेष गुण था। उन्होंने वैदिक मंत्रों की चित्र प्रदर्शनी भी वार्षिकोत्सव के समय में विद्यालय में लगवाई थी।

प्रो॰ रामप्रसाद वेदालंकार

(आचार्य एवं उपकुलपति)

श्री रामप्रसाद वेदालंकार का जन्म उत्तर पश्चिम सीमा प्रान्त (वर्तमान पाकिस्तान) के जिला मरदान के ग्राम थाना में 7 फरवरी 1933 को हुआ। आप के पिता का नाम श्री गंगा बिशन था। आप की उच्च शिक्षा दयानन्द उपदेशक महाविद्यालय यमुनानगर में हुई थी। उसके पश्चात् वेद में विशेष रुचि होने के कारण आपने गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय में प्रवेश लिया। और 1966 में वेदालंकार तथा 1968 में वेद से एम.ए. उपाधि प्राप्त की। 1 अगस्त 1968 को श्री रामप्रसाद वेदालंकार की वेद विभाग में प्रवक्ता पद पर नियुक्ति हुई। आचार्य प्रियव्रत वेद वाचस्पति के सेवा निवृत्त होने के पश्चात् 1972 में वेद विभाग में आप रीडर पद पर नियुक्त हुये।

1981 में प्रो॰ रामप्रसाद वेदालंकार को कांगड़ी विश्वविद्यालय के आचार्य एवं प्रो॰ वाइस चान्सलर पद पर नियुक्त किया गया। आचार्य राम प्रसाद वेदालंकार एक मधुरभाषी, अतिथि सेवा में दक्ष थे। वे आर्य समाज के प्रचार कार्य में समस्त भारत में जाते रहते थे। जब इनके घर पर कोई विद्वान् संन्यासी आता था तो अपने हाथों से फल खिलाते हुये इनको बड़ा ही संतोष होता था। इनके आचार्य काल में अनेक बार विश्वविद्यालय में छात्रों की हड़तालें हुई। परन्तु ये कभी भी हड़ताल के सामने नहीं झुके। वास्तव में आचार्य रामप्रसाद वेदालंकार सदैव छात्रों के हित में ही रहते थे। कितने ही छात्रों को गुरुकुल से अलग कई ट्रस्टों से छात्रवृत्ति दिलवाया करते थे। फरवरी 1996 में आप आचार्य पद से सेवा निवृत्त हुये। आपका यह विचार था कि वेद को सामान्य जनता तक पहुँचाया जाये। इसलिए आपने विनय सुमन- (तीन भाग), वेद सुधा (भाग दो), वैदिक पुष्पांजलि (चार भाग), प्रार्थना सुमन (दो भाग), कौन चैन की नींद नहीं सो सकते, महान् विदुर के महान् उपदेश, वैदिक गृहस्थ आश्रम, अनन्त की ओर, आदर्श परिवार, आदि अनेक छोटे-छोटे वैदिक ग्रन्थों की रचना की।

सेवा निवृत्त हो जाने के पश्चात् लेखन एवं आर्य समाज के कार्यों में इतने व्यस्त हो गये कि कई रोगों से ग्रसित हो गये; इस प्रकार उनका असमय में अक्टूबर 1998 में चण्डीगढ़ में हृदयगति रुकने के कारण प्रातः चार बजे स्वर्गवास हो गया।

डॉ॰ सत्यकाम वर्मा

(कुलपति)

डॉ॰ सत्यकाम वर्मा का जन्म 1926 में अम्बाला छावनी में हुआ था, इनके पिता का नाम श्री विद्याधर विद्यालंकार था। इन्होंने गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय से आयुर्वेदालंकार उपाधि प्राप्त की थी। उसके पश्चात् प्रभाकर, शास्त्री, साहित्य रत्न एम.ए. (संस्कृत, हिन्दी), पी-एच.डी. वाक्यपदीय में भाषा तात्विक विवेचन की उपाधियाँ प्राप्त की थी। इन्होंने अनेक संस्थाओं में प्राध्यापक का कार्य किया। 1956 में दयालसिंह कॉलेज में प्राध्यापक पद पर नियुक्त हुये। इसके पश्चात् रोम इटली के इजमेव में सम्पादन कार्य किया कुछ समय के लिए ये महाभाष्य एवं भारतीय अभिलेखों का अध्यापन भी करते रहे। दिल्ली विश्वविद्यालय के सांध्यकालीन स्नातकोत्तर संस्कृत विभाग में प्रवक्ता पद पर नियुक्त हुये। इसके पश्चात् दिल्ली विश्वविद्यालय के संस्कृत विभाग में रीडर पद पर नियुक्त हुये। अनेक ग्रन्थों का इन्होंने अनुवाद भी किया व्याकरण की दार्शनिक भूमिका, संस्कृत व्याकरण का उद्भव और विकास, सैद्धान्तिक भाषा विज्ञान, वेद वाटिका, वेद सुमन, स्टडीज इन इन्डोलॉजी, डिक्शनरीज ऑफ वैदिक ग्रामर (पांच खण्डों में) आदि ग्रन्थ प्रकाशित किये। अनेक अन्तर्राष्ट्रीय सेमिनारों में रोम, जापान, जर्मन आदि देशों में शोध-पत्र वाचन करने भी गये।

सन् 1984 के अन्त में पं॰ सत्यव्रत सिद्धान्तालंकार ने डॉ॰ सत्यकाम वर्मा को गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय का कुलपति नियुक्त किया था। आपने कुलपति बनते ही शिक्षा के क्षेत्र में सुधार करने का प्रयास भी किया था। परन्तु दुर्भाग्य से उन्हीं दिनों एक घटना के कारण आपको कार्यकाल पूर्ण होने से पहले ही त्याग-पत्र देकर जाना पड़ा।

श्री सोमनाथ मरवाह

(परिदृष्टा)

श्री सोमनाथ मरवाह का जन्म 15 दिसम्बर 1910 को पाकिस्तान जेहलम् नगर में श्री राम निवास के यहाँ हुआ। आपने लाहौर में रहकर बी.ए. और एल.एल.बी. की शिक्षा पूर्ण की। 1933 में वकालत करना प्रारम्भ कर दिया। देश विभाजन के पश्चात् आप दिल्ली में आकर बस गये। ग्रीन पार्क में आपने अपना नया भवन बनवाया। आप लगभग 40 वर्षो से आर्य समाज के समस्त कार्य-कलापों में भाग लेते रहे हैं। आप गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय के शिष्ट परिषद् और कार्य परिषद् के सदस्य भी रहे हैं।

जिस समय गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय में दलगत राजनीति के कारण विवाद उत्पन्न हुआ उस समय आपने आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के त्रिशाखन को वैध बतलाते हुये सहारनपुर में जो वाद चल रहा था उसमे विजय भी प्राप्त करायी। इस समस्त वाद के लिए आपने विश्वविद्यालय से अपनी वकालत का कोई शुल्क नहीं लिया। श्री मरवाह आर्य समाज के ऐसे नेता हैं जो वर्षो तक आर्य समाज का सर्वोच्च तथा सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा दिल्ली के कोषाध्यक्ष तथा उप प्रधान आदि पदों पर भी निर्वाचित होते रहे।

श्री सोमनाथ मरवाह को विश्वविद्यालय की शिष्ट परिषद् ने 16-4-1987 को परिदृष्टा पद पर निर्वाचित किया। गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय के वार्षिकोत्सव पर ये प्रतिवर्ष आते रहे। इस अवसर पर गुरुकुल कांगड़ी को दान भी देते रहे हैं।

आपने अंग्रेजी में महात्मा हंसराज का एक सुन्दर जीवन चरित्र लिखा है जिसे सार्वदेशिक सभा ने प्रकाशित किया है। आपकी "होमेज" टूॅ स्वामी श्रद्धानन्द नामक पुस्तक को आर्य प्रतिनिधि सभा दिल्ली ने प्रकाशित किया। आप एक कर्मठ कार्यकर्त्ता तथा जागरूक नेता माने जाते हैं। अभी पिछले दिनों उनका असयम ही निधन हुआ।

प्रो० शेर सिंह
कुलाधिपति एवं परिदृष्टा

प्रो० शेरसिंह का जन्म 11 अगस्त 1917 को हुआ। इसका जन्म रोहतक जिले के वाधपुर ग्राम में श्री शीशराम के घर हुआ। इनके पिता तथा इनके दादाजी आर्य समाजी हो गये थे। 1926 ई० में स्वामी श्रद्धानन्द जिला रोहतक में अछूतोद्धार के प्रचार के लिए आये थे। स्वामी जी ने भाषण में कहा कि- "जिला रोहतक में कोई ऐसा, व्यक्ति नहीं है जो अपने कुएं पर अछूतवर्ग को पानी भरने की छूट दे सके। इनके पिता चौ० शीशराम ने इस बात को सहज स्वीकार कर लिया कि मैं अपने कुएं पर अछूतों को पानी भरने की छूट दूंगा।" उन्होनें अपने कुएं पर एक उत्सव के साथ पानी भरने की स्वीकृति दे दी।" परन्तु पूरे गांव की बिरादरी ने इनको जाति से बहिष्कृत कर दिया। प्रो. शेरसिंह की शिक्षा-दीक्षा बेरी गाँव में ही प्रारम्भ हुई।

हरियाणा में आर्य समाज का बहुत अधिक प्रचार-प्रसार था। इसलिए श्री शेरसिंह भी आर्य समाज और कांग्रेस के रंग में रंग गये। प्रो. शेरसिंह मैट्रिक परीक्षा उत्तीर्ण करने के पश्चात् उच्च शिक्षा के लिए पिलानी भेजे गये। वहाँ से इण्टर की परीक्षा उत्तीर्ण करने के पश्चात् दिल्ली के रामजस कालेज में प्रवेश लिया। इस प्रकार आपने बी.ए. के पश्चात् लाहौर विश्वविद्यालय से गणित में एम.ए. उपाधि प्राप्त की। एम.ए. उपाधि प्राप्त करने के पश्चात् आप का झुकाव आर्य समाज के प्रचार-प्रसार और कांग्रेस के स्वतंत्रता आन्दोलन में हो गया था। प्रो. शेरसिंह हैदराबाद सत्याग्रह के समय हैदराबाद गये। वहाँ पर वे स्वामी स्वतंत्रतानन्द से मिले तथा सत्याग्रह करने के लिए उनसे इजाजत माँगी। परन्तु स्वामी स्ततंत्रतानन्द जी ने इनको बी.टी. करने के लिए लाहौर जाने को कहा। स्वामी जी के आदेशानुसार लाहौर आये और बी.टी. में प्रवेश ले लिया। बी.टी. करने के पश्चात् आप स्वामी स्वतन्त्रतानन्द के आदेशानुसार केशव मेमोरियल स्कूल में अध्यापन के लिए हैदराबाद चले गये। वहाँ उस स्कूल के हैडमास्टर पद पर आपकी नियुक्ति हो गयी। 1942 में भरतपुर के महारानी श्री जया कॉलेज में गणित प्रवक्ता पद विज्ञापित हुआ। इनकी नियुक्ति इस कॉलेज में गणित प्रवक्ता पद पर हो गयी।

आर्य समाज के प्रसिद्ध विद्वान् पं० बुद्धदेव विद्यालंकार की सुपुत्री कु० प्रभात शोभा विद्यालंकार से विवाह सम्पन्न हुआ। जिस समय रोहतक में जाट कॉलेज खोला गया, उस समय इन्होंने गणित में प्रवक्ता पद के लिए आवेदन पत्र भेजा। यहाँ पर इनकी प्रवक्ता पद पर नियुक्ति हो गयी। चौ० छोटूराम के स्वर्गवास के पश्चात् 1945 में उस क्षेत्र में उप चुनाव निश्चित हुआ। प्रो० शेरसिंह ने उस चुनाव में विजय प्राप्त की। इस प्रकार प्रो० शेरसिंह का राजनैतिक जीवन प्रारम्भ हो गया।

प्रो० शेरसिंह ने पंजाब विधानसभा में अपने क्षेत्र का कई बार प्रतिनिधित्व किया। हिन्दी सत्याग्रह में प्रो० शेरसिंह ने बढ़-चढ़ कर भाग लिया। इसके पश्चात् प्रो० शेरसिंह केन्द्रीय राजनीति में आ गये। लोक सभा का चुनाव लड़कर एम.पी. बन गये। श्रीमती इन्दिरा गाँधी के दस वर्ष के प्रधानमंत्री काल में आप भी भारत सरकार के राज्यमंत्री, शिक्षा संचार, कृषि और सुरक्षा आदि मंत्रालयों में राज्यमंत्री रहे। चण्डीगढ़ के विषय में मतभेद होने के कारण इन्होनें मंत्री परिषद् से त्यागपत्र दे दिया।

मंत्री पद से स्वतंत्र होने के पश्चात् आपने हरियाणा रक्षा वाहिनी का गठन किया। हरियाणा के निर्माण में भी प्रो॰ शेर सिंह का महत्वपूर्ण योगदान है।

आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के त्रिशाखन के पश्चात् आप आर्य प्रतिनिधि सभा हरियाणा के प्रधान निर्वाचित हुये। उसके पश्चात् गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय के कुलाधिपति भी निर्वाचित हुये। आपके कुलाधिपतित्व काल में गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय ने बहुत उन्नति की। विज्ञान के कई नये-नये विषय आपके समय में ही आये।

जिस समय प्रो॰ शेरसिंह राज्य शिक्षा मंत्री थे उस समय गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय में, 1968 में दीक्षांत अभिभाषण भी देने आये थे। अन्तर्राष्ट्रीय आर्य महा सम्मेलन लन्दन में भी आपने इस सम्मेलन की अध्यक्षता की और वहाँ पर अध्यक्षीय भाषण दिया था। हरियाणा में मद्यनिषेध के लिए आपने एक आन्दोलन चलाया और वहाँ पर सरकार द्वारा शराब भी बन्द करायी। आप अखिल भारतीय नशाबन्दी समिति के अध्यक्ष हैं।

1998 में गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय की शिष्ट परिषद् ने सर्वसम्मति से आपको विश्वविद्यालय के परिदृष्टा पद पर चयन किया। यह आशा की जाती है कि आपके परिदृष्टा के इस कार्यकाल में विश्वविद्यालय और अधिक उन्नति करेगा।

श्री सुभाष विद्यालंकार

(कुलपति)

श्री सुभाष विद्यालंकार का जन्म 15 जनवरी 1921 मण्डी धनौरा (मुरादाबाद) में हुआ। आपके पिता का नाम श्री सागरमल गर्ग था। आपने 1949 में विद्यालंकार की उपाधि प्राप्त की। उसके पश्चात् आपने एम.ए. (संस्कृत साहित्य) में, तदनन्तर एल.एल.बी. दिल्ली विश्वविद्यालय से, डिप्लोमा एडवांस्ड रसियन भाषा में किया।

शिक्षा सुधा पत्र के आप संपादक 1949 से 52 तक रहे। इसके पश्चात् सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय, आकाशवाणी के समाचार विभाग तथा केन्द्रीय सूचना सेवा में सेवारत रहे। 1977 में आप आकाशवाणी के डायरेक्टर पद पर नियुक्त किये गये।

श्री सुभाष विद्यालंकार का सम्बन्ध अनेक संस्थाओं से किसी न किसी रूप में जुड़ा हुआ है। गुरुकुलीय जीवन में कुल मंत्री, सुलेख व्यवस्था पटु तथा अर्थशास्त्रीय विषयों में आपकी गहरी रुचि रही है। मेरठ कॉलेज की प्रबन्ध समिति के सदस्य, रघुमल आर्य कन्या महाविद्यालय के अवैतनिक प्रबन्धक तथा योग एवं आध्यात्म विद्या में विशेष रुंचि रही है।

श्री सुभाष विद्यालंकार की नियुक्ति कुलपति पद पर विश्वविद्यालय के परिदृष्टा आचार्य प्रियव्रत वेद वाचस्पति नें 5 मई 1970 को की थी। आपने गुरुकुल कांगड़ी की व्यवस्था संभालते ही विश्वविद्यालय के विकास में कार्य करना प्रारम्भ कर दिया। आपने विश्वविद्यालयो में एक नया इतिहास रचा। यहाँ हरिद्वार में कई वर्षों से यह माँग जोर पकड़ती जा रही थी कि गुरुकुल कांगड़ी में उच्च शिक्षा का प्रबन्ध केवल लड़कों के लिए है। कन्याएं उच्च शिक्षा से वंचित रह जाती हैं। इसलिए यह भी माँग उठती है कि यहाँ पर सह-शिक्षा प्रारम्भ की जाये। श्री सुभाष विद्यालंकार ने यह सह शिक्षा करने से एकदम मना कर दिया। परन्तु आपने 1992 में हरिद्वार शहर में आनन्दमयी उच्चतर विद्यालय में सायंकालीन स्नातकोत्तर कन्या महाविद्यालय प्रारम्भ कर दिया। यह उनका एक साहसिक कार्य था। उस समय न तो विश्वविद्यालय अनुदान आयोग ने कोई अनुदान देना स्वीकार किया था परन्तु आपने वेद एवं कला और विज्ञान के समस्त विषयों में एम. ए., एम.एस.सी. की कक्षाएं प्रारम्भ की जो आज कन्या गुरुकुल महाविद्यालय के नाम से एक विशाल संस्था का रूप धारण कर चुका है। 1993 में आप कुलपति पद से सेवा निवृत्त हुये।

डॉ॰ वीरेन्द्र अरोड़ा

(कुलसचिव)

श्री वीरेन्द्र अरोड़ा का जन्म 25.10.1943 को मिंटगुमरी (पाकिस्तान) में हुआ था। आपके पिता का नाम डा. राज किशोर अरोड़ा था। वे अपने क्षेत्र के प्रसिद्ध डा. माने जाते थे। श्री वीरेन्द्र अरोड़ा की उच्च शिक्षा इलाहाबाद एवं कानपुर विश्वविद्यालयों में सम्पन्न हुई। आपने एम.एस.सी. गणित विषय से की है। आपकी नियुक्ति 31 जुलाई 1965 को गणित विभाग में प्रवक्ता पद पर गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय में हुई। आप 1983 में रीडर पद पर नियुक्त किये गये।

डा. वीरेन्द्र अरोड़ा की कार्यकुशलता को देखते हुए 31 मई 1984 को कुलसचिव पद पर नियुक्ति की गयी। आपने कुलसचिव बनकर विश्वविद्यालय की उन्नति के लिए दिन-रात परिश्रम किया। कार्यालय में प्रशासन को गतिशील बनाते हुये वेतन आदि के भुगतान को नियमित किया। डॉ॰ अरोड़ा के कार्यकाल में ही विश्वविद्यालय में अनेक पदों की सृजना हुई थी।

आपके अनेक शोधपत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित हो चुके हैं। गढ़वाल विश्वविद्यालय ने आपको पी-एच. डी. की उपाधि से विभूषित किया है। आपने अनेक अन्तर्राष्ट्रीय सेमिनारों में सिडनी, सिंगापुर, और केनबरा के विश्वविद्यालयों में शोध-पत्र वाचन किये हैं।

सम्प्रति आप गणित विभाग में रीडर एवं अध्यक्ष पद पर कार्यरत हैं।

डॉ॰ जयदेव वेदालंकार

(कुलसचिव)

डॉ॰ जयदेव वेदालंकार का जन्म 5 दिसम्बर 1941 को झाडौदा कलां दिल्ली-43 में हुआ था। आपके पिता का नाम श्री जुगलाल सिंह था। आपने पंजाब विश्वविद्यालय से 1958 में हाईस्कूल उत्तीर्ण करने के पश्चात् उच्च शिक्षा के लिए आप उपदेशक विद्यालय वैदिक साधना आश्रम यमुना नगर (हरियाणा) में गये। वहाँ पर पूज्य पाद स्वामी आत्मानन्द सरस्वती के सानिध्य में रहकर योगशिक्षा प्राप्त की। इसके साथ ही उपदेशक विद्यालय से सिद्धान्त भूषण उपाधि प्राप्त की। इसके बाद उपदेषक विद्यालय स्थानांतरित करके भटिंडा भेज दिया गया। इसके पश्चात् आप गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय में उच्च शिक्षा के लिए आये। 1966 में आपने वेदालंकार परीक्षा उत्तीर्ण की। 1968 में दर्शनशास्त्र से प्रथम स्थान प्रथम श्रेणी में एम.ए. की उपाधि प्राप्त की। पढ़ते समय अपने गुरु आचार्य सुखदेव दर्शन वाचस्पति से बहुत तर्क एवं विवाद करके पढ़ने के कारण उनके प्रिय छात्रों में से हो गये थे। मई 1968 में एम.ए. उत्तीर्ण करने के पश्चात् पं॰ सुखदेव दर्शन वाचस्पति ने इन्हें बुलाया और कहा- “तुमने यहाँ से उच्च शिक्षा प्राप्त कर ली है क्या मेरी गुरु दक्षिणा नहीं दोगे ?” इन्होंने कहा - “आदेश दीजिए।” उन्होंने कहा- “मेरी गुरुदक्षिणा और आदेश यही है कि तुम्हें गुरुकुल में ही सेवा करनी है।” जयदेव वेदालंकार को यह विदित था कि यहाँ पर कोई प्रवक्ता का पद रिक्त करके ही उनको प्रवक्ता पद पर नियुक्त किया जायेगा। इसलिए उन्होंने अपने आचार्य श्री सुखदेव दर्शन वाचस्पति से कहा -“मुझे आपका आदेश शिरोधार्य है, परन्तु मेरे सामने एक धर्म संकट है। क्योंकि मैं यह नहीं जानता हूँ कि आप प्रो॰ कुलराज शर्मा, जो मानसिक रूप से अस्वस्थ हैं उनको बर्खास्त करके मुझे प्रवक्ता पद पर नियुक्त करेंगे। परन्तु मैं किसी की आजीविका छीनकर आजीविका प्राप्त करना महापाप समझता हूँ। इससे तो अच्छा मजदूरी करके अपना पेट भरना उचित समझूंगा।” यह सुनकर पं॰ सुखदेव जी मौन हो गये। यह देवयोग की बात थी कि जून मास के अन्तिम सप्ताह में दर्शन विभाग में प्रवक्ता का चौथा सृजन होकर भारत सरकार से स्वीकृत हो गया था। उस पद की आपूर्ति हेतु समाचार पत्रों में विज्ञापन निकाला गया। पं॰ सुखदेव जी पुनः इनसे मिले और पुनः कहा कि -“लो भाई, तुम्हारा धर्मसंकट दूर हो गया है तुम्हारे कारण किसी की आजीविका नहीं छीनी जायेगी। प्रवक्ता पद के लिए तुम अवश्य ही आवेदन-पत्र प्रस्तुत करो। इस प्रकार इनकी एक अगस्त 1968 को दर्शन विभाग में प्रवक्ता पद पर नियुक्ति हो गयी। ये अध्ययन करते हुये भी आर्य समाज के प्रचार एवं अन्य सामाजिक कार्यों में बढ़-चढ़ कर भाग लेते रहे। वेदालंकार करते हुये बंगाल में गुरुकुल की और से रिलीव सोसायटी में गुरुकुल कांगड़ी के छात्रों के दल का नेतृत्व किया। दो महीने तक भारत के अन्तिम रेलवे स्टेशन गेदे (पूर्वी बंगाल) में हज़ारों पीड़ित व्यक्तियों को च्यूड़ा-गुड़ एवं वस्त्र आदि वितरित किया। इसी प्रकार एम.ए. करते हुये गौ रक्षा आन्दोलन में एक महीने तक तिहाड़ जेल में रहे। और वहाँ यजुर्वेद पारायण यज्ञ किया। 1977 से 80 तक गुरुकुल विश्वविद्यालय के विवाद के दिनों में आपने प्राध्यापक और कर्मचारियों की संयुक्त समिति का सफल संचालन किया और उसमें सफलता भी प्राप्त की। 1978 में आपने मेरठ विश्वविद्यालय से पी-एच.डी. की उपाधि प्राप्त की। 1984 में आप दर्शन विभाग में रीडर पद पर नियुक्त हुये। आपने 1985 में रांची विश्वविद्यालय (बिहार) से वैदिक दर्शन पर सर्वोच्च डी.लिट् उपाधि प्राप्त की।

दिसम्बर 1990 में दर्शन विभाग के प्रो. पद पर आपको नियुक्त किया गया। 1989 में विश्वविद्यालय के वित्ताधिकारी के त्यागपत्र देकर जाने के पश्चात् आपको विश्वविद्यालय के वित्ताधिकारी पद पर नियुक्त किया गया। इनके वित्ताधिकारी काल में गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय का अनुदान बहुत अधिक बढ़ गया था। इन्होंने रात-दिन परिश्रम करके विश्वविद्यालय पर जो ऑडिट की 20 आपत्तियाँ थी उत्तर दिया उसके कारण विश्वविद्यालय ऑडिट की आपत्तियों से विमुक्त हो गया।

डॉ॰ वेदालकार की इस कार्यकुशलता को देखते हुये ही 25 फरवरी 1990 को श्री सुभाष विद्यालंकार कुलपति महोदय ने कुलसचिव पद पर नियुक्त किया। डॉ॰ वेदालंकार ने मई के अन्त में उनके साथ कार्य करने की असमर्थता के कारण विनम्रतापूर्वक त्यागपत्र प्रस्तुत किया। 11 अप्रैल 1993 को तत्कालीन कार्यवाहक कुलपति प्रो॰ रामप्रसाद वेदालंकार ने पुनः आपको कुलसचिव पद पर प्रतिष्ठित किया। प्रो॰ धर्मपाल कुलपति महोदय के नियुक्त होने पर विश्वविद्यालय में रात-दिन परिश्रम करके इनके समय से आधुनिक विज्ञान के विषय कम्प्यूटर विज्ञान, एम.बी.ए., पर्यावरण विज्ञान आदि नवीनतम विषयों में स्नातकोत्तर सत्र का अध्ययन-अध्यापन सत्र प्रारम्भ हुआ। इनके समय में लगभग विश्वविद्यालय में एक करोड़ रुपये की लागत से नये भवनों का निर्माण भी हुआ।

कई वर्षों से गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय के सामने चुनौती थी कि कन्या गुरुकुल स्नातकोत्तर महाविद्यालय, जो कि किराये के भवनों में चल रहा था। उसके लिए इस परिसर के बाहर भूमि क्रय करके वहाँ भवनों का निर्माण करना आपेक्षित था। डॉ॰ वेदालंकार ने इस चुनौती को स्वीकार करते हुये विश्वविद्यालय परिसर से दूर 6 (छः) बीघे भूमि क्रय की थी और वहाँ पर शिलान्यास करके तीन मंजिली इमारत का निर्माण कराया।

अगस्त 1996 में डॉ॰ वेदालकार ने यह अनुभव करना प्रारम्भ कर दिया कि- "मैं शैक्षणिक जगत् से ओझल सा होता जा रहा हूं।" इसलिए उन्होंने 19 अगस्त 1996 को त्यागपत्र दे दिया और ये अपने विभाग में आचार्य पद पर पुनः लौट आये। सम्प्रति आप प्राच्य विद्या संकाय में डीन पद को सुशोभित कर रहे हैं।

डॉ॰ वेदालंकार ने अनेक ग्रन्थों की रचना की है। इनके अनेक ग्रन्थ भारतीय विश्वविद्यालयों के पुस्तकालयों में तथा अनेक विश्वविद्यालयों के पाठ्यक्रमों में सम्मिलित किये गये हैं। इनके ग्रन्थ हैं-महर्षि दयानन्द की विंश्वदर्शन को देन, उपनिषदों का तत्व ज्ञान, भारतीय दर्शन की समस्याएं, वैदिक दर्शन, महर्षि दयानन्द की साधना और सिद्धान्त, वैदिक वाङ्मय में गौ हत्या या गौ रक्षा, वैदिक साहित्य का इतिहास और भारतीय दर्शन में प्रमाण आदि। इसके साथ ही आपने अनेक शोध पत्रों का सम्पादन भी किया।

जिस समय डॉ॰ जयदेव वेदालंकार गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय की सर्वोच्च उपाधि से विभूषित होकर दर्शन पर शोध कार्य करने लगे तो उन्हें यह अनुभव हुआ कि गुरुकुल कांगड़ी के स्नातकों ने वैदिक साहित्य, प्राचीन इतिहास, राजनीति तथा अन्य अनेक विषयों पर साहित्य का सृजना किया है, परन्तु दर्शन साहित्य पर गुरुकुल के स्नातकों द्वारा बहुत कम लिखा गया है। इसलिए इन्होंने स्नातक बनते ही मन में यह संकल्प लिया कि मैं इस दर्शन के क्षेत्र में अनेक भारतीय दर्शन पर ग्रन्थों की रचना कर इस कमी की पूर्ति करूंगा। अभी भी ये इस लेखन कार्य में लगे हुये हैं।

डॉ॰ वेदालंकार को अखिल भारतीय स्तर के राष्ट्रीय पुरस्कार भी प्राप्त हुये हैं। अखिल भारतीय दर्शन परिषद् की ओर से स्वामी प्रणवानन्द दर्शन पुरस्कार, जिसमें पांच हजार रुपये नगद तथा प्रशस्ति पत्र दिया गया। दूसरा राष्ट्रीय पुरस्कार, जो आर्य समाज शांताक्रूज मुम्बई की ओर से "श्री मेघ जी भाई आर्य साहित्य पुरस्कार" जिसमें 15000 रुपये नगद एवं रजत ट्राफी 5 जुलाई 1998 को प्रदान किया गया। इस समय इन्होंने गुरुकुल कांगडी विश्वविद्यालय का 100 वर्ष का इतिहास लिखकर पूर्ण किया है।

डॉ॰ धर्मपाल

कुलपति एवं मुख्याधिष्ठाता (वर्तमान)

डॉ॰ धर्मपाल का जन्म 19 मार्च 1942 को मेरठ जिले के बड़ौत कस्बे में हुआ। आपके पिता का नाम महाशय ओमप्रकाश है। आपके दादाजी एवं पिताजी कट्टर आर्य समाजी थे। आस-पास के गांव में आर्य समाज के प्रचार प्रसार में बढ़-चढ़ कर भाग लेते थे। जाट कालेज बड़ौत आपके कुएं वाले घर में 1917 में एक वैदिक पाठशाला के रूप में प्रारम्भ हुआ था। आपने अंग्रेजी साहित्य और हिन्दी साहित्य में एम.ए. की उपाधि प्राप्त की है।

आपने अपना अध्यापन का कार्य अंग्रेजी के प्राध्यापक के रूप में केन्द्रीय विद्यालय से प्रारम्भ किया। उसके पश्चात् आपने हिन्दी साहित्य से पी-एच.डी. की उपाधि प्राप्त की। और जाकिर हुसैन कॉलेज दिल्ली में प्रवक्ता पद पर नियुक्त हो गये।

आर्य समाजी परिवार में उत्पन्न होने के कारण प्रारम्भ से ही आर्य समाज के कार्य में रुचि थी। दिल्ली में आने के पश्चात् आप आर्य समाज के कार्यों में बढ़-चढ़ कर भाग लेते। आपने शालीमार बाग में अपना मकान बनाया। आर्य समाज के कार्यकर्त्ता के रूप में शीघ्र ही आपकी प्रसिद्धि दिल्ली में हो गयी। शालीमार बाग में आपने अन्य आर्य समाजियों के सहयोग से आर्य समाज शालीमार बाग का भवन निर्मित किया। दिल्ली के समस्त आर्य समाजों के कार्यक्रमों में आप परिवार सहित सक्रिय भाग लेते रहे हैं। इस प्रकार आप शीघ्र ही दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा के महामंत्री निर्वाचित हुये। आपने एवं श्री सूर्यदेव जी ने मिलकर दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा को सशक्त बनाया। यहाँ यह उल्लेख करना आवश्यक है कि 1974 में आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब का जन्म हुआ है। आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब की समस्त सम्पत्ति तो पंजाब में रह गयी थी। विभाजन में केवल दिल्ली आर्य समाजों के रूप में सभा को सम्पत्ति प्राप्त हुई है। अन्य कोई अन्य सम्पत्ति प्राप्त नहीं हुई थी। इसलिए दिल्ली आर्य प्रतिनिधि को ऐसे कर्मठ कार्यकर्त्ता और नेताओं की आवश्यकता थी जो उसको सुचारु रूप से चला सके। डॉ॰ धर्मपाल के रूप में एक कर्मठ नेता प्राप्त हुये। इस प्रकार डॉ॰ धर्मपाल ने दिल्ली में आर्य समाज की गतिविधियों को पर्याप्त रूप में बढ़ाया। शीघ्र ही दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा को संगठित ही नहीं किया अपितु आर्थिक दृष्टि से भी उसे अपने पैरो पर खड़ा किया। आप आर्य केन्द्रीय सभा के भी मंत्री रहे हैं।

अपनी कर्मठता, नीतिकुशलता, और जन सम्पर्क के कारण आप दो बार सभा में मंत्री और दो बार ही सभा के प्रधान पद पर सुशोभित रहे हैं। अभी पांच दिसम्बर 1999 को भी आप तीसरी बार दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा के प्रधान निर्वाचित हुये हैं। आप सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा के तीन बार उपमंत्री रहे है। और अब अंतरंग सभा के सदस्य हैं।

गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय के परिदृष्टा जस्टिस महावीर सिंह ने 30 जून 1993 को डॉ॰ धर्मपाल को आर्य समाज की सेवाओं को देखते हुये गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय का कुलपति नियुक्त किया। जैसा कि लिखा जा चुका है कि डॉ॰ धर्मपाल कर्मठ और एक कुशल प्रशासक है, इसलिए उन्होंने आते ही गुरुकुल कांगड़ी में भी उसी रूप में कार्य करना प्रारम्भ कर दिया। गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय का उस समय अनुशासन डगमगा सा रहा था। उससे कुछ मास पूर्व ही कर्मचारियों की हड़ताल भी हुई थी। इनसे पूर्व कुलपति को कुलाधिपति ने सेवा मुक्त कर दिया था। इसलिए गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय

की प्राशासनिक स्थिति अच्छी नहीं थी। आपने आते ही प्रत्येक प्राध्यापक और समस्त कर्मचारियों से सम्पर्क किया। और शीघ्र ही उनमें आप लोकप्रिय हो गये। आपने यह देखा कि विश्वविद्यालय में विशेष रूप से विज्ञान संकाय में भवनों की न्यूनता है, आपके आते ही विश्वविद्यालय अनुदान आयोग नई दिल्ली से एम.सी.ए. की मान्यता मिल गयी थी। आपने बहुत शीघ्र ही रसायन विभाग में एम.एस.सी. स्तर की नई प्रयोगशाला का आधुनिकतम इन्सट्रुमेन्ट से युक्त निर्माण कराया। इसी प्रकार भौतिकी विज्ञान प्रयोगशाला का निर्माण हुआ। रसायन विभाग के लिए नये भवनों का निर्माण कराया गया। जो आधुनिक सुविधाओं से युक्त है। सम्भवत: देहरादून में अन्य कोई हॉस्टल इतनी सुविधाओं से युक्त नहीं होगा। वहाँ एम.सी.ए. और एम.बी.ए. कक्षाओं के लिए एक तीन मंजिलें भवन का निर्माण कराया। प्रिंसिपल कार्यालय तथा प्रशासन ब्लॉक बनवाया गया।

गुरुकुल कांगड़ी के विद्यालय विभाग में भी आपने मुख्याधिष्ठाता के रूप में आमूलचूल परिवर्तन किये हैं। आपके आने से पूर्व विद्यालय के ब्रह्मचारियों को शौच आदि के लिए गन्दे शौचालयों में दूर जाना पड़ता था। आपने नये शौचालयों का नजदीक ही निर्माण कराया। और अध्ययन अध्यापन की स्थिति को भी सुधारने का प्रयास किया तथा साथ ही 60 बीघा नया बाग लगवाया गया। जो विद्यालय विभाग विद्याधिकारी अर्थात् हाईस्कूल के स्तर का था उसमें इण्टर अर्थात् विद्या विनोद की कक्षायें भी प्रारम्भ की। अत: विद्यालय विभाग इण्टर स्तर तक का महाविद्यालय बन गया। भट्टे के लिए दी गयी भूमि को अपने स्वामित्व में लिया तथा कृषि भूमि ठेके पर न देकर स्वयं करने लगे तथा ट्रेक्टर आदि साधन खरीदें।

गुरुकुल विभाग में गौशाला बन्द हो गयी थी। आपने प्रयास करके इस गौशाला को पुन: प्रारम्भ किया। इस समय लगभग दो दर्जन गायें जो अच्छी नस्लों की बहुत दूध देने वाली है वे गौशाला की शोभा बढ़ा रही हैं। अत: ब्रह्मचारियों के लिए दूध प्राय: बाहर से नहीं मंगवाना पड़ता है।

डॉ० धर्मपाल के कुलपतित्त्व काल में भवनों का निर्माण होना एक सामान्य सी बात हो गयी है। अत: एम.बी.ए. की द्विमंजिली बिल्डिंग आधुनिक सुविधाओं से युक्त निर्मित हो चुकी है। इसी प्रकार कम्प्यूटर विभाग विशाल प्रयोगशाला और कम्प्यूटर संकाय का निर्माण हो चुका है। इसी प्रकार पर्यावरण विभाग का नव-निर्माण हुआ है।

डॉ० धर्मपाल के विश्वविद्यालय में आने के पश्चात् जो विश्वविद्यालय की उन्नति एवं विकास हुआ है, उसी को देखकर एक जुलाई 1996 को आपको पुन: कुलपति पद पर प्रतिष्ठित किया गया। आपके द्वितीय बार के कुलपति काल में भी विश्वविद्यालय में अनेक भवनों का निर्माण हुआ। विश्वविद्यालय अनुदान आयोग ने नौवीं पंचवर्षीय योजना के अन्तर्गत विश्वविद्यालय के प्रशासनिक और संकायों के निर्माण के लिए 50 लाख रुपये जीर्णोद्धार के लिए 60 लाख और शैक्षणिक कार्यों के लिए 1 करोड़ बीस लाख तथा अन्य सुविधाओं के लिए 30 लाख रुपये की स्वीकृति प्रदान की है। विश्वविद्यालय की निरन्तर प्रगति के कारण ही आपको तीसरी बार कुलाधिपति प्रो० शेरसिंह ने 1 जुलाई 1999 को कुलपति पद पर नियुक्त किया।

'गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय के इतिहास में 1930 के पश्चात् यदि इतने अधिक नये भवनों का निर्माण हुआ है तो वह धर्मपाल के कार्यकाल में ही हुआ है। दिसम्बर 1999 में ही इन्जीनियरिंग महाविद्यालय के लिए 65 बिघा भूमि आपके प्रयास से ही क्रय की गयी है। कर्मचारियों के क्वार्टरों का निर्माण भी इन्हीं के कार्यकाल में हुआ। आप ही के समय में श्रद्धानन्द सप्ताह के अवसर पर शोभायात्रा हरिद्वार शहर में भव्यतापूर्ण समारोह के साथ निकलना प्रारम्भ हुई है।

यह सब होते हुये भी विश्वविद्यालय की भूमि आप के समय ही बेची गई है। जिसे गुरुकुल का दुर्भाग्य ही कहा जायेगा। यह ओर भी दु:खद घटना है कि जमीन शताब्दी वर्ष में बेची गई। इससे इनकी समस्त उपलब्धियों पर प्रश्नचिन्ह लग जाता है ? समस्त विश्वविद्यालय का वातावरण विषाक्त सा हो गया। इनको त्याग-पत्र देकर जाना पड़ा।

श्री सूर्यदेव

(कुलाधिपति)

श्री सूर्यदेव का जन्म 23 सितम्बर 1930 को हरियाणा के रोहतक जिले में जैतपुर गाँव में हुआ। आपके पिता का नाम प्रह्लाद दत्त था। आपके पिता कट्टर आर्य समाजी कार्यकर्त्ता थे। जाट हाईस्कूल रोहतक से मैट्रिक उत्तीर्ण करने के पश्चात् आपने निःशुल्क गुरुकुल झज्जर में एक वर्ष अध्यापन कार्य किया। आपके पिता का नाम बड़े आदर के साथ लिया जाता है। उसके पश्चात् आपका परिवार दिल्ली में आ बसा। आपके पिताजी दिल्ली में एक ख्याति प्राप्त वैद्य माने जाते थे। श्री सूर्यदेव के कार्यक्षेत्र का प्रारम्भ अध्यापक के रूप में हुआ। आपने दिल्ली में रहते हुये आर्य समाज के कार्यकर्त्ता के रूप में शीघ्र ही, अपने सौम्य स्वभाव के कारण दिल्लीवासियों का मन जीत लिया। आपकी आर्य समाज के प्रति निष्ठा और कर्मठता को देखते हुये आर्य समाज के प्रसिद्ध नेता लाला राम गोपाल शॉल वाले ने आपसे अपनी पुत्री का विवाह सम्पन्न किया। श्री सूर्यदेव दिल्ली के रहने वाले स्थानीय युवक थे। लाला रामगोपाल शॉल वाले सुप्रसिद्ध आर्य नेता थे। जो आगे चलकर सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा के प्रधान बने। वे संसद सदस्य रहे। बाद में संन्यासी हो गये। इस प्रकार आपका अन्तर्जातीय विवाह सम्पन्न हुआ। आप देखते-देखते शीघ्र ही आर्य समाज के कार्यकर्त्ता के रूप में न रहकर दिल्ली के आर्य नेता बन गये। आर्य समाज के अनेक नेताओं और विद्वानों के जीवन चरित्र भी प्रकाशित हुये हैं।

1995 के प्रारम्भ में ही आपको गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय की शिष्ट परिषद् ने विश्वविद्यालय के सर्वोच्च कुलाधिपति पद पर अधिष्ठित किया। आपके कुलाधिपति बनने के पश्चात् विश्वविद्यालय में स्थायित्व आया।

लगभग 5/6 वर्षों से विश्वविद्यालय में एक माँग की जा रही थी कि कांगड़ी में सह शिक्षा प्रारम्भ की जाये। यह माँग आगे चलकर और अधिक जोर पकड़ती चली गयी। यद्यपि विश्वविद्यालय के प्रशासन ने महिलाओं की शिक्षा के लिए स्नातकोत्तर महाविद्यालय परिषद् से बाहर प्रारम्भ कर दिया था। तो भी इस माँग को लेकर विश्वविद्यालय में कुछ वर्षों से तनाव सा बना हुआ था। 9 अप्रैल 1995 को शिष्ट परिषद् का घेराव हरिद्वार के सभी राजनैतिक दल तथा अन्य लोगों ने आकर किया। यह घेराव लगभग रात के साढ़े ग्यारह बजे तक चला। कुलाधिपति श्री सुर्यदेव शिष्ट परिषद् के अध्यक्ष के रूप में उपस्थित थे। वे इस घेराव के सामने नहीं झुके। यद्यपि कुछ लोगों ने शिष्ट परिषद् के मान्य सदस्यों के साथ अभद्र व्यवहार भी किया उस दिन रात को साढ़े ग्यारह बजे कुलाधिपति श्री सूर्यदेव ने यह घोषणा की कि अगले सत्र से सभी विषयों में कन्याओं का स्नातकोत्तर महाविद्यालय इस परिषद् से बाहर द्वितीय परिसर के रूप में प्रारम्भ किया जायेगा तथा कन्या महाविद्यालय के भवनों का निर्माण किया जायेगा। उन्होंने हरिद्वार वासियों से अपेक्षा की कि वे स्थान उपलब्ध करायें। योगी फामेंसी की ओर से स्थान उपलब्ध कराने की घोषणा की गयी पर बाद में वे स्थान उपलब्ध न करा सके। विश्वविद्यालय के प्रशासन ने इस चुनौती को स्वीकार किया और कन्या गुरुकुल के लिए भूमि खरीदी। तथा भवनों तथा निर्माण प्रारम्भ हुआ। सभी भवन बिना किसी सरकारी सहायता के बनाये गये। इसमें दिल्ली के आर्य समाजों का योगदान मुख्य रूप से प्राप्त हुआ। इस समय वह एक संस्था के रूप में विद्यमान है। मान्य कुलाधिपति महोदय विश्वविद्यालय के सभी कार्यक्रमों में पधारते रहे, और विश्वविद्यालय के कार्यों में रुचि लेते रहें।

विश्वविद्यालय की शिष्ट परिषद् ने 1998 में आपको पुनः विश्व विद्यालय के कुलाधिपति पद पर नियुक्त किया। आप इस समय भी विश्व विद्यालय के समस्त विभागों का समय-समय पर निरीक्षण करते हैं तथा विश्व विद्यालय के विकास के लिए यहाँ के अधिकारियों को प्रेरणा देते रहें।

आप इस समय अनेक संस्थाओं एवं ट्रस्टों के अध्यक्ष तथा अन्य पदों पर कार्यरत हैं। इस समय आप माता सतब्रभ्रावां ट्रस्ट के अध्यक्ष हैं और आर्य एजुकेशन ट्रस्ट के प्रधान पद पर सुशोभित हैं। इस समय आप सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा के महामंत्री पद को सुशोभित कर रहे हैं। आर्य समाज का ऐसा कोई भी आन्दोलन नहीं है जिसमें आपने सक्रिय भाग न लिया हो। चाहे वह हिन्दी आन्दोलन हो और चाहे गौ-रक्षा आन्दोलन हो। आप राष्ट्र भाषा हिन्दी के अत्यधिक पक्षधर हैं। आप एक कट्टर समाजी के कट्टर आर्य सपूत है।

पुनश्च गुरुकुलीय इतिहास के इस स्तम्भ के लिखे जाने तक ऐसे महान् व्यक्तित्व के धनी सूर्यदेव जी को दैव ने हमसे असमय ही 16 अक्टूबर 2000 को छीन लिया। उनकी असामयिक मृत्यु का समाचार पाकर गृहमन्त्री लाल कृष्ण अडवानी व साहब सिंह वर्मा श्रदांजलि देने उनके निवास पर दुःखी मन से पहुँचे। गुरुकुल वासियों ने तथा हरिद्वार के गणमान्य नागरिकों ने “वेद मन्दिर” में एक श्रद्धांजलि सभा के द्वारा उन्हें अपनी शोकांजलि समर्पित की।

प्रो॰ वेदप्रकाश शास्त्री

(आचार्य एवं उपकुलपति)

श्री वेद प्रकाश शास्त्री का जन्म 6-6-1945 को श्री फूलचन्द्र विश्नोई के यहाँ सरकण्डा विश्नोई (मुरादाबाद) में हुआ। आपके पिता कट्टर आर्य समाजी थे। उन्होंने अपने गांव में आर्य समाज एवं कन्या पाठशाला की स्थापना की थी। श्री वेद प्रकाश जी की प्रारम्भिक शिक्षा ग्राम में ही हुई थी। उसके पश्चात् इनको गुरुकुल महाविद्यालय ज्वालापुर में प्रविष्ट कराया गया। यहाँ से आपने विद्या भास्कर उपाधि प्राप्त की। पंजाब विश्वविद्यालय से आपने शास्त्री एवं साहित्याचार्य की परीक्षा उत्तीर्ण की। उसके पश्चात् आपने गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय से संस्कृत साहित्य में एम.ए. प्रथम श्रेणी एवं प्रथम स्थान प्राप्त करके उपाधि प्राप्त की। 1 अगस्त 1968 से आप संस्कृत विभाग में प्रवक्ता पद पर नियुक्त होकर निष्ठा पूर्वक कार्य करने लगे। 1985 में आप संस्कृत विभाग में रीडर पद पर आसीन हुए। संस्कृत जगत् में आपकी ख्याति दिन प्रतिदिन बढ़ती गई। नवम्बर 1990 में आपने अखिल भारतीय प्राच्य विद्या सम्मेलन का स्थानीय सचिव के रुप में कार्य करके कीर्तिमान् स्थापित किया।

3 दिसम्बर 1990 को संस्कृत विभाग में आपको प्रो॰ पद पर नियुक्त किया गया। इस समय तक आपके निर्देशन में 25 शोध छात्र पी-एच.डी. की उपाधि प्राप्त कर चुके हैं। अनेक विश्वद्यिालयों की शोध समिति में आप विशेषज्ञ के रूप में आमन्त्रित किये जाते हैं।

31 जनवरी 1996 से आप गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय के आचार्य एवं उपकुलपति पद को सुशोभित कर रहे हैं। आप विश्वविद्यालय के विकास में सदैव तत्पर रहते हैं। आप उत्तर भारत में संस्कृत भाषा में धाराप्रवाह भाषण देने के लिए विख्यात हैं। आपके अब तक 100 (सौ) शोधपत्र पत्रिका में प्रकाशित हो चुके हैं। सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय ने आपको सम्मानित किया है। आपका वैदिक साहित्य तथा संस्कृत साहित्य में गंभीर चिन्तन है। एक विद्या निष्णात सफल एवं यशस्वी अध्यापक के गुण आप में सदैव परिलक्षित होते हैं। गंभीर से गंभीर शास्त्रीय विषय को सरलता के साथ सावधानी पूर्वक विधार्थियों की बुद्धि में आधारित करना आपका सहज स्वभाव है क्योंकि पूर्ण स्वाध्याय और चिन्तन में आप सदा जागरुक रहते हैं।

आर्य समाज का निष्ठापूर्वक कार्य करना आपकी पैतृक प्रेरणा है। सम्पूर्ण आर्य जगत् में आप एक ओंजस्वी प्रचेतस् वाग्मी के रुप में माने जाते हैं। आर्य जनता आपके भाषणों को सुनकर अतीत के यशस्वी वाग्मियों को याद करती है। आपकी भाषण शैली इतनी आकर्षक है कि श्रोतागण सुनते हुए समय का ध्यान रखना भी भूल जाते हैं।

वर्तमान में गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय के आचार्य एंव उपकुलपति पद की गरिमा रखते हुए अहर्निश प्रयत्नशील रहते हैं कि गुरुकुल का अतीत पुनः वर्तमान बनकर प्रकाशित हो तथा समग्र विश्व गुरुकुलीय शिक्षा पद्धति को सर्वश्रेष्ठ मानकर उसे सवीकार करते हुए हर्ष पूर्वक गौरवान्ति हो सकें। यह हर्ष का विषय है कि गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय की सेवा करते हुए आपको 33 वर्ष का अनुभव प्राप्त है।

पण्डित वेदव्रत शर्मा

(मुख्याधिष्ठाता)

श्री वेदव्रत शर्मा भारत सरकार में संचार एवं दूरदर्शन विभाग में कार्यरत रहें हैं। आपका परिवार पंजाब से आकर दिल्ली में बस गया था। आप ने घोर परिश्रम करके अपने परिवार को उन्नति के शिखर पर पहुँचाया। आप बचपन से ही आर्य समाज के सक्रिय कार्यकर्त्ता रहे हैं। आप अपने परिश्रम के बलबूते पर ही 15 हनुमान रोड, आर्य समाज जैसी प्रतिष्ठित आर्य समाज के प्रधान एवं मन्त्री रहें है। आप के समय में आर्य समाज ने पर्याप्त उन्नति की है। आप अपनी परिश्रम एवं सेवा से दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा के भी पदाधिकारी चुने जाते रहे हैं।

आर्य समाज के प्रचार एवं प्रसार में आपकी अटूट श्रद्धा है। स्वामी दयानन्द सरस्वती के मन्तव्यों में आपकी गहरी निष्ठा है। आर्य समाज के सिद्धांतों के साथ आप कभी भी समझौता नहीं करते हैं।

पण्डित वेदव्रत शर्मा तीन (3) वर्ष पूर्व गुरुकुल कांगड़ी के मुख्याधिष्ठाता पद पर नियुक्त हुये। आप ने अपने समय में गुरुकुल में आर्थिक सुधार एवं प्रशासनिक सुधार किये। आर्य समाज के प्रकाशन में आपकी विशेष रुचि रही है।

सार्वदेशिक सभा के भी आप महामन्त्री पद पर नियुक्त किये गये। आप आर्य समाज एवं अन्य संगठनों के सदस्य एवं अधिकारी रहे हैं।

पण्डित हरवंश लाल शर्मा

वर्तमान कुलाधिपति

पण्डित हरवंश लाल शर्मा को गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय की शिष्टपरिषद् ने कुलाधिपति पद पर प्रतिष्ठापित किया। आप आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के प्रधान है। श्री शर्मा जी श्रेष्ठ आर्य हैं धनी होने के साथ-साथ बहुत बड़े दानी है, उच्च चरित्र वाले उदात्त भावनाओं के महान् व्यक्तित्व के मालिक हैं। इसके साथ ही यह बहुत मधुरभाषी सदाचारी तथा कर्मठ कार्यकर्त्ता हैं। इनका हर पल आर्य समाज के लिये है, ये अनेक संस्थाओं से सम्बन्धित हैं। श्री वीरेन्द्र जी के देहावसान के पश्चात् 3 जनवरी 1994 को आप को सर्वसम्मति से आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब का प्रधान निर्वाचित कर लिया गया था और तब से आप लगातार सर्वसम्पति से सभा प्रधाान चुने जाते आ रहे हैं। आप गुरु विरजानन्द स्मारक समिति ट्रस्ट गुरुकुल करतारपुर के भी गत 16 वर्षों से प्रधान चले आ रहे हैं और इनके कार्यकाल में इस स्मारक ने अभूतपूर्व उन्नति की है। आप सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा नई दिल्ली के भी उपप्रधान है। पंजाब के अतिरिक्त दिल्ली, हरियाणा, हिमाचल, उत्तरप्रदेश, महाराष्ट्र, तथा अन्य प्रान्तों के आर्यबन्धु इन से भली-भांति परिचित हैं। आप गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय की वित्त समिति के सदस्य और सीनेट के भी सदस्य हैं। आप आर्य सी.सै. स्कूल बस्ती गुजां जालन्धर के पिछले 22 वर्षों से प्रधान चले आ रहे हें। आप लन्दन आर्य समाज में जाकर वैदिक नाद बजा चुके हैं और भी कई देशों में पेरिस, हालैण्ड, स्वीट्जरलैण्ड, वेल्ज और स्काटलैण्ड में अपनी धर्मपत्नी श्रीमती राजकुमारी सहित घूमकर आए हैं।

इनका जन्म 2 फरवरी 1920 को रुड़का कलां (जिला-जालन्धर) में हुआ था। इन के पिता जी पं० कर्मचन्द शर्मा और माता श्रीमती लालदेवी दोनों बड़े धार्मिक विचारों के थे। इनके विचारों का प्रभाव श्री शर्मा जी पर भी पड़ा। इनके पिता जी कराची आर्य समाज के प्रधान भी रहे हैं। उस समय श्री कर्मचन्द जी के तीनों भाई पं० किशन चन्द जी, पं० मुरारी लाल जी, पं० मोहन लाल जी कराची में रहते थे, इनके घर को आर्य घर कहा जाता था जो भी आर्य विद्वान् व संन्यासी कराची में आते थे वह इनके यहां ही रहते थे। इनका यज्ञोपवीत संस्कार आर्य समाज के प्रसिद्ध विद्वान् और (यज्ञ रूप प्रभु) हमारे भाव उज्ज्वल कीजिये) भजन के रचयिता पं० लोकनाथ तर्क वाचस्पति जी ने किया था, जिनका पौत्र राकेश शर्मा पहले राकेट में अंतरिक्ष में गया था। इनका विवाह राजकुमारी शर्मा से ललतो कलां लुधियाना में हुआ था। श्री शर्मा जी ने रायल एयरफोर्स मं 10 वर्ष तक नौकरी करने के पश्चात् नौकरी छोड़ दी। जालन्धर में आकर अपना व्यापार शुरू किया। अपनी ईमानदारी और परिश्रम के कारण आप शीघ्र ही उद्योगपति बन गये। आप का पूरा माल विदेश में जाता है। आपका समस्त परिवार आर्य समाज के सत्संगों में बड़ी रुचि से भाग लेता है।

आर्य समाज द्वारा संचालित अनेक गुरुकुलों तथा अन्य शिक्षण संस्थाओं को वर्षों में लाखों रुपये दान देते रहते हैं। इसलिए आप को आर्यसमाज का भामाशाह कहा जाता है। गुरुकुल कांगड़ी की पुण्य भूमि की रक्षा करने के लिए कई लाख रुपये व्यय करके बाढ़ से बचाने का सफल प्रयास किया है। वहाँ के भवनों का पुनरुद्धार किया है।

डॉ॰ राजकुमार रावत

(व्यवसायाध्यक्ष फार्मेसी)

डॉ॰ राजकुमार का जन्म 8 फरवरी 1946 को सहारनपुर जिले के झाड़ौदा ग्राम में ठाकुर मुकुन्द सिंह जी के घर हुआ। श्री मुकुन्द सिंह एक स्वतन्त्रता संग्राम सेनानी थे। अनेक बार उनको स्वतन्त्रता आन्दोलन में कारावास हुआ। स्वतन्त्रता प्राप्त हो जाने के पश्चात् साम्यवादी विचारधारा के प्रचारक रहे। अनेक शूगर मिलों में मजदूरों के लिए संघर्ष करते रहे, उनकी समाज सेवा को देखकर ग्रामीण अंचल में एक मुहावरा प्रचलित हुआ कि "गिरी पड़ी का यार मुकुन्दा" ऐसे समाज सेवी के घर में बालक राजकुमार ने आंखें खोली। आप भी पिता की तरह एक ओजस्वी एवं छात्रनेता के रूप में प्रसिद्ध थे। डॉ॰ राजकुमार रावत ने संघर्ष किया। एक बार तो आपने आमरण अनशन भी किया था।

डॉ॰ राजकुमार रावत ने माध्यमिक शिक्षा ग्रहण करने के पश्चात् गुरुकुल कांगड़ी आयुर्वेद महाविद्यालय में प्रवेश लिया। यद्यपि उस समय आयुर्वेदालंकार की उपाधि देनी बन्द हो गयी थी और आयुर्वेदाचार्य (बी.ए.एम.एस.) कानपुर विश्वविद्यालय से 1973 में उपाधि प्राप्त की थी। गुरुकुल विश्वविद्यालय से ही आपने द्विवर्षीय (पर्सनल मैंनेजमैण्ट एण्ड इंडस्ट्रीयल रिलेशन) में डिप्लोमा भी किया है। आयुर्वेद स्नातक होने के पश्चात् स्वामी कल्याण देव स्टेट आयुवैदिक कॉलेज मुजफ्फरनगर में एक वर्ष तक प्राध्यापक पद पर अध्यापन कार्य किया। उसके पश्चात् आप अपनी मातृ संस्था गुरुकुल कांगड़ी फार्मेसी में विभिन्न पदों पर टैक्निकल आफीसर- उत्पादन प्रबन्धक तथा उपमहाप्रबन्धक पदों पर कार्य करते हुए। 11 मार्च उन्नीस सौ इक्यानवें में व्यवसायाध्यक्ष पद पर नियुक्ति की गयी।

डॉ॰ राजकुमार रावत के कार्य काल में गुरुकुल कांगड़ी फार्मेसी में प्रबन्ध तन्त्र व्यवस्थित रूप में कार्य करता रहा है। इनकी कार्यकुशलता का यही प्रमाण है कि इनके कार्यकाल में कई वर्षो से फार्मेसी में कोई हड़ताल नहीं हुई है। सत्तर के दशक और अस्सी के दशक में फार्मेसी में अनेक बार हड़तालें हुई। परन्तु इन्होंने धीरे-धीरे फार्मेसी में शान्त वातावरण स्थापित किया। यही इनकी अच्छी कार्यशैली की सूचक है। डॉ॰ राजकुमार रावत से यह अपेक्षा की जाती है कि शुद्ध आयुर्वेदीय चिकित्सा फार्मेसी की ओर पुनः प्रारम्भ करने में समर्थ होगें।

डॉ॰ रावत को निम्नलिखित अवार्ड प्राप्त हुए है :-

1. त्रिपुरा राज्य राजर्षि पर्यावरण समिति- इन्वार्यमैंटल विज्ञान वर्ष 1996 ई॰
2 सहारनपुर- पत्रकार परिषद्- मीडिया एवार्ड 1996 ई॰ में सम्मानित।
3. उत्तर-प्रदेश- श्रमजीवी पत्रकार परिषद् आयुर्वेद के सत्र में 1999 में सम्मानित।
4. उद्योग रत्न से वर्ष 2800 में सम्मानित किया गया।

डॉ॰ दीनानाथ शर्मा

(सहायक मुख्याधिष्ठाता)

डॉ॰ दीनानाथ का जन्म 27 जुलाई 1950 में गुरूकुल कांगड़ी में हुआ। इनके पिता श्री रामेश्वर शर्मा गुरुकुल की सेवा में ही थे। आप ने गुरुकुल कांगड़ी में ही शिक्षा ग्रहण की। हिन्दी साहित्य और दर्शन शास्त्र में एम.ए. करने के उपरान्त पी-एच.डी. की उपाधि ग्रहण की। आप हिन्दी पत्रकारिता में पी.जी.डिप्लोमा उत्तीर्ण करके अनेक सामाजिक कार्यों में भाग लेते रहे हैं।

गुरूकुल कांगड़ी के विद्यालय विभाग में आपने अध्यापन कार्य प्रारम्भ किया। सन् 1979 ई॰ में विद्यालय विभाग में मुख्याध्यापक पद पर नियुक्त किये गये। 1987 ई॰ में सहायक मुख्याधिष्ठाता पद पर अस्थायी रूप में आप की नियुक्ति की गयी। सन् 1995 ई॰ में सहायक मुख्याधिष्ठाता पद पर स्थायी रूप में नियुक्त हुए। इस समय वर्तमान में आप दोनों पदों पर ही सुचारु रूप से कार्य कर रहे हैं।

गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय की शिष्ट परिषद् के स्नातकों के प्रतिनिधि के रूप में सदस्य भी रहे हैं। इस समय आप माध्यमिक शिक्षा परिषद् उत्तर-प्रदेश की पाठ्यक्रम समिति के मान्य सदस्य है।

गुरुकुल कांगड़ी का सहायक मुख्याधिष्ठाता पद बड़ा ही महत्वपूर्ण पद माना जाता है। इस पद पर बड़े विशिष्ट व्यक्तित्व वाले विद्वान् सुशोभित होते रहे हैं। एक प्रकार से सहायक मुख्याधिष्ठाता गुरुकुल की समस्त सम्पत्ति का, आर्य विद्या सभा के माध्यम से सम्पूर्ण उत्तरदायित्वों का निर्वहण करता है। समस्त शैक्षणिक तथा प्राशासनिक गतिविधियों का उत्तरदायित्व सहायक मुख्याधिष्ठाता का ही होता है। आपके कार्यकाल में छात्रों की संख्या बढ़ी है, आर्थिक दृष्टि से भी गुरूकुल की उन्नति हुई है।

गुरुकुल कांगड़ी की स्थापना के शताब्दी वर्ष में आर्य विद्या सभा के प्रदत्त अधिकार एवं आदेश से जो गुरूकुल कांगड़ी की 144 बीघा भूमि का विक्रय किया गया है, उससे गुरुकुल कांगड़ी के सभी कर्मचारी स्तब्ध रह गये हैं। आप से यह अपेक्षा की जाती है कि अपने पूज्य पिता की परम्परा का आदर करते हुए भविष्य में गुरुकुल कांगड़ी की भूमि को बेचने नहीं देगें।

प्रोफेसर स्वतन्त्र कुमार

कुलपति-वर्तमान

प्रो0 स्वतन्त्र कुमार का जन्म पंजाब प्रान्त के पठानकोट में 1 मई 1946 ई0 को ''श्री शान्ति स्वरूप मुरगई'' के आर्य परिवार में हुआ। आप के पिता श्री शान्तिस्वरूपजी एक कट्टर आर्य समाजी एवं सौम्य स्वभाव के व्यक्ति हैं। श्री स्वतन्त्र कुमार आर्य समाज परिवार में उत्पन्न होने के कारण प्रारम्भ से ही आर्य समाज के सामाजिक कार्यों में बढ़-चढ़कर भाग लेते थे। आप प्रारम्भिक शिक्षा से ही एक प्रतिभाशाली छात्र के रूप में जाने-जाते रहे हैं। आर्य समाज के कार्यकर्त्ता के रूप में शीघ्र ही आप की प्रसिद्धि पंजाब के अनेक शहरों में होने लगी। आप एक ऐसे विनम्र व्यक्तित्व के धनी हैं कि जिस समय आर्य समाज अथवा आर्य प्रतिनिधि सभा, पंजाब के कार्यक्रमों में भाग लेते हैं तो 'ओ३म् ध्वज को उठाकर छात्र एवं सामान्य जनता के मध्य में ऐसे चलते हैं कि जैसे एक आर्य समाज का सामान्य कार्यकर्त्ता भाग ले रहा हो। इसलिए आपकी कर्मठता, सेवा भाव के कारण शीघ्र ही पंजाब प्रान्त के आर्य नेता के रूप में प्रतिष्ठित हो गए।

श्री स्वतन्त्र कुमार अनेक आर्य समाज एवं अनेक संस्थाओं के अधिकारी तथा सदस्य निर्वाचित हुए। जिनमें आर्य समाज मेन बाजार पठानकोट, केन्द्रीय आर्य सभा, पठानकोट, जिला-गुरुदासपुर के क्रमशः मन्त्री और प्रधान पदों पर निर्वाचित हुए। आप ने अपने कार्यकाल में आर्य समाज की गतिविधियों को पर्याप्त रूप में बढ़ाया। अनेक वृहद् यज्ञों का आयोजन करके समस्त पंजाब में आर्य समाज के कार्यों को अत्यधिक रूप में न केवल बढ़ाया, अपितु नयी गति प्रदान की।

आप बहुत शीघ्र ही आर्य समाज में एक प्रतिष्ठित एवं यशस्वी आर्य नेता के रूप में विख्यात हो गए। इसलिए आप को आर्य प्रतिनिधि सभा, पंजाब के महामन्त्री पद पर निर्वाचित किया गया। आप को आर्य समाज के शीर्षस्थ नेताओं, जिनमें श्री वीरेन्द्र जी, स्वामी सर्वानन्द जी दीनानगर, स्वामी आनन्द बोध सरस्वती, श्री ओम प्रकाशजी त्यागी और पं0 हरवंश लाल शर्मा के साथ कार्य करने का सौभाग्य प्राप्त हुआ है।

प्रो0 स्वतन्त्र कुमार ने अर्थशास्त्र से एम.ए. करने के पश्चात् सन् 1973 से 1997 तक अर्थशास्त्र प्रवक्ता के रूप में स्वामी स्वतन्त्रतानन्द मैमोरियमल कॉलेज, दीनानगर (पंजाब) में अध्यापन कार्य सफलता पूर्वक किया। आप इस अवधि में अपने कॉलेज की अन्य अनेक शिक्षण गतिविधियों में जिनमें राष्ट्रीय सेवा योजना में कार्यक्रम अधिकारी युवा समन्वयक गुरुनानक देव विश्वविद्यालय, अमृतसर की अनेक समितियों के सदस्य के रूप में सक्रिय भाग लिया।

आपकी कार्यक्षमता एवं प्रशासनिक योग्यता के कारण 7 मार्च, 1997 को श्रीमती रामप्यारी अग्रवाल आदर्श भारतीय महाविद्यालय की प्रबन्ध समिति ने प्रधानाचार्य पद पर नियुक्त किया। उस समय इस महाविद्यालय की आर्थिक स्थिति अच्छी नहीं थी। ज्योंहि अपने हाथ में इस विद्यालय का प्रबन्ध आप ने लिया, इस महाविद्यालय को उन्नति के ऊँचे शिखर पर प्रतिष्ठित किया। आपके कार्यकाल में

अनेक आधुनिक विषयों का पठन-पाठन प्रारम्भ हुआ। जिनमें एम.कॉम, एम.ए. अंग्रेजी, एम.ए. पंजाबी, पी.जी. डी.सी.ए. पी.जी. डिप्लोमा इन कॉमर्स, एम.एस-सी कम्प्यूटर साईंस, एम.एस-सी. आई.टी., बी. एस-सी. आई.टी, बी.सी.ए, टैक्स प्रोसिजर एण्ड प्रैक्टिस आदि विषय हैं। आप ने इस कॉलेंज की उन्नति करते हुए महाविद्यालय के विस्तार हेतु भूमि क्रय करके छात्राओं के लिए छात्रावास का निर्माण कराया। महाविद्यालय में ही 16 वातानुकूलित कमरों से कम्प्यूटर विभाग का संचालन सुचारु रूप से करते हुए इसी महाविद्यालय के पुस्तकालय हेतु 16 लाख रुपये की विशाल धनराशि विभिन्न संस्थाओं से एकत्रित करके इस महाविद्यालय को उन्नति के ऊँचे शिखर पर पहुंचाया।

जिस समय गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय का शताब्दी वर्ष प्रारम्भ हुआ, इस विश्वविद्यालय में अनेक कारणों से वातावरण विषाक्त सा हो गया था। अनेक महीनों तक कुलपति पद रिक्त पड़ा रहा। आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के प्रधान एवं कुलाधिपति पं0 हरवंश लाल शर्मा तथा सभा के अन्य अधिकारीगण ऐसे कुशल प्रशासक को ढूंढ़ रहे थे, जिसको गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय का कुलपति बनाया जा सके। शिष्ट परिषद के सदस्यों का ध्यान प्रो0 स्वतन्त्र कुमार प्रधानाचार्य की ओर गया। आपने इस प्रस्ताव को यह कहकर मनाकर दिया कि मेरी आवश्यकता इस महाविद्यालय को अधिक है। अन्त में आप को यह कहकर मनाया कि गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय आर्य समाज की एक प्रतिष्ठित संस्था है। अत: आपकी यहाँ पर आवश्यकता अधिक है।

आपको इस विश्वविद्यालय के परिद्रष्टा श्री सदानन्द (अवकाश प्राप्त आई.ए.एस.) ने. दि0 18 जून, 2002 को गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय के कुलपति पद पर नियुक्ति किया। आपसे यह आशा की जाती है कि आपके कुलपतित्व काल में विश्वविद्यालय उन्नति करेगा।

डॉ॰ महावीर

कुलसचिव (वर्तमान)

डॉ॰ महावीर का जन्म महाराष्ट्र राज्य के भण्डारा जनपदान्तर्गत पलसगांव (सोनका) नामक एक ग्राम में धर्मपरायण पिता श्री ताराचन्द आर्य एवं सुतवत्सला माता श्रीमती त्रिवेणी के घर में 1 अक्टूबर 1951 को हुआ। प्रारम्भिक शिक्षा मराठी विद्यालय में प्राप्त करने के पश्चात् गुरुकुल झज्जर (हरियाणा) से सर्वाधिक अंक प्राप्त कर मध्यमा, शास्त्री, व्याकरणाचार्य परीक्षायें उत्तीर्ण की। गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय से संस्कृत एवं वेद में एम.ए. तथा आगरा विश्वविद्यालय से हिन्दी में एम.ए. परीक्षा उत्तीर्ण की। मेरठ विश्वविद्यालय मेरठ से **"वाल्मीकि रामायण में रस विमर्श"** विषय पर पी-एच.डी. तथा **"वैदिक संहिताओं में अर्थ व्यवस्था"** विषय पर डी.लिट्. की सर्वोच्च शोधोपाधि प्राप्त की।

21 वर्ष से भी कम आयु में उपाधि महाविद्यालय पीलीभीत में संस्कृत विभागाध्यक्ष के रूप में अध्यापन कार्य प्रारम्भ किया। फरवरी 76 से गुरुकुल विश्वविद्यालय में संस्कृत विभाग में रीडर तत्पश्चात् श्रद्धानन्द वैदिक शोध संस्थान में निदेशक एवं प्रोफेसर तदनन्तर संस्कृत विभाग में प्रोफेसर पद पर अभिषिक्त हुए। गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय की प्रख्यात शोध शोधार्थी पी-एच.डी. शोधोपाधि प्राप्त कर चुके हैं। 10 शोध छात्र शोध कार्य कर रहे हैं। अनेक राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय शोध-सम्मेलनों में विश्वविद्यालय का प्रतिनिधित्व किया है। अनेक विश्वविद्यालयों की शोध, पाठ्यक्रम समितियों में विषय विशेषज्ञ हैं। आर्यसमाज के क्षेत्र में उच्च कोटि के वक्ता के रूप में आपकी सर्वत्र ख्याति है। अनेक सामाजिक, शैक्षिक संस्थाओं से जुड़े हुए हैं।

आपने 20 मई 2000 को **शताब्दी वर्ष** में गुरुकुल कागड़ी विश्वविद्यालय के कुलसचिव पद को सुशोभित किया है। व्यवहार, कुशल, मृदुभाषी, वैदिक विद्वान, कुलसचिव से संस्था को बड़ी आशा है।

* * *

सन्दर्भ संकेत

1. स्वामी श्रद्धानन्द: समग्र मूल्यांकन, पृष्ठ 28
2. स्वामी श्रद्धानन्द: समग्र मूल्यांकन, पृष्ठ 90
3. स्वामी श्रद्धानन्द: समग्र मूल्यांकन, पृष्ठ 99
4. स्वामी श्रद्धानन्द: समग्र मूल्यांकन, पृष्ठ 114
5. डॉ॰ सत्यव्रत सिद्धान्तालंकार व्यक्तित्व एवं कृतित्व पृ॰ 140

दशम-अध्याय

(गुरुकुल के विशिष्ट एवं मुख्यातिथिगण भाषणों का सार)

(महात्मा गाँधी "राष्ट्रपिता")

(सन् 1913)

मेरा प्यारा गुरुकुल

मैं आर्य समाज का बहुत आभारी हूँ मुझे उसके आन्दोलन से कई बार प्रोत्साहन मिला है। मैंने उसके अनुयायियों में बहुत त्यागवृत्ति की भावना देखी है। भारत में अपने दौरे मे मैं बहुत से आर्य समाजियों के सम्पर्क में आया हूँ। वे देश के लिए अच्छा काम कर रहें हैं। मैं आप के सम्पर्क में आ सका हूँ। जिसके लिए मैं महात्मा जी का आभार मानता हूँ मैं आप को खुलेदिल से यह बता देना चाहता हूँ कि मैं सनातनी हूँ मुझे हिन्दू धर्म से पूरा सन्तोष है। वह धर्म कितना विशाल है कि उसमें हर तरह के विश्वासों का आश्रय मिलता है। आर्य समाज़ी सिक्ख और ब्रह्म समाजी भले ही अपने को हिन्दुओं से अलग समझना चाहें, किन्तु मुझे तो इसमें शक नहीं कि आगे चलकर वे सब हिन्दू धर्म में मिल जायेंगे और उसी से शान्ति बनायेंगे। दूसरे सब मनुष्य की बनाई हुई संस्थाओं की तरह हिन्दू धर्म में भी कमियाँ और दोष है। सुधार के लिए कोई सेवक प्रयत्न करना चाहे, तो उसके लिए यह बड़ा क्षेत्र है। किन्तु हिन्दू धर्म से अलग होने के लिए कोई कारण नहीं है।

यूरोप में फैले हुए ऐश-आराम से मालूम होता है कि आज की संस्कृति में राजसी और तामसी सत्ता का जोर है। जबकि पुरानी आर्य संस्कृति में सात्विक सत्ता का जोर है। आर्वाचीन संस्कृति मुख्यतः भोग प्रधान है। हमारी संस्कृति मुख्यतः धर्म प्रधान है। आज की संस्कृति में जड प्रकृति के नियमों की खोज होती है। और मनुष्य की बुद्धि शक्ति चीजें पैदा करने के साधनों और नाश करने के हथियारों की खोज और बनावट में काम आती है, जबकि हमारी संस्कृति की प्रवृत्ति मुख्यतः नियम ढूंढने की है। हमारे शास्त्र साफ तौर पर बताते है कि सच्चे जीवन के लिए सत्य का उचित पालन, ब्रह्मचर्य, अहिंसा दूसरे का धन लेने में संयम और दैनिक जरूरतों की चीजों के सिवा दूसरी चीजों का अपरिग्रह अनवार्य है। इसके बिना दिव्य तत्वों का ज्ञान संभव नहीं। हमारी संस्कृति स्पष्ट कहती है कि जिसमें अहिंसा धर्म का जिसका क्रियात्मक रूप शुद्ध प्रेम और दया है, पूर्ण विकास हुआ है, उसे सारी दुनिया प्रणाम करती है।

मैं दोबारा गुरुकुल में आ चुका हूँ आर्य समाजी भाईयों के साथ कुछ महत्वपूर्ण मतभेद होने पर भी उनके लिए मेरे दिल में पक्षपात है। आर्य समाज के काम का सर्वोत्कृष्ट फल गुरुकुल की स्थापना हुई और उसे चलाने में दिखता है उसके प्रभाव मुंशीराम जी की उत्साह बढ़ाने वाली मौजूदगी के कारण है फिर भी यह सच्ची राष्ट्रीय स्वतन्त्र और स्वाधीन संस्था है। उसे सरकार की सहायता या सहानुभूति जरा भी नहीं मिलती। उसका खर्च कुछ भाग्यवान् आदमियों के मिलने वाले रुपयों से नहीं चलता बल्कि बहुत से ऐसे गरीबों के दिये हुए दान से चलता है जो हर साल कांगड़ी की यात्रा करने का निश्चय किए हुए है और जो खुशी से इस राष्ट्रीय कॉलेज के गुजारे के लिए अपना हिस्सा देते है। ऐसी बड़ी संस्था के जीवन में चौदह वर्ष तो कुछ भी नहीं है। यह अभी देखना है कि पिछले दो तीन साल में निकले हुए विद्यार्थी

क्या कर सकते है जनता किसी मनुष्य या संस्था की कीमत उसके बताए हुए नतीजे से लगाती है दूसरी किसी तरह की कीमत लगाना संभव भी नहीं। जो भूल हो जाती है उनका यह ख्याल नहीं करती। यह कड़ी से कड़ी परीक्षा लेने वाली है गुरुकुल और दूसरी सार्वजनिक संस्थाओं की कीमत अन्त में जो जनता ही तय करती है। इसीलिए जो विद्यार्थी कॉलेज छोड़कर गए है और संसार समुद्र में कूद पड़े है, उन पर बड़ी जिम्मेदारी है। उन्हें सावधान करना चाहिए। अभी तो इस बड़े भारी प्रयोग का भला चाहने वालो को सृष्टि के इस अटल नियम से संतुष्ट होना चाहिए कि जैसा पेड़ होता है वैसा ही फल होता है। यह पेड़ तो सुन्दर दिखाई देता है। उसे पालने पोषणे वाली उद्दात्त आत्मा है, तो फिर इसकी क्या चिन्ता कि फल कैसा आयेगा?

क्योंकि मैं गुरुकुल को चाहता हूँ, इसीलिए संस्था की प्रबन्धकारिणी समिति को एक दो बातें सुझाने की इजाजत लेता हूँ। गुरुकुल के विद्यार्थी अपने पर भरोसा रखने वाले और अपना गुजर चला सकने वाले बने, इसके लिए उन्हें पक्की औद्योगिक शिक्षा मिलने की जरूरत है। मुझे मालूम है कि हमारे देश में 85 फीसदी जनता किसान है और 10 फीसदीं लोग किसानों की जरूरतें पूरी करने के काम में लगे हुए है, इसीलिए हर विद्यार्थी की पढ़ाई में खेती और बुनाई का मामूली व्यावहारिक ज्ञान शामिल होना चाहिए औजारों का ठीक उपयोग जानने से, लकड़ी को सीधी फाड़ना सीखने से और साहुल को कपड़े लगाकर न गिरने वाली दीवार चुनना जानने से वे कुछ खोयेंगे नहीं। इस तरह सुसज्जित जवान दुनियाँ में अपना रास्ता बनाने में अपने को कभी लाचार नहीं समझेंगे और बेरोजगार नहीं रहेगे। इसके सिवा स्वास्थ्य और सफाई के नियमों और बच्चों के पालन-पोषण का ज्ञान भी गुरुकुल के विद्यार्थियों को अवश्य देना चाहिए। मेले के मौके पर सफाई की जो व्यवस्था की जानी चाहिए थी, उसमें बहुत दोष थे। हर साल आने वाले यात्रियों की सफाई के बारे में व्यावहारिक ज्ञान देने का यह एक सुनहरा मौका होता है इसे आप हाथ से जाने देते है, तो यह देखकर मुझे बड़ा दुःख होता है। असल में इस काम की शुरूआत विद्यार्थी से ही होनी चाहिए। फिर भी हर साल उत्सव या जलसे के मौके पर व्यवस्थापकों के पास सफाई के बारे में व्यावहारिक ज्ञान दें सकने वाली तीन सौ शिक्षक तैयार रहेंगे। अन्त में माता-पिता और प्रबन्धकारिणी समिति को चाहिए कि वे विद्यार्थियों को अंग्रेजी पोशाक की या आज कल की मौज शौक की बन्दरों की सी नकल करना सिखा कर न बिगाडें। यह चीज आगे चलकर उनके जीवन में रूकावट डालने वाली सिद्ध होगी, साथ ही ये सब बातें ब्रह्मचर्य की दुश्मन है। हमारे सामने जो दुष्ट लालसा खड़ी है। वे विद्यार्थियों में भी बसी हुई है और उन्हें भी उसके विरुद्ध लड़ना है इसीलिए हमें उनके प्रलोभनों को बढ़ाकर उनकी लड़ाई को ज्यादा मुश्किल नहीं बनाना चाहिए।

पंडित मदन मोहन मालवीय

(सन् 1923)

शिक्षा और स्वभाषा

वर्तमान प्रणाली का यह एक बहुत बड़ा दोष है। यह एक दु:ख का विषय है कि आजकल विद्यार्थी विद्यालय तथा विश्वविद्यालयों में 20 वर्षो तक शिक्षा प्राप्त करने के पश्चात् भी वह अपना, अपनी पत्नी, बच्चों और माता-पिता का जीवन निर्वाह करने के लिए पर्याप्त धन अर्जित नहीं कर पाते है। मौलिक रूप में यह पद्धति गलत है और इसे बदलने की आवश्यकता है। पूरा वातावरण ही बदल जाना चाहिए। बच्चे की शिक्षा माता-पिता के गर्भ में होने के समय से ही शुरू हो जाती है। माता-पिता बनने से पूर्व ही नवयुवतियों को पूर्ण शिक्षित कर देना चाहिए। हमें इंग्लैंड से सीख लेना चाहिए जहाँ माता-पिता तथा पड़ोसियों को भी शिक्षित किया जाता है। जहाँ प्रत्येक व्यक्ति शिक्षा का लाभ उठाता है प्रत्येक दिशा में शैक्षिणक संस्थाओं तथा उनके कार्यक्रमों का स्वागत होता है। प्रत्येक व्यक्ति के हाथ में समाचार पत्र और पुस्तकें होती है। शिक्षा जीवन का आवश्यक अंग है। अंग्रेजों के बच्चों को नर्सरी विद्यालय प्राइमरी विद्यालय, उच्चतर विद्यालय तथा यांत्रिक विद्यालय में अच्छी प्रकार से शिक्षा दी जाती है। अन्त में जब वह विद्यालय छोड़ता है तो वह अच्छा व्यवसाय पा लेता है। यदि वह विश्वविद्यालय में जाता है तो वह वहाँ उत्साह एवं इच्छानुसार शिक्षा प्राप्त करता है इन्हीं परिस्थितियों में जब हम भारतीय छात्र की शिक्षा प्राप्त करने का अच्छा अवसर देते है तो हम पाते है वह किसी भी देश के युवक से पीछे नहीं रहता है।

वर्तमान में भारतीय छात्र के लिए अनन्त कठिनाइयाँ है लेकिन में यह कहना चाहता हूँ कि उनमें से बड़ी कठिनाई उनकी शिक्षा का माध्यम उनकी मातृभाषा न होकर विदेशी भाषा का होना है। विश्व का कोई भी देश ऐसा नहीं जहाँ पर जन सम्पर्क की भाषा विदेशी हो, हमारे एंग्लों वर्नाकुलर विद्यालयों तथा उच्चतम माध्यमिक विद्यालयों में सामान्य रूप से शिक्षा का माध्यम अंग्रेजी है। बालक जब मात्र सात साल का होता है तभी से वह अंग्रेजी सीखना प्रारम्भ कर देता है। वह अपनी मातृभाषा को द्वितीय स्थान देता है। वह अपनी मातृभाषा को निम्न श्रेणी की मानकर उसकी ओर समुचित ध्यान नहीं देता है। परिणाम यह होता है कि छात्र विद्यालय में प्रवेश से लेकर छोड़ने के समय तक उस कठिन भाषा को सीखने तथा समझने में ही लगा देता है जैसा कि ग्लेड स्टोन ने एक बार कहा था कि विद्यार्थी इस कठिन भाषा को सीखने के लिए पागल भी हो जाता है। यह अनुमान लगांना कठिन है कि भारतीय व्यक्तियों का इसमें कितना समय श्रम और धन का अपव्यय होता है। यही कठिनाइयाँ महाविद्यालयों में आती है। आज कोई भी विद्वान् यह कह सकता है कि बहुत ही कम ऐसे छात्र हैं जो सही अंग्रेजी का प्रयोग करने की क्षमता रखते है। मेरा अभिप्राय उन लोगों का अपमान करना नहीं है जो यह कहते है कि वे भी अंग्रेजी के समान जिनकी मातृभाषा अंग्रेजी है, शुद्ध रूप से अंग्रेजी बोल सकते है।

मैं अंग्रेजी भाषा का महत्व कम नहीं आंकता हूँ। मैं स्पष्ट रूप से यह स्वीकार करता हूँ कि इस

भाषा का ज्ञान हमारे बहुमुखी विकास के लिए बहुत ही महत्वपूर्ण है। समस्त भारत के प्राशासनिक कार्यों में इस भाषा का व्यवहार होता है। इस भाषा ने राष्ट्रीय भावनाओं को सशक्त बनाने में भी महत्वपूर्ण योगदान किया है। मैं स्वीकार करता हूँ कि यह विश्व की भाषा हैं। मैं प्रत्येक सभ्य भारतीय व्यक्ति को यह सलाह दूंगा कि जो विश्वविद्यालय तथा विदेश में उच्च शिक्षा प्राप्त करना चाहते है, उन्हें इस भाषा के साथ जर्मन और फ्रेंच भाषा का ज्ञान होना चाहिए। लेकिन हमें अंग्रेजी भाषा को द्वितीय स्थान देना चाहिए।

यह कहना उचित है कि भारत में जो शिक्षा प्रणाली प्रचलित है वह हमारे राष्ट्र तथा हमारी संस्कृति की आवश्यकताओं के लिए अनुपयुक्त है हम अन्धाधुंध रूप में एक ऐसी प्रणाली का अनुसरण कर रहें है जो दूसरों के लिए बनायी गयी थी, और जिसे उन्होंने भी युगों पूर्व तिरस्कृत कर दिया था। इसका उदाहरण हमें महिलाओं की शिक्षा में स्पष्ट रूप में मिलता है हम लड़कियों को वे ही कार्य करने के लिए बाध्य करते है जो नवयुवकों के लिए बनाये गये है। हम इस बात की चिन्ता नहीं करते है कि इस प्रकार की शिक्षा का क्या परिणाम निकलेगा।

पुरुषों की शिक्षा से स्त्री शिक्षा का महत्व अधिक है। वे भारत की आगामी पीढ़ियों की माताएं है। वे भविष्य के राजनीतिज्ञों, वैज्ञानिकों, दार्शनिकों व्यापारियों उद्योगपतियों तथा अन्य नेताओं की प्रथम महत्वपूर्ण शिक्षिकाए है। उनकी शिक्षा भारत के भविष्य के नागरिकों को प्रभावित करेंगी महाभारत में कहा गया है- "माँ के समान दूसरा कोई अध्यापक नहीं है।" इसीलिए हमें उनकी शिक्षा के लक्ष्य को परिभाषित करना चाहिए और उनको ऐसी सलाह देनी चाहिए जो उनके लिए उपर्युक्त हो। हमें उन्हें अपने देश के प्राचीन साहित्य और सभ्यता का अच्छा ज्ञान देना चाहिए। इसके साथ ही हमें वर्तमान साहित्य, विज्ञान, विशेष रूप से जीवन विज्ञान, चित्रकला, संगीत तथा शारीरिक, बौद्धिक, नैतिक आध्यात्मिक शिक्षा का भी ज्ञान देना चाहिए। क्या हमें प्राचीन युग की सावित्री, अरुन्धती, मैत्रेयी, गार्गी, लीलावती तथा सुलभा जैसी महिलाओं के समान अतिरिक्त आध्यात्मिक शिक्षा का भी ज्ञान देना चाहिए। क्या हमें प्राचीन युग की सावित्री अरुन्धती मैत्रेयी गार्गी लीलावती तथा सुलभा जैसी महिलाओं के समान अतिरिक्त आध्यात्मिक शिक्षा देनी है अथवा अहिल्याबाई जैसी प्रशासक अथवा झांसी की रानी लक्ष्मीबाई के समान वीरांगनाओं जैसी शिक्षा देनी है जिसमें वर्तमान एवम् प्राचीन महिलाओं के गुण विद्यमान है जो अपनी शिक्षा तथा प्रशिक्षण के द्वारा भविष्य के नये भारत का निर्माण करें। इससे पूर्व की हम राष्ट्रीय महिला शिक्षा की योजना बनाये, हमें इस प्रकार के अनेक प्रश्नों पर विचार करना होगा। राजनेताओं तथा विद्वानों को मिलकर इस पर विचार करना चाहिए कि इस योजना को किस प्रकार सफलतापूर्वक क्रियान्वित किया जा सकता है?

श्री चिंतामणि वैद्य

(1926)

गुरुकुलः सच्चे शिक्षणालय

श्री आचार्य जी, महानुभाव एवं नवदीक्षित स्नातको!

इस अवसर पर भाषण करने के लिए उपर्युक्त व्यक्ति मैं कदापि नहीं, यह महान् आदर मुझसे योग्य किन्हीं महानुभाव को मिलना चाहिए था तथापि मैं आप को विश्वास दिलाता हूँ कि आप के, इस निमन्त्रण को मैं हृदय से स्वीकार करता हूँ। क्योंकि जो महत्वपूर्ण कार्य आप सम्पादित कर रहें है, उसके लिए मेरे दिल में अगाध प्रतिष्ठा है। देश की भावी सन्तान को प्राचीन धर्म और पुरातन संस्कृति के आधार पर जो शिक्षा दे रहें हैं उसमें मेरा अटूट विश्वास है। मैं भी वेदों को पूज्य और प्रतिष्ठा की दृष्टि से देखता हूँ। मैं भी उन्हें ईश्वरीय ज्ञान मानता हूँ।

वैदिक विज्ञान पश्चिम के वर्तमान से टक्कर नहीं खाता, अपितु आधुनिक विज्ञान पर आधार अधिक अंग में वेदों में ही पाया जाता है। इलेक्ट्रांस की नवीन स्थापना (थियोरी) हमें नया ज्ञान नहीं देती है, यही बात हमारे प्राचीन वैदिक ऋषियों ने कवितामय ऋचाओं में प्रथम ही कहीं हुई हैं यथा हमारे प्राचीन वैदिक

तदेजति तन्नैजति तद्दूरे तद्वन्तिके।
तदन्तरस्य सर्वस्य तदु सर्वस्यास्य वाह्यत्तः।। (युजः)

जीवन व्यतीत करने की प्रणाली जिससे मुनष्य विकास की पराकाष्ठा पर पहुँच सकता है, सर्वोत्तम है। आपने अपनी प्रारम्भिक शिक्षा से उच्च श्रेणी की शिक्षा तक वैदिक सिद्धान्तों के अनुसार जो शिक्षा क्रम रखा है, वह सर्वधा उपयुक्त है प्रारम्भिक कक्षाओं में भी वैदिक ऋचाओं ही के द्वारा आप के यहाँ शिक्षा दी जाती है यही ऋचाएं हमारी प्राचीन आर्य जाति की वंशानुगत सम्पत्ति है। भारतीय विद्वानों ने वेदों के स्वाध्याय को विवेक की दृष्टि से अभी-अभी ही करना आरम्भ किया है उसका सब श्रेय महर्षि दयानन्द सरस्वती को है जिन्होंने न केवल अपने-आप अन्धविश्वास की खाई से निकल विवेक दृष्टि से वेद का स्वाध्याय किया, अपितु अपने अनुयायियों में मुख्यतः हिन्दू जाति में ईश्वरीय ज्ञान वेद के प्रति अटूट प्रेम और प्रतिष्ठा के भाव को पैदा कर दिया है।

"सज्जनो! इस संस्था का फलना-फूलना तो अवश्यं भावी है ही, इसके साथ ही सम्पूर्ण भारत में उत्तेजना देने के लिए यह एक उत्तम उदाहरण भी है क्योंकि यह शिक्षा के उन सिद्धान्तों पर अंकित है जो न केवल भारत में ही नहीं अपितु सम्पूर्ण संसार में सर्वमान्य है जिन्हें प्राचीन ऋषि बतला गये है। यही नहीं, यह संस्था तो हमारे ऋषियों की निवास भूमि ब्रह्मर्षि देश में संस्थापित है। यह भूमि जहाँ गंगा जमुना और सरस्वती प्रवाहित होती है। जहाँ कुरु और पाञ्चाल निवास करते थे।" जो भूमि उपनिषदो के समय भी विख्यात थी, जिसमें एक और वेदों के प्रकाण्ड पण्डित जन्म लेते थे और दूसरी तरफ क्षात्रविद्या में प्रवीण समर में दुर्जेय योद्धा। मैं देखता हूँ कि वह सब भिन्न-भिन्न विषय जो विश्व विद्यालय में पढ़ाये

जाने चाहिए आपके गुरुकुलों की पाठ विधि में रखे गये है। आप इतिहास, अर्थशास्त्र, राजनीति, गणित और भारतीय शासन पद्धति की शिक्षा देते है। इसके अतिरिक्त एक विशेषता यह है कि आपके गुरुकुल में सब विषयों का माध्यम हिन्दी है, जो कि विद्यार्थियों की अपनी मातृभाषा है। मुझे इसमें तनिक भी सन्देह नहीं कि आपकी संस्था का अभ्युदय होगा और ऐसे स्नातको को उत्पन्न करेगी जो अपने शारीरिक बल, नियन्त्रण और मानसिक शक्तियों के द्वारा मातृभूमि के लिए सबसे अधिक देश भक्त और सुयोग्य सिद्ध होंगे। महाविद्यालय में उच्च विषयों की विशेषतः इतिहास, राजनीति और अर्थशास्त्र की शिक्षा जिस भाषा को माध्यम बनाकर दी जाय, वह भाषा स्वयं तथा इसको व्यवहार में लाने वाला मानव सम्प्रदाय बहुत शीघ्र उन्नत होता है। मुझे पूरा निश्चय है कि आप के महाविद्यालय के द्वारा हिन्दी भाषा का बहुत अभ्युदय होगा और वह सम्पूर्ण भारत वर्ष की राष्ट्रभाषा बनने योग्य हो सकेगी।

"समाप्त करने से पहले इस विश्वविद्यालय से निकले नव स्नातकों को मैं सम्बोधन करना चाहता हूँ कि मुझे यह बतलाने की जरूरत नहीं कि आप अपनी प्यारी मातृभूमि भारत वर्ष से प्यार करने और उसके उद्धार के लिए बड़ी से बड़ी कठिनाइयों का सामना करें।"

"इस संस्था में ब्रह्मचर्य पूर्वक जीवन व्यतीत करने से आप इस काम के सर्वथा योग्य भी है। मुझे सन्देह नहीं कि आप अपने देशीभाइयों से प्यार करेंगे और स्वदेश के लिए स्वराज्य प्राप्ति में सहायता देंगे। मेरी आप से प्रार्थना इतनी ही है कि आप् अपने सम्पूर्ण जीवन में विद्यार्थी रहें। और किसी एक प्रिय विषय में इतनी उन्नति करें कि जिससे आप की संस्था की कीर्ति फैल सकें। अन्त में आपके लिए ऋषियों के शब्दों में प्रार्थना करता हूँ:"

> "तेजस्विनावधीतमस्तु मा विद्विषावहे।"
>
> Powerful may our learning be.
>
> And may we be void of hate.

साधुवर टी.एल. वास्वानी

(सन् 1928)

गुरुकुल की स्वतः सिद्ध विशेषताएं

इस गुरुकुल विश्वविद्यालय की कई विशेषताएं है जो भारत और सारे संसार के लिए महत्वपूर्ण होने के कारण मुझे खास तौर पर प्रभावित करती है। गुरुकुल, प्राचीन आर्य संस्कृति के अनुशीलन के लिए प्रेरणा करता है। प्रारम्भिक ईसाई चर्च की संस्कृति के साथ यूनानी और रोमन सभ्यताओं के योग से यूरोप ने वर्तमान सभ्यता की नींव रखी। यह सभ्यता आज बिल्कुल नष्ट प्रायः हो चुकी है। रोमन, रोलैंड ने लिखा था कि यूरोप में, बहुत से ऐसे सज्जन है जिनकी सम्पत्ति में यूरोपीय सभ्यता अपर्याप्त है। एक दूसरे बड़े विचारक कैसर लिंग वर्तमान पश्चिम के सबसे बड़े विचारकों में से एक है, लिखा हैः यूरोप अब मुझे बिल्कुल आकृष्ट तथा उत्साहित नहीं करता। मेरा विश्वास है कि एक नई जागृति जिसमें वैदिक-बौद्ध-अरबी संस्कृतियों के साथ-साथ वर्तमान युग की वैज्ञानिक उन्नति का मिश्रण हो, आधुनिक जीवन के आधार को विशाल बनाने और मातृभाव तथा मनुष्य मात्र से प्रेममय सभ्यता के निर्माण में सहायक होगी जिसकी कि संसार उत्सुकता से प्रतीक्षा कर रहा है। वर्तमान शिक्षा में साहित्य, इतिहास, अर्थशास्त्र और राजनीति के क्षेत्रों में पाश्चात्यों के अनुभव को भारतीय अनुभवों के साथ से बद्ध किए बिना, भारतीय विद्यार्थियों पर जबर्दस्ती डाल दिया जाता है। यह भुला दिया जाता है कि अन्य जीवन के क्षेत्रों की तरह शिक्षा में अनुभव ही का नियम लागू है। गुरुकुल प्रणाली भारत के अपने अनुभवों, भारतीय आदर्शों और परम्परागत विश्वासों पर जोर देती है। वर्तमान शिक्षा प्रणाली विद्यार्थियों को उनसे अलग करती है। इस उन्नत प्राचीन जाति के वीरों और मुनियों की स्मृति करके विद्यार्थी का अपने उज्ज्वल भूत के साथ सम्बन्ध अवश्य, रखना चाहिए।

गुरुकुल में शिक्षा का माध्यम हिन्दी है। आजकल सरकारी शिक्षणालयों में शिक्षा का माध्यम अंग्रेजी को बनाया गया हैं, परन्तु यह मनोविज्ञान शास्त्र के सिद्धान्तों के सर्वथा प्रतिकूल है। जहाँ तक मैं समझता हूँ शिक्षा का मूल सिद्धान्त यह है कि ज्ञात से अज्ञात की तरफ बढ़ना। मेरा यह हर्गिज मतलब नहीं है कि अंग्रेजी भाषा सर्वथा निकम्मी और अनुपयोगी है। जिस अंग्रेजी भाषा को मिल्टन शेक्सपीयर बर्नाड शा, बेकन और बर्क आदि विद्वानों ने अपनाया है, वह अवश्य ही सद्विचारों और अनुभवों का खजाना है।

गुरुकुल ब्रह्मचर्य की आवश्यकता पर विशेष बल देता है। ब्रह्मचर्य ही प्राचीन भारतीय सभ्यता का आधार है। संसार की ऊंची-ऊंची सभ्यताएं भोग और विलास में पड़कर तबाह होती रही है। परन्तु हिन्दू सभ्यता के आचार्यों ने इस बात को भली प्रकार समझ लिया था कि इन्द्रिय संयम ही उन्नतिशील सभ्यता का एकमात्र आवश्यक सिद्धान्त है। मेरी सम्मति में प्राचीन ब्रह्मचर्य शब्द का अर्थ ही अत्यन्त भाव पूर्ण है। संस्कृत के अनेक शब्दों में आश्चर्यजनक सौन्दर्य होता है और उनके अन्दर अत्यन्त गम्भीर रहस्य भरे हुए होते है। ब्रह्मचर्य, शब्द के धात्वर्थ पर जरा विचार कीजिए। यह दो शब्दों के मेल से बना है ब्रह्म और चर्या। जिसका अर्थ है ब्रह्म के साथ गति। ब्रह्म का अर्थ है- बुद्धि का विकास, वह शक्ति का स्रोत है।

ऋषियों की बुद्धिमत्ता का अनुसरण करना आपका प्रयत्न होना चाहिए। आजकल की स्पर्धा और पेचीदगियों ने मनुष्यों के जीवनों को बिल्कुल पागलों की तरह बाह्य सुखों के पीछे भागना सीखा दिया है।

इसीलिए आन्तरिक शक्तियों को विकसित करने की बहुत अधिक आवश्यकता है। आधुनिक शिक्षा सर्वथा असफल रही है क्योंकि इसने विद्यार्थियों की आन्तरिक शक्तियों को विकसित नहीं किया अभी कुछ दिन हुए कि जर्मनी के एक महान् विचारक और राजनीतिज्ञ महापुरुष की मृत्यु हुई है। उसका नाम शेधिनो था। उन्होंने अपनी एक किताब में लिखा है कि आत्मा को विकसित करो। यह तो प्राचीन ऋषियों के सिद्धान्तों का एक अनुवाद मात्र है। मैं आधुनिक स्कूलों कॉलेजों यूनिवर्सिटियों और संसार भर की सरकारों से एक प्रश्न पूछना चाहता हूँ कि आप अपने नवयुवक विद्यार्थियों की आत्माओं के लिए क्या प्रयत्न कर रहें हैं? क्योंकि मुझे दृढ़ निश्चय है कि आत्मा को विकसित करने से ही वास्तविक नवजीवन का विकास होता है।

श्री आचार्य नरेन्द्र देव

(सन् 1931)

राष्ट्रीय शिक्षा का पहला प्रयोग

राष्ट्रीय शिक्षा का यह पहला प्रयोग था। जिन लोगों ने गुरुकुल को नहीं देखा है उनका यह भ्रम हो सकता है कि यहाँ साम्प्रदायिकता का राज्य होगा। और यहाँ से निकले स्नातक संकुचित विचार के होंगे पर जिन्होंने एक बार भी गुरुकुल को देख लिया है या जो गुरुकुल के स्नातकों की मनोवृत्ति से परिचित हो चुके है। उनको इस प्रकार का कोई भ्रम नहीं हो सकता।

यहाँ उदार आर्यभाव का मण्डल सदा प्रवाहित होता रहता है गुरुकुल अपने विद्यार्थियों को किसी खास साँचे में नहीं ढालता है विश्वविद्यालय का भाव सदा उदार और उन्नत होता है। विश्वविद्यालय के अध्यापक अपने विद्यार्थियों को इस बात का पूरा मौका देते हैं कि वे सब पक्षों के मतों को सुनकर अपना स्वतंत्र मत निश्चित करें।

धार्मिक क्षेत्र में भी गुरुकुल का उदार भाव रहा है। यहाँ केवल वैदिक धर्म की ही शिक्षा नहीं दी जाती है, वहाँ विद्यार्थियों को विभिन्न धर्मों का तुलनात्मक अध्ययन कराया जाता है। यहाँ नवीन शास्त्रों के अध्ययन की भी व्यवस्था की गयी है इस प्रकार विद्यार्थी प्राचीन तथा आर्वाचीन विचार पद्धतियों से परिचय प्राप्त करते है और उदार आर्यभाव को ग्रहण करते है। उनके चरित्र गठन की ओर विशेष ध्यान दिया जाता है। विद्यार्थियों को ब्रह्मचर्य व्रत का पालन करना पड़ता है इस प्रकार विद्याचरण सम्पन्न हो जब विद्यार्थी गुरुकुल से निकलते है तो संसार का संग्राम उनके लिये भयावना नहीं मालूम होता और जीवन के जिस किसी क्षेत्र में भी उनको कार्य करने का अवसर मिलता है उसी में वह लोकोपकारक बुद्धि से कार्य करते है।

यद्यपि राष्ट्रीय शिक्षा की बुनियाद अभी काफी मजबूत और सही नहीं हुई है तथापि यह नहीं कहा जा सकता कि इस ओर जो कुछ प्रयत्न हुए है वे सब निष्फल और व्यर्थ है हमारे उद्योग का एक अच्छा नतीजा यह हुआ है कि राष्ट्रीय शिक्षा प्रणाली का प्रभाव सरकारी और अर्द्धसरकारी शिक्षा संस्थाओं पर पड़ा है गुरुकुल का स्थिर लक्ष्य है, यह दूसरी बात है कि सब लोग उससे पूर्णतया सहमत न हो। आर्य संस्कृति की रक्षा और उनके पुनर्जीवन का आदर्श तो ऐसा आदर्श है जिसे जब राष्ट्रीय शिक्षा संस्थाओं को अपनाना ही चाहिये गुरुकुल इस आदर्श पर बड़ा जोर देता है। इसीलिए संस्कृति की शिक्षा यहाँ अनिवार्य रखी गयी है। गुरुकुल की यही विशेषता है कि जो स्नातक गुरुकुल से शिक्षा प्राप्त करके निकलते है उनसे यह विशेष आशा की जाती है कि वे आर्य संस्कृति का प्रचार करेंगे।

आशा है जो स्नातक आज यहाँ दीक्षा के लिये आये है वे गुरुकुल के आदर्श को सदा अपने सामने रखेंगें। गुरुकुल ने उनके साथ जो उपकार किया है उसके ऋण से वह तभी मुक्त हो सकते है जब वह अपने जीवन में गुरुकुल के आदर्श की पूर्ति के लिये विशेष उद्योग करते रहें। आप स्वाध्याय और योग्यता की सम्पत्ति से विभूषित है आप विद्या और आचरण से सम्पन्न है। आपने ब्रह्मचर्य की अवस्था में रहकर जो साधना की है वह आज समाप्त होती है आपने गुरुकुल में निवास कर ज्ञान और शक्ति का संचय किया

है अब आपको कार्य क्षेत्र में प्रवेश करना है और शक्तियों से काम लेना है आपको सदा स्मरण रखना चाहिये कि जो कुछ काम करें उसमें उदार आर्य भाव से ही आपको प्रेरित होना चाहिये। सबको मित्र भाव से देखना और सबके साथ एकता का अनुभव करना हमारी सभ्यता का मूल मंत्र है। यही सच्चा आर्य भाव है। इसी आर्य बुद्धि से प्रेरित होकर आपको जीवन को सबके लिए सम्पादित करना है। इसी में आपका और समाज का सच्चा कल्याण है और इसी प्रकार आप गुरुकुल के आदर्शों को पूरा कर सकेंगे आप अपनी परम्परा को न भूलिये जिस कार्य को तक्षशिला नालन्दा और विक्रम शिला के विद्वान् पंडित और साधुओं ने किया था वहीं काम आपका सच्चा काम है। आर्य संस्कृति के दीपक को कभी बुझने न दीजिये आपने दृढ संकल्प, दृढ अध्यवसाय और कष्ट सहन करने की असीम शक्ति होनी चाहिये जिसमें सच्ची लगन है उसके लिये सब कुछ सुलभ है आपने ब्रह्मचर्य व्रत का पालन किया है आपके लिए भीष्म के शब्दों में कुछ भी अप्राप्त नहीं है आपको अपने ऊपर अनेक प्रयोग करने के लिये तैयार रहना चाहिये। सुलभ लाभ की इच्छा मत कीजिये दुर्गम पथ से जाने का अभ्यास कीजिये अपना मार्ग स्वयं निकालिये कठिन से कठिन परिस्थितियों में पड़कर भी मत घबराइये जो बहादुर है जिनमें आत्मविश्वास है और जो सदा कठिनाइयों का मुकाबला करने के लिये तैयार रहते है वही जीवन की कठिनाइयों और सुविधाओं दोनों से लाभ उठा सकते है ईश्वर आपको बल दे कि आप इस पवित्र संकल्प को पूरा कर सकें जिससे गुरुकुल का जन्म सार्थक हो भारत माता का मुख उज्ज्वल हो।

श्री विधुशेखर भट्टाचार्य

. (सन् 1932)

हमारे चार ऋण

ऋषिगण कहते है और ठीक कहते है कि तुमने जन्म काल से ही चार प्रकार के ऋण ग्रहण कर रखे है तुम पर कुछ देवताओं का उधार है, कुछ ऋषियों का कुछ पितरों का और कुछ मनुष्यों का शान्त मन से विचारों तो सही इसका क्या अभिप्राय है तुम्हें उन ऋणों से छुटकारा करना होगा। तुम्हें स्वार्थ भावना छोड़कर यज्ञों का अनुष्ठान अवश्य करना चाहिये देवताओं के लिये उत्सर्ग करना चाहिये तुम्हें ज्ञान का उपार्जन अवश्य करना चाहिये। तुम्हें उस विद्या प्रवाह का पालन अवश्य करना चाहिये जो परम्परा क्रमशः उन विषयों से प्राप्त हुआ है जिन्होंने सहस्त्रो वर्ष उनके लिये तप किये। तुम्हें गृहस्थ धर्म का अवश्य पालन करना चाहिये और इस धर्म का पालन करके उत्तम कोटि की सन्तान उत्पन्न करनी चाहिये। सन्तान ऐसी होनी चाहिये जिससे सारे भुवन का कल्याण हो। इस प्रकार प्रथम तीन ऋण का शोधन होता है। चौथा ऋण मनुष्यों का है जिसमें भी बहुत कुछ करना है अधिक करना असम्भव हो तो कम से कम दो काम तो अवश्य करने चाहिये उन्हें रहने की जगह और अन्न देना चाहिये वे दो चीजें प्राणधारियों के प्रथम प्रयोजन की है। कभी भी किसी भी तरह वे अन्न और वास स्थान से वंचित न होने पावे। वे आजकल यह भी तो नहीं पा रहें है।

कर्म करते हुए मनुष्य सौ वर्ष तक जीने की इच्छा रखें। फिर कर्म कैसे किये जाये जैसे कुरुक्षेत्र में अर्जुन ने किया। अथवा वहीं पर जैसा भगवान् श्री कृष्ण ने उपदेश दिया था अथवा जैसा श्री कृष्णार्जुन संवाद के मूर्तिमान् स्वरूप स्थिति प्रज्ञ जीवित बोधिसत्व पूज्य महात्मा गाँधी ही कर रहे है।

कोई-कोई कहते है कि इस देश में नैष्कर्म्य का भी उपदेश दिया गया है यह बिल्कुल ठीक है कि भारत वर्ष में नैष्कर्म का उपदेश दिया गया है किन्तु कहने वाले इसको ठीक नहीं समझते नैष्कर्म्य का अर्थ कर्म का न करना कदापि नहीं है उसका अर्थ है कर्मयोग नैष्कर्म्य का उपदेश पाकर अर्जुन संग्राम से निवृत्त नहीं हुआ उल्टे प्रवृत्त हुआ तुम्हारे सामने भी रोज ही प्रतिक्षण महान् संग्राम ठना है उसमें तुम्हें विजय पाना चाहिये उसके लिये कर्म के सिवाय दूसरा साधन नहीं है।

यह सृष्टि दो प्रकार की है दैवी या आसुरी। दैवी सृष्टि सम्पत्ति की ओर ले जाती है और आसुरी विपत्ति की ओर। आसुरी सृष्टि का करना सहज है वह क्षण भर में प्रलय भी कर सकती है दैवी सृष्टि दुष्कर है या अति दुष्कर है तथा तप बिना दैवी सृष्टि नहीं होती है। बिना तप के सृष्टि की बात उपनिषदों में कहीं भी नहीं दिखाई पड़ती है तप करना सरल नहीं है। सृष्टि के दो प्रकार के होने से स्रष्टा भी दो प्रकार के होते है- प्रेयष्काम और श्रेयष्काम। प्रेयष्काम स्रष्टा प्रीतिमात्र की इच्छा रखता हुआ अपनी सृष्टि में कुछ नहीं मिलता। श्रेयष्काम अपनी सृष्टि से संसार के श्रेयः की इच्छा रखता है आयुष्मानो गम्भीर भावों से अपने चित्त में इनका विचार करें और सृष्टि में प्रवृत्त हो। आत्मा ही तुम्हारा दीप है आत्मा ही तुम्हारी शरण है तुम सभी आत्मदीप और आत्मशरण होकर आगे बढ़ो।

कुछ लोग तपस् परायण होते है वे तम से तम को जाते है दूसरी तमों ज्योतिपरायण होते है वे तम से ज्योति को जाते है एक दूसरी तरह के वे लोग होते है जो ज्योतिष्तमः परायण होते है वे ज्योति से तम को जाते है एक ओर तरह के वे लोग है जो ज्योतिः ज्योतिः परायण होते है वे ज्योति से ज्योति को जाते है आयुष्मानों! तुम ज्योतिः ज्योतिः परायण होओ। ज्योतिः ज्योतिः परायण होओ।

डॉ॰ कालिदास नाग

(सन् 1934)

सत्यान्न प्रमदितव्यम्। धर्मान्न प्रमदितव्यम्।।

अर्थात् सत्य में और धर्म के अनुष्ठान में प्रमाद न करना इसके साथ भगवान् गौतम बुद्ध के उपदेशों के संग्रह रूप धम्मपद के अप्रमाद वर्ग की समानता विशेष आश्चर्यजनक है। आर्य पूर्वजों के सन्तान होने का महात्मा बुद्ध को यथार्थ अभिमान था यद्यपि आर्यत्व के मौलिक नियमों से प्रेरित होकर उन्होंने मध्यकालीन रूढ़ियों और जातियों के विरुद्ध युद्ध किया और सार्वभौम मैत्री की प्रगतिशील शक्ति सम्पन्न धर्म की घोषणा की जिसको तथागत के अनुरूप भक्त शिष्य सम्राट् अशोक ने विशाल भारत के ऐतिहासिक सत्य में परिणत कर दिया।

भारत ने पुनः एक यात्रा प्रारम्भ की और इसके सहस्त्रो पुत्र-पुत्रियाँ आध्यात्मिक परिव्राजकता के दिव्य उन्माद से प्रेरित होकर, जो आर्यों के लिये निसर्ग सिद्ध है। अपने प्रियघरों से निकल पड़े हिमालय, समुद्रो और भौगोलिक तथा सांस्कृतिक सीमाओं को पार कर गए इस उद्देश्य से कि आर्यो की आत्मानुभूति के प्राचीन अथवा अर्वाचीन अमरकोषों को जाति और सम्प्रदाय का भेद किये बिना देश देशान्तरों और दीप-दीपान्तरों में ले जाया जावें। यह विशाल भारत का इतिहास मानवीय इतिहास का सबसे अधिक स्फूर्तिदायक अध्याय है जिससे यह लगता है कि किस तरह मध्य एशिया के भयंकर रेगिस्तान मनुष्य समाज के उन सेवकों के खून से सींचे गये है जिन्होंने संस्कृति और आध्यात्मिकता के इन हरे स्थानों को बनाया जिनको हम खोतान और कूचतूर्फान और तन होंग के रेत के नीचे दबे हुय खंडरातों में पुनः पता लगा रहें है। अभी यह कार्य करना बाकी है कि भारत वर्ष सुदूर पूर्व के बीच सांस्कृतिक और आध्यात्मिक सहयोग की पन्द्रह सदियों का इतिहास बनाया जायें और प्रगतिशील आर्यत्व के सामान्य इतिहास में इसे शामिल कर लिया जायें। चीन और जापान भारत के सात हजार वर्षों से अधिक समय से सहयोग कर रहें है और संकुचित भारत अब भी उस आर्य बौद्ध संस्कृति के संस्कारों को लिए हुये है जो जब से चौथी सदी से बोर्नियों में यज्ञो को करते हुए मूल वर्मन का यूप शिलालेख उपलब्ध हुआ है हमारे औपनिवेशिक विस्तार से निश्चित तौर पर एक नया अध्याय खोलती है। अजन्ता के भवन निर्माण सम्बन्ध चमत्कार और बायंन अंकोरवाट और कम्बोज के मन्दिर इस बात के जीवित साक्षी है कि हमारे पूर्वज गजब के साहसी थे जिन्होंने आध्यात्मिक विजय के विस्तार के रास्ते पर किसी भी सीमा को स्वीकार करने से इन्कार कर दिया।

यद्यपि मुस्लिम और क्रिस्तानी आक्रमणों के भयंकर संघर्षों में आर्य आत्मा कुछ सदियों के लिये अपने आपको बाह्य तूफानों के आगे झुकाकर गफलत में सो गयी यद्यपि अंधकारमय युगों में हमने अस्पृश्यता बाल-विवाह, बाल हत्या जैसी सामाजिक और मनोवैज्ञानिक कुरीतियों को अपना लिया तो भी यह जाति रामानन्द और कबीर नानक और चैतन्य जैसे सन्तों के दिव्य नेतृत्व से कभी शून्य नहीं रही और हम अपने काल की ओर आते है तो राममोहन राय और अपने दयानन्द की वाणियाँ सुनकर हमारे दिल

में आह्लाद उत्पन्न होता है प्रभु करें कि उनका उदाहरण और आशीर्वाद हमारे सब अपवित्रताओं और पापों को धो डालें और उस मनुष्य समाज के जो घृणा और भेदभाव से सदा विक्षुब्ध रहता है आध्यात्मिक संगीत सम्मेलन में एकता और समता की तान छेड़ने का अपना परम्परागत कर्तव्य हम फिर से सम्भाले। घोर अंधकार में भी भारतवर्ष ने प्रकाश के लिये प्रार्थना की है और लड़ाई की खून खराबी में उसने सार्वभौम कुरुक्षेत्र का विरोध करते हुये प्रवचन का उच्चारण किया है। ईश्वर करें कि वह अविनाशी आर्यावर्त हमारे द्वारा अपना अमर दिव्य संदेश मनुष्य मात्र को दें।

सममानी व: आकूति: समानी हृदयानी व:।
समानमस्तुवो मनोयथा व: सुसंहासति।।

ऋग्वेद *10.199.4*

श्रीयुत् संत निहाल सिंह

(सन् 1935)

हमारी मानसिक स्वाधीनता

हमारी मानसिक स्वाधीनता को पुनः स्थापित करने के लिये अन्य साधनों का भी बड़ा हाथ है हमारे देश के अनेक विद्वानों और 'विचारकों ने इस मानसिक स्वाधीनता की स्थापना के लिये बड़ा भारी कार्य किया है। प्रभाव की दृष्टि से इन भारतीय सुधारको का कार्य यूरोपीयन विद्वानों की अपेक्षा अधिक महत्वपूर्ण है आज से लगभग साठ वर्ष पूर्व एक युवक संन्यासी जिसका बचपन का नाम मूलशंकर था पर जो महर्षि दयानन्द के नाम से अधिक प्रसिद्ध है यमुना के पवित्र तट पर अपने विद्याभ्यास को पूर्ण कर गुरु से दीक्षा ले संसार में प्रवेश करता हे। इस संन्यासी के हृदय में भारती के पुनरुत्थान करने की प्रचण्ड अग्नि दहक रही थी उसने देखा कि भारत में धर्म के नाम पर अनर्थ होता है वैदिक धर्म के नाम पर जिन अंधविश्वासों और कुरीतियों का अनुसरण हमारे हिन्दू भाई कर रहें थे उनके खिलाफ युवा संन्यासी ने विद्रोह का झण्डा खड़ा किया हम लोगों में मैकाले साहिब की कृपा से जो मानसिक दासता आ गयी थी जो हम यह भूल गये थे कि भारत का भी कोई स्वर्ग युग था हम लोग जो अपने उज्ज्वल अतीत को भुला बैठे थे अंग्रेजी शिक्षा के इस जादू को तोड़कर महर्षि दयानन्द ने हमें सचेत कर दिया।

इसी प्रकार बंगाल में राम कृष्ण परमहंस ने प्राचीन भारतीय सभ्यता और धर्म के पुनरूत्थान के लिये असाधारण कार्य किया। रामकृष्ण परमहंस में उत्कृष्ट कोटि की आध्यात्मिकता विद्यमान थी उनके शिष्य स्वामी विवेकानन्द अत्यंत प्रतिभाशाली और शक्ति सम्पन्न थे इन महानुभावों ने न केवल बंगाल अपितु सुदूरवर्ती अमेरिका तक में भारतीय विचारसरणि की धाक जमाने में असाधारण सफलता प्राप्त की।

यह स्वाभाविक था कि भारत की इस नवीन जागृति के साथ-साथ शिक्षा की पद्धति में यह महत्वपूर्ण परिवर्तन हो। जिस समय मैकाले ने अपनी नीति का प्रतिपादन किया था तब भी अनेक अंग्रेजों का विश्वास था कि मैकाले की नीति अशुद्ध है और आगे चल कर इसमें परिवर्तन करना अवश्यंभावी हो जायेगा। उनका यह विचार सत्य सिद्ध होता जा रहा है धीरे-धीरे अंग्रेजों के स्थान पर भारत की विविध लोक भाषाओं को शिक्षा के माध्यम के रूप में स्वीकृत किया जाने लगा है। बींसवी सदी के प्रारम्भ में इस गुरुकुल विश्वविद्यालय की स्थापना शिक्षा के क्षेत्र में एक महत्वपूर्ण घटना थी। इसके संस्थापक महात्मा मुंशीराम जी आगे चलकर स्वामी श्रद्धानन्द जी से मेरा उस समय से परिचय था जब मैं बालक था। महात्मा मुंशीराम जहाँ वैदिक आदर्शों का पुनरुत्थान करना चाहते थे वहाँ साथ ही आधुनिक समय की शिक्षा और विद्या के क्षेत्र में हुई उन्नति को वे उपेक्षा की दृष्टि से नहीं देखते थे। महात्मा मुंशीराम के सहकारी एक युवक थे जिनका नाम श्री आचार्य रामदेव जी है। उनका निवास स्थान मेरे घर से कुछ ही मिलो की दूरी पर है गुरुकुल में आने से पूर्व आचार्य रामदेव जी ने प्रसिद्ध अनेक अंग्रेज शिक्षा विज्ञान डॉ वाल्टन के चरणों में बैठकर विज्ञान की शिक्षा प्राप्त करी थी। गुरुकुल के वर्तमान आचार्य पं॰ चमूपति जी पंजाब यूनिवर्सिटी के वे एम.ए. है और उनके साथ प्राच्य और पाश्चात्य दोनों विद्याओं के अनेक विद्वान् शिक्षा का कार्य कर रहें है।

पंडित जवाहरलाल नेहरू

(सन् 1935)

महापुरुषों के चरणचिह्नों पर चलें

आपने कहा है कि मैं इससे पूर्व कई बार गुरुकुल में आया यहाँ बैठकर मुझे विशेष प्रसन्नता होती है। इन दिनों अध्यक्ष के नाते मुझे सारे देश में भ्रमण करना है अतः मैं यहाँ अधिक समय न टिक सकूंगा, इसका मुझे खेद है। आप लोग ऐसी उत्तम संस्था में निवास करते है मुझसे क्या सन्देश ले सकते हैं। मैं आप से क्या मंत्र फूँकू? मुझे तो यह विद्या स्वयं ही नही आती है आप लोग महापुरुषों के चरण चिन्हों पर चलें, यह जानों कि वह कैसे इस महत्ता को प्राप्त हुए। यह जानने से ही आप कर्मकाण्ड की यथार्थ सीढ़ी को जान सकेगे। जिसके द्वारा उन्नति हो सकती है। आजकल आप के सामने जो कर्त्तव्य है उसे आप गुरुजनों से जान सकते है। विद्यार्थियों का देश की दशा से परिचय होना चाहिए। प्राचीन इतिहास को आप रोज पढ़ते है। एक इतिहास के विद्यार्थी के लिए देश का प्राचीन इतिहास पढ़ना आवश्यक है किन्तु आज की दुनियाँ में परिवर्तन बड़े वेग से हो रहा है। क्रान्ति की चिंगारी सर्वत्र दिखाई देती है। बड़े-बड़े साम्राज्यों के टूटने की सम्भावनाएं दिखलाई देती है। इन सबको जानने के लिए यह आवश्यक है कि आप लोग वर्तमान इतिहास को यूरोप अमेरिका, एशिया व अफ्रीका में प्रतिदिन होने वाले संघर्ष को जाने ताकि भारत के भावी इतिहास की रूपरेखा की तैयारी करने में आप लोग समर्थ हो सकें। इसके साथ ही विचारभेद में आप यह फर्क कर सकें कि कौन-सी बात में सिद्धान्त का भेद है और कौन सी वैयक्तिक। सिद्धांत सम्बन्धी बड़ी-बड़ी बातों में मतभेद आवश्यक तथा किसी अच्छे परिणाम का लाने वाला है, किन्तु छोटी-छोटी बातों में मतभेद देश व राष्ट्र के लिये घातक है। आप यह जानेंगे तो अपने कर्तव्य को समझ सकेंगे।

डॉ॰ गोकुलचन्द नारंग

(सन् 1936)

गुरुकुल का एक नया कार्यक्षेत्र

वर्तमान में हिन्दुओं का जीवन सर्वथा धार्मिक तथा आध्यात्मिक भावनाओं से शून्य हो गया है। परन्तु मेरे विचार से अब भी नितान्त निराश होने का कोई कारण नहीं। उस संविधान का शरीर अब भी विद्यमान है आवश्यकता केवल इस बात की है कि उसमें जीवन संचारित किया जायें और वह संदेश वही है कि जिसे कि मैं आप तक पहुँचाने के लिये आज यहाँ उपस्थित हुआ हूँ। गुरुकुल के विद्यार्थी और स्नातक भी हिन्दुओं को उस मृतप्राय धार्मिक संविधान के शरीर में पुनर्जीवन कर दिया जायें या उसका ऐसा परिष्कार किया जायें जिससे कि यह पूर्वज अपने कर्त्तव्य को भली-भांति सम्पादन करने लग जायें। मैं गुरुकुल के स्नातकों से प्रार्थना करना चाहता हूँ कि वे ग्रामों में जाये, उनको भिन्न-भिन्न पौरोहित्य प्रदेशों मे विभक्त करें, जैसे कि इंग्लैंड विविध पौरोहित्य प्रदेशों में विभक्त है और वहाँ निवास करके उपाध्याय पुरोहित और गुरु के कृत्यों को अपने हाथ में लें क्योंकि यद्यपि कथन मात्र को वहाँ अब भी उपाध्याय आदि विद्वान् है परन्तु उनकी उपयोगिता अब नष्ट हो चुकी है। यदि एक-एक स्नातक दस-दस, बारह-बारह ग्रामों के सुधार का भार भी अपने कन्धों पर ले तो कुछ ही समय में समस्त ग्राम्य प्रदेश पुनः धार्मिक जीवन से परिपूर्ण हो सकता है। आप लोग अपने आचरण से तथा वेद शास्त्र के ज्ञान द्वारा ग्राम निवासियों की सारी आवश्यकताओं को पूर्ण कर सकते है।

हिन्दुओं में धार्मिक शिक्षा के प्रसार का अत्यंत ह्रास हो गया है और वैदिक धर्म का उपदेश तथा प्रचार किया जाना चाहिये तथा प्राचीन आर्य संस्कृति का पुनर्जीवन अवश्य होना चाहिये तो मुझे बताये कि इस कार्य पद्धति के अतिरिक्त जिसे भी मैंने अभी प्रस्तुत किया है, और कौन सी कार्य पद्धति उपयुक्त हो सकती है, वह ऐसा कार्य है जिसे की साधारण गृहस्थ, सरकारी नौकर तथा अन्य व्यवसायी नहीं कर सकते, न ही निरन्तर भ्रमणशील उपदेशकों के दल। इसी प्रकार राजकीय तथा दयानन्द विद्यालयों में शिक्षा प्राप्त किये हुए दूसरे विश्वविद्यालयों के स्नातक भी इस कार्य के सम्पादन करने में समर्थ नहीं, क्योंकि वे दूसरे प्रकार की शिक्षा प्रणाली के कारण ही साधारणतया इस महान् प्रयत्न के अयोग्य है। वे केवल आप तथा दूसरे गुरुकुलों के स्नातक ही है जिन पर कि इस कार्य के सम्पादन कर सकने का विश्वास किया जा सकता है। दूसरों ने प्रयत्न किया है और कुछ एक व्यक्तियों के अतिरिक्त सब असफल रहें है इसीलिये मैं प्रार्थना करूँगा कि आप इस कार्य पद्धति पर विचार करें जो कि मैंने अभी आपके सम्मुख प्रस्तुत की है। और ध्यानपूर्वक इसके गुण दोषों का विचार करके निर्धारित करें कि क्या यही पद्धति हमारे धार्मिक और सांस्कृतिक जीवन के पुनरुत्थान का एकमात्र साधन नहीं है। और यदि आप मानते है कि इष्टसिद्धि का यही एकमात्र साधन है अथवा कम से कम ऐसा साधन है जो विशेष प्रभावजनक हो सकता है तो आप विचार करें कि इस पवित्र कार्य में आप क्या भाग ले सकते है। इस पद्धति पर विचार करने में आप इस बात

का ध्यान बिल्कुल न करें कि यह किसने प्रस्तुत की है। एक प्राचीन कवि क कथनानुसार आप यह समझें कि यह पद्धति आपको किसी भित्ति पर लिखी मिली है और आप इस का निष्पक्ष विचार करें। यदि यह आप अनुभव करते है कि मैंने जो निर्देश किया है उसमें आपके लिये अत्यधिक त्याग अपेक्षित है, तो मैं इसके पर्यायरूप में एक दूसरी पद्धति उपस्थित करता हूँ और वह यह है कि यहाँ पर शिक्षा समाप्त करने के अनन्तर आप अपने जीवन के एक दो वर्ष इस कार्य में लगाये।

आपके अनन्तर जो भी स्नातक बने, वे एक दूसरे के बाद किसी क्रम में दो-दो वर्ष इस पवित्र कार्य में लगाते जायें। इस प्रकार यह श्रृंखला अभियान चलती रहें। इस समय में आप लोग कुल परम्परागत उपाध्यायों और पुरोहितों को शिक्षित बनाकर अपने नियत कर्त्तव्य के पालन में प्रवीण बना दें। इस प्रकार जो उपाध्याय, पुरोहित आदि की परम्परा सदा से चली आ रही है, किन्तु दूषित हो गयी है, उसी को सुधारकर उपयुक्त बनाया जा सकता है यह सम्भव है कि यह सामग्री कच्चे लोहे की भांति हो, परन्तु आप अपने प्रयत्न रूपी अग्नि से इसके मल को दूर कर सकते है और इसको उच्च कोटि का लोहा व इस्पात बना सकते है जो किसी भी प्रयोग में, लाया जा सकता है और किसी भी परीक्षा में ठीक उतरने के योग्य बनाया जा सकता है।

श्री सत्यमूर्ति एम.एल.ए.

(सन् 1937)

गुरुकुल की सबसे बड़ी विशेषताएं

जैसा कि होना चाहिये था, आपकी शिक्षा का माध्यम हिन्दी भाषा है। मैं यद्यपि स्वयं हिन्दी नहीं जानता तो भी मेरी यह हार्दिक और प्रबल मनोकामना है कि जितनी जल्दी हो सके हिन्दी हमारे देश की राष्ट्रीय भाषा के पद पर आसीन हो। मैं आशा करता हूँ कि इस विद्यापीठ से शिक्षा प्राप्त स्नातक देश के कोने-कोने तक इस संदेश को पहुंचायेंगे।

संस्कृत साहित्य का एक विनम्र विद्यार्थी होने की हैसियत से में आपको इस बात का साधुवाद किए बिना नहीं रह सकता कि आप अपने पाठयक्रम में संस्कृत को इतना महत्वपूर्ण स्थान देते है यूरोपीयन संस्कृति को, ग्रीक और लैटिन भाषाओं को जो सम्मानास्पद स्थान प्राप्त है उससे भी अधिक हमारी भारतीय संस्कृति में संस्कृत को प्राप्त है। संस्कृत को मतृभाषा कहा जाता है लेकिन यह आज भी जीवित है। मुझे बड़ी प्रसन्नता के साथ स्मरण है कि जब पिछली दफा मैं आपके गुरुकुल में आया तो मुझे संस्कृत में आपका वाद-विवाद सुनने का सौभाग्य प्राप्त हुआ था। आप फिर एक बार संस्कृत को विद्वानों की बोलचाल की भाषा बनाना चाहते है, आपके इस प्रयत्न की जितनी सराहना की जायें और इसे जितना भी प्रोत्साहन दिया जायें, वह सब थोड़ा है। मैं किसी अंधविश्वास या भक्ति के आवेश के कारण संस्कृत की प्रशंसा नहीं कर रहा मेरा तो यह दृढ़ विश्वास है कि प्रत्येक भारतीय विद्वान् को यदि इस देश का सच्चा निवासी बनकर यहाँ रहना है तो संस्कृत का ज्ञान होना अत्यन्त आवश्यक है।

एकरूपता व समान व्यवहार के बारे में इतना ही निवेदन करता हूँ कि इसमें मैं व्यक्तिगत और राष्ट्रीय जीवन का एक बहुत बड़ा धर्म समझता हूँ। आपकी दैनिक जीवनचर्या का जिसमें संध्याहोम भी शामिल है मुझ पर बहुत गहरा प्रभाव हुआ है। आजकल का शुष्क और थोथा बुद्धिमान् कहता है कि यह सब आडम्बर मिथ्या और व्यर्थ है लेकिन बहुत-सी बातें इस तर्क और बुद्धिवाद की पहुँच से बाहर होती है। मेरा तो यह विश्वास है कि इन धार्मिक संस्कारों से व्यक्ति राष्ट्र तथा समाज सब की आत्मा उच्च होती है और बल प्राप्त होता है। मेरी यह प्रबल इच्छा है कि भारतवर्ष वैज्ञानिकों का एक ऐसा दल तैयार करें जो विज्ञान को मनुष्यता के अनुकूल और अधीन कर सकें। गुरुकुल के नव स्नातक बंधुओं! आप उठो और कटिबद्ध हो जाओ, यह बोझ आपके सिर पर है कि आप अपने देशवासियों के हृदय में अपनी चेतना शक्ति के अन्तरतम में एक बार फिर आत्मसम्मान और गौरव का भाव संचारित कर दो। और प्राणप्रण से उसकी रक्षा करों। आपके कुलपिता ने यही शिक्षा दी है आपको उस पर अमल करके अपनी गुरुमाता का ऋण चुकता करना है।

अन्य देशों की भांति हमारे देश में भी विचारको का एक ऐसा दल पैदा हो गया है जो आधुनिक भौतिक सभ्यता को ही मनुष्य समाज के लिये स्वर्ग समझता है मेरा इसमें तीव्र मतभेद है। अपनी आवश्यकताओं को निरन्तर बढ़ाते जाने का सिद्धान्त प्रशंसनीय नहीं है। एक समय जब यूरोपीय देश यह समझते थे कि भारतवर्ष चीन व अन्य पूर्वी देश तो लक्कडहारों और कहारो के काम से सन्तुष्ट है हम

इन देशों को तैयार माल से पाट सकते है, लेकिन अब सर्वत्र आर्थिक राष्ट्रीयता का भाव उदय हो रहा है और सब देश आर्थिक दृष्टि से स्वावलम्बी हो जाना चाहते है। विश्व अर्थ सम्मेलन आदि के दुखमय अन्त का ही यही रहस्य है अपने देश भारतवर्ष की आर्थिक समृद्धि के लिये उन्हें एक नये सिद्धान्त का प्रचार करना है। मैं आवश्कतायें बढ़ाते चले जाने में विश्वास नहीं रखता हूँ। यदि हम प्रत्येक भारतवासी की दैनिक आय में एक आने की भी वृद्धि कर सकें तो हम देखेंगे कि देश में तैयार माल की खपत इतनी बढ़ जायेंगी की क्या छोटे और क्या बड़े सब व्यवसाय मिलकर भी वर्षों तक इसकी पूर्ति नहीं कर सकेंगे। निस्सन्देह हमें अपने बड़े व्यवसाय का निर्माण करना है लेकिन इससे भी अधिक छोटे व्यवसायों पर ध्यान देना है हमें अपने ग्रामीण जीवन का पुनः संगठन करना है। यदि हम प्रत्येक ग्रामीण की आय में थोड़ा-सा इज़ाफ़ा कर दें तो भारतवर्ष की सारी आर्थिक समस्या का खुद व खुद हल हो जायें। मैं आप सब स्नातक बंधुओं का आह्वान करता हूँ कि आप इन आधारभूत समस्याओं की और ध्यान दें और इनका उचित हल निकालने में सहयोग प्रदान करें।

पं० गोविन्द वल्लभ पन्त

(सन् 1938)

गुरुकुल एक राष्टीय संस्था है

हमारी वर्तमान सरकार की शिक्षा प्रणाली की इन्हीं बातो से खिन्न होकर स्व० स्वामी श्रद्धानन्द जी महाराज ने इस गुरुकुल की स्थापना की थी और इसके द्वारा अपनी पुरातन शिक्षा प्रणाली को पुनर्जीवित करने का प्रयत्न किया था प्राचीन वर्णाश्रम व्यवस्था को मूर्त रूप देने का इस युग में प्रथम प्रयत्न यह आपकी राष्ट्रीय संस्था है। इस संस्था में स्वामी जी ने प्राचीन भारतीय संस्कारों को, उनमें नवीन आत्मा डालकर प्रचलित किया इसका परिणाम भी अच्छा हुआ यहाँ के स्नातकों के विवाद चाहे अच्छे न हो उनको स्वार्थ त्याग की भावना स्पष्ट रूप से विद्यमान है इन स्नातकों ने समाज के अन्दर नयी भावनायें जागृत की।

हमें तो अपनी विशाल जनता को शिक्षित और सुखी बनाना है। आप को आश्चर्य होगा कि हमारी वर्तमान सरकारी शिक्षा पद्धति पर सौ वर्ष के अमल का परिणाम यह है कि 90 प्रतिशत से अधिक जनता निरक्षर है उसे एक समय पर भरपेट खाना नसीब नहीं होता। इसे यह नहीं मालूम कि हैजे से बचने के लिये क्या उपाय किये जाते है उसे जीवन के साधारण नियमों का भी ज्ञान नहीं है। क्या यह शिक्षा देश को उठा सकती है।

मानव समाज के दु:खों को देखकर यह ख्याल होता है कि शिक्षा ऐसी होनी चाहिये कि दूसरों के दु:ख को देखकर अपनी बली दे सकें वास्तविक सुख अपनी इन्द्रियों की तृषणाओं का पूर्ण करने में नहीं है। भारतीय जनता के दु:खों को हम उस पर तरस रखकर या भीख देकर दूर नहीं कर सकते है हमें उसे स्वावलम्बी बनाना चाहिये ताकि वह अपने पैरों पर उठकर अपना इलाज करा सकें। निर्बल को बलवान से मोर्चा लेने लायक बनाना शिक्षा का एक आवश्यक प्रयोजन है।

हमें शिक्षा में अपनी मर्यादा को स्थान देना चाहिये हमारे यहाँ प्राचीन काल से शिक्षा का धर्म से सम्बंध रहा है शिक्षा का धर्म से अगांगी सम्बंध है लेकिन साम्प्रदायिकता से नहीं शिक्षा और धर्म का विच्छेद वांछनीय नहीं है। हाँ धर्म के बाह्य रूप को ज्यादा महत्व देकर उसके वास्तविक आन्तरिक रूप को कुचल नहीं देना चाहिये धर्म शिक्षा के द्वारा मनुष्य हृदय को संस्कृत करना चाहिये मस्तिष्क के परिष्कार के लिये विद्या होनी चाहिये। मैं चाहता हूँ कि आप के गुरुकुल में इंजिनियरिंग आदि विभिन्न विद्याओं के केन्द्र खुले इनके अध्यापन के लिये समस्त नवीन साधन यहाँ विद्यमान हो यहाँ के स्नातक स्वयं त्याग की दीक्षा लेकर देश को धनवान बनाये अपने को धनवान बनाने की झूठी लालसा जन में न हो। जब बाहर से संसार से अपना सम्बंध बनाये तो अपने को उसका अंग समझे और यह सोचे की उसका हित कैसे कर सकते है।

जब आप स्नातक लोग सेवाव्रत लेकर बाहर देश में विचरण करेंगे तो स्वतन्त्रता की समस्या फौरन सामने आयेगी आपको मालूम है कि आप परतंत्र है और परतंत्र संसार में सिर नहीं उठा सकते परतंत्र व्यक्ति संसार का क्या हित कर सकता है आप स्वतंत्रता की उत्कृष्ट इच्छा को सदा अपने हृदय में स्थान दिये रहो और सत्याचरण करते हुए किसी से दबो नहीं।

सन् 1920 में महात्मा गाँधी ने एक नयी शैली का प्रतिपादन किया तब लोग उनके सत्य अहिंसा असहयोग और और खादी पर हंसते थे लेकिन उनमें आत्मबल था उन्होंने अपने देश के रूप को बदल दिया और एक नयी संस्कृति प्रचारित कर दी जिसके आज इतने अनुयायी और प्रशंसक है ये बातें पुराने लोगों ने भी बतायी थी लेकिन गाँधी जी ने उनका तत्वदर्शन करके नया मार्ग निकाल दिया। यह भारत देश 20 वर्ष पहले की अपेक्षा अपने को अधिक बलवान अनुभव करता है। इसी प्रकार से बुद्ध भगवान् और ईसा मसीह आदि के नाम लिये जा सकते है।

अन्त में मैं आपसे यही कहूँगा कि दलितो और निर्जीवों को उन्नत करने में जीवन का सुख समझो संसार को यह दिखा दो कि स्वामी श्रद्धानन्द जी ने समाज सेवा का जो व्रत लिया था उसी का पदानुसरण करते हुये इस गुरुकुल के स्नातक भी समाज का उपकार, सेवा और भला कर रहें है।

डॉ॰ सम्पूर्णानन्द

(सन् 1939)

गुरुकुल : एक आदर्श विश्वविद्यालय

आपने गुरुकुल के द्वारा एक नया प्रयोग किया है वर्तमान काल की व्यवस्था से प्राचीन आदर्शों को समाने रखकर एक विश्वविद्यालय चला रहें है आजकल पाश्चात्य ढंग से विश्वविद्यालय होने चाहिये जैसे कि बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय है यह (पुराने ढंग के गुरुकुल) यह एक विवादास्पद प्रश्न है इसलिये वे सब लोग जो इस देश की शिक्षा में अभिरूचि रखते है आपके इस प्रयोग को जिसके द्वारा आपने प्राचीन और प्रतीची दर्शन और विज्ञान के समन्वय करने का प्रयत्न किया है उत्सुकता से देखते है इस प्रयोग में कई विशेषतायें है आपने केवल साधारण बस्तियों से दूर हिन्दी के माध्यम से ऊंची शिक्षा देने का आयोजन नहीं किया है। विशेष बात यह है कि आप अपने अन्तेवासियों की वेशभूषा और प्राय: दिनचर्या भी वहीं रखते है जो प्राचीन काल में थी यह विचारणीय विषय है साधारणतया ब्रह्मचर्य आश्रम गृहस्थ आश्रम का प्रवेश द्वार होता है। ब्रह्मचारी उस जीवन के लिये अपने को सज्जित करता है जो उसे आगे चलकर बिताना है। प्राय: उसकी वेशभूषा और चर्या उसकी जिस समाज में रहना और काम करना है, उसके अनुरूप होती है।

शिक्षा पद्धति और शिक्षण विषय के सम्बन्ध में मैं कुछ विशेष नहीं कह सकता आजकल कई प्रकार के विचारों में संधर्ष चल रहा है केवल विज्ञान की शिक्षा देना श्रेयस्कर है या विज्ञान के साथ साहित्य और काव्य का भी अध्ययन होना चाहिये प्रत्येक विद्यार्थी को सभी विषयों में चंचु प्रवेश करने का प्रयत्न होना चाहिये या नहीं यह सब उन प्रश्नों में से है जिस पर विचार हो रहा है किसी भी शिक्षण संस्था की शक्ति असीमित नहीं है प्रत्येक विद्यालय या विश्वविद्यालय को यह सोचना ही पड़ता है कि हम किसको पढ़ाये, क्या पढ़ाये ? मैं समझता हूँ कि आप भी इन प्रश्नों पर विचार करते होगें आज हमारे देश में कई नये प्रयोगों की और ध्यान गया है। उदाहरण के लिये वर्धा पद्धतियों को लीजिये। हम अपने प्रान्त में भी इस प्रश्न पर विचार कर रहें है। अगले वर्ष अर्थात् जुलाई से हम उस ओर आगे बढ़ना चाहते है यह ठीक है कि यह प्रभाव उच्च शिक्षा पर भी पड़ेगा।

परन्तु जहाँ मैं यह कहता हूँ कि शिक्षा पर राष्ट्र सत्ता और साम्प्रदायिक विचारों का हठात् बोझ नहीं डालना चाहिये वहाँ मैं यह भी समझता हूँ कि उसको लक्ष्यहीन भी नहीं होना चाहिये। आज शिक्षा जहाँ स्वछन्द छोड़ दी गयी है वहाँ लक्ष्यहीन भी है इसका कारण यह है कि आज समाज का सारा संगठन समाज का सारा जीवन लक्ष्यहीन भी है इसका कारण यह है कि आज समाज का सारा संगठन समाज का सारा जीवन लक्ष्यहीन है। व्यक्ति का लक्ष्य है धन कमाना सम्पन्न होना आदि ऐसा करने में उसे दूसरों के जीवन को छिन्न-भिन्न करना पड़े तो वह ऐसा निसंकोच होकर करता है। मनुष्य की उन्नति मनुष्य के शोषण पर राष्ट्र के शोषण पर निर्भर है प्रतियोगिता विधि का मूल मंत्र है। सम्पति चेतन योग्यता का मापदण्ड है इसीलिये युद्ध पर युद्ध होते है और सन्धि पर सन्धि टूटंती है।

यदि मनुष्य में संस्कृति का नाम बचा रहना है यदि हमें सभ्य जीवन बिताना है यदि आज तक के सहस्रों प्रत्युत लाखों वर्षों के परिश्रम पर पानी नहीं फैरना है तो सामाजिक जीवन का कोई न कोई लक्ष्य

स्थिर होना चाहिये नीति आचार व्यापार शासन सब उस लक्ष्य को ध्यान में रखकर परिचालित होना चाहिये शिक्षा उसी लक्ष्य के अनुकूल होनी चाहिये आज से बहुत दिन पहले, कितना पहले मैं नहीं कह सकता आर्यों ने समाज का एक चित्र खींचा था वह चित्र आजकल के यथातथ्येन उपयुक्त हो या न हो परन्तु तत्कालीन परिस्थिति में सर्वांग सुन्दर था प्रत्येक व्यक्ति के लिये स्थान था, प्रत्येक स्थान के लिये व्यक्ति था। व्यापार, व्यवसाय सभी इस संगठन के अधीन थे, व्यक्ति को बहुत बड़ी स्वतंत्रता दी गयी थी उससे कोई यह नहीं पूछता था कि ऐकेश्वरवादी है वह्वीश्वरवादी था अनिश्वर वादी है, पर उसका सारा जीवन एक परिधि के भीतर था और वह परिधि थी वर्णाश्रम धर्म। आज यूरोप में एक दूसरे लक्ष्य का उदय हुआ है यह वह लक्ष्य है जो समाजवाद के आचार्यों मार्क्स और एङ्गेल्स और लेनिन ने हमारे सामने रखा है इसमें भी राष्ट्र की और व्यक्ति की सभी प्रवृत्तियां एक परिधि में लायी गयी है इन दोनों विचार धाराओं में एक समानता है और वही समानता उस विजातीयता की द्योतक है जो इन को सब प्रकारों को नात्सी और फासिस्टवादों से पृथक् करती है। न तो वर्णाश्रम धर्म और न समाजवाद किसी राष्ट्र विशेष किसी जाति विशेष की श्री वृद्धि को अपना ध्येय मानते है यह दोनों ही सार्वभौम है। दोनों ही अपरिग्रह, त्याग, लोभ, संग्रह को सभ्य जीवन का आधार मानते है। इस कहने ता तात्पर्य यह नहीं है कि दोनों एक दूसरे के पर्याय है पर हमको आपको और समस्त सभ्य जगत् को सोचना चाहिये कि हम कैसा समाज चाहते हैं मनुष्य मनुष्य में कैसा संबंध चाहते है और फिर इस चित्र के आधार पर शिक्षा का स्वरूप होना चाहिये। यदि समाज के सामने कोई व्यापक लक्ष्य होता तो आज ऐसी दुर्व्यवस्था न दीख पड़ती ऐसे ऐसे अविष्कारों के होते हुये भी पृथ्वी से दरिद्रता, शोषणता और विषता न उठ सकी विज्ञान के प्रचण्ड पंडित अपनी विद्या को धनिको के स्वार्थ साधन की सामग्री बनाने में लज्जित नहीं होते है और ज्ञान तथा धनमयी जो विभूति धरातल को स्वर्गोपन बना सकती है वह निशंक होकर नर संहार में लुटा दी जाती है। व्यक्ति और समाज का अवयवावयवीभाव किसी के सामने नहीं है। विराट् पुरुष की कल्पना के लिये कोई स्थान नहीं है विज्ञान विशारद् को जो आजकल का ब्राह्मण है यह नहीं सिखलाया गया है कि वह शासकों और धनिकों से बड़ा है और समाज मात्र का गुरु, त्राता, मार्ग दर्शक हैं, उसे उन लोगों की भाँति आचरण नहीं करना चाहिये जो ''वानरीमिव वाग्देवीं, नर्तयन्ति गृहे-गृहे'' वरन् भारती का आदर करना चाहिये उसका सत् कार्य के लिए जगत् हिताय ही, प्रयोग करना चाहिये। अन्यथा वह देश को और समाज को भस्मसाद् कर देगी। यह कहने से काम नहीं चल सकता कि व्यक्ति समाज के लिये है क्योंकि अन्ततोगत्वा समाज व्यक्तियों का समूह है यह कहना भी अपर्याप्त है कि शिक्षा का लक्ष्य व्यक्ति का पूर्ण विकास है क्योंकि समाज के बिना व्यक्ति का जीवन अपूर्ण रहता है व्यक्ति को समाज में ही अपने जीवन की सार्थकता और पूर्णता मिलती है और शिक्षा के द्वारा पूर्ण व्यक्ति और पूर्ण समाज की सृष्टि होनी चाहिये।

लोकनायक श्री माधव श्री हरि अणे एम.एल.ए.

(सन् 1940)

आध्यात्मिक और धार्मिक शिक्षा का लक्ष्य

आध्यात्मिक और धार्मिक शिक्षा का लक्ष्य यह होना चाहिये कि वह व्यक्ति की अन्तरात्मा में व्यापक आत्मा के साथ जो भी चराचर प्रकृति का अनुद्भूत आदि कारण है एकत्व की भावना को जगा दें और जीवन का मार्ग ऐसा बना दे कि वह इस महान् और पवित्र सत्ता के विचारों से सहचरित हो शिक्षा प्रणाली के इस भाग को मैं बहुत महत्वपूर्ण और आवश्क समझता हूँ। उत्पादक शक्ति के साथ मनुष्य का संबंध है और मनुष्य की प्रकृति जगत् में स्थिति का उचित विचार मानव का अपना पार्ट अदा करने के लिये आवश्यक है। यदि इस आध्यात्मिक शक्ति को उचित रूप से विकसित होने के विषय में ध्यान न दिया गया तो मानव समाज विश्व शान्ति और विश्व भ्रातृत्व के लिए कोई वास्तविक प्रगति कर सकेंगा इसकी बहुत कम सम्भावना है। शिक्षा प्रणाली में वास्तविक शिक्षा की उदासीनता इतनी स्पष्ट हो चुकी है कि वह उन बहुत से दोषों के लिये उत्तरदायी ठहराई जा सकती है जिन्होंने मानवीय स्थिति को शोचनीय बना दिया है और जिनके कारण मानव इतिहास निरन्तर लडाइयों और अनवरत संघर्षो से भरा पड़ा है भारतीय ऋषियों ने मानव प्रगति के इस दृष्टिकोण के अमित मूल्य को ही नहीं आंका था अपितु इसकी अनिवार्यता और प्रभु की दी हुई विचारों को महान् देन को ही पहचाना था। ब्रह्मचर्य आश्रम के पालन के लिये शास्त्रों में लिखे हुये कठोर नियमों के पालन का ध्यान रखते हुये धार्मिक साहित्य और दार्शनिक व्यवस्थाओं के गहरे अध्ययन को वह आवश्यक समझते है।

सज्जनों! मैंने इस महान् गुरुकुल विश्वविद्यालय की नियमावली और पाठ्य विधि का अनुशीलन किया है इसमें शिक्षा के इस पहलु पर उचित बल देकर मुझे हार्दिक प्रसन्नता हुई।

शिक्षा के जो विषय विज्ञान साहित्य या कला के शीर्षको के नीचे आते है उन्हें हम भौतिक शिक्षण के दायरे में ला सकते है। यहाँ शिक्षा के पंडितों को उन सामूहिक दशाओं पर गौर करना चाहिये जिनमें मनुष्य के शरीर का जीवित रहना और उपयोगी बनाना चाहिये। उसे छात्रों के वैज्ञानिक शिक्षण की समस्या का उसी सावधानता से अनुशीलन करना चाहिये जिस सावधानता से एक सेनापति अपनी सेना की व्यूह रचना की समस्या का अनुशीलन करता है। हमारे विश्वविद्यालयों के छात्रों को परीक्षण कार्य के लिये आवश्यक सहूलियतें नहीं दे सकते वहाँ से उन्हें कोरा जवाब मिलता है। जो शिक्षा प्रणाली अपने पाठ्यक्रम में विज्ञान को आवश्यक स्थान नहीं देती और उसकी शिक्षा के लिये उत्तम प्रबन्ध नहीं करती मैं उसे सर्वथा दोष युक्त समझता हूँ।

शिक्षा का उद्देश्य व्यक्तियों की ऐसी संगठन योग्य और शक्ति सम्पन्न इकाईयाँ बनाना है जिन्हें इस संसार से संघर्ष से जीवित रहने के लिये समूह रूप से सोचना और काम करना पड़ता है। वह संघर्ष कभी आर्थिक प्रतिस्पर्धा के रूप में प्रकट होता है तो कभी सैनिक बलात्कार की शक्ल में सामने आता है कभी-कभी वह मनुष्य सेवा और धर्म प्रचार के निर्दोष वेश में भी व्यक्त होता है रूप कुछ हो परन्तु है वह संघर्ष की जिससे बलवान निर्बलों को शिक्षित अशिक्षितों को और धनी लोंग निर्धनों को अपने अधीन

बनाना और उसके रूधिर से स्वयं रक्त बनाना चाहते है। राष्ट्रीय विश्वविद्यालयों का यह निश्चित उद्देश्य होना चाहिये कि यह जाति के बालकों को इस योग्य बना दे कि वह संसार के इस प्रकार के संघर्ष में दूसरों से पछाड़ ना खाये।

बराबरी की सतह पर किसी भी विदेशी से मेलजोल रखना जाति के आत्मसम्मान के विरुद्ध नहीं है परन्तु देर तक एक जाति का किसी दूसरी जाति की दासता में रहना नवीन जाति को कमजोर और जलील किये बिना नहीं रह सकता।

सत्य और अहिंसा के मूर्त रूप से गाँव के संत श्रद्धेय महात्मा गाँधी के अनुयायी बनने का दावा करने वाले कुछ ऐसे लोग भी है जो नासिक के भोंसला सैनिक विद्यालय की स्थापना पर विश्वास की दृष्टि डालते है मुझे विश्वास है कि सैनिक शिक्षणालय की स्थापना द्वारा इस देश के निवासियों को जो सेवा डॉ॰ मुंजे ने की है गम्भीर निरीक्षण के अन्तर देश उसे कभी अस्वीकार नहीं करेगा भोंसला सैनिक विद्यालय की स्थापना से आधुनिक भारत के इतिहास में एक नवीन युग का प्रारम्भ हुआ जिससे अभी से आशा भरे परिणाम प्रकट होने लगे है इस समय तो हम कुछ बिखरे रूप में यह आन्दोलन देखते है किन्तु कुछ ही वर्षों में यह आन्दोलन शक्ति और सफलता प्राप्त कर लेगा।

मुझे पूर्ण आशा है कि इस महान् शिक्षा केन्द्रों के शिक्षा शास्त्री जो यहाँ पर वैदिक परम्पराओं द्वारा नवयुवको को उन पुरातन महान् आर्यों के योग्य उत्तराधिकारी बनाने का प्रयत्न कर रहें है जिन्होंने समस्त विश्व में वैदिक संस्कृति की पताका फहरायी थी। युवको की सैनिक शिक्षा की आवश्कता पर बल देंगे।

गुरु द्रोणाचार्य के इस आदर्श को नवयुवकों को अपने समक्ष रखना चाहिये।

गुरुदेव श्री रवीन्द्रनाथ ठाकुर

(सन् 1941)

शिक्षा में मानव प्रेम

मनुष्य के मानव प्रेम में स्वभावतः ही ज्ञान की क्षुधा रहती है। यदि हममें राजनैतिक सद्प्रतिवादों के अतिरिक्त इस क्षुधा का सर्वथा अभाव हो तो भी कम से कम निष्काम ज्ञान पिपासा ही हमें एक दूसरे के निकट ला सकती थी परन्तु इसमें भी हम असफल ही रहें और हमें उठानी पड़ी क्योंकि ज्ञान की दुर्बलता शक्ति की दुर्बलता की भित्ति है। जब तक हमारे मन में भारतवर्ष का पूर्ण रूप से स्पष्ट बोध नहीं हो जाता तब तक हम भारतवर्ष को उसके सत्यस्वरूप में नहीं प्राप्त कर सकते और जहाँ सत्य ही अपूर्ण है वहाँ प्रेम का पूर्ण राज्य हो नहीं सकता हमारे शिक्षण केन्द्रो का वरिष्ठ कार्य हमें आत्मानुशीलन में सहायता देना है। तभी इसके साथ ही साथ आत्मनिवेदन के लिये प्रेरणा उत्पन्न करने का दूसरा उद्देश्य भी पूर्ण हो जायेगा।

यूरोप की इतनी विशाल बौद्धिक शक्ति का कारण उसकी मानसिक शक्तियों का सहयोग है। यूरोप ने एक ऐसे साधन का विकास कर लिया है जिसकी सहायता से उस महाद्वीप के सब राष्ट्र एक साथ मिलकर सोच सकते है। विचारों की इतनी बड़ी संघटना अपनी गति के प्रचण्ड प्रभात से स्वभवतः यूरोप के विचारों के सब वैयक्तिक विकारों तथा अयोक्तिकता के अतिशय को मिटा देती है। यह यूरोप के कल्पना के उड़ानों को उद्दाम नहीं होने देती और उसे उपयुक्त सीमा में रखकर शान्त किये रहती है यूरोप की विभिन्न विचार किरणें एक सामान्य संस्कृति में केन्द्रित हो रही है और यह संस्कृति यूरोप के सभी विश्वविद्यालयों में पूर्ण अभिव्यक्त होती है।

दूसरी ओर भारत का चित्र विभक्त और विकीर्ण है। यहाँ कोई समान्य मार्ग नहीं जिस पर चलकर हम इस तक पहुँच सकें हमें बड़े दुख से देखना पड़ता है कि हमारी मानसिक शक्तियों के निर्माण करने वाली शास्त्रीय शिक्षा में संजीवनी शक्ति की न्यूनता है इन मनों द्वारा ज्ञान और सहानुभूति के सहयोग से देश के वृहत्तर मन को समुपलब्ध किया जा सकता है। हमारी शिक्षण संस्थाओं का सबसे अधिक महत्वपूर्ण उद्देश्य प्रत्येक विद्यार्थी को उसके व्यक्तित्व की उपलब्धि करने में सहायता देना है यह उपलब्धि ऐसी होनी चाहिये कि प्रत्येक विद्यार्थी यह उदारतापूर्वक अनुभव कर सकें कि वह व्यक्ति रूप में समूची जाति का प्रतिनिधित्व कर रहा है। यह जानने में समर्थ हो सकें कि इस विशाल मानव जगत् में उत्पन्न होना उसके जीवन का महत्तम तथ्य है।

भारत में यह हमारा दुर्भाग्य है कि हमारे भीतर जो कुछ श्रेष्ठ है उसकी अभिव्यक्ति का वह अवसर हमें नहीं मिलता जिससे संसार के शक्तिशाली राष्ट्रों की संबंध शृंखला पारस्परिक आशंकाओं की कड़ियों से बनी होती है इस शृंखला की दृढ़ता आतंक पर आश्रित है परिणामतः भृकुटी विज्ञान, भर्त्सना तथा भयप्रदर्शन की प्रतिस्पर्धा में साधनों का असाधारण अपव्यय हो रहा है राजनीति के दुःस्वप्न के तमसावृत प्रवेश से सत्य के पवित्र प्रकाश को प्रविष्ट कराने वाली कोई महती वाणी श्रुति गोचर होने की प्रतीक्षा कर रही है परन्तु भारत में हमें अभी अवसर प्राप्त नहीं हुआ है तथा तथापि हमारी अपनी मानवीय वाणी है जिसकी सत्य की आकांक्षा है। उस क्षेत्र में भी जहाँ हम कार्य करने के लिये आमंत्रित नहीं है हमारा यह अधिकार है कि हम निर्णय करें और मानव मन का उचित दृष्टि बिन्दू की और यथार्थ प्रदर्शन करें तथा उसे यथार्थ के हृदय में विद्यमान आदर्शवाद की झांकी दिलाये।

आचार्य श्री क्षितिमोहन सेन

(सन् 1941)

शक्ति स्त्रोत बनो

विद्याव्रत स्नातक तरुण मित्रों,

विशाल है यह सभा। नाना देशों के ज्ञानी और गुणी विद्वज्जनों का यह महान् सम्मेलन है। आज ज्ञान और तपस्या का महायज्ञ यहाँ अनुष्ठित होगा। इस महायज्ञ के जो अधीश्वर है उनके पूर्णाभिषेक के लिए भारत के नाना दिग्देश से यहाँ अर्ध्य उपनीत हुआ है। उत्तर पूर्व भारत की पूजा इस महायज्ञ में उपस्थित करने का सौभाग्य लेकर मैं यहाँ आया हूँ। तथापि ऐसे वरेण्य सत्पुरुषों के रहते हुए मेरा जैसा अनभिज्ञ व्यक्ति किसी प्रकार का सत्कार पाने का अधिकारी नहीं है। फिर भी मेरा एक महा सौभाग्य है कि मैं अवस्था में ज्येष्ठ ज्ञान में श्रेष्ठ भारतमाता के महाप्रतिभाशाली पुत्र महाकवि आश्रम गरु रवीन्द्रनाथ का अर्ध्यपात्र वहन करके इस महायज्ञ में उपस्थित हुआ हूँ।

मैं अपने किसी व्यक्तिगत गुण के लिए यह सम्मान नहीं पां रहा हूँ। मुझे नहीं भूलना चाहिए कि जिस महान् व्यक्ति का अर्घ्यपात्र लेकर मैं यहाँ उपस्थित हुआ हूँ उनके गुणों के कारण ही मैंने यह सम्मान पाने का अधिकार पाया है। प्रिय स्वजनों के गृह से जो दास-दासियाँ सौगात लेकर आती है वे अकिंचन होने पर भी सम्मान पाती है। प्रियजनों की वाणी ले आना मामूली कागज का टुकड़ा भी वरेण्य हो जाता है फिर भी कागज, कागज ही है और उसकी कीमत उस सन्देश के कारण है जो वह लेकर उपस्थित हुआ है। यहाँ रवीन्द्रनाथ की एक छोटी-सी कविता याद आ रही है-

रथ-यात्रा लोकारण्य माह धूमधाम,
भक्तेरा लुटाए पथे करिछे प्रणाम।
रथ भावे आमि देव, पथ भावे आमि,
मूर्ति भावे आमि देव, हासे अन्तर्यामी।।

अर्थात् "रथयात्रा के समय लोगों की भीड़ जमा हुई है, धूमधाम के साथ उत्सव मनाया जा रहा है। भक्तगण भूलुंठित होकर प्रणाम कर रहे हैं। रथ सोचता है, मैं ही देवता हूँ, पथ सोचता है मैं देवता हूँ और मूर्ति सोचती है कि वही असल देवता है। अन्तर्यामी देख-देखकर हंस रहे हैं।" तो भी आप लोगों ने अगर मुझे मेरे सन्देश से भी अलग करके सम्मिलित किया है तो यह आपकी महिमा और गाढ़ प्रीति का ही परिचायक है, मैं अपने को सचमुच ही उस सत्कार और सम्मान का अधिकारी समझकर आपकी इस प्रीति और महिमा को छोटा करना नहीं चाहता।

यह हरिद्वार नगरी तीर्थ और साधना का क्षेत्र है। उस तीर्थ के महात्म्य को आप के गुरुकुल ने बहुत बढ़ा दिया है। इतने दिनों से कितने ही साधकों ने यहाँ ज्ञान की साधना की है और प्राचीन साधना पीठ को नई प्राणधारा से और भी पवित्र और भी प्राणवान तथा और भी महनीय बनाया है। आपने इस पुराने साधनापीठ में शाश्वत वेद वाणी को नवीन रूप में उपलब्ध किया है। यह साधना उषा की भांति ही है, चिर नवीनता लिए हुए है।

इस तपस्या के गुरु श्रीमत् स्वामी श्रद्धानन्द जी को उनके गार्हस्थ्य जीवन में भी देखा है और उनकी तापस् अवस्था में भी, मैंने देखा है। आज उनकी तपस्या को यहाँ मूर्तिमती देखकर ऐसा जान पड़ रहा है कि उनको सम्पूर्ण भाव से उपलब्ध कर रहा हूँ। वे आज परलोक में नहीं हैं, परिचय हुआ था, आप की इस तपस्या में पहले से कहीं अधिक जीवित हैं। उनके साथ जो परिचय हुआ था, वह परिचय मुझे पूर्ण और सार्थक जान पड़ता है। हे स्नातक गण! तुम्हें आज इतनी जल्दी छोड़ने से तो काम नहीं चलेगा। ब्रह्मचर्य और गार्हस्थ्य के संधिक्षण में तुम उपस्थित हो। तुम जब हमसे पथ-निर्देश की आशा करते हो तब तो चुप रहना सम्भव नहीं है।

दिन की जहाँ समाप्ति है और रात्रि का जहाँ आरम्भ या फिर रात्रि की जहाँ समाप्ति है और दिन का आरम्भ होता है उन पवित्र संधि-क्षणों को भागवत् मुहूर्त कहते हैं। तुम्हारे भी छात्र जीवन का अवसान और उत्तर जीवन का आरम्भ होने जा रहा है। इस भागवत् पुण्य क्षण में तुम्हें कुछ बताने वाले के भीतर तुम्हारे प्रति एक गम्भीर श्रद्धा की आवश्यकता है।

स्नताक गण, तुमने आज तक प्राचीन शास्त्रों में ही बातें पढ़ी है, इन सब महासत्यों को शास्त्र में ही बद्ध रखने से काम नहीं चलेगा। भागीरथ जिस समय तप्त और मलीन मानव के लिए ब्रह्म कमण्डलु के समान पवित्र स्थान से भी गंगा को बहाकर ले आये थे उसी प्रकार तुम लोग भी इन महासत्यों को शास्त्र की पवित्र भूमि से निकालकर जगत् को बचाओं और स्वयं को धन्य होवो। ज्ञान को यदि मुक्ति दे सकों तभी तुम भी मुक्ति पाओगे। ज्ञान यदि पा सके। तो मुक्ति के विषय में कोई चिन्ता नहीं है। ज्ञान ही तो परम मुक्ति है। जिसका ज्ञान ही बद्ध है उन्हें मुक्ति कौन दे सकता है। गुरु के नाम के लिए देश के सर्वश्रेष्ठ मानवों की जरूरत होती है। यूरोप पैसा देकर ऐसे मनुष्यों को संग्रह करता है। भारत वर्ष ऐसों को श्रद्धा भक्ति देकर संग्रह करता था। इस देश में अध्यापकों के सम्मान की सीमा नहीं थी। गुरु और अध्यापक ही ज्ञान का प्रदाता होता है। जिसकी असीम कृपा से ज्ञानार्जन सम्भव होता है।

हमारे देश में गुरु और शिष्य की सम्मिलित तपस्या में ही ज्ञान की साधना है। उस साधना का पुण्यपीठ तापोवन थे। मानव जीवन की तपस्या को चार भाग करके उसकी चिन्मय संपद की उपलब्धि और परिचय का अवसर तरुण जीवन को दिया गया था, तारुण्य को ब्रह्मचर्य ही चारों आश्रमों की प्रतिष्ठा भूमि थी। गुरु के चरण तले बैठकर तरुण गण जो ज्ञान पाते थे उसी ज्ञान को जीवन में प्रतिष्ठित करने का साधन था, गृहस्थाश्रम और अपने जीवन को उस महान् आदर्श की ओर अग्रसर कर देने के लिए अन्तिम दो आश्रमों की व्यवस्था थी।

इतने बड़े महाव्रत के लिए स्वामी दयानन्द और स्वामी श्रद्धानन्द जी ने तुम्हें पुकारा था। अपने चित्त की दीनता के कारण उनकी पुकार को यदि छोटा करके देखोगें तो उसका अपमान करना होगा और यदि तपस्या में अवसन्न हो पड़ोगे तो अपने अतंरात्मा का अपमान करोगे। आज इस समावर्त्तन के दिन तुम्हें स्मरण करा देता हूँ कि उस महान् पुकार का जवाब तुम्हें देना होगा, किसी प्रकार की कायरता तुममें नहीं रहे क्लेव्यं मा स्म गमः पार्थ। तुम्हें कहना होगा कि जगत् में जो कुछ घोर है, जो कुछ क्रूर है, जो कुछ पाप है, हमारी तपस्या से वह सब शान्त हो, सबका कल्याण हो।

> शमयामोहं यदिह घोरं यदिह क्रूरं यदि पापं
> तच्छान्तं तच्छिवं सर्वमेव शमस्तु नः।। अथर्व. 19.9.14

डॉ॰ श्यामाप्रसाद मुखर्जी

(सन् 1943)

गुरुकुल शिक्षा पद्धति : "राष्ट्रीय चेतना का द्वार"

गुरुकुल विश्वविद्यालय के सदस्य वृन्द, देवियों तथा भद्र पुरुषो!

आपने दीक्षान्त अभिभाषण के लिए मुझे निमन्त्रित कर मेरी जो प्रतिष्ठा की है उसके लिए मैं हृदय से आपका आभार स्वीकार करता हूँ। इस महान् विद्यापीठ में जिसे हम अपनी राष्ट्रीय सम्पत्ति समझने में अभिमान अनुभव करते है, यह मेरा प्रथम आगमन है। मैं इस संस्था के संस्थापक स्वनामधन्य अमर शहीद स्वामी श्रद्धानन्द जी तथा उनके प्रसिद्ध उत्तराधिकारियों की स्मृति में अपनी श्रद्धांजलि समर्पित करता हूँ। उनमें शिक्षा के नूतन आदर्शों को प्रतिष्ठित करने की क्रान्त दृष्टि एवं उत्साह के साथ-साथ आदर्शों को ऐसी संस्थाओं के रूप में कार्यान्वित करने की योग्यता तथा दृढ़ निश्चय भी थे।

आज हम इतिहास के चतुष्पथ पर खड़े है। उच्चकोटि के प्राचीन दाय से सम्पन्न "स्वर्गादपि गरीयसी" हमारी मातृभूमि अपने सिद्ध अधिकार स्वतन्त्रता पद की प्राप्ति के लिए संघर्ष कर रही है। भारतीय स्वतन्त्रता का अन्तिम युद्ध शिक्षा द्वारा ही जीता जायेगा। सांस्कृतिक, आर्थिक, सामाजिक व राजनीतिक पुनर्निर्माण का महान् कार्य शिक्षित एवं सुनियोजित भारतीयों के सम्मिलित प्रयत्नों से ही हो सकता है। भारत के अतीत गौरव, महत्ता, उसकी शक्ति एवं दुर्बलताओं से परिचित शिक्षित व्यक्ति ही देश के सामने कार्य का ऐसा पुरोगम रख सकते हैं, जो भारतीय सभ्यता की मौलिक परम्पराओं की रक्षा करता हुआ आधुनिक जगत् की परिवर्तमान परिस्थितियों के अनुसार ढ़ाला जा सके।

हमारी आज की प्रधान समस्याओं में से एक यह है कि राष्ट्रीय शिक्षा पद्धति की पुनःयोजना हमारी आवश्यकताओं और आंकाक्षाओं के अनुकूल होनी चाहिए। हम नहीं जानते कि हमारी राजनैतिक परिस्थिति कब ऐसी होगी कि हम इस योजना को कार्यान्वित कर सकेगे, किन्तु यह युद्धोत्तर पुनर्निर्माण का मुख्य भाग होना चाहिए। जिसमें सब विचारों का प्रतिनिधित्व हो और जो यह विचार करे, कि हमारी भावी शिक्षा का पुरोगम किस तरह का होना चाहिए। यह कार्य सुगम नहीं होगा। संक्षेप में, हमारा उद्देश्य यह होना चाहिए कि प्रत्येक भारतीय बालक का यथासंभव इतना विकास हो सके कि वह अपने को स्पष्ट रूप से अपने देश के साथ एक अनुभव करें। वह अपने देश के अतीत की परम्पराओं को समझे तथा उसके वर्तमान के जीवन और कार्यों में तथा भविष्य की आकांक्षाओं और उत्तरदायित्व में अपना अंश प्रदान करें। भारत जैसे विशाल देश में विभिन्न प्रान्तों में अपनी-अपनी समस्याएं होगी। पर हमारा उद्देश्य यह होना चाहिए कि हम प्रत्येक भारतीय बालक के हृदय पटल पर भारतीय एकता की भावना के प्रति गहरी भक्ति के भाव अमिट रूप से अंकित कर दें। उसके दैनिक जीवन को ऐसा नियन्त्रित करें कि उसको हमेशा यह ध्यान रहे कि वह जो कुछ कर रहा है, अपने राष्ट्र की उन्नति के लिए कर रहा है और अपने राष्ट्र द्वारा विश्व की उन्नति के लिए कर रहा है।

आइये हम भारत के लाखों त्रस्त प्राणियों की वाणियाँ अपने में केन्द्रित करें और कवीन्द्र रवीन्द्र के शब्दों में सत्य और न्याय के मार्ग पर चलने का दृढ़ निश्चय उद्घोषित करें। मातृ भूमि की मुक्ति के लिए बड़े से बड़ा त्याग और बड़ी से बड़ी तैयारी करने के लिए कटिबद्ध हो।

चित्त जेथा भय शून्य, उच्च जेथा शिर।
ज्ञान जेथा मुक्त, जेथा गृहेर प्राचीर।।
निज हस्ते निर्दय आघात करि पिता।
भारतेर सेई स्वर्ग करो जागरित।।

"जहाँ चित्त भय शून्य है, जहाँ मस्तक उच्च रहता है जहाँ ज्ञान मुक्त है, जहाँ जगत् क्षुद्र घराऊ दीवारों से खंड-खंड नहीं कर दिया गया है। जहाँ शब्द सत्यता की गहराई से निकलते हैं, जहाँ अनथक पुरुषार्थ अपनी भुजाओं, को पूर्णता की ओर बढ़ाता है, जहाँ विचार के स्रोत ने अपने मार्ग को तुच्छ आचार की भयानक मरुभूमि में लुप्त नहीं कर दिया है, जहाँ के निवासियों का मन सदा विस्तृत होने वाले विचारों और कर्मों की ओर अग्रसर रहता है, ऐ मेरे पिता! स्वतन्त्रता के ऐसे दिव्य लोक में मेरा देश जागृत हो।"

डॉ॰ अमरनाथ झा

(सन् 1944)

शिक्षा का ध्येय

शिक्षा का ध्येय क्या होना चाहिए ? आपके उपाध्याय वर्ग आपको शिक्षा क्यों देते है ? आप यहाँ क्यों आए है ? कभी आप इन प्रश्नों का उत्तर सोचते है ? आप शिक्षा प्राप्त करके किस योग्य बनते है ? हमारे शास्त्रों के अनुसार शिक्षा के ये उद्देश्य थे- श्रद्धा, मेधा, प्रजा, धन, आयु, अमृततत्व! आप देखेंगे कि ये उद्देश्य कितने सर्वव्यापी हैं। श्रद्धा माता-पिता के प्रति, गुरुजनों के प्रति, ईश्वर के प्रति विनय, अपने को अहंकार से बचाना, बुद्धि का विकास, बुरे-भले का ज्ञान, विचार शक्ति पुष्ट और हृष्ट संतान उत्पन्न करना, धनोपार्जन की योग्यता प्राप्त करना, आयुष्मान् होना, शरीर की रक्षा करना, बलवान होना, अमृततत्व प्राप्त करना- ये शिक्षा के उद्देश्य हैं। विद्या विवाद और वितंडा के लिए नहीं, ज्ञान के लिए, धन विलास और व्यसन के लिए नहीं, दान के लिए, शक्ति ओरों को कष्ट देने के लिए नहीं, निर्बलों की सहायता के लिए यह लक्ष्य होना चाहिए। सदा ध्यान इसका रहना चाहिए कि व्यावहारिक क्षमता से पारभार्थिक उन्नति होनी चाहिए। यदि आप केवल धनोपार्जन के योग्य बनना चाहते है तो समाज को आप से कोई आशा नहीं हो सकती है। आप यदि केवल अपने शरीर को सुन्दर और पुष्ट बनाना चाहते हैं तो आप पहलवानों के अखाड़ों में जाकर रहिए। विद्यापीठ की शिक्षा तो ऐसी है कि यहाँ से जब आप बाहर जाएं तो आप के मुख पर स्वास्थ्य और सच्चरित्र की झलक हो, आप के मन में लोक सेवा की भावना हो, आपके मस्तिष्क में सदसद् का विवेक हो, आप के शरीर में अन्याय निवारण की शक्ति हो, आप के हृदय में ईश्वर की आराधना हो।

स्नातकों! आप आर्य सन्तान हैं और आपका कर्त्तव्य है कि आप अपने आचरण से आर्य कहलाने योग्य बनें। अपने ग्रन्थों से हम जान सकते है कि आर्य सन्तान से किन बातों की आशा की जाती हैं। देवव्रत को स्मरण कीजिए। शान्तनुपुत्र राज्य का उत्तराधिकारी, अपने पिता को सुखी करने के कारण, आजन्म ब्रह्मचारी रहने की प्रतिज्ञा करता है। राजा की सेवा में अपना जीवन व्यतीत करता है। राजा को इष्ट-अनिष्ट का उपदेश देता है। सभा में, रणक्षेत्र में, राज के हितसाधन में यथाशक्ति लगा रहता है। कुरुक्षेत्र में इस वीरता और शौर्य एवं पराक्रम से लड़ता है, पांडव सेना का इस प्रकार संहार कर कौरवों को इतना उत्साहित करता हैकि श्रीकृष्ण अपनी प्रतिज्ञा भंग करके शस्त्र उठाते हैं और भीष्म हाथ जोड़कर प्रणाम करता है- "एह्येहि, देवेश! जगन्निवास!" रात को जब दोनों सेनाएं आराम करती है, तो कौरव और पांडव दोनों पितामह के पास जाकर अपनी भक्ति और श्रद्धा समर्पित करते है। जो कभी अपने कर्तव्य-पथ से भ्रष्ट नहीं हुआ, उसका कितना सम्मान है।

आज संसार में बड़ा संघर्ष है। सभ्यता के जीवन मरण का प्रश्न है। शान्ति कठिन है अशान्ति फैली हुई है। असहिष्णुता, लोभ, ईर्ष्या, क्रोध का प्राधान्य है। ऐसे समय में हमारा कर्तव्य क्या है, एक तो यह कि हम अपने आदर्शों को न भूलें और दूसरा यह कि उनकी रक्षा के लिए हमें जो कुछ भी करना पड़े, हम करें। यदि शस्त्र ग्रहण करना पड़े, रण में जाना पड़े, जान से हाथ धोना पडे, तब भी अपने देश, अपने आदर्श, अपने धर्म की रक्षा हम करेंगे। हमें विश्वास है कि इनकी रक्षा से संसार का कल्याण होगा, हमारा

दृढ़ मत है कि हमारी संस्कृति में अमर होने की शक्ति है हमारी सभ्यता के मूल सिद्धान्तों के अनुकरण करने से जगत् का हित है। "ओ३म् शान्ति, शान्ति शान्ति"- इस मंत्र से विश्व की भलाई होगी। शान्ति की स्थापना के लिए हमें यत्नशील होना चाहिए। आपकी शिक्षा का यह तो फल अवश्य होना चाहिए कि यदि संसार में शान्ति नही है तो कम से कम आप के हृदय में शान्ति रहें, आपका अन्तःकरण भय शून्य रहें, आप क्षमावान् हो, आप में धैर्य हो, आपका चित्त आपके वश में हो आप में संयम हो, आपकी प्रज्ञा संफल हो, सत्य से आप को प्रेम हो, अपकर्म से आप पराङ्मुख रहे, आप में श्रद्धा और भक्ति तथा दया रहे। एक दूसरे के प्रति सुहृद्भाव रहें। आपका वचन मधुर हो, आप का आचरण सुन्दर हो, आपकी भावना शुद्ध हो।

समानं मनस्सह चित्तमेषाम्।
समानं मंत्रमभि मंत्रये वः,
समानेन वो हविषा जुहोमि।।

डॉ॰ राजेन्द्र प्रसाद (राष्ट्रपति)

(सन् 1945)

शिक्षा का उद्देश्य

हमारे गुरुकुलों तथा अन्य राष्ट्रीय विद्यालयों का इसीलिए यह उद्देश्य होना चाहिए कि आवश्यक ज्ञान-विज्ञान की चर्चा और संप्रदान करते हुए भी वे हमें आत्मनिग्रह, त्याग तथा सेवा की दीक्षा दें।

शिक्षा का प्रधान उद्देश्य व्यक्ति का चरित्रवान्, उसकी दैहिक और आत्मिक शुद्धि उसका मानसिक विकास है पर इतने से ही उसका काम संसार में नहीं चल सकता। मनुष्य तो अधिकांश में सामाजिक जीव है, वह तो संसार का एक अंग और वह भी छोटा सा अंग है। वह अपने इर्द-गिर्द रहने वालों अपने समाज और देश के लोगों से किनारे रहकर उन्नति नहीं कर सकता। यही नहीं बल्कि अपनी परिस्थति के भला या बुरा होने पर अपने सगे सम्बन्धी अपने हितमित्र, अपने ग्रामवासी, प्रांतवासी या देशवासी के सुख-दुःख पर उसका भी अनेकांश में भला, बुरा सुख-दुःख निर्भर है। इसीलिए वह जो कुछ जानता है, जो कुछ सीखता है, जो कुछ उपार्जन करता है, जो कुछ भी शक्ति आर्थिक, मानसिक व आत्मिक उसके पास है, सबका उचित उपयोग यहीं हो सकता है कि उन्हें वह अपने लोगों के हित में लगावें।

आज की सरकारी शिक्षा प्रणाली इसकी विपरीत दिशा की ओर प्रबल वेग से दौड़ती जा रही है। यदि के इसके इतिहास की समीक्षा की जाये तो पता लगेगा कि हमें अपने वास्तविक जीवन केन्द्र देहातों से हटाकर नगर की ओर ही लिए जा रही है। हम इतने दिनों में क्या बने है- वकील, इन्जीनियर, डाक्टर और सबसे बढ़कर सरकारी दफ्तरों के नौकर ही बने है। जो लोग अपने को स्वाधीन पेशेवर कहते है, जैसे वकील, डॉक्टर, इन्जीनियर आदि वे भी नाम के ही स्वाधीन है। वास्तव में वे उतने ही पराधीन है जितना कि कोई साधारण सरकारी नौकर हो सकता है। वे जहाँ चाहें वहाँ जा कर अपनी विद्या बुद्धि या कौशल का उपयोग नहीं कर सकते। थोड़े से इने-गिने शहरों में ही उनका जौहर खुलता और खुल सकता हे। जिन साधनों, उपकरणों के जरियें वे अपना काम करते है, वे नगरों की ही कृति है, वहीं उनकी प्राप्ति सुलभ है, वहीं उनका प्रयोग और उपयोग सम्भव है। नौकरी ने तो अफीम की घुट्टी की तरह हमें निर्बल, निश्चेष्ट, निरुद्यम, निरुत्साह बना दिया है। हममें सोचने समझने की यहाँ तक कि हाथ पैर चलाने की भी शक्ति बाकी नहीं रह गयी है। नौकरी ने हमें इतना निस्सार बना दिया है, हम संकीर्ण हो चुके है।

हमारी शिक्षा को उसकी अनुगामिनी होना है, केन्द्रानुग शक्ति की तरह उसे सदा उसी केन्द्र की ओर संचारित होना है उसे सर्वथा ग्रामाभिमुखी बनाना हैं, हम बहुत दिनों तक लक्ष्य भ्रष्ट, पथभ्रष्ट होकर इधर उधर घूम रहे है। हमें शीघ्र अपने वास्तविक लक्ष्य अपने सच्चे पथ पर आ जाना चाहिए और गुरुकुल जैसी राष्ट्रीय संस्थाओं को ही इस ओर हमें फेरने का हमें इस पथ पर ले जाने का श्रेय होना चाहिए जिससे विद्यार्थियों में सच्चरित्रता और शुद्ध सेवा उत्पन्न करके उनको इस योग्य बनावें कि देश हित और लोकहित के काम उनके द्वारा सम्पादित हो सके। इसलिए विद्यालयों का मुख्य कर्तव्य विद्यार्थियों के चरित्र का गठन है पर वहाँ पर जीवन भी कुछ ऐसा होना चाहिए जिससे भविष्य के काम का कुछ अनुभव भी छात्रों को ही जाये। इस कारण ज्ञान-विज्ञान के विषयों के अतिरिक्त शिक्षा क्रम में ऐसे विषयों का समावेश होना

चाहिए। जिससे ग्राम जीवन के विविध अंगों से उन्हें पूर्ण परिचय हो जायें। और ग्रामीणों की सेवा की पूरी योग्यता उनमें आ जाए।

गुरुकुल के स्नातकों और ब्रह्मचारियों! आप के सामने यह महान् कार्य पड़ा हुआ है। आप की शिक्षा दीक्षा का यही परिणाम होना चाहिए कि आप इस काम को उठावे और इसके सम्पादित करने में अपनी सारी शक्ति लगावे। आप को इस काम में उत्साहित और अनुप्राणित करने के लिए आप के सामने आप के आचार्य इसी गुरुकुल के अधिष्ठाता और प्राणपूज्य स्वामी श्रद्धानन्द जी का उज्जवल जीवन और उससे भी अधिक देदीप्यमान मरण उदाहरण स्वरूप वर्तमान है। आप उनके ही प्रदर्शित पथ पर चलने की चेष्टा कीजिए। आप उन्हीं की तरह वीर-धीर और साहसी बनिए। आप उन्हीं का देशप्रेम, लोकप्रिय सेवा भाव उपार्जन कीजिए। आप उन्हीं के जैसा सब प्रकार के भेदभाव से दूर रहकर प्रेम सहानुभूति और सहिष्णुता से सबकी सेवा करना सीखिए। पूज्य स्वामी जी की गुरुकुल स्थापित करने में यहीं आन्तरिक मनोकामना थी इसी को पूराकर आप उनका और उनके कार्यों तथा आदर्शों का सच्चा स्मारक बनाए। ईश्वर से प्रार्थना कीजिए कि वह आप को यह निष्ठा और यह शक्ति प्रदान करें।

पं॰ इन्द्र विद्यावाचस्पति

(सन् 1947)

गुरुकुल के मूल सिद्धान्त

प्रिय नव स्नातको! मैं इस वर्ष गुरुकुल विश्वविद्यालय के स्नातक बनने पर आप लोगों को विशेष रूप से बधाई देता हूँ। आप लोगों ने अपने जीवन के उभरते हुए युग में, एक लम्बी तपोमयी यात्रा को सफलता से समाप्त किया है। यह बात सामान्य रूप से कुछ कम बधाई के योग्य नहीं है। परन्तु इस अवसर पर विशेष बधाई देने के दो कारण है। एक तो यह कि यह समय उन आदर्शों और सिद्धान्तों की विजय घोषणा का है। जिनके आधार पर गुरुकुल की स्थापना की गयी थी और दूसरा यह कि इस समय, हमारी मातृभूमि को गुरुकुल की शिक्षा और दीक्षा प्रणाली द्वारा सुसंस्कृत भारतीय युवकों की विशेष आवश्कता है।

यदर्थं क्षत्रिया सूते तस्य कालोऽयमागतः।

जिस प्रयोजन से क्षत्राणी कुलमाता ने हमें दूसरा जन्म दिया है, उसे पूरा करने का समय आ गया है। हमारी बड़ी माँ अपनी दासता को तोड़कर स्वतन्त्रता के उज्ज्वल आकाश में अपना सिर ऊंचा करने जा रही है। यह एक महान् यज्ञ है जो भारत पुत्रों की आहुतियों के बिना पूर्ण नहीं हो सकता। वह भारत पुत्र धन्य होंगे जिन्हें इस महान् यज्ञ में आहुति बनने का सौभाग्य प्राप्त हों जायेगा। प्रिय नवस्नातकों! आप लोगों को अवसर मिल रहा है कि आप भारत माँ के धन्य पुत्र बनो। इन दो कारणों से मैं इस वर्ष स्नातक बनने पर आप को विशेष रूप से बधाई देता हूँ।

मैंने कहा कि यह समय उन आदर्शों और सिद्धान्तों की विजय घोषणा का है। जिन पर गुरुकुल की स्थापना की गयी थी। भारतवर्ष में 45 वर्षों की गत शिक्षा की प्रगति के इतिहास पर दृष्टि डाले तो प्रतीत होता है कि वह प्रगति गुरुकुल शिक्षा प्रणाली की ओर को रही है। गुरुकुल के वे मूल सिद्धान्त जिन्हें हम व्यवच्छेदक कह सकते हैं।

जिनके कारण वह अन्य शिक्षण संस्थानों से भिन्न किया जा सकता है निम्नलिखित है:-

1. शिक्षण संस्था का सरकारी नियन्त्रण से स्वाधीन होना।
2. शिक्षा में राष्ट्रीय भावना और राष्ट्रीय शिक्षा की मुख्यता।
3. गुरु शिष्य सानिध्य और आश्रम प्रणाली द्वारा चरित्र निर्माण को शिक्षा का आवश्यक और प्रमुख अंग मानना।

इस गुरुकुल के समर्थक और स्नातक यह सन्तोषपूर्वक कह सकते है कि आज भी उपर्युक्त तीनों मूल तत्वों का एकीकरण केवल गुरुकुल में ही प्राप्त हो सकता है। गत 45 वर्षों में सरकार द्वारा या गैर सरकारी तौर से शिक्षा सम्बन्धी जो कमीशन बिठाये गये है उनकी रिपोर्टों के अध्ययन से आप इस परिणाम पर पहुँचेंगे कि देश के प्रायः सभी शिक्षाविज्ञ लार्ड मैकाले की रिपोर्ट के आधार पर बनाई हुई सरकारी शिक्षा पद्धति पद्धति से असन्तुष्ट थे और उसे भारतवासियों के लिए अनुपयुक्त और मनुष्यता की सम्पूर्ण उन्नति का विरोधी समझते थे। जो सुधारणायें प्रस्तुत की गयी हैं। उनका विश्लेषण करने से प्रतीत होगा कि उनका

झुकाव उन्हीं मूलतत्वों की ओर है, जिनके आधार पर गुरुकुल की स्थापना की गई थी।

गुरुकुल ने आप लोगों को अपने देश भारत और उसकी संस्कृति से प्रेम करना सिखाया है और सिखाया है उनके लिए अपने तन-मन की आहुति देना। आर्य जाति के भाग्यपूर्ण समय में जाति के पुत्रों में जिन गुणों की आवश्यकता है, गुरुकुल की दीक्षा का ध्येय उन गुणों से युक्त युवकों को तैयार करना है। आप लोगों ने वह दीक्षा समाप्त कर ली है। इधर आप दीक्षान्त के लिए उद्यत हुए है और उधर देश आप जैसे युवकों को कर्मभूमि में उतरने के लिए पुकार रहा है। मैं इस अवसर पर आप लोगों को बधाई देता हूँ। ऐसे अवसर के लिए भगवान् कृष्ण ने कहा है-

> यदृच्छया चोपन्नं स्वर्गद्वारमपावृतम्
> सुखिनः क्षत्रियाः पार्थ लभन्ते युद्धमीदृशम्।

आप लोगों के सोचने की बात तो यह है कि अब गुरुकुल की शिक्षा समाप्त करके हम क्या करें ? इस प्रश्न का उत्तर इस समय यही है कि आप इस अलभ्य अवसर से लाभ उठाएं। आप को अपनी योग्यता और गुणों द्वारा आर्य देश, आर्य जाति और आर्य संस्कृति की सेवा का जो अपूर्व समय मिला है, उससे पूरा-पूरा लाभ उठाये इसी में आप का कल्याण और गुरुकुल माता का यश है।

श्री नरहरि विष्णु गाडगिल

(सन् 1949)

स्वतंत्रता की रक्षा

भारतीय सभ्यता एवं संस्कृति विश्व में फैली हुई थी। उसकी प्रतिष्ठा इसलिए थी कि उसे अपनी संस्कृति समझते थे। लेकिन आज हम संस्कार एवं प्रथा के पीछे पड़े हुए है। अत: यही हमारी दासता का कारण था। अत: यदि आज पुन: हम संस्कृति को समझने लगें तो हमारी प्रतिष्ठा सारे संसार में पुन: फैल सकती है।

स्वतन्त्रता की रक्षा-नवयुवक हमारे देश के उज्ज्वल भविष्य हैं। आज स्वाधीनता का सुअवसर उसके समाने है। हमने अपने स्वप्नों को साकार कर दिया, जिसकी रक्षा करने का उत्तरदायित्व नवयुवकों पर है। यदि आज नवयुवक सामने आकर उसे नहीं समझेंगे, तो देश समृद्ध होते हुए भी गरीब रहेगा।

अनुशासन आवश्यक है- इस नवीन स्वाधीनता की रक्षा का उत्तरदायित्व पूर्ण करने के लिए आवश्यक है कि नवयुवक पूर्ण अनुशासन एवं नम्रता से रहें।

पराधीनता के समय हमारा दृष्टिकोण ओर था। आज निर्माण का अवसर है। प्रत्येक कार्य के लिए कठोर प्रयत्न की आवश्यकता है। इसके लिए कठोर अनुशासन रखने के लिए सतत् प्रयत्न करना पड़ेगा।

सादा जीवन व समृद्धि- सादा जीवन व समृद्धि में कोई विरोध नहीं है। लौकिक विकास से देश को समृद्ध किया जाता है। लेकिन प्राचीन आध्यात्मिकता की उपेक्षा करना हानिकारक हो सकता है। इसे समृद्ध करने के लिए करोड़ों व्यक्तियों के सहयोग की आवश्यकता है।

विश्व की संस्कृतियों में भारतीय सभ्यता एवं संस्कृति महान् है। पर कैसी विडंबना है कि हमने संस्कृति को भूलकर संस्कार को पकड़ रखा है। उससे हमारी प्रतिष्ठा को धक्का लगा है इसलिए हमें संस्कार के स्थान पर संस्कृति व सभ्यता का अनुसरण करना चाहिए। युवक अपनी जिज्ञासा की वृत्ति को सदा जागरूक रखें तभी वे सच्चे ज्ञान के अधिकारी बनेंगे।

नरहरि विष्णु गाडगिल

(सन् 1950)

संस्कृत भाषा पुनरुद्धार में ही भारत का हित निहित है।

आज इस विश्वविद्यालय के स्वर्णजयन्ती के अवसर पर आयोजित इस संस्कृत सम्मेलन के सभापति के रूप में मैं आप के समक्ष खडा हूँ। इसमें मेरी योग्यता कारण नहीं हैं, अपितु आपका ममत्व भाव ही कारण है। गत वर्ष भी इस ममत्व के कारण मुझे बुलाकर इस विश्वविद्यालय के अधिकारियों ने अपने विचारों को प्रकट करने का अवसर दिया था उसी प्रसन्नता से पराधीन हुआ सा आकृष्ट चित्त वाला मैं अधीर जनों के स्वभाव के समान उसी प्रेम को स्थायी करने के लिए वही धृष्टता कर बैठा हूँ। इस सम्मेलन का समस्त कार्य तो विद्वज्जन ही करेंगे। मैं तो केवल उस भाव से यहाँ बैठा हूँ जिस भाव से गाँव के अन्दर कोई मेहमान रहता है। वास्तव में तो इस सभा में मेरा मौन ही शोभा देता है, वक्तव्य नहीं। भारत वर्ष में जो आद्य भाषा है, जो शिव के डमरू से निकली हुई, नाद-मधुर और प्रसाद के मुक्त भाषा है, वह यही संस्कृत भाषा है। उसी के रत्नों और आभूषणों से जुड़ी हुई और उसकी छत्र-छाया में चन्द्रमा की कली के समान उत्तरोत्तर बढ़ने वाली हिन्दी भाषा आज इस महान् देश की राज्य भाषा के पद पर विराजमान है जैसे एक विशाल जलाशय से नाना दिशाओं को बहने वाली नदियां निकलती है, वैसे ही इस देश के अन्दर हिन्दी, मराठी, गुजराती, बंगला आदि भाषाएं संस्कृत भाषा से ही निकली है।

इस देश की समस्त भाषाओं की वृद्धि के लिए और राज्य भाषा हिन्दी की अभिवृद्धि के लिए संस्कृत की अभिवृद्धि उसकी प्रतिष्ठा और गौरव अत्यावश्यक किया जा रहा है। जिस प्रकार पृष्ठभूमि की अनुरूपता में वहाँ पर अंकित चित्रों का सौन्दर्य नयन मनोहर होता है। वही बात यहाँ भी समझनी चाहिए। विद्या स्वान्तः सुखाय न रहीं अपितु इसके ग्रहण करने से कितने लौकिक अधिकार प्राप्त किये जा सकते है। इस विषय पर ही सबकी दृष्टि स्थिर हो गयी है। अनेक युगों से आती हुई शास्त्रज्ञ पंड़ितों की परम्परा शिथिल हो गयी है। यहाँ पर यह बात समाप्त नहीं हुई, अपितु ये शास्त्री ओर पंडित उपहास के पात्र बन गये। प्राकृत भाषा में उपनिषद् साहित्य में इस प्रकार के अनेक उदाहरण प्राप्त होते है। राज्य का आश्रय न रहने पर भी प्रजाओं के उदासीन हो जाने पर अत्यन्त गरीबी की दशा में भी तथा अत्यन्त प्रतिकूल समय में भी जिन्होंने संस्कृत विद्या का परिरक्षण किया वे लोग धन्य है और हमारे लिए आदर के पात्र है।

पंजाब में स्वामी दयानन्द सरस्वती के द्वारा जो वैदिक धर्म की पताका फहरायी गयी उसके साथ संस्कृत भाषा का उद्धार फिर से प्रारम्भ हुआ। जैसा कि मैं जानता हूँ, बहुत वर्षो से अनेक विश्वविद्यालयों, पाठशालाओं और महाविद्यालयों में द्वितीय भाषा के रूप में संस्कृत भाषा को प्रवेश दिया गया है। वहाँ पर यह भाषा नवीन पद्धति के अनुसार विशेष रूप से कुछ क्रमिक पुस्तकों के आधार पर ही पढ़ाई जाती है। रूपावर्ति, समास चक्र, सिद्धान्त कौमुदी, पाणिनीय सूत्र आदि ग्रन्थों का परिचय अथवा उनमें प्रवेश कहीं कहीं पर दिखाई देता है, फिर भी कहीं-कहीं पर प्राचीन पद्धति से अध्यापन के स्थान भी विगत 50 वर्षो से इस देश में बने हुए है जिस संस्था के स्वर्ग महोत्सव का आरम्भ आज यहा किया जा रहा है। यह संस्था भी उसमें प्रमुख स्थान रखती है।

आप लोगों ने मेरे इस वक्तव्य को प्रेम से सुना इसके लिए कृतज्ञ हूँ। इसमें जो कुछ उपादेय है, वह आप लोगों के आशीर्वचनों का फल है और जो इसमें त्रुटि है वह मेरी है और मेरे ही कर्मों से उत्पन्न हुई है। निश्चित ही आपकी उदारता असीम है। इसी कारण अपनी अनेक त्रुटियों की संभावना को जानकर भी संस्कृत भाषा में बोलने की धृष्टता मैंने की है। मेरे मन भावों को आप ग्रहण करेंगे। "अर्थ" ही ग्राह्य है, "शब्द" नहीं है- इस विनोदात्मक न्याय के अनुसार मेरे प्रकाशित विचारों के तत्वों को ग्रहण करके सारहीन भाव को छोड़ देगें। ऐसा कहकर मैं विश्राम कर लेता हूँ।

डॉ॰ राजेन्द्र प्रसाद

(सन् 1950)

आर्ष शिक्षा पद्धति गरिमामयी है।

प्राय: 25 वर्ष हुए होंगे जब मैं पूज्य महात्मा गाँधी जी के साथ गुरुकुल के समापवर्तन के अवसर पर एक बार पहले आया था। तब से देश में कितना बड़ा अन्तर हो गया है, यह आप भली भांति जानते है। उस समय हम स्वतन्त्रता प्राप्ति में लगे हुए थे और ब्रिटिश गवर्नमेन्ट के साथ हमारा अहिंसात्मक संग्राम चल रहा था। आज हम स्वतन्त्र है। अंग्रेज इस देश से चले गये और अपने भाग्य को बनाने और बिगाडने का पूरा अधिकार हम अपने हाथों में ले चुके है। इसलिए आज हमारे सामने जितने भी प्रश्न आते है उनका हमें स्वयं ही हल खोज निकालना है और जिस हद तक सफलता पूर्वक हम प्रश्नों का निपटारा कर सकेंगे, देश उन्नत होगा।

देश की सेवा के लिए अच्छे सुच्चरित्र, बुद्धिशाली, कर्मठ और त्यागी काम करने वालों की जरूरत है, जो नया विधान देश के लिए बनाया गया है उसमें सभी 21 वर्ष के लोगों को मत देकर प्रतिनिधि चुन का अधिकार दिया गया है। जो प्रतिनिधि चुने जायेंगे, उनके हाथों में प्रान्त अथवा सारे देश की बागडोर रहेंग और उनके ही निश्चयों के अनुसार देश का सारा काम चलाया जायेगा।

आप का गुरुकुल एक प्राचीन ढंग पर चलने वाला नये प्रकार का विद्यालय रहा है। सारे देश अंग्रेजी का बोलबाला था और सभी विद्यालयों में अंग्रेजी के माध्यम द्वारा ही शिक्षा दी जा रही थी। आ के दूरदर्शी संस्थापक स्वामी श्रद्धानन्द जी ने हिन्दी के माध्यम द्वारा उच्च कोटि की शिक्षा देने का निश्च किया और इस संस्था को आज से 50 वर्ष पूर्व स्थापित किया। इन 50 वर्षों के प्रयोगो से यह प्रमाणित हो गया कि उच्चकोटि की शिक्षा दी जा सकती है और जो विद्यार्थी शिक्षा पाते है, वह दूसरे विद्यालयों मे जहाँ अंग्रेजी माध्यम है, शिक्षा पाये हुए विद्यार्थियों से किसी बात में कम नहीं हुए। बात तो यह है कि विदेशी भाषा सीखने का भार विशेषकर के जब दूसरे विषयों को जानने और सीखने का माध्यन विदेशी भाषा ही है, वह भार बड़ा होता है। और वह मनुष्य के मस्तिष्क के विकास को अवरोधित कर देता है। आपने यही समझकर यह नया काम ऐसे दिनों में शुरू किया था। जब इसमें किसी प्रकार की सहायता को प्रोत्साहन गवर्नमेन्ट से मिलने की आशा नहीं थी। जो विद्यार्थी यहाँ से शिक्षा प्राप्त कर निकलते, उनको किसी संस्कारी संस्था में योग्यता रहते हुए भी कोई स्थान नहीं मिलता और अन्य प्रकार की अनेक बाधाएं जो किसी भी कमजोर आदमी को हतोत्साह कर सकती थी, आए दिन सामने आती रही। पर किसी की परवाह न कर आपके संचालक गुरुकुल को चलाते रहे और जनता ने सहायता की। आज अब यह मान लिया गया है कि हिन्दी देश की राजकीय भाषा होगी और यह भी शिक्षा शास्त्री मानने लगे गए है कि शिक्षा का माध्यम हमारी अपनी भाषा होनी चाहिए न कि विदेशी भाषा। इस दिशा में शिक्षा का माध्यम हमारी अपनी भाषा होनी चाहिए न कि विदेशी भाषा। इस दिशा में शिक्षा पद्धति में परिवर्तन भी आरम्भ हो गया है और आशा की जाती है कि थोडे ही दिनों में हमारे सभी शिक्षालयों में अपनी भाषा द्वारा ही शिक्षा दी जाने लगेगी और देश का सारा कारोबार अपनी भाषा में ही होने लगेगा। यह देखकर आपके संचालकों को सन्तोष होना चाहिए ही। और मैं उनकों बधाई देना चाहता हूँ कि जो गुरुकुल के संस्थापकों ने इतने दिन पहले सोचा था और

जिस काम का नन्हा सा पौधा लगाया था, वह आज एक वृक्ष हो गया है और अब उसमें फूल और फल शीघ्र ही देखने में आ जायेंगे।

आपकी दूसरी विशेषता यह रही है कि आपने गुरुकुल की प्राचीन प्रथा को पुनर्जीवित किया। उस प्रथा का महत्व और विशेषता इसमें है कि गुरु शिष्य का सम्बन्ध एक परिवार के लोगों जैसा हो जाता है। शिष्य गुरु को पितातुल्य और गुरु शिष्य को पुत्रवत् मानने लगता है और इस तरह गुरु वात्सल्य प्रेम और शिष्य भक्ति और श्रद्धा करता है। इसका प्रभाव अध्ययन के अलावा चरित्र पर बहुत गहरा पड़ता है। आधुनिक प्रथा में यह भावना बिल्कुल नहीं होती है और इसका नतीजा यह हुआ है कि आज हमारे विद्यालयों और शिक्षालयों में जो अध्यापक और आचार्य होते है, उनका विद्यार्थियों के साथ किसी प्रकार का सम्पर्क ही नहीं हो पाता है। कॉलेजों का तो मैं कह सकता हूँ कि इतना ही सम्पर्क होता है जितना किसी आदमी को एक सार्वजनिक सभा में भाषण कर्त्ता से होता है। स्पष्ट है कि ऐसी अवस्था में अध्यापक के चरित्र का कोई विशेष प्रभाव विद्यार्थी पर नहीं पड़ सकता और दोनों के बीच गुरु शिष्य का सम्बन्ध तो हो ही नहीं सकता।

चरित्र गठन में धार्मिक भावना और श्रद्धा बहुत असर डालती है। धार्मिक भावना का अर्थ कट्टरपन नहीं है ओर श्रद्धा अंध भक्ति नहीं है, पर यह ऐसी चीज है जो परोक्ष रीति से मनुष्य के जीवन पर प्रत्येक क्षण बहुत असर डालती रहती है। और चाहे मुनष्य माने या न माने उसका नैतिक चरित्र उससे प्रभावित हुए बिना नहीं रह सकता। इसलिए यहाँ आपने उस धार्मिक भावना का भी काफी प्रभाव रखा है। मैं मानता हूँ कि हमारे सभी शिक्षालयों का उद्देश्य होना चाहिए कि स्वस्थ विद्याभ्यासी और सच्चरित्र सेवक देश को दें जो सब प्रकार के काम के लिए अपने को योग्य साबित कर सकें।

जिस समय इस गुरुकुल की स्थापना हुई थी, विदेशी हुकूमत चल रही थी जिसका गुरुकुलीय आदर्शों से कोई मेल न था। मेरी इच्छा और प्रार्थना है कि आदर्शों का राष्ट्रीय विधान और नियन्त्रण तथा शासन का सामंजस्य शीघ्र स्थापित हो पाए और वे शिक्षण संस्थाएं जो आज तक राष्ट्रीय शिक्षण देने का प्रयत्न किया करती थीं वह भी सरकारी शिक्षालयों के साथ घुलमिल जाएं और जो सरकारी शिक्षा सम्बन्धी संस्थाएं है वह भी अपने कार्यक्रम को ऐसा बना ले कि वह भी उन्हीं आदर्शों की पूर्ति कर सकें जिनका जिक्र ऊपर कर चुका हूँ। मैं आशा करता हूँ कि इस प्रकार के एकीकरण में सभी संस्थाएं दत्तचित्त होगी, सब संस्थाएं एक उद्देश्य और एकलक्ष्य से अनुप्राणित होकर ऐसे जनसेवक तैयार करने में लग जाऐगी जो हमारी कठिन समस्याओं को हल करने में समर्थ होंगे और जो उन्नति का रास्ता हमारे लिए स्वराज्य प्राप्ति से खुल गया है उस पर देश आगे बढ़ेगा।

मुद्रित भाषण पढ़ने के बाद राष्ट्रपति डॉ॰ राजेन्द्र प्रसाद जी का मौखिक भाषण

"स्वाधीनता प्राप्ति से पहले गुरुकुल कांगड़ी ने तत्कालीन सरकार से असहयोग कर रखा था। लेकिन आज तो अपनी सरकार कायम हो चुकी है इसलिए गुरुकुल और वर्तमान सरकार के बीच सहयोग स्थापित हो जाना चाहिए। मौजूदा सरकार गुरुकुल के लिए अपनी है और सरकार भी गुरुकुल को अपना ही समझती है। अतएव गुरुकुल को सरकारी शिक्षण व्यवस्था का अंग बन जाना चाहिए। मगर किसी भी देश के निर्माण में स्वतन्त्र शिक्षण संस्थाओं का अपना एक विशिष्ट स्थान हुआ करता है। ऐसी ही संस्थाएं शिक्षा में क्रान्ति कर सकती है। इस अवस्था में यदि गुरुकुल कांगड़ी अपना पृथक् अस्तित्व बनाए रखना चाहेगी तों सरकार को कोई आपत्ति न होगी। सरकार उसे सब प्रकार की सहायता देती रहेगी। इसी भावना से प्रेरित होकर मैं भारत सरकार की और से गुरुकुल कांगड़ी के लिए एक लाख रुपये के दान की घोषणा करता हूँ।"

श्री आनन्द स्वामी जी महाराज

(सन् 1951)

राष्ट्रभाषा और राष्ट्रीय शिक्षण

दीक्षान्त समारोह के इस शुभ अवसर पर आप सब लोग यहाँ पर इकट्ठे हुए हैं। जो स्नातक गुरुकुल विश्वविद्यालय कांगड़ी से पूरी शिक्षा ग्रहण करने के पश्चात् जीवन के नये क्षेत्र में प्रविष्ट हो रहे है- उनके लिए तमाम नर-नारी यह शुभ कामना करें कि परमात्मा उन्हें अपने कार्य मे सफल बनावें। नए स्नताकों का जीवन के नए क्षेत्र में स्वागत करते हुए कुछ समझ में नहीं आता कि किन शब्दों में स्वागत किया जाए। आज जिस परिस्थिति से गुजर रहे है वह बड़ी भयंकर है, चारों ओर हाहाकार मचा हुआ है और कोई नहीं कह सकता कि कल क्या हो जाएगा। मायावाद और भोगवाद के दावानल में लगभग संसार के प्राणी जल रहे है। ऐसी परिस्थिति में आपका स्वागत किन शब्दों में करूं। परन्तु इसका अभिप्राय यह नहीं है कि आप निराश हो जाएं। संसार में किसी भी वस्तु के लिए न्यूनता नहीं है और यदि गत दो-तीन सौ वर्षों की अपेक्षा आज की अवस्था देखी जाए तो जीवन को सुखी बनाने की सामग्री बहुत अधिक बढ़ गई है।

गुरुकुल शिक्षा प्रणाली में यही विशेषता है और इसी विशेष विचार-धारा का प्रभाव था कि दुनियां ने अपने जन्म से लेक़र आज से 6 हजार वर्ष पूर्व तक बड़े सुख-चैन से जीवन व्यतीत किया। महर्षि दयानन्द जी ने सत्यार्थ प्रकाश में लिखा हैं कि भारतवासियों का पतन महाभारत युद्ध से एक हजार वर्ष पूर्व प्रारम्भ हो गया था परन्तु फिर भी हमारी प्राचीन संस्कृति और सभ्यता के टूटे-फूटे चिन्ह इन गुजरे हुए पांच हजार वर्षों में भी दृष्टिगोचर होते है और हमारे अध:पतन की अवस्था में भी दूसरे देशों की अपेक्षा भारतीय संस्कृति मानवता की ओर अधिक ले जाने वाली है। भारत के प्रधानमंत्री पं॰ जवाहरलाल नेहरू जी ने अन्य देशों की अवस्था और आधुनिक काल की नित्य नई बढ़ती हुई समस्याओं को देखकर अहमदाबाद (गुजराज) के विद्यार्थियों के समक्ष 31 जनवंरी सन् 1951 को यह भाषण देते हुए कहा कि "मैं समझता हूँ कि प्राचीन भारत में आज की अपेक्षा बहुत अधिक समानता, एकता और खुशहाली थी और लोग ज्यादा सुखी थे।"

अब आप देखिए कि जब प्राचीन भारत अपनी कल्चर और विचारधारा के कारण सुखी था और इसके साथ जब से हम अपनी संस्कृति को भूले है तब से हम ही नहीं अपितु सारा संसार ही दु:खी हो उठा है। आज कल्चर तथा संस्कृति के सम्बन्ध में भी बहुत मतभेद है, परन्तु वेद ने इसका निपटारा कर दिया है। वेद में संस्कृति के लिए एक शब्द "विश्ववारा" आता है, अर्थात् सबसे श्रेष्ठ सम्पूर्ण दोषों को हटाने वाली और सुन्दरता लाने वाली। विश्ववारा को गुण धारण और दोष निवारण में भी प्रकट किया जा सकता है। जिसके द्वारा कोई वस्तु सुन्दर बनाई जाए और उसके सारे दोष हटा दिए जाएं तो वह सुन्दर संस्कृति कहलाती है। संसार पर दृष्टि डालकर देखिए कि किस जाति या देश में ऐसी संस्कृति कहलाती है। संसार पर दृष्टि डालकर देखिए कि किस जाति या देश ने ऐसी संस्कृति संसार के सामने रखी जो इस कसौटी पर पूरी उतर सके। भारत के उज्ज्वल भूत को मानने वाले तो यह घोषणा कर सकते है कि उनकी वैदिक संस्कृति ने दुनिया को 6 हजार वर्ष कम दो अरब वर्षों तक सुखी सुन्दर तथा शांतिमय बनाए रखा और यदि संसार फिर सुखी होना चाहता है तो इसी संस्कृति को अपनाना होगा।

लक्ष्मी के बिना तो कोई कार्य चलता नहीं। नारायण भी लक्ष्मी के बिना पूर्ण नहीं होता क्योंकि पूरा नाम लक्ष्मी नारायण है। धन कमाओ परन्तु धन में ऐसे रहो जैसे कमल पुष्प तालाब में जल में रहता है। जल जितना बढ़ता है कमल पुष्प उतना और ऊँचा हो जाता है, जल में डूबता नहीं वेद भगवान् ने इस सम्बन्ध में बहुत सुन्दर आदेश दिया है। यजुर्वेद के 40 अध्याय के पहले मंत्र में भोगवाद और त्यागवाद का साफ उपदेश है। वेद की स्पष्ट आज्ञा है कि "त्यक्तेन भुंजीथा:" अर्थात् त्यागभाव से भोगो। परमात्मा ने जो यह सुन्दर सृष्टि बनाई है और इसमें जो सुन्दर फल और दूध आदि अमृत बनाए थे, नाना प्रकार का सौन्दर्य प्रकट किया है। हे मनुष्य! यह सब कुछ तेरे भोग के लिए है इनका भोग कर, परन्तु त्याग भाव से भोग कर।

गुरुकुल विश्वविद्यालय कांगड़ी के सुन्दर वातावरण में रहकर शिक्षा प्राप्त करने वाले स्नातकों। दुनियाँ तुम्हारी ओर देख रही है। दूसरी यूनिवर्सिटियों की शिक्षा तो बहुधा भौतिकवाद तथा भोगवाद की ओर ले जाने वाली है। परन्तु गुरुकुल की शिक्षा प्रणाली जहाँ भौतिक वस्तुओं पर विजय प्राप्त करने का आदेश देती है, वहाँ शांति के स्रोत ब्रह्म ज्ञान का भी आदेश देती है। मानवता का दृढ़ संकल्प लेकर आओ ओर दु:खी संसार को सुखी बनाओ। ऋषि दयानन्द का उदाहरण सामने रखो। जिसने केवल मानवता के लिए अपना बलिदान कर डाला। ऋषि दयानन्द ने वेद को इसलिए अपनाया कि उसमें केवल मानवता के आदेश हैं, उसमें किसी देश विशेष का अथवा किसी एक सम्प्रदाय या फिरके का वर्णन नहीं, उसमें यह कहीं नहीं लिखा कि क्रिस्चियन भव, मुहम्मद भव, रशियन भव, अमेरिकन भव, बल्कि उसमें तो मनुर्भव लिखा है अर्थात् मनुष्य बन और इसी मानवता का आदेश वेद द्वारा दिया गया है। आपने इस पवित्र गुरुकुल भूमि में रहकर वही अमृतपान किया है। तुम्हारे हृदय का दीपक जल पड़ा है। उठो ! और मानवता के अंधकार को मिटाने के लिए मानवता के दीपक स्थान-स्थान पर जला दो।

न्यायमूर्ति श्री विजन कुमार मुखर्जी

(सन् 1952)

भारतीय शिक्षा क्रान्ति में गुरुकुल का स्थान

गुरुकुल वासी प्रिय बन्धुओं तथा उपस्थित सज्जनों। इस दीक्षान्त संस्कार में सम्मिलित होने तथा आज यहाँ उपस्थित स्नातकों को अभिभाषण देने के लिए निमंत्रित करके जो सम्मान आपने मुझे प्रदान किया है, उसके लिए मैं आपका कृतज्ञ हूँ। निःसन्देह यहाँ आने से मुझे तीर्थयात्रा का आनन्द अनुभव हो रहा है। वस्तुतः यह एक पवित्र भूमि है। सामने ये गम्भीर मौनमुद्रा में स्थित हिमालय की उच्च शिखाएं एक बलिष्ठ संतरी के समान हमारी मातृभूमि की रक्षा कर रही है और इसके अन्तस्थल से निर्गत गंगा नदी की पवित्र धारा निनाद करती हुई गिरि शिखर से अगाध सागर तक अविश्रान्त भाव से अपने मार्ग का अनुसरण कर रही है। ऐसी भव्य परिस्थितियों में अवस्थित तथा व्यस्त संसार के कोलाहल से सुरक्षित यह शिक्षणालय साक्षात् शान्ति एवं पवित्रता के वातावरण से श्वास ले रहा है। यह विद्यामन्दिर वस्तुतः प्राचीन भारत के उन शान्त ज्ञान सम्पन्न तपोवनो का अवशेष है जिनकी पावन स्मृति अब भी हमारे साहित्य तथा धार्मिक ग्रन्थों में विद्यमान है। आज बीसवीं सदी में भी यह सम्पूर्ण प्रदेश वस्तुतः वैदिक भावनाओं से पूर्णतः ओत-प्रोत है।

जीवन निर्माण की वैदिक योजनानुसार बालक एकान्त तपोवन में विद्वान् गुरुजनों के संरक्षण में रहते हुए अपने शारीरिक तथा बौद्धिक शिक्षण के लिए दृढ़तापूर्वक अनुष्ठान करना परम आवश्यक था, जो उसे अपने जीवन के भावी कार्य क्षेत्र में अपना उचित भाग लेने के योग्य बना सके। न केवल शैशव काल में ही, प्रत्युत अपने संघर्षमय सांसारिक जीवन के अवसान काल में भी, वे लोग शक्ति संचय तथा विश्राम उपलब्ध करने के लिए इन्हीं एकान्त तपोवनों की कल्पना करते थे।

> भवनेषु रसाधिकेषु पूर्वेक्षितिरक्षार्थ
> मुशन्ति ये निवासम्।
> नियतैकपतिव्रतानि पश्चात् तरु-
> मूलानि गृही भवन्ति तेषाम्।।

यही वे पवित्र एवं शान्त तपोवन थे, जहाँ ऋषियों के मस्तिष्क ने लौकिक एवं आध्यात्मिक ज्ञान विज्ञान के लिए साधना की तथा मानव समाज के शाश्वत कल्याण के लिए चिंतनाप्रसूत महान् ग्रन्थों की रचना हुई।

यह सर्वविदित सत्य है कि आर्य समाज की अधिकांश जनता दयानन्द एग्लों वैदिक कॉलिज से निर्धारित शिक्षा प्रणाली से सन्तुष्ट न थी। यह असंतुष्ट दल, जिसके एक प्रमुख सदस्य इस संस्था के आदरणीय संस्थापक भी थे, प्राचीन वैदिक सभ्यता से निकट सम्बन्ध रखना चाहते थे। इसलिए पाश्चात्य परम्पराओं से सम्बन्ध विच्छेद करके भारतीय नवयुवकों को शिक्षा देने की प्रणाली में क्रान्तिकारी परिवर्तन करने का पक्षपाती था। यह 1902 ईसवीं में गुरुकुल कांगड़ी की स्थापना का मूल हेतु है। निःसन्देह इस संस्था का उद्देश्य अपनी प्राचीन ब्रह्मचर्य प्रणाली को पुनर्जीवित करना तथा शिक्षा को जीवन का वास्तविक

पथ-प्रदर्शक एवं चरित्र निर्माण में सहायक बनाना था। इसके संचालकों की अभिलाषा थी कि बालक को शैशवकाल में ही संसार के दूषित वातावरण से हटाकर प्रकृति के शान्त तथा सुन्दर वातावरण में ऐसे निष्ठावान् तथा सच्चरित्र विद्वान् गुरुजनों की संरक्षता में रखा जाये जो उन बालकों के अन्दर गुप्त उच्चतम मानसिक व आध्यात्मिक प्रवृत्तियों को विकसित करने में सहायक हो सके। उनके मानस चक्षु के समक्ष प्राचीन भारत के नालन्दा, तक्षशिला आदि अनेक विश्वविद्यालयों का चित्र था।

इसमें सन्देह नहीं कि दयानन्द एंग्लोवैदिक कॉलेज की शिक्षा प्रणाली गुरुकुल से बहुत भिन्न है परन्तु वस्तुतः वे दोनों एक ही स्रोत से निकली हुई विभिन्न जल धाराएं है। दोनों का आधार भूत आदर्श एक है अर्थात् वे दोनों भारतीय तथा पाश्चात्य सभ्यताओं के उत्कृष्ट तत्वों का सुन्दर समन्वय करना चाहते है। उनके साधन भिन्न-भिन्न और वे पृथक्-पृथक् होने भी चाहिए क्योंकि वे भिन्न-भिन्न मस्तिष्कों की विभिन्न कार्य प्रणालियों पर आश्रित है। हमारी शिक्षा का मूलाधार राष्ट्रीय भावनाओं तथा परम्पराओं की गहराई तक पहुँचा हुआ होना चाहिए। हम एक प्राचीन सभ्यता के उत्तराधिकारी हैं इसीलिए हमारी शिक्षा का मुख्य कार्य उन आदर्शों के क्रमिक तथा अनवरत विकास को प्रोत्साहित करना है जिन्होंने हमारी संस्कृति और तज्जन्य विविध प्रणालियों को एक निश्चित रूप दिया है।

गुरुकुल शिक्षा पद्धति की मुख्य विशेषता जाति के बालकों के चरित्र निर्माण करने की है। निःसन्देह शिक्षा का प्रधान उद्देश्य चरित्र गठन है और उस उद्देश्य की पूर्ति के लिए केवल बौद्धिक शिक्षा अपर्याप्त है। हर्बर्ट स्पेंशर का यह कथन उचित है कि हम मनुष्य को जो लाभ पहुँचाना चाहते हैं उसे शिक्षा के माध्यम से पहुँचाना चाहते है, क्योंकि शिक्षा बौद्धिक होने की अपेक्षा भावना प्रधान अधिक है।

जीवन का वास्तविक लाभ तो तब मिलता है जब शिक्षा के प्रताप से हममें ऐसी मानसिक अवस्था उत्पन्न हो जाती है। इस दृष्टि से गुरुकुल की शिक्षा विधि निःसन्देह स्वयं स्फूर्त और सहज है। जो अत्युत्तम है। नागरिक जीवन के दूषित प्रभाव से दूर रहना उदात्त विचार, पवित्र चरित्र वाले व्यक्तियों का सम्पर्क श्रद्धा, समादर, स्नेह और भ्रातृ प्रेम द्वारा मानव की नैतिक शक्तियों को सुदृढ़ करना,. मन और चरित्र का उर्ध्वीकरणं आदि शुभंकरी प्रवृत्तियों से हीं सुसाध्य होता है।

मेरा विश्वास है कि आधारभूत बातों पर सहमत हो जाने पर इस प्रकार की शिक्षा विधि को परिचालित करना कुछ कठिन नहीं होगा। गुरुकुल में शिक्षा पाए हुए ऐसे युवक अच्छी मात्रा में मिल सकते है जिनकी सेवाओं के द्वारा देश में इस प्रकार के विद्यालय आयोजित किए जा सके। आज इस विद्या निकेतन से दीक्षा प्राप्त करने वाले छात्रों के प्रति दो-चार शब्द कहना चाहता हूँ। मित्रों! मैं आपको स्मरण कराना चाहता हूँ कि आप उदात्त और महान् परम्पराओं के उत्तराधिकारी है। आप के समक्ष उन निःस्वार्थ, कर्त्तव्यपरायण, पवित्र चेता, चरित्रों की परम्परा विद्यमान है। जिनके द्वारा आप को समस्त जीवन में प्राण, प्रेरणा और पथ प्रदर्शकता प्राप्त होती रहेगी।

आर्य संस्कृति के उत्तम आदर्शों की छाया में आप ने इस शिक्षा निकेतन में जो शिक्षा प्राप्त की है उसे सुसज्जित होकर आप को संसार में आगे बढ़ाना और उस शिक्षा के प्रताप से आप ने उन सब वस्तुओं को दूर भगाना है, जिनके द्वारा मानव की आत्मा दूषित और अपवित्र बनती है। आपने अपनी शिक्षा से पुरातन ऋषियों की उस पवित्र होमाग्नि को प्राप्त किया है, जो समस्त मलीनता को भस्म करके इस विश्व में आप को समृद्धि प्रदान करके परलोक में मुक्ति का आनन्द दे सकेगी। श्रद्धा और भी भक्ति के साथ इस पवित्र ज्ञानाग्नि को प्रबुद्ध और सुरक्षित रखिए। जिस प्रकार पुराने याज्ञिक लोगों ने इसे सुरक्षित रखा था। आप देखेंगे कि कल्याण और माँगल्य आपके साथ है।

श्री चन्द्रभानु जी गुप्त

(सन् 1954)

नव स्नातकों का लक्ष्य स्वावलम्बन

कुलपति जी! बहनों और भाइयों!

मैं नहीं जानता कि इस सभा में मुझे बोलने का क्या अधिकार है। आप सब उपस्थित महानुभाव अपने आगमन को तीर्थयात्रा समझते होंगे। मैं और मेरे भाई विद्यार्थी काल में तीर्थ यात्रा के रुप में आयां करते थे। और साधु सन्तों के व्याख्यानों से प्रोत्साहित होकर वापिस जाते थे। परन्तु मेरे पास कोई ऐसे विचार नहीं है जिससे आप को प्रोत्साहन दे सकूं। इसीलिए इस समय इस सभा में मैं कुछ भी कहने का अधिकारी नहीं हूँ। केवल कुलपति जी की आज्ञा से कुछ कहने आया हूँ। आर्य समाज एवं गुरुकुल के कार्य को बताने की आवश्यकता नहीं, ऋषि दयानन्द के समय देश की क्या दशा थी ? यह भी आप लोग जानते है। उन्होंने ब्रिटिश काल में हमें विदेशी सभ्यता से किस प्रकार बचाया था। ऐसे समय में उन्होंने आर्य समाज को जन्म दिया। और आर्य संस्थाओं को स्थापित करने का बीज बोया। ऋषि के विचारों को दृष्टि से रखते हुए आर्यसमाज ने अनेक संस्थाएं स्थापित की है। आर्य समाज स्वतन्त्रता के संग्राम में नवयुवकों को परिवर्तन किया, उन्होंने ऋषि दयानन्द का यह सिद्धान्त बतलाया कि विदेशी शासन अच्छे से अच्छा होता स्वदेशी राज्य से बुरा है। आर्य समाज के बाद कांग्रेस के प्रयत्न से देश स्वतन्त्र हुआ और अब स्वदेशी राज्य की स्थापना भी हो गयी है, परन्तु कल्पना का भारत नहीं बन पाया।

आर्य समाज कांग्रेस तथा महात्मा गाँधी के प्रयत्न के बावजूद आज भी छूत-छात कुरीतियाँ विद्यमान है आर्य समाज के लिए इस दिशा में क्षेत्र खुला हुआ है। अभी इसे पूरा करने की आवश्यकता है। इसके लिए तन-मन-धन लगाना पड़ेगा। केवल प्रस्ताव पास करने से काम नहीं चलेगा। प्रायः कांग्रेस पर अनेक दोषारोपण किए जाते है। परन्तु देखा गया है कि जो लोग दोषारोपण करते है वे ही स्वयं इन बुराइयों में फंसे है। यदि हम इन बुराइयों में फंसे हो तो वह कैसे दूर होंगी ? इसे दूर करने के लिए सद्भावना और सद्विचार की आवश्यकता है। वातावरण को सुधारने के लिए महापुरुषों से प्रेरणा लेने की आवश्यकता है। महात्मा गाँधी तथा ऋषि दयानन्द ने अपने आचरण से जनता को अपनी ओर आकृष्ट किया था। इसी प्रकार हम भी अपने सद्गुणों द्वारा देश को ऊंचा उठा सकते है। टीका टिप्पणी करने या गाली-गल्लौज देने से यह अवगुण दूर नहीं होगा बल्कि प्राप्त सुगमता भी छिन जायेगी। जिन कठिनाइयों व परेशानियों से हमें यह आजादी मिली है, उनकी कल्पना भी हमने न की थी, अतः हमें शक्ति को गवांकर दलबन्दी में फंस कर देश को नष्ट नहीं करना। हमें तो संगठित होकर कार्य करना होगा। यदि हम संसार को कोई सन्देश देना चाहते है तो हमें स्वयं बलवान बनना होगा। देश में वस्त्र व भोजन की कमी है। उसके दूर करने के साधनों को जुटाना होगा। विभाजन से हमारी अधिकांश अच्छी भूमि पाकिस्तान में चली गयी है। विदेशी व्यापार के लिए हमारे पास क्षमता नहीं है। यदि हम उत्पादन न बढ़ायेंगे और उसके निजी इस्तेमाल में कमी नहीं करेंगे तो विदेशों से व्यापार कैसे कर सकते है ? आज वो कष्ट उठाना ही पड़ेगा। रूस के किसानों व मजदूरों ने सामान उत्पन्न करके भी स्वयं उसका उपभोग नहीं किया तभी कुछ वर्ष बाद वह खुशहाल बन सके। हमें भी वहीं मार्ग अपनाना होगा। यदि हम ऐसा नहीं करते तो इससे हमारी अधीरता एवं स्वार्थपरता प्रकट

होगी। यदि हम कष्ट उठायेंगे तो वह स्वप्नमय भारत मूर्तरूप में दिखाई देगा। यदि हम अपने देश में अपने भाइयों से दुर्व्यवहार करें तो प्रवासी भाइयों के सम्बन्ध में अफ्रीका से क्या कह सकते है? देश में अन्नाभाव के होते हुए क्या यह अच्छा होगा कि देश का एक भाग भूखा मरे और शेष भाग में छः छटाक अन्न खाया जाएं ? हमारे सभी प्रान्त एक समान है। अतः स्वयं कष्ट उठाकर भी भाइयों की सेवा करना हमारा धर्म है। विलगता को जन्म देने वाली विचारधारा को अपनाना खतरनाक है। हम महर्षि दयानन्द तथा महात्मा गाँधी के ऋणी है और उस ऋण से तभी मुक्त हो सकते है जब कि हम उनके उपदेशों को अपने आचरण में लावें। मैं आपको विश्वास दिलाता हूँ कि यदि हमने इस दिशा में प्रयत्न किया तो हमारे देश की आध्यात्मिकता समस्त विश्व में दिखाई देगी अन्यथा हम स्वयं भी नष्ट हो जायेंगे।

डॉ॰ सर्वपल्ली राधाकृष्णन्

(सन् 1955)

गुरुकुल विश्वविद्यालय : एक दीप्तिमान् ज्योति स्तम्भ

श्रीयुत् कुलपति जी तथा मित्रो!

सबसे प्रथम मैं गुरुकुल की ओर से दिए गए स्नेह और सौहार्दपूर्ण अभिनन्दन पत्र के लिए आपका कृतज्ञापूर्वक धन्यवाद करता हूँ। तत्वज्ञानी लोग लौकिक कार्यों में भी अपना योग प्रदान करें- यह परम्परा हमारे देश के लिए नवीन नहीं है। इतिहास के अरूणोदय से हमारे देश में यह व्यवहार चला आया है। विदेह जनक और श्री कृष्ण चन्द की जीवन चर्या इस परम्परा के ज्वलन्त प्रमाण है। यहाँ आकर में बड़ा आनन्द अनुभव कर रहा हूँ। इस गुरुकुल मैं यह मेरी दूसरी यात्रा है। स्वाधीनता प्राप्त होने से पूर्व मैं सन् 1942 में यहाँ पर आ चुका हूँ।

जिन दिनों गुरुकुल की स्थापना हुई थी, उस उस समय देश में चहुँओर अंधकार छाया हुआ था। यह गुरुकुल देश के उन गिने-चुने शिक्षा प्रतिष्ठानों में से एक था जिन्होंने इस शिक्षण संस्कृति की यज्ञाग्नि को प्रबुद्ध ओर सतेज रखा था। आज यह ज्योति अधिक दीप्तिमान है। हम यह तो नहीं कह सकते है कि इस ज्योति ने इस देश के समस्त क्षेत्रों से अन्धकार को दूर भगा दिया है। परन्तु इतना अवश्य हुआ है। कि इस जन-समाज के मनों और हृदयों को आलोकित करने का यह शुभ कार्य अपने हाथ में लेने में समर्थ हुए है। शिक्षा तत्व के वे अनेक सिद्धान्त जो आज अनेक शिक्षणालयों द्वारा स्वीकार किए जा रहे है, सबसे पहले इस गुरुकुल द्वारा प्रवर्तित किए गए थे।

शिष्यों के प्रति इस भावना से दृष्टिपात करना चाहिए कि ये आत्मारूपी कोमल कलिकाएं कुसुमों के रूप में विकसित होने के लिए प्रयत्नशील है। गुरुजनों का सही मनोभाव इसी प्रकार का होना चाहिए। रूस, इंग्लैण्ड, अमेरिका, यूनान और रोम आदि विभिन्न देशों ने शिक्षा के ध्येय के विषय में विभिन्न विचार स्वीकार किए है। हम भारतीयों का शिक्षा के स्वरूप के विषय में एक सर्वथा नवीन दृष्टिकोण रहा है। भारतीय मनीषियों ने बताया है कि शिक्षा मानवात्मा की स्वाधीनता के लिए होनी चाहिए- 'सा विद्या या विमुक्तये।'

शिक्षा का प्रयोजन यहीं होना चाहिए कि वह मनुष्य की आत्मा में इस प्रकार का सामर्थ्य उत्पन्न कर दें कि उसकों नया जीवन-द्वितीय जन्म-द्वितीय लोक (स्वाधीनता और अध्यात्मिकता का लोक) प्राप्त हो जाए।

तद् द्वितीयं जन्म,
माता सावित्री,
पिता आचार्य:

यद्यपि हम सबका ही जन्म प्राकृतिक परिस्थितियों से सम्भूत तथा भौतिक आवश्यकताओं से भरे हुए संसार में हुआ करता है तथापि मानव को इन भौतिक शक्तियों की प्रतिक्रिया मात्र नहीं समझ लेना चाहिए। उसकी एक अपनी ही प्रकृति है। हमारे यहाँ कुछ ऐसे विचारक है जो यह कहते है कि आध्यात्मिकता

स्वाधीनता के लोक में मानवीय भावनाओं की उपेक्षा होती है, जो कि मानवीय जीवन का इहलौकिक पहलू है। परन्तु यह कथन ठीक नहीं।

आज इस विश्वविद्यालय से विदा होने वाले उन नवयुवकों का यह कर्त्तव्य है कि वे समस्त जीवन में स्वाध्याय और प्रवचन को अपना व्रत रखे आपके आचार्य जी ने भी आपको यही उपदेश दिया है- स्वाध्याय प्रवचनाभ्यां न प्रमदित्व्यम्। आजकल हमें इस प्रकार के बहुत छात्र दिखाई देते है जो किसी एक-एक पुस्तक को पूरी तरह अद्योपान्त पढ़ते है। अपने शिक्षकों से पूछकर वे नोट्स लिख लेतं है। परीक्षा के दिनों में उनके उत्तर-पत्रों पर उगल देते है। और उसके बाद उन पाठों को वे सदा के लिए भुला देते है। इतिहासज्ञ गिलम ने कहा है- भारत की समृद्धि मिलने पर भी मैं अध्ययन को आनन्द को नहीं छोड़ सकता। प्रत्येक विश्वद्यिालय को चाहिए कि वह अपने तरूणों के मन में इस भावना को बद्ध मूल करें।

प्रिय नवयुवकों! आपने इस शिक्षा निकेतन में भारतीय संस्कृति की भावना को हृदयंगम किया है। मैं आशा करता हूँ कि आप उसके प्रभाव और तेज पर विश्वास रखेंगे। स्मरण रखिए, सत्य के साथ उस संस्कृति की रूपता है। इसी के द्वारा आप जनता के हृदयों और मनों पर विजय प्राप्त कर सकेंगे। मैं आपसं यह भी कह देना चाहता हूँ कि वह भारतीय संस्कृति, जिसका सत्य से अभेद है, अपने अन्दर अद्भुत शक्ति रखती है। आप को उस संस्कृति का उत्तराधिकारी बनना चाहिए। उसके लिए आपकों अभिमान करना चाहिए। आप इस संस्कृति के महत्व को अपने हृदयों में स्थापित करें और उसकी वृद्धि करें। यदि आप ऐसा करेंगे तो आप केवल अपने देश की ही नहीं अपितु सारे विश्व की कुछ सेवा कर सकेंगे। मैं आशा करता हूँ कि आपने इस विद्या मन्दिर में जो शिक्षा पाई है। वह आप की आकांक्षाओं को सफल बनानं में सहायक होंगी।

श्री अनंतशयनम् अयंगर

(सन् 1956)

राष्ट्रीय चेतना का प्रतीक गुरुकुल

गुरुकुल विश्वविद्यालय के सदस्यों, सन्नारियों और भद्रजनों!

गुरुकुल विश्वविद्यालय के दीक्षान्त प्रवचन के लिए निमन्त्रित करके मुझे आपने जो सम्मान और गौरव प्रदान किया है, उसके लिए मैं आपका अतिशय अनुगृहीत हूँ।

मेरे सन्मुख असीम शांति के साथ यह उत्तुंग हिमाचल खड़ा हुआ दिखाई दे रहा है। सृष्टि के उषाकाल में पतितपावनी भगवती भागीरथी के ये पुण्यजल शांत भाव से गिरिमालाओं से नीचे उतर रहे है। इस अतिशय मनभावने वातावरण को देखते ही मुझे एकाएक भारत के अतीव गौरव के दिन स्मरण हो आते हैं। वह युग था जब कि ऋषि मुनि गण शिक्षा के प्रसार के लिए आश्रम स्थापित किया करते थे और अपने अंतेवासियों (छात्रों) को विद्या और ज्ञान के मूलभूत तत्वों की शिक्षा दिया करते थें अपने इस प्रिय ध्येय के लिए वे अनासक्ति और समर्पण का जीवन व्यतीत करते थे। वे आचार्यजन अपने ब्रह्मचारियों के निकट सान्निध्य में रहते थे। वे उनको ज्ञान और विज्ञान की शिक्षा देते थे। आर्यावर्त्त की शिक्षा विधि के गौरव का वर्णन करने से पूर्व ,में इस विद्या निकेतन के प्रशंसित प्रतिष्ठापक और अनेक सहकर्मियों की स्मृति को अपनी विनम्र श्रद्धांजलि अर्पित करता हूँ।

श्री स्वामी श्रद्धानन्द जी का यह विश्वास था कि शिक्षा ही आत्मसंशोधन का एक मात्र आधार है। प्राचीन आर्यावर्त्त में प्रचलित ब्रह्मचर्य पालन और गुरु के आश्रम में रहकर साधना की पद्धति को पुनर्जीवित करना उनका उद्देश्य था। साथ ही हिन्दी भाषा के माध्यम द्वारा संस्कृत वाङ्मय के श्रेष्ठ तत्वों के साथ पश्चिम के आधुनिक ज्ञान-विज्ञानों के उदात्ततत्वों की शिक्षा देते हुए देश के बालकों का चरित्र निर्माण करना और उसमें राष्ट्रप्रेम की भावना को जगाना स्वामी जी का ध्येय था।

गुरुकुल शिक्षा प्रणाली के आदर्शों और उद्देश्यों से हम सब अच्छी तरह परिचित हैं संक्षेप में वे इस प्रकार है:-

क चिरकाल से विस्मृत हुई ब्रह्मचर्य प्रणाली को पुनर्जीवित करना तथा उसे शिक्षा का आधार बनाना।

ख नागरिक जीवन के कलुषित प्रभावों से दूर हटाकर छात्रों को नैसर्गिक सौंदर्य के स्वस्थ, प्रोत्साहक और प्रेरणाप्रद वातावरण में रखना तथा उनके तन, मन, और आत्मा के संतुलित विकास के लिए अवसर प्रदान करना।

ग छात्रों का चरित्र निर्माण करते हुए उनमें भारतीय संस्कृति के प्रति अनुराग उत्पन्न करना तथा सरल जीवन और उदात्त विचार एवं ज्ञान के लिए ज्ञान की भावना को प्रदीप्त करना।

घ गुरु और अंतेवासी (शिष्य) के बीच में पिता-पुत्र का सा स्नेह सम्बन्ध स्थापित करना।

ङ विश्वविद्यालय के स्तर तर्क-शिक्षा का माध्यम हिन्दी भाषा को रखते हुए अपनी शिक्षा योजना में वैदिक साहित्य और संस्कृत वाङ्मयं के अध्यापन को, उसके गौरव के अनुरूप, समुचित स्थान प्रदान करना।

च भारत की प्राचीन विद्याओं के अध्ययन के साथ-साथ आंग्लभाषा और आधुनिक विज्ञानों का अनुशीलन करना।

छ देश भर में प्रचलित परीक्षा प्रणाली के दूषणों को दूर करना।

ज प्राचीन भारतीय आदर्शों के अनुसार बिना शुल्क के शिक्षा प्रदान करना।

झ भारतीय इतिहास, भारतीय दर्शन और भारतीय विज्ञानों के विषय में गवेषणा करना।

ध भारतीय राष्ट्रभाषा हिन्दी के आधुनिक ज्ञान-विज्ञानों तथा प्राचीन संस्कृत विद्याओं के विषय में साहित्य निर्माण करना।

इन उद्देश्यों द्वारा हम वैदिक संस्कृति का पुनर्जीवन कर सकते है। ये उद्देश्य किसी दल विशेष के नहीं है, ना ही ये किन्ही राजनीति सिद्धान्तों के वंशवद है। इन उद्देश्यों में धर्म के वे शाश्वत और अपरिवर्तनीय तत्व निहित है, जो अपने स्वरूप में दैवी है और जो मानव के मन से उत्पन्न नहीं हो सकते।

यह सब कुछ कहते हुए मुझे भारतीय संस्कृति की विशेषताओं का सहज ही स्मरण हो आता है। यह संस्कृति अनेकों क्रांतियों और विरोधों के बावजूद अभी तक जीवित है। सहस्त्रों संवत्सर बीत गए। सैंकड़ों साम्राज्य खड़े हुए और भूमिसात् हो गए। अनेकों सभ्यताएं उठीं और नष्ट भ्रष्ट हो गई, परन्तु भारतवर्ष अभी तक जीवित है। उसकी संस्कृति अभी तक प्रगति कर रही है। इस भारत भूमि के हमारे उन पूर्व-पुरुषों को धन्य है, जिनके अन्दर अन्यों को आत्मसात् करने की अद्भुत क्षमता व शक्ति विद्यमान थी। नाना रीतियों, नाना रिवाजों, नाना परम्पराओं और नाना प्रभेदों के बावजूद भी संस्कृति के अन्दर एक ऐसी अमर एकता है, जो देश को शक्ति प्रदान करती है और उसे अक्षुण्ण रखती है।

यह अतिशय परितोष का विषय है कि गुरुकुल विश्वविद्यालय शिक्षा के वैदिक आदर्शों को हृदयंगम करता है और समर्पण एवं मानवता की निःस्वार्थ सेवा की भावना से प्रेरित है। जब मैं इस स्थान पर चहुंओर दृष्टिपात करता हूँ तो मैं बहुत प्रभावित होता हूँ कि हमारे देश की विचार सम्पदा और संस्कृति पर प्रकृति ने कैसा कोमल और और मंगलकारी प्रभाव डाला है। अनादि काल से भारतीय लोग प्रकृति की ओर आकृष्ट होते रहे हैं। उस प्रकृति के प्रति नहीं, जिसके दांत और पञ्जे रक्तरंजित हैं, अपितु उस प्रकृति के प्रति जो आनन्द और उल्लास का स्रोत है, जो शांति का धाम है।

विश्व के कुछ चुने हुए उत्तम उपहार प्रकृति की एकांत गोद में ही मानव के मस्तिष्क से निस्सन हुए थे।

गुरुकुल हिमालय की गोद में बसा हुआ है। यहाँ पर यह संसार के कोलाहलों सरगर्मियों और परेशानियों से मुक्त है। मानसिक शक्तियों के विकास के लिए यहाँ का वातावरण आदर्श है। इस शिक्षा सदन में अध्ययन करने वाले छात्रों को प्रकृति की मंगलकारी भावनाएं प्रभावित करती है।

यह मानने में किसी को भी आपत्ति न होगी कि चरित्र निर्माण ही शिक्षा का सर्वप्रथम उद्देश्य है। चरित्रहीन बौद्धिक प्रतिभा का कोई मूल्य नहीं। सर्म्पण, समादर तथा भ्रातृप्रेम की भावनाओं का विकास करके ही मानव की आत्मा तथा चरित्र को उन्नत किया जा सकता है। गुरुकुल शिक्षा पद्धति इसी कारण वांछनीय है कि वह युवक विद्यार्थियों के चरित्र निर्माण पर सर्वाधिक बल देती है। गुरुकुल विश्वविद्यालय में विद्यार्थियों के लिए चारित्रिक विकास के प्रभूत अवसर है क्योंकि वह नगरों की उन शिक्षा संस्थाओं की भांति नहीं जहाँ पर समाज का दूषित प्रभाव पड़ने की सम्भावना रहती है।

बड़ी प्रसन्नता का विषय है कि गुरुकुल विश्वविद्यालय की उपाधियों को सरकार द्वारा मान्यता प्राप्त

है और समय-समय पर इसे सरकारी आर्थिक सहायता भी मिलती रहती है। हमें आशा करनी चाहिए कि सरकार को देश के विभिन्न भागों में ऐसी संस्थाएं स्थापित करने में कोई आपत्ति न होगी जिनसे गुरुकुल का प्रेम तथा सेवा का स्पृहणीय संदेश चहुंदिशि फैल जाए। इस समय हमें अपनी मातृभूमि की सांस्कृतिक परम्परा के प्रति अपने विश्वास को सुदृढ़ करना चाहिए।

अपना यह प्रवचन समाप्त करते हुए, मैं कुछ एक वचन अपने तरुण स्नातकों के प्रति निवेदन करना चाहता हूँ। प्रिय बालकों, आप आर्य संस्कृति के उत्तराधिकारी है अंधकार में आपको अपनी मशाल बराबर प्रज्ज्वलित रखनी होगी। आपको ही जनता को सत्यपथ का प्रदर्शन करना होगा। जब वे गिर जाएं तो आपकों ही उन्हें उठाना होगा आपका जीवन मानव जाति की सेवा में समर्पित है। इसलिए साहस और धीरता का पाथेय लेकर संसार में आगे बढ़िए। आपकी विद्या-सम्पदा जो कि ऋषियों की ज्ञान सम्पदा है, आपको शांति और समृद्धि प्रदान करेगी।

श्री चिन्तामणि द्वारिका नाथ देशमुख

(सन् 1957)

राष्ट्र के उत्थान में नवयुवकों का उत्तरदायित्व

सौजन्य से परिपूर्ण हे महानुभावों, आपका मुझ पर बड़ा अनुग्रह है। प्रशंसा के भार से मेरे कंधे झुक गए हैं। सर्वप्रथम में चन्द्रमौलि भगवान् शिव को प्रणाम करता हूँ। पुन: हंसाधिरूढ सरस्वती देवी को प्रणाम करता हूँ। आप जैसे विशारद (पंडितों). के सामने मैं सशारद (शारदा का उपासक) होते हुए भी अत्यन्त विनम्र भाव से उपस्थित हुआ हूँ। श्री से रहित हूँ किन्तु यथावत् कहने की इच्छा वाला होकर अपनी रक्षा के लिए सदुर्ग (दुर्गा जी का भक्त) बन गया हूँ।

मेरा संस्कृत भाषा में मुद्रित दीक्षांत अभिभाषण आपके हाथ में है हीं कुछ दिन पहले कुलपति महोदय ने मुझे आदेश दिया था कि किसी अवसर पर संस्कृत भाषा में भी आप कुछ कहे। अपने अभिभाषण के कुछ अंश संस्कृत भाषा में आप को सुनाऊँगा।

आज हिमालय के निकट गंगा के तट पर गुरुकुल के पावन और प्रसन्न जल स्थल एवं पवन मंडल में आपके साथ उपस्थित होकर मुझे महान् हर्ष हो रहा है। इस आनन्द के कारणभूत पंडित वरेण्य इन्द्र विद्यावाचस्पति सबसे पहले मेरे धन्यवाद के पात्र है जिन्होंने मुझे दीक्षान्त भाषण के लिए आमन्त्रित कर यह शोभन अवसर प्रदान किया।

संबत् 1977 में विश्वविद्यालय रूप में परिणित यह गुरुकुल आज तक कुछ यशस्वी देश नेताओं के द्वारा अपने अपने भाषणों से अनुगृहीत किया गया। उन महापुरूषों महामना पंडित मदन मोहन मालवीय, डॉ॰ भगवानदास, स्वामी श्रद्धानन्द, डॉ॰ राजेन्द्र प्रसाद, आचार्य रनेन्द्र देव, गुरुदेव रवीन्द्रनाथ, डॉ॰ सर्वपल्ली राधाकृष्णन्, राजर्षि टंडन आदि प्रमुख है। इस प्रकार के महापुरूषों की पंक्ति में मुझे स्थापित कर सम्मानित करने के लिए मैं कुलपति महोदय को धन्यवाद वितरित करता हूँ।

कुछ विश्वविद्यालय के संचालकों ने अपनी दुर्दमनीय लक्ष्य प्राप्ति की तत्परता दिखाई। ऐसे विश्वविद्यालय विध्नों के सामने खड़े होने पर भी विकास की ओर बढ़ते रहे। इन राष्ट्रीय संस्थाओं की परम्परा बड़ी उदात्त है जिनमें जादवपुर स्थापत्य विश्वविद्यालय, शान्ति निकेतन का विश्वभारती विश्वविद्यालय, देहली का जामिया मिलिया और हरिद्वार में स्थापित आप का यह गुरुकुल विश्वविद्यालय प्रमुख है। इस प्रकार की सनातन उदात्त गुरुकुल परम्परा के उत्थान के स्वर्णिम स्वप्न की पूर्ति में महर्षि दयानन्द सरस्वती महाभाग कृत संकल्प रहे। उसी स्वप्न को साकार करने के लिए स्वामी श्रद्धानन्द ने जो कि कुलपिता पद के अधिकारी थे, प्रयत्न किया। पुण्यशाली पुरुषों के स्वप्न कभी भी व्यर्थ नहीं जाते, यह बात निरन्तर इतिहास के क्रम में सिद्ध कर दी है। इस सन्दर्भ में महात्मा गाँधी जी ने भी कहा था-

"मेरे स्वप्न बुलबुले के समान अकिंचित्कर नहीं है। मैं अपनी शक्ति के अनुसार उनको साकार करने का प्रयास करता हूँ।"

स्वामी श्रद्धानन्द ने व्रत धारण करके प्राचीन परिपाटी को स्थापित करना चाहा जिसका अनुसरण करके बालक उपनयन संस्कार के पश्चात् ब्रह्मचर्य व्रत धारण करते थे तथा ज्ञान-विज्ञान की प्राप्ति के लिए विद्या

की संख्या के आधार पर चौदह वर्ष तक गुरुकुल में निवास करते थे। इस प्राचीन संस्कृति के पुनर्जीवन से वे इस संस्कृति का अर्वाचीन विज्ञान के साथ समन्वय सिद्ध करने की इच्छा रखते थे और हिन्दी भाषा के माध्यम से विद्या प्राप्त करने वाले अपने शिष्यों में आत्मविश्वास और देश-प्रेम जगाना चाहते थे।

यह बड़े आनन्द, सन्तोष का विषय है कि उनके द्वारा लगाया गया पौधा आज दृढ़ और सुन्दर वृक्ष बन गया है और इसकी छाया में बैठे हुए कुछ छात्रों ने उचित और उपयुक्त शिक्षा को प्राप्त करके अपने-अपने शारीरिक, मानसिक और आध्यात्मिक जीवन को समाज और देश की सेवा में लगाने का संकल्प लिया है। कान देकर सुनने वालो, हे ज्ञान के सागर स्नातकों! यद्यपि आज कर्ण नहीं है, फिर भी उदार हो, मेरी इस वाणी को आप आदर के साथ सुनो यह सत्य धर्मलोक में प्रथित है कि तुम बोए हुए बीज से अधिक काटते हो। अपने बोए हुए सदाचरण से तुम शीलस्वभाव को काटो अर्थात् प्राप्त करो और उस शीलस्वभाव से नियति का निर्धारण करो। वह सुन्दर नियति आपके लिये शुभ हो। इतना कहकर मैं विश्राम लेता हूँ।

श्री मेजर वासन दास वसु

(सन् 1959)

शिक्षा में क्रान्ति

गुरुकुल के मुख्याधिष्ठाता महोदय, आचार्यों, स्नातकों तथा विद्यार्थियों।

मैं इस बात को पूरी तरह अनुभव कर रहा हूँ कि आप लोगों ने जो मान मुझे दिया है शारीरिक मानसिक अथवा नैतिक किसी भी दृष्टि से, मैं उसके योग्य नहीं हूँ। वृद्धावस्था के कारण मेरी शारीरिक और मानसिक शक्तियों का काफी ह्रास हो चुका है और नैतिक दृष्टि से जिस स्थान को स्वर्गीय लाला लाजपत राय बाबू भगवान दास और महात्मा गाँधी जैसे महापुरूषों ने सुशोभित किया है, उसे ग्रहण करते हुए मैं अपनी तुच्छता को पूरी तरह अनुभव कर रहा हूँ। किन्तु आपने जबरदस्ती आज्ञा देकर मुझे यहाँ बुलाया है। आपके प्रेम ने मुझे आने के लिए मजबूर किया है। और आपके इस प्रेम, आपकी सहायता और आपकी उदारता से ही मुझे यह आशा है कि मैं इस पद की ओर थोड़ा-बहुत अपने कर्त्तव्य का पालन कर सकूं।

आज से लगभग 50 वर्ष पूर्व से लेकर अन्त तक मैं आपकी इस प्रशस्त संस्था के संस्थापक स्वर्गीय स्वामी श्रद्धानन्द जी से परिचित रहा। स्वामी श्रद्धानन्द जी का नाम उस समय लाला मुंशीराम था। अपने जीवन के आरम्भ में ही उन्होंने जान लिया था कि कोई महान् कार्य बिना कुर्बानी के सिद्ध नहीं हो सकता। एक आदर्श तथा स्वाधीन गुरुकुल की स्थापना उस समय में ही उनके जीवन का स्वप्न था। जो आज पुलकित हो रहा है।

आपका गुरुकुल अर्वाचीन भारत में अपनी किस्म की पहली और अपूर्व संस्था है। इस विश्वविद्यालय में अन्य विश्वविद्यालयों की अपेक्षा यह अन्तर था कि इसमें ऑरिएन्टल फेकल्टी (प्राच्य विद्या संकाय) भी कायम की गयी जो बी.ओ.एल., एम.ओ.एल. की डिग्रियां देती हैं। स्वभावतः इस गुरुकुल की स्थापना पर मुझे एक खास हर्ष हुआ। इसके कुछ ही दिनों बाद महाकवि रबीन्द्रनाथ ठाकुर ने बोलपुर में शान्ति निकेतन विश्वभारती की स्थापना की।

इस जीवन में समय-समय पर मुझे अनेक खब्त रहे हैं, और मैं संस्कृत, भारतीय इतिहास, भारतीय अर्थशास्त्र, भारतीय धर्म इत्यादि अनेक विषयों में दखल देता रहा हूँ, तथापि मैं इस बात को नहीं भूल सकता कि इनमें सबसे पहले मेरा सम्बन्ध मेडीसन अर्थात् वैद्यक से हुआ था। इसलिए मुझे यह सुनकर बड़ी प्रसन्नता हुई कि आप के विश्वविद्यालय में एक सुव्यवस्थित और सुसज्जित विभाग वैद्यक का भी है। आप के आस-पास की भूमि इस तरह की जड़ी-बूटियों, वृक्षों और लताओं से भरी पड़ी है। आपके यहाँ के वैद्यक विभाग के सदस्यों को उचित है कि ये इन वनस्पतियों के गुणों और उनके उपयोगों का पता लगावें। मेरी तुच्छ सम्मति है कि आप के यहाँ इस तरह की (Laboratories) रसायनशालाएं होनी चाहिए, जिसमें वनस्पतियों के रासायनिक गुणों और उनके औषधि सम्बन्धी गुणों का अर्वाचीन ढंग से वैज्ञानिक अनुसंधान किया जा सके।

अर्वाचीन भारत की समस्याओं में मेरी राय में सबसे पहली समस्या हमारी शारीरिक रक्षा की सहायता

है। आत्मरक्षा की प्रकृति का सबसे पहला नियम है। धर्मपालन के लिए भी हमारा पुराना सिद्धान्त है- "शरीरमाद्यं खलु धर्मसाधनम्", इसलिए अपने शरीर की रक्षा और शारीरिक उन्नति की ओर ध्यान देना आप लोगों का सबसे पहला कर्त्तव्य है। प्रत्येक भारतवासी को कसरत तथा आत्मरक्षा के उपाय सिखाया जाना आवश्यक है। क्रिकेट, टेनिस, हॉकी, फुटबाल और पैरलल बार के स्थान पर मैं डंड, मुगदर, कबड्डी, लाठी-खेल, अखाड़ों हठयोग की प्रक्रियाओं, आसनों, प्रणायाम इत्यादि का कहीं अधिक पक्षपाती हूँ। समस्त भारत में इनके प्रचार और विस्तार की आवश्यकता है। आत्मरक्षा के लिए इन चीजों का बहुत मूल्य है। नि:शस्त्र मनुष्यों के लिए अपने जान-माल और अपने बाल-बच्चों की इज्जत की रक्षा का मेरी नजरों में इसके सिवाय और कोई उपाय नहीं है।

गुरुकुल के स्नाताकों! इस विषय में आप लोगों का उत्तरदायित्व सबसे अधिक होना चाहिए। भारत आपसे इस बात की आशा करता है कि आप इस देश की जनता की दशा सुधारने और उनके मृत प्राय शरीर में फिर से जान फूंकने के लिए कोई भी परिश्रम, कोई भी त्याग उठा न रखेगें। इसके लिए आपको सच्चे कर्मों और सच्चा त्यागी बनाना होगा। देश के अन्य युवकों को इस विषय में आप ही से प्रोंत्साहन मिलना चाहिए। आपको भारतीय जनता का सच्चा सेवक बनना चाहिए उन्हें अज्ञानान्धकार से बाहर निकालना, उनमें सच्ची शिक्षा का प्रचार करना, उनके मुर्झाये हुये हृदयों में आशा को जन्म देना, अपने को उनका सच्चा सेवक साबित करना और राष्ट्रीय स्वाधीनता के संग्राम में उन्हें साथ लेकर अग्रसर होना आप लोगों का पवित्रतम कर्तव्य हैं। बड़े हर्ष की बात है कि देश के अनेक लोगों का ध्यान इस ओर भी आकर्षित हो रहा है। स्त्री शिक्षा की ओर आपके गुरुकुल के प्रयत्न सराहनीय हैं। जालन्धर के क़न्या महाविद्यालय जैसी संस्थाओं से भी हमें इस विषय में बहुत कुछ सुधार की आशा हो सकती है। गुरुकुल के स्नातकों! इस सब कार्यों के लिए आप लोगों को सबसे पहले अपने चरित्र का संगठन करना होगा। इसके लिए मेरी राय में आप लोगों को आजीवन अपने को विद्यार्थी ही समझना चाहिए। सबसे आवश्यक चीज चरित्र है। चरित्र ही मनुष्य की सबसे अधिक मूल्यवान सम्पत्ति है। इसके निम्न मुख्य अंग हैं- (1) अपने अधिकारों की और अधिक ध्यान न देकर पहले अपने कर्तव्य को ठीक-ठाक समझना और उसका पालन करना, (2) प्लेन लिविंग एण्ड हाई थिंकिंग अर्थात् सरल जीवन और उच्च विचार, (3) नम्रता।

भर्तृहरि के ये शब्द आपको स्मरण रखने चाहिए:-

"नम्रत्वेनोलभन्त: परगुण कथनै: स्वान् गुणान् व्यापर्यत:।"

गुरुकुल विश्वविद्यालय के स्नातकों! एक समय था जबकि संसार के विविध देशों के विद्यार्थी इस देश में अपने ज्ञान की वृद्धि के लिए आया करते थे। ठीक उसी तरह जिस तरह कि आज हम शिक्षा प्राप्त करने के लिए यूरोप और अमेरिका जाते हैं। आप का कार्य है कि भारत को फिर एक बार इस योग्य बना दें कि संसार भर के विद्यार्थी भारतीय आचार्यों से दर्शन, विज्ञान, कला और सच्चे मानव प्रेम की शिक्षा ग्रहण करने के लिए भारत आया करें। अब भी आचार्य जगदीशचन्द्र बोस की रसायनशाला में काम करने और सीखने के लिए यूरोप के वैज्ञानिक कलकत्ते आते हैं। अनेक संस्कृत पढ़ने के लिए अब भी बनारस पहुँचते हैं। इस समय बुखारस विश्वविद्यालय का एक प्रोफेसर कलकत्ते में आचार्य सुरेन्द्रनाथ दास गुप्त से भारतीय दर्शनशास्त्र की शिक्षा ग्रहण कर रहा है। मेरी यह हार्दिक इच्छा और मेरी यह प्रार्थना है कि आपका गुरुकुल विश्वविद्यालय भी संसार भर के विद्याप्रेमियों के लिए इसी तरह के पठन-पाठन तथा विद्योपार्जन का एक मान केन्द्र हो और संसार भर के विद्यार्थी यहाँ जमा होकर विद्याप्रेम तथा मानव प्रेम की शिक्षा ग्रहण करें।

श्री मोरारजी देसाई

(सन् 1965)

शिक्षा की नई दिशाएं

हम अपनी शिक्षा प्रणाली के उस दोष से ग्रसित हैं जिसके अन्तर्गत मैकाले ने पाश्चात्य विचारों को हमारी शिक्षा में आरोपित किया। पाश्चात्य विचारों की छाया हमारी शिक्षा प्रणाली में आज भी समाहित है। लेकिन हमें इस दिशा में परिवर्तन लाना है। मुझे प्रसन्नता है आप इन बिन्दुओं पर विचार कर रहे हैं। लेकिन जब तक शिक्षा की दिशा तय करने में बुनियादी परिवर्तन नहीं किया जायेगा, मुझे डर है कि आंशिक परिवर्तन की धारा से प्रभावी परिणाम की आशा नहीं करना चाहिए, लेकिन वास्तविक रूप से यही हो रहा है।

शिक्षा का उद्देश्य यह दिखाना है कि मनुष्य अपनी प्रतिभा एवं क्षमता का आकलन करके अपने जीवन को समग्र रूप से ऊंचा उठाये और जीवन पर्यन्त अपनी इन क्षमताओं का विकास करें। यही शिक्षा का वास्तविक उद्देश्य है। यदि यह नहीं प्राप्त होता तो शिक्षा निरुद्देश्य है। मुझे डर है कि हमारे चरित्र का निर्माण होता है। इसी विचार से जीवन में निर्भयता एवं सत्य का समावेश होता है। जीवन के इसी परिप्रेक्ष्य में शिक्षा हमारी सहायता के लिए साधन बन सकती है, पर आज वास्तविक रूप से शिक्षा की इसी भूमिका का निर्वाह नहीं हो पा रहा है। महात्मा गाँधी ने इस देश के लोगों को इसी सन्दर्भ में सोचने के लिए प्रेरित किया और उन्होंने उन विचारों को एक नयी दिशा प्रदान की। दुर्भाग्य से इसका अनुपालन हमारे देश के शिक्षाविदों ने नहीं किया जब कीं ऐसा किया जाना चाहिए था।

हमें प्राथमिक स्तर पर ही पूरा ध्यान केन्द्रित करना चाहिए क्योंकि यही वह समय है जब शिक्षा की बुनियाद खड़ी होती है लेकिन हम इसकी अवहेलना कर रहे हैं। यही वह बच्चा है जो मनुष्य का पिता कहा जा सकता है क्योंकि वह मनुष्य बनने जा रहा है, वह पिता बनने जा रहे है और जब तक वह ठीक नहीं होगा, भविष्य की संतति भी ठीक नहीं हो सकती। लोग तो मेरे जैसे वृद्ध हो गये हैं या आप जैसे मध्यम वय के हैं। और अन्य लोग है, उनको सुधारा जाना बहुत कठिन है। क्योंकि आप एक चीनी मिट्टी के टूटे हुए कप की मरम्मत नहीं कर सकते। लेकिन जब यह बनाया ही जा रहा हो तो, आप अपनी इच्छानुसार आकृति प्रदान कर सकते हैं इसीलिए ये बच्चे है जिन पर सावधानी पूर्वक अपने आदर्शों को आरोपित कर सकते हैं। हमें उन्हें अपने मत के अनुसार अपने ही मत में ढालने का प्रयत्न नहीं करना चाहिए। क्योंकि यह कोई वांच्छनीय ढांचा नहीं है।

जब हमारे पास योग्य शिक्षक हो क्योंकि मध्य वर्ष में शिक्षक ही शिक्षा है। योग्य शिक्षक के सामने पाठ्यक्रम की कोई महत्ता नहीं होती, शिक्षक का व्यक्तिगत आचरण ही बालक को प्रभावित करता है। यही वह विचारणीय विषय है, शिक्षकों की जो प्रशिक्षा संस्था है, उनको इस दिशा के प्रति गम्भीर होना चाहिए लेकिन वे सभी संस्थाए ट्रेड यूनियन की तरह बढ़ती जा रही है। क्या वह वाञ्छनीय है? छात्र इससे सीधे प्रभावित होते है। इसीलिए शिक्षक एवं छात्र दोनों में ही असन्तोष है।

मैं आपका ध्यान आकृष्ट करना चाहता हूँ कि शिक्षा वास्तविक रूप से ऐसी होनी चाहिए जो केवल

सरकारी नियन्त्रण में न रहें। सरकार को वित्त उपलब्ध कराना चाहिए न कि उस पर नियन्त्रण करना चाहिए लेकिन इसका अर्थ यह नहीं है कि वह उस पर ध्यान ही न दें। उनको ऐसा नहीं करना चाहिए क्योंकि शिक्षा पर औपचारिक नियन्त्रण की आवश्यकता नहीं है बल्कि अनौपचारिक रूप से उसे रखा जाये। नियन्त्रण तभी किया जाना चाहिए जब कोई गलत रास्ते पर जा रहा हो, निश्चित रुप से उसे उस रास्ते से हटाना चाहिए। यदि कहीं धन का गबन है या यदि कहीं अनुशासन हीनता है तो निश्चित रूप से उसे सुधार के मार्ग पर प्रशस्त करने की आवश्यकता है। लेकिन इस प्रकार की अनुशासन हीनता भी कभी आचारण की स्वाभाविक पहलु बन जाती है। मैंने आपके सामने वे संभी मूल बातें रखी जो मैं आप के सामने रखना चाहता था, अन्य बातें इन्हीं मूल तथ्यों पर आधारित है। यह आपके लिए है क्योंकि आप ही ने उन पर विचार करना है। और आपको ऐसी रचनो बनानी है जो कि आप को करनी है। इस प्रक्रिया में आप सभी का सहयोग अपेक्षित है।

श्री यशवंतराव चव्हाण

(सन् 1966)

परामपरागत एवं आधुनिक शिक्षा का समन्वय

यहाँ आकर मुझे बहुत खुशी हो रही है। इस शिक्षा संस्था के बारे में मित्रों, कई बार मैंने प्रशंसा सुनी। किन्तु इसे देखने का अवसर आज मुझे मिला है। यदि इसे अत्याधुनिक न कहूँ तो मैं कहूँगा कि यहाँ आकर आज मुझे जो कुछ मालूम हुआ और जो कुछ मैंने सोचा था, उससे कहीं बढ़कर इसे पाया है। दूसरे रूप में वास्तविकता कल्पना से कहीं और सुखद सिद्ध हुई है इसीलिए कुलपति श्री सत्यव्रत सिद्धान्तालकार का मैं आभारी हूँ कि उन्होंने इस अवसर पर यहाँ आने के लिए मुझे आमन्त्रित किया।

प्राय: एक दो बार दूसरे विश्वविद्यालयों में ऐसे ही समारोहों में जाने का अवसर मिला है किन्तु अन्य विश्वविद्यालयों में और आप के विश्वविद्यालय में कुछ अन्तर है। वे सब कहीं बड़े शहरों में स्थित है और उनका निर्माण पाश्चात्य ढंग पर हुआ है जबकि आपका विश्वविद्यालय शहर से दूर स्थित है जो किसी राज्य की राजधानी तो क्या, एक जिला भी नहीं है। दूसरे संगठन, शिक्षा प्रणाली और आचरण की दृष्टि से इसमें भारत वर्ष के दर्शन अधिक होते हैं। मेरे कहने का तात्पर्य यह नहीं है कि शहरों में स्थित अन्य विश्वविद्यालय भारतीय नहीं है अथवा उनका वातावरण आवश्यक रूप से विदेशी होता है। कहने का तात्पर्य यह है कि विचारधारा और पाश्चात्य की दृष्टि से आपकी संस्था प्राचीन जनमानस के अधिक निकट है। यह बहुत खुशी की बात है क्योंकि शिक्षा का सबसे बड़ा उद्देश्य आज इस देश में जनता के हृदय और मस्तिष्क को स्पर्श करना और उनका परिष्कार करना है। यद्यपि कुछ न कुछ प्रभाव तो छोटी बड़ी प्रत्येक संस्था का लोगों के दिल दिमाग पर पड़ता ही है किन्तु जो संस्था रचना और कार्य प्रणाली की दृष्टि से अधिक निकट होगी, जनजन पर उसका अधिक प्रभाव पड़ना स्वाभाविक है।

गुरुकुल शिक्षा प्रणाली के सम्बन्ध में जो भी मैं जान पाया हूँ उसके आधार पर यह कहना चाहूँगा कि यह प्रणाली हमारी आज की परिस्थितियों और देश की आवश्यकताओं के अनुरूप है। मैं नहीं मानता कि इस प्रणाली और पाश्चात्य ढंग पर चलने वाले विश्वविद्यालयों की प्रणाली में किसी प्रकार का पारस्परिक विरोधाभास है। शिक्षा का क्षेत्र इतना व्यापक है और हमारी जरूरतें इतनी अधिक है कि ये दोनों प्रणालियाँ एक दूसरे की पूरक मानी जा सकती है। जिस प्रकार पानी की आवश्यकता पड़ने पर लोग कुएं भी खोदते है और नदियों से नहरें भी निकालते है उसी प्रकार शिक्षा की प्यास को बुझाने के लिए हमारे देश में सभी प्रणालियों और सभी तरह की संस्थाओं की आज पूरी गुंजाइश है।

मैं गुरुकुल कांगड़ी के व्यवस्थापकों और संचालकों को बधाई देता हूँ कि शिक्षा की परम्परागत प्रणाली को अपनाते हुए और भारत की प्राचीन विद्या पर जोर देते हुए भी उन्होंने शिक्षा के आधुनिक पहलू की एकदम अवहेलना नहीं की है। यह धर्मशास्त्र, दर्शनशास्त्र, और भारतीय इतिहास और साहित्य की शिक्षा के अतिरिक्त आप लोग आधुनिक कृषि, विज्ञान, समाजशास्त्र और चिकित्सा विज्ञान के अध्ययन पर भी जोर देते हैं।

इन विभागों में विद्यार्थियों की संख्या तथा उनके उत्साह से आप ने जान लिया होगा कि आजकल के नौजवान विज्ञान में कितनी रुचि रखते हैं। मुझे आशा है कि इस प्रवृत्ति को प्रोत्साहन देने और देश के विकास की योजनाओं में पूर्ण योगदान देने की दृष्टि से आप इस विश्वविद्यालय में इन्जीनियरिंग और तकनीक सम्बन्धी दूसरे विभागों को खोलने का भी यत्न करेंगे।

हम अपने पड़ोसी देशों को यही बताना चाहते हैं कि किसी भी तरह के झूठे दवाब में आकर भारत उनसे डरने वाला नहीं है। पाकिस्तान तो इस बात को अनुभव से समझ गया है कि अच्छा हो चीन इस बात को जान ले। हमारी इस दृढ़ता और संकल्प के आधार देश के नौजवान हैं। उन्हीं का साहस हमारी हिम्मत है और उन्हीं का बलिदान राष्ट्र का सहारा है। मुझे आशा है आप सब लोग, जिन्होंने इस संस्था में पढ़ते समय राष्ट्रीयता का व्यावहारिक सबक सीखा है। अपनी जिम्मेदारी को समझने और साधारण नागरिक के रूप या देश की सैन्य सेवाओं में भर्ती होकर सुरक्षा के काम में पूरा सहयोग देंगे। मुझे बहुत खुशी है कि यहाँ आप सब लोगों से मिल सका हूँ, विश्वविद्यालय को देख सका हूँ। स्नातकों की जो उपाधियाँ पुरस्कार मिले हैं उन्हें मैं अपनी ओर से शुभकामनायें भेंट करता हूँ। मेरी हार्दिक कामना है कि आप दिनों-दिन आगे बढ़े और साक्षरता प्रसार के रचनात्मक कार्यों में बराबर योगदान देते रहें।

बाबू जगजीवनराम

(सन् 1972)

समता पर आधारित समाज की रचना के लिए मूल्यनिष्ठ समान शिक्षा आवश्यक

हमारे देश में रिफारमेशन-सुधारवाद की ऐतिहासिक क्रिया उपनिषद् कारों से आरम्भ होकर, भगवान् बुद्ध से, सन्त मतों से, महर्षि दयानन्द से, अग्रसारित होती रही। "रिनेसा" (परिवर्तन) राम मोहन राय से आरम्भ हुआ लेकिन भारतीय मानस की अद्भुत चित्रांकन पीठिका ने, जिस पर नई रेखायें उगती हैं मगर पुरानी मिटती नहीं, जैसे सब विरोधाभास को आत्मासात कर दिया। न्याय शास्त्र का विकास और उत्कर्ष के सिद्धान्तों का, यह तकाजा है कि विचारों के संघर्ष और मन्थन के बाद जब एक उच्चतर विचार, एक उच्चतर सत्य उद्भूत हो तो वह पूरी तरह, उन पुरातन विचारों की, उन सापेक्ष सत्यों की, जिनकी निस्सारता सिद्ध हो चुकी हो, जगह ले लें। लेकिन ऐसा नहीं हुआ। इतने ऊंचे विचारों के हम जनक, इस छोटे से सत्य को भी ग्रहण नहीं कर पाते हैं कि जो निस्सार और असत्य सिद्ध हो गया, उसका हम त्याग तो कर दें। संभवतः उपनिषद् और बुद्ध के विचार समय से बहुत आगे थे। लेकिन आज का समाज तो तमाम रूढ़ियों से आगे इन उच्चादर्शों का अनुसरण करने का प्रयत्न कर सकता है।

जनतन्त्र में चूंकि व्यक्ति स्वयंसाध्य है, साधन नहीं, इसलिए समाजवादी परिवर्तन की इस क्रिया में, आपके तात्पर्य का योग नहीं है कि आपका विकास अवरुद्ध हो, शिक्षा के मूल्यों में कोई कमी आए। हम तो शिक्षा का प्राथमिक उद्देश्य व्यक्ति का सर्वांगीण विकास समझते हैं। लेकिन समाज भी जब तक इसी उद्देश्य से संगठित न हो, शिक्षा के प्राथमिक उद्देश्य की पूर्ति सम्भव नहीं है। आज समूहबद्ध टुकड़ियों, यानि जातियों का, कोई राष्ट्रीय आदर्श नहीं है। केवल स्वार्थ है। आज यह चेतना नहीं कि सार्वदेशिक राष्ट्रीय भावना कोई अमरबल्लरी नहीं है जो बिना जड़ों के द्वारा, पोषण ग्रहण किये पल्लवित- पुष्पित होती रहे। शैक्षणिक अवसरों की समानता समाजवादी जनतान्त्रिक समाज की पहली कसौटी है। रहें पब्लिक स्कूल, उनके बच्चों के लिए जो मोटी फीस दे सकते हैं लेकिन उन सब बच्चों को जो योग्य हों, उसी स्तर की अच्छी शिक्षा साथ-साथ सुलभ होनी चाहिए, चाहे वे किसी समुदाय, धर्म, सम्प्रदाय, जाति के हों, चाहे उनके माँ-बाप की आर्थिक स्थिति कैसी भी हो, और ऐसी शिक्षा निःशुल्क दी जानी चाहिए।

आज शिक्षा का बड़े वेग से विस्तार हो रहा है। रोज ही कोई ना कोई स्कूल या कॉलेज खुल रहा है। हमें जरा रुककर सोचना है कि उस विस्तार से देश का शिक्षार्थियों का किसी तरह का और किस हद तर्क कल्याण होना है ? आजादी के इतने वर्षों के बाद भी शिक्षा की पद्धति मूलतः वहीं है जिसका प्रादुर्भाव ब्रिटिश साम्राज्यवाद की आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए हुआ था। जन-जीवन की, शिक्षार्थियों की अपनी जीवन की, माँग कुछ ओर है। शिक्षा के विषय कुछ ओर हैं। भारतीय जीवन की अनिवार्य आश्यकतायें हैं: कृषि के उत्तरोत्तर विकास पर आधारित उद्योग का विकास, नई वित्तीयों और नये दृष्टिकोणों की स्थापना और उनका पोषण, सांस्कृतिक क्रान्ति या "रिनेसा" की क्रिया की पूर्ति। इन उद्देश्यों की पूर्ति के लिए अध्ययन के विषय क्या होंगे, शिक्षण की पद्धति क्या होगी, शैक्षणिक कार्यक्रमों का संगठन क्या होगा ? इन सब पर विचार करना आवश्यक है। शिक्षा आयोग ने बड़े महत्व का कार्य इस दिशा में किया है।

भारत के विद्यार्थी विभिन्न विषयों की शिक्षा के लिए बाहरी विश्वविद्यालय में क्यों जाते हैं? यह हिन्दी की न्यूनता है, उसकी कमजोरी है। जितने विश्वविद्यालय हिन्दी भाषी क्षेत्रों में हैं, उतने और किसी भाषा क्षेत्र में नहीं हैं। यदि सब इन, विश्वविद्यालयों के कुलपति मिलकर, विशेष विश्वविद्यालयों में, विशेष अध्ययनों और अन्वेषणों की व्यंवस्था करें और अध्ययन और गवेषणा का स्तर इतना ऊँचा रखें कि उन विषयों के अध्ययन के लिए अन्य भाषा-भाषी हिन्दी सीखकर यहाँ जायें, तो न केवल हिन्दी का वरन देश का भी कल्याण होगा। प्रत्येक विश्वविद्यालय में प्रत्येक विषय की व्यवस्था सम्भव तो है लेकिन हर विषय में, पठन-पाठन शोध का मानक इतना ऊँचा हो कि वह ओरों को भी अपनी ओर खींच सके।

आपमें अपार जीवन है, संवेदनशीलता है, कर्मठता है। मुझे दुख होता है जब आपकी ऊर्जा और शक्ति की धारा को बालुकाराशि पर बिखरते हुये देखता हूँ। इस शक्ति की सहायता से उस महान् मानवीय क्रान्ति को सफल बनाया जा सकता है जिसका नारा है- "मनुष्य ही सब कुछ का माप है।" इस शक्ति से देश की सामाजिक आर्थिक राजनीतिक परम्पराओं में एक नये बोध का स्पंदन लाया जा सकता है। इस शक्ति से चेतना की एक ऐसी लहर निःसृत हो सकती है जिससे भारत में नवजीवन आ जाये। देश की इस अमूल्य निधि को आप यूं व्यर्थ नष्ट न करें। यह सृजन की शक्ति है। इसे सृजन में लगायें। विचारों की महान् क्रान्ति के आप अग्रदूत बनें। आप भारत की, अन्य देशों की, सारे मानवता की, संस्कृति के उत्तराधिकारी हैं। आप अपने दायित्व को निभायें।

श्रीमती इन्दिरा गाँधी (प्रधान मंत्री, भारत सरकार)

(सन् 1973)

उद्देश्यपूर्ण शिक्षा

आज का दिन केवल एक समारोह का ही नहीं है। आज इन युवा स्नातकों के जीवन ने नया मोड़ लिया है। आज से नई जिम्मेदारियाँ संभालने जा रहे हैं। अभी तक आप दूसरों से कुछ प्राप्त कर रहे थे, आज से दूसरों को आप से अपेक्षा होगी। विद्यार्थी जीवन एक तैयारी की व्यवस्था है समाज का युवा लोगों के प्रति शिक्षा देने का दायित्व है। स्कूल और कॉलेज की शिक्षा समाप्त करने के बाद पढ़े-लिखे नवयुवकों का समाज के प्रति एक कर्त्तव्य हो जाता है। कर्त्तव्य है अपने अर्जित ज्ञान और कौशल को समाज की सेवा में लगाना। कभी-कभी अखबारों में नवयुवकों में फैले असंतोष उनकी हड़तालों और अनशनों, सीधी कार्यवाही और झगड़ों की खबरें होती हैं। एक हद तक यह असंतोष युवकों की गतिशीलता का द्योतक है, उस हद तक मैं इस भावना का स्वागत करती हूँ।

हमें एक प्राचीन संस्कृति विरासत में मिली है, जिसने हमें अपने लम्बे इतिहास की अवधि में जीवित रखा है और हमें असंख्य दुख और मुसीबतें झेलने के लिए बल दिया है। इस संस्कृति के बहुत से आदर्श और गुण चिरंतन महत्व के हैं। लेकिन उन्हें आज के जीवन के लिए सार्थक बनाने के लिए हमें उनको बदलते रहना चाहिए। उन्हें उन थोथे अंधविश्वासों और व्यर्थ के रीति-रिवाजों से जो सदियों से हमारी संस्कृति में आ मिले हैं और खूब जम गये हैं। मुक्त करना चाहिए आपको हमारे देश की परम्पराओं और संस्कृति को अवश्य समझना चाहिए, क्योंकि तभी आप यह जान पायेंगे कि इनमें से क्या आपको ग्रहण करना है, क्या छोड़ना है, क्या जीवनदायी है और क्या जड़ भार है ? आप यदि अपने देश और संस्कृति के नहीं है तो आप विश्व के भी नहीं हो सकते। अपनी जड़ों के कारण ही एक पेड़ का अस्तित्व है, जड़ जमीन के अन्दर होती है। लेकिन पेड़ आकाश और सूर्य की ओर बढ़ता है। इसलिए चाहे हमारी जड़े भी अतीत में हैं, हमें अपनी दृष्टि और कदम भविष्य की ओर उठाने चाहिए। मेरे मन में हमारी प्राचीन सभ्यता के प्रति आस्था है।

जैसे-जैसे शिक्षा के अवसरों और बुनियादी चीजों की जानकारी में वृद्धि हुई, हमारे नवयुवकों की प्रतिभा भी अधिक विकसित हुई है। हमारे अणु और जीव शास्त्र के युवा वैज्ञानिक, अर्थशास्त्री और डॉक्टर इन्जीनियर और कलाकार अन्य देशों के वैज्ञानिकों आदि से कम नहीं है। बहुत से भारतीय दुनिया के बड़े-बड़े विश्वविद्यालयों में शिक्षण कार्य कर रहे हैं और यह देखकर आश्चर्य होता है कि उनमें से बहुत से नवयुवक हैं। हमारे स्वतन्त्रता की प्रेरक शक्तियों में से एक यह थी कि हमें विदेशी शासन और तकनीकी पिछड़ेपन से पैदा हुई हीन भावना को मिटाना है। पुरानी विवशता की भावना की तरह वह हीन भावना भी अब खत्म हो रही है।

हमारे सपनों का भारत वह है जहाँ गरीबी न हो, जहाँ राजनैतिक स्वतन्त्रता, आर्थिक समानता और सामाजिक न्याय का राज्य हो, ऐसे भारत का निर्माण करके हम जरूर शक्तिशाली हो जायेंगे, लेकिन इस निर्माण के लिए भी शक्ति की जरूरत है। हम अपने राष्ट्रीय और व्यक्तिगत जीवन का विकास चाहते हैं, लेकिन आजकल रक्षा और विकास एक-दूसरे के साथ जुड़े है।

अत: मैं आपको, आप लोग जो देश के निर्माता और पथप्रदर्शक हैं, आमन्त्रित करती हूँ कि आप इस चुनौती को स्वीकार करें। किसी घाटी की उठती हुई धुंध से उदास मत होओ। आप इस उत्तुंग हिमालय की छाया में रह रहे हैं, जिससे कवियों, दार्शनिकों, खिलाड़ियों और संन्यासियों को प्रेरणा मिली है। मेरी यह कामना है कि यह आपके हृदय में देशप्रेम, हमारे देश के वैभव, गुणों, पुरानी उपलब्धियों और भविष्य के लिए निहित शक्तियों के प्रति आदर का संचार करें। जब आप यह सब बात जानेंगे, तभी आप देश की सेवा कर पायेगें। जीवन और प्रकृति के प्रति संवेदनशीलता के विषय में गुरुदेव रवीन्द्र नाथ ठाकुर ने कहा है- "महान् मानव समाजे, मुनाफाखोरों द्वारा नहीं, बल्कि स्वप्न द्रष्टाओं द्वारा रचे जाते हैं।" मैं कामना करती हूँ कि आप साहसी, संकल्पशील और अध्यव्यवसायी बने ताकि आप अपने सपनों को साकार कर सकें।

न्यायमूर्ति श्री एच.आर. खन्ना

(सन् 1981)

गुरुकुलः एक देशोद्धारक संस्था

माननीय कुलाधिपति महोदय, आदरणीय कुलपति जी, प्राध्यापक वर्ग, भद्र आर्य पुरुषो, महिलाओं और प्यारे नवस्नातकों!

गुरुकुल कांगड़ी के दीक्षांत समारोह में मुझे भाग लेने का अवसर दिया गया है, उसके लिए मैं बहुत आभारी हूँ। गुरुकुल कांगड़ी देश को स्वामी श्रद्धानन्द जी की देन है। स्वामी श्रद्धानन्द जी जिनका पहला नाम मुंशीराम जी था, उन्होंने महर्षि दयानन्द जी की मृत्यु के बाद आर्य समाज का बीड़ा अपने हाथों में लिया। यह बीड़ा बहुत भारी बीड़ा था। महर्षि दयानन्द भारतवर्ष के उच्च कोटि के समाज सुधारक और धार्मिक नेता थे। महर्षि जी ने हमको एक नई रोशनी दी और हमारे अन्दर सत्य और ज्ञान की जो अनादि और अनन्त है, और जिसमें वेदों के पृष्ठ भरे हुये हैं, उनकी जागृति पैदा की। महर्षि जी ने भारतीय समाज के अन्दर जो त्रुटियाँ आ गयी थी, और जो घुन की तरह अन्दर से हमें खा रही थीं उनको खत्म करने के लिए भीष्म युद्ध चलाया। छुआ-छूत, बाल विवाह, विधवाओं के विवाह पर रोक और स्त्रियों की दशा सुधारना कुछ ऐसे विषय थे जिनकी ओर उन्होंने ध्यान दिया।

स्वामी श्रद्धानन्द जी का महर्षि दयानन्द जी के उपदेशों से प्रभावित होकर गुरुकुल कांगड़ी की स्थापना करना भी एक स्वाभाविक कदम था। महर्षि दयानन्द की तरह स्वामी श्रद्धानन्द जी बड़े निश्चयवान थे, धुन के पक्के थे। उन्होंने आर्य धर्म की विरोधी शक्तियों का मुकाबला करने के लिए आर्य जनता को एक नया बल दिया। स्वामी श्रद्धानन्द जी ने भारत को स्वतन्त्र कराने में पूरा भाग लिया। 1919 में जब अमृतसर में कांग्रेस अधिवेशन, जलियां वाला बाग के कांड के बाद हुआ, उसमें स्वामी स्वागत समिति के अध्यक्ष थे। स्वामी जी का और महात्मा गाँधी का एक दूसरे के निकट आना इन हालात में कुदरती था।

गुरुकुल कांगड़ी की स्थापना सन् 1900 में हुई। इसको स्थापित करने में स्वामी जी का उद्देश्य था कि वह एक ऐसी संस्था पैदा करें जहाँ विद्यार्थी शान्ति और पवित्र वातावरण में रहे और जहाँ पर वैदिक ज्ञान और सांस्कृतिक शिक्षा पर जोर हो और उसके साथ-साथ आधुनिक विज्ञान और दूसरे विषयों पर भी पूरा ध्यान दिया जाये ताकि उनके समन्वय से छात्रों का विविध कलापूर्ण व्यक्तित्व बने तथा वह भारत के चरित्रवान् और उत्तम नागरिक बन सकें। गुरुकुल और कॉलेज शिक्षा उस बड़ी शिक्षा को प्राप्त करने का साधन बन सकती हैं, उसकी जगह नहीं ले सकती। गुरुकुल की एक शिक्षा जो हमको अपने साथ सदैव रखनी चाहिए और जो हमेशा हमारे काम आयेगी, वह है कि हम अपने अन्दर मानसिक शक्ति और बल पैदा करें, हम साहसी हों, भीरू या डरपोक न बनें।

इसी उद्देश्य के लिए आर्य-अभिविनय में प्रार्थना-मंत्र है:-

तेजोऽसि तेजो मयि धेहि। वीर्यमसि वीर्य मयि धेहि।।
बलमसि बलं मयि धेहि। ओजोऽसिओजो मयि धेहि।।
मन्युरसि मन्यु मयि धेहि। सहोऽसि सहो मयि घेहि।।

मेरे नवयुवक मित्रों। हम एक बहुत महान् देश के, जिसका पुरातन बहुत उज्ज्वल रहा है, वासी हैं। हम सब को भारत का नागरिक होने में गर्व हासिल करना चाहिए। यह ठीक है कि हमारे अन्दर बहुत से ऐसे नेता लोग हैं जो उन आदर्शों से गिर गये हैं। मगर उनके कारण हमें अपने अन्दर से, अपने देश पर से अपनी संस्कति पर से अपनी परम्पराओं पर से और अपने उज्ज्वल भविष्य पर से विश्वास नहीं खो देना चाहिए। हमारे सामने तो आवश्यक कार्य यह है कि किस तरह भविष्य के लिए हमे अपने देश को सुदृढ़ बनाएं। आज आवश्यकता है कि आने वाले समय में देश खूब प्रगति करें। ताकि आज के नवयुवक जो भविष्य के असल मालिक और स्वामी हैं, उनको उज्ज्वल और सुखमय पावें।

आज जिन चीजों की देश को सबसे अधिक आवश्यकता है, वे हैं अनुशासन परिश्रम और नैतिक मूल्य। इन तीनों के बिना कोई देश प्रगति नहीं कर सकता है और न ही इनके बिना चरित्र निर्माण हो सकता है। सच पूछो तो यह देश की त्रिमूर्ति है।

एक और बात, ज़िसकी तरफ मैं आपका ध्यान दिलाना चाहता हूँ, वह है आदर्शवाद की महानता की आवश्यकता। आदर्शवाद राष्ट्रीय जीवन को ढालने में उतना ही योगदान देता है जितना कि दूसरे तत्व। इसके साथ-साथ आदर्शवाद आंतरिक शक्ति का सबसे बड़ा सरोबर है। देश के नवयुवक आदर्शवाद के असल रखवाले होते हैं। हमें देखना है कि वह सरोवर सूखने न पाये और वह रखवाले कमजोर न पड़ जायें।

मैं एक बार फिर उन स्नातकों को जिन्होंने आज उपाधियाँ प्राप्त की हैं, बधाई देता हूँ और प्रार्थना करता हूँ कि वह देश के सच्चे नागरिक बनें और अपने जीवन की हर दशा में सफलता पायें।

माननीय श्री बलराम जाखड़

(1982 ई॰)

स्वामी श्रद्धानन्द की तपस्थली : गुरुकुल

ओ३म् सह नाववतु सह नौ भुनक्तु। सहवीर्यं करवावहे।
तेजस्विनावधीतमस्तु। मा विद्विषावहै।।

परम माननीय कुलाधिपति महोदय, माननीय कुलपति जी। आदणीय अध्यापकगण प्रिय नव स्नातक गण।

गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय के 1982 के दीक्षांत समारोह पर आमन्त्रित कर आपने मुझे सम्मानित किया, आभार प्रकट करता हूँ। साथ ही भावभीनी श्रद्धांजलि अर्पित करता हूँ, स्वामी श्रद्धानन्द जी को, जिन्होंने युगदृष्टा महर्षि दयानन्द के वैदिक पद्धति समस्त सिद्धान्तों को मूर्त रूप देने के लिए, पहले गुजरांवाला में, बाद में गंगा पार रेती के कांगड़ी ग्राम के निकटस्थ अरण्य में इस संस्था का बीजारोपण किया था। महर्षि दयानन्द भारत को अविद्या, अकर्मण्यता और परतन्त्रता के राज्य तिमिर से निकालकर सत्य, पवित्रता और स्वतन्त्रता के पथ पर आरूढ़ करने का आजीवन प्रयत्न करते रहे। महर्षि शिक्षा को केवल व्यक्तिगत विकास नहीं मानते थे अपितु उनकी दृष्टि में शिक्षा का कार्य था समाज में ऐसे नर-नारियों का निर्माण करना जो अपने कर्तव्यों को उत्तरदायित्वों को भली-भांति निभा सकें।

सबकी उन्नति में अपनी उन्नति समझें, संसार का उपकार करें। बालकों की शिक्षा में सबसे महत्वपूर्ण उपाय माता-पिता और आचार्य द्वारा सही आदर्श प्रस्तुत करना है। बालकों का आचरण माता-पिता और आचार्य की कथनी की अपेक्षा उनकी "करनी" का अनुकरण होता है।

"मातृमान् पितृमान् आचार्यवान् पुरुषों वेद।"

श्रद्धानन्द के तप, त्याग और आदर्श जीवन ने गुरुकुल कांगड़ी को मूर्धन्य राष्ट्रीय शिक्षण संस्था बना दिया। उन्होंने समर्पित जीवन जिया। शास्त्राभ्यास के साथ बालकों के चरित्र, निर्माण, तप, अनुशासन पर बल दिया।

एतद्देश प्रसूतस्य सकाशाद् अग्रजन्मन;
स्वं स्वं चरित्रं शिक्षेरन् पृथित्यां सर्वमानवा:।

अज्ञान के भ्रान्ति के अंधेरे से निकलकर, ज्ञान की जगमगाती ज्योति की ओर बढ़ते हुये हम उन्नति करें। समावर्तन संस्कार के लिए उपस्थित ब्रह्मचारियों का अभिनन्दन करता हूँ। उपाधि प्राप्ति पर बधाई देता हूँ।

प्रिय स्नातकों।

स्वाभाविक है कि आप के हृदय में हर्षोल्लास भरा हो, भविष्य के सुहाने सपने संजोये हों। आप विद्यानिष्णात हैं, विवेकशील हैं, जानते हैं कि अंधेरे और ज्योति का, देव और असुर का संग्राम निरन्तर हमारे हृदय में चलता रहता है। हृदय ही में क्यों ? घर, समाज और विश्व भर में चल रहा है। गुरु और शिष्य,

पति और पत्नी, पूर्व और पश्चिम के बीच अनवरत् चल रहा है। इसलिए तो दीक्षांत भाषण के आरम्भ में आन्तरिक और बाह्य परिवेश में आध्यात्मिक, आधिभौतिक, आधिदैविक सुख-शान्ति के लिए द्वेष रहित परस्पर प्रेम और सहयोग के लिए, एक दूसरे की सुरक्षा, अभय, उत्पादन, बांटकर खाना, पुरुषार्थ, वीरता, नई चेतना और तेजस्विता के उद्‌बोधन की शुभकामना की गई। आचारण अंधेरे से ज्योति की ओर ले जाने वाला है-

"तमसो मा ज्योतिर्गमय।"

भारत ही विश्व का एकमात्र देश है, जहाँ जीवन की शतवर्षीय योजना बनी:- "जीवेम शरदः शतम्।"

और अब तक चली आ रही है। भारतीय उदात्त जीवन की व्यापक दृष्टिऔर दिव्यता का रहस्य है- ब्रह्मचर्य आश्रम, गृहस्थ आश्रम, वानप्रस्थ आश्रम और संन्यास आश्रम।

प्रिय स्नातकों! आप शंका मत कीजिए, आसुरी सम्पद् पर विजय पाने के लिए आप के हृदय में दैवी सम्पद् की शाश्वत धरोहर है। अपने आप और देश पर अपने धर्म और संस्कृति पर श्रद्धा रखें। श्रद्धा अन्धविश्वास नहीं श्रद्धा से ज्ञान, विज्ञान प्रेयस, श्रेयस और निःश्रेयस् उपलब्ध होते हैं संशय से महानाश। जैसी आपकी श्रद्धा है वैसा ही आपका स्वरूप। जैसी आपकी भावना है आप वैसा ही बन जाते हैं। धर्म पर विश्वास के साथ बुद्धि विशाल हो सके ताकि आप नये तथ्य ग्रहण कर सकें, ज्ञान-विज्ञान के नये क्षितिज खोजें, गहराइयाँ मापें। हृदय विशाल हो जो नई चेतना और आत्मीयता का माध्यम बन सके। आप अपने देश के कर्तव्यनिष्ठ नागरिक बनें। केवल अपनी उन्नति से ही सन्तुष्ट न रहें, वरन् सबकी उन्नति में अपनी उन्नति समझें।

यह दीक्षान्त नहीं है, नया आरम्भ है। आपके अभियान की सफलता की हार्दिक शुभकामनाएं!

महामहिम श्री ज्ञानी जैलसिंह

(सन् 1983)

नवस्नातक : देश के नव-निर्माण

गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय के दीक्षांत समारोह में शामिल होकर मुझे हार्दिक प्रसन्नता हुई है। इस अवसर पर आपने जो मुझे सम्मान दिया है और जो प्यार भरे शब्द कहे हैं, उनके लिए मैं आपका आभारी हूँ।

शिक्षा संस्थान पवित्र स्थान होते हैं, और यह स्थान तो और भी अधिक पवित्र और ऐतिहासिक हैं क्योंकि इसका पौधा हमारे स्वतन्त्रता सेनानी और पूज्य स्वामी श्रद्धानन्द जी महाराज द्वारा लगाया गया था। हमारे लिए यह गौरव की बात है कि यह विश्वविद्यालय हमारे प्राचीन ऋषियों-मुनियों की गुरुकुल परम्परा पर आज से 81 वर्ष पहले स्थापित किया गया था। जिसका उद्देश्य वैदिक शिक्षा के अलावा अन्य सभी विषयों की शिक्षा, भारतीय भाषाओं, खासतौर से हिन्दी के माध्यम से देना है। मुझे यह जानकर खुशी हुई कि इस विश्वविद्यालय के आचार्यों ने फिजिक्स, कैमिस्ट्री, बॉटनी, इकोनोमिक्स, मनोविज्ञान और राजनीतिशास्त्र जैसे विषयों में हिन्दी पुस्तकें तैयार की और हिन्दी को उच्च शिक्षा का माध्यम बनाया।

गुरुकुल शिक्षा प्राणांली में अध्यापकों और शिष्यों का बड़ा नजदीकी सम्बन्ध होता है। प्रणाली में चरित्र-निर्माण सदाचार त्याग और सादगी पर अधिक बल दिया जाता है। प्राचीन गुरुकुल प्रणाली में यह परम्परा भी थी कि शिष्य अपनी शिक्षा समाप्त करने के बाद, जब वहाँ से विदा होता था तो आचार्य उन्हें अपने जीवन में कुछ आदर्शों का पालन करने की शिक्षा देते थे, जिनमें उपनिषद् का यह अमर वाक्य होता था।

सत्यम् वद्। धर्मम् चर।

अर्थात्-सत्य बोलना चाहिए और धर्म का पालन करना चाहिए। हमारे आज के नौजवानों को भी इस संदेश की बहुत आवश्यकता है। गाँधी जी ने भी सत्य और अहिंसा के जरिए ही देश को संगठित होने और विदेशी शासन से मुक्त होने की प्रेरणा दी थी। जिन महापुरुष स्वामी श्रद्धानन्द जी के अथक प्रयत्नों से इस विश्वविद्यालय की नींव रखी गई थी, वे बहुत बड़े साहसी और देशभक्त थे। उन्होंने आर्य समाज का प्रचार करते हुए भी, राष्ट्रीय एकता और आजादी के लिए अपना सब कुछ न्यौच्छावर कर दिया था। इनसे पहले आर्य सामज के संस्थापक स्वामी दयानन्द सरस्वती जी ऐसे पहले व्यक्ति थे, जिन्होंने स्वराज्य का नारा बुलन्द किया था और निडर होकर घोषणा की थी कि विदेशी सरकार कितनी भी अच्छी क्यों न हो, उससे स्वदेशी सरकार सदा ही बेहतर है। इसी से देश के अनेक नेताओं को प्रेरणा मिली और आर्य समाज के अनेक नेताओं ने देश की आजादी के लिये कुर्बानियाँ दी।

शिक्षा का उद्देश्य व्यक्ति का शारीरिक, मानसिक और आध्यात्मिक विकास करना है जिससे कि वह समाज का एक उपयोगी अंग बन सके। मुझे यह जानकर प्रसन्नता हुई कि इस विश्वविद्यालय में पढ़ाई के साथ-साथ सदाचार और चरित्र-निर्माण पर भी विशेष बल दिया जाता है। आज के इन नौजवानों के हाथों मे ही कल के भारत की बागडोर होगी।

यह बड़ी खुशी की बात है कि इस विश्वविद्यालय के छात्र खेल-कूद के क्षेत्र में भी बढ़-चढ़कर हिस्सा ले रहे हैं। मूझे यह भी बतलाया गया है कि यहाँ विदेशी खेलों के साथ-साथ अपने दशे में प्रचलित क़बड्डी, खो-खो, गुल्ली डंडा जैसे भारतीय खेल को भी पूरी तरह बढ़ावा दिया जा रहा है और यहाँ की क़बड्डी की टीम एक बेहतरीन टीम मानी जाती है। हमें चाहिए कि इन परम्परागत भारतीय खेलों को भी समुचित प्रोत्साहन किया जाए पिछले दिनों दिल्ली में नव एशियायी खेलों का आयोजन किया गया था। जिसमें हमारे देश के मुख्तलिफ हिस्सों के नौजवान खिलाड़ियों ने खेल का सराहनीय प्रदर्शन किया था। इससे देश का नाम तो ऊंचा हुआ ही है देश में खेलों के प्रति रूचि भी बढ़ी है। खेल भावना बच्चों और नौजवानों में पैदा की जानी बहुत जरूरी है। जीवन के हर क्षेत्र में यह भावना मौजूद रहनी चाहिए।

इस विश्वविद्यालय ने दूसरा महत्वपूर्ण काम यह किया है कि इससे कांगड़ी ग्राम के विकास की योजना को हाथ में लिया है। मुझे यह जान कर खुशी हुई कि इस गाँव में राष्ट्रीय सेवा योजना का एक कैंप लगाया गया था। गाँव की सड़कों को पक्की करने के लिए कई संस्थाओं ने माली इमदाद दी और भारत सरकार ने भी इनमें योगदान दिया था। मूझे उम्मीद है कि इस विश्वविद्यालय द्वारा उठाए गए इस महत्वूपर्ण कार्य में दूसरी समाज-सेवी संस्थाएं भी और अधिक योगदान देंगी, जिससे कि गाँव के निर्धन, पद-दलित, पिछड़े और कमजोर वर्ग के लोगों को और अधिक सहूलियतें मुहैया कराई जा सके और उनके रहन--सहन के स्तर को ऊँचा उठाया जा सकें।

मुझे आशा है कि गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय अपनी गुरुकुल की प्राचीन शिक्षा के साथ-साथ, शिक्षा-जगत् में हुई नई उपलब्धियों का भी लाभ उठाते हुए उन्नति के पथ पर आगे बढ़ता जाएगा और देश के नव-निर्माण में अपना महत्वपूर्ण योगदान देगा।

इन शब्दों के साथ मैं फिर एक बार चांसलर महोदय और यहाँ के कुलपति को धन्यवाद देता हूँ जिन्होंने मुझे इस गौरवपूर्ण समारोह में शमिल होने का निमन्त्रण दिया मैं आज यहाँ उपाधियां प्राप्त करने वाले नौजवानों को भी बधाई देता हूँ और कामना करता हूँ कि वे अपने असली जीवन में उन पवित्र आदर्शों को अपनाते रहेंगे, जिनकी शिक्षा-दीक्षा इस विश्वविद्यालय में उन्होंने ली है। जयहिन्द।

डॉ॰ सत्यप्रकाश जी सरस्वती

(सन् -1984)

वैदिक शिक्षा, सच्ची शिक्षा

नवदीक्षित सौम्य युवास्नातक वृंद!

आपके गुरुकुल विश्वविद्यालय के कुलाधिपति एवं अधिकारियों ने मुझे दीक्षांत भाषण देने के लिए स्नेहपूर्वक आमन्त्रित किया है, इसके लिए मैं आभारी हूँ। मैं भी एक विश्वविद्यालय का अन्तेवासी रहा और इसी में 1925, 1927 और 1932 में मैंने तीन उपाधियां पाई और तीन दीक्षांत भाषण सुने। मैं भारत का पराधीनता के युग का स्नातक हूँ। मेरे समय में देश में इतने विश्वविद्यालय नहीं थे जितने आज हैं मेरा विश्वविद्यालय 1888 के लगभग (1857 की क्रांति के 31 वर्ष बाद) स्थापित हुआ था। 1858 में पहली श्रृंखला के तीन विश्वविद्यालय स्थापित हुए-कलकत्ता, बम्बई और मद्रास के। लगभग 30 वर्ष बाद दो ओर बने प्रयाग और लाहौर के आज विश्वविद्यालय स्तरीय उपाधि देने वाली संस्था 100 के ऊपर है। आपका विद्यालय दो अन्तेवासियों और एक आचार्य से प्रारम्भ हुआ हरिश्चन्द्र, इन्द्र और मुंशीराम।

महर्षि दयानन्द की मृत्यु के दो वर्ष बाद 1885 में आर्य जगत् ने महर्षि की स्मृति में दयानन्द स्कूलों की श्रृंखला प्रारम्भ की जिसकी शती धूमधाम से मनाने की तैयारियों प्रारम्भ हो गई हैं। हंसराज और मुंशीराम ये दो व्यक्ति शिक्षा के क्षेत्र में देश के इतिहास में चिरस्मरणीय रहेंगे। 1947 की स्वतन्त्रता के बाद आज हमारे सभी विद्यालय और विश्वविद्यालय राष्ट्रीय और राष्ट्र के गौरव है। विद्यालयों के दो ही उद्देश्य है-पूवार्जित ज्ञान का संरक्षण, और नवीन ज्ञान का अर्जन। इसे ही वैदिक परिभाषा में क्रमशः क्षेम और योग कहेंगे। गुरुकुलों से भी हमें यही आशा है और नवीन पद्धति के विश्वविद्यालयों से भी। गुरुकुल के नवीन स्नातकों से भी मैं यह कहूँगा। आपके ऊपर ऋषि ऋण है। आपका पढ़ा हुआ और आपके आचार्यों को पढ़ाया गया तभी तेजस्वी होगा जब हम यह कह सकेंगे कि आपने अपने अध्ययन के फलस्वरूप ज्ञान भंडार को, और पुराने वाङ्मय की पूर्व विचारधारा को, कला को, शिल्प को, कौशल को, जनजीवन के प्रवाह को भी कुछ नया दिया है। पूर्व-ऋषियों के प्रति समादर की भावना रखना, और नूतन ऋषियों की बातों को निष्ठापूर्वक सुनना और मानना इस प्रकार की भावना जिस समाज में जागृत रहती है वह समाज उन्नति की ओर अग्रसर रहता है, अन्यथा समाज में रूढ़िवादिता व्याप्त होने लगती है। आप सब स्नातक नूतन-ऋषि हैं, और इसलिए मेरे जैसे वयोवृद्ध व्यक्ति द्वारा आप नवस्नातकों का स्वागत, अभिनन्दन और विनम्र अभिवादन।

आज जो स्नातक शिक्षित होने के अन्तर दीक्षित हो रहे है, उनसे मैं यही कहूँगा, कि जो कुछ आपने गुरुओं के समीप रहकर सीखा है, उसको समाज में जीवित रखें, और मुझे आशा है कि आप में कुछ स्नातक उस शास्त्रीय ज्ञान को प्रशस्त करने में उद्यत रहेंगे।

मैं आज के स्नातकों से कहूँगा कि इस पुण्य स्थली में यज्ञ द्वारा तुम सबने विद्या प्राप्त की है आप अपना आगे का जीवन भी यज्ञ द्वारा निर्मित करें। आपका समस्त जीवन यज्ञमय हो। देवहित आपकी आयु अर्पित हो, आपके यज्ञ भी यज्ञ पर आधारित हों- आयुर्यज्ञेन कल्पताम्, यज्ञो यज्ञेनकल्पताम्। आप याज्ञिक

बनें। मैं आज के स्नताकों से आग्रहपूर्वक संकेत करूँगा कि आपकी शिक्षा-दीक्षा आर्य जगत् के सबसे सर्वश्रेष्ठ शिक्षा संस्थान में हुई, इसके लिए आपको बधाई है। आप के कुलपति और कुलाधिपतिं और अधिकारियो से भी कहूँगा, कि आप अपने अंतेवासियों को दयानन्द के सपनों को पूरा करने की प्रेरणा दें इन्हें राष्ट्रवादी बनायें। ये राष्ट्रीय संस्थानों में यशस्वी स्थान प्राप्त करें।

आपके गुरुकुल के स्नातकों से हमें पूरी आशा है। हम कभी-कभी आपको ही लक्ष्य करके आवेश में खुशियों के साथ गाया करते थे कि गुरुकुल का ब्रह्मचारी अरब देश में वेद-घोष ले जावेगा, भारत से दूर वेद का प्रचार करेगा। इस सबका अर्थ था कि राष्ट्र या देश की, जाति-पाति की, सम्प्रदायों की सीमायें लांघकर के मानवता को हमारा स्नातक प्रश्रय देगा, सभी देशों के अंधविश्वासों और अज्ञानों को दूर करेगा। हम 22.24 वर्ष के बसु ब्रह्मचारी से बहुत आशा नहीं करते। आप अब स्नातक जीवन में प्रवेश करने जा रहे हैं। आप वैवाहिक गृहस्थ जीवन में रुद्र और आदित्य ब्रह्मचारी बनने की चेष्टा करें। ज्ञान के विस्तारक का नाम ब्रह्मचारी है। ब्रह्म और वेद शब्द समानार्थ है। तत्वदर्शन के प्रति कोई उपेक्षा की भावना नहीं रख सकता। वेद का अध्ययन इस दिशा में भी आपका मार्ग प्रशस्त करेगा। आप अपनी ज्ञान पिपासा को बढ़ाते जायें। आप का गृहस्थ धर्म इस जीवन में बाधा नहीं डालेगा ऋषियों की भी पत्नियां थी, ऋषि स्वयं भी ऋषि थे और उनमें से कतिपय की सन्तानें भी ऋषि भी। कुछ पत्नी भी थी, और ऋषिकाएं भी थी। इस अर्थ में मैं कह रहा हूँ कि गृहस्थ जीवन में प्रविष्ट होकर भी आप ऋषित्व प्राप्त कर सकते हैं। आज आप वसु है, मेरी आकांक्षा है कि आप का ब्रह्मचर्य, आपका वेद प्रेम भी बढ़े, जीवन भर आपका वेदाध्ययन बना रहे, गृहस्थ रहकर भी आप रूद्र ब्रह्मचारी बनें तथा आपका पढ़ा लिखा तेजोवान् बने। अभी भी आपने ज्ञान का "अ,इ,उ,ण" सीखा है। श, ष, स, र हल के पहुँचते-पहुँचते कई जीवन लगेंगे।

आप सम्भवतया समझते हों, कि गुरुकुल या आचार्य कुल की परम्परा आपकी ही संस्था में है। उपनिषदों में गुरु-शिष्य परम्परा की कतिपय नामावलियां हैं। सुकरात, प्लेटो और अरस्तु की परम्परा प्रसिद्ध है। पहले गुरु के गौरव से शिष्य गौरवान्वित होता हैं और बाद में शिष्य के गौरव से गुरु भी अपने को यशस्वी समझता है। विगत 80 वर्षों में आप के गुरुकुल ने शिक्षा और आर्य समाज के प्रचार-प्रसार के सम्बन्ध में अच्छी सेवा की थी, आपके अनेक स्नातको के विद्यानुरागों से हम सभी परिचित हैं।

गुरुकुल में ऐसे स्नातक तैयार करें जो वैदिक वाङ्मय के ऊंचे विद्वान् हों। अष्टाध्यायी निरुक्त महाभाष्य के विद्वान् हों, इन्हें आप भाषा शास्त्र के विद्वान् बनायें। इस क्षेत्र में काम करने के लिए आप को तपस्या करनी पड़ेगी एकाध आचार्य और दो-चार शिष्य लैटिन, ग्रीक और प्राचीन भाषाओं के विशेषज्ञ बनें, और भारत के प्राचीन इतिहास के मर्मज्ञ हों। चीन की पुरानी संस्कृति का ये अध्ययन करें और धीरे-धीरे इस क्षेत्र को विकसित करें। आपका संग्रहालय और पुस्तकालय इन सीमित क्षेत्रों में सम्पन्न हो। आर्य समाज के प्रति भी आपके गुरुकुल का एक कर्तव्य है, मैं आप से पुरोहित तैयार करने के लिए नहीं कहता। निष्ठावान्, तपस्वी, उच्च स्तरीय मिशनरी आप को तैयार करने होंगे। देश के अनेक प्रांचलों में आपके स्नातक काम करने का अवसर प्राप्त करें। आर्य सामज की संस्थायें इनका भरण-पोषण कर निकटवर्ती एवं दूरस्थ देशों में इन्हें भेंजे। ये सेवा व्रती अपने कार्य के योग्य आपके माध्यम से शिक्षा-दीक्षा प्राप्त करें, और कार्यरत हो तो आर्य जगत् को भी गुरुकुल पर भरोसा होगा।

नवस्नातकों को बहुत-बहुत आशीर्वाद और शतशः बधाइयाँ। आप और आपके गुरुकुल के गौरव में देश का गौरव है। मेरी समस्त शिक्षा प्रयोग विश्वविद्यालय में हुई। मैंने वहीं कार्य किया। उनकी एक-एक ईंट पर मुझे गर्व है और प्यार है। पर जब आज उसकी धरती पर चलता हूँ तो आंखों को नीचे किये हुये, सशंकित-सा, जहाँ वर्षों से दीक्षान्त समारोह न हो पाया।

आर्यरत्न पण्डित सत्यदेव भारद्वाज वेदालंकार

(सन् 1985)

कुलमाता की सेवा : सच्चा धर्म

"सत्यं शिवं सुन्दरम्"- "सत्यं परं धीमहि"

सौम्य स्वभाव नवदीक्षित स्नातकों! मेरा स्नेह और सत्कार तुम्हें स्वीकृत हो।

विश्वविद्यालय गुरुकुल कांगड़ी के अधिकारीगण ने इस वर्ष दीक्षान्त भाषण देने के लिए निमन्त्रित कर मुझे आदृत किया है, इसके लिए मैं सबका आभारी हूँ। मुझे अपने गुरुकुलों से विशेष स्नेह है, जो स्वाभाविक है, क्योंकि मैं भी आपकी तरह से ही, गुरुकुलों में ब्रह्मचारी रहते हुये, इसी कुलभूमि से स्नातक रूप में दीक्षित हुआ था। मेरे मन बुद्धि और आचार-विचार पर गुरुकुल शिक्षा का अमिट प्रभाव रहा है उसके द्वारा संसार की सब तरह की भिन्न-भिन्न विपदाओं, संकटों और आधि-व्याधियों में से गुजरते हुये, प्रभु में अगाध विश्वास रखते हुये, किसी भी रूप में सदा कर्मयोगी, निश्रेयस मार्ग का दर्शन करता हूँ। जीवन यात्रा में समय-समय पर गुरुकुल बंधुओं से मिलते हुये सदा ऐसा अनुभव हुआ है जैसे अपने जैसे गुरु भाइयों से मिलने का सौभाग्य प्राप्त हुआ हो। इस मिलन में कितना स्नेह, श्रद्धा, सरलता और पारस्परिकता विश्वास प्राप्त होता है, इसके बारे में तो यही कहूँगा-

"स्वयं तदंत: करणेन गृह्यते।"

अपने इस कुल की माता का स्वरूप कुलपिता श्रद्धेय स्वामी श्रदानन्द के व्यक्तित्व से अनुप्राणित था। वैदिक ज्ञान की विशुद्ध धारा, गुरु-शिष्य परम्परा द्वारा, शिक्षा-दीक्षा की सरस्वती के प्रवाह रूप में अक्षुण्ण रूप से प्रवाहित हुई थी। परन्तु बीच में आ गयी, बहुत सी चट्टानों से टकरा गयी और भिन्न-भिन्न धाराओं में बहने लगी, मुख्य धारा कुछ विलुप्त सी प्रतीत होती है, जब से भारत विप्लव या विभाजन की अवस्थाओं में से गुजर रहा था भविष्य में इस सबका निर्णय करना है। इसी से यह कहने का साहस करता हूँ कि महर्षि दयानन्द की वैदिक शिक्षा श्रद्धा फिर से किस रूप में उभरेगी, यह अब भविष्य का विषय हो गया है। वर्तमान तो धूल घूसरित सा धूमिल है।

"वसुधैव कुटुम्बकम्" इस दिशा को दिखाने वाला महान् नेता दयानन्द है, जिसने हमें अपने भूत, वर्तमान और भविष्य के लिए उद्‌बोधित किया है। हम ओरों की दृष्टि में बहुत पिछड़ गये प्रतीत हांते हैं। इसी से जागरूक होने की हमारी आवश्यकता है। हमारी वाणी में, हमारे आर्य नेता जागरूक नहीं, इसी सं कहता हूँ- "वयं राष्ट्रे जागृयाम पुरोहित।:" "अस्माकं वीरा उत्तरे भवन्तु" "कृतं में दक्षिणे हस्ते जयां में सव्य आहित:" इत्यादि, इत्यादि।

हमने शिक्षा के क्षेत्र में उन्नति के मार्ग पर चलना है। हमें भारत सरकार से मान्यता प्राप्त हांने सं दूसरे देशों में भी मान्यता प्राप्त हो रही है। इसमें अधिकारी वर्ग धन्यवाद के पात्र हैं। हमारा उद्देश्य महान् होना चाहिए। हमारा विद्यालय "सार्वभौमिक आर्य विश्वविद्यालय गुरुकुल कांगड़ी" के रूप में पनपे। प्रिय

स्नेहपूर्ण स्नाताकों! अन्त में "सत्यंवद", "धर्म चर" के ऋषियों के सनातन शिक्षा-आदेश या दीक्षा की तरफ ध्यान दिलाते हुये यह कहकर समाप्त करता हूँ कि "सत्य स्वरूप परमात्मा के विषय में प्रवचन करना और चिन्तन करना, सत्य के दर्शन से धर्म के स्वरूप को समझते हुये उससे कभी निरपेक्ष न होना, परन्तु सदा उस पर आचरण करते रहना" यहीं "सत्यं शिवं सुन्दरम्" का प्रशस्त मार्ग है। यह तुम्हें सदा प्राप्त होता रहे। अपने प्रेम, सद्भावना, सहृदयता तथा शिक्षा-संस्थान (गुरुकुल) की उन्नति में सदा अग्रसर रहने में सहायक होना- यह कहते हुये तुम्हारा बहुत सस्नेह अभिनन्दन करता हूँ। गुरुकुल विश्वविद्यालय के सब अधिकारी वर्ग तथा गुरुजनों के समाने नतमस्तक होकर अपनी श्रद्धा के सुमन उपस्थित करता हूँ। स्वामी श्रद्धानन्द जी की आत्म-ज्योति आप को सदा प्रकाश देती रहे। प्रभु का सब पर सदा वरदहस्त बना रहे।

हिमालय की सुपुत्री पार्वती कहूँ या गंगामाता से कुलमाता को याद करूँ-कुछ भी हो अपनी भावभीनी श्रद्धाजंलि समर्पित करते हुये कहना चाहूँगा।

जन्म यही मृत्यु यहीं खेलूं यही आ-आकर।
हंसना रोना हो यहीं माता तेरे चरणों में।।

समाप्त करने से पूर्व "कुलमाता की पताका" पर ध्यान दिलाता हूँ। यह सूर्य ज्योति से उज्ज्वलित है। यही "ओ३म्" की सच्ची ध्वजा है- "सूर्यमगन्म ज्योतिरुत्तमम।" इसका सन्देश भी समाने रखो। इसमें श्रद्धा प्राप्त करो, सविता या सूर्यदेव के गुरुमंत्र का भी मनन करो। इसे हम वेदमाता से पुकारते है। यही हमारी "वन्देमातरम्" है।

"श्रद्धया सत्यमाप्यते।"
"सत्यमेव जयते नानृतम्।"

डॉ० सत्यव्रत सिद्धान्तालंकार

(सन् 1986)

गुरुकुल : स्वामी श्रद्धानन्द का सिद्ध स्वप्न

श्री कुलाधिपति जी, श्री कुलपति जी, अध्यापक वृंद, उपस्थित महानुभावों, देवियों तथा नवदीक्षित युवा स्नातकवृन्द!

आप सभी की तथा समस्त मानव जाति के समस्त सुख और समृद्धि की कामना करते हुये मैं गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय के कुलाधिपति, कुलपति एवं अधिकारियों के प्रति आभार प्रकट करता हूँ कि आप ने मुझे दीक्षान्त भाषण देने के लिए आमन्त्रित किया। मेरा सम्बन्ध इस विश्वविद्यालय से अत्यन्त लम्बा तथा पुराना है। मैं यहाँ विद्यार्थी के रूप में सात वर्ष की आयु में आया था, मैंने यहाँ 14 वर्ष अध्ययन किया। दो बार मैं इसका कुलपति, तथा पिछले 6 वर्षों से इसका परिदृष्टा रहा हूँ। इसलिए मुझे गुरुकुल से विशेष प्रेम है, मेरी आधे से अधिक आयु गुरुकुल से सम्बन्धित रही है। मुझे यहाँ की एक-एक ईंट प्रिय है। मेरे मन, बुद्धि और आचार-विचार पर गुरुकुल शिक्षा का अमिट प्रभाव रहा है।

वैदिक धर्म हमारी सभ्यता संस्कृति, दर्शन आचार, मर्यादाओं आदि का आधार है जिसके बिना हम खड़े नहीं रह सकते। यहाँ हमें विश्वबन्धुत्व का सन्देश मिलता है। आप बड़े सौभाग्यशाली है कि आप की शिक्षा-दीक्षा इस सुरम्य संस्था में हुई है। गुरुकुल शिक्षा-प्रणाली की स्थापना वैदिक आदर्शों को आधार बनाकर हुई है। गुरुकुल शिक्षा-प्रणाली भी अन्य शिक्षा-प्रणलियों की तरह अपने ढंग की एक विशेष शिक्षा प्रणाली है। जिस प्रकार मौन्टेसरी शिक्षा-प्रणाली वर्धा योजना या प्रोजेक्ट सिस्टम नाम से विविध शिक्षा प्रणालियाँ है उसी प्रकार स्वामी श्रद्धानन्द ने ऋषि दयानन्द से प्रेरणा लेकर इस प्रणाली की स्थापना की थी। गुरुकुल शिक्षा-प्रणाली की सर्वाधिक महत्वपूर्ण विशेषताएं है- गुरु शिष्य का दिन-रात घनिष्ट संबंध ब्रह्मचर्य तथा चरित्र निर्माण। गुरुकुल शिक्षा प्रणाली ही ऐसी प्रणाली है जिसके विषय में कहा जा सकता है कि इस शिक्षाप्रणाली का मुख्य उद्देश्य पुस्तक शिक्षा के साथ-साथ चरित्र-निर्माण करना है।

मेरे सामने भविष्य के गुरुकुल का यह सपना है कि गुरुकुल से ऐसे स्नातक निकले जिनका तपस्यामय जीवन हो, जो हिन्दी में पंडित महावीर प्रसाद द्विवेदी की तरह शुद्ध हिन्दी लिख-बोल सकें, जो संस्कृत में उब्बट तथा ऋषि दयानन्द जैसा उच्चतम संस्कृत का ज्ञान रखते हों जो अंग्रेजी में शेक्सपीयर तथा मैकाले की कोटि के हो, जो विज्ञान में श्री सतीश धवन तथा प्रो० यशपाल सरीखे वैज्ञानिक हो, जो हर क्षेत्र में उच्च से उच्चतर शिखर को छू सकें। उड़ान लीजिए तो ऊंची उड़ान लीजिए। सब कुछ संभव है। जो आज असंभव तथा कठिन प्रतीत होता है वह प्रयत्न करने पर कालान्तर में सम्भव तथा सुगम हो जाता है।

मेरा अनुरोध है कि आज के बदलते युग में आप गुरुकुल के रूप को ऐसा बदलिए कि यहाँ के आदर्शों, यहाँ की भावनाओं, यहाँ के रंग में रंगे हुए छात्र आपके विश्वविद्यालय विभाग में प्रविष्ट हो, आपको बाहर के छात्र लेने की आवश्यकता न हो, और वे ही छात्र स्नातक बनकर समाज में प्रविष्ट हो, जो हिन्दी-संस्कृत के पंड़ित हो, अंग्रेजी के उच्चकोटि के विद्वान् हो, और इस योग्यता के साथ-साथ वे किसी जिले में मजिस्ट्रेट बने, किसी जगह इंस्पेक्टर जनरल ऑफ पुलिस हो, किसी जगह कर्नल हो,

कमांडर हों और किसी जगह सरकारी उच्च पदों पर आसीन हो। देश की माँग है और आवश्यकता है कि ऐसी शिक्षा में दीक्षित व्यक्ति ही देश के कोने-कोने में व्याप्त हो जाएं। जैसे किसी युग में विदेशी सरकार से विद्रोह करने वाले स्वतन्त्रता-सेनानियों की आवश्यकता थी जिसे गुरुकुल ने पूरा किया, वैसे ही आज देश को जैसे सरकारी-सेनानियों की आवश्यकता है जो देश में व्याप्त भ्रष्टाचार, ईर्ष्याद्वेष, कलह, भेद-भाव को अपने आदर्श क्रियात्मक-जीवन से दूर कर सकें, जिसे गुरुकुल जैसी प्रधान आदर्शों से ओत-प्रोत संस्था ही पूरा कर सकती है। परन्तु इस स्थिति में पहुँचने के लिए हमें अपने-आपकों बदलना होगा। खड़ा पानी सड़ जाता है, बहता पानी तरोताज़ा रहता है और गन्दगी को दूर कर देता है।

इस बदलाहट के विषय में किसी ने ठीक ही कहा है:-

तू भी बदल ए गाफिल जमाना बदल गया।

माननीय श्री वीरबहादुर सिंह (मुख्यमंत्री उत्तर प्रदेश)

(सन्-1987)

सत्यधर्म का आचरण ही शिक्षा का सार है

महामहिम कुलाधिपति महोदय, कुलपति जी, सभासद् महानुभाव, अध्यापक गण, उपस्थित आर्यबन्धु, देवियों एवं नव-स्नातकगण।

गुरुकुल कागड़ी विश्वविद्यालय के दीक्षांत समारोह में मुझे भाग लेने का जो अवसर मिला है उसके लिए मैं विश्वविद्यालय के अधिकारियों का आभारी हूँ। गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय की स्थापना स्वामी श्रद्धानन्द जी महाराज ने महर्षि दयानन्द सरस्वती द्वारा प्रतिपादित शिक्षा नीति के आधार पर वर्ष 1902 में की थी। धर्म एवं देश की रक्षा तथा समाज सुधार के लिए स्वामी जी ने अपना संपूर्ण जीवन समाज को समर्पित कर दिया था। गुरुकुल खोलने में उनका उद्देश्य एक ऐसी संस्था की स्थापना करना था। जहाँ विद्यार्थियों को चरित्र-निर्माण हो, शांति एवं पवित्र वातावरण में वे शिक्षा ग्रहण कर सकें, प्राच्य एवं आधुनिक ज्ञान-विज्ञान के विषयों को अध्ययन करें तथा भारतीय संस्कृति के पोषक बनकर समाज कल्याण पर चिन्तन करें। गुरु शिष्य परम्परा के छात्रगण आश्रम में रहकर गुरु के गुणों को ग्रहण कर चरित्रवान् एवं उत्तम नागरिक बनें। ऐसे आध्यात्मिक मनीषी एवं स्वतन्त्रता-संग्राम के अमर सेनानी स्वामी श्रद्धानन्द महाराज की पावनस्थली में आकर मैं अपने आपको गौरवान्वित अनुभव करता हूँ। यह वही भूमि है जहाँ राष्ट्रपिता महात्मा गाँधी, पंडित जवाहरलाल नेहरू, पंडित मदनमोहन मालवीय, श्रीमती इन्दिरा गाँधी जैसे भारतरत्न पधार चुके हैं।

दीक्षांत समारोह हमारी संस्कृति में एक महत्वपूर्ण एवं पवित्र संस्कार माना जाता था। जब शिष्य अपनी शिक्षा समाप्त करके अपने आचार्य से आशीर्वाद प्राप्त करें, गृहस्थ आश्रम में प्रवेश करता था। गुरुकुल का ज्ञान और आचरण समाज को प्रेरणा देता था और समाज कृतज्ञतापूर्वक गुरुकुल को सम्मान और समर्थन देता था। तैत्तिरीय उपनिषद् में इस संस्कार का सजीव एवं विस्तृत चित्रण किया गया है, जब आचार्य शिष्य को गुरुकुल से विदा लेते समय व्यावहारिक उपदेश देता है।

सत्यं वद/धर्मम् चर/ स्वाध्यायान् मा प्रमद:।

वस्तुत: यही शिक्षा का सार है। आचार्य शिष्य से अपने उपदेशों को अन्धानुसरण करने के लिए कहता, अपितु यह कहता है कि जो हमारे सत् आचरण हों उन्हीं का पालन करना, असत् का नहीं। इसके अतिरिक्त आचार्य यह भी कहता था कि आश्रम शिक्षा तो समाप्त हो गई किन्तु इसका यह अर्थ नहीं कि ज्ञानार्जन की प्रक्रिया समाप्त हो गई। मुझे यह जानकर प्रसन्नता है कि इस विश्वविद्यालय में अध्ययन के साथ-साथ सदाचार और चरित्र-निर्माण पर भी विशेष बल दिया जाता है। आज देश में सांप्रदायिक शक्तियाँ फिर से सिर उठा रही है जिनका हमें डटकर मुकाबला करना है। हमारे पूर्वजों के बलिदान से राष्ट्र को स्वतन्त्रता प्राप्त हुई है और इसकी रक्षा करना हमारा पुनीत दायित्व है। शिक्षा-संस्थाओं की ऐसे समाज में प्रमुख भूमिका रही है और मुझे विश्वास है कि आगे भी वे अपने कर्त्तव्यों व दायित्वों का सफ़ल निर्वाह करती रहेंगी।

मुझे इस बात की बड़ी प्रसन्नता है कि इस विश्वविद्यालय में जहाँ प्राच्य भाषा संकाय है, वहाँ कला एवं विज्ञान संकाय भी है। स्नातकोत्तर डिप्लोमा के रूप में बायोकेमिस्ट्री तथा कम्प्यूटर पाठ्यक्रम संचारित हो जाने से यह विश्वविद्यालय विज्ञान मे क्षेत्र के भी सराहनीय योगदान दे रहा है। आज जो नवयुवक दीक्षा समाप्त करके जीवन-संग्राम में प्रवेश कर रहे है। उन पर ही निर्भर करता है कि वे समाज में अनावश्यक, हानिकारक तथा अनुपयोगी व्यवस्थाओं को पहचान कर उनके स्थान पर आवश्यक, लाभकर, तथा उपयोगी व्यवस्थाओं की स्थापना में अपना महत्वपूर्ण योगदान करें। आप सबसे मेरा और समाज की अपेक्षा है कि आप लोग अपने अपने जीवन में अपने को योग्य सिद्ध करें तथा अपने व्यक्तिगत दायित्वों के साथ-साथ अपने सामाजिक कर्तव्यों को भी पूरा करें, तथा आप लोग अपने को गुरुजनों द्वारा दी गई शिक्षा, स्नेह, प्रेम और विश्वास के योग्य पात्र सिद्ध करेंगे।

अन्त में मैं पुनः कहना चाहूँगा कि विद्यार्थी दीक्षांत समारोह की अपनी शिक्षा-दीक्षा का अन्त न समझें और निरन्तर ज्ञानार्जन करते हुए, समाज के हित में उनका प्रयोग करें। शिक्षा जीवन की एक सतत् प्रक्रिया है। जीवन के हर मोड़ पर उन्हें नित्य एक न एक परीक्षा से गुजरना पड़ेगा। "तमसो माँ ज्योतिर्गमय" का मूलमन्त्र कभी भी विस्मृत न होने पाए। जिन छात्रों ने, इस दीक्षांत समारोह में उपाधि प्राप्त की है मैं उनको बधाई देता हूँ और उनके उज्ज्वल भविष्य की हृदय से मंगलकामना करता हूँ। आप सब राष्ट्र के सच्चे नागरिक बनें और अपने जीवन में सदैव सफलता प्राप्त करें, इन शब्दों के साथ मैं पुनः एक बाद उन सभी को धन्यवाद देता हूँ जिन्होंने मुझे इस गौरवपूर्ण समारोह में सम्मिलित होने का सुअवसर प्रदान किया है।

न्याय मूर्ति श्री बी.एस. देशपांडे

(सन् - 1988)

धर्म और संविधान

भूमिका :- धर्म के संकुचित अर्थ के कारण, भारतीय समाज में विभिन्न निष्ठाएं होने का लाभ भारत में ब्रिटिश शासन ने खूब उठाया है। धर्म के आधार पर मतदातासमूहों के वर्गीकरण ने भारतीय समाज को धार्मिक समूहों में विभाजित कर दिया तथा इसके प्रभाव से केन्द्रीय एवं राज्य विधायिकाओं में भाग लेने वाली निष्ठावान् राजनीतिक पार्टियां भी अछूती नहीं रही। इसके परिणामस्वरूप कुछ लोगों की यह विचारधारा हो गई कि मुसलमानों का राष्ट्र दूसरा है तथा राजनीतिक उद्देश्य के लिए की गई धर्म की संकुचित व्याख्या के दुष्प्रभाव के कारण भारत का विभाजन हुआ। संविधान निर्माताओं का यह प्रयास रहा कि इस दुष्प्रभाव से हमेशा के लिए मुक्त रहने के लिए भारतीय संविधान में मौलिक नियमों की व्यवस्था की जाए। इसको सुनिश्चित करने के लिए भारतीय संविधान में निम्न व्यवस्था की गई है-

धर्म निरपेक्ष लोकतांत्रितक गणतन्त्र

संविधान के आमुख का प्रारम्भ निम्न कथन से आरम्भ होता है- "हम भारत के लोग भारत को संप्रभुतासम्पन्न, समाजवादी, धर्मनिरपेक्ष, जनतांत्रिक गणराज्य में संस्थापित करने का दृढ़तापूर्वक संकल्प करते हैं।" 1976 में किए गए 42 वें संविधान संशोधन में धर्मनिरपेक्ष विश्लेषण समाविष्ट हुआ। ऐसा करने का एक बड़ा कारण यह था कि संविधान निर्माण व लागू किए जाने के बाद भी कुछ राजनीतिक पार्टियां राजनीतिक उद्देश्यों के लिए धर्म का प्रयोग करती रही है। इसलिए यह अधिकृत रूप से घोषित किया गया कि संविधान धर्मनिरपेक्ष है।

धर्म का वास्तविक अर्थ

अस्तु, संविधान में धारा 25 के अन्तर्गत अनुरक्षित, अन्तःकरण की स्वतन्त्रता, वैयक्तिक अधिकार है। धारा 25 कुछ विशद् रूप से धर्म को प्रकट करने, व्यवहार करने एवं प्रचार करने की आजादी के अधिकार को अनुरक्षित करता है। किन्तु शब्द प्रचार करने को इस आशय में प्रयुक्त नहीं होता कि कोई व्यक्ति किसी अन्य व्यक्ति को अपने धर्म में परिवर्तित करें। इसीलिए फुसलाने, धमकी आदि द्वारा धर्म-परिवर्तन, मध्यप्रदेश व ओड़िसा द्वारा प्रदत्त संविधि से मान्य होता है, जिसे उच्चतम न्यायालय ने परिपुष्ट किया है फैसले के उन्नीसवें पैरा में न्यायालय ने प्रचार के प्रयोग के बारे में व्यवस्था दी है कि "कोई व्यक्ति किसी दूसरे व्यक्ति के धर्म को परिवर्तित करने का अधिकार नहीं रखता किन्तु वह अपने धर्म के सिद्धान्त की बातें संप्रेषित कर सकता है। अन्तकरण की स्वतन्त्रता, समझाने का स्वतन्त्रता और अपने अंतःकरण का प्रतिपादन धारा 255 द्वारा अनुरक्षित है। इसलिए अंतःकरण की स्वतन्त्रता व्यक्तिगत स्तर पर प्रतिबंधित है। धर्मनिरपेक्ष गतिविधियों के क्षेत्र में इस अधिकार का प्रयोग नहीं किया जा सकता हैं। धर्म के क्षेत्र का यह सामांकन संविधान की धारा 26 के द्वारा धर्म के मामलों तक ही सुनिश्चित किया गया है।"

राष्ट्र की एकता एवं अखण्डता

राष्ट्र की एकता एवं अखंडता का ध्येय आमुख में उद्घोषित है। चूंकि संविधान का समझ के लिए आमुख मात्र एक कुंजी है, धारा 29 (1) को आमुख के प्रतिकूल नहीं माना जा सकता है। धारा 29 (1) द्वारा नागरिकों को उनकी विभिन्न भाषाएं, लिपि या संस्कृति को सुरक्षित रखने का मौलिक अधिकार प्रदान किया गया है।

इस अनुरक्षण का यह तात्पर्य नहीं है कि भाषा, लिपि या संस्कृति का अलगाववादी यन्त्र के रूप में प्रयोग किया जाए। यह ठीक है कि प्रत्येक व्यक्ति या सांस्कृतिक समूह की अपनी विशेष पहचान हो सकती है, किन्तु यह पहचान अलग राष्ट्रवाद की राग अलापने का अनुमति प्रदान नहीं करतीं जैसे कि व्यक्ति को वैचारिक आजादी हैं, कि ठीक उसी प्रकार समूह-विशेष की भाषा व संस्कृति की आजादी है। किन्तु जैसे कि व्यक्ति अपनी वैचारिक स्वतन्त्रता के आधार पर राष्ट्र से अलग नहीं **हो** जाता उसी प्रकार समूह या लोग अपनी सांस्कृतिक व भाषायी पहचान के आधार पर राष्ट्र से अलग नहीं हो जाते।

समुचित शिक्षा

अस्तु: जैसा कि संविधान में संजोया गया है, देश के बच्चों एवं युवकों की समुचित शिक्षा, उनमें धर्म व संस्कृति के मूल्य निश्चय ही उत्पन्न करें। ये मूल्य हमारी राष्ट्रीय भावना को विशेषता प्रदान करते है। संविधान द्वारा अनुरक्षित ये मूल्य हमारी भारतीयता को परम आवश्यक मूल्य के रूप में उद्घोषित करते है। पूरे विश्व में भारत ही एक ऐसा देश है जिसमें प्राचीन संस्कृति की अविरलता सदियों से बनी हुई है। पुराने मूल्यों से बिखरे बगैर आधुनिकता को पुराने मूल्यों में जोड़ा जा सकता है। गुरुकुल व अन्य आदर्श संस्थायें जो शिक्षा देशवासियों को दे सकती है, वे ऐसी होनी चाहिए जो छात्र-छात्राओं को अपनी यशस्वी प्राचीन संस्कृति से अवगत कराएं तथा उनमें उच्च नैतिक मूल्यों को उत्पन्न करें। ये मूल्य देश-भक्ति तथा राष्ट्र की एकता एवं अखंडता को समाहित करते है। आधुनिक, विज्ञान व टेकनॉलाजी के कितने ही अध्याय क्यों न जोड़ दिए जाएं किन्तु शाश्वत मूल्य शिक्षा द्वारा अनवरत बनाए जाने चाहिए मुझे विश्वास है कि इस कार्य में गुरुकुल देश का अगुवा बनेगा और इस क्षेत्र में प्रदर्शक होगा। मेरी शुभकामना है कि यहाँ के विद्यार्थी और वे जो उत्तीर्ण होकर जा रहे हैं, इस सन्देश के अग्रदूत होंगे तथा अपने देश की महानता के निर्माता होंगे।

माननीय श्री चीमनभाई मेहता

(सन् 1990)

सांस्कृतिक विरासत की रक्षा

पूज्य संन्यासीवृन्द, माननीय कुलाधिपति जी, कुलपति जी, आचार्यगण, ब्रह्मचारियों, आर्य-बन्धुओं तथा बहनों!

अमर हुतात्मा स्वामी श्रद्धानन्द जी महाराज की इस साधना स्थली में आकर मैं गौरवान्वित हूँ और हर्ष का अनुभव कर रहा हूँ। देश प्रेम, बलिदान, आत्मत्याग, संस्कृतिगत निष्ठा तथा मूल्य आधारित जीवन चेतना को विकसित करने में उन्होंने सारा जीवन लगा दिया। मैं सर्वप्रथम आचार्य प्रचर स्वामी श्रद्धानन्द जी महाराज के प्रति विन्रमता के साथ श्रद्धांजलि अर्पित करता हूँ तथा आशा करता हूँ कि इस दीक्षा-मण्डप में विराजमान प्रत्येक व्यक्ति नवस्नातकों के साथ इस अवसर पर उन्हें श्रद्धा सहित स्मरण कर रहा होगा।

भाइयों!

उन्नीसवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में जब भारतीय पुनर्जागरण और सामाजिक-धार्मिक सुधार आन्दोलन शुरू हुये तब महर्षि दयानन्द ने आदर्श समाज-व्यवस्था, राज्य-व्यवस्था और परिपूर्ण शिक्षा नीति की रूप-रेखा प्रस्तुत की। महर्षि दयानन्द तथा स्वामी श्रद्धानन्द के तत्कालीन शिक्षण संस्थाओं के प्रतिरोध में अपनी शिक्षा-संस्थाएं स्थापित की तथा सभी वर्णो, वर्गों, जातियों और उपजातियों के बालक-बालिकाओं को बिना किसी भेद-भाव के, समान रूप से अध्ययन-अध्यापन का अवसर प्रदान किया। दयानन्द सरस्वती का मंतव्य था कि शिक्षा सबके लिए अनिवार्य हो। कोई भी वर्ग शिक्षा से वंचित न रहे। स्त्री शिक्षा और समाज में स्त्रियों की समान तथा आदरपूर्ण स्थिति का समर्थन भी स्वामी जी ने ही किया। आधुनिक संवेदना से पूर्ण शिक्षा की गंगा, दयानन्द के कमण्डल से ही इस देश में प्रवाहित हुई। उनका सतत् प्रयत्न रहा कि अध्ययन के दौरान जाति या कुलसूचक कोई चिन्ह विद्यार्थी के नाम के साथ न रहे। धनी-निर्धन, ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र, छूत-अछूत, ऊंच-नीच, समान-असमान तथा अपने पराये का कोई भेद न रहे। स्वामी दयानन्द, गाँधी, रवीन्द्र नाथ और श्री अरविन्द के शिक्षा दर्शन को स्वीकार करना जरूरी है। लोग समझते हैं कि दयानन्द और गाँधी की जरूरत हमें आजादी के दौरान थी, पर सच्चाई यह है कि राजनीतिक स्वतन्त्रता के बाद हमें उनकी और जरूरत है। आज विश्वविद्यालय को मानसिक तकनीकी ज्ञान जनसामान्य तक पहुँचाना होगा। देशव्यापी साक्षरता के अभियान के साथ विस्तार की योजनाओं को लागू करना विश्वविद्यालयों का कर्तव्य है। पुस्तकीय शिक्षा तब तक अपूर्ण है, जब तक हम ज्ञान-विज्ञान का लाभ जनसाधारण तक नहीं पहुँचाते।

गुरुकुल में वेद, संस्कृत, दर्शन, प्राचीन इतिहास तथा साहित्य के साथ यद्यपि विज्ञान के विषय भी पढ़ाये जाते हैं। मुझे यह जानकर प्रसन्नता है कि आज से 70-80 वर्ष पूर्व यहाँ ज्ञान-विज्ञान की शिक्षा का भी माध्यम हिन्दी था। और हिन्दी में भौतिक विज्ञान, रसायन शास्त्र प्राणि शास्त्र, वनस्पति-शास्त्र तथा विकासवाद पर पुस्तकें भी लिखी गई थी। यह बड़ी बात है और चुनौती भी, जो कहते हैं, आधुनिक विज्ञान

मातृभाषा या राष्ट्रभाषा में नहीं पढ़ाया जा सकता। स्वामी श्रद्धानन्द जी ने इस चुनौती को स्वीकार किया और उस समय इस दिशा में पहल की, जब वैज्ञानिक शब्दावली का निर्माण भी नहीं हुआ था। अंग्रेजी भाषा सम्पन्न है, उसका पठन-पाठन अन्तर्राष्ट्रीय आवश्यकता भी है। पर यह मोह हमारी चेतना को जकड़े रहे यह आवश्यक नहीं है। हमें देशी भाषाओं की शब्द सामर्थ्य पर भरोसा रखना चाहिए।

नव-स्नातकगण!

आप जीवन क्षेत्र में प्रवेश करने जा रहे हैं। मैं आशा करता हूँ कि आप राष्ट्र के कर्तव्यशील नागरिक बनोगे। मैं चाहता हूँ कि आपका जीवन देश समाज की चुनौतियों को सहर्ष स्वीकार करें आप सच्चे मन से उनका सक्रिय निदान खोजकर मानवमात्र की सेवा करें। आचार्य प्रवर स्वामी श्रद्धानन्द जी ने कहा था- "लेना तो सभी संसार जानता है। तुम इतने योग्य हो कि अपनी बुद्धि और विद्या में से कुछ दे सको। जो तुम्हारे पास है, उसे उदारता से फैलाओ, हाथ खुले रखो, मुट्ठी को बन्द न होने दो। जो सरोवर भरता है, वह फैलता है, यह स्वाभाविक नियम है।"

इन शब्दों के साथ मैं आपके सुखद, समृद्ध और उज्ज्वल जीवन की मंगल कामना करता हूँ, तथा आपके कुलाधिपति प्रो० शेर सिंह जी तथा कुलपति श्री सुभाष विद्यालंकार को धन्यवाद देता हूँ, जिन्होंने मुझे आपके बीच उपस्थित होने का अवसर प्रदान किया। मेरी कामना है कि गुरुकुल विश्वविद्यालय हमारी सांस्कृतिक विरासत तथा आधुनिक ज्ञान-विज्ञान का संगम हो। अपने मूल स्वरूप की रक्षा करते हुये यह क्षेत्र के अभाव की पूर्ति में सहायक हो तथा यहाँ के स्नातक सामाजिक, सांस्कृतिक, आर्थिक, राजनैतिक और शैक्षिक क्षेत्र में अग्रणी बनें। इस मंगलाशा के साथ आप सभी के प्रति हार्दिक शुभ-कामनाएं।

माननीय श्री चन्द्रशेखर जी (भारत सरकार)

(सन् 1991)

नई आशा

भारतीय संस्कृति का विकास अट्टलिकाओं और महलों के बीच नहीं, बल्कि ऋषियों-मुनियों के रूप में अरण्यों के रूप में हुआ है। इसके चिंतक और मनीषी इसी अरण्य संस्कृति के पोषक रहे हैं। जब दुनिया को ज्ञान का "क" "ख" नहीं आता था, तब हमारे यहाँ सामगान और अन्य वैदिक परम्पराएं विकसित थी। आज भले ही हमारे गुरुकुलों और विद्या मन्दिरों का यह पुराना आदर्श स्वरूप नहीं रहा, पर कभी जब राजा गुरुकुलों में आते थे, तो अपने वाहनों से उतरकर पैदल चलकर आया करते थे। यही वजह है कि हमारी सांस्कृतिक परम्पराएं राजभवनों और अट्टालिकाओं के भरोसे नहीं चलती। हम तो अरण्य संस्कृति के लोग है। राजा तो आते-जाते रहे हैं, पर विद्यामन्दिर और गुरुकुल तो हमेशा रहते हैं। इनमें पढ़ने वाले युवक-युवतियां ही देश की आशा है। लेकिन दुःख है कि आज हमारी आशा ही आत्मविश्वास से दूर आत्मनिंदा और हीन भावना से ग्रस्त है।

हमारे अतीत में विकृतियाँ नहीं थी, ऐसा मैं नहीं कहता, अतीत की उन विकृतियों को छोड़कर हमें अनेक शुभ. पक्ष और कल्याण पक्ष की शिक्षा अपनी नई पीढ़ी को देनी है। गुरुकुल तो वह शिक्षा संस्था है, जहाँ से समाज को नई आशा, नई ज्योति मिलती रही है। स्वामी श्रद्धानन्द ने गुरुकुल की फिर से. प्रतिष्ठा करके राष्ट्र को गौरव दिया था। लेकिन हम 40 वर्षों में भटक गये हैं। आज हमें सोचना है कि हम कृष्ण और सुदामा को एक साथ शिक्षा देने वाले संदीपिनी के आश्रम की परम्परा को शिक्षा नीति से जोड़े या एकलव्य का अंगूठा लेने वाले गुरु द्रोण की परम्परा को बढ़ायें

हमें अपने भीतर अपनी परम्पराओं, वेशभूषाओं और भाषा, सभ्यता, और संस्कृति पर अभिमान करने वाली शिक्षा अपने युवक-युवतियों को देने की दिशा में सोचना है। ऐसी शिक्षा जो आत्म सम्मान से हमें भर सके, हमें देनी चाहिए। हमें शिक्षा नीति पर सोचने के तरीके में परिवर्तन लाना होगा। हमें ज्ञान और शिक्षा बिना भेद-भाव के सभी के लिए उपलब्ध कराना होगा। जैसे गंगा जल सबके लिए वैसे ही ज्ञान और शिक्षा सबके लिए हो। आज देश में 65 प्रतिशत लोग निरक्षर हैं। दुःख है कि पेट की आग बुझाने के लिए हमारे युवक निरक्षर रहकर अब भी छोटे-मोटे काम करके गुजर करते हैं।

गुरुकुल में युवतियाँ नहीं पढ़ पा रही हैं, यह दुःख की बात है। युवतियों को भी यहाँ शिक्षा मिले, यह हमें सोचना है। एक युवक पढ़कर एक-दो को पढ़ा सकता है। पर एक युवती पढ़कर पूरी नई पीढ़ी को साक्षर, और शिक्षित करती है।

माननीय श्री राजेश पायलट

(सन् 1993)

विसंस्कृतिकरण की आंधी को रोकना जरूरी

ओ३म् सहनाववतु .... मा विद्विषावहै।।

परम माननीय कुलाधिपति महोदय, सम्मान के योग्य कुलपति जी, श्रद्धा के योग्य आचार्यगण, सम्मान के पात्र आर्य महिला एवं आर्य पुरुष तथा प्रिय नव स्नातकगण!

गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय के 1993 के दीक्षान्त समारोह पर विद्या एवं तप की पवित्र स्थली पर आमन्त्रित कर आपने मुझे जो सम्मान प्रदान किया उसके लिए मैं हृदय से आपका आभार प्रकट करता हूँ। साथ ही श्रद्धा एवं व्रत के धनी अमर महात्मा स्वामी श्रद्धानन्द जी को अपनी श्रद्धांजलि समर्पित करता हूँ, जिन्होंने युगद्रष्टा महर्षि दयानन्द जी की वैदिक शिक्षा पद्धति व सिद्धान्तों को मूर्त रूप देने के लिए गंगा पार कांगड़ी ग्राम के निकट जंगल में इस संस्था की स्थापना की। महर्षि दयानन्द के उद्देश्यों के अनुसार स्वामी श्रद्धानन्द जी भारत की अविद्या, अकर्मण्यता, अज्ञान एवं परतन्त्रता के अन्धकार से निकालकर देश और समाज को सत्य, पवित्रता और स्वतन्त्रता के रथ पर आरूढ़ करने का आजीवन प्रयत्न करते रहे। स्वामी श्रद्धानन्द जी की दृष्टि से शिक्षा का अर्थ केवल व्यक्तिगत विकास नहीं था अपितु शिक्षा द्वारा ऐसे नर-नारियों का निर्माण करना था जो अपने कर्त्तव्य और उत्तरदायित्वों को भली-भांति निभा सकें, सबकी उन्नति में अपनी उन्नति समझें, संसार का उपकार करें।

स्वामी श्रद्धानन्द जी के तप, त्याग और आदर्श जीवन में गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय को मूर्धन्य राष्ट्रीय शिक्षण संस्था बना दिया। अपने समग्र जीवन को उन्होंने गुरुकुल के महान राष्ट्रीय यज्ञ की हवि बनाकर समर्पित किया। वे विद्याभ्यास के साथ विद्यार्थियों के चरित्र निर्माण, तप तथा अनुशासन पर बल देते रहे।

प्रिय स्नाताकों! आज आप अपनी विद्या पूर्ण करके उसकी सफलता के लिए दीक्षित हो रहे हैं। इस समावर्तन संस्कार की पावन बेला पर उपस्थित आप स्नातकों का मैं अभिनन्दन करता हूँ। तथा उपाधि प्राप्त करने पर आपको बधाई देता हूँ। स्वाभाविक ही है कि इस समय आप का हृदय हर्ष एवं उल्लास से भरा है। सम्भवत: आप के हृदय में भविष्य को सुखद करने वाले स्वर्णिम स्वप्न आ रहे होंगे। मैं आप के स्वप्नों के साकार होने की मंगल कामना करता हूँ।

आप विद्या का अवगाहन कर चुके हैं। विवेकशील हैं तथा यह भली-भांति जानते हैं कि प्रकाश एवं अन्धकार का दोष और असुर का संग्राम निरन्तर हमारे हृदयों में चलता है, न केवल हृदयों में अपितु घर में, समाज में, देश में तथा विश्व भर में यह संग्राम चल रहा है। मैं आपके आन्तरिक और बाह्य परिवेश में आध्यात्मिक, आधिभौतिक और आधिदैविक सुख-शांति की तरह द्वेषरहित परस्पर प्रेम और सहयोग की हार्दिक कामना करता हूँ।

आज विज्ञान तथा गतिशीलता का युग है। इस युग में आपका सामंजस्य किस स्तर पर, किस प्रकार होगा- उपभोक्ता के रूप में या सृष्टा के रूप में। मुझे विश्वास है कि जिस पवित्र स्थली में आपने आचार्यगण के प्रति श्रद्धा रखते हुये विद्या प्राप्त की है, उसी स्थली में शिक्षित पुराने स्नातकों ने स्वयं को सृष्टा के रूप में प्रस्तुत किया था। आप में भी सृजना की अनन्त सम्भावनायें प्रस्तुत पड़ी हैं, इन्हें आपको जगाना है।

"उत्तिष्ठत जाग्रत प्राप्य वरान्निबोधत।"

प्रिय स्नातकों! अर्जित ज्ञान और संस्कारों के आधार पर आपको दायित्व निभाना है अपना ध्येय निश्चित करना हैं अपने शरीर, मन और आत्मा का सर्वांगीण विकास करना है। तैत्तिरीय उपनिषद् के अमर वाक्यों "सत्यंवद, धर्मंचर," "स्वाध्याय प्रवचनाभ्याम् न प्रमदितव्यम्" पर आजीवन आचरण करना है। आप शंका मत कीजिए। आसुरी सम्पद् पर विजय पाने के लिए आपके हृदय में दैवी सम्पद् की शाश्वत धरोहर है। आप स्वयं पर, अपने देश, और संस्कृति पर श्रद्धा रखें, अन्धविश्वास नहीं, श्रद्धा से ज्ञान, प्रेयस और नि:श्रेयस प्राप्त होते है। संशय से तो महानाश ही होता है।

धर्म पर विश्वास के साथ आप की बुद्धि विशाल हो ताकि आप नये तथ्य ग्रहण कर सकें। ज्ञान-विज्ञान के नये क्षितिज खोंजे, गहराइयाँ मापें, आपका हृदय विशाल हो, जो नई चेतना और आत्मीयता का माध्यम बन सके, आप अपने देश के प्रति कर्तव्यनिष्ठ बनें, केवल अपनी उन्नति से ही सन्तुष्ट न रहें वरन् सबकी उन्नति में अपनी उन्नति समझें। यह दीक्षान्त ही नहीं अपितु नया प्रारम्भ है। आपके इस नये अभियान की सफलता के लिए मेरी हार्दिक शुभकामनाएं।

माननीय श्री अर्जुन सिंह

(सन् 1994)

भारतीय प्रतिभाएं भारत के लिए समर्पित हों

माननीय कुलाधिपति जी, परिदृष्टा जी, कुलपति जी, आचार्य गण, बन्धुओं, बहनों तथा नव स्नातकों!

गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय के दीक्षान्त सभागार में नव स्नातकों को सम्बोधित करने का अवसर पाकर मेरा प्रसन्न होना स्वाभाविक है। देश के विश्वविद्यालय में इस विश्वविद्यालय को अपनी पहचान इसके संस्थापक अमर महात्मा स्वामी श्रद्धानन्द जी के कारण बनी और उसके स्नातकों ने राष्ट्र निर्माण, स्वाधीनता आन्दोलन, समाज सेवा, हिन्दू प्रचार, धर्म, संस्कृति, साहित्य, समाजदर्शन तथा इतिहास लेखन के क्षेत्र में उल्लेखनीय कार्य करके अपूर्व ख्याति अर्जित की। स्वामी श्रद्धानन्द जी का पुनर्जागरण के इतिहास में एक महत्वपूर्ण स्थान है और इतिहास में उनका नाम स्वर्ण अक्षरों में लिखा जायेगा।

स्वामी जी ने गुरुकुल की स्थापना कर भारतीय शिक्षा पद्धति को ओर आगे बढ़ाया। उस समय पाश्चात्य सभ्यता और सांस्कृतिक विचार धाराओं के विचारार्थ अंग्रेजी शिक्षा प्रणाली में समूचे देश की सांस्कृतिक महत्ता को महत्वविहीन करने के लिए कोई भी कदम नहीं छोड़ा परन्तु महर्षि दयानन्द से प्रेरण लेकर स्वामी जी ने पूरब और पश्चिम की प्राच्य विद्याओं के साथ आधुनिक ज्ञान-विज्ञान के अध्यात्म के साथ, भौतिक यथार्थ को तथा व्यक्ति निर्माण के साथ राष्ट्रीय उन्नति के लक्ष्य को एकाकार करने की चेष्ट की और उसे मूर्त रूप देने के लिए गुरुकुल की स्थापना की। 1910 से 1911 के आस-पास वैज्ञानिक विषयों पर हिन्दी के लेखन कार्य करने की चुनौती उनके निर्देशन में गुरुकुल ने स्वीकार की। आप उनके जीवन से त्याग बलिदान, देश-सेवा, धर्म निरपेक्षता, जातीय सद्भाव तथा हिन्दू मुस्लिम सिक्ख एकता क प्रेरणा लें।

देश को बाहर और भीतर से तोड़ने वाली शक्तियों को कुंठित करने के लिए त्याग, साहस, विवेक संगठन, सौहार्द और कर्मयोग की आवश्यकता है। मैं आशा करता हूँ कि आप मानव समाज की सेवा क लक्ष्य जीवन में सर्वोपरीय मानेंगे। पुस्तकीय ज्ञान तभी सार्थक होता है जब वह हमारे व्यवहार का अंग हो शिक्षा चाहे प्राथमिक स्तर पर हो, माध्यमिक स्तर पर हो या उच्च स्तरीय अध्ययन और शोध स्तर पर। उसे ग्रामोत्थान से लेकर विश्व भूगोल तक जुड़ना है।

प्यारे स्नातकों, आज जब आकाश के रास्ते अपसंस्कृति की मार हम पर पड़ रही है। देशी-विदेशी विघटनकारी ताकतें हमारी राष्ट्रीय भावनाओं धर्म और सामाजिक कर्त्तव्यों को नकारात्मक ढ़ग से प्रभावित कर रही हैं। सम्प्रदायबाद हमें टुकड़े-टुकड़े करने के सतत् प्रयास में हैं, जातीय द्वेष से समाज ग्रसित है तब हम कितना ही कहें कि हम लोकतान्त्रिक देश के सदस्य हैं पर यह सिर्फ मन को मनाने की बात होगी, क्योंकि वर्गभेद सब प्रकार नजर आता है। अतः जरूरत है कि हम ऊंच-नीच की भावना से ऊपर उठें तथा समाज के रचनात्मक बदलाव में योगदान करें। हम प्रतिभावान हैं और दुनिया में राष्ट्र इस बात का साक्षी है पर हमारी प्रतिभाएं भारत के काम आयें और प्रतिभा पलायन रुके। यह तभी सम्भव है जब हमारी प्रतिभायें अर्न्तमन से प्रसन्न हों, और अपने जीवन का लक्ष्यों के साथ समन्वित करें।

आज आपका दीक्षान्त हो रहा है। औपचारिक रूप से यहाँ आपकी शिक्षा समाप्त हुई, पर क्या यह शिक्षा समाप्ति बिन्दु भी है ? आप अनवरत शिखा में जुटे रहें, लोगों को शिक्षित करें तभी अपकी शिक्षा सफल हो सकती है। आप अपने जीवन में निरन्तर सुख और समृद्धि की ओर अग्रसर होते जाये यही मेरी शुभकामना है। मेरी अपेक्षा है कि आप राष्ट्र के लिए उपयोगी नागरिक बनें।

अन्त में, आपकी मंगलकामना करते हुये आपको बधाई तथा कुलाधिपति, परिदृष्टा तथा कुलपति जी को धन्यवाद देता हूँ कि मुझे यह अवसर प्रदान किया।

माननीय श्री शिवराज पाटिल

(सन् 1995)

अतीत की उपलब्धियाँ : वर्तमान के पगचिन्ह

माननीय कुलाधिपति जी, परिदृष्टा जी, आदरणीय पण्डित जी, आचार्य गण, बन्धुओं, बहनों एवं नव स्नातकों!

आज गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय के दीक्षान्त समारोह में आपने मुझे यहाँ आमन्त्रित कर युग पुरुष स्वामी श्रद्धानन्द महाराज जी की तपस्थली देखने का जो सुअवसर प्रदान किया है, उसके लिए मैं आप सभी का हृदय से आभारी हूँ। स्वामी श्रद्धानन्द जी ने देश की स्वाधीनता, अखण्डता, समृद्धि तथा सांस्कृतिक विरासत की रक्षा करने के लिए आजीवन संघर्ष किया। वे मानव कल्याण के लिए निरन्तर प्रयत्नशील रहे। वह देश के युवकों को एक ऐसे वर्ग के रूप में तैयार करना चाहते थे जो ज्ञान-विज्ञान की भिन्न-भिन्न शाखाओं-प्रशाखाओं में पारंगत होने के साथ-साथ वैदिक ज्ञान एवं विश्व प्रसिद्ध भारतीय संस्कृति से भी भली-भांति परिचित हो तथा राष्ट्र के रचनात्मक विकास में अपनी भूमिका निभा सके। महर्षि दयानन्द सरस्वती जी की शिक्षा सम्बन्धी अवधाराणाओं के अनुरूप स्वामी श्रद्धानन्द जी भारत के लिए एक ऐसी राष्ट्रीय शिक्षा नीति बनाना चाहते थे। जिसमें प्राचीन विद्याओं के साथ आधुनिक ज्ञान-विज्ञान का समन्वय हो। इस उद्देश्य की प्राप्ति के लिए स्वामी श्रद्धानन्द ने सन् 1902 में इस गुरुकुल की स्थापना की थी।

मुझे ज्ञात हुआ है कि गुरुकुल का पुस्तकालय उत्तरी भारत का एक महत्वपूर्ण पुस्तकालय है। जिसमें प्राचीन साहित्य, धर्म और दर्शन पर न केवल दुर्लभ पुस्तकें बल्कि प्राचीन हस्तलिखित पाण्डुलिपियाँ भी सुरक्षित हैं। गुरुकुल का एक महत्वपूर्ण दर्शनीय संभाग संग्रहालय है जिसमें प्राचीन इतिहास, अभिलेख, पुरातत्व व उत्खनन से प्राप्त दुर्लभ सामग्री रखी हुई है। इस संग्रहालय में हरिद्वार और कांगड़ी ग्राम तथा जनपद के अन्य स्थानों से प्राप्त प्राचीन मूर्तियाँ दर्शनीय हैं। इस संग्रहालय में स्वामी श्रद्धानन्द कक्ष भी है जिसमें स्वामी जी की पादुकाएं, वस्त्र, कमण्डल और दुर्लभ चित्र सुरक्षित हैं। यह और भी गर्व की बात है कि इस विश्वविद्यालय का एक महत्वपूर्ण कार्य ग्राम विकास योजना है। सड़कों का निर्माण, वृक्षारोपण बॉयो गैस, प्लांटों की स्थापना आर्थिक विकास कल्याण, सार्थक ज्ञान आदि विश्वविद्यालय द्वारा ग्रामोत्थान के किये जा रहे प्रमुख कार्य हैं।

गुरुकुल कांगड़ी में दी जा रही शिक्षा में सभी उद्देश्य और लक्ष्य निहित हैं। इन गुणों से सुसज्जित शिक्षित युवक जिस क्षेत्र में भी कार्य करते है, वहीं अपना और अपनी शिक्षण संस्था का नाम गौरवान्वित करते हैं। मेरी यह मान्यता है कि ऐसे युवकों के हाथों जनकल्याण सुनिश्चित है। मैं चाहता हूँ कि देश में ऐसे गुरुकुल विश्वविद्यालय अन्य भी स्थापित किये जाये। मुझे प्रसन्नता है कि इस गुरुकुल के अधिकारीगण तथा आचार्य स्वामी के आदर्शों का निष्ठापूर्वक अनुसरण कर रहे हैं और अपने शिष्यों को भी उन पर चलने हेतु प्रेरित कर रहे हैं।

प्रिय स्नातकों, आप जिस संस्था से स्नातक की उपाधि प्राप्त कर सार्वजनिक जीवन में पदार्पण कर

रहे हैं। उसकी परम्परा और इतिहास गौरवशाली है। यह वह संस्था है जहाँ हमारे राष्ट्र पिता महात्मा गाँधी को "महात्मा" की उपाधि से विभूषित किया गया था। आज भी इस संस्था में गणमान्य नेता आकर अपने को धन्य समझते हैं। संस्कृति, साहित्य, धर्म, दर्शन, चिकित्सा, पत्र-पत्रकारिता, राजनीति-विज्ञान तथा व्यवसाय के क्षेत्रों में यहाँ के नव-स्नातकों ने निःसंदेह नाम अर्जित किया है, और आप सभी इस परम्परा को बनाये रखेंगे। मेरी इच्छा है कि आप जीवन के विभिन्न क्षेत्रों का चयन करें और राष्ट्र सेवा के लिए स्वयं को समर्पित करें। समाज के टूटते हुये रिश्तों और सम्बन्धों को मधुर एवं सुदृढ़ करें और समानता तथा सामाजिक न्याय के लिए विवेक सम्मत वातावरण बनाये। मेरी शुभकामना है कि आप सभी अपने जीवन में निरन्तर सुखसमृद्धि की ओर अग्रसर हों और साथ ही राष्ट्र के रचनात्मक विकास में अपना सक्रिय योगदान दें।

विश्वविद्यालय के अधिकारियों ने दीक्षान्त समारोह के निमित्त मुझे आमन्त्रित कर स्वामी श्रद्धानन्द जैसे महामानव को श्रद्धांजलि अर्पित करने का जो सुअवसर मुझे दिया उसके लिए मैं उन्हें साधुवाद व धन्यवाद देता हूँ। आचार्यगण और उपस्थित भाई-बहनों के लिए मेरी शुभकामनाएं।

धन्यवाद।

महामहिम डॉ॰ ओदोलेन स्मेकल

(सन् 1996)

शिक्षा का लक्ष्य : विश्व बन्धुत्व

श्री कुलाधिपति जी, परिदृष्टा महोदय, देवियों, सज्जनों और अन्तेवासियों!

अमर महात्मा स्वामी श्रद्धानन्द जी महाराज की इस गौरवमयी तप स्थली में आकर मैं स्वयं को धन्य समझता हूँ। गुरुकुल कांगड़ी के रूप में राष्ट्रीय शिक्षा प्रणाली का परिवर्तन कर स्वामी जी ने महात्मा गाँधी के स्वाधीनता आन्दोलन का वैचारिक पक्ष मजबूत किया था। गुरुकुल के प्राध्यापकों, ब्रह्मचारियों तथा कर्मचारियों ने स्वाधीनता, चरित्र निर्माण तथा संस्कृति की रक्षा के लिए जितना उद्योग किया उतना शायद किसी अन्य विश्वविद्यालय ने ब्रिटिश राज के दौरान नहीं किया। ऐसी ऐतिहासिक संस्था के दीक्षान्त के लिए आपने मुझे आमन्त्रित किया, मैं आपका आभारी हूँ।

जैसा कि आप जानते हैं, मैं जिस देश में हूँ, वह भारत से दूर अति दूर है। वह देश चेक धरती, यूरोप के मध्य हृदय में स्थित है। फिर भी यहाँ आकर दीक्षान्त भाषण में हिन्दी मे दे रहा हूँ। वैसे भी मेरी मातृभाषा चेक भाषा है किन्तु हिन्दी को अपनी दूसरी मातृभाषा मानता हूँ।

विश्व बन्धुत्व की शिक्षा में गुरुकुल कांगड़ी का विशेष योगदान रहा है। गुरुकुल के अनेक स्नातकों ने विदेशों में जाकर शिक्षा, धर्म, राजनीति तथा व्यवसाय के क्षेत्र में विशिष्ट मापदण्ड स्थापित किये हैं। अनेक स्नातक अमेरिका और यूरोप के देशों में गुरुकुल का नाम उज्ज्वल कर रहे है।

प्रिय स्नातकों

आप चाहे विज्ञान के छात्र रहे हों, चाहे मानविकी के, आपने ज्ञान-विज्ञान की अधुनातन शाखाओं में दक्षता प्राप्त की हो, चाहे आप प्राचीन विद्याओं का अभ्यास करते रहे हों। मेरा मानना है कि आपको भारतीय संस्कृति तथा इतिहास का गहरा ज्ञान चाहिए। विश्व की समस्याओं के इतिहास जांने बिना आप अपने गौरवपूर्ण इतिहास की महत्ता नहीं समझ सकते। आज की शिक्षा में एक बड़ी कमी है राष्ट्रीय दृष्टिकोण का अभाव। मैं गुरुकुल का प्रशंसक रहा हूँ। स्वामी श्रद्धानन्द जी ने गाँधी जी से पहले छुआ-छूत का कलंक मिटाने के लिए उद्योग किया था। स्वामी जी सिद्धान्त और व्यवहार में एक थे। उन्होंने पिछड़े, निर्धन, निरक्षर तथा दलित लोगों के जीवन के उत्थान के लिए कांग्रेस से भी अधिक कार्य किया। मैं आह्वान करता हूँ आप लोग आयें तथा छोटे-बड़े, धनी-निर्धन, पवित्र अपवित्र एवं सवर्ण-असवर्ण के कृत्रिम तथा अमानवीय भेदों को तोड़कर एक स्वस्थ भारतीय समाज की संरचना का अभियान चलायें। मेरे प्यारे विद्यार्थियों! यदि तुम मानवमात्र को उसके सही परिप्रेक्ष्य में देखना चाहते हों, यदि समाज से शोषक और शोषित का भेद मिटाना चाहते हो, यदि देश को एकता के सूत्र में पिरोये रखना चाहते हो, यदि मनुष्य-मनुष्य तथा वर्ग-वर्ग में अनेकता हटाकर एकता लाना चाहते हो, यदि पृथ्वी पर सुख शान्ति, सर्वोदय और सामूहिक समृद्धि की कामना करते हो तथा पृथ्वी को स्वर्ग बनाना चाहते हो तो ऐसी व्यवस्था का निर्माण करो जहाँ अभेद दर्शन का आधार हो। धर्म कर्तव्य के पालन में प्रत्येक व्यक्ति की दृष्टि उदार तथा तर्कसंगत हो, उस में किसी ऐसी उपासना शैली तथा शिक्षा के लिए स्थान न हो जो मनुष्य को मनुष्य से लड़ाये, उनमें अलगाव पैदा

करें तथा वर्ग संघर्ष के लिए प्रेरणा दें। दृढ़ तथा पवित्र चरित्र, स्वावलंबन और जन कल्याण ही उसका लक्ष्य हो।

इन शब्दों के साथ मैं आपके उज्ज्वल भविष्य के लिए मंगल कामना करता हूँ तथा आशा करता हूँ कि स्वतन्त्र भारत के संविधान-निर्माताओं ने जो विचार दर्शन तथा जीवन शैली प्रदान की, उसका आप अनुपालन करें। भारतीय ऋषि-मुनियों की चिन्तन शैली को जीवन में उतारें तथा इस देश, समाज और अपने शिक्षणालय की महान् परम्पराओं की रक्षा करें। आपको ऐसे संसार का निर्माण करना है जहाँ सब मिलकर कार्य करने तथा जीवन यापन करने में हर्ष का अनुभव करें ताकि मनुष्य का मनुष्य द्वारा किया जाने वाला शोषण और अन्याय समाप्त हो जाये।

आपने यह आशीर्वचन सुना होगा :-

सर्वे भवन्तु सुखिन: सर्वे भवन्तु निरामया:।
सर्वे भद्राणि पश्यन्तु मा कश्चिद् दुख भागभवेत्।।

इस भावना को मन, वाणी तथा शरीर से सार्थक करें। आपको हर क्षेत्र में सफलता प्राप्त हो, यही मेरी प्रार्थना है।

माननीय डॉ॰ ओलेग उलत्सिफेरोव

(सन् 13 अप्रैल 1997)

कुलाधिपति महोदय, परिदृष्टा महोदय, कुलपति जी, आचार्यगण, अन्तेवासियों, देवियों तथा सज्जनों।

अमर महात्मा वीतराग संन्यासी स्वामी श्रद्धानन्द जी द्वारा संस्थापित राष्ट्रीय शिक्षण संस्थान गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय के इस पवित्र प्रांगण में उपस्थित होकर मुझे परम प्रसन्नता का अनुभव हो रहा है। यह संस्था विद्या और तप की स्थली रही है। स्वामी श्रद्धानन्द जी के तप ने और ब्रह्मचारियों की देशभक्ति ने महात्मा गाँधी जी को इस तप स्थली की ओर आकृष्ट करके उनके मन में आशा और विश्वास का भाव उत्पन्न किया था। यही वह पावन भूमि है जहाँ हमारे देश के सर्वमान्य नेताओं ने समय-समय पर पदार्पण करके स्वयं को गौरवान्वित किया था। शिक्षा वही है जो मानव को सही जीवन का दर्शन देकर उसे उन्नति की ओर अग्रसर करें। नैतिक आदर्श, मानवमूल्य, सद्भाव, राष्ट्रीयता, विश्वबन्धुत्व, हठ और दुराग्रह का परित्याग सिखाने वाली विद्या ही शिक्षा का रूप है।

उपस्थित सज्जनों! मुझे बताया गया था कि कांगड़ी जिन आदर्शों को समाने रखकर खोला गया था, वे वैदिक आदर्श हैं जिनमें न संकीर्णता है, न कोई वाद पनपा है, न स्वार्थपरता है, न निरंकुशता है, वहाँ तो केवल सच्ची मानवता है, परमार्थ की भावना है, विश्व बन्धुत्व का उद्घोष है तथा समूचे विश्व को मित्र दृष्टि से देखने का आदर्श है। वेदों में मानव को उन्नत होने के लिए भौतिक एवं आत्मिक दोनों ही सम्पत्तियों से भरपूर होने का उपदेश है। इसलिए शिक्षा का उद्देश्य मानव की आन्तरिक तथा बाह्य शक्तियों का विकास करना है। आज मुझे यह जानकर प्रसन्नता हो रही है कि कांगड़ी विश्वविद्यालय में प्राचीन एवं नवीन विषयों के अध्ययन-अध्यापन की समुचित व्यवस्था है। भारतीय संस्कृति के परिचायक एवं पोषक तत्व प्राच्य विद्या संकाय में वेद, संस्कृत, दर्शन, योग, प्राचीन भारतीय इतिहास, पुरातत्व एवं संस्कृति विभाग कार्य कर रहे हैं। मानविकी संकाय में हिन्दी, अंग्रेजी, मनोविज्ञान, अर्थशास्त्र, राजनीतिशास्त्र आदि नवीन विषयों के अध्यापन की व्यवस्था है। इसी प्रकार विज्ञान के क्षेत्र में उन्नति करने के लिए विज्ञान संकाय तथा जीव विज्ञान संकाय में गणित शास्त्र, रसायन शास्त्र, भौतिक तथा कम्प्यूटर विज्ञान तथा जन्तु विज्ञान, वनस्पति विज्ञान, सूक्ष्म जीव विज्ञान की व्यवस्था है। महिला शिक्षा को उन्नत करने के लिए यहाँ प्राचीन एवं नवीन तथा विज्ञान विषयों के अध्यापन की व्यवस्था कर दी गयी है। यह जानकर मुझे हर्ष हो रहा है कि यहाँ विज्ञान के छात्रों के लिए धर्म, दर्शन एवं संस्कृति की शिक्षा भी अनिवार्य रूप से दी जाती है ।

मैं रूस देश से आया हूँ जो वर्ष में सात महीने हिमाच्छादित होता है, जिसके कारण हमारे छात्रों के सामने कम प्रलोभन हैं। रूस में पांच सौ से अधिक विश्वविद्यालय हैं जिसमें बीस लाख से अधिक विद्यार्थी है। मैं भाषा का अध्यापक हूँ, हिन्दी भाषा का।

मानव के जीवन में भाषा का अनुपम महत्व है। भाषा न होती तो हम एक दूसरे को कैसे समझते ?

आज की दुनियां में हजारों भाषाएं हैं और प्रत्येक भाषा में भिन्न-भिन्न जातियों और स्नेह तथा सुख की आशा, मैत्री और शान्ति की इच्छा, बच्चों और बड़ों से प्यार का स्वर गूंजता है। इन भाषाओं में टॉलस्टाय के युद्ध और शान्ति की पुकार झनझनाती है, दोस्तां एव्स्की का गरीबों का रूस कराहता है, पुश्किन की मधुर कविताएं अमर प्रेम के गीत गाती है। इसमें प्रेमचन्द की निर्मला का करूण जीवन रूदन करता है, अश्क के पंजाब की हंसमुखता तथा जिन्दादिली चहचहाती है, जयशंकार प्रसाद की मधुलिका की देशभक्ति और आत्मबलिदान चिल्लाता है, वृन्दावन लाल वर्मा की झांसी की रानी का "हर हर महादेव" का गगन भेदी नाद गरजता है।

मेरे लिए यह बड़ी गौरव की बात है कि रूस देश में भी अनेक हिन्दी प्रेमी हैं। अभी तक वे लोग हिन्दी में उपन्यास या कहानियां नहीं लिखते किन्तु वे दूसरे क्षेत्रों में हिन्दी की सेवा करते हैं। सर्वप्रथम यह हिन्दी को पढ़ने के लिए हमने नौ पाठ्य पुस्तकों को लिखा है। एक के लिए तीन रूसी विद्वानों को उन्नीस सौ उनहत्तर से इण्डो-सोवियत मैत्री का नेहरू पुरस्कार दिया गया था। मगर हम पुरस्कारों के लिए काम नहीं करते। हिन्दी भाषा हम हिन्दी वेत्ताओं की जिन्दगी हो गयी है। यह हमारा भाग्य है और भारत इसका विधाता है।

प्रिय नव-स्नातकों! आज आप लोग गुरुकुल के पवित्र प्रांगण में विद्या निष्णात होकर दीक्षित हो रहे हैं। ये सारा देश आप लोगों से कुछ विशेष अपेक्षा करता हुआ आपकी और निहार रहा है। आपके जीवन को इस देश की परम्परा ने पाला है, आपकी शिक्षा में गौतम, कपिल, कणाद, जैमिनी के जीवन दर्शन का समावेश है, राष्ट्रीयता की भावना के गीतों को आपने जीवन में उतारा है। आप उस अमर हुतात्मा स्वामी श्रद्धानन्द के पुत्र हो जो निर्भीक संन्यासी थे। आप ने उस महर्षि दयानन्द का जीवन चरित्र पढ़ा है जो युगों-युगों में एक अद्‌भुत क्रान्ति के एक अग्रदूत थे। प्रकृति के इस सुरम्य वातावरण में आपकी शिक्षा हुई है जहाँ प्रातःकाल वेद मन्त्रों की ऋचाओं का गान होता है। जहाँ प्रतिदिन यज्ञ की सुगन्ध वातावरण को मोहक बनाती है, आपको वे विचार दिये गये हैं जिनमें विनय, नम्रता, शालीनता, गुरुभक्ति, सच्चरित्रता, उदारता और देश प्रेम का निवास रहता है।

आज भारत के सामने अनेक चुनौतियाँ हैं। आप नव-स्नातकों को इन चुनौतियों का सामना करना है। आपके सामने अनेक प्रकार की बाधायें आयेंगी, अनेक प्रलोभन आपको दिये जायेंगे, समय-समय पर अनेक यातनायें भी आपको दी जा सकती हैं, किन्तु आपको सबका सामना करते हुये अपने कर्त्तव्य पथ पर अडिग रहना है। हमारा आशीर्वाद शुभकामनाएं आपके साथ हैं। आपका मार्ग प्रशस्त हो, आपकी विद्या बलवती हो, आपका भविष्य उज्ज्वल हो, देश के विभिन्न प्रकार के तामस दूर करने में आपकी विद्या प्रकाश स्तम्भ का कार्य करें। अन्त में मैं समस्त कुलवासियों के प्रति अपनी सद्‌भावना प्रकट करता हूँ।

माननीय डॉ॰ सुमतीन्द्र नाडिग

(सन् 18 अप्रैल 1998)

श्रीयुत् कुलाधिपति जी, कुलपति जी, कुलवासियों तथा नव-स्नातकों!

गंगा के पावन तट पर पूज्य स्वामी श्रद्धानन्द जी महाराज द्वारा संस्थापित गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय के 98 में वार्षिकोत्सव एवं दीक्षान्त समारोह के इस अवसर पर आपके सामने दो शब्द कहते हुये मुझे अत्यन्त प्रसन्नता हो रही है।

आप अपने अध्ययन की महत्वपूर्ण अवस्था में पहुँच चुके हैं। आपने योग्यता प्राप्त कर ली है, अब स्वयं अपने आप आगामी अध्ययन करने के लिए आप सक्षम बन चुके हैं। जो कुछ अब तक आपने सीखा है, वह अध्ययन का केवल एक अंश था।

आचार्यात् पादमादत्ते पादं शिष्यः स्वमेधया,
पादं सब्रह्मचारिभ्यः पादं कालक्रमणेनच।

जो कुछ आपने अब तक सीखा है उसका एक चौथाई अंश अपने अध्यापकों से सीखा, एक चौथाई अपनी बुद्धिमत्ता का प्रयोग करके अपने पास सीखा तथा एक चौथाई अपने संगी-साथियों से सीखा। बाकि बचा एक चौथाई भाग आप समय के साथ सीखेंगे। जो कुछ आप समय के साथ सीखेंगे, वहीं आपकी शिक्षा का सबसे प्रमुख और श्रेष्ठ अंश होगा। समय को आपके लिए कुछ करने का समय दीजिए। जब तक समय आपके लिए कुछ करने के लिए आये, तब तक कर्म के लिए हमेशा तत्पर रहिये और निश्चय ही, बुरा समय आपके पास कभी नहीं आयेगा।

एक अन्य भेद अथवा रहस्य के बारे में मैं आपके साथ बात करना चाहूँगा वह भेद उस शत्रु के बारे में है, जो आपके भीतर रहता है। उस शत्रु को आप स्वयं ही अपने से दूर रख सकते हैं। और वह शत्रु है- "आलस्य"।

आलस्यं हि मनुष्याणां शरीरस्थो महान् रिपुः।
नास्त्युद्यम समो बंधुः कुर्वाणी नाव सीदति।।

आलस्य नामक यह शत्रु राक्षस है, जो आपके पास कई रूपों में आता है। वह आपके पास नींद, थकान, मित्रों, प्रलोभन और बहाने-बाजी के नाना रूपों में आता है। वह आपसे झूठ बोलने को कहेगा, वह आपसे काम में देरी करने को कहेगा, वह आपसे काम में देरी कराने को कहेगा, या फिर काम से बिल्कुल जी चुराने को कहेगा। इस शत्रु से हमेशा सावधान रहिये।

अब मैं आपको एक और मंत्र बताता हूँ। भाषा वह शक्तिशाली हथियार है जिससे आप पूरे संसार पर विजय पा सकते हैं। आपको किसी भी भाषा के लिए अधिक शब्दों को जानने की कोशिश करनी चाहिए। "शब्द" को जानने का मतलब है यह जानना कि शब्द का प्रयोग कैसे होता है, उसके वाच्यार्थ और सूच्यार्थ क्या है, तथा उसकी व्युत्पत्ति कैसे हुई। आपको शब्द का इस प्रकार उच्चारण करना चाहिए कि आपके मस्तिष्क का अर्थ और वह शब्द सुनने वाले को साक्षात् दिखायी देने लगे।

मैं हमेशा सकारात्मक रूप से सोचता रहा हूँ। अतः मेरा अनुरोध है कि आप भी सकारात्मक रूप से सोचिये। अपने पर विश्वास रखिये। ऐसा कुछ है जिसे दूसरों की अपेक्षा आप ही श्रेष्ठ ढंग से सम्पन्न कर सकते हैं। इस अनोखी प्रतिभा और उसके द्वारा दूसरों को दिये जा सकने वाले लाभों को जानने की कोशिश करें। हमारे इस संसार में अधिकांश लोग कुछ लेना ही चाहते हैं और वे इस बात को जानने की कोशिश नहीं करते कि वे दूसरों को क्या दे सकते हैं। उन लोगों की तरफ मत देखिये जिन लोगों से आप सहायता ले सकते हैं, बल्कि उन लोगों की तरफ देखिये जिनकी आप सहायता कर सकते हैं। अपने आपको कभी बेल की तरह कमजोर न समझें। कमजारे लोगों को दूसरों के सहारे की आवश्यकता होती है। बेल को भी पेड़ का सहारा लेना पड़ता है। लेकिन यदि आप अपने भीतर शक्ति का संचार करें, तो आप सहारा खोजने की बजाय दूसरों का सहारा बनेंगे। अगर आप पेड़ की तरह हैं तो दूसरे लोग बेल की तरह आपका सहारा पाने के लिए आपके पास आयेंगे।

ज्ञान अर्जित कीजिए। सर्वव्यापी ज्ञान, सितारों, ग्रहों तथा अन्य खगोलीय पिण्डों के बारे में केवल पढ़ना ही काफी नहीं है, आकाश में देखिये यात्राएं कीजिए। पशु-पक्षी व वनस्पति जगत् पर ध्यान दीजिए। हर चीज को देखने जानने के प्रति जिज्ञासु बनिये। छोटी से छोटी चीज में भी जानने के लिए बहुत कुछ होता है- अब चाहे वह कीटाणु हो अथवा जीवाणु। यह संसार एक रहस्य है, तथा इसमें पाई जाने वाली प्रत्येक वस्तु भी उतनी ही रहस्यमय है। इस रहस्य के बारे में चिन्तन करना सीखिये। अनुभव कीजिए। किसी भी चीज को समझने के लिए उसका अनुभव करना ही एकमात्र रास्ता है।

स्नातक बनने जा रहे प्रिय छात्रों! यदि भारत शक्तिहीन होगा तो कोई भी देश उसकी परवाह नहीं करेगा। 27 वर्ष पहले जब मैं अमेरिका में था तो किसी भी समाचार पत्र ने भारत के सम्बन्ध में कभी कोई समाचार प्रकाशित नहीं किया। लेकिन जब भारत ने बम का परीक्षण किया तो एकाएक भारत समाचार पत्र की सुर्खियों में था। मुझे यह देखकर अत्यन्त प्रसन्नता हुई कि भारत एक शक्तिशाली देश है। मैं यह नहीं कहता कि हमारे पास परमाणु बमों और हाइड्रोजन बमों का एक बड़ा भण्डार होना चाहिए, लेकिन हमारे पास क्षमता अवश्य होना चाहिए। कुछ ही समय पहले की बात है, जब अमेरिका ने भारत को सुपर-कम्प्यूटर बेचने से इन्कार कर दिया। लेकिन उसके दस-पन्द्रह दिन बाद ही यह समाचार प्रकाशित हुआ कि हमारे वैज्ञानिकों ने स्वयं एक सुपर कम्प्यूटर विकसित कर लिया है। अब बमों का परीक्षण अनुरूपण प्रक्रिया द्वारा किया जा सकता है। अब वास्तव में अपने सामने बम का विस्फोट करने की आवश्यकता नहीं है। इससे क्या प्रकट होता है ? इससे स्पष्टतया सिद्ध होता है कि ज्ञान शक्ति है। भांरत में इतनी प्रतिभाएं हैं कि हमें किसी से भी डरने की आवश्यकता नहीं है। भारत पर विश्वास रखें अपने पर विश्वास रखें। इस बात का पता लगाये कि आप में से प्रत्येक में कितनी ऊर्जा है। आपके पास शारीरिक ऊर्जा है, मानसिक ऊर्जा है, आध्यात्मिक ऊर्जा है, दैवीय ऊर्जा है।

अतः इस ऊर्जा के अन्वेषक बनें। ईश्वर आपके साथ है।।

श्री सोमपाल

(सन्-31 मार्च 1999)

माननीय कुलाधिपति जी, परिदृष्टा जी, कुलपति जी, आचार्य गण, भाईयों, बहनों और नव-स्नातकों।

आज गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय के दीक्षान्त समारोह के अवसर पर अमर महात्मा स्वामी श्रद्धानन्द जी महाराज की तप स्थली में आकर मैं स्वयं को धन्य मानता हूँ। गुरुकुल कांगड़ी के रूप में शिक्षा प्रणाली का आज से लगभग 100 वर्ष पूर्व प्रवर्तन करके स्वामी जी ने भारतीय संस्कृति के संरक्षण के कार्य को सशक्त किया था। गुरुकुल के आचार्यों, ब्रह्मचारियों तथा कर्मचारियों ने स्वाधीनता, चरित्र निर्माण तथा संस्कृति की रक्षा के लिए अनवरत कार्य किया।

गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय के साथ मेरा सम्बन्ध बहुत पुराना है। मैंने यहाँ के आचार्यों का अनुकरण करके अपने जीवन को संवारा है। मेरे पूज्य पिताजी पं० रघुवीर सिंह शास्त्री यहाँ के कुलपति तथा कुलाधिपति रहे हैं। मैं स्वयं भी यहाँ की विभिन्न शासी-समितियों का सदस्य रहा हूँ। मेरा तो परिवेश ही गुरुकुल में है। स्वामी श्रद्धानन्द का वैदिक संस्कृति को संरक्षण तथा राष्ट्रीय विचार-धारा के प्रचार-प्रसार का स्वप्न साकार हुआ। उनके निर्देशन में जो आचार्यगण अपने अन्तेवासियों को राष्ट्र भक्ति का पाठ पढ़ाया करते थे वे स्वयं भी उन्हीं विचारधाराओं से ओत-प्रोत होते थे। वे उस उत्तरीय को धारण करते थे जिसका ताना और बाना देश भक्ति, स्वाधीनता, स्वावलंबन, सच्चरित्रता, निश्छलता तथा निर्भीकता के धागों से बुना जाता था। आचरण की भाषा मौन होती है।

मुझे प्रसन्नता है कि गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय में प्राचीन एवं नवीन विषयों के अध्ययन, अध्यापन एवं अनुसंधान की समुचित व्यवस्था है। भारतीय संस्कृति के परिचायक एवं पोषक विषयों-वेद, संस्कृति, दर्शन, प्राचीन इतिहास, पुरातत्व एवं संस्कृति तथा योग आदि विषयों के साथ-साथ हिन्दी अंग्रेजी, मनोविज्ञान, राजनीति विज्ञान, अर्थशास्त्र, समाजशास्त्र आदि नवीन विषयों के अध्यापन की भी व्यवस्था है। छात्राओं के लिए संगीत, चित्रकला, गृहविज्ञान आदि की व्यवस्था है। मुझे स्मरण है कि, भारत के प्रथम प्रधानमंत्री पण्डित जवाहरलाल नेहरू ने गुरुकुल कांगड़ी के विज्ञान महाविद्यालय का उद्घाटन करते हुये कहा था- "मैंने गुरुकुल को देखा तथा यहाँ कि कार्य प्रणाली की जानकारी ली। मुझे ऐसा प्रतीत हुआ कि यह संस्था अच्छा कार्य कर रही है।

आज आप लोग गुरुकुल के पवित्र प्रांगण में विद्यानिष्णात होकर दीक्षित हो रहे हैं। सारा देश आपसे अपेक्षा करता है कि आप इस देश के सुयोग्य नागरिक बनकर, इसके निर्माण में तथा उत्थान में योगदान करेंगे। अपनी बुद्धि और विद्या से इस संसार को सुगन्धित कर देंगे। दया, ममता, करुणा, न्यायप्रियता, समता सद्भावना का अजस्र स्रोत आपके हृदय में झर-झर बह उठेगा। आर्य संस्कृति के उच्चतम आदर्श की छाया में, इस विश्व विद्यालय में आपने शिक्षा प्राप्त की है। आप अपने जीवन से उन सभी कलुषों को दूर करना जो मानव की आत्मा को दूषित और अपवित्र करते हैं। आपने ऋषियों की उस पवित्र होमाग्नि को प्राप्त किया है, जो समस्त मलिनता को भस्म करके इस विश्व में आपको स्मृद्धि प्रदान करेगी तथा आपके भविष्य को कंटकाकीर्ण होने से बचायेगी। हमारा आशीर्वाद आपके साथ है। आपका कल्याण हो।

लोकाः समस्ता सुखिनो भवन्तु!
सर्वे भवन्तु सुखिनः सर्वे सन्तु निरामयः।
सर्वे भद्राणि पश्यन्तु मा कश्चित् दुःखभाग् भवेत्।।

श्रीमती दमयन्ती कपूर, आचार्या-कन्या गुरुकुल महाविद्यालय

(देहरादून)

दीक्षान्त अभिभाषणः- 27 अक्टूबर 1999

श्री कुलपति डॉ॰ धर्मपाल ने स्नातिकाओं को अलग से दीक्षान्त समारोह करने का आयोजन किया।

अगणित ऋषि मुनियों की तपोभूमि, महाकुम्भ की तीर्थस्थली इस हरिद्वार नगरी में जनश्रुति के अनुसार साठ हजार सगर पुत्रों का उद्धार करने वाली राजा भगीरथ के मार्ग को प्रशस्त करने वाली गिरिराज हिमालय के मस्तक का अभिषेक करके विनीत भाव से उसके चरणों में प्रवाहित होने वाली पुण्य सलिला भागीरथी के तट पर स्थापित इस कन्या गुरुकुल कांगड़ी द्वारा दीक्षान्त समारोह के शुभावसर पर श्री डॉ॰ धर्मपाल जी कुलपति गुरुकुल कांगड़ी द्वारा मुझे दीक्षान्त भाषण देने के आग्रह को स्वीकार कर इस सभागार में उपस्थित होकर मैं सब महानुभावों का हार्दिक अभिनन्दन एवं धन्यवादी करती हूँ।

इस कन्या गुरुकुल महाविद्यालय हरिद्वार की स्थापना का इतिहास एक संघर्ष की यात्रा है जो सन् 1992 से प्रारम्भ हुई। गुरुकुल कांगड़ी को विश्वविद्यालय की मान्यता मिलने के कुछ काल के पश्चात् ही यह प्रश्न उठा कि कन्याओं के लिए भी विश्व-विद्यालय से स्नातकोत्तर स्तर पर शिक्षा की समुचित व्यवस्था की जाये। कुछ लोगों ने सह-शिक्षा पर बल दिया, आन्दोलन भी किया परन्तु गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय आर्य समाज की संस्था है। महर्षि दयानन्द सरस्वती जी ने सत्यार्थी प्रकाश में लिखा है कि बालक एवं बालिकाओं की संस्थाएं पृथक्-पृथक् होनी चाहिए। गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय के संस्थापक स्वामी श्रद्धानन्द जी, कन्या गुरुकुल देहरादून के संस्थापक श्री आचार्य रामदेव जी, अन्य आर्य समाजी नेताओं एवं आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब की भी यही मान्यता थी। अतः कन्या गुरुकुल देहरादून 8 नवम्बर 1923 को देहली में प्रारम्भ किया गया और कालान्तर में 1926 को देहरादून लाया गया। इसलिये गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय में सह-शिक्षा का प्रश्न उठाना अनुचित ही नहीं अशोभनीय भी है। हरिद्वार की जनता का बारम्बार आग्रह करने पर कुलपति श्री सुभाषचन्द्र विद्यालंकार के कार्य काल में सन् 1992 में यह निर्णय लिया गया कि हरिद्वार में कन्याओं के लिए पृथक महाविद्यालय की स्थापना की जाये। अत+ 4 जनवरी 1993 को आनन्दमीयी सेवासदन में कन्याओं के लिए स्नातकोत्तर स्तर की कक्षाएं प्रारम्भ कर दी गयी।

16 जुलाई 1993 में वर्तमान कुलपति श्री डॉ॰ धर्मपाल जी के द्वारा इन कक्षाओं को आर्य नगर ज्वालापुर में लाया गया और 1994 में महिला महाविद्यालय कनखल में स्थानान्तरित किया गया तत्पश्चात् सन् 1995 में इसके लिए भूमि खरीदी गयी। 12 अक्टूबर 1995 को कुलधिपति श्री सूर्यदेव जी ने इस कन्या गुरुकुल महाविद्यालय हरिद्वार का शिलान्यास किया। 1 जुलाई 1996 को विज्ञान-कक्ष एवं प्रयोगशाला बनकर तैयार हो गयी। अतः एम.एम.सी. कक्षाएं यहीं प्रारम्भ कर दी गयी। 16 जुलाई 97 को सभी भवन बनकर तैयार हो गये। अन्य सभी विषयों की कक्षाएं भी यहीं पर स्थानान्तरित कर दी गई।

प्रिय नव-स्नातिकाओं! हमारी संस्कृति के पास विश्व को देने के लिए आज भी अक्षत भण्डार है, परन्तु संस्कृति के पुराने नैतिक मूल्यों की सुरक्षा, आधुनिक युग में आवश्यक ही नहीं प्रत्युत अनिवार्य भी होनी चाहिए और-

"असतो मा सद्गमय, तमसो सा ज्योतिर्गमय,
मृत्यो र्मा अमृतंगमय" का निनाद बारम्बार गूंजता रहे।

केन्द्रीय शिक्षा राज्यमंत्री, भारत सरकार

श्री जयसिंगराव गायकवाड पाटील

दीक्षान्त अभिभाषण- 24 दिसम्बर, 1999

मान्य!

गुरुकुल कांगड़ी के समस्त अधिकारी गण एवं प्रिय नवस्नातको!

शिक्षा क्षेत्र बहुत ही महत्वपूर्ण क्षेत्र है। इस क्षेत्र की सेवा श्रेष्ठ सेवा है वैसे तो सभी क्षेत्र की सेवाएं श्रेष्ठ हैं। लेकिन First among equals सभी समान श्रेष्ठ सेवाओं में प्रथम सेवा शिखा क्षेत्र की है। शिक्षा राष्ट्र के रचनात्मक विकास में योगदान देती है। राष्ट्रीय चरित्र का, राष्ट्रीय मानस का व राष्ट्र धर्म पर मिटने वाले सुजान नागरिकों का निर्माण करने में समाज में समता व समरसता स्थापित करने में सबसे बड़ा योगादान देने वाला क्षेत्र अगर कोई है तो वह है शिक्षा क्षेत्र। अन्य क्षेत्र में होने वाली क्षति की परिपूर्ति बाद में भी की जा सकती है, लेकिन शिक्षा क्षेत्र में क्षति होती है तो उसकी कमी को पूरा नहीं किया जा सकता। उससे कम से कम एक पीढ़ी बरबाद हो जाती है।

इस महान् क्षेत्र को प्राथमिकता देना, प्रोत्साहित करना, उसे शक्ति प्रदान करना, यह विद्यमान सरकार की नीति है। सरकार चाहती है कि इस क्षेत्र में बहुत सारे सुधार व सुविधा हो। इतना ही नहीं, शिक्षा क्षेत्र में "भारतीय संस्कृति की आत्मा कायम रहे व उसे अत्याधुनिकता से जोड़ दें, यह सरकार की आन्तरिक भावना है।"

इस भावना से जुड़ कर काम करने वालों की समस्याएं कम हों, उसकी साधन सामग्री बढ़े इसके लिए हमारा निरन्तर प्रयास रहा है, रहेगा। क्योंकि आप आचार्य, अध्यापक जो विद्या का धन विद्यार्थियों में वितरित कर रहे हो, ज्ञान से उन्हें ओत-प्रोत कर रह हो आपकी कोई तुलना नहीं है। हमारे शास्त्रों में सबसे बड़ा धन विद्याधन माना गया है इसके दाता आप आचार्यगण हैं।

न चौरहार्यं न च राजहार्यं, न भ्रातृभाज्यं न च भारकारी।
व्यये कृते वर्धते एवं नित्यं, विद्याधनं सर्व धनप्रधानम्।।

विद्या यह एक ऐसा धन है, जिसको चोर या राजा लूट नहीं सकता। जिसका सगे भाई बंटवारा नहीं मांग सकते। यह धन व्यय करने से कभी कम नहीं होता, अपितु वह निरन्तर बढ़ता ही जाता है। इसलिए सभी धनों में विद्याधन को श्रेष्ठ धन, प्रधान धन माना गया है।

जब महर्षि दयानन्द सरस्वती सत्य को आत्मसात कर उसके प्रचार-प्रसार में देश के कोने-कोने में जाकर प्रबोधन कर रहे थे। तब वे भी ताड़ गये की देश, समाज को सही दिशा में गतिमान करना है, सत्य से अवगत करना है, तो शिक्षा में सुधार होना चाहिए। सत्य इतिहास समाज के सामने आना चाहिए। समाज में नैतिकता का स्तर ऊंचा होना चाहिए। उनसे हमारे धर्म संस्कृति, संस्कारों के प्रति आदर भाव उत्पन्न होना चाहिए। सन्मार्ग पर चल उनमें देश व समाज के प्रति कर्त्तव्य की भावना पनपे, फूले फले। उन्होंने इस अज्ञान के अंधकार से समाज को बाहर निकालने का पूरा-पूरा प्रयास किया उनके इस महान प्रयास को किसी आर्य समाजी, भजनोपदेशक ने शब्दांकित किया है।

सभी नव स्नातकों से मैं यही कहूंगा कि आप बढ़े सारा देश और समाज आप पर आस लगाये हुए है। जाइये समाज में घुलमिल जाइये। समाज के प्रति श्रद्धा आदरभाव रखते हुए भ्रष्टाचार वाम मार्ग से बचकर चरित्र सम्पन्न जीवन देश वे समाज की सेवा से लगाइए। आपकी एक अलग से पहचान बनी रहे। आप के जीवन में आपकी हर कृति पर आपके आचार्य प्रसन्न रहे व गर्व से कहे कि यह मेरा शिष्य है।

महामहिम श्री सुरजीत सिंह बरनाला

राज्यपाल, उत्तरांचल सरकार

दीक्षान्त अभिभाषण- 25 मई 2001

देवियों और सज्जनों!

भारत की इस प्रसिद्ध शिक्षा संस्था गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय में आज यहाँ आयोजित इस दीक्षान्त में भाग लेकर मुझे अत्यन्त प्रसन्नता हो रही है। यह हम सबके लिए बड़े गर्व की बात है कि यह वर्ष इस राष्ट्रीय शिक्षा संस्था का शताब्दी वर्ष भी है। इस अवसर पर मैं सबसे पहले गुरुकुल के सभी पदाधिकारियों, आचार्यों और छात्रों को हार्दिक बधाई देता हूँ।

जैसा कि आप सभी जानते हैं कि इस गुरुकुल कांगड़ी की स्थापना मशहूर महात्मा मुंशीराम जी ने जो बाद में स्वामी श्रद्धानन्द बने, 04 मार्च 1902 ई० को की थी। उनके प्रयास से लाहौर की आर्य प्रतिनिधि सभा द्वारा इस शिक्षा संस्था की स्थापना उस समय की गई थी, जब भारत पराधीन था। महात्मा मुंशीराम जी ने महर्षि दयानन्द सरस्वती के आदर्शों को सामने रखकर इस गुरुकुल की स्थापना करते समय यह साफ शब्दों में कहा था कि "मैंने यह संस्था अंग्रेजी सरकार के गुलाम डिप्टी कलेक्टर या कलेक्टर बनाने के लिए नहीं खोली है। इस संस्था को जन्म देने और इसके लिए अपने जीवन का सर्वोच्च भाग लगा देने का मेरा उद्देश्य तो ऐसे स्नातकों को जन्म देना है जो अपनी मातृभूमि को एक बार पुनः संसार का सिरमौर बनाने के लिए सिर धड़ की बाज़र लगा दें।"

यह सन् 1919 की बात है जब वैशाखी के दिन अमृतसर के जलियांवाला बाग में एकत्र मासूम और बेगुनाह देशवासियों को जनरल डायर के आदेश पर बड़ी बेर्दी के साथ गालियों से भून डाला गया था। यह एक ऐसी दिन को दहला देने वाली और रोंगटे खड़े कर देने वाली घटना थी, जिससे महात्मा मुंशीराम की आत्मा तड़प उठी और वे देशवासियों को साथ लेकर पूरी शक्ति से स्वतंत्रता आन्दोलन में कूद पड़े। उन्होंने देश को आजाद कराने के लिए इस बात पर बल दिया कि हमें सभी धर्म एवं वर्ग के लोगों को, चाहे वे हिन्दू हो या मुसलमान, सिक्ख हों या ईसाई तथा दलित हों या पिछड़े एक साथ लेकर अंग्रेजों के खिलाफ संघर्ष करना होगा।

यही वह ज़माना था जब महात्मा गांधी की अपील पर अंग्रेजी वस्तुओं के खिलाफ एक बड़ा जन-आन्दोलन प्रारम्भ हुआ। यहाँ तक कि असहयोग आन्दोलन के दौरान हमारे छात्रों ने अंग्रेजी शिक्षा संस्थाओं में पढ़ना छोड़कर काशी विद्यापीठ, शांति निकेतन, जामियां मिल्लिया और गुरुकुल कांगड़ी जैसी आदर्श राष्ट्रीय शिक्षा संस्थाओं में पढ़ना शुरू कर दिया। इस प्रकार शिक्षा के क्षेत्र में एक इन्किलाबी बदलाव आया और नौजवानों में देश की आजादी के लिए एक नयी ललक और लहर दौड़ गई। उनकी तड़प अन्त में भारत की स्वतंत्रता के रूप में हमारे सामने आयी और हमें आजाद माहौल में सांस लेने का सुनहरा अवसर प्राप्त हुआ।

आजाद भारत में हमारे देश के नेताओं ने अमेरिका, रूस, जापान और ब्रिटेन जैसे विकसित देशों की तरह भारत को एक खुशहाल और आदर्श देश बनाने का महा-अभियान शुरू किया। हमारे संविधान निर्माता

यह बात जानते थे कि संसार के सभी विकसित देश विकास की ऊंचाइयों तक केवल इसी कारण पहुँचे है। कि वहाँ के सभी नागरिक पढ़े-लिखे हैं और देश के विकास में अपनी भागीदारी निभाने की जिम्मेदारी पूरी तरह समझते हैं। यह एक ऐसी सच्चाई है जिसे ध्यान में रखकर ही भारतीय संविधान में 14 वर्ष तक क सभी बच्चों को संविधान लागू होने के 10 वर्षों के अन्दर ही मुफ्त अनिवार्य शिक्षा देने का जिक्र किया गया। इसके अलावा महात्मा गांधी, विनोवा भावे, गुरुदेव रवीन्द्र नाथ ठाकुर तथा डॉ॰ जाकिर हुसैन आदि जैसे अनेक महापुरुषों के बुनियादी शिक्षा को बढ़ावा देने की आवश्यकता पर जोर दिया है। इस अवसर पर मैं विश्वविद्यालय के समस्त अधिकारियों को धन्यवाद देता हूँ, जिन्होंने इस दीक्षान्त समारोह में मुझे भाग लेने का अवसर प्रदान किया।

* * *

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. वेद- ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद, अथर्ववेद
2. उपनिषदे
3. सत्यार्थप्रकाश
4. आर्य (आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब का साप्ताहिक पत्र)
5. सद्धर्म प्रचारक (साप्ताहिक पत्र, महात्मा मुंशीराम द्वारा संचालित)
6. गुरुकुल पत्रिका (गुरुकुल कांगड़ी का मासिक पत्र) उपलब्ध अंक 1941 से 1980 तक प्राय: अंक)
7. प्रकाश- साप्ताहिक पत्र महाशय कृष्ण द्वारा सम्पादित
8. स्वामी श्रद्धानन्द- सत्यदेव विद्यालंकार
9. स्वामी श्रद्धानन्द एक समग्र व्यक्तित्व- सम्पादन निरुपण विद्यालंकार
10. स्वामी श्रद्धानन्द समग्र मूल्यांकन- डॉ॰ रणजीत सिहं
11. आर्य समाज का इतिहास (भाग-3,4 ओर 5) डॉ॰ सत्यकेतु विद्यालंकार
12. नवजागरण के पुरोधा- स्वामी दयानन्द- डॉ॰ भवानीलाल भारतीय
13. भारतवर्ष का इतिहास-भाग 1,2
14. डॉ॰ सत्यव्रत सिद्धान्तालंकार-व्यक्तित्व एवं कृतित्व-सम्पादन डॉ॰ विष्णुदत्त रोकश
15. आचार्य प्रियव्रत वेदवाचस्पति- सम्पादन डॉ॰ विष्णुदत्त राकेश
16. हैदराबाद सत्याग्रह का रक्त रंजित इतिहास पं॰ जयदेव शर्मा विद्यालंकार
17. गुयकुल की आहुति (आर्य सत्याग्रह में) क्षितीश कुमार वेदालंकार
18. स्नातक परिचायिका- सम्पादन डॉ॰ विनोद चन्द्र विद्यालंकार
19. आर्य लेखक कोश- डॉ॰ भवानीलाल भारतीय
20. वार्षिक विवरण- (1982 से 1999 तक) गुरुकुल कांगड़ी वि.वि. द्वारा प्रकाशित
21. गुरुकुल कांगड़ी के साठ वर्ष- मुख्याधिष्ठाता गुरुकुल कांगड़ी

जस्टिस श्री जगभूषण गर्ग

(वर्तमान परिद्रष्टा)

गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय की शिष्ट परिषद् (सीनेट) ने 20 अक्टूबर 2001 को अपनी बैठक में जस्टिस श्री जगभूषण गर्ग को सर्व सम्मति से विश्वविद्यालय का परिद्रष्टा (विजिटर) नियुक्त किया है। एक प्रसिद्ध न्यायाधीश की नियुक्ति होने से विश्वविद्यालय के समस्त कर्मचारियों में हर्ष की लहर दौड़ गई।

आप का जन्म पंजाब की वीर भूमि पर उस समय हुआ, जिस समय हमारा देश स्वतन्त्रता प्राप्ति के लिये संघर्ष कर रहा था। उस समय के पवित्र संस्कार आप को जन्म से प्राप्त हुये थे। आप की प्रारम्भिक शिक्षा रोहतक में प्रारम्भ हुई थी। पंजाब विश्वविद्यालय से आपने स्नातक की उपाधि प्राप्त की थी। उसके बाद श्री जगभूषण ने यह दृढ़ संकल्प लिया कि मैंने सदा न्याय का पक्ष लेना है, इस के लिये मुझे चाहे कुछ भी कुर्बानी देनी पड़े। इस संकल्प के साथ आप ने दिल्ली विश्वविद्यालय से एल.एल.बी. की उपाधि प्राप्त की।

आपने उपन्यायाधीश के रूप में एक अक्टूबर 1958 को सेवा प्रारम्भ की। अक्टूबर 1957 में पंजाब पब्लिक सर्विस कमीशन प्रसिद्धि प्राप्त हुई। अनेक ऐसे जटिल वादों का आपने न्यायपूर्ण निस्तारण किया जिससे आपकी न्यायप्रियता की चर्चा हरियाणा के गाँव-गाँव में फैल गई। इसके पश्चात् आप जज के रूप में अम्बाला, सोनीपत, पानीपत और सिरसा में जिला जज, और सैशन जज के रूप में 1-11-1989 तक न्यायालय में सेवारत रहे।

हरियाणा पंजाब के उच्च न्यायालय में 1989 से अगस्त 1995 तक एक विख्यात न्यायाधीश के रूप में कार्यरत रहे। 1995 में सेवानिवृत्त हुए तभी हरियाणा सरकार ने आपको लोक सेवा आयोग का चेयरमैन 5 वर्ष के लिए नियुक्त कर दिया। हरियाणा सरकार का लोक सेवा आयोग का चेयरमैन बनना यह सिद्ध करता है कि आपकी छवि एक कुशल प्रशासक, न्यायप्रिय, उत्तम चरित्र, ईमानदार और निर्भय व्यक्तित्व के रूप रही है।

आप इस समय गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय के उच्चतम परिद्रष्टा पंद पर प्रतिष्ठित हुये हैं, इस विश्वविद्यालय का शताब्दी वर्ष परिपूर्ण होने को जा रहा है, आप से आशा की जाती है कि आप के कुशल प्रशासन में विश्वविद्यालय बहुत से कीर्तिमान स्थापित करेगा।

परिशिष्ट

3 मार्च 2001 ई॰ से शताब्दी वर्ष के प्रारम्भ होने के अवसर पर शताब्दी समारोह प्रारम्भ हुऐ। दुर्भाग्य से शताब्दी वर्ष प्रारम्भ होते ही गुरुकुल काँगड़ी विश्वविद्यालय के परिसर में पूर्ण रुप से अशान्ति व्याप्त हो गयी। यद्यपि समारोह में केन्द्रीय सरकार ओर उत्तराञ्चल सरकार के अनेक मन्त्री गण भी आये थे। कर्मचारी और प्रशासन के मध्य विवाद उत्पन्न हुआ, परन्तु प्रशासन उस विवाद का समाधान करने में असमर्थ रहा। इन दिनों में समाचार पत्रों में विश्वविद्यालय के विषय में अनेक समाचार छपते रहे। 4 जून 2001 को गुरुकुल काँगड़ी विश्वविद्यालय का सम्पूर्ण परिवेश हतप्रभ हो गया, जब यह समाचार फैला कि इस संस्था की 198 बीघा जमीन केवल 5 रुपये वर्ग फीट के भाव से बेच दी गयी, जब कि इस भूमि का मूल्य के रूप में 30 करोड रुपया सहज में प्राप्त किया जा सकता था। यह कहना अतिशयोक्ति पूर्ण नहीं होगा कि गुरुकुल में हा-हाकार सा मच गया था। कर्मचारियों में आर्य विद्या सभा के सदस्यों के प्रति ऐसे घृणित भाव उत्पन्न हुये कि गुरुकुल भूमि बचाओं संघर्ष समिति का गठन किया गया। डॉ॰ भारत भूषण विद्यालङ्कार इस संघर्ष समिति के अध्यक्ष निर्वाचित किये गये डॉ॰ प्रदीप जोशी को इस संघर्ष समिति का संयोजक चुना गया इस संघर्ष समिति ने कुलपति डॉ॰ धर्मपाल से पूछा कि- 'आपने जमीन बेचने वालों के साथ मिल कर षड्यन्त्र पूर्वक जमीन बेचने के प्रस्ताव पर क्यों हस्ताक्षर किये है ?

कुलपति डॉ॰ धर्मपाल ने अपने स्पष्टीकरण में बहुत कुछ कहा- कि इससे पूर्व भी यह जमीन बेची गयी थी। इस उत्तर से कर्मचारी गण सन्तुष्ट नहीं हुऐ, उन्होंने कहा कि इससे पूर्व भूमि शहर में स्थित बेची गयी थी। विश्वविद्यालय परिसर की जमीन के बेचने में मुख्य भूमिका आपकी रही है आप से हम समस्त कर्मचारी आपका सामाजिक बहिष्कार करते हैं। कर्मचारियों के कई नेताओं ने यहाँ तक भी कहा कि आप गुरुकुल काँगड़ी विश्वविद्यालय से तुरन्त चले जायें। हम गुरुकुल को गुरुकुल माता कहते हैं आप ने एक प्रकार से अपनी माता को ही बेच दिया। तीन दिन के पश्चात् डॉ॰ धर्मपाल पं॰ हरिवंश लाल शर्मा, कुलाधिपति के पास जालन्धर गये, वहाँ उन्होंने अपना त्यागपत्र माननीय कुलाधिपति को सौंप दिया। तीन अक्टूबर 2001 से शिक्षक एवं समस्त कर्मचारी गण धरने पर बैठ गये।

संघर्ष समिति के तीन विभाग बनाये गये, जिसमें प्रथम विभाग धरने का आयोजन एवं व्यवस्था करता था। इस विभाग के अध्यक्ष डॉ॰ श्रवण कुमार, अंग्रेजी विभाग को बनाया गया। दूसरा विभाग धन की व्यवस्था हेतु बनाया गया इसके अध्यक्ष डॉ॰ भारत भूषण विद्यालङ्कार घोषित किये गये। तीसरा विभाग कानून एवं जनहित याचिका द्वारा विक्रय की गयी भूमि को वापिस लाने हेतु संगठित किया गया इसके अध्यक्ष डॉ॰ जयदेव वेदालङ्कार को मनोनीत किया गया।

यह उपर्युक्त धरना 21 अक्टूबर तक चलता रहा। शिष्ठ परिषद् की बैठक के पश्चात् माननीय कुलाधिपति ने समस्त कर्मचारियों को सम्बोधित करते हुऐ यह आश्वासन दिया कि यह समस्त भूमि गुरुकुल काँगड़ी विश्वविद्यालय की है जो भूमि बेच दी गयी है उसको वापिस लाने के लिए न्यायालय में मुकदमा किया जायेगा। इस आश्वासन के पश्चात् संघर्ष समिति के अध्यक्ष ने यह घोषणा की इस धरने को दशहरा अवकाश के कारण 1 नवम्बर तक स्थगित किया जाता है। 2 नवम्बर 2001 को संषर्घ समिति की पुनः बैठक की गयी, उसी दिन यह ज्ञात हुआ कि जिस आर्य विद्या सभा ने जमीन बेची है उसकी बैठक 9

नवम्बर को होने जा रही है इस समाचार को सुनकर समस्त कर्मचारी क्रोधित हो गये और यह निर्णय लिया कि इस धरने को कार्यालय से हटाकर सीनेट हाल के सामने रखा जायेगा। 9 नवम्बर को लगभग 250 कर्मचारी गण जब अपनी संघर्ष समिति का आयोजन कर रहे थे। उसी समय कई कारों में बैठकर वे लोग आये तो संघर्षरत कर्मचारी ने उनको सीनेट हाल में जाने से रोका। उनको कर्मचारियों को समझाने का प्रयास करना चाहिए था परन्तु ऐसा न करके उन्होने कर्मचारियों पर हमला बोल दिया, इतना ही नहीं किया अपितु अनेक हवाई फायर भी किये जब सुरक्षा कर्मचारियों ने हवाई फायर किये तो वे भाग खड़े हुए इस 'झगड़े में श्री महावीर सिंह यादव सहित अनेक कर्मचारी घायल हो गये।

इस ग्रन्थ के लेखक को यह न चाहते हुए भी लिखना पड़ रहा कि यह शताब्दी वर्ष अत्यधिक दु:खदायी सिद्ध हुआ है। परन्तु निष्कर्ष रुप में यह अवश्य कहा जा सकता है कि इस संस्था का जन्म ही संघर्ष में ही हुआ था सौ वाँ वर्ष भी विवाद और संघर्ष में बीत रहा है। इससे यह सिद्ध होता है कि इसके संस्थापक स्वामी श्रद्धानन्द जी की तपस्या के परमाणु अभी शेष हैं जो अन्याय को सहन नहीं कर पाते हैं। यदि गुरुकुल काँगड़ी के सम्पूर्ण सौ वर्ष के इतिहास का सिहांवलोकन किया जाय तो यह परिणाम निकाला जा सकता है कि यह संस्था अगले सौ वर्षों तक भी जीवित रहेगी। इसका स्वरुप क्या होगा? इसकी भविष्यवाणी करना कठिन है।

विश्वविद्यालय के वर्तमान अधिकारी

कुलाधिपति	पं॰ हरबंशलाल शर्मा
परिद्रष्टा	जस्टिस जे.पी. गोयल
कुलपति	प्रो॰ वेदप्रकाश शास्त्री (का॰ वाहक)
आचार्य एवं उपकुलपति	प्रो॰ वेदप्रकाश शास्त्री
कुलसचिव	डॉ॰ महावीर अग्रवाल
वित्ताधिकारी	श्री जयसिंह गुप्ता
पुस्तकालयाध्यक्ष	डॉ॰ जगदीश प्रसाद विद्यालंकार

शताब्दी समापन समारोह का संयोजक डॉ॰ भारत भूषण विद्यालंकार प्राच्य विद्या संकाय अध्यक्ष एवं वेद विभागाध्यक्ष को मनोनीत किया गया। इस शताब्दी समारोह के प्रारम्भ से ही प्राकृतिक आपदा से विश्वविद्यालय ग्रस्त रहा है, इसलिए अतिवृष्टि के कारण गंगा में बाढ़ आ जाने से विश्वविद्यालय के प्रशासन ने वेद मन्दिर में ही 4 मार्च 2002 को समापन समारोह सादगी के साथ मनाया। इस समारोह में तीनों आर्य प्रतिनिधि सभाओं के कुलाधिपति सहित सम्मिलित नहीं हो पाये। गुरुकुल कांगड़ी के वयोवृद्ध एवं ज्ञानवृद्ध आचार्य डॉ॰ रामनाथ वेदालंकार मुख्य अतिथि के रुप में सम्मिलित हुए। उनके साथ अन्य चार वयोवृद्ध स्नातक, जिनमें श्री धर्मवीर विद्यालंकार, डॉ॰ कृष्णकुमार आयुर्वेदालंकार, श्री आत्रेय जी और आयुर्वेदालांकर का प्रो॰ वेदप्रकाश शास्त्री आचार्य ने शाल भेंट कर सम्मान किया।

इस अवसर पर डॉ॰ विष्णुदत्त 'राकेश' डीन मानविकी संकाय ने भाषण देते हुए कहा कि गुरुकुल कांगड़ी की स्थापना जिन आदर्शों एवं मूल्यों को लेकर हुई थी उन मूल्यों एवं आदर्शों का संरक्षण इस संस्थान में होना चाहिए अन्यथा यह संस्था समाप्त हो जायेगी। डॉ॰ जयदेव वेदालंकार आचार्य दर्शन-विभाग ने अपने उद्बोधन में कहा कि इस संस्था में संघर्ष इसके जन्म काल के पूर्व से ही है। महात्मा मुंशी राम ने गुरुकुल की स्थापना का प्रस्ताव आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के सम्मुख रखा था उसी समय से गुरुकुल की स्थापना का विरोध भी प्रारम्भ हो गया था। प्रस्ताव में यह प्रथम शर्त थी की लाला मुंशी राम सर्वप्रथम 30 हजार रुपये एकत्रित करके सभा के कोष में जमा करायें। महात्मा मुंशी राम ने समस्त भारत में इस पुण्य कार्य हेतु भ्रमण किया गुरुकुल की स्थापना के महत्व को आर्य समाजों में समझाया इससे गुरुकुल संस्था के प्रति सामान्य व्यक्तियों की अत्यधिक रुचि उत्पन्न हुई और महात्मा मुंशी राम को आशातीत सफलता प्राप्त हुई। डॉ॰ वेदालंकार ने यह भी बतलाया की गुरुकुल की स्थापना का बाल्यकाल और स्वतन्त्रता आन्दोलन का बाल्य काल भी लगभग साथ ही साथ प्रारम्भ हुआ है। इसलिए यहां से निकले हुए स्नातक राष्ट्रभक्ति से ओतप्रोत थे। इस संस्था ने अपने स्थापना काल से अनेक उतार-चढ़ाव अवलोकित किये हैं। इस संस्था में कभी भी प्रशासन निरंकुश नहीं हो पाया जब भी प्रशासन ने निरंकुश होने का प्रयास किया, वह प्रशासक टिक नहीं पाया तथा उसको जाना पड़ा। इसलिये यह कहना अतिशयोक्ति नहीं होगा कि संघर्ष ही इस संस्था के लिए संजीवनी का कार्य करता रहा है। गुरुकुल कांगड़ी 100 वर्ष का होने पर भी युवा ही है और अपने उत्तरोत्तर विकास हेतु सतत् प्रयत्नशील है।

इस अवसर पर श्री धर्मवीर विद्यालंकार, डॉ॰ कृष्ण कुमार, कुलसचिव डॉ॰ महावीर अग्रवाल और विद्यालय विभाग के ब्रह्मचारियों ने भी श्लोकोच्चारण एवं भाषण आदि प्रस्तुत किये। आचार्य रामनाथ वेदालंकार ने मुख्य अतिथि के रुप में बोलते हुए बतलाया कि इस संस्था के संस्थापक स्वामी श्रृंद्धानन्द आचार्य ही नहीं अपितु माता एवं पिता भी थे। वे ब्रह्मचारियों के प्रेरणा-स्रोत थे, उन्होंने अनेक संस्मरण सुनाते हुए कहा कि जब कभी क्रीड़ा आदि स्थलों में गुरुकुल के ब्रह्मचारी पराजित से हो रहे होते थे, स्वामी श्रद्धानन्द के वहां पहुंचने पर हारते हुए ब्रह्मचारी अपनी हार को जीत में परिवर्तित कर देते थे। उस समय स्वामी श्रृद्धानन्द की जय के नारे गूंज जाते हैं।

अध्यक्षीय भाषण देते हुए आचार्य वेदप्रकाश शास्त्री ने कहा कि हमें अपनी संकल्प शक्ति को सुदृढ़ करना होगा जो संकल्प शक्ति स्वामी श्रृद्धानन्द में थी उस ही संकल्प शक्ति को हमें जाग्रत करना होगा।

सभा का संचालन करते हुए डॉ॰ भारत भूषण विद्यालंकार ने गुरुकुल शिक्षा पद्धति की विस्तार पूर्वक व्याख्या प्रस्तुत की। इस समारोह के सम्पन्न होने के पश्चात् समस्त गुरुकुल परिवार ने मिलकर सहभोज के रुप में मध्याह्न कालीन भोजन किया।

एवं वेद-विभाग के 45 प्रतिभागियों ने सक्रिय भाग लिया। इस अवसर पर स्थानीय एवं बाहर के 15 विश्वविद्यालयों के प्रोफेसर विद्वानों ने इस पुनश्चर्या पाठ्यक्रय में भाषण एवं प्रशिक्षण दिया था। इस पुनश्चर्या पाठ्यक्रम के समन्वयक प्रो॰ वेदप्रकाश शास्त्री आचार्य एवं कार्यवाहक कुलपति तथा सह समन्वय डॉ॰ भारत भूषण विद्यालंकार डी प्राच्य विद्या संकाय ने सफलता पूर्वक संचालन किया।

28 नवम्बर 2001 से 18 दिसम्बर 2001 तक दर्शन विभाग के तत्वावधान में दर्शन एवं योग विषय में पुनश्चर्या पाठ्यक्रम आयोजित किया गया। इस पुनश्चर्या पाठ्यक्रम का उद्घाटन समारोह प्रो॰ बी.डी. जोशी अध्यक्ष जीव-विज्ञान एवं पर्यावरण संकाय की अध्यक्षता में सम्पन्न हुआ। मुख्य अतिथि के रुप में प्रो॰ वेदप्रकश शास्त्री आचार्य एवं उपकुलपति उपस्थित थे। कुलसचिव डॉ॰ महावीर अग्रवाल ने सभी प्रतिभागियों का धन्यवाद यि। इस पुनश्चर्या पाठ्यक्रम में 15 विश्वविद्यालयों के दार्शनिक एवं योग के विद्वानों ने भाषण एवं प्रशिक्षण प्रदान किया। इस पुनश्चर्या पाठ्यक्रम के समन्यवक प्रो॰ डॉ. जयदेव वेदालंकार ने अपने सहयोगी प्रो॰ विजयपाल शास्त्री, डॉ॰ त्रिलोक चन्द, डॉ॰ यू.एस.विष्ट और डॉ॰ ईश्वर भारद्वाज के सहयोग से पुनश्चर्या पाठ्यक्रम को सफलता पूर्वक सम्पन्न किया।

29 दिसम्बर 2001 में पर्यावरण विभाग के तत्वावधान में राष्ट्रीय संगोष्ठी का आयोजन किया गया। संगोष्ठी के निदेशक डॉ॰ बी.डी.जोशी अध्यक्ष पर्यावरण विभाग ने अपने सहयोगी प्राध्यापकों के सहयोग से इस राष्ट्रीय संगोष्ठी का सफलता पूर्वक आयोजन कियां। इस संगोष्ठी में 50 विश्वविद्यालयों के 150 वैज्ञानिक विद्वानों ने अपने-अपने शोध-पत्र वाचन किये। सभी वैज्ञानिक विद्वानों ने यह चिन्ता अभिव्यक्त की थी कि वर्तमान समय में प्रदूषण के कारण पर्यावरण के विषय में अनेक समस्यायें उत्पन्न हो गई हैं।

22 से 24 फरवरी 2002 में प्रबन्धन संकाय के तत्वावधान में वैदिक मूल्य विषय पर राष्ट्रीय संगोष्ठी का आयोजन किया गया, जिसमें भारतवर्ष के विभिन्न विश्वविद्यालयों के विभिन्न विषयों के 200 विद्वानों ने अपने-अपने शोध-पत्रों को वाचन किया। इस संगोष्ठी में यह चिन्ता अभिव्यक्त की गई की वर्तमान युग में मानवीय मूल्यों का बड़ी तीव्रता से ह्रास हो रहा है। वेद के शास्वत मूल्यों के द्वारा ही नैतिक मूल्यों की पुनः स्थापना की जा सकती है। इस आयोजन के निदेशक प्रो॰ सतीश धमीजा, संयोजक डॉ॰ वी. के. सिंह ने अपने समस्त प्राध्यापकों के सहयोग से संगोष्ठी को सफलता पूर्वक सम्पन्न किया।

22 से 24 फरवरी 2002 तक आंग्ल भाषा विभाग में भारतीय एवं कनाडियन साहित्य परिषद का वार्षिक अधिवेशन आयोजित किया गया इस वार्षिक अधिवेशन में लगभग 225 विभिन्न विश्वविद्यालयों के आंग्ल भाषा साहित्य के विद्वानों ने अपने शोध-पत्र वाचन किये। इस अध्रिवेशन में 9 विदेशी विद्वानों ने भी भारत और कनाड़ा के साहित्य की तुलना क़रते हुए अपने शोध पत्र प्रस्तुत किये। डॉ॰ श्रवण कुमार ने अपने प्राध्यापक सहयोगियों के सहयोग से स्थानीय सचिव के रुप में निष्ठा पूर्वक अपने कर्त्तव्य का निर्वहन करते हुए इस अधिवेशन को सफलता पूर्वक आयोजित किया।

शताब्दी समापन समारोह- 4 मार्च 2002 को गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय की स्थापना को 100 वर्ष सम्पूर्ण हुए हैं। सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा ने अपने तत्वावधान में शताब्दी समापन समारोह आयोजित करने का निश्चय किया। इस समापन समारोह को अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर आयोजित करने के लिए पर्याप्त समय की आवश्यकता थी इसलिए गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय के प्रशासन ने यह निर्णय लिया कि 4 मार्च 2002 को गुरुकुल की स्थापना के 100 वर्ष पूर्ण होते हैं, इसलिए 4 मार्च 2002 को स्थानीय स्तर पर गुरुकुल कांगड़ी की जहां स्थापना कांगड़ी ग्राम के वन खण्ड में हुई थी, जहाँ पर अब भी पुराने भवनों के अवशेष अवशिष्ट हैं उस पुण्य भूमि में शताब्दी सम्पन्न समारोह को आयोजित किया जाये। इस

शताब्दी वर्ष प्रारम्भ होते ही, प्रायः सम्पूर्ण वर्ष अशान्त ही बीता। 9 अप्रैल 2001 को नये कुलाधिपति पं० हरिवंश लाल शर्मा ने नये कुलाधिपति के रुप में गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय का प्रबन्ध तन्त्र को सम्भाला। गुरुकुल विश्वविद्यालय के इतिहास में यह देखने को मिलता है कि, कुलाधिपति के परिवर्तन होने पर प्रायः समस्त विश्वविद्यालय का प्रशासन परिवर्तित हो जाया करता है। जो अपने आप को प्रशासन के अंग समझते हैं, वे प्रायः करके सत्ता विहीन से हो जाया करते हैं। यह सम्पूर्ण शताब्दी वर्ष अशान्त एवं अनेक विवादों से व्याप्त होने पर भी, विश्वविद्यालय की शैक्षणिक गतिविधियाँ अपने पूर्व निर्धारित कार्यक्रमों के अनुसार सफल रुप में सम्पन्न हुई थी।

24 से 26 फरवरी 2001 में दर्शनशास्त्र विभाग में युक्ति-दीपिका में "सांख्य-सिद्धान्त" विषय पर भारतीय दार्शनिक अनुसन्धान परिषद् नई दिल्ली के सौजन्य से राष्ट्रीय सेमिनार का आयोजन किया गया। इस सेमिनार में मुख्य अतिथि के रुप में डॉ० आर.सी. प्रधान सचिव सदस्य भारतीय दार्शनिक अनुसन्धान परिषद नई दिल्ली, सम्मिलित हुए थे। इस संगोष्ठी में 45 (पैंतालिस) विश्वविद्यालयों के 60 (साठ) विद्वान प्रतिनिधियों ने अपने अपने शोध पत्र वाचन किये। डॉ० जयदेव वेदालंकार प्रोफेसर एवं अध्यक्ष दर्शन विभाग इस संगोष्ठी के निदेशक थे।

दर्शन विभाग में ही 28 अक्टूबर से 1 नवम्बर 2001 तक इण्डियन फिलोसपिकल कांग्रेस का 76 वां वार्षिक अधिवेशन सम्पन्न हुआ। इस अधिवेशन में भारत के समस्त विश्वविद्यालयों के दर्शन विभागों के 250 विद्वान, प्रतिनिधि गण ने अपने-अपने शोध-पत्र, ज्ञान मीमांसा, तत्व मीमांसा, आचार शास्त्र, तर्क शास्त्र और जीवन मूल्यों विषयों पर वाचन किये। इस संगोष्ठी के मुख्य अतिथि स्वामी ओंकारानन्द सरस्वती (जर्मन मूल) थे। उन्होंने अपने उद्घाटन भाषण में कहा कि समस्त विश्व में जो इस समय अशान्ति एवं तनाव व्याप्त है उनका मूल कारण, भारतीय योग एवं ध्यान को छोड़ देना है। जब मानव जाति के जीवन में योग एवं आध्यात्मिकता नहीं रहती है तो नैतिक मूल्यों का पतन हो जाया करता है, नैतिक मूल्यों के पतन से समाज में हिंसा, क्रूरता और आतंकवादी प्रवृत्तियाँ प्रबल हो जाती हैं, जो इस युग में सर्वत्र दृष्टिगोचर हो रही हैं।

इण्डियन फिलोसफिकल कांग्रेस के अध्यक्ष डॉ० डी.पी.चट्टोपाध्याय ने अपने अध्यक्षीय भाषण में कहा वर्तमान युग एक संक्रमण काल का युग है इस युग में दर्शन के विद्वान ही कोई मार्ग प्रशस्त कर सकते हैं, हमें भी वैदिक कालीन ऋषि, कणाद, गौतम, व्यास और कपिल मुनियों की तरह उद्दात जीवन मूल्यों को धारण करके वर्तमान युग की मानव जाति का मार्ग प्रशस्त करना चाहिए। स्थानीय सचिव डॉ० जयदेव वेदालंकार ने वर्तमान युग में दर्शन की आवश्यकता पर जोर देते हुए कहा कि हमारे जीवन मूल्य दर्शन के बिना सुरक्षित नहीं रह सकते हैं।

गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय के आचार्य एवं उपकुलपति प्रो० वेदप्रकाश शास्त्री ने उद्बोधन देते हुए कहा कि भारतीय मनीषियों का चिन्तन हमारे लिये सदा प्रेरणा देता रहा है और देता रहेगा हमें उसे अपने जीवन में धारण करना चाहिए। विश्वविद्यालय के कुलसचिव डॉ० महावीर अग्रवाल ने सभी अतिथियों का स्वागत एवं धन्यवाद किया। दर्शन विभाग के समस्त प्राध्यापक गण जिनमें प्रो० विजयपाल शास्त्री, डॉ० त्रिलोक चन्द्र, डॉ० उमराव सिंह विष्ठ, और डॉ० सोहन पाल सिंह आर्य ने इस अधिवेशन को सफल बनाने के लिए रात-दिन परिश्रम किया।

5 नवम्बर 2001 से 26 नवम्बर 2001 तक संस्कृत विभाग के तत्वावधान में विश्वविद्यालय में प्रथम बार पुनश्चर्या पाठ्यक्रम आयोजित किया गया। इस पाठ्यक्रम में विभिन्न विश्वविद्यालयों के संस्कृत विभाग

लेखक परिचय

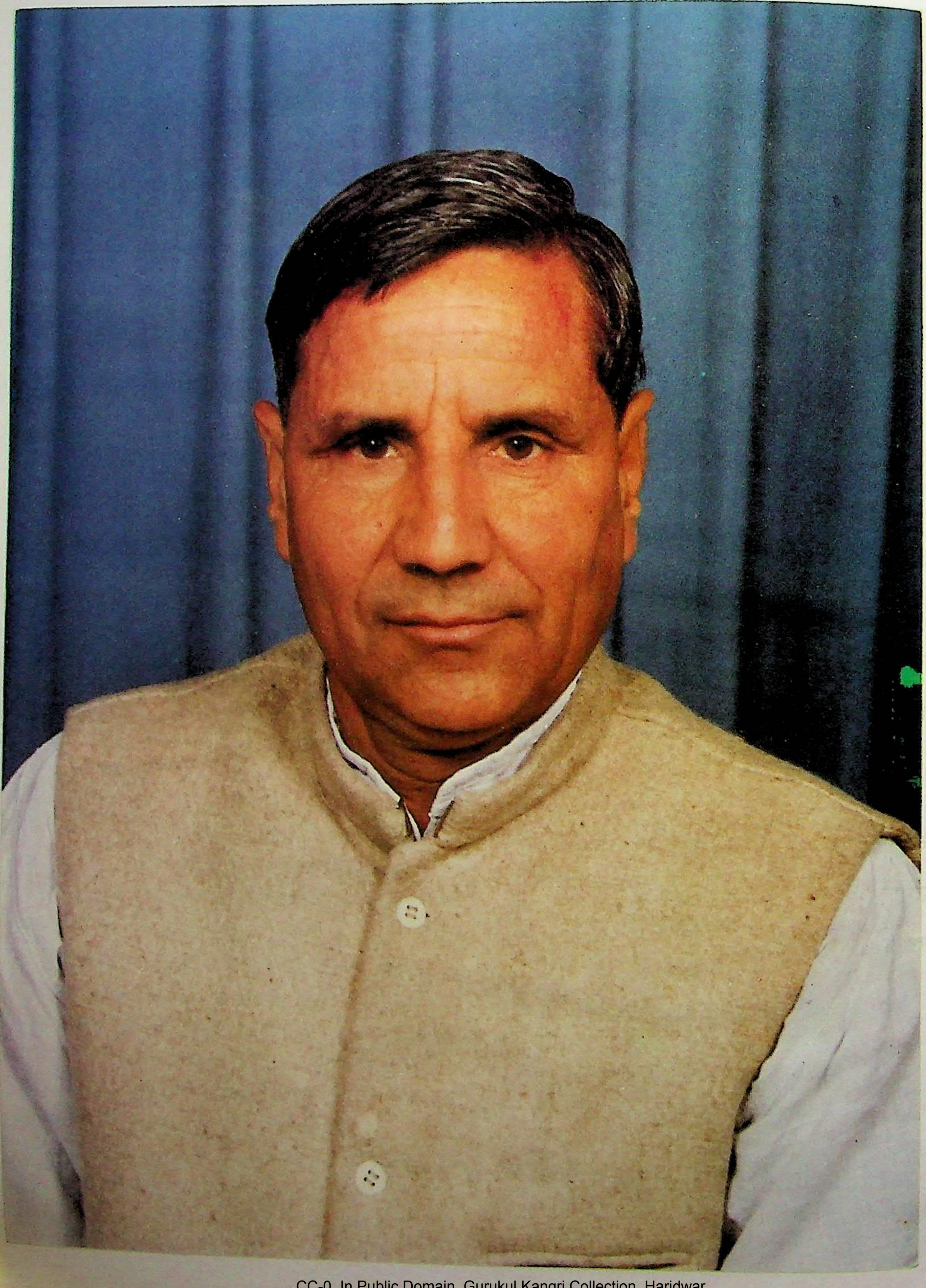

लेखक परिचय

नाम : डॉ॰ जयदेव वेदालंकार

पिता का नाम : श्री जुगलाल सिंह

जन्म स्थान : झड़ौदाकलां, नई दिल्ली-43

जन्मतिथि : 5-12-1941

शिक्षा : हाईस्कूल-पंजाब विश्वविद्यालय, चण्डीगढ़।

वेदालंकार : गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय, हरिद्वार।

सिद्धान्तभूषण : श्रीमद् दयानन्द-उपदेशक महाविद्यालय, यमुनानगर।

एम.ए. : गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय, हरिद्वार।

पी-एच.डी. : मेरठ विश्वविद्यालय

डी॰लिट्॰ : रांची विश्वविद्यालय (बिहार)

शोध ग्रन्थ : वैदिक दर्शन, भारतीय दर्शन की समस्यायें, महर्षि दयानन्द की विश्वदर्शन को देन, भारतीय दर्शन में प्रमाण, उपनिषदों का तत्त्वज्ञान, वैदिक साहित्य का इतिहास, भारतीय दर्शनः- तत्त्व एवं ज्ञानमीमांसा के मौलिक सम्प्रत्यय।

पद : पूर्व कुलसचिव 4 वर्ष वित्ताधिकारी 2 वर्ष और संकाध्यक्ष

वर्तमान पद : प्रोफेसर एवं अध्यक्ष दर्शन विभाग 6 वर्ष

राष्ट्रीय पुरस्कार : (1) : स्वामी प्रणवानन्द राष्ट्रीय पुरस्कार (अखिल भारतीय दर्शन परिषद की ओर से) वर्ष 1987 राशि-5000/- (2) : श्री मेघजी भाई आर्य साहित्य पुरस्कार मुम्बई-1998 राशि-15000/- रुपये (रजत ट्राफी) (3) : उत्तर-प्रदेश संस्कृत अकादमी लखनऊ-विशेष पुरस्कार, राशि-रु. 11000/- मात्र सन् 1999, (4) : वेदवेदाङ्ग राष्ट्रीय पुरस्कार स्वामी गंगेश्वरानन्द वेद प्रतिष्ठान, नासिक (महाराष्ट्र) 2000 ईस्वी, राशि-21000/- रुपये नकद।

शिक्षक वर्ग

संकाय विभाग	नाम	पद
वेद विभाग	डॉ॰ भारत भूषण	प्रोफेसर
	डॉ॰ मनुदेव बन्धु	प्रोफेसर
	डॉ॰ रूपकिशोर शास्त्री	वरिष्ठ प्रवक्ता
	डॉ॰ दिनेशचन्द्र शास्त्री	वरिष्ठ प्रवक्ता
	डॉ॰ सत्यदेव निगमालंकार	वरिष्ट प्रवक्ता
संस्कृत विभाग	श्री वेदप्रकाश शास्त्री	प्रोफेसर
	डॉ॰ सोमदेव संताशु	रीडर
	डॉ॰ रामप्रकाश शर्मा	रीडर
	डॉ॰ ब्रह्मदेव	वरिष्ठ प्रवक्ता
दर्शनशास्त्र विभाग	डॉ॰ जयदेव वेदालंकार	प्रोफेसर
	डॉ॰ विजयपाल शास्त्री	प्रोफेसर
	डॉ॰ त्रिलोक चन्द	रीडर
	डॉ॰ उमराव सिंह बिष्ट	रीडर
	डॉ॰ सोहनपाल सिंह आर्य	वरिष्ठ प्रवक्ता
प्रा॰भा॰ इतिहास	डॉ॰ श्यामनारायण सिंह	प्रोफेसर
	डॉ॰ कश्मीर सिंह भिंडर	रीडर
	डॉ॰ राकेश शर्मा	रीडर
	डॉ॰ प्रभात कुमार	वरिष्ठ प्रवक्ता
	डॉ॰ देवेन्द्र कुमार	वरिष्ठ प्रवक्ता
योग विभाग	डॉ॰ ईश्वर भारद्वाज	प्रवक्ता
हिन्दी विभाग	डॉ॰ विष्णुदत्त राकेश	प्रोफेसर
	डॉ॰ संतराम वैश्य	प्रोफेसर
	डॉ॰ ज्ञानचंद रावल	रीडर
	डॉ॰ भगवानदेव पाण्डे	रीडर
	श्री कमलकान्त बुधकर	वरिष्ठ प्रवक्ता
अंग्रेजी विभाग	डॉ॰ मुकेश रंजन वर्मा	प्रोफेसर
	डॉ॰ श्रवण कुमार शर्मा	रीडर
	डॉ॰ अंबुज कुमार शर्मा	रीडर
	डा॰ कृष्ण अवतार अग्रवाल	रीडर
मनोविज्ञान विभाग	डॉ॰ सूर्यकुमार श्रीवास्तव	रीडर
	डॉ॰ चन्द्रपाल खोखर	रीडर
	डॉ॰ हरिशंकार अस्थाना	प्रवक्ता

संकाय विभाग	नाम	पद
गणित विभाग	डॉ॰ एस.एल.सिंह	प्रोफेसर
	डॉ॰ वीरेन्द्र अरोड़ा	प्रोफेसर
	डॉ॰ विजयेन्द्र कुमार शर्मा	प्रोफेसर
	डॉ॰ महिपाल सिंह	प्रोफेसर
	डॉ॰ प्रभाकर प्रधान	प्रवक्ता
भौतिकी विभाग	श्री हरिश्चन्द्र ग्रोवर	रीडर
	डॉ॰ राजेन्द्र कुमार अग्रवाल	रीडर
	डॉ॰ परमानन्द प्रकाश पाठक	रीडर
रसायन विभाग	डॉ॰ ऐ.के. इन्द्रायण	प्रोफेसर
	डॉ॰ रामकुमार पालीवाल	प्रोफेसर
	डॉ॰ कौशल कुमार	प्रोफेसर
	डॉ॰ रजनीश दत्त कौशिक	प्रोफेसर
	डॉ॰ रणधीर सिंह	रीडर
	डॉ॰ श्री कृष्ण	रीडर
कम्प्यूटर विभाग	डॉ॰ विनोद कुमार शर्मा	प्रोफेसर
	श्री कर्मजीत भाटिया	रीडर
	श्री विवेक कुमार	प्रवक्ता
जन्तु एवं पर्यावरण विज्ञान	डॉ॰ बिशम्भर दत्त जोशी	प्रोफेसर
	डॉ॰ तिलकराज सेठ	रीडर
	डॉ॰ अशोक कुमार चोपड़ा	प्रोफेसर
	डॉ॰ देवराज खन्ना	रीडर
	डॉ॰ देवेन्द्र सिंह मलिक	प्रवक्ता
	डॉ॰ दिनेश भट्ट	रीडर
	डॉ॰ प्रकाश चन्द्र जोशी	वरिष्ट प्रवक्ता
वनस्पति एवं सूक्ष्म जीव विज्ञान	श्री दिनेश कुमार महेश्वरी	प्रोफेसर
	श्री पुरूषोत्तम कौशिक	प्रोफेसर
	श्री रमेश चन्द दूबे	रीडर
	श्री गंगा प्रसाद गुप्ता	रीडर
प्रशासन	डॉ॰ महावीर अग्रवाल	कुलसचिव
	श्री जयसिंह गुप्ता	वित्ताधिकारी
	श्री आनन्द कुमार सिंह	अनुभाग अधिकारी
	श्री महेन्द्र सिंह नेगी	अनुभाग अधिकारी
	श्री यशपाल राणा	अनुभाग अधिकारी
	श्री गिरीश चन्द्र सुन्दरियाल	निजी सचिव कुलपति
	श्री कमलेश नैथानी	निजी सहायक कुलसचिव

संकाय विभाग	नाम	पद
	श्री करतार सिंह	सम्पदा अधिकारी
	श्री गंधर्व सेन	उद्यान अधिकारी
	श्री बेद पाल सिंह	सुरक्षाधिकारी
	श्री रामनरेश शर्मा	वरिष्ठ सहायक
	श्री प्रेम चन्द्र जुयाल	सहायक
	श्री देव प्रसाद	सहायक
प्रबन्धन संकाय	श्री सोमपाल	सहायक
प्रशासन	डॉ॰ प्रदीप कुमार जोशी	सहायक, जनसम्पर्क अधिकारी
	श्री संजीव राजपूत	जूनियर इन्जीनियर
	श्री कैलाश वैष्णव	विद्युतकार
कम्प्यूटर केन्द्र	श्री शशिकान्त शर्मा	जूनियर स्टेनोग्राफर
प्राच्य विद्या संकाय	श्री हेमन्त कुमार	जूनियर असिस्टन्ट/टाइपिस्ट
विज्ञान संकाय	श्री महावीर यादव	जूनियर असिस्टेन्ट/टाइपिस्ट
ज़ीव विज्ञान संकाय	श्री राज पाल सिंह चौहांन	जूनियर असिस्टेन्ट/टाइपिस्ट
प्राच्य विद्या संकाय	श्री कृष्ण कुमार शर्मा	जूनियर असिस्टेन्ट/टाइपिस्ट
प्रशासन	श्री वीरेन्द्र असवाल	जूनियर असिस्टेन्ट/टाइपिस्ट
	श्री रामस्वरूप	जूनियर असिस्टेन्ट/टाइपिस्ट
पुस्तकालय	श्री बालकृष्ण शुक्ला	जूनियर असिस्टेन्ट/टाइपिस्ट
विज्ञान संकाय	श्री एम॰ जी॰ उपाध्याय	जूनियर असिस्टेन्ट/टाइपिस्ट
मानविकी संकाय	श्री नन्द किशोर	जूनियर अस्टिेन्ट/टाइपिस्ट
	श्री नवनीत	वरिष्ठ प्रवक्ता
प्रौद्यागिकी एवं अभियांत्रिकी महाविद्यालय	श्री रजत अग्रवाल	प्रवक्ता मैकेनिकल
	श्री मुरली मनोहर तिवारी	प्रवक्ता रसायन
	श्री भगवती प्रसाद चमोला	एक वर्ष के लिए
	श्री सुनील पंवार	प्रवक्ता भौतिकी
प्रबन्धन महाविद्यालय	श्री सतीश चन्द्र धमीजा	प्रोफेसर
	श्री सतेन्द्र पाल सिंह	प्रवक्ता
	श्री विनोद कुमार सिंह	वरिष्ठ प्रवक्ता
	श्री विवेक साहनी	वरिष्ठ प्रवक्ता
	श्री पंकज मदान	प्रवक्ता
कन्या गुरुकुल महाविद्यालय, देहरादून	श्रीमती प्रतिभा शर्मा	वरिष्ठ प्रवक्ता संगीत
	श्रीमती मीरा दास गुप्ता	वरिष्ठ प्रवक्ता संगीत
	श्रीमती सरोज नौटियाल	वरिष्ठ प्रवक्ता संस्कृत
	श्रीमती रंजना राजदान	वरिष्ठ प्रवक्ता हिन्दी
	श्रीमती हेमलता	वरिष्ठ प्रवक्ता अंग्रेजी

संकाय विभाग	नाम	पद
	श्रीमती निपुर	प्रवक्ता कम्प्यूटर
	श्रीमती रेनू शुक्ला	प्रवक्ता इतिहास
	डॉ॰ सूरेखा राणा	रीडर प्रबन्धन
	डॉ॰ बिन्दू अरोड़ा	प्रवक्ता प्रबंधन
	डॉ॰ पतिराजकुमारी	प्रवक्ता प्रबंधन
	श्रीमति हेमन पाठक	प्रवक्ता कम्प्यूटर
	कु॰ प्रवीणा चतुर्वेदी	प्रवक्ता कम्प्यूटर
	श्रीमती पूनम पैन्यूली	प्रवक्ता प्रबंधन
कन्या गुरुकुल महाविद्यालय, हरिद्वार	डॉ॰ सुनृता विद्यालंकार	प्राचार्य/रीडर
	डॉ॰ नमिता जोशी	प्रवक्ता-पर्यावरण
	डॉ॰ सुचित्रा मलिक	प्रवक्ता हिन्दी
	डॉ॰ श्यामलता जूयाल	प्रवक्ता मनोविज्ञान
	डॉ॰ अंजली गोयल	प्रवक्ता रसायन
	डॉ॰ पद्मा सिंह	प्रवक्ता माइक्रो
	डॉ॰ मुदिता अग्निहोत्री	प्रवक्ता अंग्रेजी
	डॉ॰ सीमा शर्मा	प्रवक्ता गणित
	श्री अशोक डे	जूनियर असिस्टेन्ट/टाइपिस्ट
	श्री सुभाष चन्द्र कपिल	जूनियर असिस्टेन्ट/टाइपिस्ट
विज्ञान संकाय प्रशासन	श्री हंसराज जोशी	जूनियर अस्टिन्ट/टाइपिस्ट
	श्री राजकिशोर	जूनियर असिस्टेन्ट/टाइपिस्ट
	श्री कुमुद जोशी	जूनियर अस्टिन्ट/टाइपिस्ट
	श्री वीर सिंह	जूनियर असिस्टेन्ट/टाइपिस्ट
क. गु. देहरादून जीवन विज्ञान संकाय प्रशासन	श्री ओम प्रकाश नवानी	जूनियर असिस्टेन्ट/टाइपिस्ट
	श्री रजत सिन्हा	जूनियर असिस्टेन्ट/टाइपिस्ट
	श्री अरविन्द कुमार	जूनियर असिस्टेन्ट/टाइपिस्ट
	श्री रमाशंकर	जूनियर असिस्टेन्ट/टाइपिस्ट
मानविकी संकाय प्रशासन	श्री संदीप कुमार	जूनियर असिस्टेन्ट/टाइपिस्ट
	श्री बिजेन्द्र सिंह	जूनियर असिस्टेन्ट/टाइपिस्ट
	श्री हरपाल सिंह	जूनियर असिस्टेन्ट/टाइपिस्ट
	श्री प्रेम सिंह नेगी	जूनियर असिस्टेन्ट/टाइपिस्ट
	श्री अजय कुमार	जूनियर असिस्टेन्ट/टाइपिस्ट
पुस्तकालय	श्री नवीन कुमार	जूनियर असिस्टेन्ट/टाइपिस्ट
	श्री रमेश चन्द्र	जूनियर असिस्टेन्ट/टाइपिस्ट
प्रशासन	श्री राजेन्द्र ऋषि	जूनियर असिस्टेन्ट/टाइपिस्ट

संकाय विभाग	नाम	पद
क.गु. हरिद्वार	सुश्री ममता गर्ग	जूनियर असिस्टेन्ट/टाइपिस्ट
संग्रहालय	श्री यशपाल सिंह	जूनियर असिस्टेन्ट/टाइपिस्ट
प्रशासन	श्री प्रमोद कुमार	जूनियर असिस्टेन्ट/टाइपिस्ट
प्रबन्धन संकाया	श्री प्रकाश तिवारी	जूनियर असिस्टेन्ट/टाइपिस्ट
इन्जी. महाविद्यालय	श्री दीपक आनन्द	जूनियर असिस्टेन्ट/टाइपिस्ट
प्राच्य विद्या संकाय	श्री आर.के.एस.डागर	निदेशक, शारीरिक शिक्षा
	श्री सुरेन्द्र कुमार त्यागी	योग प्रशिक्षक
	श्री योगेश्वर दत्त	योग प्रशिक्षक
	श्री सुरक्षित कुमार गोस्वामी	योग प्रशिक्षक
मानविकी संकाय	श्री लाल नरसिंह नारायण	प्रयोगशाला सहायक
विज्ञान संकाय	श्री प्रमोद कुमार	लैब टैक्नी०
	श्री शशी भूषण	लैब टैक्नी०
	श्री ठकुरा सिंह	प्रयोगशाला सहायक
	श्री नरेश कुमार	जूनियर प्रयोगशाला सहायक
	श्री प्रवीण कुमार	जूनियर प्रयोगशाला सहायक
	श्री पुरूषोत्तम कुमार	जूनियर प्रयोगशाला सहायक
कम्प्युटर केन्द्र	श्री अचल कुमार गोयल	सिस्टम मैनेजर
	श्री मनोज कुमार शर्मा	कम्प्यूटर आपरेटर
	श्री द्विजेन्द्र पन्त	तकनीकी सहायक
	श्री वेदव्रत	तकनीकी सहायक
	श्री मनोज कुमार	सिस्टम अटैन्डेन्ट
जीव विज्ञान संकाय	श्री हरीश चन्द्र	प्रयोगशाला सहायक
	श्री रूद्रमणी	प्रयोगशाला सहायक
पुस्तकालय	श्री जे.पी. विद्यालंकार	पुस्तकालयाध्यक्ष
	श्री जी.एस.चौहान	सहा० पुस्तकालयाध्यक्ष
	श्री मिथलेश कुमार	प्रोफेशलन सहायक
	डॉ० अनिल कुमार धीमान	सेमी० प्रो० असि०
	श्री के.सी. पाण्डे	सेमी० प्रो० असि०
	श्री ललित किशोर	सेमी० प्रो० सहायक
	श्री राजीव कुमार	सेमी० प्रो० सहायक
	श्री आनन्द बल्लभ जोशी	काउन्टर सहायक
संग्रहालय	श्री दीपक घोष	संग्रहालय सहायक
प्रौढ़ शिक्षा	श्री आर.डी. शर्मा	सहायक निदेशक
	श्री जे.एस. मलिक	परियोजना अधिकारी
अभियांत्रिकी महा०	श्री महेन्द्र सिंह असवाल	सिस्टम प्रोग्रामर
	श्री विरेन्द्र सिंह	लैब टैक्नीशियन
	श्री संजय कुमार	लैब टैक्नीशियन

संकाय विभाग	नाम	पद
	श्री विकास कुमार देशवाल	लैब टैक्नीशियन
	श्री श्याम वुमर कश्यप	तकनीकी सहायक
	श्री संजय पारे	पुस्तकालय सहायक
	श्री भूपेन्द्र कुमार वालिया	पर्सनल सहायक प्रिसिंपल
	श्री धर्मेन्द्र कुमार	जूनियर असिस्टैन्ट क्रीडा
	श्री राजीव गुप्ता	जूनियर असिस्टैन्ट कम टाइपिस्ट
	श्री राजमल राणा	ड्राईवर
प्रशासन	श्री अशोक कुमार	कारपेन्टर
	श्री दीवान सिंह	कुक
	श्री श्रीराम	ड्राईवर
	श्री मांगेराम	ड्राईवर
	श्री महानन्द	भृत्य
	श्री योगेन्द्र सिंह	भृत्य
	श्री बलवीर सिंह	भृत्य
	श्री चन्द्रभान	भृत्य
	श्री मदनमोहन सिंह	भृत्य
	श्री महेश चन्द्र जोशी	भृत्य
	श्री कमल सिंह	भृत्य
	श्री राजेन्द्र कुमार	भृत्य
	श्री बालीराम	भृत्य
	श्री दिनेश कुमार	भृत्य
	श्री मनोज कुमार	भृत्य
	श्री माता प्रसाद	चौकीदार
	श्री राम सिंह	चौकीदार
	श्री रूल्हा सिंह	चौकीदार
	श्री जलसिंह	चौकीदार
	श्री ईशम सिंह	चौकीदार
	श्री भूरी सिंह	चौकीदार
	श्री योगन्द्र नाथ शर्मा	चौकीदार
	श्री रामबहादुर	चौकीदार
	श्री हिम्मत सिंह	चौकीदार
	श्री श्याम सिंह	चौकीदार
	श्री रमेशचन्द्र	चौकीदार
	श्री चन्द्र कुमार मल	चौकीदार
	श्री रामप्रसाद राय	चौकीदार
	श्री जसबीर सिंह	चौकीदार

संकाय विभाग	नाम	पद
	श्री श्यामलाल	माली
	श्री हरीराम	माली
	श्री देवेन्द्र कुमार	माली
	श्री बाबू लाल	माली
	श्री राम अजोर	माली
	श्री बृजपाल	माली
	श्री ऋषिपाल सिंह	माली
	श्री आनन्द	सफाई कर्मचारी
	श्री नीरज	सफाई कर्मचारी
	श्री मुनेश	सफाई कर्मचारी
प्राच्य विद्या संकाय	श्री घनश्याम सिंह	भृत्य
	श्री बृजमोहन सिंह शर्मा	भृत्य
	श्री महेन्द्र सिंह	भृत्य
	श्री राजकुमार	भृत्य
	श्री घिर्राऊ	माली
	श्री सन्तोष कुमार	फिल्ड अटैण्डेन्ट
मानविकी संकाय	श्री सुधााकर सिंह	भृत्य
	श्री रविन्द्र कुमार	भृत्य
	श्री जितेन्द्र सिंह नेगी	भृत्य
	श्री सुशील कुमार	सफाई कर्मचारी
विज्ञान संकाय	श्री बाबादीन	लैब अटैन्डेन्ट
	श्री अरूण कुमार	लैब अटैन्डेन्ट
	श्री सुशल कुमार	लैब अटैन्डेन्ट
	श्री रविन्द्र सिंह	लैब अटैन्डेन्ट
	श्री राम दास गुप्ता	भृत्य
	श्री राजपाल सिंह	भृत्य
	श्री रामजीत	भृत्य
	श्री बलजीत सिंह	सफाई कर्मचारी
जीव विज्ञान संकाय	श्री शशिकान्त धीमान	प्रयोगशाला सहायक
	श्री प्रीतम लाल	लैब ब्वाय
	श्री विजय सिंह	लैब ब्वाय
	श्री रतन लाल	भृत्य
	श्री चमन लाल	भृत्य
	श्री विरेन्द्र सिंह	माली
	श्री राम सुमत	माली
	श्री विनोद कुमार	सफाई कर्मचारी

संकाय विभाग	नाम	पद
प्रबन्धन संकाय	श्री गिरीश चन्द्र जोशी	भृत्य
पुस्तकालय	श्री जय प्रकाश	बुक बाइन्डर
	श्री गोविन्द सिंह	बुक लिफ्टर
	श्री कुलभूषण	भृत्य
	श्री बिजेन्द्र सिंह	भृत्य
	श्री शशिकान्त	भृत्य
	श्री बालेश्वर	सफाई कर्मचारी
पुरातत्व संग्रहालय	श्री रमेश चन्द्र पाल	गैलरी अटैन्डेट
	श्री ओम प्रकाश	गैलरी अटेन्डेट
	श्री गुरु प्रसाद	माली
इंजी॰ महाविद्यालय	श्री दीपक नेगी	लैब अटैन्डेट
	श्री सुशील कुमार	लैब अटैन्डेट
	श्री दृगपाल	अटैन्डेट
	श्री हेमन्त कुमार	अटैन्डेट
	श्री ओमवीर	कम्प्यूटर अटैन्डेट
	श्री कृष्ण कुमार	अटैन्डेट
	श्री भारत सिंह	अटैन्डेट
	श्री भारत सिंह	अटैन्डेट
कन्या गुरुकुल महाविद्यालय हरिद्वार	श्री हरपाल सिंह	सम्पदा अधिकारी
	श्री मदन पाल सिंह	सेमी॰ प्रो॰ असि॰
	श्री चन्द्रप्रकाश	प्रयोगशाला सहायक
	श्रीमती ममता गर्ग	असि॰/टाइपिस्ट
	श्री जितेन्द्र सिंह नेगी	लैब अटै॰
	श्री बलवन्त सिंह	लैब अटै॰
	कु॰ मंजू राय	भृत्या
	श्रीमती पद्मादेवी	सफाई कर्मचारी
कन्या गुरुकुल महाविद्यालय, देहरादून	श्रीमती सुदेश खन्ना	पुस्तकालयाध्यक्ष
	श्रीमती बलबीर कौर	पी॰टी॰आई॰
	श्रीमती नीनागुप्ता	तकनीकी सहायिका
	श्रीमती भागेश्वरी	स्टोरकीपर
	श्रीमती विमला	सफाई कर्मचारी
	श्री मुन्ना लाल	माली
	श्री सूरत सिंह	भृत्य
	श्री वीरबहादुर	भृत्य
	श्री अयोध्या प्रसाद	भृत्य

Central Library
185053
Gurukula Kangri (Deemed to be University) Haridwar

Gurukula Kangri (Deemed to be University)

पुस्तकालय

गुरुकुल काँगड़ी विश्वविद्यालय, हरिद्वार

वर्ग संख्या R 378·009 JAI-S आगत संख्या 185053

पुस्तक विवरण की तिथि नीचे अंकित है। इस तिथि सहित 30वें दिन यह पुस्तक पुस्तकालय में वापस आ जानी चाहिए। अन्यथा 50 पैसे प्रतिदिन के हिसाब से विलम्ब शुल्क लगेगा।

75
185053

GURUKUL KANGRI LIBRARY
Signature Date
Access No.
Class No.
Cat No.
Tag etc.
E.A.R.
Recomm. by
Data Entry By
Checked

ग्रन्थ परिचय

प्रस्तुत ग्रन्थ "गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय का सौ वर्ष का इतिहास" में लेखक ने गुरुकुल कांगड़ी की सौ वर्ष की यात्रा को विस्तृत रूप में प्रस्तुत किया है। लेखक ने प्रथम अध्याय में उस समय भारत में जो शिक्षा का संक्रमण काल था जिसमें यह विवाद था कि भारतवर्ष में भारत की प्राचीन शिक्षा प्रणाली को जारी रखा जाये अथवा आधुनिक योरोपीय शिक्षा प्रणाली को प्रारम्भ किया जाये, इसका विस्तार पूर्वक वर्णन किया गया है।

द्वितीय अध्याय में गुरुकुल कांगड़ी की स्थापना के मूलकारणों का वर्णन करते हुए लेखक ने गुरुकुल की प्रथम नियमावली, नये भवनों का निर्माण, ब्रह्मचारियों की दिनचर्या, महात्मा मुंशीराम का सर्वस्व त्याग, गुरुकुल की बढ़ती हुई ख्याति गुरुकुल में महाविद्यालय की स्थापना, प्रथम दीक्षान्त समारोह, गुरुकुल कांगड़ी का विकास, महात्मा गांधी का गुरुकुल में आगमन, गुरुकुल में वायसराय का पदार्पण और गुरुकुल में भयंकर बाढ़ तथा स्थान परिवर्तन आदि का वर्णन किया गया है।

इस ग्रन्थ में तृतीय अध्याय में लेखक ने नये स्थान पर गुरुकुल का पुनः निर्माण, स्वामी श्रद्धानन्द का बलिदान, गुरुकुल कमीशन, आर्य विद्या सभा का गठन, गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय की उपाधियों की मान्यता, गुरुकुल कांगड़ी की स्वर्णजयन्ती, फार्मेसी का नया भवन, विज्ञान महाविद्यालय का शिलान्यास पं॰ जवाहर लाल नेहरु का आगमन, राष्ट्रपति का पदार्पण, डॉ॰ कोठारी का आगमन, बंगाल में गुरुकुल का सेवा दल, श्रीमती इन्दिरा गांधी का आगमन और नये कुलाधिपति का स्वागत आदि का विस्तृत वर्णन प्रस्तुत किया है।

डॉ॰ वेदालंकार ने चतुर्थ अध्याय में गुरुकुल को डिम्ड टु बी युनीवर्सिटी का मान्यता, विश्वविद्यालय का संविधान में विश्वविद्यालय अनुदान आयोग की समिति का आगमन, आयुर्वेद महाविद्यालय की समस्या, आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब का त्रिशाखन, और न्यायालय द्वारा प्रशासक की नियुक्ति का वर्णन विस्तार पूर्वक हुआ है।

ग्रन्थ के पंचम अध्याय में विश्वविद्यालय के संविधान में परिवर्तन, नये प्रोफेसर पदों का सृजन, विजिटिंग कमेटी का आगमन, और 1983 से लेकर 2001 तक का वार्षिक विवरण प्रस्तुत किया गया है। लेखक ने षष्ठ अध्याय में कन्या गुरुकुल महाविद्यालय देहरादून द्वितीय परिसर का भी वर्णन प्रस्तुत किया है। इसी प्रकार सप्तम अध्याय में स्वतन्त्रता आन्दोलन हैदराबाद आन्दोलन, हिन्दी सत्याग्रह और गौ रक्षा आन्दोलन में गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय के योगदान का वर्णन किया गया है। इसी प्रकार इस ग्रन्थ में अष्टम, नवम और दशम अध्यायों में क्रमशः विभिन्न क्षेत्रों में गुरुकुल के स्नातकों का योगदान, गुरुकुल के प्रशासकगण और दीक्षान्त भाषणों का सार प्रस्तुत किया है। यह विश्वविद्यालय भारतीय संस्कृति का सुप्रसिद्ध प्रतिष्ठान माना जाता है। इतना विस्तृत इतिहास किसी भी विश्वविद्यालय का उपलब्ध नहीं है। यह ग्रन्थ सभी विश्वविद्यालयों आर्यसमाजों और समस्त शिक्षण संस्थाओं के पुस्तकालयों में संग्रहणीय है।

भारतीय विद्या प्रकाशन

1 यू॰ बी॰ जवाहरनगर,
बंग्लोरोड, दिल्ली-110007
दूरभाष : (011) 3971570

पो॰ बा॰ 1108, कचौड़ी गली,
वाराणसी- 221001 (उत्तर प्रदेश)
दूरभाष : (0542) 392316